श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः॥

दक्षहस्तकृताश्लेषां वामेनालिङ्ग्य राधिकाम्।
कृतनाट्यो हरिः कुञ्जे पातु वेणुं विनादयन्॥ १॥

प्रस्तावना.

कोटि कोटि धन्यवाद उस सच्चिदानंद आनंदकंदपरब्रह्म, परमेश्वर, सर्व व्यापक, सर्व प्रकाशक, त्रयतापविनाशक, परमात्मा, परमरूप, सुंदरस्वरूप, अखिलवपुनिराकार, साकार, सगुण, निर्गुणकोंहै कि, जिनके स्मरणमात्रसेही यह क्षणभंगी मोहभ्रमसंगी शरीर, जन्म संसारके बंधनसे छूट जाता है जिनकी अपार महिमाका भेद शिव चतुरानन वेदपुराणननेभी नहीं पाया-ऋषि मुनि निरंतरध्यान लगाया, शेष सहस्र फणनसे गाया तबभी एक अंश नहीं पाया जिनका स्वरूप मन बुद्धि इन्द्रियोंसे बाहर है ऐसीप्रभुता और ईश्वरता परभी दयालुता करुणा नम्रता तो ऐसी है कि, निजभक्तोंके दुःख निवारणार्थ साक्षात् अवतारले दुष्ट दनुजोंको मार सुर नर मुनि संत हितकार अपार लीला करते हैं जिनकी अपार लीलाओंकी अपार पुस्तकें इस असारसंसारमें प्रचलितहैं जो बडे बडे ऋषीश्वर मुनीश्वर व्यास वशिष्ठ शुकदेवादि महर्षियोंकी भणित हैं उन्हीं का सार उत्तम विचार कलिनर संत हितकार श्रीमन्महाराजाधिराज समरविजयी सर्वविद्या सम्पन्न शूर वंशोद्भव श्रीकृष्णचन्द्रकृपापात्राधिकारी सिद्धिश्रीमहाराजामान्यवरश्रीरघुराजसिंहजी देवने सत्ययुग, त्रेता, द्वापर, कलियुगके सम्पूर्ण हरिभक्तसंतोंकी कथा अत्युत्तम परम मनोहर रमणीक सरल कवित्त दोहा, चौपाई, छंद, सोरठा, छप्पय इत्यादिछंद प्रबंधसे बनाया जो सद्गृहस्थ हरिभक्त साधु महात्माओंने प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर अनंत सुखको भोग परमपदके भागी हुये इस बार छपनेमें औरभी रोचक कथा बढाई गई हैं जिसमें अनेक साधु महात्माओंके परमपावन सुभग चरित्र विस्तारपूर्वक लिखे गयेहैं नाम उसका उत्तर चरित्रहै यह कविता ऐसी मनभावन परमसुहावन पावन है कि जिसने एकवार इसमें गोतालगाया इस संसारमें अत्यंत सुखउठाया और अंतको उन्हीं श्रीसच्चिदानंद आनंदकंदके कृपाकटाक्षसे परमपदको सिधाया।

खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना-मुंबई.

अथ भक्तमालाकी अनुक्रमणिका.

सत्ययुगखंड.

इति सत्ययुगखण्डः समाप्तः

अनुक्रमणिका।

इति रामरसिकावली नाम भक्तमालाकी अनुक्रमणिका संपूर्णा.

श्रीवेंकटेश्वराय नमः ।

भक्तमालान्तर्गत भगवद्भक्तोंकी संख्या ।

नाम युग	संख्या भक्त	
सत्ययुग	५४	इन भक्तोंके सिवाय और भी अनेक भक्तोंकी सूक्ष्म कथा हैं ।
त्रेतायुग	२२	
द्वापर युग	३०	
कलि युग पूर्वार्ध	२०	
" उत्तरार्ध	१४०	
उत्तरचरित्र के भक्त और वघेल वंश वर्णनान्तर्गत अनेक कथा हैं	२९	

इति भक्तमालान्तर्गत भगवत्भक्तोंकी संख्या समाप्तम् ।

खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना
मुंबई.

श्रीवेंकटेशाय नमः ।
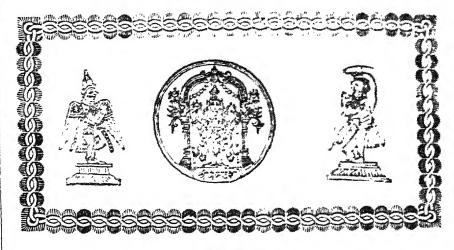
श्रीगणेशायनमः ।

श्रीमहाराज रघुराजसिंहदेवजूवहादुरकृत-

भक्तमाला ।

अर्थात्

रामरसिकावली ॥

मंगलाचरण ।

श्लोकः—नमो नलिननेत्रायवेणुवाद्यविनोदिने ॥
राधाधरसुधापानशालिने वनमालिने ॥ १ ॥
नमस्तुभ्यं भगवते पुरुषाय महात्मने ॥
वासुदेवाय कृष्णाय सात्वतां पतये नमः ॥ २ ॥

स्वच्छंदोपात्तदेहाय विशुद्धज्ञानमूर्तये ॥
सर्वस्मै सर्ववीजाय सर्वभूतात्मने नमः ॥ ३ ॥

कवित्त—महाराजजयसिंह जयमें सिंहके समान निरयान समय जासु गंग लीन्ही अगवान ॥ तासु तनय विश्वनाथ महाराजविश्व नाथसम सीयनाथ को अनन्य साँचो भक्तिमान ॥ ज्ञानवानगु-णवानयशवानधर्मवान जाहिर प्रतापवान भोन सरि जाके आन ॥ तासु पूतमहाराज रघुराज मृगराज कहै युगलेशभो सवाई ताहुते जहान ॥

दोहा—यशप्रतापमंदिरकरचो, विश्वनाथमहराज ॥
तापर कलसा ताहिको, धरचो भूप रघुराज ॥ १ ॥
रच्यो रामरसिकावली, सोचौखंड विराज ॥
सतयुग त्रेता द्वापरौ, औकलिखंड दराज ॥ २ ॥
पूर्वारध उत्तारधै, जानलेउ कलिखंड ॥
तामें आचारिन कथा, नाभाकृत उद्दंड ॥ ३ ॥
औरएक उत्तरचरित, कथाभक्त यहिकाल ॥
रहेसाधु सेवी बड़े, लहेदरश रघुलाल ॥ ४ ॥
श्रीकबीर भाषितअरु, जोआगम निरदेश ॥
ग्रंथरच्यो युगलेशसो, जामें कथा नरेश ॥ ५ ॥

ग्रंथस्तुति ।

कवित्तघनाक्षरी—जप तप नेम व्रत संयमअचारबहु चाहैकरैएको नाहिंवेदलेबतावहीं ॥ तीरथअनेकमुक्तिदाताहै विख्यातजगआ लसीजेकबहूंनतिनमेंसिधावहीं ॥ ज्ञानतेविहीनवेशभक्तिकोनलेश जिन्हैं सांचीयुगलेशयहसबकोसुनावहीं ॥ रामरसिकावलीया पढ़ै सुनैआठौंयामविनश्रमरामानिजधामकोपठावहीं ॥

छप्पय—जगत विषयसुख विषयमानि विषयी नहिंत्यागें ॥
परम अभागे कबहुँ सीख संतन नहिं पागें ॥
महापातकी जेउ करत पातक महि बागें ॥
हरि हरिजन जहँ कथा होइ तहँ ते उठि भागें ॥
तेकबहुँ रामरसिकावली पढ़ैंसुनैं जो भाग्य बश ॥
युगलेशते ह्वै करि शुद्धमन बसैं परेस निवेशलसि ॥

ग्रंथाशीर्वाद ।

सवैया—भूधरधारनकीन्हे धरा औधराकोधरे सरसों समशेषहै ॥
शेषकोकच्छपकोलधरे अरु लोमशआयुपजौलौंविशेषहै ॥
वेषसुरापगाधारहै जौलगि जौलौंअकाश निशेशदिनेशहै ॥
तौलौंनरेश कथाको प्रचार हमेशरहै करतौ युगलेशहै ॥

इति मंगलाचरणम् ।

अथ ग्रंथारम्भः ।

सोरठा—जयवसुदेव कुमार, मनवच इंद्रियकर्मपर ॥
सबसंतनआधार, अतिकोमलकरुणायतन ॥ १ ॥
हरबरहरतखँभार, निजशरणागतजननको ॥
भाषतअहौं तुम्हार, करतअभय संसारते ॥ २ ॥
जानतजोनहिंआहि, ताहिजनावतउरप्रविशि ॥
जानेदेत निबाहि, कोकृपालु यदुनाथसम ॥ ३ ॥
यहजगमें द्वैसार, भगत औरहू भागवत ॥
बिनभागवतविचार, मिलतनभगवतपदकतहुँ ॥ ४ ॥
जयजयसंतसमाज, जेहिसेवतसुधरतसकल ॥

शरणपरयो रघुराज, लाज तिहारे हाथहै ॥ ५ ॥
शारदघनइवज्योति, जयजयमातुसरस्वती ॥
जाहिकृपातवहोति,सोइउतरतकविताजलधि॥ ६ ॥
स०—जानौंनहींकछुछंदनकीगतिसाजसाहित्यकीऔरनचीन्ह्यों॥
न्यायव्याकरणादिकशास्त्रनहींइनमेंकबहूँमनदीन्ह्यों ॥
तेरेभरोसभरोजगदंबकछूरचनागतिहौं गहिलीन्ह्यों ॥
हैअबतोंहिंसँभारसबैरघुराजकेलाजको रक्षनकीन्ह्यो ॥
दोहा—सहसबयालिसग्रंथजो, आनँदअंबुधिनाम ॥
मोंरसनामें बैठिकै, कियोमातु मतिधाम ॥ ७ ॥
तथारामरसिकावली, चहौंचरणतोंहिंध्याइ॥
मोंरसनामें बैठिकै, दीजे मातु बनाइ ॥ ८ ॥
छप्पय—विघनहरन जनशरन धरनसुख दरनदरिद्रन ॥
नरन करन आभरन ज्ञानत्रैवरनहु शूद्रन ॥
हरन सकल भवभीति जगतपूरण संचारन ॥
करुणाटरन अपारसुदासन विपति विदारन ॥
तनुश्वेतवरनमतिछतिछरनश्रेयवरनतारनतरन॥
रघुराजयुगलवंदितचरनजयगजमुखअशरनशरन॥
सोरठा—तुमहिंसुमिरिसबकाज, सिद्धिहोतसुकवीनके ॥
रचतकछुकरघुराज, विघन विगरपूरणकरहु ॥ ९ ॥
चौ०—सत्यवती सुत चरणमनाऊं । जेहिप्रसादसुंदरमतिपाऊं ॥
जो वेदन विभाग विस्तारा । अष्टादश पुराण करतारा ॥
वंदौं तासु सुवनपद कंजन । जो विरागभाविक मनरंजन ॥
लिहेहुं सकलजगमाँहिं निहारी । नहिंदीसत शुकसमउपकारी ॥
परम धर्म मर्यादा राखत । को भागवत भूपसों भाखत ॥
यदपि सतदश सुखद पुराणा । औरहु भारत लक्षप्रमाणा ॥

कीन्ह्यो व्यासदेवमनिग्लानी । पैगाई नारदकी गई गलानी ॥
जब भागवत कियो निर्माना । तब पायो जीमोद महाना ॥
वंदौं वाल्मीकि मुनिचरना । रामरसिक उर आनँद भरना ॥
भन्योजोचौविससहसरामयश । जन्महरनामियनिचयनदनुजकुश ॥
कोमल पद प्रसाद गुणतामें । अर्थ गँभीरव्यंग्य बहु जामें ॥
रघुपतिभक्त शिरोमणिज्ञाता । कविनहुमानिदायकअवदाता ॥

दोहा—नमौंसुतीक्षणचरण मैं, रामभक्तिआधार ॥
अपनेतेजिनकोमिले, कोशलनाथकुमार ॥ १० ॥

अब वंदौं दशरथ महराजा । उदित भानुकुलभानुदराजा ॥
वंदौं अवधपुरी अतिपावनि । रामरसिक अतिआनँदछावनि ॥
वंदौं सरयूसरित सुहावनि । जासुवानि यशरामनिलावनि ॥
वंदौं अवध प्रजा सुखबोरे । रामचंद्र मुखचारु चकोरे ॥
वंदौं कौशल्या महरानी । राम इंदुदिशि इंदुसमानी ॥
नमो कैकयी पद बहु बारन । भै भूभार हरण को कारन ॥
वंदौं लषण शत्रुहनमाता । सुतनसहितजनुभक्तिविख्याता ॥
वंदौं त्रिशत पचासहु रानी । नेह अर्थ हरि श्रुतिसम जानी ॥
वंदौं भरत चरण सुखदायक । राम सनेह जौन्ह निशिनायक ॥
वंदौं लषण हरण अवसेरू । रामचरण सेवन महिमेरू ॥
नमो शत्रुसूदन छविछाजा । रामरसिक गृहमधि ग्रहराजा ॥
मारुति नमोजोरि कर दोई । रामश्यामवन चातक जोई ॥

दोहा—वंदौकपिनायकचरण, रामसखाबलवान ॥
सीताशोकसमुद्रको, रघुपतिसेतुसमान ॥ ११ ॥

अज्ञ विमोचन नमो विभीषण । रामविजयवनवनअसदीखन ॥
वंदौं मंदर वालि कुमारा । दवे असुर अरि जेहि बलभारा ॥
नमोसकलकपिमथिरणसागर । प्रगट्योहरियशसुधाउजागर ॥

अब वंदौं वसिष्ठ करजोरी । मति साठी रघुबर रँगवोरी ॥
वंदौं गृही अगस्त्य ललामा । जिनके अतिथिभये श्रीरामा ॥
वंदौं विश्वामित्र मुनीशा । राम शस्त्रप्रद रत्न नदीशा ॥
वंदौं अत्रि और अनुसूया । हरिपदपंकज अलिविन सूया ॥
जयशरभंग सुमति बड़भागा । दरशि रामरवि तमतनुत्यागा ॥
वंदो गीध सुमति सुखदेनी । रामकाज तनुतज्यो त्रिवेनी ॥
वंदो शबरी प्रीति अभंगा । राम सुरति जलराशि तरंगा ॥
वंदौ गुह निषाद मतिवाना । राम दीनहित वेदप्रमाना ॥
वंदौ ऋषितिय आयसु आसू । रामचरणरज पारस जासू ॥

दोहा—वंदौं विदित विदेह पद, सीतासुरतिसोहाइ ॥
महिमानस ते प्रगटिकै, लगी रामतन जाइ ॥ १२ ॥
प्रगटीमिथिला मानसर, मिलीलषणनिधिनीर ॥
जयजय सरयू उर्मिला, हरिणिहारभवभीर ॥ १३ ॥
वंदौं माता मांडवी, श्रुति कीरति सहुलास ॥
मनुनिष्ठारतिदोउलसै, सांतदास रसपास ॥ १४ ॥

वंदौं कुमुद जनक पुरवासी । रघुपति राकापतिहिं उपासी ॥
वंदौं चरण जनकदुहिताके । कहि न जात गुणजासु कृपाके ॥
मिथिलामंजुल बाग सोहायो । बीजदेव कारजमहि आयो ॥
जनक सुकृत अंकुरशुचिजयऊ। लहि सेवन जल बाढ़त भयऊ ॥
सुछविसुपल्लव भये अनेका । लगे करुन गुण कुसुम विवेका ॥
धनुषभंग प्रणमांड़वरोपी । माली मिथिलाधिप अतिचोपी॥
दशरथ लालन मालहिपाई । दियतनया लतिका लपटाई ॥
वंदौं रघुपति चरण सरोजू । जेहि भरोसमोहिंबाढ़तरोजू ॥
मुनि मनमानस मंजुमराला । मंडनहिय महेश मणिमाला ॥
सुरसरिमौलिरतनउडुगणके । द्युतिदायक मयंकक्षणक्षणके ॥

संसृत सागर पारक पोतू । विधि उरनींद निवास कपोतू ॥
दुखदारिद दावानल मेहू । वर्द्धक विशुर्वागधिजन नेहू ॥

दोहा—मुनिनमनोरथकामतरु, मनुजनमालवदेश ॥
मदमत्सरमातंगके, मर्दनमहामृगेश ॥ १५ ॥

वंदौं रामनाम अरु धामा । लीलारूप जगन प्रदकामा ॥
द्वै अक्षर सब अक्षरराई । जपत जीव मिस श्वाससदाई ॥
लायक सज्जन सदा नेहके । नयन सरिस दोउ मनुजदेहके ॥
वस्तु प्रकाशक तीनिधामके । रविशशिसम युगवरणरामके ॥
कारजकारकजगनिशिदिनसे । उष्णदुरित हर शशी तुहिनसे ॥
जियजानकिभवविपिनसहायक। जैसे सदा लषण रघुनायक ॥
मनुवसुदेव विमोह कंससे । मोचक माधव दुविदध्वंससे ॥
उरसरसुख जलपूरक कैसे । मास सुसावन भादँव जैसे ॥
स्यंदननेम निदाहक सोई । चक्रसरिस वर आखर दोई ॥
परम धरम तनकृत व्यापारू । युग करसम युग वरण उदारू ॥
श्रीपति संत परमप्रिय कैसे । चतुरानन पंचानन जैसे ॥
मोहिंअतिहितकरानितपारायण । जिमिभागवत और रामायण ॥

दोहा—अववंदौसाकेतपुर, जेहिसम दुतिय न कोय ॥
जहँविलसतरघुवरसिया, नितमुदमंगलमोय ॥ १६ ॥
अवध और अपराजिता, सांतानक साकेत ॥
नामअयोध्याकेसकल, वरणहिंबुद्धिनिकेत ॥ १७ ॥

एक अंश विरजा यहिवारा । तामें है ब्रह्मांड अपारा ॥
विरजा पार उतै सुखराशी । तीनिपादथल परम प्रकाशी ॥
एक दिशा वैकुंठ सुहावन । एकदिशा साकेतहु पावन ॥
एकदिशा गोलोक विराजा । यहिविधिहरिपुर और दराजा ॥
मत्स्य कूर्म आदिक प्रभुकेरे । विपुलधाम अभिराम घनेरे ॥

नारायण सुंदर भुजचारी । बसहि विकुंठहिं सदा मुरारी ॥
तिमि गोलोक कृष्णप्रभुराजैं । सकलसखनयुत सबसुखसाजैं ॥
तिमि साकेतनगर श्रीरामा ।विलसहिं सियासहित सुखधामा ॥
तहँ प्रमोदवन परमसुहावन । करहिंविहार सदा मनभावन ॥
उत्तर दिशि सरयू सरि सोहै । रामकृपा लहि जोहि जन जोहै ॥
सज्जन रघुपतिरूप उपासी । बसहिं नगर नित आनँदरासी ॥
कहि न सकत छवि वदन हजारा ।तौकिमि कहि पाऊं मैं पारा ॥

दोहा—अबवंदौप्रभुरूपको,करिन्योछावरकाम ॥
युगुलबाहुषोडशवयस,सुंदरतनुघनश्याम ॥ १८ ॥

जो वरनो उपमा जगहेरी । तौ जानौ जड़ता हठिमेरी ॥
जन्मअनेकनतपवन कीन्हें । कबहुं न स्वाद कामकर चीन्हें ॥
विषय विलोपकसाधनसाधे । यहि हित अवशि ईश अवराधे ॥
ज्ञान विराग योगमहँ पूरे । रसगाथा निशिदिन हिय झूरे ॥
ऐसे मुनि दंडक वनवासी । लखि रघुपति सरूप छविरासी ॥
करीविहारकरनअभिलाखा । नेकहु धीरज रहा न राखा ॥
गुनिमुनिमनप्रभुदियोनियोगू । यहि अवतार विहार अयोगू ॥
लहिहैं हम यदुकुलअवतारा । तब गोपी ह्वै कियो विहारा ॥
पुनिमानुषआमिषआहारिनि । अतिशय वृद्धकरालविकारिनि ॥
आई भक्षण हित अपनेते । कबहुँन नेह जान सपनेते ॥
सो रावण भगिनी शूर्पणखा । हिंसातरु प्रगटनि नितकुनखा ॥
निरखि मनोहर रघुवर रूपा । अपनो नायक होन निरूपा ॥

दोहा—असअनूपप्रभुरूपको, मैं वरणो केहिभाँति ॥
जिहिवरणतशुकविनगये, अबलौंबहुदिनराति ॥१९॥
रघुवरकी लीलाललित, मैं वंदौ शिरनाय ॥
जेहिगावतगोपदसरिस, जनभवनिधिलँघिजाय ॥२०॥

सोउवर्णत कोउलह्यो न पारा । विधिशारदशिव शीशकनागा ॥
वाल्मीकिमुनिजगकविचोटी । रामचरित वरण्यो शतकोटी ॥
और देवपुर आदिक गयऊ । चौविसि सहस रहननहिभयऊ ॥
सोइ रामायण अधम उधारा । रघुपति रूप रसिक आधारा ॥
उक्ति युक्ति वहुतुंगतरंगा । भरयो रामयश छीरअभंगा ॥
रामरसिक चकवाक मराला । निवसहिं तटकरि पानरसाला ॥
अर्थ अनूप अनेकनिभांती । विलसहिं विपुलरतनकीनाती ॥
छंद अनेकन परम सुहावन । ते जलचर विचरतजगपावन ॥
रघुपति कथा प्रवंधविशाला । श्वेतद्वीप सोइ लसत रसाला ॥
लक्ष्मीनारायण सियरामा । रामसखा पारपद ललामा ॥
लषण सेव सोइ अहिपतिसेजू । निवसत सुखित नाथअतितेजू ॥
भरत शत्रुसूदन अतिरूरे । राजत शंख चक्र नहिं दूरे ॥

दोहा—यमकअनेकनभांतिके, विलसत वारिजवृंद ॥
मुख्यप्रगटशृंगाररस, उदितसुपूरणचंद ॥ २१ ॥

तहँ त्रिकूट सोइलसतत्रिकूटा । सुखद सरोवर लंक अटूटा ॥
साधु विभीषण वसतेहिमाहीं । दशगल ग्राहग्रस्यौ तेहिकाहीं ॥
वाण चक्रते दशमुख मारी । रघुपतिं श्रीपति लियो उधारी ॥
सीयसुधा हित अतिश्रमधारी । वानर निशिचर सुरहुसुरारी ॥
तिन संगर मंदर अतिभारी । विक्रम मंथन लेहु विचारी ॥
सीता शोक हलाहल जाना । किय मारुति महेशतेहिपाना ॥
कुंभकरण वधकौस्तुभभासी । लियो रामं वैकुंठ विलासी ॥
रावण मल्लयुद्ध गजराजू । लियो सुरेश ताहि कपिराजू ॥
विजय इंद्रजित वारुनिताको । लियोअसुर राक्षस करिसाको ॥
कहुँकहुँविजयनिशाचरकीन्हा। सोइ वाजी रावण वलिलीन्हा ॥
कीरतिं कटी अपसराकेती । वादर विवुध लियो तहँ तेती ॥

रचव सेतुको सुयशप्रकाशा। सोइशशिउदितत्रिलोकअकाशा॥
दोहा—मारुतिऔषधिल्याइजो, बांदरलियौजिआइ॥
बरूयौसुयशसोइशंखहै, सुनिधुनिशत्रुपराइ॥ २२॥
श्रवणकामतरु सोहतनीको। पूरणकरत मनोरथ जीको॥
दियोअगस्त्यधनुपहरिकाहीं। सोइधनुकह्यौविदितचहुँघाहीं॥
सीतहिं सीखदियो सुखदानी। सोत्रिजटा सुरधेनु बखानी॥
विजैरमा निकसीछविधामा। वरचौ विशेष मुकुंदहि रामा॥
जनकपुरुपलै सीयसुधाको। निकस्यौविमलसुयशजगजाको॥
रावण असुर छीनलैगयऊ। रघुपति मोहनि गवनत भयऊ॥
वालिराहुतहँकछुछलकीन्यो। रामरमापाति तेहिशिरछीन्यो॥
सीयसुधा रघुपतिलैआयो। कपिनिशिचरसुरअसुरलड़ायो॥
करिअशोककपिविबुधसमाजू। दीन विभीषण इंद्रहि राजू॥
वैनतेय चाढ़ि पुहुप विमाना। कियौ अवध वैकुंठ पयाना॥
जैजै रामायण पयसागर। मज्जत भुक्ति मुक्तिप्रद नागर॥
वाल्मीकाप्रियव्रतमतिस्यंदन। चालितकरि विरच्यो जगवंदन॥
दोहा—रामायण सत वेदवपु, रघुपतिपद दातार॥
दीरघशरणागतिसुखद,मोसमअधमउधार॥ २३॥
हरिअवतार अपारहैं,तिनमैं कछू न भेद॥
जहँजहँयश हरिजनचह्यौ,भेतहँतसकहवेद॥ २४॥
जौनभक्त राच्यौ जिहिरूपा। सोइ उपासक तासु अनूपा॥
पै सब रूपनते जगमाहीं। रामकृष्ण लीला अधिकाहीं॥
ताते रघुपतिके पदवंदी। अब यदुपतिपद नमो अनंदी॥
जययदुनाथ अनाथन नाथा। जिहिनसाथकेउतिहिंतुमसाथा॥
दीनन सुरतरु ऋषितनधारी। धर्मनिधर्म वाटिका वारी॥
बूड़त भवनिधि नावनिबाहक। निगुणिनके तुमहींगुणगाहक॥

संत सरोजनि सूरज साँचे । अधम उधार लीक ऋचांचे ॥
गो दुजतृणपालक घनश्यामा । दीन मीन सागर अभिरामा ॥
द्वेष दोष दुख तूल बयारी । विघन गहन वनदाह दवारी ॥
मन रसीलके सुधा सरूपा । आमय पीन हीन रसभूपा ॥
भक्ति विराग ज्ञान तरुके फल । दयासलिल ढारक अखंडनल ॥
कंचन मानस गंडकि पाहन । मोहिसम पंगुनके निरवाहन ॥

दोहा—अब वंदौ प्रभुकृष्ण वपु, लीला नामहुँधाम ॥
जिहिसुमरतवरणतजपत,वसत नशतजगकाम ॥२५॥

रूपमाधुरी यदुपति केरी । कोटिनकाम सुछवि जेहिचेरी ॥
शारद नारद शेष महेशा । व्यासादिक मुनि और अशेषा ॥
वरणतकोउ पायो नहिं पारा । नितनित नवनवकियो विचारा ॥
होत न जड़ पषाणते कोऊ । पघिलिउठत परसतपद सोऊ ॥
तिमि तरुगण जड़वेदवखाने । परसत फूलि फले हरियाने ॥
गवनतनिकटरुकतिसरिधारा । मोहतमृग जोवत जिहिवारा ॥
पामर जाति अहीरि अयानी । महामोह माया लपटानी ॥
कबहुँ न श्रवणकरीश्रुतिगाथा । रह्यौ न कोउ सज्जनकहँ साथा ॥
ते यदुपतिकर रूपनिहारी । भ्रात मातु पति पुत्र विसारी ॥
क्षुधा तृषा नींदहुतजि दीन्ही । अनिमिषनैनपानछविकीन्ही ॥
जातिगवाँरि भोजकी दासी । कुबरीभई रूपकी आसी ॥
पतिव्रता माथुर दुजनारी । तेउनिरखततन सुरतविसारी ॥

दोहा—सुरनरमुनिजापरपरचौ, कृष्णरूपको जाल ॥
फँसेमीनमानससकल, कढ़े न कौनेउ काल ॥ २६ ॥
वंदौश्रीनँदलालकी, लीलाललितविशाल ॥
गाइगाइतरिहैंमनुज, याहिहितकरीकृपाल ॥ २७ ॥

तासु अंत कोऊ नहिं पायो । शेष शंभु सहसनयुग गायो ॥

रच्यौपुराण सप्तदश व्यासू । उपपुराणतिमि कियोप्रकासू ॥
औरहु देवसिद्धि ऋषिनाना । विरच्योस्मृतिविविधपुराणा ॥
सवालक्ष भारतकिय व्यासा । तदपि न पूरी मनकी आसा ॥
तब नारद उपदेशहि पाई । रच्योभागवत अतिहरषाई ॥
कियो निरूपण परमधर्मको । त्यागबखान्योप्रवृतिकर्मको ॥
जबहरिकिय यदुकुलसंहारा । श्रीविकुंठको गवन विचारा ॥
बैठअकेले तरतरु राई । तबमित्रासुत निकटसिधाई ॥
कीन्ह्यो विनय दुखितकरजोरी । बारबार यदुपतिहिं निहोरी ॥
जानचहो तुम अब निजपुरको । धारी कौन धर्मके धुरको ॥
परमधरमको को उपदेशी । हमहिंअधार कहा अरिकेशी ॥
तब यदुपति बोले मुसकाई । ग्रंथरूप हम रहब सदाई ॥

अथ भागवतको कृष्णरूपवर्णन ॥

दोहा—यहभागवतस्वरूपमम, मित्रानंदसुजानु ॥
यातेअधिक न औरकछु, मुक्तिमार्गकोमानु ॥ २८ ॥

वंदौं श्रीभागवत अनूपा । जो मुरारिको अहै सरूपा ॥
प्रथमहि प्रथमऽस्कंध लसंता । चरण युगलते जानु प्रयंता ॥
नखश्रेणी अध्याय सुहावन । रोमसुखदअसलोकसुपावन ॥
नारद व्यास कथा तलपादू । तिमिअँगुरी अवतारप्रयादू ॥
गुलुफ सुनारद कथाजनमकी । ऐड़ीकथा सुपांडुसुतनकी ॥
उभैचरण नूपुर छबिटेरी । अस्तुतिकुंती भीषमकेरी ॥
और परीक्षित कथासुहाई । हरिकी पादपीठिसो भाई ॥
ऊरूते अरु कटि परयंता । वर्णतहै दूतिय मतिवंता ॥
हरिकोभक्ति विधान जो गायो । सोपीतांबर शुभपहिरायो ॥
नारद अरु विरंचि संवादा । छुद्रघंटिकाप्रद अहलादा ॥
तहँ भागवत अनुष्टुपचारी । वर्णरतनयुत गुच्छउचारी ॥

नाभी है तृतीयअस्कंधू । रोमावली. विदुर परबंधू ॥
दोहा-पुनिश्रीयदुकुलकी कथा,जानु यज्ञ उपवीत ॥
कथाविश्वउत्पत्तिकी, त्रिवलीवेदप्रणीत ॥ २९ ॥
पुनिवराह अवतार सुवादा । कपिल देवहूती संवादा ॥
उभयपार्श्व जानहु प्रभुकेरे । उदर चौथ अस्कंध निवेरे ॥
पँचरंगकुसुम तुलसि वनमाला । दक्षप्रजापतिकथा रसाला ॥
उत्तरीयपद ध्रुव अख्याना । प्रभु पृथुकथा मुक्तिजग जाना ॥
कथाप्रचेतन परमसुहाई । मधिनायक शोभा अधिकाई ॥
उरपंचमदिय निगम निवेरी । प्रियव्रतकथा लता भृगु केरी ॥
ऋषभकथा कौस्तुभ निरधारो । भरतकथा श्रीवत्स उचारो ॥
भू खगोलको कथन महाना । प्रभु युगलस्तन मंडलजाना ॥
पुनिछठवां स्कंध सुहावन । वर्णत कंठनाथको पावन ॥
कंठाभरण अजामिलगाथा । वृत्रकथा कंठी धृतनाथा ॥
चित्रकेतुकी कथा सोहाई । सोमल्लिका माल छविछाई ॥
सप्तम लसत वदन प्रभुकेरो । हरिणकशिपुवध दंतनिवेरो ॥
दोहा-वर्णन वर्णाश्रमनको, प्रभुरसनाहै साँच ॥
नयनप्रयंतहिजानिये,अष्टम अतिमनराँच ॥ ३० ॥
गजमोचन नासिका सोहावन । कथमन्वंतर त्रिकुटीपावन ॥
कच्छपवपु वर्णनदृगवामा । दक्षिण वामनकथन ललामा ॥
प्रभुकटाक्ष देवासुर संगर । वरुनी वर्णन मत्स्यरूपकर ॥
भ्रुकुटी कर्ण कपोल प्रयंता । भनत नवमस्कंध सुसंता ॥
इलाकथा प्रभु वाम कपोला । अंबरीषकी दछिनअमोला ॥
रघुकुलकथन भ्रुकुटिप्रभुएकू । तिमि द्वितिय निमिवंश विवेकू ॥
यकश्रुति पुरूरवाकी गाथा । द्वितिय ययातिकथा सुखसाथा ॥
यक कुंडल पुरु अनुकोवंशा । द्वितियसुनृप यदुवंश प्रशंसा ॥

दशमअँग दशमहिको जानौ। वालचरित तहँभाल बखानौ॥
रास विलास तिलक प्रभुकेरो। कथाविरहव्रज अलक निवेरो॥
उत्तरार्द्ध प्रभु मुकुट बखांना। बहुलीला बहुरतन महाना॥
स्तुति वेदशिषा प्रभुकेरी। एकादश मन लेहु निवेरी॥

दोहा—योग विराग विज्ञान अरु,भक्तिकथा मनहारि॥
येही जानहु नाथके, हैं भुज सुंदर चारि॥ ३१॥

दशइंद्रिय निग्रह सविधाना। सो प्रभुकी अंगुली प्रमाना॥
तेते इंद्रिय विषय विहाई। मन हरिमहँरत पानि गनाई॥
विद्या और अविद्या भाषन। प्रभु अंगदध्यावहु अभिलाषन॥
भिक्षुक गीता दिव्य विभूती। नाथमूँदरी मोद प्रसूती॥
पुनि द्वादश आतम प्रभु केरो। तहँ ऐसो करिलेहु निवेरो॥
कदन कलुष कलि चक्र प्रचंडा। गदा सुनृप उपदेश अखंडा॥
सर्पसत्र जनमेजय केरो। है भगवान कृपानति वेरो॥
मार्कंडेय कथा जो गाई। पांचजन्यसों लीजे ध्याई॥
भानुकथा अरु कथन पुराना। प्रभुशारंग करहु अनुमाना॥
यहिविधि श्रीभागवत अनूपा। वंदौं शिर धरि यदुवररूपा॥
तुमहीं हौ सतभांतिअधारा। तुमहिं विनाको करी उधारा॥
मेधादेहु मोहिंप्रभु विमली। रचहुँ रामरसिकनकी अवली॥

दोहा—अब वंदौं यदुनाथको, कृष्ण नाम अभिराम॥
जाहिभनतलहिहैं लहत, लहेकृष्णको धाम॥ ३२॥

सकृतहु आननकृष्णनिकारत। तापर प्रणअसकृष्णउचारत॥
भेदि सलिल जिमि कटत सरोजू। ऐंचहु जनन नरकते रोजू॥
कहत कृष्ण उरअंतर आवै। जन्मकोटि बासना नशावै॥
कृष्णनाम जगमें सुखसारू। संत समाज वृक्षफल चारू॥
सुकृत सुमंदिर कलशअनूपा। वहुसाधन नृप माधि मनुरूपा॥

दानव कलुष चक्र गोविंदा। सज्जन कुमुद सुखानंद चंदा॥
पापिन पावन सुरधुनिधारा। कुमति दारुकहँ नौतनआगा॥
हरि रति अंकुरवर्द्धकनीरा। मोहमंवास विमर्दक नागा॥
विविधभक्तिसमसुभगपरागा। जातरूप मद लोभ सोहागा॥
मनमहेश वाटिका विहंगा। काम कोह तम तोनपतंगा॥
मायाकंस विधंस मुरारी। दारिद वारिद प्रबल बयारी॥
हरि निष्ठा तियभूषण भारी। मुक्ति भवनसो पानउचारी॥

दोहा—जेती पापनदहनकी, शक्तिनाममें होइ॥
तेतोकरि नहिंसकतहै, पाप पातकीकोइ॥ ३३॥
अबवंदौं यदुनाथके, धामपरम अभिराम॥
ध्यावत निवसतहोतहठि, जनमनपूरणकाम॥ ३४॥

वंदौं श्री वृंदावन जादू। हरिहिं न जान देत यकपादू॥
वंदौं श्री यमुना सुखदाई। गोपुर विधिमुख श्रुतिकढ़िआई॥
वंदौं मधु मधुपुरी सुहावनि। पंकज पुहुमि मध्यलस पावनि॥
वंदौं द्वारावति मानस गिरि। विलसतदिनकरयदुवरफिरिफिरि॥
वंदौं गोपुर शशिसुखसारा। कृष्ण सार जहँ कृष्णविहारा॥
वंदौं ब्रजधरणी की धूरी। भव रुज वश कहँ जीवनमूरी॥
वंदौं ब्रजवनिता छविभूरी। माधव मत्त मयूरम पूरी॥
वंदौं नंदयशोमति दोऊ। जिनसमान धनिधरणि न कोऊ॥
वंदौं पुहुप सकल ब्रजकुंजें। जहँ माधव मधुकर नित गुंजें॥
वंदौं वृन्दाविपिनि कुरंगा। हरिछविछके कुरंगिनि संगा॥
वंदौं खगब्रजविपिननिवासी। ब्रजपति रूप राशिके आसी॥
वंदौं श्रीनँदनलालसखनको। जिन उछाहनितकृष्णलखनको॥

दोहा—वंदौंक्षीरधिदेवकी, जहँ प्रगट्यो हरिचंद॥
फैली कीरति कौमुदी, रसिककुमुद आनंद॥ ३५॥

नमो विटप वसुदेव ललामा। फरचो सुफल यदुपतिबलरामा॥
जयति रोहिणी सीपसुहाई। उपज्यो अमल मुकुतबलराई॥
जय वसुदेव अठारहरानी। श्रुति सम अर्थ गदादिकदानी॥
जयउद्धव यदुनायकसाजन। ज्ञान विराग भक्ति जल भाजन॥
जयति अक्रूर मानसरभारी। पूरित हरिसनेह वरवारी॥
जय कूबरी दूबरी दुखकी। श्याम तमाल लतासमसुखकी॥
जयसरोज मथुरा नरनारी। परफुल्लितलखि कृष्णतमारी॥
जयसांदीपिन विशद बजारू। विद्यारतन विलास अपारू॥
दै गुरुमृत सुत मोलमहाना। भये रतनग्राहक भगवाना॥
जयवायक विसुकरमासांचो। निज निपुणता कृष्ण अँगराचो॥
जयजय उग्रसेन सुखवाढ़ा। कंस नक्र हनि हरि जेहि काढ़ा॥
नौमि नौमि नभमास सुदामै। सुमनमाल धनुदिय घनश्यामै॥

दोहा—अब वंदौं बलरामको, धरणि धर्म आधार॥
कुंदइंदुपारदप्रभा, सकुची अंगुलिअकार॥ ३६॥

दुवनमत्त दंती मृगराजा। पुहुप अंड धारण गजराजा॥
डीलधराधर शील निधाना। ज्ञान विज्ञान विधान पुराना॥
दानवअचल विदारन गाजू। सुजन मोदकर संतसमाजू॥
यदुकुलनखत निशाकरपूरण। द्विविदवालि रघुवर करचूरण॥
नाग नगर पद्मिनि दलवाऊ। वल्वल खल अपमान पसाऊ॥
रामभराजिव गहन तुषारू। अदिति रोहिणी वामन चारू॥
सुकृत सुफल शरणागत केरे। दीन मीन जलराशि निवेरे॥
विजय प्रकाश करणदिनराजू। अहि खल खंडन करखगराजू॥
वैष्णवमतसुरधुनिविधिलोकू। नारद हरण अज्ञानज शोकू॥
सुमतिमृष्टिकरनिपुणविधाता। विघन नशोहर विमलप्रभाता॥
रेवति युक्ति अधार कवीशा। भक्ति उमा भूषित गिरिईशा॥

पालन पैज प्रजा पृथुराऊ। जय बलभद्र अभद्र दुराऊ ॥
दोहा—अब वंदों प्रद्युम्न प्रभु, सुंदर कृष्णकुमार ॥
जेहिंमिलि मेस्यो अतिदुसह,शंभुशापकोमार ॥३७॥
वीरधीर धनुधर शिरताजू । जयरतिरमण रूप रसराजू ॥
वज्रनाभ महिभार मुरारी । शंबर प्रबल त्रिपुर त्रिपुरारी॥
बहुरि करों अनिरुद्धहि वंदन । यदुनंदन नंदनको नंदन ॥
यदुकुलकटक सुविजै पताका । मदनलाडिलो शूरन साका ॥
वंदौं श्रीसात्यकी अनोखो । दारुण दुवन विदारण चोखो ॥
नाथ मनोरथ रथवर चाका । कृष्णसखा धृति धुरधरधाका ॥
यदुकुलसागर नमौ उजागर ।बढ़त निरखि यदुनाथ निशाकर
वंदौं कुंडिन कंतकुमारी ।विश्वअखिल छविनिशिउजियारी
वसुधाधिप विदर्भपति सागर । सृज्यो सुधारुक्मिणी उजागर ॥
असुर देव पन्नग सब भूपा । हरणहेतु तँह जुरे अनूपा ॥
द्विजकद्रू अनुशासनपाई । पन्नगारि गमन्यो यदुराई ॥
भूप सुरासुर गर्व उतारी । हऱ्यौ सुधा भीषमक कुमारी ॥
दोहा—सतिभामा वंदनकरौं, सतिभामा सम नाहिं ॥
विजयदेव द्रुम हरलता, मूरिप्रकट जगमाहिं॥३८॥
वंदौंकालिंदीपद दोई । तपगुणगहिवशकियप्रभुजोई ॥
वंदौं अवधअधीशकुमारी । दैविक्रम वसु वऱ्योविहारी ॥
जयभद्राय दुपाति महरानी । पतिव्रत सुखद रतनकी खानी ॥
नौमि जांबवति पदरज पावनि। सांब सोप मणि सीपसुहावनि ॥
नमो लक्ष्मणापद अरविंदा । नृपमदमोदि हऱ्यौ यदुचंदा ॥
नमो मित्रविंदा महरानी । यदुपतिचरण सेव रँग सानी ॥
वंदौं श्रीरेवतिपदकंजू । रोहिणितनय मोदप्रद मंजू ॥
षोडशसहस नाथ महरानी । वंदनकरौं जोरि युगपानी ॥

औरहु यदुकुल सतीमनाऊं । जिनप्रसाद सुंदरिमति पाऊं ॥
बाल युवा वृद्धहु यदुवंशी । वंदन करहुँ सकल सुरअंशी ॥
यहिविधि यादवकुलहि प्रणतिकरि। औरहु वंदन करउँ मोदभरि॥
दायकज्ञान विराग निदेशू । वंदौं शिरधरि गौरि महेशू ॥

दोहा–अब वंदौं करजोरिकै,जग सिरजक करतार ।
राम कृष्ण पद कमल युग,जाको सदा अधार ॥३९॥

जाको करि भरोस रघुराजू । वंदत भवकी भक्तसमाजू ॥
रचित रामरसिकनकी अवली । चाहत पावनमति अतिअमली।
संतसमाज सुधा जगमाहीं ।जावत कलिमलमृतक न काहीं।
संतसमाज विदित सुरसरिता । रघुपतिभक्ति वारिवर भरिता॥
संतसमाज विकुंठनिसेनी । गमनत जाहिं मुमुक्षुनि श्रेनी॥
संतसमाज देवतरु साँचो ।याचत करत विशेषि अयाचो॥
संतसमाज वरन तरुमूला । निगमागम जिहिं शाखअतूला॥
संतसमाज रूप यदुपतिको । सुमरत सेवत दायकगतिको ॥
संतसमाज कृपाण करेरी ।करतविजयकलिमल अरि केरी।
संतसमाज सुआकरजानी । रत्नविज्ञान भक्तिकी दानी ॥
संतसमाज शरद उजियारी । पातक तिमिर तोम अपहारी ॥
संतसमाज सजीवन मूरी । नमौं तासुपद धरि शिर धूरी ॥

दोहा–भवनिधि सुखद जहाज सोइ,केवट केशव तासु ।
मोसम अधम अनेकजन,तरणचहत अनयासु ॥४०॥

भगवत और भागवत दोऊ । कहत समान सुमति सबकोऊ॥
वेद पुराण संहितन माहीं । महिमा अमित अनूप सोहाहीं॥
विनासंतपद सेवन कीन्हे । कोउनहिं हरिस्वरूपसति चीन्हे
जहँ जहँ जाको मिले मुरारी । हेतुसंतपद सेव विचारी ॥
ताते भगवत भक्तिहु तेरे । संतभक्ति वरवेद निवेरे ॥

दुर्लभधि पारथसों हरिभाषा। करन जोमोहिंमिलनअभिलाषा॥
साधन करत जन्म बहु बीतें। लहत परमगति जगत अभीतें
पै यकजन्महिं महँ बहुतेरे। मिलें मोहिं जग सुयश उजेरे॥
सो सब साधु सेव परभाऊ। राममिलन नहिं आन उपाऊ॥
यह साधन अतिसरल विचारो। कहहुँ सकल जो सुनो हमारो॥
प्रथमकरै सज्जनका संगा। तब कछु रँगत रामके रंगा॥
होति तबहिं हरिनामहिंप्रीती। जपै निरंतर तजि जगभीती॥
नामप्रभाव कथा रुचि होई। जेहि जानत यदुपति सबकोई॥

दोहा—कथा सुधा श्रुति अंजली,करत पान दिन रैन।
लीला धाम स्वरूपहू,जानत ह्वै मतिऐन॥४१॥

तब सर्वस जानत मनमाहीं। साधुसमान और कोउ नाहीं॥
तन मन धनते संतसमाजू। सेवत जानि आपनो काजू॥
निष्ठा दया शांति तब होवै। जन्मअनेकनि पातक खोवै॥
तब हरियश वर्णत दिन राती। सुरत लगति हरिमहँसबभाँती॥
बाढ़त अधिक अधिक अनुरागा। कहवावत जगमहँ बड़भागा॥
जगत सुरति छूटति क्षणमाहीं। कामादिक शठ चोर पराहीं॥
बाढ़त सज्जन संग प्रभाऊ। मिलत धाय तेहि यदुकुलराऊ॥
यहविधि सहज परमगति पावै। पुनि नकबहुँ संसृतमहँ आवै॥
यही सत्य करि लेहु विचारा। विनहरिसंतन कबहुँ उबारा॥
भगवतचरित कथन अतिसोहा। पै नमिटत मानस कर मोहा॥
जो भागवत चरित्र बखाना। माया मोह तुरंत पराना॥
सकल शास्त्र सिद्धांत यहीहैं। लोकहुँमहँ यह प्रगटसहीहैं॥

दोहा—सोइ विचारि हरि गुरु कृपा,मतिमोरिहुअतिथोरि।
लगी कृष्णगाथा कथन,कबिउक्तिन कहँचोरि॥४२॥

श्रीभागवत कृष्णकर रूपा। देवगिरा गुरु परम अनूपा॥

रच्यो तासु भाषापरबंधू। औरहु कछुक कथा सम्बंधू॥
भयो बयालिस सहस सोहावन। सादर सुनत रसिकजन पावन॥
सो सब जानहु मोरि ढिठाई। चढ़ किंपिपील मेरु शिरजाई॥
पैसंतनपद रज धरि शीशा। बारहिं बार वंद जगदीशा॥
संत चरण कछु भाषण चाहौं। मतिअनुसार ताहि निरबाहौं॥
प्रथम साधुमहिमा अब ताते। भाषणचहौं मिटै भ्रम जाते॥
साधु करत सबको उपकारा। साधु सरिस नकोउ संसारा॥
दोष कछुक नहिं मोको देहैं। बिगरहु मम सुधार सतिलेहैं॥
साधुचरण रज शिरमैं धारी। बिरचौं संतचरित सुखकारी॥
मंगल रूप मंगलाचरणा। यहहिहेतु मैंहूं यहि बरणा॥
महिमा संतनकी जगमाहीं। बरणिपार गवनै कोउ नाहीं॥

सोरठा–शिष्टाचार विचारि, मानि मोद मंगलप्रदै॥
हरि गुरुचरण सँभारि, हरिगुरुको वंदन करौं॥१॥

दोहा–गुरु हरि रूप मुकुंद पद, वंदौं बारहिंबार॥
जाके बल उतरन चहौं, यह दुस्तरसंसार॥ ४३॥

म्वहिंअधारदूसर कछुनाहीं। नैननयक गुरुपद दरशाहीं॥
गुरुपद सरिस न द्वितियदयाला। बिलुलकसकलकलुषकलिकाला
म्वहिंसम अधम अयान अयोगू। पायो राम नाम सुखभोगू॥
होत नमहि मुकुंद अवतारा। तो मोसम मतिमंद गँवारा॥
तारतको न जलधि जगघोरा। कौन बुझावत नंदकिशोरा॥
हरि गुरु श्रीमुकुंद गुण गाथा। आगे कछु कहिहौं सुखसाथा॥
अब हरि गुरु पितुपद नति करहूं। जासु भरोस सदा उर धरहूं॥
सुमति सुमंगल मुद करतूती। शील साहिबी शरम सपूती॥
इनको मूल पिता नति जानो। मोर निहोर कछू नहिं मानो॥
जस करतूति सुदान सुभाऊ। धर्म वीरता भक्ति प्रभाऊ॥

रचनकाव्य आदिक गुण जेते । औ सन्मान् गान गुण केते ॥
रहे अपूरब मो पितु केरे । लाज होति वर्णत मुख मेरे ॥
दोहा—पै वसुधामें विदित सो, तातें कहत न लाज ॥
करिहौंमैं आगे कथन, जहँ कलि भक्त समाज ४४॥

रामरसिकावलीग्रंथके नियम ॥

रामरसिकअवली महँसोहा । द्वादश चौपाई पर दोहा ॥
कहुँ कहुँ छंद मनोहर रीती । आदि अंत साधुनपर प्रीती ॥
चारि खंड ग्रंथहिं परमाना । कृत त्रेता द्वापर कलि जाना॥
युग युगके भक्तन आख्याना । युग युग खंडनलिख्योविधाना॥
यक यक भक्तन कथा प्रयंता । विमल सकल अध्याय लसंता॥
कहूँ विशद कहुँ लघु विस्तारू । जस जेहि भक्त कथासुखसारू॥
भक्तमाल नाभाजू केरी । प्रियादासकृत टीका हेरी ॥
तामें जो संक्षेप बखाना । सो कछु विस्तर करौं प्रमाना॥
भक्तमाल वर्णत मुखमाहीं । अपरकथा जे संत कहाहीं ॥
लिखिहौं तेऊ मैं यहि माहीं । पूछि पूछि सब संतन पाहीं ॥
भये संत जेऊ यहि काला । कहिहौं तिनहुँन चरितविशाला॥
देखी सुनी जौनहै भेरी । कहहुँ ग्रंथ महँ सकलनिवेरी ॥
दोहा—संवत उनइससैचतुर, दशसावन सितपर्व ।
रचन रामरसिकावली, किये अरंभ अगर्व ॥ ४६ ॥
नाभानिर्मितयदपिविशाला । अहैअनूप भक्तकी माला ॥
कछु नप्रयोजन यहि निर्माना । तदपि कियो मैं अस अनुमाना
ग्रंथ प्रपन्नामृत मनहारी । चरित सुदिव्य सूरि सुखकारी ॥
औरहु भार्गव जौन पुराना । तिनमें संतन चरित बखाना ॥
ते समग्र नहिं भक्तमालमें । भनितरहे जे वही कालमें ॥
नाभासरिस न कोउ जगमाहीं । वरण्यो साधुचरित्रनि काहीं ॥

जय नाभा गुरुबुद्धि विशाला। मोपर कृपा करहु यहिकाला॥
नाभा चरण धूर शिरधरिकै। वरणोंसाधुचरित सुखभरिकै॥
जय जय प्रियादास गुरुचरणा। भक्तमालटीका जिन वरणा॥
करहु दया मोपर प्रियदासू। कथनचहौंकछु संत विलासू॥
जीव चराचर भुवन निवासी। वंदौं सकल कृष्ण जिनवासी॥
नित्यानंद भये यक साधू। संतचरित सो रच्यो अगाधू॥

दोहा—तिनहुनकोमत लै कछुक, विरचौं संतचरित्र॥
पूर्वाचार्यनकी कृपा, मानि सकल जगमित्र॥ ४६॥

इति सिद्धश्रीमहाराजाधिराज सीतारामचंद्रकृपापात्राधिकारीमहाराज बांधवेशश्रीविश्वनाथसिंहात्मजसिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीमहाराजा बहादुर श्रीकृष्णचंद्रकृपापात्राधिकारी श्रीरघुराजसिंहजूदेवविरचितायां श्रीरामरसिकावल्यां सतयुगखंडेवंदनावर्णनंप्रथमोऽध्यायः १

अथ सत्ययुगके भक्तोंकी कथा॥

दोहा—भक्तिरूप रसपंच विधि, प्रियादास जो कीन॥
भक्तिरसामृत सिंधुमें, सो विस्तृत कहि दीन॥ १॥

औरहु जेते भक्ति प्रकारा। द्वादशनवरस पंच विचारा॥
नौसत्ताइस और इक्यासी। भक्ति भेद जे आनँदरासी॥
यहिविधि औरहु वस्तु विचारो। भक्तिरसामृत सिंधुनिहारो॥
अरु भक्तनके लक्षण जेते। लिख्यो भागवत महँ पुनितेते॥
सोमैं नाहिं इत कियो उचारा। जानि भीति ग्रंथहि विस्तारा॥
केवल भक्त चारि युग केरे। तिनके जेहैं चारित घनेरे॥
सोई मात्र कथौं यहि माहीं। कछुक कथा उपयोगिन काहीं॥
सतयुग भक्तन प्रथमहिगाऊं। तिन में विधिको प्रथम गनाऊं॥

अथ ब्रह्माजीकी कथा ॥

एक समयविधि आसन माहीं । बैठरहे ध्यावत प्रभुकाहीं ॥
तहँ नारद मुनि तुरत सिधारे । धातहि ध्यावत नैन निहारे ॥
तब मनमें अति विस्मयकीन्हो । इनहि जगतपति हमचितचीन्हो
ये अब करत कौनकर ध्याना । असविचारि पूछौ मतिवाना ॥
दोहा—ध्यावत जगत तुमाहिंसकल, तुमध्यावहुकेहिकाहिं ॥
देहु बताइ विशेषि मोहिं, बूझि परत कछु नाहिं॥१॥
सुनि नारदके वचन सुखारे । तजि समाधि विधि नैनउघारे॥
बोल्यो विहँसि सुनहु मुनिराई । जेहिहम ध्यावहिं ध्यान लगाई ॥
वाहीके माया वश जीवा । कहत जगद्गुरु मोहिं अतीवा ॥
म्वहिंसमविधिशिवसहसविलोचन। प्रगटत पालत नाशत रोजन
ईश एक सोइ और अनीशा । भजौं ताहि मैं पद धारि शीशा॥
असकहि नारद सों बहु भाँती। हरि उपदेश दियो बहुराती ॥
करि नारदकी विदा विधाता । सोचनलग्योफेरि विलखाता ॥
भ्रमवशजन मोहिंजानतस्वामी। जानत नाहिं स्वामी खगगामी॥
अससोचत यदुपतिकहँध्याई । दियो विरंचि समाधि लगाई ॥
बैठसमाधि वित्यो बहुकाला । भई तहाँ नभगिरा रसाला ॥
तप तप सुन्यो शब्दबड़भागा। चौंकि चहूंकित चितवन लागा
देख्यो कोऊ कहुँ कित नाहीं । तासु अर्थ सोच्यो मनमाहीं ॥
दोहा—करत महातप विपिनमधि, चलेगयो करतार ॥
तहँ अखंड लागी सुरत, यथा तैलकी धार ॥ २ ॥
तहँ भावनाकरत मनमाहीं । पूजत हरिपद पंकज काहीं ॥
प्रगट भयो हरिधाम समेता । कमला संयुत कृपानिकेता ॥
मिले सप्रीति बहोरि बहोरी । कह्यो नाथ आज्ञा करु मोरी॥
रह्यो जगत पूरुब तस कीजै । यथाभाग लोकन करि दीजै ॥

विधिकहँ प्रभु विरचत बहुकाया। ज्ञान घटी बाढ़ी तब माया ॥
किहिविधि होइ मोर उद्धारा । का अनुशासन होत तुम्हारा॥
कह्यो मुकुंद मंद मुसकाई ।जनत जगत तोहिं भ्रमन सताई॥
धरि मेरो शासन निजशीशा । रचहु जगत परजनके ईशा ॥
कृष्ण शिषापन धरि शिरधाता। रच्यो जगत जसपूरुबख्याता॥
पुनि जब बढ़्यो भूमि करभारा। तासु उतारन कृष्णविचारा ॥
लीन्हो यदुकुल महँ अवतारा । लगे चरावन वत्स अपारा ॥
विहरत ब्रजमहँ निरखि मुरारी । ग्वाल बाल सँग परम सुखारी॥

दोहा–अवलोकन लीला ललित, आयो नभ करतार ।
निरखि साँवली माधुरी, मूरति रसिकअधार ॥ ३ ॥

ग्वाल बाल हरि सखा पियारे । वेणुविषानलकुटकरधारे ॥
विहरत यमुना पुलिन मझारी । हरि बाँसुरी बजावत प्यारी ॥
खेलत हरिसँग खेल अनेका । स्वामी सेवक कौन विवेका ॥
जक्यो विरंचि गन्यो धनिभागा । पुनि उपजो अतिशयअनुरागा
मनमहँ लग्यो विचारन भूरी । हम शिवजेहिपदधारहिंधूरी ॥
सो प्रभु खेलत गोपन माहीं । इनसम कोउ धरणी धनिनाहीं॥
महा भागवत गोकुल गोपा । हरिहित जगतनेह कियलोपा॥
गोप वत्स पदरज शिर धारहुँ । कौनेहु भाँति धाममँडारहुँ ॥
धामसहित तौ मैं धनि होऊँ । जनमअनेकदुरितद्युति खोऊँ॥
अस विचारि मन परम प्रवीना । विरच्यो तृणतेहिविपिननवीना
चरत चरत बछरा कढ़ि दूरी । चरणलगे सोइ तृण सुखभूरी॥
तब यदुपतिनिजभोजनत्यागी । ल्यावनहित बछराअनुरागी ॥

दोहा–ल्याऊँ बछरन सखनढिग, लिहेपाणिमें कोर ।
फेरनहित कछुदूरिलौं, कीन्हो यदुपतिदौर ॥ ४ ॥

सोइअंतर विरंचितहँ पाई । हरचो बाल बछरा सुखछाई ॥

लै अपने पुर पदरज झारयो।पुरजनसहितशीशनिजधारयो॥
पुनिदेख्यो इतहरि कहँ आई। तैसे बाल वत्स समुदाई॥
ब्रजवासी बछरा अरु बालक। तिनकोपदरजअतिभ्रमघालक
सो सप्रीतिविधिशिरधरिलीन्हो। तासुप्रभाव प्रगटहरिकीन्हो॥
अपनी दिव्य विभूति दिखाई। कोटिनजन्मजोध्याननआई॥
बालक वत्स रहे तहँ जेते। चारु चतुर्भुज सोहत तेते॥
नारायणके रूप विशाला।रमासहित शोभित तिहिकाला॥
पुनि जब येक रूप प्रभु भयऊ। तबधातासमीप चलि गयऊ॥
अस्तुति कीनी विविध प्रकारा। नायो पद शिर बारहिंबारा॥
दीन्हो बालक वत्स बहोरी। कह्यो पूर आशा भै मोरी॥
यदुपतिसम को कृपानिधाना। मोहिंदरशायो रूप महाना॥

दोहा—यहिविधि विधिके बहुतहैं, चरितपुराणनमाहिं।
सो केहिविधि मैं लिखिसकौं, वर्णननाहिंसिराहिं॥८॥

इति श्रीसिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीमहाराजाबहादुरश्रीकृष्णचंद्रकृपापात्राधिकारश्रीरघुराजसिंहजूदेवविरचितायांश्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेब्रह्मचरित्रवर्णनंनामद्वितीयोऽध्यायः॥२॥

अथ नारदकी कथा॥

दोहा—अब वर्णौं नारद कथा, महाभागवत जोइ।
जासु पुराणनमें चरित, प्रगट कहत सबकोइ॥ १॥

यक हरिभक्त विप्र मतिवाना। रह्यो कौनहूंविपिनमहाना॥
तहँ आषाढ़मास नियरान्यो। वर्षागम सबको दरशान्यो॥
तब विहरत वसुधा सुखछाये। सनकादिकतेहिकुटीसिधाये॥
तिनको करि सतकार सुधारी। राख्यो विप्र मासहू चारी॥
रही एक पूरुबते दासी। ताको पुत्र रह्यो मतिरासी॥

सो सनकादिक सेवनमाहीं । विप्र लगायो बालक काहीं ॥
सेवत मुनिन सुनत हरिगाथा । बालक नितहिं नवावत माथा॥
मुनि विलोकि बालकसेवकाई । देह जूंठ नित ताहि बुलाई ॥
संत उच्छिष्ट खात तेहिकेरी । बढ़ी भक्ति मुदमंगल ढेरी ॥
रामचरण युग प्रेम महाना । दिन दिन दून दून अधिकाना॥
करिकै कृपा मुनीश सुतंत्रा । दियो बाल कहि माधव मंत्रा॥
वर्षागई शरदऋतु आई । चले मुनीश कृष्ण गुणगाई ॥

दोहा—जबते मुनि गवने अनत, तबते बालक सोइ ॥
गोविंद गुण गावत बितत, निशिदिन विहँसत रोइ १

येक समय रजनी अधियारी । डस्यो व्यालबालक महतारी ॥
जननी जब सुरलोक सिधारी । तब बालक अति भयो सुखारी॥
निकसि चल्यो गोविंद गुण गावत।विपिन अकेले अति सुखपावत
विकसित वारिज रह्यो तड़ागा । तेहि तट बैठ्यो भरि अनुरागा॥
श्रीरघुवीर चरण अरविंदा । निज मानस करि दियो मिलिंदा॥
जब प्रभु अपनो रूप दिखायो।चितचकोर शशि सुछवि छकायो॥
पुनि कीनो वपु अंतर्ध्याना । तब बालक अतिशय अकुलाना॥
व्याकुल बुद्धि निमेष उचारा । गगन गिराभै सुखद अपारा ॥
मिलिहौं द्वितिय जन्म महँ तोहीं ।तैं बालक अतिशय प्रिय मोहीं॥
यह सुनि विरह विवश मतिधीरा । तज्यो तुरत आपनो शरीरा॥
पुनि विधि गोदहिं ते प्रगटान्यो। नारद नाम जासु जगजान्यो ॥
महाभागवत दीन सनेही । हरि उपदेश कियो नहिं केही ॥

दोहा—देखिदशाहरिजननकी, प्रेमविवशभरिकंठ ॥
देन ओरहनो आसुहीं, गवनत भयो विकुंठ ॥ २ ॥

कह्यो नाथसों दोउ करजोरी । सुनु चितदै विनती प्रभु मोरी॥
तेरो गुण गावत सुखसारा । मैं प्रतिदिन विचरौं संसारा ॥

मनुज उपासक देवन केरे। सुख संपति युत लख्यो घनेरे ॥
जे जन जौनहिं देव उपासैं। ते सुर तासु विपति दुख नासैं ॥
ह्वै प्रत्यक्ष असकरहिं बखाना। मनवांछित माँगहु वरदाना ॥
जोइ माँगत सो इ पावत आसू।तिय सुत धन महि विभव विलासू
पै प्रभु जे अनन्य तोहिं ध्यावैं। कबहुँनते तोसों कछु पावैं ॥
दीनमलीन हीन सब भाँती। मांगत भीख फिरत दिन राती ॥
यह अचरज मोहि देखि नजावै। दुनीदीन तुव दास कहावै ॥
तेतो त्रिभुवन केरअधीशा।मिटत सकल दुखनावत शीशा॥
सुनि नारदके वचन सुहावन। बोले विहँसि पतितके पावन ॥
यह म्वहिंको नारद दुख भारी। जौन कही तू बुद्धि विचारी ॥

दोहा—सबदेवनके दास जे, ते सुख संपति पूर ॥
मोरदास मम आशकरि, रहत जगतरस झूर ॥ ३ ॥

कहाकरौं नारद नहिं दोषू। देनचहौंतिय सुत महि कोशू ॥
भलभल कहौं मांगु मन जोई। पै माँगत मोसों नहिं कोई ॥
बिन मांगेहुँ बरबस जो देहूँ। तो नहिं लेत भांतिते केहूँ ॥
कहाकरौं यह अति पछिताऊँ। नारद तुमहिं उपाय बताऊं ॥
सुनत मुनीश कह्यो मुसकाई। यह कत कहहु बात यदुराई ॥
जो तुम देहु तो कस नहिं लेहीं। सुखआशा जगमें नहिं केहीं ॥
वचन मोर जो मृषा विचारो। देन हेत किन तुरत सिधारो ॥
दीन्हेहुँ पै न लेहि जो दासा। छुट्यो तुम्हार दोष अनयासा॥
प्रभु कहँ चलि मुनि देहु बताई। चलिहौं मैं तुम सँग अतुराई ॥
तब मुनिनाथहिं तुरत लेवाई। आयेब्रजधरणी महँ धाई ॥
निरखि साधु यक कह मुनि राई। देखु दास अपनो यदुराई ॥
कुंजगली बिच बैठ मलीना। बीन्योशिलाक्षुधावश छीना ॥

दोहा–पंथाके कंथा किते, अपने हाथ बटोरि ॥
लैकाँटा पुनि पुनि सिअत, फटत बहोरि बहोरि॥४॥

देखि नाथ ऐसो निजदासू । तासु समीप गये चलिआसू ॥
पीतांवर दिय ताहि वोढ़ाई । चौंकिउठयोचितयो यदुराई ॥
परममाधुरी मूरति प्यारी । गदा चक्रधर असि धनुधारी ॥
युग अवलंब लंब भुजचारी । बदन कोटि शशिप्रभा पसारी।
नवनीरद तनु श्याम सुहावन । मंदहास आनँद उपजावन ॥
भूरि विभूषण भूषित अंगा । नारद खडे नाथके संगा ॥
कह्यो मुकुंद मंद मुसकाई । माँगहु साधु तुमहि जोभाई ॥
जो माँगिहो तौनहीं देहैं । बिन दीन्हे इतते नहिं जैहैं ॥
हरिके वचन सुनत सुखदाई । बोल्यो साधु मंद मुसकाई ॥
लाला तुम माँगे नहिं देहौ । जानि परत मोसों नटिजैहौ ॥
भाषहु जो प्रण रोपित्रिवारा । तौ मनवांछित सुनहुहमारा ॥
देव देव हम देव विशेषी । कह्यो नाथ मन अचरज लेखी ॥

दोहा–कह्यो साधु कर जोरिकै, यही देहु घनश्याम ॥
यह झगरा में मतिपरो, मतिआवहु तजिधाम ॥ ५ ॥

चिरकुट सियत देखि तेहि नाथा। धरिदीन्हो पीतांवर माथा ॥
यहू गहव हम नहिं अस भाषी । दियो फेंकि चिरकुट मनभाषी
साधु देशालखि कृपानिधाना । नारद ओर ताकि भगवाना ॥
कह्यो कहहुका हम यहि दीजै । दीन्हेहु पै नलेत काकीजै ॥
दशा कृष्ण दासनकी हेरी ।मति मुद उदधिमगन मुनि केरी
ताहि साधु कहँ बहुत बखाना ।पुनियदुपति सँग कियो पयाना
जब गोविंद निजधाम सिधारा । मुनि विचरन लाग्यो संसारा॥
बीन बजावत हरिगुण गावत । निशिदिनरामरूप रति भावत
करत अनेकनजन उपदेशा । प्रेममगन विचरत बहु देशा ॥

माया मोहित मनुज विशेखी। उपदेशहु. पै ज्ञान नदेखी॥
गयो बहुरि वैकुंठधामको। जहँ निवास नित सिया रामको॥
कह्यो जोरिकर सुनहु खरारी। तुवैंमाया वश जीव दुखारी॥
दोहा—देखतनाहिं संसारमें,व्याल सरिस यह काल॥
नहिं उपाय कछु करत जेहि, मिटै जगतजंजाल ६॥
यह दुख मोहिंलागत अतिभारी। देहु उपाय बताय विचारी॥
कह्यौ नाथ मोहित मम माया। तजन जीव चाहत नहिंकाया॥
यह अनादि सम्बन्ध विचारो। संतसेव गुरुहेतु उधारो॥
मृषा मातु तौ चल जग माँहीं।जगततजन कहियोकोउकाहीं॥
कह मुनि सत्य कहहु यदुराया। हमहूँ लखन चहैं तुव माया॥
जाहु देवऋषि देखन सोई। मममाया कौतुक जो होई॥
चल्यो मुनीश मही महँ आयो। विचरन लाग्योअतिसुखछायो॥
फिरतफिरत इक नगरसिधार्‍यो। वनिक वृद्धयक तहाँनिहार्‍यो
रहे तीनसुत अरु षटनाती।तिमि धन धाम विभव सब भाँती॥
नात कुटुंब और परिवारा। पूरणरहे अनेक प्रकारा॥
गुणि तेहिबनिकवृद्धमनमाहीं। करहिं अनादर सब तेहिकाहीं॥
सांझ चना चावन कहँ देहीं। सुत सुतवधू न तासु सनेही॥
दोहा—फटे पुराने वसनतेहि, देहि विते बहुवार॥
ताकन हित बैठाइ तेहि, राखहिं घरके द्वार॥ ७॥
नैनमंद पगचालिनाहिं जावै। आवत जात नारि गरि आवै॥
करहिं बाल सिरतलहि प्रहारा। कहहिं याहि यमराज बिसारा॥
बनिक दशाइमिनारखिमुनिशा। कियो विचार सुमिरि जगदीशा
यहिसमदुखी न कोउ जगमाहीं। यह तजिहै निजते जगकाहीं॥
असविचारितेहि निकटसिधारी। वनिक बुझावतगिराउचारी॥
बूढ़ भये कर पद दृग मंदा। देहि सकल कुलके दुख दंदा॥

हम लै चलहिं विकुंठहि तोको। तोहिं देखि दाया भै मोको ॥
वनिक सुनत नारद के बैना। बोल्यो माषि लाल करिनैना ॥
जाहु जाहु तुमही मुनिराई। हमका करब विकुंठहिं जाई ॥
घरतकिहैं को जो हम जैहैं। कहँ सुत सुततिय सुत सुत पैहैं।
वनिक वचन सुनि फिरे मुनीशा। कह्यो धन्य माया जगदीशा ॥
वनिकमरयोपुनिलहिकछुकाला। भयो ताहि घरमहिषविशाला॥
दोहा–भूरि भारि भरगोनिमें, तासु पुत्र तेहिलादि।
गवनहिं दूरि विदेशकहँ, देहि न तेहिअन्नादि ॥
श्रमितचलैंनहितवअति कोहैं। अरई तासु नितंबै पोहैं ॥
कहुँ उठि चलत गिरतपथ माँहीं।क्षुधा तृषावशनिशिदिनजाहीं ॥
ऐसी दशा देखि तेहि केरी। नारद आइ कह्यो पुनि टेरी ॥
अबहूँ चलु विकुंठ मतिमंदा। अहै तोहिं अब कौन अनंदा॥
महिष योनि भारित अतिभारा। तापर ताडत तोर कुमारा ॥
कह्यो महिष तब मुनिसों कोपी। हम नहिंहैं विकुंठ के चोपी ॥
जो हम अब विकुंठ को जैहैं। सुत केहिलादि विदेशसिधैहैं ॥
फिरे वचन सुनि अस मुनिराई। मरिगो महिषकाल कछुपाई ॥
भयो श्वान पुनि तेहि घरकेरो। द्वारे बीतत सांझ सबेरो ॥
पुत्र पौत्र जब निकसत खाई। टूका देदेवैं दुरिआई ॥
कबहुँप्रवेश करत घर जबहीं। मारहिं नारि लुकेठन तबहीं ॥
देखि दशा अस पुनि मुनिराई। जाइ श्वान ढिगगिरा सुनाई ॥
दोहा–अबहुँ चलो वैकुंठको, अब दुख बाकी कौन।
क्षुधा छामतनु कंडुबहु, कसनहि छाँड़हु भौन ॥ ९॥
नहिंजैहौंविकुंठकहश्वाना। मोहिं महादुख तजतमकाना ॥
आवहिं राति चोर घर मेरे। चारौं पहर करौं घर फेरे ॥
भूंकि भूंकि निज सुतन जगाऊँ। यहविधि आपन ऐनबचाऊं ॥

जो हम अब विकुंठको जैहैं। चोर चोराइ सबैधन लैहैं॥
नारद फिरे फेरि मुसकाई। श्वान मीच कछुदिनमहँ पाई॥
भयो तासु नरदा को कीरा। अक्षत मलहु मूत्र नहिं पीरा॥
तब नारदमुनि तहँ पुनिआये। कछुककोप असबचनसुनाये॥
तोहिं धिग धिग पामरमतिमंदा। अबहुँनछोड़त जगकरफंदा॥
भयो कीट मलको सुखहीना। तदपि होतनहिं मोहविहीना॥
अबहूँ चलु विकुंठ को पापी। तोहिं करौं मैं आसुअतापी॥
कह्यो कीट तब म्वहिं सुखभारी। जीवहुँ निजपरिवारनिहारी॥
सुनत वचन पदघासि मुनिराई। लैगो तिहि विकुंठ वरियाई॥

दोहा—मैं जगते इकजीवको, मायाबंधन छोरि।
ल्यायो नाथ समीप तुव, अस कह मुनि कर जोरि१०॥

नाथकह्यो निजते नहिंआयो। तुमहत्याकरि बरबसल्यायो॥
माया मोहित जीव अनेकू। जगत तजन चितचहत ननेकू॥
भाग्यवशात पाय सतसंगा। सुधरतसकल होत जग भंगा॥
यहि विधि नारद कथा अपारा। बरणि कौन पायो कवि पारा॥
सदा प्रसन्न साधु सब पाहीं। कोपहुँ मंगल हेतु सदाहीं॥
विहरत धनदकुमार तड़ागा। निकस्यो तहँ नारद बड़भागा॥
नारी देख पहिरि पट लीन्हो। धनदपुत्र नहिं कछु चित दीन्हो॥
जड़ता जोहि दीन्ह मुनि शापा। होहु विटपब्रजके बिन तापा॥
हरि लैहैं यदुकुल अवतारा। करिहैं अवशि तुम्हार उधारा॥
नारद शाप प्रगट परभाऊ। तिन उधारकीन्हो यदुराऊ॥
सो प्रसिद्ध भागवत पुराना। ताते मैं संक्षेप बखाना॥
नारदचरित पुराणन माहीं। वर्णहिं सिद्ध मुनीश सदाहीं॥

दोहा—ताते कह्यो न मैं बहुत, कथा अनोखी दोइ॥
लिख्यो राम रसिकावली, समुझि संत सुख होइ११॥

इति श्रीराम०स०खं नारदकथावर्णनोनामतृ०ध्यायः॥ ३॥

अथ शिवजीकीकथा ॥

दोहा-भनों बहुरि शिवकीकथा, सकल पुराण प्रसिद्ध ॥
भक्ति शिरोमणि जाँहि नित, नवहिं देव मुनि सिद्ध ॥१॥
शिव सम कौन दीन हितकारी । परहित पियो हलाहल भारी ॥
ज्ञान विराग भक्ति अरु योगू । करत सदा जनहित उत योगू॥
जगमंगल हित बड़ तप करहीं । राम नाम निशि दिवसउचरहीं॥
धन्यो सती सीताकर रूपा ।तेहि त्याग्यो यदि प्रिया अनूपा॥
एक समय गौरी शिव दोऊ । चढ़े वृषभ सँग गण सब कोऊ॥
चले करत पुहुमीकर फेरा । देख्यो एक ठाम युग खेरा ॥
उतरि तुरत नंदीते ईशा । कियो प्रणाम धारि महि शीशा॥
पुनि चढ़िनंदी चले पुरारी । पाणि जोरि तब शैलकुमारी॥
अतिशंकित बोली अस बैना । केहि प्रणाम कीन्हो सुख ऐना॥
भन्यो शंभु मंदहि मुसकाई । सुनजेहि कियो प्रणत शिरनाई
यहि थल विते सहस दशशाला। भयो एक हरिभक्त विशाला॥
दुती खेरमहँ सुनहु पियारी । हैहै कृष्ण भक्त रतिधारी ॥
दोहा-ताते दूनहुँ खेरको, सादर कियो प्रणाम ॥
कृष्णभक्तको भक्तमैं, सत सेवन मम काम ॥ २ ॥

इति श्रीरा०सतयुगखंडेशिवचरित्रवर्णनोनामचतु० ॥ ४ ॥

अथ सनक, सनंद, सनातन, सनत्कुमारकी कथा ॥

दोहा-जय भागवत प्रसिद्धजग, सनकादिक जिननाम ॥
मंत्र हरिस्मरणंसदा, जपत रहत वसु याम ॥
विधि मनते सनकादिक जाये । तुरतै यहिविधि वचन सुनाये॥
सृष्टिकरो जग पूरण हेतू । मानहु मम शासन मतिसेतू ॥
तब सनकादिक वचन उचारो । मायाफंद गले नहिं डारो ॥

करिहैं हम हरि भजन सदाहीं। मनिहैं तिहरो शासन नाहीं॥
असकहि परम धर्म अनुरागे। पंचवर्षकी वय बड़ भागे॥
विचरहिंजग उपदेशहिंकारन। कबहुँ नजात धनिनके द्वारन॥
पै पृथुको गुणिराम सनेही। आये कहन दशा जसदेही॥
कह्यो बुझाय सुनाय सभाको। परमधर्म सब भन्यो सदाको॥
सनकादिक सम कोउनाहिं भयऊ। कबहुँ न माया वश मन गयऊ॥
यदपि कृष्ण प्रेरण वश ज्ञानी। जयविजयहिंदिय शाप महानी
तदपिनाथ सों पुनि अस भाष्यो। नरक हमहिंइनको वदिराखो॥
बार बार प्रभुसों पछिताने। तब हरि कारण सकल बखाने

दोहा—और प्रसिद्ध पुराण में, सनकादिककी गाथ॥
मैंकहँलों वर्णनकरों, पुनि पुनि नावहुँ माथ॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेसनकादिकचरित्र
वर्णनोनामपंचमोऽध्यायः॥ ५॥

अथ कपिलदेवकी कथा॥

दोहा—अब मैं वर्णन करतहों,कपिलदेव इतिहास॥
देवहूतिसों प्रगट ह्वै, कीन्हो सांख्य प्रकाश॥ १॥

केवलपराहित जिनअवतारा। अवनि अनेकन अधम उधारा॥
कह्यो मातुसों ज्ञानविरागा। नाहिं संसार मोँह मनलागा॥
कर्दम तपकृत भोगविलासा। सुरदुर्लभ छोड़्यो अनयासा॥
अबलों गंगासेवन करहीं। जन उधार हितअतिश्रमभरहीं
सगरयज्ञको तुरँग चुराई। बाँध्यो कपिल निकट सुरराई॥
सकल सगर सुत साठिहज़ारा। हय हेरनहित जबहिं सिधारा॥
कपिलहिजानि चोर द्रुति धाये। मुनिमन हर्ष विषाद नलाये॥
अपनेहि पाप भये जरिछारा। सगरसुवन जे साठिहजारा॥

साधुद्रोहजे ठानहिं प्रानी । तिनहिं होत पावक इव पानी॥
जरहिं पतंग सरिस अनयासू । साधुसदा बिन सोच हुलासू ॥
कपिलदेवको देखि प्रभाऊ । दियो सुथल निजते सरिराऊ॥
भगवत भक्तनकहँ जगमाहीं । जड़हु करहिं सत्कार सदाहीं ॥
दोहा—दशो दिशा मंगल लहै, जड़ चेतन अनुकूल ॥
सब थल देखै नाथनिज, लखै न कोउ प्रतिकूल ॥२॥

इति श्रीरामरसिकावल्यां सतयुगखंडेकपिलदेवचरित्रवर्णनं नामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथ मनुराजाकी कथा ॥

दोहा—मैं वरण्यों संक्षेप यह, कपिलदेव इतिहास ॥
अब यह मनु महराजकी, कहौं कथा सहुलास ॥१॥

ब्रह्मतनयभे मनु महराजा । रामभक्त निज सहित समाजा॥
उदय अस्त निजशासनफेरचो । पाप प्रचंड डण्डसेपेरचो ॥
धरचो धर्म धुर धरणि मझारी । मातु समान तक्यो परनारी ॥
एक समय विचरत महिमाहीं । गयो सुकर्दम भवन जहाहीं ॥
देवहूति सँग रही कुमारी । शतरूपारानी छबिवारी ॥
लखि आदर अतिकर्दमकीन्हा। कंदमूल भोजनहित दीन्हा ॥
हरिशासन गुणि मुनितपधारी । देखो देवहूति सुकुमारी ॥
अतिलज्जित असगिराउचारी । देहुमोहिं महराज कुमारी ॥
नृपदुहिता मुनि व्याह अयोगू । पैगुणि मुनिकर भूप नियोगू ॥
दियो सुता नहिं अनुचितदेख्यो। द्विजहित निज सर्वस गुणलेख्यो।
देवहूति हरिभक्त महानी । पति मूरति हरिमूरति जानी ॥
पतिसेवत कृशतनुह्वै गयऊ ।तदपि न कछु विषादउरभयऊ॥

दोहा—अस्थि चर्म भरितनु रह्यो, रहिगे केवल श्वास ॥
तदपि न पतिसेवन करत, तनको बढ्यो हुलास ॥
देवहूति सम नहिं कोउनारी। यह जगमें पतिसेवनकारी ॥
दैदुहिता मुनिको सुखछाये। लौटिभूप निजसदन सिधाये ॥
नृपके भे सुत युगल धर्मरत। लघु उत्तानपाद गुरु प्रियव्रत॥
प्रियव्रत होतहिं नारद आये। परमारथ उपदेश बुझाये ॥
मुनि उपदेश तीरसमलाग्यो।जगतमृगयशुणिप्रियव्रतभाग्यो॥
मंदर कंदर रह्यो दुराई। राम कृष्ण मुखते रटलाई ॥
सुतवियोग लखि मनु महराजा। वृथाजानि अपनो सब काजा॥
गये विरंचि समीप सिधारी। कह्यो पौत्रतुव भो तपधारी ॥
सुनत भूप भाषित चतुरानन।चले चढिक प्रियव्रत जेहि कानन
मनु विधि नारद प्रियव्रत चारी। परमारथकी गिरा उचारी॥
मनुकह जग यहअजित अराती। समिटि लरैं हम तुम सब भाँती
गृह गढ़ धारि लरौ तुमजाई। हम विरक्त मैदान लराई ॥
दोहा—यहिविधि हम दोउ जितब जग,है कछु संशय नाहिं ॥
जो विरक्त अबहीं भये, किमि जितिहो जगकाहिं ॥
हैहौं अबहिं विरक्त जुप्यारे। तो हैहैं सब प्रजा दुखारे ॥
नीति सनातन यह श्रुतिगाई। सुतहिराज्यदै पितुवनजाई ॥
तुमहुँ सुतहिदै राज्यकुमारा। वनगवनहु लहिकै सुखसारा ॥
हम तुम्हारबदि वनमहँ ऐहैं। तुमऐहो तब परपुर जैहैं ॥
यहि विधि कह्योविधातहुताको। प्रियव्रत भो तब प्रभु वसुधाको
मनु महराज करन तपलागे। रामचरण अतिशय अनुरागे ॥
तेइससहस वर्ष जब बीते। तबहुँ न तपसों भूपति रीते॥
देव देन वरदान सिधाये। मनु महराज न कछु मनलाये॥
तब निजजन प्रण पूरण हेतू। रामसिया युत कृपानिकेतू ॥

खड़े भये मनु सन्मुख आई । भूपति गयो सुकृत फलपाई ॥
कह्यो नाथ मांगहु वरदाना । नृपति कह्यो हेकृपानिधाना ॥
होहुनाथ तुम पुत्र हमारे । बालचरित हम लखहिं तिहारे॥
दोहा—एवमस्तुकरुणायतन,कह्यो माथ धरिहाथ ॥
सोइ दशरथ भूपति भयो,यहिविधि मनुकी गाथ ॥३॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेसप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अथ प्रह्लादकीकथा ॥

दोहा—अब वर्णौं प्रह्लादकी , कथा मनोहर जोइ ॥
जासु सरिस नहिं भक्त कोउ,कहहिंसंत सबकोइ॥१॥
दितिसुत दैत्य उभयबलवाना । हिरनकशिपुहिरणाक्ष महाना ॥
काननकियो जाइ तप भारी । ह्वैप्रसन्न भाष्यो मुखचारी ॥
माँगु माँगु दानव वरदाना ।तुम सम किय न कोउ तपआना॥
असकहि छिरकिकमंडलुनीरा । कियोतासु अति पुष्टशरीरा ॥
माँग्योवर असुरेश विचारी । तुवकृत सृष्टि नमीचु हमारी ॥
एवमस्तु तब विधि कहिदयऊ ।दानव जीति सकल सुर लयऊ॥
जबदानवनि करचो तपहेतू । तब सब सुर बाँध्यो असनेतू॥
दानवनिले लूटि सब लीन्हे । असुरन हनिनिकासि सब दीन्हे॥
हिरणकशिपुकी जो इकनारी । लै सुरपति तेहि चल्यो सिधारी॥
नारद मिले आइ मगमाहीं । गर्भवती देख्यो तियकाहीं ॥
काकरिहो पूछ्यो मुनिनाथा । कह्यो सुरेशजोरि युगहाथा ॥
याके गर्भ माहिं रिपुमोरा । ताको वध करिहौं यहिठोरा ॥
दोहा—मुनिहि दया उपजी अतिहि,सुरपतिको समुझाय ।
लैगमन्यो निज संगतिय, निज आश्रममेंआय ॥ २ ॥
नारीउदर भागवत जानी । किय उपदेशहि ज्ञान विज्ञानी ॥

जब तप करि लौट्यो असुरेशा । तब पुनि जाय तुरंत निवेसा ॥
पुत्रसहित नारी कहँ दीन्हो । असुर अदोप मानिकै लीन्हो ॥
महाभागवत सोइ प्रल्हादा । सज्जनको दायक अह्लादा ॥
त्रिभुवन जीति असुर जब आयो ।बालक निरखि परमसुख पायो॥
कविसुत असुर वंशगुरुआमा । षंडामर्क रह्यो असनामा ॥
कह्यो असुरपति तिनहिं बुलाई । मोंबालककहँ देहु पढ़ाई ॥
षंडामर्क बोलि प्रहलादे । लगे पढ़ावन आसुरवादे ॥
पढ़ै नबाल रटै मुखरामा । करै गुरूशिक्षन वसु यामा ॥
नीतिशास्त्र जब गुरू पढ़ावै । तबप्रहलादहि ताहि सिखावै ॥
नीतिशास्त्र मन तुमहुँ नदेहू । करहु राम पद पंकज नेहू ॥
विहँसे गुरु सुनि बालक बानी । सिखवैमोंहिं शिष्य जनुज्ञानी ॥

दोहा—कह्यो वचन तबशक्रसुत,असन पढ़हु सुखलेखि ।
जो सुनिहै दानव अधिप,तौ कोपिहैविशेषि ॥ ३ ॥

असकहि आसुर विद्या केरो । दियो पाठगुरुसहित निबेरो ॥
गयो अनत गृहकारज हेतू । बालक बोलि तबै मतिसेतू ॥
लग्यो सुनावन कृष्ण प्रभाऊ । नवधाभक्ति सुधर्म स्वभाऊ ॥
बहुरि बालकन कह्यो कुमारा । स्वप्नसरिस जानहु संसारा ॥
बिन हरिभक्ति न मंगलहोई । सत्य सत्य जानहु सब कोई॥
छीजति छन छन आयुदाया ।कोटिनदिये न पुनि कोउ पाया
जेक्षण कृष्ण भजनमय जैहैं । तेई सकल सफलहठि ह्वैहैं ॥
हरिके होहु अनन्यउपासी । तब पैहौ बालक सुखराशी ॥
नतौजियत भोगिहो कलेशा । मरे पायहो दंडविशेषा ॥
रामकृष्ण गोविंद मुरारी । रसनारसनि यही सुखकारी ॥
कालव्याल वागत सबशीशा । परै नजानि करतका ईशा ॥
मायामोहित जीव अनेका ।करत न कछु जगमाहिं विवेका॥

दोहा—जो सुख संपति साहिबी,करन चहौ दुहुँ लोक ।
तौ अनन्य रघुवरवचन, भजहुबालबिनशोक ॥ ४ ॥
सुनप्रल्हादवचनभ्रमघालक । रामभजनलागे सब बालक ॥
षंडामर्क बहुरि पुनि आये । देखि दशा अतिशय दुखपाये॥
बोले सकल बालकन माषी । यहका पढ़हु सबै मुखभाषी ॥
कौन सिखायो तुम्हैं कुनीती । मानहु नाहिं मोहिं कछुभीती॥
बोले बालक एकहि वारा । हमहि सिखायो भूपकुमारा ॥
तब प्रह्लादहि कह्यो रिसाई । यहविद्या तोहिं कौनसिखाई ॥
तब प्रह्लाद कह्यो मुसकाई । राम प्रसाद गुरू हम पाई ॥
तुमहुँ भजौ हरि दीनदयाला । वृथा परे जगके जंजाला ॥
बहुरि कह्यो गुरु जो हरि कहिहै। तौ परचंड दण्ड शिशुलहिहै ॥
कह्यो सकल बालकन बहोरी । जोहरि कही त्रासतेहि मोरी ॥
असकहि गृहकारजहित गयऊ ।पुनि प्रल्हाद कहत असभयऊ ॥
करहिं गुरू विद्याहित त्रासा । तुमहि नदंड देनकी आसा ॥
दोहा—जोकरिहो तुम हरिभजन, तो प्रसन्नगुरुहोइ ।
मोसों कह्यो एकांतमें, अस जानहु सबकोइ ॥ ५ ॥
कृष्णभजत पावहु जो दंडा । तो हम जामिन हैं बरिबंडा ॥
गुरु अभिलाष मोरि भरिजानी। तुमहि अयान गुणतगुरुज्ञानी।
सुनि प्रल्हाद वचन यहिभाँती । लगे भजन पुनिहरिदिनराती॥
गुरू आइ अस दशा निहारी । हायहाय कहि भयो दुखारी ॥
गहि प्रल्हाद पाणि तेहि काला । लैगमन्यो जहँ असुरभुवाला ॥
देखि पुत्रको दानवराई । लीन्हो मुदित अंक बैठाई ॥
कह्यो पढ़हु जो पढ़ेहु कुमारा । तबै वचन प्रल्हाद उचारा ॥
कृष्णभक्ति पितु पढ़ा हमारी । जो भवकानन दहन दमारी ॥
शत्रु मित्रहै कोउ जगनाहीं । व्यापित राम सकल जगमाहीं॥

कठिन कराल अहै संसारा । बिन हरिभजे न होत उबारा॥
पिता त्यागि तुमहूँ जग आसा । होहु राम पदपंकज दासा ॥
बालवचन सुनि दानवराई । मानि मृपा मनहँस्यो ठठाई ॥
दोहा—षंडामर्कहिं पुनि कह्यो, कोउममारिपुजन आय ।
सिखयो मेरे पुत्रको, एकांतहि लैजाय ॥ ६ ॥
लैबालक गमनहु गृहकाहीं । सावधान अब रहहु सदाहीं ॥
कोउ बालकहि न सिखवन पावै । करिछल हारि निज दूतपठावै॥
नृपति वचन सुनि गुरुगहिवाले । गये बहुरि मोदित निजआलै॥
लगे पढ़ावन आसुर विद्या । जाहि वेद सब कहत अविद्या॥
सुनि गुरुपाठ कहै मुसकाई । रामकृष्ण यदुपति यदुराई ॥
सुनि असवचन गुरू अतिमाषैं । काह बकतरे शिशु असभाषैं॥
गृहकारजहित जब गुरु गवने ।कहहिंशिशुनसुमिरोसियवरने॥
पावहिं पढ़न न आसुर ज्ञानू ।तमनहिप्रविशअछताजिमिभानू॥
यहिप्रकार बीत्यो कछु काला । देखिदशा गुरु भये बिहाला ॥
अतित्रासित करि कह प्रल्हादे । रेशठ तोहिं भयो उन्मादे ॥
अब हम तोहिं नहिं नेकुपढैहैं । मारिकसा नृप ढिग लैजैहैं ॥
असुरनाथ हमको अनखाहीं । निजसुत ढंग जानते नाहीं ॥
दोहा—असकहिकसाप्रहारकिय, सोप्रल्हाद शरीर ।
कुसुमसरिस अतिसुखदभै, नेकुभईनहिंपीर ॥ ७ ॥
पकरिबाहु भूपतिढिग आये । षंडामर्क कोप अति छाये ॥
आशिष दै अस वचन उचारा । यह बालककुलचहतउखारा॥
मानतनहीं नेकु ममभीती । करत न कछु पाठनपर प्रीती॥
बरबस बकत विष्णु करनामा । जो तुम्हरो वैरी दुखधामा ॥
लेहु लाल अपनो महराजा । हमनहिं करब गुरू करकाजा॥
हमहीं कहँ तुम दोष लगैहौ । बालक कहँनहिं त्रासदेखैहौ ॥

सुनतहिरणकश्यप गुरुवानी । बैठायो निज अंकहि आनी ॥
कहेहु कहहु सिखयो गुरु जोई । हमरेहु सुनन लालसा सोई ॥
तब प्रल्हाद कह्यो मुसकाई । जय रघुनाथ राम रघुराई ॥
गुरू गिरावत म्वहिं भवकूपा । कैसे गिरहुँ जानि मैं भूपा ॥
जिनके उर न रामपद प्रीती । ते नहिं जानत नीति अनीती॥
कुमती करहिं मनोरथ नाना । स्वप्नसरिस सो सकल विलाना॥

दोहा—सुख संपति अरु साहिबी, बिनाभजे रघुनाथ ॥
मिटत वारिबुल्ला सरिस, मरे न लागत हाथ ॥ ८ ॥

सुनत पुत्रकी अनुपम वानी । कोपित भयो असुर अज्ञानी ॥
पटकि अंक ते बालककाहीं । बोल्यो वचन कठोर तहाँहीं ॥
रेसुत शठ यह कौन पढ़ायो । तासुनाम नहिं मोहिं बतायो ॥
मेरो लघुभ्राता वधकारी । ताहि भजत भय छोड़ि हमारी॥
कबहुँ राम हरि जो मुख कहिहै । जीवनघात आसु तै लहिहै ॥
मोहिं डरि जो कछु रह्यो लुकाई । ताहि लियो तैं नाथ बनाई ॥
लै गुरु जाहु भवन शिशु काहीं । कहन न पावै हरि मुख माहीं॥
अब जो कही दंड मैं देहौं ।पुनि नहिं बालक मानि बचैहौं॥
कह प्रल्हाद सहज बिनभीती । सुनहु पिता याकी असरीती॥
इंद्रिय सबहै जीव अधीना । जीवनाथ रघुनाथ प्रवीना ॥
सहज-ईशकर दास अनीशा । जपत हरिहि सुनु दानवईशा ॥
यामें कछु मोरा नहिं दोषू । जनक करहु तुम नाहक रोषू॥

दोहा—जो जानै यह भेदको, तो तेहि जगत हेराइ ॥
जो नहिं जानै भेद यह, ताहि नजगत सिराइ ॥ ९ ॥

सुनत कुपित कह शठ अस वानी।मोहिं सिखवत विज्ञान अज्ञानी
टारहु मम दृगपथ यहि काहीं । नातो मीचु होत क्षणमाहीं ॥
तब गुरु गहिकर भवन सिधारे । तेहि बुझाइ अस वचन उचारे॥

निजकुल धर्म तजहु नहिं ताता। जैहै बिगरि बनी सब बाता॥
कह प्रल्हाद मोर नहिं बिगरी। तुम देखहु निज बिगरी सिगरी॥
गुरु सकोप तब पुनि नृप पाहीं। कह्यो आय शिशु मानत नाहीं॥
तुरत असुर प्रल्हाद बोलायो। वारवार दृगलाल देखायो॥
दियो भटन कहँ हुकुम सुरारी। गजदंतन शिशु डारहु मारी॥
सुनि भट तुरत पकरि प्रल्हादै। ठाढ़कियो चौहट करिनादै॥
महामत्त मातंग मँगाई। दीन्हो सन्मुख तासु चलाई॥
दंती दंत दियो उरकैसे। दंड एरंड पषाणहि जैसे॥
टूटे रद करि रव मुख मोरा। प्रल्हादहि सुख दुखनहिं थोरा॥

दोहा—अचरजमान्यो असुर सब, धाय हन्यो तेहिशूल॥
टूटिगये सब लोहलगि, जैसेमूलकमूल॥ १०॥

पुनि सब असुर कोप अतिकीन्हे। बांधि तुरत प्रल्हादहि लीन्हे॥
कहे सकल धरणी खनि डारो। गाड़िदेहु यहिविधि यहिमारो॥
खनिकै गहिर गर्त तेहिकाला। डारयो कुँवरहि असुरकराला॥
तोप्यो उपर मृत्तिका भूरी। दियो पषाण उपरते पूरी॥
मरिप्रल्हादगयो असजाने। सोये रैनि सुचित सुखमाने॥
देखनहेतु भोरलहि पैठे। निरखे प्रल्हादहि तहँवैठे॥
असुर सबै तब अचरज माने। विस्मय हर्षहीनतेहि जाने॥
पुनि प्रल्हादहि सकलसुरारी। लैनिजसंगहि चले सिधारी॥
रह्यो येक गिरिशृंग उतंगा। दीन्हो ताहि चढ़ाय उछंगा॥
बहु योजनकी रही उँचाई। तहँते दिय हरिजनहि गिराई॥
दैकरताल मरो तेहिमानी। हरि चरित्र शठ कोउ नहिंजानी॥
भैमहिफूल तूलके तूला। हरिप्रभाव सपनेहुँ नहिंशूला॥

दोहा—देखि अछत असुरेश सुत, अचरज असुरविचारि॥
लगे कहन यहिभाँतिसों, केहिविधिडारियमारि॥ ११॥

सकलअंग पुनिजकरिजँजीरा । डारचो नीरधि नीर गँभीरा ॥
सागर तेहि तरंगमहँ लीन्हो । मंदमंद तटमहँ धरिदीन्हो ॥
यंह विधि किये अनेक उपाई । हरिजन मरण हेतु वरियाई ॥
पै न विथा नेकहु तनुव्यापी । राख्यो निजकर कृष्ण प्रतापी॥
जिहि रक्षत जगमें भुजचारी । द्वैभुज सकत ताहिकिमिमारी॥
असुर ल्याइ दानवपति आगे । लज्जितवदन कहन असलागे॥
कौनहु विधि शिशुमरै न मारा । काहकरिय अब नाथ विचारा॥
कह्यो दैत्यपति वारुण पासा । बाँधिजाहु लैगुरुके पासा ॥
सुधरै शठ सब विधि नहिंतबलों। आवै गुरू न भार्गव जबलौं ॥
शठ प्रल्हादहिं तैसहिं कीन्हे । गे गुरुभवन ताहि सँगलीन्हे ॥
वारुण पाशहिं अंगन बाँधी । राख्योताहि कोठरी धाँधी ॥
गुरुको अंतर लहि प्रल्हादा । बोलि बालकन कियसंवादा ॥

दोहा—लखहु कृष्ण परभाव अस, म्वहिं मारनके हेत ॥
कीन्हे असुर उपाय बहु, पै न लग्यो कछुनेत ॥१२॥

तुमहुँ जो कृष्णभक्ति असकरिहौ। कबहुँनकालपाशमें परिहौ ॥
बालक लखि प्रल्हाद प्रभाऊ । सत्यमानि भे मृदुलस्वभाऊ ॥
राम कृष्ण मुखभाषण लागे । गुरुके वचन त्यागि भयत्यागे॥
षंडामर्क फेरि तहँ आये । लखि बालक दृगलाल दिखाये॥
जरत बरत भूपति ढिग जाई । कह्यो नाथ रावरी दुहाई ॥
अबहुँ नमानत बालक पापी । राउरत्रास नेकु नहिं व्यापी ॥
सुनि सुरारि भो तामसरूपा । लोचन प्रलयानल अनुरूपा ॥
कह्योपुत्र पापी प्रल्हादू । पढ़े अवशि यह जालिम जादू ॥
विविधभांतितें मरे . नमारा । ताते मैं असकियो विचारा ॥
बोलि सभामधि अपने हाथा । लै करवाल काटि हौं माथा ॥
जाहु ले आवहु खल सुत काहीं। अब विलंब कीजे क्षणनाहीं ॥

असुरअधिपके सुनि असवैना। धाये भट. आये गुरुऐना॥

दोहा—पकरितुरत प्रल्हादको, ल्याये सभामझार।
सहज सुभाव गोविंद जन, नहिं कछु हर्षखँभार १३॥

बोल्यो हिरणकशिपु विकराला। बालकआइगयो तुव काला॥
की मेरो अब शासन मानै। की यमपुरको करै पयानै॥
करि छल वची बहुत दिन काया। अबनहिं लागी राउरि माया॥
हो जो तुव प्रभु ताहि बुलावै। देखौं केहि विधि तोहिं बचावै॥
करिसि दुष्ट जाको गुण गाना। सो मेरो रिपु छली महाना॥
करि छल हरचो मोर लघुभ्राता।मोहिं डरिदुरचो न कहुँदरशाता
व्यापित जग भरोस अस तोको। क्योंनहिं दरशावत इत मोंको
नाचत काल तोर तुव शीशा। आइ न कसरक्षत तुव ईशा॥
सुमिरु सुमिरु अपने प्रभुकाहीं। जियनउपायराखअब नाहीं॥
तब सहजहि हँसिकह प्रल्हादा। पितातोहिंभो अति उनमादा॥
केहि सुमिरों अरु काहि बुलाऊँ। मोप्रभुतौ दीसत सब ठाऊँ॥
असकौनहुँ थल पितुनाहिं दीसा।जहँ नाहिं मोहिंदीसत जगदीशा।

दोहा—जो समता जगमें करौ, ह्वैअनन्य हरिदास।
तौ तुमहूँको लखि परै, सबथल रमानिवास॥ १४॥

कवित्त—सुनि प्रल्हाद वाद कोप मर्याद मोरि परमप्रसाद भरो नाद करि बोल्यो वैन॥ भल यह बात कही चली नाहिं तोरो छल छली विष्णु होइबली रोकै गली कोऊहैन॥ रघुराज सकल समाज मध्य भाषों आज देव शिरताज तेरी लाज काज आवै क्यों न॥ शुंभ औ निशुंभ जंभ जोरदार वीर बीच पारि-हरि दंभ काहे खंभहीते प्रगटैन॥ १॥ असुरकुमार कियो वि-हँसि उचार ऐसो हेरचो बारबार होन हेऱ्यो असठोर है॥ जहाँ नदेखायो मोहिं करुण समुद्र छायो अति मनभायो रूप देवकी

किशोरहै॥रघुराज रसा दिवि निशा दिन दिशा वसु खाली नाख
रारि सो विचार असमोरहै ॥ करि अनुकंपाको अरम्भ यह खं-
भहीमें दीसतहै ईश मोहिं कैसो ज्ञान तोरहै ॥२॥ सुनि प्रल्हाद
बैन धर्म मर्यादभरे नाकि मर्याद कोप कीन्हो असुरेशहै॥घोरसोर
कैकै भरिदीन्हो महि चाऱ्यो वोर उठ्यो अतिजोरकै कँपायकै
निवेशहै ॥ फरके उदंड दोरदंडजे अखंड वोज अमित घमंडभो
प्रचंड कालवेशहै ॥ त्रासदै निदेश नखतेश अमरेश हूको माऱ्यो
दुष्टि मुष्टि मध्यखम्भके प्रदेशहै ॥ ३ ॥ मुष्टके हनत हेम कश्य
पके खम्भमध्य निकसी अवाज गजराज कोटिगाजकी॥ डोलउठे
गिरिराज बोलिउठे गजराज असुरसमाज भाजसुधतजिलाजकी॥
मुरगो मिजाज त्योंहीं दुरिगो दराज वोज बाजभई वीरताहू दै-
त्य शिरताजकी ॥ उछल्यो उदधिराज विछल्यो ग्रहनराज ध्या
नकी धमारि भूरि भूली भूतराजकी ॥ ४ ॥ राखत सुपंथनको
भाषत कुपंथनपै रघुराज भाषत अनंद जग छायो है ॥
दरत सुरेश दुखहरत खलेश सुख पूरण करत सबसंत चित्तचा
योहै ॥ दीननपै दायाको देखावत दुनीमें तेज छावत दिशानन
में आननको भायो है ॥ दास प्रह्लादको विश्वासको बढ़ावत
तुरंत फारि खंभको नृसिंह कढ़िआयोहै ॥५॥ पक्ष सितवार शनि
आर्ध साँझ चौदशिको दुष्टदलदीह वारि बुल्लासों बिलाइगो ॥
धाई धाक धूलो जय सोर नाक भूलो मचो सुर उर आनँद उद
धि उमगाइगो ॥ रघुराज ब्रह्मा बैन सत्यहेतु अंधकारि फारिकै
उदर हरि शोणित अन्हाइगो ॥ दुतही दलानमें दिगीशनके
देखत दराज दैत्यराज वीर दीपसों बुताइगो ॥ ६ ॥

दोहा—दासकाज यदुराजप्रभु, धारिरूपमृगराज ।
मारचो असुरदराजको, सारचोसबसुरकाज ॥ १९ ॥

बैठ्यो सिंहासन मधिजाई । ज्वालामाल दिशानन छाई ॥
सकत नकोउ नरहरि कहँ देखी। भयो भयावन रूप विशेषी॥
लै सुर भागे सकल विमाना। सहि न सकें प्रभुतेज महाना॥
कह्यो विरंचि रमाकहँ आई। निजपतितेजशांति करुजाई॥
रमाकह्यो अस प्रभुकर रूपा। देख्यो सुन्यो नकबहुँ अनूपा॥
नहिं जैहैं यहिकाल समीपा। निरखि भयावन रूपप्रतीपा॥
विधि तब कह प्रह्लाद बुझाई। करहु शांति प्रभुको तुमजाई॥
नातो जरन चहत सबलोका। उपज्यो अति सबकेउर शोका॥
तब प्रल्हाद मंद मुसुकाई। सहज अभीत समीप सिधाई॥
लाग्यो अस्तुतिकरन नाथकी। सन्मुख अंजलि जोरिहाथकी॥
नरहरि लियो अंक बैठाई। शीश सूँघि दृगवारि बहाई॥
निज रसनासों चाटत जाहीं। चूमतमुख करुणामिति नाहीं॥
दोहा—पुनितेहि दानव अधिपकरि, सौंपि सुरन सुरथान॥
दास विश्वास दिखाइ अस,भे हरि अंतर्ध्यान॥ १६॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेअष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अथ यमराजकी कथा॥

दोहा—अब वर्णौं यमराजकी, कथा मनोहर जोइ।
जाहि सुनत जन पातकी,तजहिं कुमति सबकोइ॥१॥
मनु सनकादिक देवऋषि, मैथिल कपिल स्वयंभु।
बलिभीषम प्रह्लाद शुक, धर्मराज अरु शंभु॥ २॥
महाभागवत द्वादश माहीं। लिख्यो वेद यमराजहु काहीं॥
ताते यमकी कथा बखानो। अहै अनेक प्रसिद्ध पुरानो॥
नेसुक कहौं तासु मैं गाथा। धरि हरिभक्त पद्मपद माथा॥
द्राविड़ देश सुयज्ञ नरेशा। बाढ़े तासु शत्रु बहु देशा॥

कियो युद्ध भूपति कहँ गेरी। मारुमची दुहुँओर घनेरी॥
राजा वीर धीर अति रहेऊ। समर बीचसों मीचुहि लहेऊ॥
तासु तनय तिय अरु परिवारा। भूप मरन सुनि करतपुकारा॥
रोवत समरभूमिमें आये। नृपशरीरलखि अतिदुखपाये॥
मच्यो यहा तहँ आरत सोरा। काहुके तनु सँभार नहिं थोरा॥
देखि दशा तिनकी यमराजा। भक्तिमानभे दया दराजा॥
सहि नसक्योदुख तिनकर देखी। द्रुत दिल द्रयो अपन असलेखी
भयमानिहैं प्रगट जो जाऊं। तातेवपु छिपाइ समुझाऊं॥

दोहा—असविचार यमराजतहँ, धरि बालकको रूप।
आये संगरमेदिनी,पर्‍यो मृतक जहँ भूप॥ ३॥

कह्यो कौन हित करहु विलापा। मोरेजान वृथा संतापा॥
जियहि जो रोवहु मरेहु सोनाहीं। जो तनुहित तौ परचो इहाहीं॥
जो रोवहु मनमानि वियोगू। तौ बहुवार वियोग संयोगू॥
जेहिहरि राखत सो वनमाहीं। हरणहार ताको कोउनाहीं॥
जापै रूठत रमानिवासू। कुलिशकोठरिहु तासु विनासू॥
ताते वृथा करहु दुखभारी। मोहलेहु दुखहेतु विचारी॥
तजे मोह सुख दुख नहिंव्यापत। कौनिहुँताप न तनुमहँतापत॥
मोहिं घरके निकासि सब दीन्यो। तबतेमैं सुख दुख नहिंभीन्यो॥
बाघ वृका मोहिं सके नखाई। फिरौंअभयवन नगर सदाई॥
यहिप्रकार बहुविधि समुझाई। सबको दियो कलेशमिटाई॥
नगरनारि नर निज घर आये। मोहत्यागि हरि पद चितलाये
ऐसी परिभक्तनकी रीती। परदुखमेटहिं करि अतिप्रीती

दोहा—परदुखमें अतिशय दुखी,परसुखमेंसुखवान।
निजदुखसुखकछुगणतनहिं,जे हरिभक्तप्रधान॥ ४॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेनवमोऽध्यायः॥ ९॥

अथ कृष्णकेजयविजयपार्षदोंकी कथा॥

दोहा—षोड़शपार्षद कृष्णके, जय अरु विजय प्रधान।
तिनकी मैं कछु कहतहौं,कथा संत सुखदान॥१॥

एकसमय सनकादिक चारी। गे विकुंठ जहँ बसत मुरारी॥
समय शयन जय विजय विचारी।रोक्यो मुनिन छरी करधारी॥
हरिप्रेरणवश मुनिकर कोपा। दीन्हींशाप मोदकरि लोपा॥
जोरि पाणि दोउ किये प्रणामा। शिरधर शापलई मतिधामा॥
तनक भयो तनुमें नहिं रोषा।दीन्हो तनक न तपस्विन दोषा॥
असुर निशाचर नृपत्रय जनमा। पावतभये परमदुख तनमा॥
शापदेनमें यदपि समर्था। तदपि भयो मानहु असमर्था॥
यहीरीति हरिदासन केरी। तकै नसाधु वंक दृगहेरी॥
कोपेहु साधुक्षमै सबकाला। दोषहुदेहि न दीनदयाला॥
क्रोध कढ़ेनहिं कौनेहु रोमा। तौ पुनि कहँ ज्वानी करजोमा
यदपि कह्यो सनकादि बहोरी। मेटहुशाप मोरि यहि खोरी॥
जै जय विजय नकछु उरलाये। धन्योशीश जो प्रथमहिं गाये॥

दोहा—कृष्ण पार्षदकीकथा, और अनंत पुराण॥
अतिविस्तर भय ग्रंथते,मैं नहिं कियोबखान॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेदशमोऽध्यायः॥ १०॥

अथ श्रीलक्ष्मजिकी कथा॥

दोहा—अब वर्णौं कमला कथा, प्रथित पुरातन माहिं।
जो मानत निज पुत्र सम, सब हरि दासन काहिं॥१॥

एक समय हरि निकट सोहाई। बैठी रही रमा सुखदाई॥
कलि आगम देख्यो जगमाहीं। किमि उधार ह्वै है जनकाहीं॥
अस गुणि उर उपजी अतिदाया। कह्यो कंत हे कृपानिकाया॥
जगमें जेहि विधि जीवउधारा। कहहु नाथ मोहिय दुखभारा॥

हरिकह कोउकोउकलियुगमाहीं। मोहिं भजिहै ऐहै मोहिं पाहीं॥
ह्वैहैं नास्तिक अधम अपारा । तिनको नाहिं छूटी संसारा ॥
करहु यतन जो तव मनभावै । जामें जीव निकट मम आवै॥
पति शासन सुनिअतिमुदमानी। बिष्वक्सेन निकट निजआनी
दियो ताहि शरणागत मंत्रा । कहेहु उधारहु जनन स्वतंत्रा॥
सो शठ कोपहिं किय उपदेशा । श्री संप्रदा चली शुभवेशा ॥
तबते श्रीवैष्णव कहवाये । जिनहिं जोहिं यम दूर पराये ॥
तरे तुरत तरिहैं बहुजीवा । श्रीसंप्रदा पाय सुख सीवा ॥

दोहा—कोकृपालु कमला सरिस, जनन उधारन हेत ॥
प्रगटि आपनी संप्रदा, कियो मुक्ति कर नेत ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अथ गरुड़जीकी कथा ॥

दोहा—हरिवाहन विहँगाधिपति, तासुकथा अबयेकु ॥
मैं वर्णहुँ अति माधुरी, प्रथित पुराण अनेकु ॥

एकसमय हरिदीन दयाला । लखि नाशत जीवन कहँ काला॥
भई दया कहँ गरुड़हि आनी । करहु यतन जीवहिं चिरप्रानी ॥
जीहैं सुधा पाइ चिरकाला । असविचारि खगनाथ उताला ॥
सुधहिरण हित गयो पताला । अहि सहाय हित गो सुरपाला ॥
पन्नग गँधरव सुरहु मुरारी ।किय सब मिल खगपतिसों रारी॥
खगपति येक सकल कहँ जीती।ल्यायो प्रथित पियूष अभीती ॥
पन्नगारि कह अजय विचारी । सुरहु असुर सब निकट सिधारी॥
जीवन जियन हेतु चिरकाला। सुधा हर्‍यो बल बुद्धि बिसाला॥
देहु हमहिं खैहैं सब बाँटी । यह चिरकाल जियन परिपाटी॥
दयालागि खगपतिसों दीन्हो । करि प्रणाम सुर असुरहु लीन्हो॥

देव असुर बांटन जब भाषे । हेति प्रहेति असुर दोउ माषे ॥
सुधाकलश लै क्षीरधिवोरयो । करि रण देवनको मुख मोरयो ॥
दोहा–जीति सुरा सुर हरि सुधा,पंरहित दियो खगेश ॥
हरिदासनकी रीति यह, जीवन द्रवहिं हमेश ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेद्वादशोध्यायः ॥ १२ ॥

अथ ध्रुवकी कथा ॥

दोहा–श्रीध्रुव धरा अधीशकी, वर्णौं कथा विधान ॥
रीझि गये षटमासमें, जापर श्रीभगवान ॥
भयो चक्रवर्त्ती महराजा । नाम उतानपाद सुख साजा ॥
अहै प्रियव्रतको लघुभाई । राज्यकियो पथ धर्म चलाई ॥
भूपतिके सुंदर द्वैरानी ।सुरुचि सुनीति नाम छविखानी॥
सुरुचि तनय उत्तम असनामा। सुत सुनीतिको ध्रुव मतिधामा॥
सुरुचि सोहागिनि रही नरेसै । नहिं सुनीतिपर प्रीति विशेसै ॥
एकसमय नृप विशद अगारा । सचिव समेत बैठ दरबारा ॥
सुरुचि सुवन उत्तम तहँ आयो । नृप सह मोद गोद बैठायो ॥
इत सुनीति निज सुवन बोलाई । करि मज्जन भूषण पहिराई ॥
पहिरायो पुनि वसन रँगीला । दीन्हो भाल डिठौना नीला ॥
छोटि ढाल छोटी तरवारी । छोटधनुष अरु छोटि कटारी॥
सुतहि साजि यहि भाँति पठायो। ध्रुव दरबार पिताके आयो ॥
किय प्रणाम चलि चटक तहाहीं। पिताअंकलखि उत्तम काहीं ॥
दोहा–बैठन हित पुनि चलत भो, आयहु पितुके अंक ॥
पंचवर्षको बाल ध्रुव,नोखो निपट निशंक ॥ १ ॥
कह्यो सुरुचि करि अरुण विलोचन।बैठहुमति पितु अंकसकोचन
जन्मलियो नहिं उदर हमारे । जनक गोद नहिं बैठन हारे ॥

मेरे उदर जन्म जो लेइत। तौ हम बैठनको कहि देइत ॥
तपकरि मोर पुत्र तुम होहू। जनक अंक कहँ तब अवरोहू॥
सुरुचि वचन ध्रुव हृदय विशाला।भये कुलिशसम द्रुतहि दुशाला
फिरचो तुरत जननी ढिग आयो। रोवनलग्यो महादुख छायो ॥
जननी कह्यो वत्स कस रोवहु। अपनो दुखमोसों नहिं गोवहु॥
कहे बाल सँगके खिलवारी।सुरुचि जौन विधि वचन उचारी
अतिकलेस भरि कह्यो सुनीती। पुत्र करहु रघुपति पद प्रीती ॥
जो न अभागिनिके सुत होते। तो काहे दुख पौतेहु ओते ॥
विनहरि कोउनहिं संकटनासी। भजहु जाइ सुत अवधविलासी॥
जननि वचन सुनि ध्रुवततकाला।निकसिचल्योसुमिरतनँदलाला

दोहा—जब आयो पुरबाहिरे, दशा देवऋषि देखि ॥
आय कह्यो ध्रुवसों वचन, अति अचरज चितलेखि २॥

रेबालक घर तजि कहँ जाता। कहहु सत्य जीकी सब बाता॥
ध्रुव सिगरो वृत्तांत सुनाई। बहुरि कह्यो भजिहों यदुराई॥
नारद कह्यो बिहँसि रेबालक। विपिनजीवबहु मानुषघालक॥
कृष्णभक्त नहिं सहजहिं होई। कोटिनमहँ निवृत्ति कोइकोई॥
सहजहिं मिलहिं नयदुकुलपालक।वीतत भजत जन्म बहुबालक॥
वृथा वैस नृपसुवन गमावै। यह प्रण छोड़ि लौटिघर जावै॥
सुनिमुनिवचन कह्यो नृपनंदन। मुनिवर कृपासिंधुयदुनंदन ॥
की रघुपति पद दुर्लभ देहै। की अब प्राण अवशि ममलैहै॥
बात तीसरी अब न मुनीशा। आज्ञादेहु धरो पदशीशा ॥
बालकवचन सुनत मुनिराई। गद्गद कर दृग वारि बहाई ॥
ह्वै प्रसन्न निजअंक उठाई। चूमि वचन अस गिरा सुनाई॥
धन्यधन्य बालक मतिधीरा। तोहिमिलिहैंविशेषि यदुवीरा ॥

दोहा–पंचवर्षकी वैस तुव, कीन्हो अगम पयान ॥
अतिशय अटपट होतहै, क्षत्री कोप कृशान ॥ ३ ॥
असकहि ध्यान विधान बतायो। द्वादश अक्षर मंत्र सुनायो ॥
ठोंकि पीठि पुचकारि बहोरी। कीन्हो विदा सिद्धि कहि तोरी
मुनिवर पदमहँ धरिध्रुवशीशा। पश्चिम चल्यो सुमरि जगदीशा
जौनविधान मुनीश बतायो। सोई करनलग्यो चितचायो ॥
करैयमुन सादर अस्नाना। पूजै हरिकहँ सहित विधाना ॥
तीनितीनि दिन माहँ कुमारा। कैथा वदरी करै अहारा ॥
प्रथम मास यहि भाँति वितायो। द्वितियमासपुनिहरिचितलायो
षटषट दिनमें पत्र पुराने। किय अहार महि झरे झुराने॥
तृतिय मास नव नव दिन माहीं। किय केवल अहार जल काहीं ॥
द्वादश द्वादश दिवश बिताई। मारुत भख्यो भजत यदुराई ॥
यहिविधि चौथो मास बितायो। मास पाँचयो जब पुनि आयो॥
तब दशद्वार इंद्रियन रोकी। हृदयमुकुंद रूप अवलोकी ॥
दोहा–खड़ो भयो इक चरणसों, अचल रोंकि निज श्वास ॥
हृदयकमलमहँथापिकै, मूरति रमानिवास ॥ ४ ॥
कृष्णदास जब श्वासहिरोका। रुकी श्वास तबहीं त्रैलोका ॥
पुहुमीभार पाय ध्रुवपाऊ। दवी येकदिशिजिमि गजनाऊ
सुर नर नाग उठे अकुलाई। काहुहि भेद न परचौ जनाई॥
कृष्णशरणगे त्रिभुवनवासी। कहे पुकारि त्राहि अविनासी ॥
त्रिभुवन भयो श्वास अवरोधा। नाशत त्रिभुवनको अस योधा
देववचन सुनि कृपानिधाना। कह्यो भेद हमरो सबजाना ॥
भूपति तनय नाम ध्रुव जासू। भजन करत मेरो ममदासू ॥
तेहि तपतेज रुद्ध जग श्वासा। कियेकुमार मिलन मम आसा
होंतो जाय दरश अबदेहौं। तासुसकल मन सोक नशैहौं॥

असकहि महामुदित मनस्वामी। सहित पारषद गणखगगामी॥
आयो दिशा प्रकाश बढ़ावत। रह्यो भूप बालक जहँ ध्यावत॥
अचलखड़ो हियहरिवपुदेखै। हरिबिन और कछू नहिंलेखै॥

दोहा—खड़ेभये सन्मुखहरी, लख्यो तिन्हैं सुकुमार।
तब अतिअचरज मानि उर,लागे करनविचार॥ ५॥

धन्य धन्य नृप बालक येहा। किये निरंतर ममपदनेहा॥
ममभूरति अपने मन राखी।देखत सोइ खोलत नहिं आँखी॥
असविचारि ध्रुव उर निजरूपा। अंतर्हित हरिकियो अनूपा॥
चौंकि उठ्यो चट चखन उघारयो।सोइ वपु सन्मुख खरो निहारयो
बहनलगी दृगते जलधारा। महामोद महँ मगन कुमारा॥
अनमिष चितवत कृष्ण स्वरूपा। मानत भयो भुवनकर भूपा॥
मुखते सकतन गिरा उचारी।छक्यो सुछवि मूरति मनहारी॥
उतरि गरुड़ते यदुपति धायो। ध्रुवउठाइनिजहिये लगायो॥
शीश सूंघ मुख चूमि मुरारी। बोल्यो वचन बहावत वारी॥
भूपतनय मम प्राण पियारो। तैं अनन्यहै दासहमारो॥
माँगुमाँगु मनको वरदाना। तोर मनोरथ पूर निदाना॥
सुख वश ध्रुवहिं सकल सुध बिसरी।कछुक बातमुखते नहिं निसरी

दोहा—स्तुति चाहत करन कछु, पंचवर्षको बाल।
पै न बनत रचना करत, यह जानी गोपाल॥ ६॥

पाँचजन्य प्रभु शङ्ख अमोला। दीन्होपरस कराइ कपोला॥
शङ्खहिं परसत वेद पुराने।सकल शास्त्र ध्रुव हृदय समाने॥
लाग्यो स्तुति करन कुमारा।कहँलग करिय तासु विस्तारा॥
करि स्तुति किय दंड प्रणामा। पुनि करजोरि कह्यो मतिधामा
अपनो मैं सरवस प्रभु पायो। यह मूरति छविहौं दृग छायो॥
और न आश कछू मनमाहीं। यह मूरति हिय बसै सदाहीं॥

तुमहिं पाय यांचत संसारा। सो प्राणी मतिमंद गँवारा॥
विहँसि कह्यो तव कृपानिधाना। लेहु भूप तुम अस वरदाना॥
छत्तिससहस वर्ष महि काहीं। शासन करहु मुदित जगमाहीं॥
पुनि मैं निज पार्षदन पठैहौं। यानचढ़ाय विकुंठ बुलैहौं॥
धर्मधुरंधर धरणि अधीशा। नैहैं तोहिं सुरासुर शीशा॥
मेरोरूप चक्र शिशु मारा। जामें सकल बँध्यो संसारा॥

दोहा—सो तेरे करपर रही, ह्वैहै तासु अधार।
सबके ऊंचे धामजो, तापर वास तुम्हार॥ ७॥

असकहि औरहु दै वरदाना। प्रभु विकुंठको कियो पयाना॥
ध्रुवहु भवन निज चल्यो सुखारी।सुमिरत रमारमण गिरिधारी॥
जब प्रयाग कहँ ध्रुव नियरान्यो। पै न उतानपाद नृप जान्यो॥
दूत दौरि यक रह्यो भुवालै। निकरि गयो आवत सो बालै॥
सुनि नृप ताहि दियो मणिमाला। चल्यो लेन आगू तेहि काला॥
सुरुचि सुनीति चली दोउरानी। चल्यो उत्तमहुँ अति सुखमानी
निरखि ध्रुवहिं भूपति द्रुतधायो।ललकि लपटि निजहृदयलगायो
भयो मोद मन मिटी गलानी। लही फणिक मणि मनहुँ हिरानी
प्रथम सुरुचि कहँ ध्रुव शिरनायो।सकुचि सो सादर हिये लगायो॥
पुनि उत्तमहिं कियो परणामा।मिल्यो सोऊ भरि भुजनिललामा
वंद्यो बहुरि जननिपद काहीं। ताकर मोद जात कहि नाहीं॥
हरिदाहिन दाहिन सब ताके। हरिविमुखी विमुखी वसुधाके॥

दोहा—यहिविधि मिलि ध्रुव पितु सहित, आयो अमल अवास
पुरजन परिजन ध्रुव निरखि, माने पूरी आस॥ ८॥

ध्रुव गृह वसत वित्यो कछुकाला। तब उत्तानपाद महिपाला॥
शील स्वभाव बुद्धि बलवेषा। अनुपम ध्रुव कुमारके देखा॥
परिजन पौर सचिव सरदारा। येक समय बोल्यो दरबारा॥

भूपति कह्यो चौथपन आयो। कानन गवन मोर चितचायो॥
उत्तम ध्रुव कुमार मम दोई। संमति करै जाहि सब कोई॥
तांकर राज तिलक करि देऊ। सुनहु मोर मनको अस भेऊ॥
बुधि वीरता विवेक बड़ाई। सकल भाँति ध्रुवकी अधिकाई॥
ध्रुव सब भाँति राज्यंक योगू। यहिविधि जानहु मोर नियोगू॥
भूप वचन संमत सब कीन्हें। राजतिलकध्रुवको करिदीन्हे॥
भूपगये कानन तपहेतू। ध्रुव किय राजसमाज समेतू॥
जापर दाहिन राम कृपाला। दाहिन ताहि जगत सबकाला॥
उत्तमचढ़ि इक समय तुरंगा। मृगया हित गो शैल उतंगा॥

दोहा–मिल्यो यक्ष इक विपिनमहँ,ताते भो संवाद।
सो उत्तम कहँ वधकियो, जिमि लघु अहि उरगाद ९॥

लौटि भवन उत्तम नहिं आयो। जननीतासु महादुखपायो॥
हेरन गई विपिनसुत काहीं। जरी दवानल माहि तहाँही॥
ध्रुवसों कह्यो देवऋषिआई। यक्ष हाथ हतिगो तुव भाई॥
सुनत कियो ध्रुव कोप कराला। चढ़्योतुरतरथ रुचिर विशाला
चल्यो अकेल यक्षपुर जीतै। रामकृपा ध्रुव परमअभीतै॥
अलकापुरी निकट जब आयो। समरउछाही शङ्ख बजायो॥
कोटि यक्ष सो सुनि २ धाये। ध्रुवपै अमित अस्त्र झरिलाये॥
यक्षसहाय रुद्र गणजेते। लगे करन ध्रुवसों रणतेते॥
कियो तहाँ संगर अतिघोरा। अगणितयक्ष यके नृपछोरा॥
धर्मधुरंधर धरणिअधीशा। ध्रुव करिदियो सबन विनशीशा
हाहाकार करत सबभागे। मायाकरन फेरि बहुलागे॥
शस्त्रमारि मूद्यो ध्रुवकाँहीं। हरि बल ध्रुवशंका कियनाहीं॥

दोहा–तब नारायण अस्त्रको, ध्रुवकीन्हो संधान।
जारि यक्षकोटिन तबै,भरयो प्रकाशदिशान॥ १०॥

रणतजि भगे जरत जेवाँचे । पुनि नसमर कहँ ते मनराँचे ॥
यक्षनाशलखि मनु महराजा । ध्रुवहिं आय कह सहित समाजा॥
अब नहिं यक्षनको वध कीजै । नातौ भवन गवन मनदीजै ॥
पुनि धनेशकह ध्रुवसों आई । तुमपै हम प्रसन्न नृपराई ॥
यक्षन हन्यो तोर बडभ्राता । नहिंयक्षनतैं कियो निपाता ॥
जीवन मरण कालवश जानो । आनहेतु याको नहिंमानो ॥
माँगहु मनवांछित वरदाना । तुम परहै प्रसन्न भगवाना ॥
विहँसि कह्यो ध्रुव सुनहुनरेशा । हमनहिं माँगत छोड़ि रमेशा ॥
माँगहु तुम जो होइ अभिलाषा । हम पूरण करिहैं मुखभाषा ॥
जो वरदेहु मोहिं बरियाई । हरिपद मम उर वसै सदाई ॥
एवमस्तु कहि गयो धनेशा । ध्रुवआयो यश पाय निवेशा ॥
छत्तिससहस वर्ष कियराजू । भाइन भृत्यन सहित समाजू ॥

दोहा—इहिप्रकार हरिभजनमें, तत्पर ध्रुव बड़भाग ।
सेवत साधु बिते दिवस, नित नव नव अनुराग॥११॥

जानि वृद्ध पन सुत दैराजू । गवन्यो विपिनभजत यदुराजू॥
तब पार्षद द्वै नंद सुनंदा । ध्रुवहिंलेन पठयो गोविंदा ॥
लै भासित विमान दोउ आये । ध्रुवहिं नाइ शिर वचन सुनाये॥
चलो भूप तोहिं नाथ बुलायो ।सुनिध्रुवतिनहिंसुखितशिरनायो
चढ़ो विमान बजाइ निसाना । हरषित कियो विकुंठपयाना ॥
मारगमें कह दासन पाहीं । ममगाता रहिगे महिमाहीं ॥
विन मोहिंको ताको लैजैहै । बिनहरिको संसार छुटैहै ॥
विहँसि कह्यो हरिदास नरेशै । मतिकीजै ऐसो अंदेशै ॥
जाके तुम सम भयो कुमारा । ताको कौन उधार विचारा ॥
देखहु आगे आँखिउठाई । चढ़ीविमान जाति तुवमाई ॥
आगे जाति निरखि निज माता । ध्रुव वंद्यो हरिपद जलजाता ॥

जहँजहँध्रुव गमनत सुरधामा । तहँतहँके सुर करत प्रणामा ॥
दोहा—यहिविधि गयो विकुंठ जब, हरि आगे चलिलीन ॥
अचलधाम वैकुंठको, उत्तर द्वारो दीन ॥ १२ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अथ चित्रकेतुकी कथा ॥

दोहा—चित्रकेतुकी अब कहौं, कथा परम रमनीय ॥
नारद जेहिउपदेशकरि, कियो संत गणनीय ॥
शूरसेन इकदेश अनूपा । उपज्यो चित्रकेतु तहँ भूपा ॥
ताके रहीं लाख शतरानी । विभव तासु किमि जाइ बखानी॥
काहूके नहिं रह्यो कुमारा । यहि हित भूपति दुखी अपारा॥
बैठ्यो नृप इक समय सभामें । आये द्वैऋषीश तहिं जामें ॥
भूप प्रणति करि कियसतकारा । मुनिन देखि नृपको दुखभारा॥
पूछ्यो कौन शोक नृप तेरे । कहहु जो जानन लायक मेरे॥
सकुचि भूप कछु कही नबानी ।सचिवसकलकरिविनय बखानी॥
राज कोश दल गृह परिवारा । अहै फीक सब बिना कुमारा ॥
दया कियो सुनि मुनिअवदाता । कहकोई सुत सुख दुख दाता॥
असकहि अंगिर नारद दोऊ । अंतर्हित भे लख्यो न कोऊ ॥
कृतिं दुति नाम रही यकरानी । ताके पुत्र भयो सुखदानी ॥
जबते कृतिदुतिके सुत भयऊ। तबते अति सोहाग बढ़िगयेऊ ॥
दोहा—सवति सोहागन सहसकी, दैविषडारयो मारि ॥ १ ॥
सुतहि मृतक लखि दुख भयो, सो किमिजायउचारि॥
लाग्यो भूपति करन विलापा । परिजन पुरजन अतिसंतापा ॥
रोदन सोर भुवन मधिछायो । पुनिनारद अंगिरयुत आयो ॥
लग्यो बुझावन भूपहिज्ञानी । पै सुतशोक नमिटी गलानी ॥

तब नारद तपबल सुत जीवा। आन्यो तुरत ज्ञानको सींवा ॥
प्रविशि पुत्र तनमें हँसिभाष्यो। ममताकौन मोहिमहँ राख्यो ॥
कबहुँ पुत्र तुम भये हमारे। कबहुँ पुत्र हम भयेतिहारे ॥
रीति परस्पर यह चलिआई। यह माया जानहुरे भाई ॥
नहिं कोउ सुत नहिंपितुकोउकेरो। वृथा सोच वशकरहु घनेरो॥
जीववचन सुनि भूपजुड़ान्यो। नारदसों अस वचन बखान्यो ॥
गयो सोच मैं लह्यों विवेका। दीजै मंत्र मनोरथ एका ॥
हरषि देवऋषि मंत्र सुनायो। ज्ञान विराग भक्तिविधि गायो ॥
जप्यो मंत्र भूपति दिनसाता। तासु प्रभाव तेज अवदाता ॥

दोहा—ह्वै प्रसन्न तेहि शेष प्रभु, दीन्हो कामगयान।
तेहि चढ़ि तीनों लोकमें, फिरे भूप हरषान ॥ २ ॥

भयो अधिप विद्याधर केरो। मंत्रप्रभाव प्रकाश घनेरो ॥
यहितनुगयो शेषके लोका। प्रभुहि निरखि मेट्यो जगशोका॥
ह्वै पार्षद सो विचरन लाग्यो। विनय शील दाया रस पाग्यो ॥
विचरत विचरत सो इककाला। गयो जहाँ गौरी शशिभाला ॥
शंभुदिगंबर मुनिन समाजा। गौरी अंक लिये छबि छाजा॥
सनकादिकन करत उपदेशा। चित्रकेतु अस लख्यो महेशा॥
विसमित ह्वै बोल्यो असबानी। महादेव कीरति जगजानी ॥
बैठि दिगंबर लै तियअंका। लज्या रहित होति यह शंका॥
मर्यादा पालक त्रिपुरारी। मुनि समाजमहँ लाज विसारी॥
चित्रकेतुके सुनि अस वैना। हर्ष विषाद नकियो त्रिनैना ॥
मुनिहु मौन सब रहे तहाँहीं। पै सहिसकी शिवा सो नाहीं॥
जग उपदेशक शिव श्रुति गायो।तेहि उपदेशक शठ यह आयो

दोहा—यहिविधि कहि तेहि नृपतिको, गौरी दीन्हो शाप ॥
दैत्य देह दुर्मति लहै, यही तोर फलपाप ॥

शिवाशाप सुनि सो नृपज्ञानी । कियो प्रणाम जोरि युगपानी॥
लियो शीश धरि शाप कराला।भयो नकछु दुख सुख तेहि काला
हरि दासनकी है असिरीती । करहिं न सुख दुख हरि परतीती॥
सोई दैत्य वृत्रसुर भयऊ । जीतिशक्रयुत देवन लयऊ ॥
भजन प्रताप सुरति नहिं भूली। कह्यो समर महँ बात अतूली॥
हनहु शक्र हमको यहिकाला । अबमोहिंलगतजगत जंजाला॥
नाहिं कल विना शेषपद देखे । विन प्रभु जगत सून ममलेखे॥
असकहि दीन्हो शीश नवाई । सुमिरत शेष चरण मनलाई ॥
लैकर कुलिश कुलिश धर आसू। काटन लग्यो शीश तहँ तासू॥
काटत बीतगयो यक साला । तब ताको शिर कट्यो विसाला
फेरि शेष पार्षद ह्वै गयऊ । अक्षय निवास रमापुर भयऊ॥
सो भागवत माहँ विस्तारा । मैं कीन्हौं संक्षेप उचारा ॥

दोहा–भूलत भजन प्रताप नहिं, लहेहु कर्म वश योनि ।
अपनो जन हरि जानिकै, मेटत सब अनहोनि ॥ ३ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अथ निमिराजाकी कथा ॥

दोहा–अब सुनिये निमिराजकी, कथा विख्यात पुरान ।
जासु वंशमें सब भये, नृप भागवत महान ॥ १ ॥

यज्ञ करन लाग्यो निमि राजा । बोलि वसिष्ठ लियो सुरराजा॥
पुनि मुनि शक्रहिं यज्ञ कराई । आयो बहुरि जहाँ निमिराई ॥
लख्यो गौतमहिं यज्ञ करावत ।कियो कोप अस वचनसुनावत
द्वितियपुरोहित कियमोहिंत्यागी। नाशलहै यहि हेतु अभागी ॥
नृपहु शाप तैसहिं तेहि दीन्हो । गुरुगुणिमनगलानिअतिकीन्हो

नृपहु मुनिहुँ कर भो तनुपाता। यह गुणि कीन्हो सोचविधाता
दियो वशिष्ठहिं तनु घटतेरे। आय निमिहुँ कह तनुहितटेरे॥
निमि कहकरिबहुयतनमुनीशा। जो न त्यागि पावत जगदीशा
सो मोहिं सहज मिल्यो जगमाहीं। अब तनु लहन आशमोहिंनाहीं
तब प्रसन्नह्वै विधि अस भाष्यो। तोरबास पलकन महँ राख्यो॥
तब ते येक अंश पलमाहीं। निवसत निमिनृपनाथ सदाहीं
येक अंशते रामसमीपा। सेवत सरसिज चरण महीपा॥

दोहा–अजर अमर तेहि काय भै, पायो पार्षद रूप॥
अचलबस्यो वैकुंठमहँ, रामप्रताप अनूप॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेपंचदशोऽध्यायः॥ १५॥

अथ नवयोगेश्वरकी कथा॥

दोहा–अब नौयोगेश्वरनकी, कहौं कथा चितलाय॥
जिनके वचन विचारिकै, तृणसम जगत जनाय॥

सत कुमार भे ऋषभदेवके। सकल धर्म हरि कर्म सेवके॥
तिनमें जे सुत रहे इक्यासी। भये विप्र द्विज वंश प्रकाशी॥
जेठ सबनते भरत उदारा। महाभागवत धर्म अधारा॥
दशभाई हींसों निज लीन्हो। नौभ्राता हरिपद मन दीन्हों॥
जनमहिंते त्याग्यो संसारा। समुझि ज्ञानबलसार असारा॥
अजर अमर भे भजन प्रभाऊ। जग उपदेशत शीलस्वभाऊ॥
येक समय जहँ निमि महराजा। बैठ सभामधि सहित समाजा॥
नौयोगेश्वर तहँ चलिआये। करि सतकार भूप शिरनाये॥
पूछन लगे भूप अनुरागे। उत्तर देन लगे बड़ भागे॥
सो भागवत माहिं विस्तारा। वर्णत इत संक्षेप उचारा॥
बहु विधि करि भूपति उपदेशा। विचरत रहे सिद्ध सब देशा॥

जो जो संग कियो तिनकेरो। सो न बहुरि संसारहि हेरो॥

दोहा–कवि हरि पिपलायन चमस, करभाजनहु प्रबुद्ध॥
आविहोंत्रहु द्रुमिल अरु, अंतरिक्ष अतिशुद्ध॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यां सतयुगखंडेषोड़शोऽध्यायः॥ १६॥

अथ अंगराजाकी कथा॥

दोहा–ध्रुवके वंशहिमें भयो, अंग भूप मतिवान॥
ताकी गाथा मैं कछुक, वर्णौंविदित पुरान॥ १॥

भयो चक्रवर्ती महराजा। जासु विभूति सरिस सुरराजा॥
पुत्रहेतु भूपति मख कीन्हो। दैव मृत्यु अंशहिंसुतदीन्हो॥
नामवेणु जन्महि ते पापी। ताहिनिराखिनृपभो संतापी॥
राज कोश दल भवन बिहाई। अर्द्धराति निकस्यो नृपशाई॥
कानन जाइ भज्यो यदुराई। माया और डीठिनहिं आई॥
वनमें करहिं साधुकी सेवा। साधु छोड़ि मानहिं नहिंदेवा॥
कोउ यक साधु कह्योनृपपाहीं। कुटी देहु मेरे घर नाहीं॥
कुटी सहित सर्वस दै राख्यो। पुनि ताकी सेवाअभिलाख्यो
साधुप्रसंग कह्यो अस वानी। मिलहिं तोहिं नृप सारँगपानी
भूपति कह्यो न असमोहिंआसा। तेहि तजिचहौं न रमानिवासा॥
आये नृपकहँ लेन विमाना। साधु त्यागिसोकियनपयाना॥
हरि पार्षद तब संत चढ़ाई। लैगे नृपहिं विकुंठ लिवाई॥

दोहा–वैकुंठहिंमहँअंगनृप, साधुचरण रतिकीन।
विभवभोगि पार्षदसरिस, यदपिकृष्णबहुदीन॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेसप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

अथ प्रियव्रतराजाकी कथा॥

दोहा—भूपप्रियव्रतकीकथा, अबबरणौंचितलाय।
मनुकोसुतउत्तानपद, जासुभयोलघुभाय॥

बालक रह्यो प्रियव्रत जबहीं। नारद भवनगवनकियतबहीं॥
दरशायो अति जगत विभीती। उपजायो हरिपद परतीती॥
प्रियव्रत चल्यो देवऋषि संगा। रँग्यो रुचिर रघुपति रतिरंगा॥
मंदर कंदर बैठ्यो जाई। विभव विलास आशविसराई॥
विधि मनु दोउसमुझावनआयो। नृपमनअचलनचल्योचलायो॥
तब नारदहिंकह्यो मुखचारी। बिन प्रियव्रतकोजगतसुधारी॥
तब नारदहि कह्यो असबानी। करहु राज्य हरिकारजजानी॥
गुरुशासन गुणि पुनि घरआयो।किये राज्य रघुपतिपदध्यायो॥
ग्यारह अर्बुद वर्ष नरेशा। महिमंडलमहँकियो निदेशा॥
प्रेममगन बीत्यो सब काला। कार्यसुधारचोकृष्णकृपाला॥
यदपि नमाया मोह निराना। तदपिभौनतेहिदुखदहिखाना॥
तिय सुत राज्य कोश परिवारा। छोड़ि प्रियव्रत गहनसिधारा॥

दोहा—तहँभजि यदुपतिकमलपद, यहप्राकृततनुत्यागि।
गवन कियो गोलोकको, कृष्णचरणअनुरागि॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेअष्टादशोऽध्यायः॥ १८॥

अथ शेषमहाराजकी कथा॥

दोहा—वैष्णवमतसुरसरिसुखद, तासुहिमाचलशेष।
तासुकथारजकनकहौं, वर्णितवेदअशेष॥ १॥

ईश्वर सृष्टि करन जब राचौ। क्षिति जल तेजअनलनभपाँचौ॥
भै जीवनकी धरणि अधारा। तासु अधार न परै निहारा॥
तब मुनि शेषसमीप सिधारो। पाणि जोरि असवचनउचारो॥

जीवन हेतु शेष, भगवाना। धरौ धरणि प्रभुकृपानिधाना॥
विन धरणी के धरे तिहारे। रहिहैं कहँ जगजीव विचारे॥
दयानिधान सुनत मुनि बानी। पैठे प्रभु पताल सुखदानी॥
चौदह भुवन सहित ब्रह्मंडा। येक शीशसरसवसममंडा॥
दीननहित धारे प्रभु धरणी। परहित सकलसाधुकीकरणी॥
शेष सरिसको परहित कारी। जो वैष्णवमत रीतिप्रचारी॥
जौनरीति गहि जग के प्राणी। भेटहिं भुजभरि शारँगपाणी॥
सदा करहिं सिद्धन उपदेशा। सोइ मुनि उपदेशहिंसबदेशा॥
जो कोइ चहै तरण जगसागर। भजै शेषपद सुमतिउजागर॥

दोहा—सहसाननकेचरितइमि, अगणितभणितपुरान।
यकमुखसोंमतिमंदमैं, केहिविधिकरौंबखान॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेएकोनविंशोऽध्यायः॥ १९॥

दक्षके पुत्र प्रचेतनकी कथा।

दोहा—कहौं प्रचेतनकी कथा, सुतबरही प्राचीन।
जे यह जगमें आइकै, भये न जगमें लीन॥ १॥

वर्धनकरन हेतु संसारा। प्राचेतन सिरज्यौ करतारा॥
कह्यो पिता तप करहु कुमारा॥विन तप नहिं सिरजन अधिकारा
सुनि पितुवचन सिद्धि सरकाहीं। चले प्रचेता अति मुदमाहीं॥
मारगमें नारद मुनि आये। संसृत सार असार दिखाये॥
सृष्टि करब यह संसृत मूला। विषयादिक याहीके फूला॥
जेतो श्रम संसृत हित कीजै। कस नहिं तेतौ हरि मन दीजै॥
सुनि नारदके वचन कुमारा। भजन लगे वसुदेव कुमारा॥
तब प्रसन्न ह्वै दीनदयाला। चढ़े गरुड़ प्रगटे तेहिं काला॥
करिकै कृपा धाम पठवायो। यह सुधि दक्षप्रजापति पायो॥

दशसहस्रसुत भे विज्ञानी । केहिविधि सृष्टि फेरि हम ठानी॥
अस विचार मन सहसकुमारा । विरच्यौ बहुरि दक्ष यक वारा॥
आयसु सृष्टि करन कहँ दीन्हो।तपहित सकल गवनवन कीन्हो॥
दोहा—आइ देवऋषि पुनि तिन्हैं, समुझायो बहुभाँति ॥
तेउ संसृति रति तजि भये, विरति निरत दिन राति॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अथ शतरूपाकी कथा ॥

दोहा—महाराज मनुकी भई, महरानी छविखानि ।
शतरूपाकी अब कथा, मैं कछु कहौं बखानि ॥
वामनछंद—कीन्हो विपिन तपजाय । हित मिलन श्रीरघुराय ॥
बीत्यौ नहीं चिरकाल । भेप्रगट दशरथ लाल ॥
कह माँगुरी वरदान । तब हृदय सुख न समान ॥
करजोरि बोली बैन । अभिलषित अवहौंमैंन ॥
यहिते अधिक अब काह । देहौ हमैं सुरनाह ॥
अब मोरि पूजी आस । लहि वदन वनज सुवास ॥
माँगहुँ यही वरदान । नित लखौं कृपानिधान ॥
तब ह्वै प्रसन्न दयाल । कह वचन अस तेहि काल ॥
हम होब तुव सुत मातु । सुख देव जग विख्यातु ॥
ममबालचरित अपार । तैंलखलहैसुखसार ॥
अस भाष श्रीभगवान । भे तुरत अंतर्धान ॥
सोइ भई दशरथ रानि । किय प्रगट जानकि जानि ॥
दोहा—कौन तासु महिमा कहौं, जासु सुवन श्रीराम ॥
विना काम सब कामप्रद, सहित काम नहिं काम ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेएकविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अथ देवहूतीकी कथा ॥

दोहा—देवहूति मनुकी सुता,दियो कर्दमहिं व्याहि ।
पतिसेवन तजि जगत सुख, लग्यो नीक नहिं ताहि ॥

पति सेवतभो कृशतनु ताको । गह्यो धर्म सब पतिव्रताको ॥
कियो विभवमुनि योग प्रभाऊ । पतिसेवन तजि तेहि नउराऊ॥
पति समीप इक समय सिधारी । पूछ्यौ मुक्त होव संसारी ॥
कर्दम जानि तासु अधिकारा । कह्यो कृष्णसुत होइ तुम्हारा॥
सोइ प्रभु करिहैं सकल बखाना । असकहि कानन कियो पयाना
देवहूति करि कृपा महाई । कपिलदेव प्रगटे यदुराई ॥
योग विराग भक्ति अरु ज्ञाना । कियो बखान कपिल भगवाना
पुनि गंगा सागर गवनतभे । करत जीव उपदेश वसतभे ॥
देवहुती तहँ करि दृढ़ नेमा । करि सिय पिय पद पूरण प्रेमा॥
रही कपिल आश्रम कछु काला । लग्यो नतेहि संसृत जंजाला॥
कछुक काल जब तहाँ सिराना । आयो विमल विकुंठ विमाना॥
तेहि चढ़ि देवहूति सुखछाई । गैवैकुंठ निसान बजाई ॥

दोहा—आकूती ताकी भगिनि, दुती प्रसूती और ।
यहि विधि तिनकी जानिये, भक्ति रीति सब ठौर ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेद्वाविंशोऽध्यायः ॥२२ ॥

अथ सुनीतिकी कथा ॥

दोहा—नृप उतानपदकी रहीं, रानी सुमति सुनीति ।
ध्रुव समान जाके तनय, कियो कृष्ण पद प्रीति ॥

ध्रुव अपमान सुरुचिते पाई । आइ मातु कहँ दियो सुनाई॥
मातु कह्यो तब अब सुनु ताता । भजहु जाइ हरिपद जलजाता॥
श्रीहरि संकट काटन हारे । दुती नरक्षक और तिहारे ॥

छोड़ि भवन वन गवन कीजिये। कृष्ण चरण रतिरंग भीजिये॥
पंच वर्षको बालक येकू। कियो न तेहि त्यागत दुखनेकू॥
जब ध्रुव कृपा पाइ यदुराजू। छत्तिससहस वर्ष किय राजू॥
कानन तप करि पाइ विमाना। कियो सुखित वैकुंठ पयाना॥
जननि सुरति करि तबहरिदासन। पूछ्यो कहा मात हितशासन॥
तब हरि पार्षद कह्यो बुझाई। सौंप्यो शिशु सुनीति यदुराई॥
हरि भरोस करि कियो न मोहू। पंच वर्ष बालक तजि छोहू॥
सोई पुण्य प्रभावसुजाना। गवनत आगू तासु विमाना॥
ध्रुवहु लख्यो निज नैन उठाई। गवनकरत आगू निजमाई॥

दोहा—यहि विधि गयो विकुंठको, सहित कुमार सुनीति।
सो यहि विधि भवनिधि तरत,करतजोनिहचलप्रीति॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेत्रयोविंशोऽध्यायः॥२३॥

अथ प्राचीनबर्हिकी कथा॥

कवित्त—भये भक्त प्राचीन बर्हिष नरेश एकविधिके नि-देशते पुत्र जन्यो दशहजार। तिन्है दीन्यो नारद विरति भये मुक्त सबै फेरि सुत सहस जन्यौ तेऊ तज्यो संसार॥ नृप कोप्यो मुनिपै मुनीश देखरायो यज्ञ पशु चोखे शृंगनके ठाढ़े नभपै अपार॥ भीति मानि भूपति निकरि वन तपकरि, भ-जिकै मुकुंद भयो संसृत जलधिपार॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेचतुर्विंशोऽध्यायः॥ २४॥

अथ सत्यव्रतकी कथा॥

दोहा—सत्यव्रत संध्या करन, गवन सिंधुतट कीन।
अर्घ्य देत अंजलि गिरचो, लघु अद्भुत इक मीन॥

त्यागन लग्यो भूप जलमाहीं । कह्यो मीन नृप दाया नाहीं ॥
खैहै मोहिं बली जलचारी । तब नृप लियो कमंडलु डारी॥
भयो कमंडलु भरि सोइ मीना । तब नृप बृहद कुंभ महँ कीना॥
भये कुंभ भरि तज्यो तड़ागा । सरभरि होत बार नहिं लागा॥
तब नृपतज्यो सिंधुमें ताको । जान्यो कौतुक कंत रमाको ॥
मीन कह्यो नृप दिवश सत्त महँ। बोरि देइगो सिंधु जगत कहँ ॥
नृप सप्तर्षि सहित मतिधीरा । बैठ रहे सागरके तीरा ॥
सतयें दिन रवि द्वादश उये । निजकर अगिनि जारि जगदये॥
सातसमुद्र तजी पुनि वेला । कियो सलिल संसारहिं रेला ॥
तबहिं नरेश निकट इक तरणी । आवतिभै अद्भुत हरि करणी॥
सहित सप्तऋषि चढ़्यो नरेशा । लै औषधि उर सुमिरि रमेशा॥
प्रगटे तबहिं मीन भगवाना । तनु योजन दश लाखप्रमाना॥

दोहा—लै हरिवासुकि नागको, नावशृंग निज बाँधि ।
प्रलयजलधि विचरन लगे, नृपकारज अवराधि ॥ १ ॥
प्रलय जलधि जल जब छट्यो, वस्यो अवनि तबभूप॥
यहि विधि राख्यो नृपतिको, कमलाकंत अनूप ॥२॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥

अथ रहुगणकी कथा॥

दोहा--भयो रहूगण राज इक, देश सिंधु सौवीर ।
योग भक्ति ज्ञानहु विरति, लहन चह्यो मतिधीर ॥

पावन सो उपदेश विचारयो ।कपिलदेवके निकट सिधारयो॥
चल्योचपल चढ़ि विमलपालकी। सुरति करत वसुदेव लालकी॥
मारगमें थकिगो इकवाहक । तब हेरन पठयो परिचारक ॥
तहँ जड़भरत खेत इक ताके । रहे रामरस रंगहिं छाके ॥

देखि पुष्ट पकरचो तिनकाहीं । ल्याय लगायो शिविका माहीं॥
जीव बचाय भरत पग धरहीं । शिविका हिलत भूपमनुगिरहीं॥
तब नृप कह करिकोपविशेषी । तबतु विषमगति वाहक तेषी॥
वाहक कहे न दोष हमारा । विषम चलत यह नयो कहारा॥
तब भूपतिजड़भरतहि भाष्यो । वाहक बहुत वचन कटुभाष्यो॥
जो चलिहै शठसमगति नाहीं। तोहिं ताड़न करिहैं क्षण माहीं॥
तब जड़भरत कह्या मुसकाई । ताड़क कोउ नहिं परै लखाई ॥
हम तुम सबहैं काल कलेऊ। मोहिं नजानि परत यह भेऊ॥

दोहा–महिपर पद पद पर उरू, तापर कटि पुनि कंध ॥
तापर शिविका फेरि तुम, तोहि न भार सम्बन्ध ॥ १॥
सुनत वचन जड़भरतके, भयो भूपके ज्ञान ॥
कूदि तुरत पगमेंपरचौ,त्राहि त्राहि भगवान ॥ २ ॥
करि तिनकी स्तुति बहुत, निजअपराध क्षमाय ॥
उतरनकी पूछत भयो, जो भवसिंधु उपाय ॥ ३ ॥
योग विज्ञान विराग मति, भरत कियो उपदेश ॥
भूप कृतारथ नाइशिर,लौटिगयो निजदेश ॥ ४ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यां सतयुगखंडेषड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

अथ ऋभुकी कथा ॥

सवैया–द्विजको सुतयेकरह्योऋभुनामकसोशिवमंदिरह्वैनिकस्यो
लखि चीकन रूप धरचो इक फूल कह्यो शिवमाँगु वरै हुलस्यो॥
तुमसों जो बड़ो सो दिखावो हमैं ऋभुवालक यों तहँ भाषिलस्यो॥
हर वैनके पूरण हेतुहरी प्रगटेऋभुको जगजाल नस्यो ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेसप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अथ इक्ष्वाकुराजाकी कथा ॥

सवैया—जबते महिभूप इक्ष्वाकु भये हरिलीला रचै शिशुसंगनमें॥
सतिभाव विलोकिके तासु हरी कह्यो मांगु रँगे रतिरंगनमें ॥
रघुराज कह्यो जस खेलत है तुमहू तस खेलो उमंगनमें ॥
मुसकाइ कह्यो हरि तेरेइ वंशमें खेलिहौं औधके अंगनमें ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेअष्टाविंशोऽध्यायः॥ २८॥

अथ पुरूरवाकी कथा ॥

दोहा—बुधको नंदन होत भो, पुरूरवा महाराज ॥
ताकी छवि वर्णनकियो, नारद देव समाज ॥

तहँ उर्वशी सुनत मन मोही। कह्यो मनहि कब देखोंवोही॥
उतारि स्वर्गते नृपाढिग आई। राजहु देखि रह्यो ललचाई ॥
प्रीति समान भई दुहुँकेरी। तब उर्वशी गिरा अस टेरी ॥
तुमको नग्न देखि जब लैहैं। तब हम त्यागि तुम्हैं दिवि जैहैं ॥
असकहि रहन लगी नृप नेरे। उतै शक्र गंधर्वन प्रेरे ॥
रहे उर्वशीके युग छागा। किये रही तिनपै अनुरागा ॥
तिनहिं हरे भादँव निशिमाहीं। तब उर्वशी कह्यो नृपपाहीं ॥
हरत छाग गंधर्व हमारे। भूपनपुंशक बल न तुम्हारे ॥
परेउनग्न तैसहिं नृप धायो। तब गंधर्व बिजुलि चमकायो॥
देखि उर्वशी नग्न नरेशै। जात तुरंत भई दिवि देशै ॥
बिना उर्वशी भूप दुखारी। फिरन लग्यो कटिमहीमँझारी॥
एकसमयकुरुक्षेत्रहि आयो। तहाँ उर्वशी दर्शन पायो ॥

दोहा—पकरि चरण रोवन लग्यो, कही नाइशिर बात ॥
रे पापिनि अब काकराति, मेरे जियको घात ॥ १ ॥

तब उर्वशी कही मुसकाई। गँधरव यज्ञ करहु नृपजाई ॥

मिलिहौं त्वहिं गंधर्व देश में। ह्वै हौ अवशि उधार शोकमें॥
फिरयो भूप प्राणहि असपाई। गँधरव यज्ञ कियो मनलाई॥
गयो जवहिं गंधर्व अगारा। मिली उर्वशी प्राणअधारा॥
बहुत दिवस दोउ रमें सुखारी। काल विपमगतिदियोविसारी॥
पुण्य क्षीणते पुण्य जननकी।पुनि पुनि गतिहै अवनिपतनकी॥
भई गिलानि भयो पुनि ज्ञाना।त्राहि कहत सुमरयोभगवाना॥
तुरत उर्वशी कहँ नृप त्यागी।निदरयोनिजकहँजानिअभागी
सुरसमान सुख सकलविसारयो।वारवार असवचन उचारयो॥
नारिनेह मैं जो नर छाको। नश्यो लोक परलोकहु ताको॥
फाँस्यो जाहि फंद में नारी। होत ताहिकी दशा हमारी॥
असकहि ह्वै अनन्य हरि ध्यायो।निहछलजानि कृष्णअपनायो॥

दोहा—रमारमणपुरगवनकिय, पुरूरवामहाराज।
ऐसहिरैनृपकी कथा, जानहिंसंतसमाज॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडएकोनत्रिंशोऽध्यायः॥ २९॥

अथ गयराजाकी कथा॥

कवित्त—मनु महाराज वंश भयो गयो राज कोई चक्रवर्ती शासन चलायो चारों ओरहै॥ कीन्हो यज्ञ ऋत्वक्जन दीनो भाग देवनको विनाहरि आये नृप मान्यो ना निहोरहै॥ परयो व्रत तीन दिन हरिकी लखन आश रह्यो टकलाइ जैसे चंदको चकोरहै॥ मंडन महीपति मनोरथ के मखमें दयालु दौरिआयो दशरथको किशोरहै॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेत्रिंशोऽध्यायः॥ ३०॥

अथ देवल उतंक और हरिदासकी कथा॥

दोहा–देवल और उतंकहू, अरु अमूर्तिहरिदास।
जन्महिते ई तीनिजन, करीनजगकीआस॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेएकत्रिंशोऽध्यायः॥ ३१॥

अथ नहुषराजाकी कथा॥

कंवित्त–इंद्र ब्रह्म हत्या भीति भागे कंजनाल डरयो नहुषै मुनीश इंद्रपद बैठायोहै॥ शचीके समीप चल्यो मुनिन लगाय यांन सर्पके कहत मुनि सर्पही बनायोहै॥ हिगिरि कंदरा में गिरिकै बितायो काल ताके भाग विवश युधिष्ठिर सिधायोहै॥ जानि पूर्व पुरुष गलानि दै विज्ञान दीन्हो पाछै अपवर्ग शाप स्वर्गको छुड़ायो है॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेद्वात्रिंशोऽध्यायः॥ ३२॥

अथ मान्धाताकी कथा॥

कबित्त–भयो मान्धाता भूप धाता सों जगतबीच ताके दरबार ऋषि सौभरि सिधायो है॥ माँग्यो येक कन्या भूप कह्यो तुम्हे बरै जोई सोई लेहु सुनि मुनि तरुण ह्वै आयो है॥ नृपके पचांस कन्या मुनिने पचासो वरयो भूपति पाँचसौ दियो रामरति छायोहै॥ लखि निहकाम दान दीरघ दयालुनाथ रघुराज मानंधातै जगते छुड़ायोहै॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेत्रयःत्रिंशोऽध्यायः॥ ३३॥

अथ पिप्पलायनकी कथा॥

कवित्त–ऋषिपिप्पलायन शमीक माया दर्श तैसे पुलह पुलस्त्य और च्यवन ऋचीकहै॥ अंगिराहू लोमशादि औरहू मुनीश

जेते भये महाभागवत कीन्हो ध्यान ठीकहै॥ अष्टकुली नागशेष चरण लगायो चित्त जमदग्निकी पुराणनमें नीकहै ॥कहों मैं कहानी कहा कश्यपकी जाते भई सुरासुर सृष्टिपै नमायाशिनजीकहै॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

अथ सगरकी कथा ॥

कवित्त—सगर नरेश साठि सहस लह्यो जे सुत अश्वमेध वाजी संग तिन्हैं भेजि दीन्हो है ॥ हरयो शक्र वाजीको न पायो हेरे खन्यो मही कपिल शराप दैकै भस्म तिन्हैं कीन्हो है ॥ सगरनरेश केरे भयो ना विषाद कछू त्याग्यो असमंजसको पापी चित्त चीन्होहै ॥ नाती अंशुमानको नरेशरचिदैकै राजिरघुराज आप रामपुर पथ लीन्होहै ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेपंचत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥

अथ वशिष्ठऋषिकी कथा ॥

दोहा—मुनि वशिष्ठकी मैं कथा, कहौं कौन मुखलाय ।
जिनको श्रीरघुवंशमणि,लीन्हो गुरू बनाय ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेषट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥

अथ भृगुऋषिकी कथा ॥

दोहा—सरस्वति तट शंका उठी, मध्यमुनीन समाज ।
विधि हरि हरमें को बड़ो, यह जाननके काज ॥ १ ॥

सकल मुनिन संमत करिदीन्हों ।भृगु पयान जानन हित कीन्हो॥
प्रथम विरंचि समीप सिधाये ।विधिहिनिरखिनहिंशीशनवाये॥
कियो कोप भृगुपै मुखचारी । भृगु कैलासहि गये सिधारी ॥
मिलनहेतु शिव उठे मुनीशै । तब भृगुकोपिकह्यो असईशै ॥

रे निर्लज्ज भसम अँगधारी। तोहिं न छुवनमति होतिहमारी॥
यह सुनि शिव सकोपलैशूला। धाये भृगुहिं करन निर्मूला॥
शिवहिंक्षमा तब उमा करायो। भृगुतुरंत वैकुंठहि आयो॥
द्वारपाल कीन्हे नहिं वारन। निकसि गये भृगु सातौंद्वारन॥
मणिमंदिर सोहत विधिनाना। श्रीसहित सोवत भगवाना॥
प्रभुउर किय भृगु चरणप्रहारा। उठे नाथ मुनिनाथ निहारा॥
निजकर गहि मुनि पद अनुरागे। बार बार हरि मीजन लागे॥
कठिन कुलिशते हृदयहमारो। कमलहु कोमल चरणतिहारो॥

दोहा—क्षमाकरहुअपराध यह, किय धनि मोहिं मुनिराज॥
रमा वसन लायक भयो, मेरोउर यह आज॥ १॥

भई पुनीत आज सब भाँती। परसत पद राउर यह छाती॥
जेहितन परहि विप्रपग धूरी। पूरब पुण्य कियो सोइपूरी॥
लखिसुशीलता भृगु प्रभु केरी। वारिधार दृग बही घनेरी॥
पुलकित तनुकछु कहिनहिआयो।चल्यौलौटिमुनिअतिसुखपायो
आयो सरस्वती सरि तीरा। जहँबैठे सब मुनि मतिधीरा॥
विधि हरको वृत्तांत बखाना। बहुरिकह्यो जो किय भगवाना॥
सबते बड़ो हरिहिं मुनि जाने। दयानिधान न दूसर माने॥
पूरणप्रीति रीति परतीती। भजनलगेहरिकहँ मनजीती॥
क्षमा दया रति शील सनेहू। हरि तनु किये रहै सब गेहू॥
दूजो को हरि सरिसदयाला। लखत दीनह्वै जातबिहाला॥
जो न होत हरि दीन सनेही। भाषहु संत भजत पुनि केही॥
उभयलोक जो चहहु सुपासू। तौ चाहहु चित रमानिवासू॥

दोहा—याग विज्ञान विरागरति, कठिन जानि यदुनाथ।
सरल उपाय कह्यो सबन, धरहु संतपदमाथ॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेसप्तत्रिंशोऽध्यायः॥ ३७॥

अथ दालभ्यमुनिकी कथा ॥

दोहा—अरु दालभ्य मुनीशकी,कथा पुराणप्रसिद्ध ।
जासु कथित वर्णत वदन, होत कार्य सब सिद्ध ॥१॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेअष्टत्रिंशोध्यायः ॥ ३८ ॥

अथ उत्तानपादराजाकी कथा ॥

दोहा—नृपउत्तानहुपादकी,कहौं कथा केहि रीत ।
भयो जासु ध्रुवसों सुवन, कियो कुटुंब पुनीत ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेनवत्रिंशोध्यायः ॥ ३९ ॥

अथ दक्षकी कथा ॥

दोहा—दक्षकथा भागवतमें,वर्णित युत विस्तार ।
तातें मैं यहि ग्रंथमें,कीन्हो नाहिं उचार ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

अथ सौभरिकी कथा ॥

दोहा—यमुनामें निरखत भयो, सौभरि मीन विलास ।
मान्धातानृपसोंसुता, ल्याये माँगि पचास ॥

रच्यो विभव निज योग प्रभाऊ । वसन अमल आभरणजराऊ॥
पृथक २ मणिमंदिर सोहे । निरखत सुर सुंदरि गणमोहे ॥
कियो बहुत दिन भोग विलासा । तदपि काम पूरी नहिं आसा॥
निरखि अनित्य जगतकी रीती । संसृत सुखपर भई अप्रीती ॥
बार बार मन महँ पछिताई । निकसि चले सब विभव विहाई॥
हरि अनुरागहिं जगत विरागा । उभय भाँति मुनि कर मनलागा
मान्धाताकी सुता पचासा । लखिपतिरीति तजी जगआसा ॥
भजन लगीं यदुनंदन काहीं । वसि २ विपिन एकाँतनमाहीं॥

अचिरकाल महँ श्रीभगवाना । निज हित मिलन नेम दृढ़ जाना
मिले मुनिहिं अरु नृपतिकुमारी । सबको कियो रमापुर चारी॥
कियो न कन्या तरण उपाऊ । मिले कृष्ण सतिसंग प्रभाऊ॥
जिमि रीझत सतसंग मुरारी । तिमि नहिं योग याग तपभारी॥

दोहा–योग अचल मनज्ञान सम, जगको त्याग विराग ॥
विना भक्ति नहिं सिद्धि, त्रयभक्ति सँत संगलाग ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेएकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

अथ कर्दमकी कथा ॥

दोहा–कहों बहुरि कर्दम कथा, देवहूतिको कंत ॥
जाको योग विराग लखि, रीझिगये भगवंत ॥

कर्दम भये प्रजापति नंदन । विधिकह सृष्टि करहु कुलचंदन॥
सृष्टि करव गुणिजग जंजाला । बसे विपिन कर्दम तेहिकाला ॥
लवहुमात्र जग चित नहिं लागा । छनछन बढ़्यो कृष्ण अनुरागा
भेप्रसन्न प्रभु कर्दम पाहीं । आये द्रुत तिन आश्रम माहीं ॥
कर्दम कियो दंड परणामा । बोलि नआयो लहि सुखधामा॥
हरिकह इत ऐहै मनुभूपा । देहैं तुमको सुता अनूपा ॥
ताके मैं लैहौं अवतारा । करिहौं योग विज्ञान प्रचारा ॥
सृष्टिकरनहितदियविधिशासन । मोहितुसृष्टिकरउभयनाशन ॥
अंतरहित हरिभे कहि ऐसो । प्रभुजस कह्यो भयो सब तैसो॥
देवहूति पति सेवन लागी । निज तनु सब सुपास सुख त्यागी ॥
लागि दया मुनिविभववनायो । जोसुखलखिसुरपतिललचायो॥
भोग विलास फेरि मुनित्यागी । कानन चले राम अनुरागी ॥

दोहा–देवहुतिहि अस कहतभे, ह्वैहैं हरि सुत तोर ॥
करि उपदेश सो छोरिहैं, तुव भवबंधन घोर ॥ ९ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेद्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥

अथ मांडव्यमुनिकी कथा ॥

दोहा—रहे येक मांडव्यमुनि, रँगे राम अनुराग ।
मायावन वीरुध विषै, सुख सुमवासन लाग ॥ १ ॥

यक नृप भवन गये कोउ चोरा । मूस्यो मुक्तमाल चितचोरा॥
चले जबहिं लै सीपजमाला । सोरराजगृह भो तेहिकाला ॥
चोरन पकरन हित भट धाये । यह सुनि सोर चोर भयपाये ॥
लख्यो न आपन बचन पराई । मिल्यो मार्ग मांडव मुनिराई॥
तिनके गले डारि मणिमाला । चोर पराय गये तेहिकाला ॥
पाछे दूत दौर तहँ देखे । मुनि मांडव्य चोर करि लेखे॥
मुनिहिं पकरि लै चले तुरंता । ल्याये नृपति निकट बलवंता॥
नृपकहँ देहु चोर कहँ सूरी । संतभेष यह चोर कमूरी ॥
तुरत दूत पुर बाहिर लाई । सूरीमहँ दिय मुनिहिं चढ़ाई ॥
प्रेममगनमुनि भयो न भाना । हरिप्रभाव निकसे नहिं प्राना ॥
सूरी चढ़े बिते दिनसाता । मरे न मुनि आश्चर्य अघाता ॥
खबरि नरेश सकल यह पाई । मुनि समीप महँ आयो धाई ॥

दोहा—चीन्ह मुनीशहिं त्राहिकहि, कीन्होदंडप्रणाम ।
क्षमहु मोरअपराधप्रभु, मैंकियअनरथकाम ॥ २ ॥

सूरीते लिय तुरत उतारी । बारबार दीनता उचारी ॥
मुनि दयालु कह दोष न तोरा । यह यमराज दोषअतिघोरा ॥
असकहि नृपहिं प्रबोध मुनीशा। गये जहाँ संयमनी ईशा ॥
यमलखि कियो बहुत सतकारा ।मुनि सकोपअसवचनउचारा॥
रे यमको न भयो अपराधा । जाते मोहि दीन्ही यह बाधा ॥
यम डेराय बोले अस बानी । पूर्वजन्म असकियमुनिज्ञानी॥
बालक रहे समयइक आपू । खेलत यकजीवहिंदियतापू ॥
गहि फरफुंदा तेहि गुद माहीं । डारचो सींक दया भै नाहीं ॥

सोइ अपराध लह्यो तुम सूरी । गुदते शिरह्वै निकसो झूरी ॥
मुनि सकोप तब कह असबानी । मैं तौ रह्यो बाल अज्ञानी ॥
कृत अज्ञान अपराध हमारा । तैं न कियो यम मूढ़विचारा॥
ताते शूद्र होहु तुम जाई । औरहु कछुहौं देत सुनाई ॥

दोहा—चौदहवर्ष प्रयंतलौं, बालक रहत अज्ञान ।
करतनीक नेवर नहीं, पाप पुण्य कर भान ॥ ३ ॥
ताते चौदहिवर्षलगि, पाप पुण्यनहिं होइ ।
ऊरधताके फल लहैं, करणीको सब कोइ ॥ ४ ॥
असकहि मुनि गवनतभये, हरिपदचित्तलगाय ॥
नृपविचित्रवीरजभवन, भये विदुरयमआय ॥ ५ ॥

इति त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

अथ पृथुमहाराजकी कथा ॥

दोहा—वर्णों पृथु महराजकी, कथा कथितसुपुरान ।
याके सम भव भूमिमें, भयो भक्तनहिंआन ॥ १ ॥

भयो वेणु भूपति अति पापी । परजनको अतिशय संतापी ॥
भस्म कियो तेहि मुनिदै शापा । मिट्यो पुहुमिते पूरण पापा ॥
पुहुमीपति बिन पुहुमिअनाथा । यहि लखिकै सिगरेमुनिनाथा॥
मंथनं कीनो वेणु शरीरा । तेहिते पृथु प्रगटे मतिधीरा ॥
ज्ञानमान पुनि परम सुजाना । भक्तिमान भवभूतिनिधाना ॥
देवन सहित विरंचि सिधाई । पृथुहिं सिंहासनमहँ बैठाई ॥
निज २ वस्तु देव सब दीन्हे । वंदीगण अस्तुतिअतिकीन्हे ॥
निजस्तुति सुनि पृथुमहराजा । कह्यो काहु अनुचितयहकाजा ॥
मृषा प्रशंसन निंदन होतो । जिमि प्राची विन भानु उदोतो॥
जामे जेतनो गुण लखि लीजे । ततनो तासु प्रशंसन कीजे ॥

येकहु गुण है नहिं मोंमाहीं। स्तुति करब उचित अबनाहीं॥
सुनि पृथुवचन विरंचि सुखारी। वंदिनसों असगिरा उचारी॥
दोहा—करहु प्रशंसभविष्यसब, पृथुभूपतिको सर्व।
यहिसम कोउ नहोइगो, गैहैंयशगंधर्व॥ १॥
वंदी वचन मानि विधि केरो। भने भविष्य प्रशंसबनेरो॥
स्तुति करि गवने दिगपाला। यहिविधि बीति गयोकछुकाला
पर्‌यो जगत दुर्भिक्ष महाना। प्रजाभूप ढिग कियो पयाना॥
अति दुर्भिक्ष जनित दुखपाये। पृथु धरणीकर दोष लगाये॥
जोपै धरणि अन्न उपजावति। तो नहिं प्रजा मोरि दुखपावति॥
असकहि चल्यो शरासन धारी। अवनी उपर कोप करि भारी॥
इकशर हनन चह्यो महिकाहीं। तासुतेज सहि सकी सो नाहीं॥
जगती तहाँ महा भयमानी। गऊरूप धारि तुरत परानी॥
सातहुलोक भूमि फिरि आई। सक्यो नराखि कोऊ सुरराई॥
पुनि पृथु सन्मुखभै महि ठाढ़ी। त्राहि त्राहि बोली भय बाढ़ी॥
धर्मधुरंधर पृथु महाराजा। नारि वधत कतलगहि नलाजा॥
पृथु कह प्रजा दुखद जो कोई। ताहिवधे कछु पाप न होई॥
दोहा—कह्यो धरणि परजाहि तै, दुहहुमोहिं महाराज॥
यह उपाय ह्वैहै सकल, सिद्धि सबनको काज॥ २॥
धेनुरूप धरणी तब राजा। दुहनलग्यो परजनके काजा॥
अन्न अनेकन जब दुहि लीन्हो। पुनि औरनकहँ आयसु दीन्हो॥
सिद्ध सुरासुर मुनि गंधर्वा। दुहहु जौन भावै जेहिं सर्वा॥
पृथुशासन सुनि सकल सिधारे। दुहे धरणि जगजीव अपारे॥
भयो सकल त्रिभुवनकर काजा। कहैंसबै जय पृथु महाराजा॥
पुनि पृथुराजराज बहु कीन्हो। सबै प्रजनको आनँद दीन्हो॥
अश्वमेध नवनवति प्रचारा। सुनहु भयो जो सतयें बारा॥

सतयेंवार यज्ञ. महराजा । जोरी सुर नर सिद्ध समाजा ॥
वामदेव विधि आदिक देवा । आये सकल करन पृथुसेवा ॥
येकपुरंदर भर नहिं आयो । अपने अतिघमंड महँ छायो ॥
यज्ञविध्वंसन हितचितचोपी । चल्यो पुरंदर पृथुपै कोपी ॥
हरयो यज्ञ वाजी मख आई । लै गवन्यो निजरूप छिपाई ॥
तबै अत्रिमुनि दियो बताई । हरत यज्ञ वाजी सुरराई ॥

दोहा—दिक्षितराजा यज्ञ में, उठयो न शरधनु धारि ॥
जेठे अपने पुत्रको, कह्यो प्रचारि प्रचारि ॥ ३ ॥

मेरे मखको पूजित वाजी । लीन्हे जात पुरंदरपाजी ॥
सुनि पृथुशासन सुतवरिवंडा । चल्यो चढ़ाइ चपल कोदंडा ॥
जाय निकट वासवहिं प्रचारा । हरे चोर कत घोर हमारा ॥
पृथुसुतकाहिंकालसम देखी । भग्यो पुरंदर अतिभय लेखी ॥
भागेहु वचव न जानि सुरेशा । धरयो तुरत दंडीकर वेशा ॥
पृथुपुत्रहि भ्रम भयो विलोके । धर्म विचार शरासन रोके ॥
पूछन लग्यो शक्रकेहिंठोरा । हरिलैगयउ तुरँग जो मोरा ॥
शिरकंपन करि सो किय नाहीं । नृपसुत भयो निराशतहाहीं ॥
लौट्यौ जब तब अत्रि मुनीशा। कह पुकार करि तैनहिं दीशा॥
दंडीरूप घोरको चोरा । सोइ वासव वैरीहै तोरा ॥
सुनि बहुरयो पृथु पुत्र रिसाई । लै वाजीकहँ वासव जाई ॥
भाग्यो सुरपतिसबै दिशानन । प्राणजात नृप नंदन वानन ॥

दोहा—जब जमुक्यो कछु पृथुतनय, तब तुरंग तहँ छोड़ि ॥
भयो पुरंदर अलखउर, सक्यो न सन्मुख वोड़ि ॥४॥

लै वाजी आयो मखशाला । पृथुनरेश सुत बली विशाला॥
सब मुनीश अति पाय हुलासू । नामधरयो ताकरविजितासू ॥
बहुरि पुरंदर हरयो तुरंगा । जिमि मुनि मानसविषयनसंग।

चल्यो सकोप बहुरि विजितासू। करन शक्र बिन प्राणहिं आसू॥
लख्योशक्र निजरिपु मनु काला। जानि अंत निज भयो बिहाला॥
धर्‍यो अघोरी वेष तुरंता। खगे भयो मगमहँ छलवंता॥
भयो फेरि विजिताश्वहिधोखो। तज्यो नबाण हनन हितचोखो॥
लौटि चल्यो तब अत्रिपुकारो। सोइ अघोरी शत्रु निहारो॥
तुरत फिर्‍यो संधानतसायक। अब न बची कैसेहु सुरनायक॥
कालजानि अपनो असुरारी। बाजि बिहाय भग्यो भय भारी॥
लैतुरंग आयो मखशाला। दियो मुनिन कहँमोद विशाला॥
जौन जौन वासव वपुधार्‍यो। सोइ २ पुहुमि पखंडप्रचार्‍यो॥

दोहा—निरखिशक्रशठता सपदि, कोपित पृथुमहाराज।
संधान्यो कुशबाण इक,करन अंत सुरराज॥५॥

संधानत सायक विकराला। उठी ज्वालदशदिशितेहिकाला॥
त्रिभुवन माच्यो हाहाकारा। शक्रनाश सब कियो विचारा॥
भुवन होत विनवासवकेरो। गुणिविधि शोकितभयोघनेरो॥
आयो पृथु महीप मखमाहीं। बैठ्यो लहि सतकार तहाँहीं॥
कह्यो वचन हेभूप शिरोमनि। धर्माधारधरणिधनिधनिधनि॥
तुम यदुनाथ अनन्य उपासी। नाहिं ममसिरजितलोकविलासी॥
शतमख करत जगतमहँजोई। लहत पुरंदरपद भरिसोई॥
नशत सोउ लहि नेसुककाला। यह नहिं भक्त महत्व विशाला॥
ताते यज्ञ रहन अब दीजै। यदुपति प्रेम सुधारस पीजै॥
सुनि विधिवचन भूप हरिदासा। एवमस्तु कहि लह्यो हुलासा॥
सकल कर्म पृथु कियो अकामा। रही आशलखिहैं कब श्यामा॥
करत ध्यान बैठो निज आसन। धारत धर्मधुरंधर शासन॥

दोहा—पृथुकी जो मन कामना,ताहि जानि यदुराज।
धायो तुरत विकुंठते,चढ़ि वाहनखगराज॥ ६॥

मारग माहिं गुन्यो मनमाहीं। इंद्रवचत अब केस्यो नाहीं ॥
मम जन द्रोह जनित अपराधा। करीविशेषि बासवहिं बाधा ॥
तातेलै बासव सँग जाऊं। पृथु नृपशरणागत करवाऊं ॥
असकहि हारि हारि लियेहँकारी। आये शंख चक्र करधारी ॥
सुर नर मुनिसब हरिहिं विलोकी। जय जयकहि भे सकल अशोकी
तेहि क्षणको पृथुको आनंदा। मैंकिमि वरणिसकों मतिमंदा॥
तृषित लहै जिमि सुरसरिधारा। देइ मृतक जिमिजिय करतारा॥
उठ्यो नरेश दौरि हरि आगे। दंडसमान गिरयो अनुरागे ॥
उठ्यो बहुरिकछुकहिनहिंआयो। बार बार दृगवारि बहायो ॥
प्रेम मगन मन पुलकित गाता। करत पान छवि नाहिं अघाता॥
अचलखरो बीत्यो यक जामा। वारयोतन मन जन धन धामा॥
भेप्रसन्न प्रभु पृथुहिंनिहारी। बार बार तेहि मिले मुरारी ॥

दोहा—प्रभुहिं मिलत सकुचत नृपति, धनि धनिमानत भाग॥
प्राकृत मोर शरीर यह,प्रभु अंगनमहँ लाग ॥ ७ ॥

धरे गरुड़ गल प्रभु इक हाथा। इक कर फेरत पंकजनाथा ॥
प्रभु सों भन्यो माँगु वरदाना। तोहिंसम भक्त भयो नहिंआना॥
त्रिभुवन माहिं पदारथ जेते। तोहिंदेत लागत लघु तेते ॥
तब पृथु कह्यो जोरि करदोई। जो माँगो पाऊं प्रभु सोई ॥
प्रभु कह जौन अहै कछु मोरे। नाहिं अदेय नृपनायकतोरे ॥
पृथुकह संत कथित यशतेरो। द्वै श्रुति सुनिनतृपित मनमेरो॥
दशहजार दीजे मोहिं काना। सुनहुँ रावरो सुयश महाना ॥
सुनत अलौकिक नृपकी बानी। कारि कृपालु तेहि कृपामहानी॥
बोले वचन मंद मुसकाई। हमहु तोहिं याचैं नरराई ॥
करहु क्षमा वासव अपराधा। नाहिं ह्वैहै याको अब बाधा ॥
यह शरणागत होत तिहारे। क्षमासिंधु तुम भूप उदारे ॥

श्रवणसहसदश तें नृप पैहै। तदपिनमोयश सुनत अघैहै ॥

दोहा—पृथुकहँ वासव प्राणप्रिय, मोहिं सदा यदुनाथ।
असकहि वासव कहँमिल्यो, नृप पसारि युगहाथ८॥

जापर कृपा नाथ तुव होई। तेहिं अप्रिय मानै किमि कोई ॥
येक अरज मेरी भगवाना। सो सुनिकै पुनि करहु पयाना॥
चरणतुलसि मैंही अब लैहौं। मातु रमाकहँ मैंनहिं देहौं ॥
यह माता सह पुत्र विवादा। राखिहौं तुम्हें नाथ मर्यादा ॥
देखिअलौकिक पृथुकी प्रीती। भे प्रमुदित प्रभु जानि प्रतीती॥
ह्वै सवार तब पाक्षिनाथपर। चलन चह्यो प्रभु चक्र हाथपर॥
बहुरि परयो पृथु पाँयन जाई। कह्यो नाथ मुहिं लेहु लेवाई ॥
तुमहिपाय संसृत महँ रहिवो। रत्नपाय पुनि कंकर गहिवो ॥
कह प्रभु चारि संत इतऐहैं। महिमा संतन तोहिं सुनैहैं ॥
तोहिं बाकी इतनो अब काजा। मुनिमिलिहैतोहिंसहितसमाजा
असकहि भे हरि अंतर्धाना। पृथुपायो परमोद महाना ॥
बीत्यो कछुक काल यहि भाँती। देखत संत पंथ दिन राती ॥

दोहा—एक समय दिनकर सरिस, द्युति छावत दिशिचारि ॥
आइ गये पृथुके भवन, चारि संत सुखकारि ॥ ९ ॥

देखत पृथु मनु सर्वस पायो। दौरि द्रुतहिं चरणन शिरनायो॥
चरण धोइ तनु अरु गृहसींच्यो।मनहुँसकलसिधिउदधिउलीच्यो
करि पूजन षोड़श उपचारा। कनकासन संतन बैठारा ॥
चापत चरण कह्यो असवानी। मोहिं मिले अब सारँगपानी ॥
मैं सर्वस निज तुमहिं चढ़ाऊँ। संतसरोज चरण रतिपाऊँ ॥
सनकादिक करि कृपा महाई। संतनकी महिमा सब गाई ॥
बहुरि कह्यो हरिपुर पगुधारो। यह प्रभु शासन चित्तविचारो॥
असकहि अंतर्हितभे चारी। पृथुकहिचल्यो कृष्णरतिधारी॥

बदरीवन पहुँच्यो जब जाई। चारि पारषद द्रुत तहँ आई॥
पृथुहि चढ़ाय विमान महाना। कृष्णनगर कहँ कियो पयाना॥
रमानिवास निवास निवासा। करत भये पृथुसहित हुलासा॥
पृथुचरित्र कछु कियो उचारा। और भागवतमें विस्तारा॥
दोहा-पृथुमहारानी जो रही, सो दहि दहन शरीर।
भई सिंधुजाकी सखी, छूटि गई भइ पीर॥ १०॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४४॥

अथ गजेंद्र अरु ग्राहकी कथा॥

दोहा—अब गजेंद्र अरु ग्राहकी, अतिशय कथा अनूप।
सो विस्तृत भागवतमें, वर्णौं मति अनुरूप॥ १॥
कवित्त—गेरिके ग्रस्यो है गजराज गोड़ गाढ्यो ग्राह गालिम गंभीर नीर चाहै सोगिरायो है॥ रह्यो नाहिं जोर थोर चितयो सो चार्‍यो वोर काहूके निहोर नाहिं जीवन देखायो है॥ कहै रघुराज सो करिंद तजि फंद सब कर अरविंदलै गोविंद गोहरायो है॥ कैधौं करि कंहहीते करि करहीते किधौं कमलते कमलाको कंत कढ़ि आयो है॥ १॥
दोहा—माँग्यो मोचन ग्राह गज, भवमोचनहूँ दीन।
यक याँचत बकसत दुगुन, श्रीयदुनाथ प्रवीन॥ २॥
इति पंचचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४५॥

अथ अंबरीषराजाकी कथा॥

दोहा—अंबरीष महाराजकी, कहौं कथा अवदात।
जाहि सुनत सब भक्तके, उर आनँद उमगात॥ १॥
नृप नाभाग तनय गुणवाना। अंबरीष भागवत प्रधाना॥
बालहिं ते हरिसेवन प्रीती। बाढ़ी सकल साधुजन रीती॥

जब नाभाग गयो परलोका । अंबरीप कछु कियो नशोका ॥
राजतिलक जबतें नृपपायो । ठौर ठौर अस रव सुनवायो ॥
जो द्विज साधु ईश नहिं मानी । लही प्रचंड दंड सो प्राणी ॥
आप कृष्ण मंदिर बनवायो । ताकी रचना विविध करायो ॥
कृष्ण रुक्मिणी मूरति राखी । सेवन लग्यो नाथ सुखभाखी ॥
शक्र सरिस वैभव विस्तारा । स्वप्नसरिसनिज कियो विचारा
जेहि धन मद वश जीवनशाहीं । तासु विकार लग्यो तेहिनाहीं ॥
पंडितहू यह संपति पाई । लोभ विवश निज देत नशाई ॥
तासु रंग नहिं लग्यो भुवाला । कारण तासु कहूं यहि काला ॥
हरि महँ अरु हरि भक्तन माहीं। लख्यो भेद भूपति कछु नाहीं ॥

दोहा—सोइ प्रभाव ते लोठ सम, लख्यो लोभ विस्तार ।
पेख्यो पूरण सकल थल, श्रीवसुदेवकुमार ॥ २ ॥

यदुपतिपद अरविंदन तेरे । चुभ्यो चित्त पुनि फिरचो नफेरे ॥
रसना कथत कृष्ण गुणगाथा । कियो न और कथा करसाथा ॥
झारत यदुपति मंदिर मंजू । छाले परे तासु करकंजू ॥
बिना कृष्ण कीरतिके साने । परे न और वचन नृपकाने ॥
माधव मूरति काहिं विहाई । अनत भूपकी डीठि न जाई ॥
परस्यो साधु चरण नृप देहू । ओर परस पायो नहिं केंहू ॥
बिनहरि अरपित सुमन सुगंधू । भयो न तेहि नासा सनबंधू ॥
कृष्ण निवेदित अन्न अपारा । भूपति प्राण अधार अहारा ॥
गवनत हरि धामन पद ताके । कबहुँ उपानह सुख नहिं छाके ॥
छोड़ि येक प्रभु यदुकुल ईशा । द्वितिय देवको नयो न शीशा ॥
विभव विलास लह्यो नृप जेतो । अरप्यो यदुपति पदमहँ तेतो ॥
निज शरीर सुख हितनहिं कीन्हो।सकल कृष्णके काजहि चीन्हो ॥

दोहा—साधु चरणमें नेह अति, बाढ़ै जौन उपाव।
सोइ करनको भूपके, बाढ्यो दून उराव ॥ ३ ॥

अंवनिप अंवरीषके ज्ञानी। रहीं परम सुंदर शतरानी ॥
तिनसों कियो न विषय विलासू। हरि सेवत न लह्यो अवकासू॥
कोउ इक भूपति भयो प्रतीची। बढ़ी विभूति नीति रस सीची॥
भै हरि भक्ति सुता इक ताके। लागी राम नाम रट जाके ॥
भूप विवाह करन अभिलाष्यो। कन्या वचन जनकसों भाष्यो॥
वरिहौं अंवरीष महराजे। और भूपसों मोर न काजे ॥
सुता वचन सुनि नृप सुख मानी। परम भाग कन्याकी जानी ॥
कह्यो वचन तैं धन्य कुमारी। अंबरीष पति लियो विचारी॥
कोउ नहिं अंबरीष सम आजू। सुमति चक्रवर्ती महराजू ॥
कृष्ण अनन्य उपासक साधू। कृष्ण चरण महँ प्रेम अगाधू॥
निशिदिन कृष्ण नाम सुख लेही। यही सबन उपदेशहिं देही ॥
साधु विप्र तन मन धन मानै। हरि तजि और देव नहिं जानै॥

दोहा—असकहि विप्र बोलाय इक, तेहि बुझाय ततकाल॥
अंबरीष महँ राज पै, पठवायो महिपाल ॥ ४ ॥

अंबरीष पुर द्विजवर आयो। नृपहिं निरखि अति आनँद पायो॥
भूपति अति आदर तेहि कीन्हों।करि सतकार धोइ पद लीन्हों ॥
करि प्रणाम नृप कह्यो वहोरी। आज्ञा कहा विनय यह मोरी॥
विप्र कह्यो नृपसुता सोहाई। तुमहिं चहति निज पति नृपराई॥
तासु मनोरथ पूरण कीजे। अवनिप अनुपम यह यश लीजै॥
विप्र वचन सुनि कह्यो नरेशा। मोहि न विवाह आश.कर लेशा॥
दिवस रैन महँ नहिं अवकाशू। सेवत प्रभु पद जगत निराशू ॥
हैं घरमें मेरे शत नारी। तेऊ मोहि न कछु सुखकारी ॥
ताते जाहु विप्र घरमाहीं। यह विवाह करिहैं हम नाहीं ॥

यह सुनि विप्र लौटि घर आयो। कन्या कहँ वृत्तांत सुनायो ॥
सुन कन्या बोली अस बैना। द्वितिय कंत करिहौं नहिं मैना॥
कीतो अंबरीष पति ह्वैहै। प्राण पयान पापकी लैहै ॥

दोहा—यह सुनि कन्याको पिता, मानि परम संदेह ॥
पठवायो द्विजको बहुरि, अंबरीषके गेह ॥ ५ ॥

द्विजवर अंबरीष ढिग आई। बोल्यो वचन बहुत पछिताई॥
धरणि धुरंधर धर्म अधारा। भयो न तुम सम भूमि भुवारा॥
पै इक लागत नाथ कलंका। ताते कहो वचन विन शंका॥
जो लेहो नहिं व्याहि कुमारी। तो तजिहैं जिय आश तिहारी॥
उऋण भयो कहिकै अब जाहू। आगे तुव विचार नृपनाहू ॥
कन्या प्राण तजन सुनि काना। भूपति भूरि हृदय भय माना॥
भन्यो भूप अस जो प्रणताको। तो करिहौं विवाह हठि वाको॥
मैं हरि सेवन तजि नहिं जैहौं। खड्गनाथके संग पठैहौं ॥
असकहि साजि बरात विशाला। धरि शिबिका पठयो करवाला॥
भयो विवाह खड्ग महँ ताको। दियो विदाकर नृप दुहिताको॥
अंबरीष मंदिर महँ आई। रानी लही विभूति महाई ॥
जबै दिवस दश पांच व्यतीते। नयन नृपति दरशनते रीते ॥

दोहा—तब पतिको आह्निक सकल, रानी पूंछि तुरंत।
लागी करन उपाय अस, केहि विधि देखौं कंत ॥६॥

भूपति चारि दंड निशि बाकी। उठत रहे हरिपद मति छाकी॥
दंतधावनादिक कर कर्मा। करि स्नान शीघ्र शुभधर्मा ॥
मंदिर झारि बहारत रहेऊ। पार्षद धोइ परमसुख लहेऊ ॥
येकदिवस सो यह सब जानी। पहर निशाबाकी उठि रानी ॥
करि स्नान पहिरि शुचि सारी। आई हरिमंदिर द्युतिनारी ॥
गए भूप मज्जनहित जबहीं। मंदिर झारन लागी तबहीं ॥

झारि बहारि पार्षद धोई। पूजनसाज साजि मुद सोई॥
भूपति आगम समय विचारी। रानी तुरत निवास सिधारी॥
अंबरीष मंदिर पगुधारो। निरख्यो सकल बहारो झारो॥
पूजन साजु सजी सब देखी। नृप उर शंका भई विशेषी॥
को भयो हरिसेवन बड़भागी। भागी ह्वै मोहिं कियोअभागी॥
कछुककाल नृप ह्वै संदेही। पुनि हरिसेवन लग्यो सनेही॥

दोहा—पुनिजबदूसरदिनभयो, नृपतिकरनस्नान।
कढ़िआयो बाहेरतबै, रानीकियो पयान॥ ७॥

करि हरिसेवन प्रथम समाना। पुनि कीन्हो निजभवनपयाना॥
राजा बहुरि तैसही देख्यो। अतिशयअचरजमनमहँलेख्यो॥
तीजेवासर निशा व्यतीते। राजाउठ्यो पहरत्रय बीते॥
रह्यो भवनमें छिपि यक ठाऊँ। जनन कह्यो कहियो नहिंनाऊँ॥
चारिदंड बाकी निशिरानी। आई हरिमंदिर मतिखानी॥
लगी पखारन झारन जबहीं। भूपति वचन कह्यो असतबहीं॥
कौन होति हरिसेवन भागी। अनुपम भई कृष्णअनुरागी॥
तब करजोरि कही मतिखानी। अहौं नवीन नाथकी रानी॥
भई कृष्णसेवन अभिलाषा। मैं मंदिर झारिन करिराखा॥
तब बोल्यो भूपति मुसकाई। जो असप्रीतिं हियेमहँ आई॥
तो दूसर मंदिर बनवावो। हरिस्वरूप सुंदर पधरावो॥
मेरे कर्म होति कतभागी। होहु अनन्य कृष्ण अनुरागी॥

दोहा—सुनि प्रीतमकेवचनातिय, मानिसीखसुखदानि।
कह्यो करौंगी ऐसही, ह्वैहै बात न आनि॥ ८॥

असकहि लौटि भवनकहँ आई। दीन्हो सचिवन हुकुम सुनाई॥
हरिमंदिर सुंदर बनवावो। राधारमण स्वरूप मँगावो॥
सुनत सचिव तैसहि सबकीन्हो। हरि उत्सव रानी करिलीन्हो॥

राधा मोहन तहँ पधराई। लैकर बीन प्रेम रस छाई ॥
गान करन लागी हरि आगे। तनुते कोटिजन्म अघभागे ॥
रँगी प्रेमरँग सो नृपरानी। तजीलाज अरु उरकुलकानी॥
हरिपूजन निशिदिन तेहिजाहीं। सावकाश इक क्षणभर नाहीं॥
बोलि सकल पुरके हलवाई। लगी रचावन टेरि मिठाई ॥
प्रतिदिन हरिको लागत भोगू। आवैं सकल नगरके लोगू॥
पावहिं कृष्ण सकल परसादा। गावहिं सुयश सहितअहलादा॥
पुनि डौंड़ी पुरमहँ पिटवाई। आवै इत पुरजन समुदाई ॥
जो ऐहैं सो भोजन पैहैं। विमुख कोऊ इतते नहिंजैहैं ॥

दोहा–यहसुनिपुरजनदिवसप्रति, हरिदरशनको लैन।
रानीमंदिर आवहीं, पावहिंअतिशयचैन ॥ ९ ॥

असकोउ रह्यो न तेहि पुरमाहीं। रानी भगति भनै जो नाहीं ॥
चलत चलत यह बात सुहाई। अंबरीष काननलों आई ॥
अंबरीष सुन अति सुखपायो। रानी दरशनको ललचायो ॥
यक दिवश संध्याकी वेला। करि हरिपूजन भूप अकेला ॥
मंद मंद रानी गृह आये। कह्यो न असद्वारपन सुनाये॥
जाइ लख्यो रानी कहँ राजा। बैठी सन्मुख श्रीयदुराजा ॥
लैकर बीन कृष्ण पद गावै। बारबार दृगवारि बहावै ॥
प्रेममगननहिं लख्यो नरेशे। अनमिष देखति रूपरमेशे ॥
रानी दिशा निरखि महिपाला। भयो प्रेमवश तुरतविहाला ॥
बैठ्यो भूप समीप सिधारी। तब रानी नृप ओर निहारी ॥
भई जोरि कर सन्मुखठाढी। रानी उभै मोद रस बाढ़ी ॥
भूप कह्यो जो हमको चाहौ। तौ मेरौ शासन निरबाहौ ॥

दोहा–जैसे गावति प्रथमही,रही सहित अनुराग।
तैसहि बीन बजायकै, गावो तुम बड़भाग ॥ १० ॥

लहि शासन पतिको हरिप्यारी। गावनलागी सुरन सुधारी ॥
यहिविधि तहँ रानी अनु राजा। वितयेनिशि भूल्यो सब काजा॥
ब्रह्म मुहूरत जानि नरेशा । आयो निज यदुनाथनिवेशा ॥
भयो सोर अंतहपुर माहीं । राजा चहत नई तियकाहीं ॥
कियो सबनते अधिक सुहागा । यह सतरानिन नीक नलागा॥
तब सब कीन्हो मनहि विचारा । रीझो जेहि हित कंत हमारा॥
हमहूँ सकल करैं सोइ कर्मा । दियो ठीक सिगरी यह धर्मा॥
लागीं सब मंदिर बनवावन । पृथक् पृथक् प्रभुको पधरावन॥
यकते अधिक एक हरि भोगू । कियो लगावन हेतु नियोगू ॥
मच्यो सोर यह सबथल माहीं । मिलिमिलिसबपुरजन तहँजाहीं
पुरजनहू लखिकै यह रीती । यथायोग किय हरिपद प्रीती ॥
यथा योग मंदिर बनवाये । यथा योग ठाकुर पधराये ॥

दोहा—राममई ह्वैगो नगर, मिटिगो नरक पयान ।
यकरानी परभावते, भक्ति विभवदरशान ॥ ११ ॥

शतरानी नृप रीझन हेतू । रच्योविमलबहु कृष्णनिकेतू ॥
पैहरिभक्ति करत सब केरो । भयो हृदय हरिभक्ति उजेरो ॥
यह हरिभक्ति प्रभाव विचारो । तामें इक इतिहास उचारो ॥
रह्यो साहु यक इक पुर माहीं । तासु सुता इक रही तहाहीं ॥
सकल अंग सुंदरि सबभाँती । लख्यो ताहि भंगी यकराती ॥
कामविवशसो विह्वल भयऊ । पर्‍यो भवनमहँमनुमरि गयऊ॥
देखिदशा पूछ्यो तेहिनारी । भई कौनपति तुमहि बिमारी॥
कह्यो डोमनहिंरुजमोहियेको । जौन रोग सो घटै ननेको ॥
अहै कछुक नहिं तासु उपाई । ताते मोरि मीचु नियराई ॥
तब हठपरी डोमकी नारी । तहाँडोम अस बात उचारी ॥
देख्यो साहसुताको जबते । भूख प्यास भूली मोहिं तबते ॥

लिख्योनविधिमिलिवेतिहिमोही। प्राण जई विधवापन तोही ॥
दोहा—सुनत डोमतिय सोचभरि,काल कौनहू पाइ ॥
साहसुताके कानमें, दियवृत्तांत सुनाइ ॥ १२ ॥
साहसुता सुनिकै करिदाया। कहत भई रचु तैं अस माया ॥
बाहरनगर तोरपति जाई। बैठे रामनाम रटलाई ॥
भोजन पान तजै सबकाला। सोरहोइ पुरमाहिं विशाला ॥
साधुजानि जब पुरजन जैहैं। तब हमहूँ दरशन मिसि ऐहैं ॥
निजपति प्राणदान सुनि सोई। पतिसों कह्यो सकलमुदमोई ॥
सुनत डोम लहि जीवनमूरी। तुरतलगाइ सकल तनुधूरी ॥
पुरबाहिर बैठ्यो इकठामा। रसना रटै रामकर नामा ॥
बीते पाँच सात दिन राती। मच्यो सोर पुरमहँ यहि भाँती॥
आयो साधु अनूपमएकू। रटै राम भोजननहिं नेकू ॥
सुनि पुरजन दरशनाहित जाहीं। फिरि फिरि इक एकन बतराहीं॥
साहसुता तब कह्यो पिताको। कहो तो दरश करैं हम ताको॥
साह कह्यो तुम जाहु कुमारी। साधु दरश लीजै सुखकारी ॥
दोहा—साहसुता गमनीतहाँ, विशद कनात लेवाइ।
चारिहु वीर लगायकै, कह्यो एकली जाइ ॥१३॥
जाके हित यह स्वाँगबनाई। सोमैं तेरे हित इत आई ॥
असकहि कीन्हो चरण प्रहारा। डोमतबै नाहिं नैन उघारा ॥
प्रथम स्वांगकरि सो तहँबैठ्यो। जपत नाम प्रेमांबुधि पैठ्यो ॥
नाम प्रभाव सत्य सो भयऊ। विषय मनोरथ मनमिटिगयऊ॥
दरशन लग्यो राम कर रूपा। देखि पर्‍यो दुख प्रद भव कूपा॥
देखि मौन तेहि साहकुमारी। मैं वोही पुनि गिरा उचारी ॥
कह्यो डोम तब कन्या पाहीं। तै वोही पै मैं वह नाहीं ॥
जाहु सुता तुम लौटि निवासा। अब मोहिं राम मिलनकी आसा

वचन सुनत फिरिगई कुमारी । डोम लियो निज जनम सुधारी ॥
देखो राम नाम प्रभुताई । स्वाँगहु करत साँच ह्वै जाई ॥
स्वाँगहु करै जो प्रभुके हेतू । ताहि करत निज कृपा निकेतू ॥
सुरतरु राम नाम रे भाई । जपहु सकल जगकाज विहाई ॥

दोहा—नहिं प्रयास नहिं खरच कछु, बकत २ बनिजाइ ।
ऐसी वस्तु विसारिवो, कौनि चातुरी आइ ॥ १४ ॥

रहै शूद्र इक काल्रू नामा । मारन मीन चल्यो तजिधामा ॥
नदी तीर जब मारन लाग्यो । देख्यो जन समूह तहँ भाग्यो ॥
बहुरि सुन्यो दुंदुभी अवाजू । औरहु रथ गज तुरँग गराजू ॥
डरप्यो आवत सैना जानी । बोझ ढोवैहै यह अनुमानी ॥
सकल साजु तहँ जलमहँ बोरी । मूँदिनैन रज लेपि बटोरी ॥
बैठ्यो अचल सरित तटमाँहीं । कढ़न लगी नृप चमू तहाँहीं ॥
जानि साधु सब करहिं प्रणामा । भेंट देहिं धन वसन ललामा ॥
जब काढ़िगै सिगरी नृप सैना । मंद मंद खोल्यो तब नैना ॥
देख्यो रजत कनक पट ढेरी । गुणि अचरज पुनि चहुँदिशिहेरी ॥
लै धन सो मनमाहिं विचारयो । साधु वेष क्षणभरि मैं धारयो ॥
जनम प्रयंत धरौं जो वेषू । तो मिलिहै धन मोहिं अलेषू ॥
अस विचार धारे सो रूपा । फिरन लग्यो द्वारन बहु भूपा ॥

दोहा—मिलन लग्यो तेहि धन अमित, कछुक काल महँ फेरि ।
मिटी वासना चित्ततें, डरप्यो निज अघ हेरि ॥१५॥
भजन कियो धनलोभ तजि, हरिसों तज्यो दुराव ॥
साधु वेषको जानियो, ऐसो प्रगट प्रभाव ॥ १६ ॥
साधुवेष हरिनामको, छै इतिहासन माहिं ॥
वर्ण्यो नेकु प्रभावमैं, ताकी मति कछु नाहिं ॥१७॥

अंबरीषभो भक्त महाना । जान्यो नहिं विवाह भगवाना ॥

राजकरत बीत्यो बहु काला। पायो प्रजा ननेकु कसाला॥
कबहुँ नराजकाज नृपकीन्हो। निशिदिन हरिसेवन मन दीन्हो॥
जानि अनन्य उपासक राजै। हरि शासन दिय चक्र दराजै॥
नृप ममसेवन निरत निशंका। तकत न आपन सुयश कलंका॥
तातें तुम ताकर सब काजू। रहो सुधारे नासि अकाजू॥
तबते चक्र काज सब करतो। मित्रन मोद अमित्रन दरतो॥
यहिविधि बीति गयो बहु काला। नृपहि नलग्यो जगत जंजाला॥
समय एक भो कार्तिक मासा। भूप अवध तजि सहित हुलासा॥
मज्जन हित मथुरा महँ आयो। विधियुत कातिक मास नहायो॥
जबप्रबोध एकादशि आई। राजा हरि उत्सव मनलाई॥
करिउत्सव निर्जल व्रत कीन्हो। जागि बिताइ शर्वरी दीन्हो॥

दोहा—पुनि द्वादशी विचारि नृप, षट अर्बुद गोदान।
सालंकार सविधि दयो, पंडित दीन द्विजान॥१८॥

गो द्विज हरिपद पूजन करिकै। पारन करन चह्यो सुखभरिकै॥
तेहि समय दुर्वासा आये। शिष्य सहसदश संग सोहाये॥
मुनि आगमन सुनत नृपधायो। बारबार चरणन शिरनायो॥
लाय विशद आसन तेहि दीन्हो। पूजन करि परदक्षिणकीन्हो॥
हाथ जोरि पुनि विनय सुनाई। आज्ञा कहा होत मुनिराई॥
मुनि कहँकरतिक्षुधामोहिंबाधा। भोजन देहु भूप यह साधा॥
नृपकहँ भोजन सकल तियारो। शिष्यनयुत मुनिक्षुधानिवारो
मुनि प्रसनह्वै कह्यो भुवालै। मध्यादिवससंध्याकर कालै॥
संध्या करिहों यमुन नहाई। पुनि करिहौं भोजन इत आई॥
असकहिगे यमुना मुनिराई। लागे संध्याकरन नहाई॥
भैविलंब वेला कछु चलिगै। तब द्वादशी दंडयक रहिगै॥
तब पंडितन बोल नृपराई। अपनी शंका सकल सुनाई॥

दोहा–दंडमात्र है द्वादशी, पारन विधि तेहि माहिं।
नेवतो द्विज आयो नहीं, उचित अशनहूनाहिं ॥१९॥

उभय प्रकार धर्म संकेतू। रहैधर्म बुध बोधहु नेतू ॥
तब सब पंडित कियो विचारा। वसुधापति सों वचन उचारा ॥
एकादशी सविधि व्रतकरई। पारनको न द्वादशीटरई ॥
जो द्वादशी करै न अहारा। तौ व्रतफल नहिं वेदउचारा ॥
दंडहुभर द्वादशी जो पाई। करैअशन तेहिफल नहिंजाई ॥
द्वादशि दंडमात्र अवशेषा। ताते अस निरधार विशेषा ॥
विप्र निमंत्रित बिनाजिवाये। ह्वैहैं दूषण भोग लगाये ॥
जलको पान कहत श्रुति सोऊ। अहै अभोजन भोजन दोऊ ॥
ताते चरणामृत करिपाना। परिखहुद्विजकह भूप सुजाना ॥
तब राजा चरणामृत लीन्हो। बैठ्योमुनि आगम मन दीन्हो॥
उत दुरवासा यमुननहाई। करिसंध्या मध्याह्नतहांई ॥
आयो सपदि भूप घरमाही। निरख्यो अंबरीषनृपकाही ॥

दोहा–योगविवस करिध्यान तहँ, नृपं चरणामृतलेव।
दुर्वासालिय जानि सब, मान्यो मनदुरभेव ॥२०॥

भयो कोप मनु काल कराला। निकसी सकल वदनते ज्वाला॥
बोल्यो भूपहि वचन कठोरा। रेशठ भाषिन मंत्र नमोरा ॥
तैं भोजन लीन्हे करिकाहे। दहत कोप तनु विन तोहिंदाहे॥
करत रहत निशि दिन पाखंडा। उचित तोहिं दीबो अब दंडा ॥
ऋषिके वचन भूप सुनि काना। जोरि पाणि अस वचन बखाना॥
विप्रकाज लागै मम प्राना। यातें अहै धर्म नहिंआना ॥
असकहि रहो जोरिकर ठाढ़ो। अतिशय आनँद मनमहँ बाढ़ो॥
दुर्वासा निजजटा उखारी। पटकीमहि नृप नाश विचारी॥
पटकत जटा तहां भयकारी। कृत्यानल निकस्योतनुधारी॥

पाँवउतंग ताल सम जाके। श्याम स्वरूप लंब भुज ताके॥
निकसे रद ठाढ़े शिरबाला। अरुणनयनमनु पावकज्वाला॥
लंबनासिका जीह निकारी। पावकंबढ़त दहत दिशिचारी॥
दोहा—उभयहस्त काढ़े खङ्ग, मनहु प्रलयको रुद्र।
शासनहोत कहा हमैं, असकहि मुनिसूंछुद्र॥ २१॥
मुनिकह अंबरीषकहँ दाहू। यह अतिशयपापी नरनाहू॥
सुनि मुनि वचन सोरकरि घोरा। कृत्यानल धायो नृपवोरा॥
हाहाकार मच्यो पुरमाहीं। भूपहि हर्ष शोक कछु नाहीं॥
तब हरि जौन कियो रखवारो। चक्र सुदर्शन तेज अपारो॥
जानि न कछु नृपकर अपराधा। वृथाकरत कृत्यानल बाधा॥
धायो कोटिनभानु प्रकाशा। भासत भूरि भास दस आशा॥
दुर्वासा कृत्यानल काही। कीन्हो भस्म येकपल माहीं॥
रामदासकर जानि विरोधा। दुर्वासा पर कारि अति क्रोधा॥
धायो ताहि जरावन हेतू। भगे शिष्य जीवनकारि नेतू॥
सह्यो न चक्र तेज दुर्वासा। जानि आपनो तेहि क्षणनासा॥
भागे परम भयाकुल वोऊ। लीन्हो रगादि सुदर्शन सोऊ॥
दोहा—भागे वचव नहीं दिख्यो,कीन्हो तव सिद्धेश।
मंदर कंदर अंदरै, बंदर सरिस प्रवेश॥ २२॥
चक्रतेज पावक गिरि लागी। जंतु जमाति नादकरि भागी॥
भइ तोहि गुहा आंच अधिकाई। दुर्वासा कढ़ि चल्यो पराई॥
पूरव दक्षिण पश्चिम उत्तर। बच्यो नकहूं चक्रते मुनिवर॥
पैठिगयो सागर जल माहीं। चक्रधस्यो करि तेज तहांहीं॥
लाग्यो चुरन सिंधुकर नीरा। तहँते पुनि भाग्यो तजिधीरा॥
सात लोक पुनि घुस्यो पताला। दानव जानि चक्र निजकाला॥
लिये दंड वारन तेहि कीन्हे। बचिहो नहिं भागहुकहिदीन्हे॥

भाग्यो पुनि तेहिते दुर्वासा । मिटति जाति जीवनकीआसा॥
इंद्र वरुण यमलोकन माहीं । मुनिवर गवनत जहां जहांहीं ॥
तहँ तहँ देव देवाइ किंवाँरा । नहिं बचिहो अस करत उचारा।
त्रिभुवन माहिं परचो आतंका । मानै सबै चक्रकी शंका ॥
स्वर्गलोकमहँ बचव न देखी । विधिपुर गयो त्राण निजलेखी॥

दोहा–आवत दुर्वासै निरखि, विधि कर बंदकिंवार ।
टरहु टरहु असवचनकह, इत नहिं रक्षनहार ॥२३॥

भगवतदास विरोधी काहीं । मोरिशक्ति राखनकी नाहीं ॥
जो करिहौं तुम्हारि रखवारी । मोहि युत लोकचक्र हठिजारी॥
असकहिं कर पकराइ निकारचो। दुर्वासा कैलास सिधारचो ॥
मोर अवशि शिवरक्षन करिहैं । अंशजानि अपराध विसरिहैं ॥
जाय गिरचो शंकरपद माहीं । त्राहित्राहि त्राता कोउ नाहीं ॥
शिवकह निकरहु निकरहु इतते । जाहुजाहु आये मुनिजितते ॥
रक्षा करन मोरि गति नाहीं । साधु विरोध कुशलकहुकाहीं॥
यह कैलास भसम ह्वै जैहै । गणनसहित मोहिंचक्रजैरहै ॥
तब मुनि कह्यो बहुरि शिरनाई । नहिंरक्षहु तो कहहु उपाई ॥
कह्यो शंभु वैकुंठहि जाहू । रक्षनकरी रमा कर नाहू ॥
शंभु वचनसुनि भग्यो मुनीशा । गयो विकुंठ जहाँ जगदीशा ॥
गिरचो पाहि कहि चरणन मूला। होहु नाथ मोपर अनुकूला ॥

दोहा–मैं जान्यो नहिंरावरे, दासनको परभाव ।
ताते अबनहिं देखियतु, अपनो कहूंबचाव ॥ २४ ॥

प्रभु कस दया न लागति तोहीं । चक्रसुदर्शन दाहत मोहीं ॥
प्रथम रहे तुम परम कृपाला । कस असनिठुर भयेयहिकाला।
रह्यो मोर अति कोप स्वभाऊ । ताको यह देख्यो परभाऊ ॥
हे हरि अंबरीष तुवदासा । देन चह्यो मैं ताकहँ त्रासा ॥

सो अपराध मिटै प्रभु जैसे। मोपर करौ अनुग्रह तैसे॥
नरकहु परे लेत तुव नामा। कटत शोक पावत सुखधामा॥
मैं तौ गिरचो शरण तुव आई। अब काहे नहिं देहु बचाई॥
आरत वचन सुनत यदुराई। बोले मंद मंद मुसक्याई॥
हमतौ भक्तनके आधीना। मेरो कछू होत नहिं कीना॥
मेरो हियो भक्त हरि लीनो। तन मन सकलसमर्पनकीनो॥
ताते भक्तनके अपराधा। नहिं बल मोर जो मेटहुँबाधा॥
मोर भक्त मोहिं प्राणपियारे। तिमि मानत मोहिंभक्तहमारे॥

दोहा—बंधुसखाकमलाअहिप, अरु वैकुंठहुप्राण।
संतनतेनहिंमोहिंप्रिय, जानुमुनीशप्रमाण॥ २५॥

हमैं अहै सर्वस मुनि जिनके। सहिअपराध सकैंकिमि तिनके
जे धन धाम धर्म सुत नारी। तज्यौं ताकिलियशरणहमारी॥
उभय लोक आशा सब त्यागी। भये चरण मेरे अनुरागी॥
तिनको हम कैसे तजि देहीं। छोंड़ि कौनके होहु सनेही॥
मम पग बांधि प्रेमकी डोरी। मोहिं अपने वशकियबरजोरी॥
जैसे पतिव्रता कोउ नारी। निजपति वशकरि होहि पियारी
संत मोर सेवा कहँ छोड़ी। कबहुं न आश औरकीओड़ी॥
तव पुनि और विभव कहँ रहतौ। जाको संत चोपि चितचहतौ॥
मैं संतनहिय बसूं सदाहीं। संत बसै मेरे हिय माहीं॥
मोहिं छोड़िते और न मानैं। तिन्हैं छोंड़ि हम और न जानैं॥
पै हम देहिं उपाय बताई। जाते तोर त्रास मिटिजाई॥
चहै जो करन साधु अपराधा। उलटि होति ताहीको बाधा॥

दोहा—यदपि न यमं दम तप जपहु, विद्या व्रत युत धर्म॥
तदपि कोप वश कुमति द्विज, लहत कबहुँ नहिं शर्म॥२६॥

ताते अंबरीषके पासा। गवन करहु आसुहि दुर्वासा॥

क्षमा करावहु निज अपराधा । तबहीं मिटी तुम्हारी बाधा ॥
विप्र न बचिहौ आन उपाई । चक्र सुदर्शन तोहिं जराई ॥
अस जब दिय शासन यदुराई । चक्रतेज तापित मुनिराई ॥
अंबरीषके पास सिधारयो । नृप ढिग अपनो बचब विचारयो॥
श्वासलेत मुनि बारहिं बारा । खुली जटा नहिं देह सँभारा॥
मुरिमुरि तकत चक्रकी वोरा । चलो सुदर्शन आवत घोरा ॥
शिथिल भये पग सकत नभागी । चलन प्रस्वेद धार तनु लागी॥
गिरत परत उठि भँवत मुनीशा । मानो निर्विष भयो फनीशा ॥
आयो अंबरीषके पासा । दूरिहिते लखिकै दुर्वासा ॥
गिरयो निकट महँ भूपति केरे । विसुधि नृपतिकी वोर न हेरे॥
पकरन चरण करन पसराई । बोल्यो मुनि दृग आँसु बहाई॥

दोहा—चक्रतेजते जरतहौं, ठौर न और देखाइ ।
विधि हरि हर रक्ष्यो नहीं, लीन्हो तोहितकाइ ॥२७॥

महाराज अब मोहिं बचावो । दीनहि देख दया उर लावो ॥
देखि दशा दुर्वासा केरी । नृपके दाया भई घनेरी ॥
पकरि पाणि लीन्हो मुनि केरो । कह्यो न गहहु चरण प्रभु मेरो॥
मैं तौ अहौं रावरो दासा । यह अनुचित करिये दुर्वासा ॥
पुनि नृप लख्यो चक्रकी वोरा । मनहुँ उदित दिननाथ करोरा॥
अंबरीष तब दोउ करजोरी । चक्रहिं स्तुति कियो निहोरी॥
करहु क्षमा द्विजकर अपराधा । यदुपति आयुध कृपा अगाधा॥
मोहिं कलंक यह लागत भारी । जो तुम दियो विप्र कहँ जारी॥
जो कछु होइ सुकृत प्रभु मोरी । तौ द्विज बचै तापते तोरी ॥
जो द्विज पद सेवक कुल मोरा । तो द्विज होइ दुखी नहिं थोरा॥
जो सुर सब मोपर अनुकूला । द्विजहिं होहु तौ नाहिं प्रतिकूला॥
मोहिं ब्रह्मण्य कहै जो कोई । तो सुनाभ शीतल हठि होई ॥

दोहा—तन मन औरहु वचन ते, होहुँ जो मैं हरिदास ।
मोपर होहि प्रसन्न हरि, तो मुनि होय अत्रास ॥२८॥

यहिविधि विनय भूप जब कीन्हो। तब सुनाभमुनि कहँ तजि दीन्हो
दुर्वासा लहि अति अहलादा। राजहिं दीन्हो आशिर्वादा ॥
पुनि नरनाथहिं लग्यो सराहन । तुम समानको द्विज दुखदाहन॥
महिमा हरिदासनकी भारी। लियो आजु मैं आँखि निहारी॥
क्षमा योगनहिं मम अपराधा। तदपि भूप मेटी ममबाधा॥
धन्य धन्य हो धरणि अधीशा। पूरे कृपापात्र जगदीशा ॥
सुनि दुर्वासाकी अस बानी। मुनिपद गह्यो भूप दोउ पानी॥
मुनिहिं भवन महँ गयो लेवाई। शिष्य सहित भोजन करवाई॥
बारबार पद महँ धरि शीशा।कियो मुनीशहिं विदा महीशा॥
चक्रत्रास भागत दुर्वासै। बीत्यो येक वर्ष युत त्रासै ॥
तबलों रह्यो भूप तहँ ठाढ़ो। सोइ चरणामृतलै मति गाढ़ो ॥
जब दुर्वासा सुखित सिधारा। अंबरीष तब कियो अहारा ॥

दोहा—अंबरीषकी यह कथा, वरण्यो मति अनुरूप ।
अंबरीषसों भागवत, भयो न भुविमें भूप ॥ २९ ॥
अंबरीषको कहतहूँ, पुरव जन्म इतिहास ।
रह्यो विप्रवर येक कोउ, वेद शास्त्र अभ्यास ॥ ३० ॥

नृपकी नई नारि जो आई। रही येक द्विजसुता सुहाई॥
रुजवश भई सुता इक कालै। सोइ वैद गवन्यो तेहि आलै ॥
भई कामवश परसत नारी। कछू कालमें मरी कुमारी ॥
फेरि वैद यमलोक सिधारा। बहुरि भयो सो आइ सोनारा ॥
गणिकाभै सो विप्रकुमारी। भै सोनार. वेश्याकी यारी ॥
वारवधू धनसंचित कीन्हो। शिव मंदिर सुंदर रचिदीन्हो ॥
सो सुनार वैष्णव कछु रहेऊ।शिव मंदिर कलशा रचिलयऊ॥

चढ़ि मंदिरमें कलश लगाई ।उतरत गिरचो मरचो महिआई॥
गणिका जरी संग महँ ताके । आये गण हरि हर ब्रह्माके ॥
निज निज लोक चहे लैजाना । झगरो माचि रहो विधिनाना ॥
तब विधि आइ कह्यो अस न्याऊ। स्वर्णकार ह्वै है नृप राऊ ॥
गणिका ह्वै है ताकरि रानी । पतिव्रता सुशील मतिखानी ॥

दोहा—तब दोउ जवने देवके, ह्वै हैं भक्त अनन्य ।
तौन आपने लोकको, लै जै है दोउ धन्य ॥ २१ ॥
स्वर्णकार सोइ होत भो, अंबरीष महाराज ।
गणिका सोइ रानी भई, हरि पुरगे सुखसाज ॥ २२॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेषट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

अथ रंतिदेवराजाकी कथा ॥

दोहा—वर्णौं बहुरि अनूप नृप, रंतिदेव इतिहास ।
याचक जाके भवनते, कबहुँ न गयो निरास ॥ १ ॥

रंतिदेव नृप भयो उदारा । जो माँगै सो तेहि देडारा ॥
देत देत कछु रह्यो न घरमें । पै न नेह छूटचो यदुवरमें ॥
सुत सुत वधू और प्रियनारी । आपु सहित निकसे नृपचारी॥
निवसे कानन कुटी बनाई । वृत्ति अकाश गही नृपराई ॥
भोजन हेतु अन्न मिलि जावै । दै डारहिं जो याचक आवै ॥
अड़तालिस दिन यहि विधि बीते। पै नृप तज्यो न व्रत निज हीते॥
क्षुधा तृषाते कंपत अंगा । भोजन करन चह्यो सुतसंगा॥
ताही समय अतिथि इक आयो । भूखे हौं अस वचन सुनायो ॥
ताहि क्षुधा आतुर नृपजानी । निज भोजन दीन्हो मतिखानी॥
अतिथि अघाय जात जब भयऊ। तब जो कछु भोजन रहि गयऊ॥
सुत सुत वधू नारि सँग लैकै । भोजन करन चहे मुद ह्वैकै ॥

आयो येक शूद्र तेहि काला। कह्यो क्षुधित हों मैं महिपाला॥

दोहा-अतिथि अनंत स्वरूप गुणि, सुत तिय क्षुधित विचारि।
चारि भाग करि भोजनै, दियो भाग निज टारि॥२॥

करि भोजन जब शूद्र सिधारयो। भोजन करन नरेश विचारयो॥
तब दूजो पुनि कियो पयाना। लीन्हे संग माहँ द्वै श्वाना॥
रंतिदेवसों कह्यो पुकारी। मोहिं क्षुधावशदुखित विचारी॥
श्वान सहित नृप भोजन दीजै। निजते अधिकक्षुधितगुणिलीजै॥
तब सुतरतिय निजतिय भागा। दैदीन्हो तेहि भरि अनुरागा॥
करि पूजन प्रदक्षिणादीन्हो। हरि स्वरूप गुणिवंदनकीन्हो॥
जब जल भरि बाकी रहिगयऊ। पानकरनको नृपमन दयऊ॥
तब आयो पुनि इक चंडाला। कह्यो देहु जल दान भुवाला॥
सुनि ताकी अति आरत वानी। देख्यो प्राण जात विनपानी॥
तब अतिशै करुणारससाने। सुततियसों असवचन बखाने॥
अष्ट ऋद्धि युत मुक्तिहु काहीं। ये नहिं मैं माँगहुँ हरिपाहीं॥
पै यक वस्तु लहनकी चाहा। सो बकसै कमलाकर नाहा॥

दोहा-जेते जगके जीव हैं, ते सब लहैं अनंद।
सिगरेनको दुर्भाग फल, मैं भोगौं दुख द्वंद॥३॥

क्षुधा तृषा श्रम मोह विषादा। शोक दीनता अघ अपवादा॥
ये सब करि हैं तुरत पयाना। प्यासे कहँ दीन्हे जलदाना॥
असकहि सहि निजतृषामहानी। चांडालहिं दीन्हो नृपपानी॥
चांडालहि जलदेत तुरंता। प्रगट भयो कमलाकर कंता॥
देखिभूप उठि कियो प्रणामा। नहिं याच्यौकछुनृपमतिधामा॥
माँगु माँगु कह रमानिवासा। नृप कह नाथ नहीं कछुआसा॥
यातें अधिक काह अब पैहौं। जोनयाचना तुमहि सुनैहौं॥
अति प्रसन्न ते भे भगवाना। प्रगटायो यक विमल विमाना॥

सुत सुतवधू नारि नृप काहीं। तुरत विमान चढ़ाय तहाहीं॥
लैगे श्रीपति श्रीपति लोकू। यहिविधि हरत दास हरिशोकू॥
रंतिदेव धनि धरणि अधीशा। धनिदासन दाहिन जगदीशा॥
को अस धीरज राखनहारा। को अस दास उधारनवारा॥

दोहा—रंतिदेव इतिहासमैं, वर्ण्योंमति अनुरूप।
जो अस प्रणधारण करै, सो न परै भवकूप॥ ४॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेसप्तचत्वारिंशोध्यायः॥ ४७॥

अथ रुक्माङ्गदराजाकी कथा।

सोरठा—रुक्मांगद महिपाल, भयो येक भगवानप्रिय॥
ताकी कथा रसाल, मैं वर्णौंसंक्षेपते॥ १॥

राजा रुक्मांगद मतिवाना। होतभयो तेहि विभव महाना॥
रची वाटिका यकसौ भूपा। आनंदनहित नंदन रूपा॥
तामें कुसुम अनेक लगायो। मंजु निकुंज पुंज रचवायो॥
येकसमय नभमारग ह्वैकै। यक अपसरा मोदरस म्वैकै॥
जातरही सोइ राजसभाको। उपवन पवन परसभो ताको॥
सुरभि पाय सो देखनहेतू। नृपवाटिका गई सुखसेतू॥
तहां मनोहर कुसुमनिहारी। तोरनलागि बिचारि कियारी॥
लै सुम गई शक्रदरबारा। यहिविधि करै रोज संचारा॥
येकनिशा कहुँ विचरत माहीं। भाँटो काँटो लगो तहाँहीं॥
क्षीणपुण्यभै परसत ताके। उड़नशक्ति रहिगै नाहिं वाके॥
सोचतभयो ताहि भिनुसारा। माली जन तेहि जाय निहारा॥
कह्यो आइ भूपतिसों धाई। प्रभु यकनारि अपूरव आई॥

दोहा—सुनत गयो नृपवाटिका, लख्यो उर्वशीकाहिं।
कामवासनाभै नहीं, पूछतभो असताहि॥ १॥

कौन अहौ तुम सुंदरिनारी । कौनहेतु वाटिका सिधारी ॥
तब उर्वशी कही असबाता । मैंहौं स्वर्गनारि अवदाता ॥
नाम उर्वशी देखि अरामा । मैं आई फूलनके कामा ॥
भाँटो कांट परसपगपाई । पुण्य क्षीणभै सकों न जाई ॥
भूपति येक करौ उपकारा । जोएकादशितज्यो अहारा ॥
ताहिखोजि तुरतै बोलवावो । मोको ताको पुण्यदेवावो ॥
लग्यो खोजावन नृप पुरमाहीं । मिल्योकोउ व्रत कारक नाहीं॥
यककोउ रही वणिककी दासी । वणिकहन्यो तेहिं लकुटनत्रासी
दियो न दिनभर ताहि अहारा। तेहिदुख जगतभयो भिनुसारा॥
असकोउ दूत कह्यो नृप पाहीं । सुनि उर्वशी मुदित मनमाहीं॥
ताहीको नृप देहु बुलाई । अस राजासों गिरा सुनाई ॥
तुरत बुलाइ भूप तेहि लीन्हो । तब उर्वशी वचन कहिदीन्हो॥

दोहा–सुनोवणिककी दासिका, तुम ऐसो कहिदेउ ।
एकादशी व्रत जागरण, फल मेरो तुम लेउ ॥ २ ॥

तैसहि कही वणिककी दासी । गै उर्वशी स्वर्ग छविरासी ॥
लखि एकादशिव्रतपरभाऊ । अति अचरज मान्यो नृपराऊ॥
तबते रुक्मांगद पुर प्रानी । तजे एकादशि अन्नहु पानी ॥
पुरमहँ नृप डौंडी पिटवाई । जो हरिदिवस अन्नजल खाई ॥
जो जागरण करो नहिं कोई । अवशिदंड भागी सो होई ॥
यमपुर गवन करै नहिं कोई । दिये कोटि जन्मन अघखोई ॥
यहिविधि गयो काल बहुबीती । दिन २ दून २ हरिप्रीती ॥
रही एक रुक्मांगद कन्या । कृष्णभक्त जगमें अतिधन्या ॥
येककाल ताकर पति आयो । हरिवासर तेहि दिन बुधगायो॥
नृप किय ताहि वचनसतकारा। पैनाहिं पूछ्यो करन अहारा ॥

तब निज सासु समीप गयोसो। भोजन कछु नहिं ताहि दयोसो।
भूपसुता ढिग तब सो गयऊ। तिय गुनिभोजन माँगत भयऊ।
कन्या कही एकादशिकाहीं। करै अन्न जल कोउ इत नाहीं॥

दोहा—पशु पक्षी नर नारि सब, हरिवासरको कंत।
अशनकरै जो ममपिता, देतोदंड तुरंत ॥३॥

तब कन्याको पति दुखपाई। सोइरह्यो निशिके मुरझाई॥
क्षुधा विवश छूटे तेहिप्राना। गो हरिपुर चढ़ि रुचिर विमाना।
ताको करि आदर हरि लीन्हो। सो हरिसों विनतीअसकीन्हो॥
कियो जन्मभर मैं प्रभुपापा। ताको मोहिं भयो संतापा॥
आयो तुमरे सुरपुर राऊ। यह सब मेरी तिय परभाऊ॥
तातेतेहि बुलाइ इत लीजै। नातो मोहि विदा उत कीजै॥
तब प्रभु दूतन दियो पठाई। ल्यावहु याकी नारि लेवाई॥
दूत आइ कह नृपदुहिताको। तुमहिं बुलायो कंत रमाको॥
तब नृप दुहिता कही बुझाई। बिनु पितु शासन सकौं न जाई।
बहुरि दूत पूछ्यो हरिपाहीं। हरिकह ल्यावहु राजहु काहीं॥
जाइ दूत राजहु सो गायो। तुमहिं सुता युत कृष्ण बुलायो
तब दूतनसों भूप बखाना। करिहैं हम युत प्रजा पयाना॥

दोहा—राजाको वृत्तान्त सब, दूत कह्यो हरि पाहिं।
हरि कह जेहि जे नृपकहै, तेही ल्याउ इहाँहिं॥ ४॥
दूत लेवाइ विमानबहु, रुक्मांगदपुर आइ।
पशु खगपुर जनयुत नृपहिं, हरिपुर गयेलिवाइ॥५॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेअष्टचत्वारिंशोऽध्यायः॥ ४८॥

अथ हरिश्चन्द्रनरेशकी कथा॥

दोहा—अबहरिचंद नरेशकी, कथा कहूँ मनरंज।
जाहि सुनत हरिभक्तको, विकसत मानस कंज ॥१॥

भयो एक हरिचंद भुवाला। धर्मध्वजा फहरात विशाला ॥
जासु धर्मकीरति विधि नाना। फैलरही कौमुदी समाना ॥
विष्णु विरंचि शंभु दरबारा। महा महा मुनिकरहिं उचारा ॥
एक समय औरहु सब कोऊ। विश्वामित्र वशिष्टहु दोऊ ॥
कियो विवाद स्वयंभु सभामें। इक हरिचंद यशीवसुधामें ॥
कह कौशिक जो लिये परिक्षा। रही धर्मतौ सही समिक्षा ॥
असकहि कौशिक मुनि भुविआयो। लेन परीक्षा योग लगायो॥
येक समय हरिचंद नरेशा। अटन करन गवन्यो कोउ देशा।
तहँ कौशिक निज वेष छिपाई। तपबल कन्या पुत्र बनाई ॥
दूरिहिंते भूपहिं गोहरायो। सुनितुबनावआतिथिहो आयो॥
कन्यापुत्र विवाहन काजा। महादान दीजै महराजा ॥
कहौं जौनविधि मैं इनकाहीं। करौ तौनविधि व्याह इहाँहीं ॥

दोहा—कह्यो भूप शिरनाइकै, जेहि विधि शासन देहु।
तेहि विधि होइ विवाह इत, यामें नाहिं संदेहु ॥ २ ॥

कह कौशिक नृप साजहु साजू। देहु याहि पदवी महराजू ॥
छत्र चमर आदिक यहि दैकै। करहु विवाह सकल दुखछैकै ॥
एवमस्तु हरिचंद उचारयो। महाराज करि विभव सँवारयो।
तब कौशिक पुनि वचन सुनायो। महाराज तुम याहि बनायो ॥
होइ न भूप विना महि केहू। ताते निज समान महिदेहू ॥
होहु जो सत्यवचन महराजा। तौ अबकीजे ऐसहि काजा ॥
निजसमान नृप कहुँ न निहारयो। आपनिराज्य सकल दैडारयो॥
मुनि कौशिक तहँ कह्यो बहोरी। यह नृप भयो राज करतोरी ॥
अब मोको भूपति कछु दीजै। हेमवीशमन दै यश लीजै ॥
कह नृप हम सुवरनकहँपैहैं। पै तनबेंचितुमहि अब दैहैं ॥
असकहि नारी सुत सँग लीह्नो। भूप गवनकाशीकहँ कीन्हो ॥

अति सुकुमार घाम तनु लागे। प्यासे भे तीनहुँ बड़भागे ॥
दोहा—पाय कूप नृप येक कहुँ, करन लग्यो जलपान।
रानि कह्यो हम नहिं पियब, बिनदीने द्विजदान ॥३॥
गये फेरि तीनहुँ जन काशी। विप्रदान पूरणके आशी ॥
रह्यो वणिक इक धनी महाना। तासों ऐसो वचन बखाना ॥
तुम लीजे यह सुत यह नारी। दीजे याहि वेतन निरवारी ॥
वणिक लियो दोउ दै धन भूपा। कछु न मोह किय नृपति अनूपा॥
रह इक श्वपच कालिया नामा। तेहि समीप गो नृप मतिधामा ॥
ताके चाकर भयो महीपा। रहन लग्यो तेहि सदा समीपा ॥
लिये डोम सो रहै इजारा। मृतक जरावन गंग किनारा ॥
जो न पंच मुद्रा लै आवै। सो नहिं मृतक जरावन पावै॥
इहै काम सौंप्यौ नृप काहीं। रहैं घाटपर बैठ सदाहीं ॥
तब करिकै कौशिक मुनि माया। डस्यो सर्प ह्वै नृपसुत काया॥
मरचो भूप सुत तब लै रानी। दाहन लगी गंगतट आनी ॥
तब सुत चरण पकरि नृप टेरो। जारहु याहि दैकै कर मेरो ॥
दोहा—तब रोवन लागी तिया, कह नृप सुवन तुम्हार ॥
नृप कह कर दीन्हे बिना, नहिं ह्वैहै निरधार ॥ ४ ॥
दोउके करत विवाद इमि, बीति गई अधरात।
तब हरिसों रहिना गयो, प्रगट भये मुसकात ॥ ५ ॥
विश्वामित्रहु प्रगट भे, कह्यो धन्य धरणीश।
तुम समान को धर्मधर, कृपापात्र जगदीश ॥ ६ ॥
यह सब माया हम कियो, धर्म परीक्षा लेन।
करहु राज्य अपनी नृपति, रानी सुत सह सेन ॥ ७ ॥
हरिकह जबलगि तुम जियौ, तबलगि भोगहु भोग।
अंतकाल ममधाममें, बसिहौ हत सब सोग ॥ ८ ॥

पुनि नृप कहँ सुत तिय सहित, मुनि नृपपुर महँ लाइ।
सकल साहिबी सहित दिय, नृप आसन बैठाइ ॥९॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेएकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥४९॥

अथ शिविराजाकी कथा ॥

दोहा—अब वर्णौं शिविभूपकी, कथा परम रमनीय।
शरणागत पालन कियो, दै निज तनु कमनीय॥१॥

देशसिंधु सौवीर अधीशा। भयो चक्रवर्ती धरणीशा॥
जाकी धर्मधुजा फहरानी। त्रिभुवन विदित भयो नृपज्ञानी॥
तीनिलोकलौं कीरति छाई। अचरज गुण्यो देव समुदाई॥
बैठे देव शक्र दरबारा। कियो परस्पर वचन उचारा॥
धर्म धुरंधर शिबि नृप सुनहीं। सति अरु असति ठीक नहिं गुनहीं
तब वासव अस गिरा उचारी। लेव परीक्षा हम पशुधारी॥
असकहि चल्यो बाजवपु धरिकै। अरु कपोत पावकको करिकै॥
रगद्यो बाज कपोतहिं कोपी। भज्यो सो जीव बचावन चोपी॥
लागी रहै तासु दरबारा। सिंहासनपर बैठ भुवारा॥
घुस्यो कपोत सिंहासन नीचे। तेहि छन सेनहु गयो नगीचे॥
तब कपोत बोल्यो भयभारे। मैं शरणागत भूप तिहारे॥
लेहु शत्रु सों मोहिं बचाई। कीरति आप जगतमें छाई॥

दोहा—कह्यो सेन सों तब नृपति, देहु कपोत बचाइ।
आयो यह बहुदूरिते, मेरी शरण तकाइ ॥ २ ॥

सेन कह्यो यह मोर अहारा। तुम कस वारण करहु भुवारा॥
यही भक्ष विधि निर्मित हमको। वारणकरब.अयश अति तुमको॥
कह्यो सेनसों तब महिपाला। यह ममशरणागत यहि काला॥
लोभ ईर्षा भय वश होई। शरणागत पालक नहिं होई॥

सकल पापको फल सो पावै। ताते किमि कपोत दै जावै ॥
राज विभव महि तनु परिवारा। अहैं धर्मके हेतु हमारा ॥
तब कह सेन येक जिय राखी। बहु जियनाशहु यशअभिलाषी
हम कुलयुत कपोत कहँ खैहैं। विन कपोत सिगरे मरि जैहैं ॥
जो न धर्म ते होइ अधर्मा। तौनधर्म नहिं धर्म सुकर्मा ॥
तब राजा बोल्यो अस वानी। शरणागत पालन प्रणठानी ॥
सकल धर्म जैहैं जगमाहीं। जीव अभयप्रदान समनाहीं ॥
पुनिं शरणागत तजब विशेषी। सकलधर्म कर नाश परेषी ॥

दोहा—पैविधि निर्मित भक्षतुव, सोऊ खंड नहोत।
ताते राखहु धर्ममम, जेहिते बचै कपोत ॥ ३ ॥

कह्यो सेन है एक उपाई। जो कपोतको तुला चढ़ाई ॥
तासु तौल निज तनु कर मासू। मोहि देहु नृपसहित हुलासू ॥
बचै कपोत धर्म रहि जाई। याहि ते भूप नअपर उपाई ॥
सेन वचन सुनि शिबिनृपराई। सुखी भयो मनु सर्वस पाई ॥
बहुरि बाजसों भूपति बोले। पलममलेहु कपोतहि तोले ॥
असकहि तुला तुरत मँगवाई। दिय कपोत इक ओर चढ़ाई॥
येक ओर निज तनु पलकाटी। दियो चढ़ाय भूप जिमिमाटी॥
भयो कपोत गरू तेहिं काला। येक ओर तब बैठ भुवाला ॥
तौलावन लाग्यो नृपराई। तब प्रगटे पावक सुरराई ॥
करगहि भूप उतारि तुलाते। कह्यो वचन नायक वसुधाते॥
सत्य धर्म धुर धारक आपू। बढ़ै भूप तुव दुगुण प्रतापू ॥
हम इत लेन परीक्षा आये। जैसो सुन्यो देखि तस पाये ॥

दोहा—जीवतभोगो अतिविभव, तनुतजिहरिपुरजाइ।
पानकरोगेप्रेमरस, पुनरागवन विहाइ ॥ ४ ॥

असकहि अगिनिहुँअमरपति, अपनेअपनेधाम ॥
आवतभे संसतशिबिहि, शिबितनुभयोअछाम ॥९॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

अथ दधीचिऋषिकी कथा ॥

दोहा—इक दधीचिद्विजराजकिय, अनुपमपरउपकार ।
तासु कथाको मैंकरों, अबनेसुकविस्तार ॥ १ ॥

बाढ्यो इक वृत्रासुर जबहीं । गे हरिशरण देवसब तबहीं ॥
हरि तब दियो उपाय बताई । द्विजदधीचिकोअस्थिहिल्याई ॥
रचहु वज्र तब वृत्र विनाशा । तब सुरगे दधीचि के पासा ॥
कह्यो विप्र तुम पर उपकारी । तनुते रक्षा करहु हमारी ॥
कह दधीचि मम धन्य शरीरा । परउपकार लगै नहिं पीरा ॥
सुरकह अस्थि देहु हम काहीं । और उपाय होतहित नाहीं ॥
तब तुरतहि करिकर कर वाला । काटन लग्यो अंग तेहिकाला ॥
तनकहु विथा नहीं मन मान्यो । परउपकार न तनु प्रियजान्यो ॥
देवन दे यहि भाँति शरीरा । आपमिल्योभुजभरि यदुवीरा ॥
को दधीचिसम और जहाना । परहित कियोनतनुकरत्राना ॥
देव दधीचि अस्थिलै आये । विशुकरमासों पवि बनवाये ॥
तेहिते इंद्र वृत्र कर शीशा । काट्यो कृपा पाइ जगदीशा ॥

दोहा—मनुजजन्मजोपाइकै, कियोनपरउपकार ।
शूकर कूकरकेसरिस, जीवतभूकरभार ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेएकपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

अथ मंदालसाकी कथा ॥

दोहा—भयो भूपइक होतभै, तासु कुमारी येक ।
जासु नाम मंदालसा, सोकिय ऐसो टेक ॥ १ ॥

जौन जीव मम गर्भहिं आवै। जन्म मरण सो पुनि नहिं पावै॥
दियो ठीक मन राजकुमारी। निजपितु सों अस गिराउचारी॥
मेरे निकट पुरुष जो आवै। सो पुनि द्वितीनिकटनहिंजावै॥
ताके सँग मम होइ विवाहा। यह प्रण मोर पितानरनाहा॥
तेहि पितु कह्यो सुता भलभाषी। ह्वैहै तस जसतैं अभिलाषी॥
असकहिकै हित व्याह महीपा। पठये चतुर चार सब दीपा॥
खोजत खोजत काशी आये। तहां प्रतर्दन नृपतिसोहाये॥
तिनसों सादर ते अस भाष्यो। जस कन्यामन प्रणकरि राख्यो॥
भूप प्रतर्दन गिरा उचारी। करिहैं हम जसकही कुमारी॥
दूत बहुरि कन्या पितु पाहीं। कह्यो प्रतर्दनके प्रणकाहीं॥
भूप प्रतर्दन मदालसाको। भयो विवाह परम सुखछाको॥
भयो व्यतीत काल कछु जबहीं। मदालसा जान्यो सुत तबहीं॥

दोहा—बालहिपनतें पुत्रको, किया ज्ञान उपदेश।
एकादशयें वर्षमें, सो काढ़िगयो विदेश॥ २॥

भजन कियो हरिको वनमाहीं। जगत भीति रहिगे तेहि नाहीं॥
मंदालसा जन्यौ सुतदूजो। सोऊ तेहि विधि हरिपद पूजो॥
पुनि ताके तीजो सुत भयऊ। लहिउपदेशविपिनसोउगयऊ॥
कियो प्रतर्दन मनहि विचारा। केहि विधि चलिहै वंश हमारा॥
मंदालसै तबै सन्मानी। प्रिय प्रियवस्तुदीन तेहिआनी॥
एक समय अति मुदित कराई। मंदालसै कह्यो नृपराई॥
हमतौ बहुत दियो तुमकाहीं। तुम हमको दीन्ह्यो कछु नाहीं॥
मंदालसा कही नृप नेही। जो माँगो सो तुमको देही॥
कह्यो प्रतर्दन अबकी जोई। होय सुवन दीजै मोहिं सोई॥
मंदालसा मानि सो बैना। कह्यो पियहिं तकि तिरछेनैना॥
मैं प्रणकीन्ह्यो पूरुब ऐसो। जो सुत होइ देहुँ नहिं कैसो॥

पै मांगहु तुम कंत निहोरी। ताते देन भई मति मोरी॥
दोहा—असकहिकै जब सुत भयो, तब निज पति कहँ दीन।
ताहि सिखाइ नरेश किय, राजकाजपरवीन॥ ३॥
तासु अलर्क नाम पितु कीन्हा। मदालसा भई लखिदीना॥
यह सुत लही अवशि संसारा। अस गुणिपतिसों वचन उचारा॥
भयो समर्थ पुत्र सब भांती। चलि वन भजहुकृष्णदिनराती॥
असकहि तेहि भूपति कहँ लैके। यंत्र येक रचि सुत कहँ दैके॥
तामें लिखिकै यह श्लोका। गये विपिन पति युत हत शोका॥
श्लोक॥
संगःसर्वात्मनात्याज्यःसचेद्धातुंनशक्यते॥
ससद्भिःसहकर्तव्यःसंगःसंगारिभेषजम्॥ १॥
जेहि वन कराहिं भजन सुत तीनो। तेहि वन दंपति चलितपकीनो॥
जननी निकट पुत्र पगुधारी। भये दुखित लखितासु दुखारी॥
कह्यो सोच जननी जो तोरा। सो कहु नाशहु मैं तप जोरा॥
मंदालसा कही तब वानी। भए तीनि सुत तुम विज्ञानी॥
तुमको है न जगतकी भीती। इक सुत गह्यो रजोगुणरीती॥
जनम मरण सो अवशिलहैगो। पुनि पुनि संसृत शोक सहैगो॥
ताको ल्यावहु इतै निकारी। तौ पूजै अभिलाष हमारी॥
दोहा—मातु वचन सुनि जेठसुत, मातुलभवन सिधारि॥
कह्यो जेठ हम सबनते, ताते राज्य हमारि॥ ४॥
सेना देहु हमैं तुम मामा। जी तब हम अलर्क धन धामा॥
मातुल दीन्हो सैन घनेरी। लिय अलर्क पुर चहुँदिशिघेरी॥
परयो अलर्क काहि संकेतू। लग्यो विचार करन मतिसेतू॥
तब मनमें अस ठीक विचारयो। मातुपिताजब विपिनसिधारयो॥
तब मोहिं यंत्र येक रचि दीन्हों। पुनि ऐसो संभाषण कीन्हों॥

जब अति परै तोहि संकेतू। बाँचि यंत्र तब बाँध्यो नेतू ॥
अस विचारि सो यंत्र उघारयो। तामें अर्थ यही निरधारयो ॥
करै नसंग कबहुँ केहुँ केरो। करै तौ संतहि संग घनेरो ॥
ऐसो अर्थ जानि महिपाला। पुरतै कढ्यौ निसीथहि काला॥
विचरन लग्यो दूरि वनजाई। देख्यो दत्तात्रय मुनि राई ॥
कियो प्रणाम सिधारि समीपा। मुनि पूछ्यो कहँ रह्योमहीपा॥
तब अलर्क कह अतिदुखपायो। करनहेतु सतसंग सिधायो ॥

दोहा—मुनि कह जो सतसंगकी, होइ चित्तमें आस।
राजकाज सब छोंड़िकै, बैठहु मोरे पास ॥ ५ ॥

नृपकह राज्य सकौंमैंत्यागी । सो न तजै पीछे मम लागी ॥
मुनिकह मिलौ वृक्षकहँ जाई । तौ पुनि देहुँ बताइ उपाई ॥
तब नृप दौरि मिल्यौ तरुजाई। पुनि तजि बैठ्योमुनिढिगआई
मुनिकह तुम धों मिले महीजै। धौं तरु मिल्यो तुमहिं कह दीजै
नृपकह मिल्यो महीं तरु काहीं। भूरुह मिल्यो मोहिं मुनिनाहीं॥
मुनि कह ऐसेहि करहु विचारा। तुमहि मिलो न मिलै संसारा ॥
सुनि मुनिवचन लह्यो नृपज्ञाना। भजन करन वन कियो पयाना
जेहिवन मातु पिता त्रैभाई। वस्यो अलर्क तेहीं वनजाई ॥
सुनि अलर्ककियविपिनपयाना। जानि अलर्क पुत्र मतिवाना ॥
अग्रज जौ न सैनलै आयो। सो ताहीको भूप बनायो ॥
गयो आप फिरि जननि समीपा। बैठो तहैं अलर्क महीपा ॥
जननि कह्योतैं किय उपकारा। सकलभाँति मम प्रणनिरधारा॥

दोहा—ऐसी सोमंदालसा, कृष्णभक्त शिरताज ॥
पति सुत तारण भव उदधि, आपहिं भई जहाज॥६॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेद्विपंचाशतमोऽध्यायः ॥५२॥

अथ जड़भरतकी कथा ॥

दोहा–अब वर्णौं जड़भरतकी,कथा मनोहर जोइ ।
जो मृगसँगते लहतभो,जनम जगतमें दोइ ॥
ऋषभपुत्र भो भरत भुवाला । भोग्यो राज्यसरिस सुरपाला॥
पुनिदे जेठसुवन कहँ राजू । गमन्यो आप विपिनतपकाजू॥
करत तपस्या भरत भुवाला । दिये विताइ तहाँ बहुकाला ॥
इकदिन अर्घ दानदै धीरा । बैठरह्यो गंडकि सरि तीरा ॥
इकहरिणी आई तेहि ठामा । गर्भवती पीवन जलकामा ॥
तहँ कीन्हो यक सिंह गराजा । मृगी भगी जिय रक्षण काजा॥
डरी दरी महँगिरी दुखारी । गिरयो गर्भ मरिगै मृगनारी ॥
सो सावक मिलि गंडकिधारा । बहिआयो जहँ भरतउदारा ॥
लगी दया नृप लै तेहि अंका । आये कुटी मृत्युकी शंका ॥
पाल्योताहि करत अतिप्रीती । तेहि वश भूलगई तप रीती ॥
जो कहुँ चरत चरत कढ़िजातो । तौ तेहिं बिननृपअतिपछितातो
यहि विधि अतिअसक्तमृगमाहीं । तजन लग्यो जबनृपतनुकाहीं॥
दोहा–तब मनमें मृग लग रह्यो,ताते भरत भुवाल ।
भयो कलिंजरमें मृगा, मनगति को यह हाल ॥ १ ॥
पैतपबल तेहिं सुरति न भूली । भैगलानि मनमाहिं अतूली ॥
मुक्तक्षेत्र पुनि कियो पयाना ।करि अनसनव्रत तजि दियप्राना
तपप्रभावसों द्विजकुल माहीं । लियो जन्म भूली सुधि नाहीं॥
हरिपद पंकजमें मनलाग्यो । नेकुनजगत माहिं अनुराग्यो॥
कुलतैं अलग रहै सबकाला । फिरै नगर मानहुँ मतवाला ॥
तब घरके लखि करत न कामा । ताको धरयो जड़भरत नामा॥
पठवै करन खेत रखवारी । दूनदेत तौ ताहि उजारी ॥
खननकहै तौ कूप बनावै । पूरनकहै तौ शैल उठावै ॥

जहँ बैठतहै बैठे रहतो। जौनवानि गहतो सोइ गहतो॥
रह्यो तहां यक शूद्र नरेशा। करै चंडिकाभक्त हमेशा॥
सो देवीमंदिर महँ जाई। कह्यो पुत्र जो दे मोहिं माई॥
तौमैं तोहि मनुजबलि देहौं। विविध भाँति पूजन करवैहौं॥
दोहा—कछुक कालमें शूद्र के, प्रगट्यो येककुमार॥
आयो तब देवी भवन, लिये अमित उपहार॥ २॥
नरबलि देन हेतु महिपाला। पूरुवते इक मानुष पाला॥
देवी भवन लग्यो लैजाना। सो आपन वध जानि डेराना॥
गवनत मगमहँ राति अँधेरे। भागि गयो सो मिल्यो नहेरे॥
दूत सबै निजनाथ डेराई। खोजन लागे चहुँ दिशि धाई॥
खोजे मिल्यो न नरबलि जबहीं। दूत सकल शंकित ह्वै तबहीं॥
चले भूपपहँ करत विचारा। मगमहँ ते जड़भरत निहारा॥
पीन परम अनाथ गुणिताको।बलि लायक यह अति मेदाको॥
असकहि पकरि जड़भरत काहीं। लै आये तुरते नृपपाहीं॥
कह्यो भूप वह गयो पराई। खोजत दूरि गये हम धाई॥
खोजे मिल्यो नहीं निशि माहीं। तब लाये हम इत यहि काहीं॥
यह स्थूल अहै बलि लायक। याके कोउ न अहै नृपनायक॥
सुनि प्रसन्न ह्वै शूद्र भुवाला। लै तेहिं अर्द्ध रातिके काला॥
दोहा—देवी मंदिरमें गयो, चहुँ कित बारचो दीप।
जड़भरतहिं नहवायकै, ल्यायो देवि समीप॥ ३॥
भरतहिं अरुण वसन पहिराई। चंदन रक्त ललाट लगाई॥
मानि मनुज बलि पूजन कीन्हे। बहु निवेद आगे धरि दीन्हे॥
तब जड़भरत कियो अति भोजन।हर्ष विषाद विगत मन मोजन॥
तबहि पुरोहित देवी केरी। स्तुति लाग्यो करन घनेरी॥
शूद्र कह्यो सुत दीन्हो माई। मैं नरबलि दीवो मुखगाई॥

ले नरबलि करु कृपा विशेषी। मोहिं अपनो सेवक अवरेषी॥
असकहि काढ़ि कृपाण कराला। दियो पुरोहित पाणिभुवाला॥
पणव मृदंग तूर सहनाई। बाजे बाजि रहे सुरछाई॥
देवी सन्मुख सो हरिदासा। बैठ रह्यो नहिं नेसुक त्रासा॥
जबै पुरोहित तेग उबाहै। द्विजके कंठ चलावन चाहै॥
महाभागवतको अपचारा। सहि न सक्यो वसुदेव कुमारा॥
तहँ प्रगट्यो द्विजतेज तुरंतै। देवी उचटि परी कहुँ अंतै॥

दोहा—जरन लग्यो काली वपुष, तब करि कोप अपार।
प्रगट भई मूरति मती, अति भयंकराअकार॥

उपरोहितको पाणि मुरेरी। लियो छोड़ाय कृपाणिकेरी॥
भ्रुकुटी वंक लंक अतिखीनी। कुटिल दंत रसना बढ़ि कीनी॥
अरुण नयन अरु वदन भयावन। मानहुँ चहति जगत कहँ लावन॥
काट्यो प्रथम पुरोहित शीशा। हन्यो बहोरि शूद्र अवनीशा॥
पुनि सब शूद्रनको शिरकाट्यो। हरिदासापराध फल बाँट्यो॥
जो कोउ करै संत अपकारा। ताको यह फल करहु विचारा॥
जड़भरतहिं कछु परयो नजानी। लीला जौन चंडिका ठानी॥
निशिदिन लगोरहत हरि ध्याना। का जानै कहा होत जहाना॥
यदपि शूद्र शिरगेंद बनाई। देख्यो काली चहुँ कित धाई॥
भई न जड़भरतहिं कछु भीती। यही सत्य संतनकी रीती॥
जिनकी हृदय ग्रंथि सब छूटी। सब इन्द्रिय हरिपद महँ जूटी॥
ते अनन्य दासन यदुनाथा। रक्षाकरहिं आपने हाथा॥

दोहा—जे कोई जन करतहैं, हरिजनको अपराध।
ताहीको पुनि होतिहै, उलटि जीवकी बाध॥

रह्यो सिंधु सौवीर अधीशा। नामरहूगण जन जगदीशा॥
लहन हेतु सो ज्ञान विज्ञाना। कपिलदेव ढिग कीन पयाना॥

ह्वै सवार इक सुभग पालकी । सुरति करत वसुदेव लालकी॥
आयो भूप सिंधु सौवीरा । इक्षुमती सरिताके तीरा ॥
तहाँ येक वाहक थकि गयऊ लै शिबिका चलि सकत न भयऊ॥
तब वाहक खोजन जन धाये । कहुँ ते जड़भरतहिं लै आये॥
मोट अरोगित तनु ठहराये । आगू तेहिं पालकी लगाये ॥
भरत विषाद हर्ष नहिं कीनो । शिबिका बाँस कंध धरि लीनो॥
लै शिबिका जब चल्यो सिधारी । नाँघत पथमहँ जीव निहारी ॥
तब पालकी विषम ह्वैजाती । धक्का लगत भूपकी छाती ॥
तब अतिकोप भयो महिपालै । कह्यो पालकी कत अतिहालै॥
तब डेराय वाहक सब बोले । चलहिं सीध हमहैं नहिं भोले॥

दोहा—पै नवीन वाहक लग्यो, धरत कूद पथ पाउँ ।
तातै डोलति पालकी, लगत हमारो नाउँ ॥

तब भूपति झुकि वक्र निहारी । जड़भरताहि अस गिराउचारी ॥
रेशठ मोट निरोगित देहू । निर्बल जानि परत नहिं केहू ॥
चलत विषमगतिकत मग माहीं । मोरि भीति लागति तोहिं नाहीं
विषमचालचलिहै अब जोतैं । दंडप्रचंड लहैगो मोतैं ॥
तब जड़भरत मौन रहि गयऊ । लैपालकी चलत मग भयऊ ॥
भई विषमगति जीव बचाए । धक्कालगे भूप दुखपाये ॥
पुनिकोपितह्वै कह्यो नरेशा । सुणै नरेशठ मोर निदेशा ॥
लहै दंड यमदंड समाना । अहै अभीति भरो अभिमाना॥
असकहि कह्यो कटुक बहुबैना । सिंधु भुवाल लाल करिनैना॥
मनमें तब जड़भरत विचारयो । नृप धोखे कटुवचन उचारयो
जो मोहिं देहै दंड भुवाला । तौह्वैहै शूद्रहि सम हाला ॥
यदपि सहूँगो मैं अपराधा । पै प्रभु मेरो कृपाअगाधा ॥

दोहा–भक्तिविरोध न सहिसकी, देहै नृपकहँ दंड।
तातै देहुँ बुझाय मैं, भूपहि ज्ञान अखंड॥

असकहि विहँसि भूपकी वोरा। तक्यो उलटि अंगिरसकिशोरा
भूपवचन जे सकल उचारे। ते यद्यपिहैं सत्य तिहारे॥
पै भारा जो कोहु पर होतो। तो ताको दुखहोत उदोतो॥
महिपर पग पगऊपर जानू। तेहिपर कटि कटिपर धर थानू
धरपर कंध पालकी तापै। तापर तू भारा कहु कापै॥
दंडयोग अरु दंड प्रदाता। कोउनहिंजगमहँ मोहिंदिखाता
तुमअज्ञानवश वचन उचारो। तापर नहिं कछु जोर हमारो॥
औरो कहे वचन बहुतेरा। नृपहिय ह्वैगो ज्ञान उजेरा॥
जानि भागवत भूप डेराई। कूदि पालकीते द्रुतधाई॥
गिरचो जड़भरतचरणन माहीं। त्राहि त्राहि रक्षहु मोहि काहीं॥
मै नहिं जान्यो आप प्रभाऊ। रह्यो मोर अभिमानस्वभाऊ॥
क्षमा करहु मेरो अपराधा। बसति संत उर दया अगाधा॥

दोहा–दयासिंधु मुनिवर तहां, जानि रहूगणदास।
करत भये हरिभक्ति युत, ज्ञान विज्ञान प्रकाश॥
भवाटवी वर्ण्यों बहुरि, भटकत जन जेहिमाहिं॥
पुनि उद्घाट कह्यो सकल, जेहि ते जन दुख नांहिं।
जौनदियो जड़भरतमुनि, रहूगणो उपदेश॥
सो आनँद अंबुधि कियो, मैंविस्तार विशेष।
कपिलदेवके निकट नृप, जातरह्यो जेहि हेत॥
सो पायो मगवीचही, गवन्यौ लौटि निकेत।

इति श्रीरामरसिकावल्यांसतयुगखंडेद्विपंचाशत्तमोऽध्यायः॥५२॥

अथ अजामिलकी कथा॥

सोरठा—कथा अजामिल केरि, जो प्रसिद्ध भागवतमें।
नारायण अस टेरि,लग्यो पार भव जलधिके॥१॥

विप्र अजामिल यक कोउ रहेऊ। धर्मपंथ नितही सो गहेऊ॥
सदाचार महँ कियो सनेहा। सरित नहाय प्रात तजि गेहा॥
यहिविधि बीतिगयो बहुकाला। येकसमय सो विप्र उताला॥
ईंधन लेन गयो वनमाहीं। शूद्रयेक दृगलख्यो तहाहीं॥
लै दासी गणिका बहुतेरी। तिनमें करिकैप्रीति घनेरी॥
विहरत रह्यो विविधविधि जहँवा।पहुँच्यो जाय अजामिल तहँवा॥
देखत ताहि नीक अति लाग्यो। कछु क्षण ठाढ़रह्यो अनुराग्यो॥
लग्यो कुसंग दोष तेहि काहीं। कह्यो अजामिलजबतेहिपाहीं॥
जेतनी अहैं तुम्हारी दासी। हमैं देहु यकलै धनरासी॥
मान्यो शूद्र अजामिल बानी। दियो एकदासी छबिखानी॥
दै धन लै दासी गृह आयो। निजघरते घर भिन्न बनायो॥
निज नारीको भूषण लैके। दिय दासी कहँ आदर दैके॥

दोहा—पुनिगृहकी संपतिसकल, दियो फूंकितेहिहेत।
व्याही तियानिकारिकै, दासिहिदियो निकेत॥२॥

जब नहिं संपति रहिगै थोरी। लग्यो करनतब पुरमहँचोरी॥
मगमहँ लागि करै जनघाता। औरहु किय अनेक उतपाता॥
यहिविधि बीते वर्ष सतासी। भयो जबै आरंभ अठासी॥
भाग विवश कोउ संत सिधारे। ठगन हेतु घरभै बैठारे॥
दै भोजन घर माँह बसायो। तिनके पास कछू नहिं पायो॥
ताही निशा अजामिल दासी। जन्यो येक सुतपितु मुदरासी॥
संतहु भोन भीति रहि आये। नारायण सुत नाम धराये॥
संत गये पुनि देशन काहीं। फेरि अजामिल तेहिसुतमाहीं॥

कियो प्रीति अतिशय सुखछाके। यदपि रहे नवसुतशठवाके ॥
लहुरे सुत कहँ रोज खेलावै । तामुख चूमि मोद अतिपावै ॥
दशौ पुत्र ठग चोर महाना । करहिं पाप नहिं जाय बखाना॥
यहिविधि बीत्यो वर्ष अठासी । आयो काल अजामिलनासी॥
दोहा—रोगविवशअतिविकलभो, भयेशिथिलसबअंग ।
लग्यो चलन ऊरधपवन, भयेनैनबदरंग ॥ ३ ॥
तब यमदूत तीनि भयरासी । आवतभे लीन्हे कर फाँसी ॥
परे अजामिल कहँ ते देखी । भई तासु उर भीति विशेखी॥
डारे तुरत कंठ महँ फाँसी । मारि दंड लीन्हे जियगाँसी ॥
ताकी सुरति पुत्र महँ लागी । मरणकाल महँ सोइसुधिजागी॥
तव करिबल सुतकहँ गोहरायो । जब नारायण मुखकढ़िआयो॥
तब चारिहु अक्षर ते चारी । हरिके दूत कढ़े दुखहारी ॥
टोरि कंठते ताकरि फाँसी । अतिशय यमदूतन कहँ त्रासी॥
लै तेहियान चहे हरिलोका । तब यमदूत कहे भरि शोका॥
अहो कौन तुम रोकन वारे । धर्मराजको शासन टारे ॥
याको कारण वेगि बतावहु । तब यह पापी कहँ लेजावहु ॥
तब हरिदूत वचन अस टेरे । हम किंकर नारायण केरे ॥
यह अति पुण्य कियो जगमाहीं। ताते लैजैहैं प्रभु पाहीं ॥
दोहा—तब बोले यमदूत पुनि, यह अबलों मरजाद ।
पुण्यवानपापीलहत, स्वर्गनरककोस्वाद ॥ ४ ॥
दुष्ट अजामिल अतिशय पापी । दासीरत ठग चोर सुरापी ॥
ताते नरक योग यह साँचो । याते पाप येक नहिं बाँचो ॥
तब बोले हँसिकै हरिदूता । तुम मूरुख सिगरे यमदूता ॥
कौन सुकृत करिवेको राख्यो । जब नारायण मुख यहभाख्यो॥
कोटि जन्म अघ अवलि विलानी। येक जन्मकी कहाँ कहानी ॥
तुमरो धर्म अधर्म नजाना । वृथा भरे अपने अभिमाना ॥

सोवत जागत बैठत वागत । खाँसत खसत हँसतअरुभागत॥
टेक व्याज अरु बकत विसूरी । पीवत खावत खंडहु पूरी ॥
कहै बदनते जो हरिनामा । तौ अघजरत लहतहरिधामा॥
जेते अघ जग अहैं घनेरे । प्रायश्चित्त कहैं तिन केरे ॥
प्रायश्चित्त किये पुनि पापा । उपजत लहि वासना प्रतापा॥
पै हरिनाम कहे मुख माहीं । सहित वासना पाप नशाहीं ॥

दोहा–तातेसगरेदुरितको, प्रायश्चित्तप्रधान ।
है हरिनामउचारिवो, वेदपुराणप्रमान ॥ ५ ॥

कवित्त–पौन ज्यों जलधपर वज्र ज्यों महीध्रपर क्रोध जिमि सिद्धिपर भानुतम दापपै ॥ ज्ञान ज्यों अज्ञानपर मान अप मानपर कुयशपै दान ज्यूँ कृपाणशत्रुतापतै॥ कुलपै कुपूतज्यों सपूतज्यों कुपूतपर जैसे पुरुहूत दनुपूतन कलापपै ॥ रघुराज रावणपै गंगज्यूं अपावनपै दावनपै दाव तैसे रामनाम पापपै॥१॥ कृष्ण भोजराजपर भीम कुरुराजपर जैसे रघुराज भृगुराजहैहै राजको ॥ सिंह गजराजपर शंभु रतिराजपर पान जिमिलाज अस कंद गिरिराजको ॥ शांतरस राजपै अनीति क्षितिराजपर क्रोध सिद्धकाजपर गाज तृणराजको ॥ पापनसमाजपर जोर यमरा-ज जैसे पापन पै तैसे कृष्ण नाम ब्रजराजको ॥ २ ॥ कीटन पै भृंग जैसे भृंगपै विहंग जैसे विपुल विहंगपै ज्यों बाज जोरवारहै॥ बाजपै ज्यों मारजार मारजारपै ज्यों श्वान श्वानपैतरक्षुतापै ग जमतवारहै ॥ गजपर सिंह जैसे सिंहहूपै शार्दूल शार्दूलहूपै जे-से शरभ उदारहै ॥ शरभपै जैसे नरसिंह भाषै रघुराज पापनपै तैसे हरिनामको उचार है ॥ ३ ॥

दोहा–गयो कंठको टूटि जब, पाश अजामिल केर ।
उठ बैठ्यो चैतन्य है, चौंकि चितै चहुँफेर ॥ ६ ॥
हरिदूतन यमभटनको, सुन्यो सकल संवाद ।
अति गलानि मनमें भई, छूट्यो सकल प्रमाद ॥ ७॥

हाय वृथा मैं जन्म गँवायो। जीवनको फल कछू नपायो ॥
कबहुँ नहोत मोर उद्घाटा। मग्न विषे जग झूठहिं हाटा ॥
मैं आरत ह्वै सुतहिं पुकारा। नारायण मुख भयो उचारा ॥
सोइ प्रभाव प्रभु दूत पठाये। गलते यमकी पाश छुड़ाये ॥
ऐसो प्रभु तजि दीनदयाला। आन भजौं तौ होहुँ विहाला॥
अस विचारि तजि गृह परिवारा। गयो अजामिल द्रुत हरिद्वारा॥
तहँ हरि भजन कियो कछुकाला।गयो त्यागि तनु यदुपति आला
अरु यमदूत बहुरि यमपासा। आवतभे मन परम उदासा ॥
यमसों कह्यो नकरिहैं कामा। पापिहु जान लगे हरिधामा ॥
भेद बताय देहु हम काहीं। केहि ल्यावै ल्यावै केहि नाहीं॥
अब लों तुमहिं नाथ हम जाने। कब हमको बहुनाथ देखाने ॥
अबलों रुक्यो नशासन तेरा। अबतौ बीच परत बहुतेरा ॥

दोहा—निज दूतनके वचन सुनि, यमकरिकै तहँ ध्यान।
बोल्यो वचन सभीत अति, करि प्रणाम भगवान॥८॥

कवित्तघना०—समदर्शी जे साधु हरि अनुराग रँगे तिनके सुय शको सुरेश सिद्ध गावैहैं ॥ रक्षित गोविंदकी गदाते वै सदाई रहैं उनके निकट काल कर्म नाहिं जावैहैं ॥ भाषै रघुराज मानौ मेरी कही बात साँची जोर न हमारो कछु तिनमें बतावैहैं ॥ धो खऊमें तिनके समीप नाहिं जइयो दूत बार बार तुमको विशेष कै बुझावैहैं ॥ १ ॥ रसना नजाकी एकवारहू उचारयो कृष्ण चित्त रघुराज यदुराज पद ध्यायोना ॥ कृष्णचंद्र चरण सरोज में ननायो शीश येको रोज संत संग खोजि मन ल्यायोना ॥ दुनियामें आय हरिदासनाम पायो नाहिं केशवकी सेवामें श-रीरको लगायोना ॥ ऐसे महापापिनको दूनो दीह दंड देहु दि लमें दयाको करि कबहूँ बचायोना ॥ २ ॥ रोज रोज जाय जग

खोज खोज पापिनको ल्याय ल्याय नरक निवेशनमें नाइयो ॥ जाको जैसो अपराध ताको तैसो दैकै दंड यही भाँति पापिनको पावन बनाइयो ॥ भाषैं रंघुराज राखौ हुकुम हमारो अस येक बात मेरी कही केहुना भुलाइयो ॥ धोखे अनधोखे दूतौ बात यह धोखे रहौ रामकृष्णदासनके पास नहिं जाइयो ॥ ३ ॥
सवैया—जेनिजपाप छोडावन हेतु अनेकन कर्म करैं हरिछोड़ी॥ तौ नहिं कर्मनते उपजै अघहै तिनकी मति साँचि निगोडी ॥ पातकताहि नहीं नियरात कहै रघुराज सही जन ओड़ी ॥ भक्तिसोंभाउ अनेकनको करि जे भजि राधिका माधव जोड़ी ॥
घनाक्षरी—यमको निदेश सुनि अति मजबूत दूत तब ते हमेश ताहि असत विचारैना॥ वागै ठौर ठौर हाथ लीन्हे पाश महा घोर हरि विमुखिन डारि नरक निकारैना॥भाषै रघुराज रोज रोज ऐसो काज करै ईश अपनेको काज कबहूं बिगारैना ॥ पै गोविंद दासन को दूर हीते देखतही द्रुतही दुराय जात दृग ते निहारैना ॥८॥

दोहा—कथा अजामिलकी कह्यो, कछु हरिनाम प्रभाव ।
पार न पावै जो कहैं, सहस सहस अहिराव ॥ ९ ॥
शक्ति जिती हरि नाममें, पाप दहनकी होइ ।
ते तो पातक पातकी, करि न सकत जग कोइ॥१०॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजाश्रीमहाराजाबहादुरश्रीसीताराम
चंद्रकृपापात्राधिकारिश्रीविश्वनाथसिंहजूदेवात्मजसिद्धिश्रीम
हाराजाधिराजश्रीमहाराजाबहादुरश्रीकृष्णचंद्रकृपापा
त्राधिकारिश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृते श्रीरामरसिका
वल्यांसतयुगखंडेत्रिपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥५३॥

इति सतयुगखंडःसमाप्तः ॥

श्रीः ।

अथ भक्तमाला ।

अथ त्रेतायुगखंड प्रारंभः ।

सोरठा–जयहरिपद अरविंद, सत उर सर रति रस लसत ॥
मन रघुराजमिलिंद, रमत सुयश मधुपान करि॥१॥
जयति गिरा गणनाथ, जयति संत पद रज सुखद॥
जय जय पितु विश्वनाथ, जय मुकुंद हरि गुरुचरण
दोहा–सुभग रामरसिकावली, सतयुगखंड बखानि ॥
वर्णौंत्रेताखंडके, संत सुयश सुखदानि ॥ १ ॥

अथ हनुमानजीकी कथा ॥

दोहा–संत शिरोमणि जानिकै, प्रथम पवनसुतगाथ ।
वर्णहुं मति अनुसार कछु, नाइ तासु पद माथ ॥१॥

जबै राम रावण संहारी । आये अवधपुरी सुखकारी ॥
महाराजको तिलक उछाहू । होतभयो पुरजन सबकाहू॥
एक समयतहँ सहित समाजा । श्रीरघुकुल भूषण महराजा ॥
सिंहासनासीन छबिछाये । सीय सहित तहँ सरस सुहाये॥
लषण भरत रिपुसूदन बैठे । प्रभुमुखसुछवि सुधानिधि पैठे॥
आये देश देशके राजा । दैबलि बैठे सहित समाजा ॥
तहँ बाँदरन सहित कपिनाथा । आये बालिसुवन लैसाथा ॥
दैबलि प्रभुपद महँ शिरनाई । बैठे प्रभु दक्षिण सुखपाई ॥
तहँ भट सहित निशाचरनायक । आवतभये सभा रघुनायक॥

निरखिसभा शोभितप्रभुकाहीं।गयो छाकि अनुपमछविमाहीं ॥
वामादिशा मिथिलेश कुमारी। लषण लसत दक्षिण धनु धारी॥
वाम भरत भरतानुज दोऊ। शोभित सजित शरासन सोऊ॥
दोहा—प्रभुपद पंकज कंजकर, दाबत पवनकुमार ॥
सिंहासन आगे लसत,राम प्रेम आगार॥ २ ॥
यह छबिनिरखिनिशाचरनाथा। पुनि पुनि नायनाथ पदमाथा॥
लिये अमोल कनक मणिमाला। दीन्हो प्रभुहि नज़र तेहि काला
सोमाला प्रभु लै कर माहीं। सभासदननिरखे चहुँवाहीं ॥
पुनि प्रभु मनमें लियो विचारी। लहनयोग मिथिलेश कुमारी॥
दई माल मिथिलेश सुताको। सोऊ गुण्यो देहुँ मैं काको ॥
सबविधि जानि माल अधिकारी। दई पवनसुतके गल डारी ॥
रामप्रेममहँ मगन कपीसा। चितयो चौंकि मालगल दीसा॥
तुरतहि सो मणिमाल उतारी।इक इकमणि निजदंत विदारी॥
फोरै पुनि देखै तेहिं माँहीं। मानहुँ ताहि मिलत कछुनाहीं॥
यह चरित्र लखि मारुति केरो। निश्चरपति विमनस ह्वै टेरो॥
प्रभु प्रसाद फोरयो कस भाई। याको हेतु देहु समुझाई ॥
कह्यो पवनसुत तब अस बानी। मैं मणिके अंतर यह जानी ॥
दोहा—रामनाम ह्वैहै लिखो, जो सबविधि गति मोरि ॥
सो नहिं पायो मणिन में, ताते डारयो फोरि ॥ ३ ॥
तब लंकेश व्यंग्य कह बानी। तुमतौ राम तत्वके ज्ञानी ॥
रामनाम तुम्हरे तनु माहीं। ह्वैहै लिखो शंक कछु नाहीं ॥
ताते धारण किये शरीरा। और कार्य नहिं सुवन समीरा॥
व्यंग्य वचन सुनि पवनकुमारा। निजनखसों निजवपुष विदारा॥
ऐंचत त्वच कपीश जहँ जहँवाँ। रामनाम निकसत तहँ तहँवाँ॥
सकल सभासद अचरज माने। रामभक्त अनुपम तेहि जाने ॥

विहँसि कह्यो तब पवनकुमारा। परमगोप्य मैं करूं उचारा ॥
मंत्रबीज पुनि प्रभु कर नामा। पुनि नमामिको अरथ ललामा
राममंत्र मन करै उचारा। बीतै जब यहि विधि बहुवारा ॥
जिह्वाते न नाम तब लेई। रोकि श्वास पुनिताजि तेहि देई॥

दोहा–जब सोवतमें विन सुरति, रसना निकसै नाम।
तब बैठै आसन सहित, कहुँएकांत जो ठाम ॥ ४ ॥

मनते मंत्र उचारन करई। ताको स्वर सिगरे तनुभरई ॥
घंटानाद सरिस तेहि रूपा। क्रमसों थिर तेहिकरै अनूपा ॥
फेरि श्वासमहँ बीजहि दैकै। ऊरधश्वास लेइ सुधि कैकै ॥
फेरि चतुर्थी अरुण मकारा। छोंड़तश्वासहि करै उचारा ॥
यहिविधि तनुकी सुधिबिसरावै। जब मनु श्वासहि आवै जावै ॥
तब पुनि करै भावना ऐसी। तजै वृत्ति सब और अनैसी ॥
साठलाख अरु तीनिकरोरा। तनुमहँ रोमछिद्र चहुँओरा ॥
तिनको करै विकासित सोई। लेइ वदन तिनते तनु जोई ॥
ऊरधश्वास बीज उच्चरई। घंटानाद सरिस मनुकरई ॥
तजतश्वास निकसै झंकारा। सब रोमन मुख मंत्र उचारा ॥
यहिविधि साधनकरत सदाहीं। कढ़ै बीज रोमनमुख माहीं ॥
साधन यही सिद्धि ह्वै जावै। तब सनकादिक सरिससोहावै॥

दोहा–अंगुलचारिक बाहिरे, भीतरअंगुलचारि।
श्वासाआवैजायंजब, तबनहिं लगैविकारि ॥ ५ ॥

अजर अमर होवै सबकाला। बसै निकट श्रीदशरथलाला ॥
मही और वैकुंठ प्रयंता। ताकी गति होवै मतिवंता ॥
प्रलयकाल ताकर नहिंनाशा। यह साधन लहि व्याजप्रकाशा॥
सिद्धिहोइ अस साधन जबहीं। रामनाम अंकित तनु तबहीं ॥
यह हनुमानकथा मैं गाई। और कहाँ लगि जाइ गनाई ॥

सुनि कपीशकी सुंदरिवानी। निशिचरनाथ लियो सतिमानी॥
हनुमततेज विदित जगमाहीं। तेहि सम रामभक्त कोउ नाहीं॥
खंड किंपुरुष महँ सब काला। जहँ ठाकुर है कोशलपाला॥
तहँ गंधर्वन सहित कपीशा। नाइ नाइ नित प्रभुपद शीशा॥
करि पूजन नित नव अनुरागा। निवसत पवनतनय बड़भागा॥
तहँ तुंबुर आदिक गंधर्वा। आवहिं सहित समाजन सर्वा॥
महामधुर बहुबाज बजाई। गावहिं रामायण सुरछाई॥

दोहा—सुनहिं पवनसुत सर्वदा, आँखिन अंबु बहाइ।
छकत रामपद प्रेम महँ, सकल सुरत विसराइ॥ ६॥
अरु जहँ जहँ रघुपति कथा, सादर बाँचत कोइ।
तहँ तहँ धरि शिर अंजली,सुनत पुलकतनु सोइ॥७॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेप्रथमोऽध्यायः॥ १॥

अथ जाम्बवानकी कथा॥

दोहा—जाम्बवानकीकछुकथा, मैंवर्णौंमनलाइ।
त्रिजगयोनिहूपाइकै, लाग्योहरिपदजाइ॥ १॥

जबहिं त्रिविक्रम विक्रम कीन्हों। तीनिचरणमहिबलिसों लीन्हों॥
फेरिनाथ तहँ वपुष बढ़ायो। त्रिभुवनमहँ द्वैपद भरिभायो॥
ऋक्षराज यह चरित निहारी। पुनि न मिली असमयविचारी॥
पुलकित गवन्यो लैकर भेरी। करन लग्यो विराटवपु फेरी॥
दियो प्रदक्षिण प्रभुको साता। त्रिभुवनमहँ भाषत यह बाता॥
लियोजीति प्रभु असुरन काहीं। दियो राज इंद्रहि छिन माहीं॥
अस प्रभु विजय सकल गोहराई। फेरि गिरयो वामनपद आई॥
प्रभुपदधोय सलिलविधिलीन्हो। हर्षित आप पान सोइ कीन्हो॥
तब वामन प्रसन्न है गयऊ। इच्छामरण ताहि प्रभुदयऊ॥

ममसखत्व रघुपति अवतारा । तुमपैहौ यह वचन उचारा ॥
पर्‌यौ चरणमहँ निशिचरनाथा । बोल्यो वचन जोरि युगहाथा ॥
रामभक्त तुमही जगमाहीं । और कहैं ते अहैं वृथाहीं ॥
त्रेता महँ सोइ वचन प्रमाना । भयो राममंत्री मतिवाना ॥
रामचरण भो प्रेम अनूपा । रही न परम भीति भव कूपा॥

दोहा—राम भक्ति परभाव धनि, तिरजग योनिहु जोइ ।
करै ताहि संसारकी, कबहुँ भीति नहिं होइ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अथ सुग्रीवकी कथा ॥

दोहा—कहौं कथा सुग्रीवकी, रामसखा दृढ़नेम ॥ १ ॥
प्रभुसेवन करिकै सदा, यह मान्यो निजक्षेम ॥

पावक बीच शपथसो कीन्हो । प्रभुहितनिजकुटुम्ब तजिदीन्हो
राम काज सर्वस्व लगायो । जब सुवेलपर कपिदल आयो॥
तब लखि रावणको नटसारा । सहि न गयो रिपुकर अहँकारा॥
प्रभु सन्मुख लखि तासु मिजाजा। तहँ ते तुरत तरकि कपिराजा
सिंहासन ते दियो गिराई । वानरपति विक्रम दरशाई ॥
आयपर्‌यो प्रभु पाँयन माहीं । को सुग्रीव सरिस जगमाहीं ॥
पुनि जब रघुकुल कमल दिनेशू। जानलगे साकेत निवेशू ॥
तब परिवार राज्य दिय त्यागी । आयो अवध राम अनुरागी ॥
प्रभुसूं कह्यो न छनभरि छड़िहौं। निज मानसमणिप्रभुपदजड़िहौं
देखि अलौकिक प्रीति सखाकी। लियो नाथ निजसँगसुखछाकी॥
इक सुकंठ सतसंग प्रभाऊ । कोटिनरीछ कीश कपिराऊ ॥
भये विमल साकेत निवासी । रहे न बहुरि जगतके आसी ॥

दोहा—ऐसो श्रीरघुनाथको, सख्यभाव परभाव ।
याहि विधि आठौ भक्तिको, कीन्हो वेदन गाव ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ विभीषणकी कथा ॥

दोहा—कहौं विभीषणकी कथा, सुनहु संत चितलाय ।
जाको देखत दौरिकै, रामलियो उरलाय ॥ १ ॥

रह्यो बणिक यक कोउ पुरमाहीं । चल्यो बनिजहित दक्षिणकाहीं
लै संपति चढ़ि येक जहाजा । गयो सिंधु जब दूरि दराजा ॥
पवन प्रसंग तरंगन पाई । बोहित भ्रमण लगी चहुँघाई ॥
बूड़न शंक सबै अकुलाने । कोउ पंडित सों वचन बखाने॥
केहि विधि नाव लगै अब पारा । सो विधान अब करहु उचारा॥
द्विज कह अब जो नर बलिदीजै। तौ ह्वै पार सबै जन जीजै ॥
तब इक पुरुषहिं सबै ढकेले । मिली थाह तेहि भयो अकेले॥
नाव लागि चलि सागर पारा । तेहि जन राक्षस आइ निहारा॥
ताहि निकासि हर्षि धरि अंका । लैगे तुरत निशाचर लंका ॥
निरखि विभीषण नाथ अकारा । ताको बहुत कियो सतकारा॥
षोडश विधि पूजन करिताको । मनहुँमिल्यो सुतकौशल्याको॥
ठाढ़ो सन्मुखसो कर जोरे । राम प्रेम सागर मन बोरे ॥

दोहा—बहुरि कह्यो आज्ञा कछुक, होइ करौं मैं तौन ।
तब डेराय बोल्यो पुरुष, मोहिं पहुँचावौ भौन ॥२॥

केहि विधि जैहौं सागरपारा । यहअतिशयमोहिंलगतखँभारा॥
कह्यो निशाचरपति मुसक्याई । सिंधुतरणकी सहज उपाई ॥
असकहि तेहि ललाटे सुखधामा। लिखिदीन्ह्यो द्वौअक्षर रामा ॥
विविध भाँति जे रत्न अमोला । दीन्ह्यो बहुत अमोल निचोला॥

कीन्ह्यो विदा नाइ पदमाथा । थल समचल्यो पाथनिधिपाथा
आयो पुनि ताही थल माहीं । फिरीनाव जेहिथल चहुँ वाहीं॥
सोइ महाजन करि व्यापारा । मिल्यो तेहिथलसिंधुमझारा ॥
ताहि चीन्हि लिय तरणि चढ़ाई। सो आपनी कथा सब गाई ॥
सुनिकै राम नाम परभावा । वणिकतासु पद महँ शिरनावा॥
कह्यो चलहु मेरे घरमाहीं । कह्यो सो जन पैदरहमजाहीं ॥
असकहि कूद्यो सिंधु मझारी । भयो पार प्रभुनामहि धारी ॥
तेहि सँग वस वणिकहु लहि ज्ञाना।दियवर संपति साधुन नाना ॥

दोहा—औरहु सकल जहाजमहँ, रहे जे जन असवार ।
रामनाम परभाव लखि, तेउ तजिदिय परिवार ॥३॥
रामरसिक ह्वैगे सकल, छोड़े जगत खँभार ।
सागर इव भवसागरहुँ, भये तुरंतहि पार ॥ ४॥
श्रीरघुनंदन कपिनकी, विदाकरी जेहि काल ।
पाइ विदा तहँ आपनी, कह्यो निशाचरपाल ॥ ५ ॥

जो प्रसन्न मोपर प्रभु होहू । तौ वरदेहु यही कर छोहू ॥
क्षणभर होहु न आप वियोगू । यही कृपा करि साधहु योगू॥
जानअलौकिक प्रीति खरारी । लंकापतिसों गिरा उचारी ॥
रंगनाथ कुलदेव हमारे । तिनहि लेहु तुम सखा पियारे॥
होई कबहुँ न मोर वियोगू । रंगनाथ मेटिहैं सब सोगू ॥
तबै विभीषण सर्वस पाई । चल्यो रंगपति लै शिरनाई ॥
कावेरी तट महँ जब आयो । रंगनाथ तब स्वपन देखायो ॥
थापहु मोहिं कावेरी तीरा । नित पूजन आवहु मतिधीरा ॥
जो हमको लंकहि लै जैहौ । तौ इक तुमहीं भर फल पैहौ॥
कलिमें जो ममदरशन करिहैं । विन प्रयास भवसागर तरिहैं॥
भरतखंड जन लंक न जैहैं । तौ केहि विधि ममदरशन पैहैं॥

तातें करहु जगत उपकारा । यहि थल मंदिर रचहु उदारा॥
दोहा—रंगनाथकी वाणि सुनि, जागि निशाचरपाल ।
विश्वकर्माको तेहि थलै, बुलवायो ततकाल ॥ ६ ॥
तुरत महामंदिर बनवायो । तामें रंगनाथ पधरायो ॥
लंकाते निज पूजन हेतू । आवन लग्यो निशाचर केतू॥
यहिविधि बीति गयो बहुकाला । भयो इतै कोऊ नरपाला ॥
रंगनाथके मंदिर माहीं । राखौ कोउ इक पूजक काहीं॥
सो पूजक अंगन इक राती । उपटी लख्यो चरणकी पाँती॥
इक इक पद इक इस करकेरे । तिहि अचरज लाग्यो दृगहेरे॥
छिपि बैठ्यो ताकनके काजा । सो तहँ लख्यो निशाचर राजा॥
पूछ्यो कौन अहो तुम देवा । करियत रंगनाथकी सेवा ॥
कह्यो विभीषण मैं लंकेशा । मेरे इष्टदेव रंगेशा ॥
तुमहौ सेवक मम प्रभु केरे । ताते चलहु विप्र घर मेरे ॥
असकहि विप्रहिं कंध चढ़ाई । गवन्यो भवन निशाचर राई॥
तहँ बहु मणिदै पूजन कीन्ह्यो । पुनि पहुँचाय रंगढिग दीन्ह्यो ॥
दोहा—तबते अंतर्ध्यान ह्वै, आवत नित लंकेश ।
रंगनाथके पूजिपद, फिरि फिरि जात निवेश ॥ ७ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ शबरीकी कथा ॥

दोहा—अब वर्णों शबरी कथा, राम प्रेमको रूप ।
पाँयन चलि ताको मिले, निजते कोशल भूप ॥ १ ॥
रहे कोउ मुनि दंपति वनमें । करहिं सुतप हरिध्यावत मनमें ॥
गेकहुँ कंद मूल फल हेतू । तिहि दिन भयो पुत्र सुखसेतू ॥
जब बनते मुनि भवनसिधारयो।तबमुनितियउठि चरण पखारयो

पूजन करि मुनि भोजनकीन्ह्यो।निज सुत जन्म नहीं सुनि लीन्ह्यो
रोय उव्यो जब सुत तिहिकाला।मुनि पूँछ्यो यह काकर बाला॥
तिय कह आजु भयो यह मेरे। सुनि मुनि तिय पै नैन तरेरे॥
अरी अशौच नमोंहिं बतायो। कस पूजन भोजन करवायो॥
शबरी होसि महावन जाई। सुनि पति शाप महादुख छाई॥
रोवनलगी कंतके आगे। दयादेखि मुनि कह अनुरागे॥
कीन्ह्यों तैं पातिव्रत धर्मा। ताते तैं ह्वै है शुभकर्मा॥
तैं करिहै संतनकी सेवा। ऐहैं तुव घर रघुकुल देवा॥
असकहि मुनिगे कानन काहीं। तिन तनुतज्यो कछुक दिनमाहीं

दोहा—सोशबरीभैआइकै, दंडकविपिनविशाल।
सेवासंतनचरणकी, करनलगीसबकाल॥ २॥

जाति आपनी नीच विचारी। मुनिसन्मुख नहिंसकै सिधारी॥
काटि काटि तरु ईंधन जोरी। बोझन बाँधि निशाकरि चोरी॥
मुनि आश्रमन फेंकि नितआवै। कोउमुनिजनजाननहिंपावै॥
अरु पंपासर पथमहँ जाई। कंकर कंटक देइ बराई॥
नित लखि ईंधन मारग झारे। मुनि मोदितमन सकलविचारे॥
यह उपकार करै जन जोई। तेहि जानन चाहैं सब कोई॥
मुनि मतंग निज शिष्य बोलाई। कह्यो धरहु निशिवेष छिपाई॥
शिष्य सकल रजनी महँ डाँटे। पकरयो शबरिहिं झारत काँटे॥
दरशाये मतंग ढिग लाई। शबरी मनमहँ अतिहिडेराई॥
मुनि मतंग कह है उपकारिणि। लैधनदे ईंधन सुखकारिणि॥
वृथा न ईंधन लेहैं तोरा। कबहुँ लह्यो तैं धन बहु थोरा॥
सो डेराइ कछु कही न बाता। खरी जोरिकर कंपत गाता॥

दोहा—शबरी सुकृत सराहिकै, अंबक अंबु वहाइ।
मुनिमतंगकरिकैदया, लियआश्रमहिं टिकाइ॥ ३॥

जानि भक्त सो अतिमन भाई । रामनाम दिय कर्ण सुनाई ॥
ताकर पूर्वजन्म गुण गाथा । योगप्रभाव जानि मुनिनाथा॥
करन लगे अतिशय सत्कारा । तब जेमुनिअभिमानअपारा ॥
तब मतंग निंदन बहु करहीं । शबरी दोष ताहिशिरधरहीं ॥
जानहिं नहिं हरिभक्ति प्रभाऊ । जातिभेदमहँ राखहिं भाऊ ॥
जातिभेद वैष्णव जो कीन्ह्यो । सो सब पाप शीशधरिलीन्ह्यो॥
जेहि मुख कढ़ै नाम सियपीको । श्वपचहु सो ब्राह्मणते नीको ॥
तपी व्रती द्विजभक्ति विहीना । सो श्वपचहुते अहैं मलीना ॥
यह नहिं जानहिं तप अभिमानी । जानिय तिनहिं पूर अज्ञानी ॥
मुनि मतंग अरु शबरी काहीं । बीते कछुक काल वनमाहीं ॥
नित मग झारै लैकर झारू । लगै नकंकर मुनिपग चारू ॥
कबहूं यक दिन झारत माहीं । कोउ मुनिपरसभयो तिहिकाहीं।-

दोहा—नीचजातितिहिजानिकै, मुनिकीन्होअतिकोप ।
गारीदैमारनउठे, कह्यो धर्म भो लोप ॥ ४ ॥

शबरी भागि भवन कहँ आई । मुनि बहोरि पंपासर जाई ॥
मज्जन लगे तबै सरनीरा । शोणित भयो परे बहुकीरा ॥
तब सिगरे मुनि भये दुखारी । तासु हेतु नहिं परै विचारी ॥
सिगरे मनमहँ किये विचारा । जब ऐहैं अवधेश कुमारा ॥
पूँछिलेब संदेह निवारी । पदपरसत ह्वैहै शुचिवारी ॥
यह अभिलाषा सबके भारी । ऐहैं हठि प्रभु कुटी हमारी ॥
मुनि मतंग पुनि कछुदिन माहीं । कुटी सौंपि निजशबरीकाहीं
कह्यो इतै ऐहैं भगवाना । यह मानै मनमाँह प्रमाना ॥
असकहिगे सुरलोक सिधारी । गुरुवियोग शबरिहिदुखभारी ॥
पै रामागम मनहि विचारी । शबरी निवसतभई सुखारी॥
नित उठ भोर पंथ चलि आगे । निरखे प्रभु आगम अनुरागे॥

नितहिं दूरलगि कानन जाई । ल्यावै टोरि सुफल समुदाई ॥
दोहा—चीखिचीखितिनफलनको, जेअतिमीठे होइ ।
तिनहिंकुटीधरिराखती, प्रभुहितअतिसुखमोइ ॥ ५ ॥
यहिविधिबीते बहुतदिन, देखत राम पयान ।
दूनदून दिनदिन बढ्यो, रामसनेहमहान ॥ ६ ॥
इतै खरादिक खलनहनि, लहि कबंधसों खोज ।
पंपासर आवतभये, जेहिचाहति तियरोज ॥ ७ ॥
शबरी काननमें सुन्यो, रघुपति आवत आज ।
पर्‍यो मृतक मुख मनुसुधा, छोड़ितुरतसबकाज॥८॥
पंथविलोकत ध्यावती, तनुसुध सकल बिसारि ।
दूरिहिंते देखत भई, कोशलनाथ खरारि ॥ ९ ॥
कवित्त—माथेमें जटा मुकुट मंडित अखंडित उदंडित कोदंड दोर्दंड अंडपालमें ॥ लहलही इंदीवर श्यामता शरीर सोही डहडही चंदनकी रेखराजे भालमें ॥ कटिमेंनिषंगवाण फेरत अनुज संग गुंजरत मंजुल मिलिंद बन मालमें॥ बैननमें बोलनिकी चाहभरे रघुराज शबरी निहारनकी नैनन विशालमें ॥१॥ पथिकन पूंछत सप्रेम प्रभु पेखि पेखि शबरी हमारी प्यारी बसै केहि ठौरहै ॥ कौन वाको ग्राम इहां कौन वाको नाम कहै कौन वाको धाम जासों काम एक मोरहै ॥ कौन घरी ऐहै जामें नयननि निहारिहौं मैं खैहौं फल स्वाद सुधा सरिस अथोरहै ॥ रघुराज जै छिन बिलोकिना विलोचन सों बीतत पलक सम कलप करोरहै ॥ २ ॥ ज्ञान औ विराग योग साधन सुखाने तनु मुनि जन खोजैं जाहि धारे श्वेतकबरी ॥ शंभू औ स्वयंभू जूके मनको मवासी सदा दासी भई सिंधुजा बढ़ाइ प्रीति जबरी ॥ जाको नाम लेत लागै ल्वारि नहिं लालचकी लूटी जाति पाप

लाद लोप होति लवरी॥सोई रघुराज रघुराज पंपा काननमें पूँछत फिरत कहाँ कहाँ मेरी शबरी ॥ ३ ॥ आगू चले राम आई आगू लेन शबरीहू चरणपरन धाई मिलनको धायेहैं ॥ गिरिदंड ही सो भुजदंड सों उठाइ लियो फेरिकै गिरी सो पुनि भुज पसरायेहैं॥प्रेमदशा कही नाहिं जाति रघुराज दोऊ तन मन वचनकी सुधि बिसरायेहैं ॥ भले आप मिले मोहिं भली मिली तैहूँ यह कहत दुहूनके भकारै भरि आयेहैं ॥ ४ ॥ तनुको सँभारि कारि ताको मिलि बार बार वारिज विलोचननि प्रेम वारि ढारिकै ॥ करकोप कारि तासु ताहीकी कुटीको चले रघुराज राम मुनिमंडली बिसारिकै ॥ पुनि पुनि पूछै प्रभु तेरी कुटी केती दूरि जा मेहौं बसौंगो औध आनँदको वारिकै ॥ कोशलाते मिथिलाते कमलानिवासहूतें पायो मैं सनेह सुख तोहीको निहारिकै ॥५॥

सवैया-आइ गये शबरीकी कुटी प्रभु नृत्य नटीसी करै जहँ प्रीती॥
टूटी फटी कट दीन्ही बिछाइ बिदाकै दई मनौ विश्वकी भीती॥
मोसों कछू कहि जात नहीं धौ बखान करौं शबरी परतीती ॥
धौमैं बखान करौं जस राखत रंकनसों रघुराज जुरीती ॥ ६ ॥
पूरुबसों रघुराजको आगम जानिकै काननमें नितजाई ॥
तोरिकै चीखिकै मीठे बिचारि धरयो फल जे प्रभुके हित लाई॥
तेफल दोननमें भरिकै प्रभु आगे धरयो अतिलाजहिं छाई ॥
ते फल हाथ लियो रघुराज मनो गये आपन सर्वस पाई ॥७॥
कोटिन सिद्ध सुकोटिन वर्षलों पावन चाहत जोर नहीं चलै ॥
शम्भु स्वयंभु सुरेशहू शेष सदा ललकैं नाहिं आँखिनमें रलै ॥
वेद पुराणहू वैभव जासु बखानिकै नेति निबाहनही फलै ॥
ते प्रभुके पदकोशबरी अपने घरमें अपने करसों मलै ॥ ८ ॥
लै करसों शबरी फलको प्रभु खान लगेहैं मिठाय मिठाई ॥

लक्षणको बकसै कछु चाखि सुभाषिकै माधुरीया अधिकाई ॥
सिद्ध सुरासुर भूपनि जागनि भागनिसों प्रभु जोन अघाई ॥
सानुज सो गो अघात अघाय सुखे शबरी बदरी फल खाई ॥९॥
बारहिंबार भनै लखनै जननी पय पान जो मोहिं करायो ॥
त्रैशतसाठि सुमात सुभोजन भाँति अनेकनि रोज़ खवायो ॥
मंदिरमें मिथिलेश जूके रघुराज सुव्यंजन आनन आयो ॥
पायो नहीं अस स्वाद कहूं जस मैं शबरी बदरी महँ पायो१०॥
फेरि कह्यो शबरीसों सियापति तेरियै प्रीतिसों प्रीति मैं पाई ॥
और कहूँ अस मोहिं मिल्यौ नहिं ऐसो अपूरब आनँद दाई ॥
यह बदरी फलको बदलो न तुलै तिहुँ लोक विभूति बड़ाई ॥
ताते न मेरे कछू तोहिं देनको रैहौं ऋणी यश तेरोईगा दे ॥

दोहा—मुनि असम नकीन्हे रहे, प्रभु ऐहैं मम धाम ।
सुने सबै ते आइगे, शबरीके घर राम ॥ १० ॥

ज्ञान विराग जाति गुणगर्वा । दूरि कियो दंडक मुनि सर्वा ॥
निज २ आश्रम ते सब धाये । शबरी धाम राम ढिग आये ॥
प्रभु उठि कीन्ह्यों सबन प्रणामा। दै आशिष भे पूरण कामा ॥
लागिगई मुनि सभा सोहावन । प्रभुसोंबोले सब मुनि पावन ॥
रहे सकल हम दरशन आसी । भये तुमहिं लखिकै सुखराशी॥
इहाँ नाथ इक अनरथ घोरा । भयो कछुक दिनतैं सुखचोरा॥
पंपासर जल रुधिर समाना । भयो नाथ कृमिसंयुतनाना ॥
विनासलिल नहिं धर्म निबाहू । मुनिजन मनहिं दुसह दुखदाहू।
परसहु जो निजपदरघुवीरा । तौशुचि अमल होइ सरनीरा॥
प्रभु कह हम क्षत्रिय लघुलोगू। तुमब्राह्मण विज्ञान रत योगू ॥
तुव पद परस अमल नहिं होई। तौ मम परस शुद्ध नहिं सोई॥
तब मुनि बहुरि कही असबाता । बिन परसे प्रभुपद जलजाता ॥

दोहा—पंपासर निर्मल नहीं, ह्वैहै कौनिहुँ भाँति ॥
तातें पगु धारिय अवशि, करिय मुनिन दुखशांति ॥
प्रभु प्रगटी तुवपद ते गंगा। करति त्रिलोक पाप हठि भंगा।
यह पंपा जल केतिकबाता। दिनकर कुल दिनकर अवदाता।
तबहिंदेन निजदास बड़ाई। पंपासर गमने रघुराई ॥
पंपासर जब हिले खरारी। भयो दून शोणित सर वारी ॥
दून परे कृमि अति दुखासा। मुनिनबहुरि प्रभु वचनप्रकाशा
हम तौ प्रथम कही यह बाता। मोतें नहिं ह्वैहै अवदाता ॥
तब मुनि शंकित बचनउचारे। जल पवित्रता पाणि तिहारे ॥
देहु उपाय बताय खरारी। जाते होइ शुद्ध सरवारी ॥
प्रभुकह कथा सुनी असमोरी। सोकहिहौं मानेहु जानिखोरी ॥
प्रथमहिं कोउ पंपासर माहीं। भक्तिरीति जान्यौ कछु नाहीं॥
जब मतंग सुरसदन सिधारे। शबरी बसी आश मम धारे ॥
मज्जनहित इक दिन सरगवनी। मुनिजनहित झारतमगअवनी॥
दोहा—झारत मग कोउ मुनिन तनु,परीअवनि उड़ि धूरि ॥
शबरीका गुणि दोष मन, कियो कोप मुनि भूरि॥१२॥
सो पराइ निज आश्रम आई। ते मुनि जब पंपासर जाई ॥
मज्जनहेतु हिलै जब नीरा। भोजल रुधिर परे बहुकीरा ॥
महा भागवत कर अपराधा।मिटत न कीन्हेहु यतनअगाधा॥
तातें शबरी जो इत आवै। पंपासर अपनो पदनावै ॥
तौ अस जानि परत मुनिराया। होई सपदि सलिल सुखदाया ॥
अस सुनि सबमुनिप्रभुकीवानी। अपनी भूलि सकल विधिजानी
जोरि पाणि बोले इकबारा। क्षमहु नाथ अपराध हमारा ॥
पुनि शबरी समीप सब आई। पगपरितिहि लै गयेलिवाई ॥
शबरी सकुचि सलिल पगडारी। तुरतहिं भो निर्मल सरवारी ॥

यह देख्यो मुनि भक्ति प्रभाऊ। भक्त भेद पुनि कियो न काऊ॥
तप विराग विज्ञानहु योगू। इनते सरस भक्ति रस भोगू॥
दोहा—शवरी सीतानाथको, यह सुनि सुखद प्रसंग॥
जो न करै रति रामपद,सो सति पशु विन शृंग॥१३॥
जब रिपुजीति राम घरआये। राजतिलक लै जन सुखछाये॥
राज्य करत बीते कछुकाला। एक समय तब सभा कृपाला॥
सानुज बैठ रहे सुख छाई। गुरुवशिष्ठकी भई अवाई॥
सादर सानुज उठि शिरनाये। कनकसिंहासन पर बैठाये॥
तब वशिष्ठ यह बात चलाई। तुव पदप्रीति सकल सुखदाई॥
प्रीतिरीति सोइभरतविज्ञाता। असद्वितीय मम दृग न दिखाता॥
जस तुव प्रीति भरत निरवाही। तस जो होइ कहहु तुम ताही॥
नाथ कह्यौ तब जो गुरुभाखौ। सो अपने मनहीं महँ राखौ॥
यहि अवसर यह कहतप्रसंगू। होइहि अवशि सभा रसभंगू॥
सुनिअतिअचरजमानि मुनीशा। कह्यो बहुरि भाषहु जगदीशा॥
यह सुनतै शवरी सुधि आई। प्रेम मगन ह्वैगे रघुराई॥
रोमन प्रति सुप्रीति रसधारा। निकसी जनु जल यंत्र हजारा॥
दोहा—शिथिल अंग सब ह्वै गये, छूटि गयो तनुभान।
मुरछि सिंहासन ते गिरे, रामभानु कुलभान॥१४॥
प्रभुकी दशा देखि दरबारी। उठे विकल तनु सुरति बिसारी॥
कोऊ विजन डोलावन लागे। कोउ सींचे जल अति अनुरागे॥
कोउ कर पद मींजहिं करदोऊ। यह प्रसंग जानै नहिं कोऊ॥
गुरु वशिष्ठ तब अंक उठाई। चिंतन लगे रूप रघुराई॥
भरत मृदुल लै पाणि अँगोछी। चिंतत बार बार मुखपोंछी॥
घरी द्वैक महँ रघुकुलराऊ। भये फेरि जसरह्यो स्वभाऊ॥
तब मुनि कह प्रभुकारण कहहू। जो मोको प्रिय जानत अहहू॥

प्रभु कह प्रीति रीति तुम पूँछी । त्रिभुवन सृष्टि परी लखि छूँछी
पूँछत प्रीति शबरि सुधिआई । सो सुधि होत शिथिलताछाई॥
कहि नसक्यो शबरी करनामा॥ प्रीति रीति नहिं दूसर ठामा॥
जो अब तासु कथा चलवैहौ । तौ मुनिनाथ बहुरि पछितैहौ ॥
अस सुनि रामवचन मुनिराई । अति अचरज गुणि रहे चुपाई

दोहा-भरतादिक भ्राता सबै, औरहु सकल समाज ।
लगे प्रशंसा करन धनि, शबरी धनि रघुराज ॥१९॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ जटायूकी कथा ॥

दोहा-गृध्रराजकी अब कहौं, कथा भक्त चित चोर ॥
जो संगरकरि तनु तज्यौ, सीताराम निहोर ॥ १ ॥

कवित्त-मारिचको मायामृग विरचि पठाइ दूरि दोऊ बंधु करवाइ रूपको छिपायकै॥जानकी हरचो सो जानहीके जान दे-नहेत कीन्ह्यों गौन आसमान वेगको बढ़ायकै ॥ रघुराज राम राम लषण लषण मोहिं लखन न पायौ हरचो राक्षश सिधायकै॥बैठ्यो गिरिकंदरके अंदरमें मंदरसों गृध्रराज कानमें अवाज परी जाइकै॥

दंडक-उठ्यो चटचौंकि चहुँ वोर चितवन लग्यो चित्तचिंता चुभी चैन चैचोरिगो ॥ आज यहि ठाम सुखधाम श्रीरामकी वामको बोल आरत हृदय फोरिगो ॥ घट्यो केहि ज्ञान महिमान जम कोनभो कौनके घाट घट घोर विष घोरिगो ॥ करत सुविचार खग महा विकरार धरणी धराकार दुर्धर्ष नभ धोरिगो ॥ २ ॥ निरखि रावण भयावन अपावन महा जानकी हरण करि चलो शठ जात है ॥ भन्यो अतिकोप करि हत-

नकी चोपकरि लोपकरि धर्म अब क्यों नठहरात है॥जानि थल सून नृप सून रमणी हरी करी करणी कठिन अबन बचि-जात है ॥ अनल गहि आय चाहसि नज़रि जाय कुल अब न कोउ शरण तोहिं मरण नगिचात है॥३॥धर्मको मित्र रघुवंशको मित्र पुनि रामको मित्र तोहिं हतन त्रैनात है ॥वृद्ध मोहिं जानि नहिं कानि लंकेशकरि जानकी जान रिपुजाय जनि घात है ॥ क्षुधा चिरकाल ते मिलो भखहालते पक्षि विकरालते तोरि तव गात है ॥ सीय रघुभानको तृप्ति तिमि जानको किर्त्ति कुल-भानको देहु अवदात है ॥ ४ ॥ परम खर वचन शर प्रहरिखर अग्रजहि प्रहरतेहि रभसवर धारि पर चरणपर ॥ गगन चर प्र-वर सहि अधरधर शरनिकर नखर भर मारि तुरदिशा शिर शि-रनपर ॥ समरकरि जवर खर संग चर प्राणहरि धनुप शरसुस रथर तोरि रथ तर उपर ॥ सुमिरि रघुवर विवर अंबरहिं प्रवरपर भरयो जस अमरवर निकर फर फरसपर ॥ ५ ॥ रथ चरनख-रन अनुचरन संवरन लखिचरन अरुकर विदीरन रुधिर विक्ष रन ॥ अंबरन आभरण परन तिमिधरणि रण शरन संदरन खग लरन मह निजमरन ॥ शरण हरिचरण गुणि समर सागर तरण तरणिसम तेगकरि करन अरि भै भरन ॥ करत विचरन रणाजिर अरिसुरन रन सरिस भूधरण युग दल्यो खग बरपरन ॥ ६ ॥

सोरठा—हरकरवाल प्रभाव, गृध्रराजबिनपरभयो ।
ऐसहिसंतस्वभाव, मर्यादा राखतसदा ॥

दोहा—गिरतगीधगिरिपैकह्यो,रामरामरघुराज ।
पायगयो मैं जन्मफल, लगेप्राणप्रभुकाज ॥ २ ॥

दंडक—देव दुख भोनयो शोच सिय शशि उयो भानु पाँडु रठयो असुर गण अतिचयो ॥ कीश सुख बियबयो निरतिकुलसुख नयो भानुकुल यश जयो मुनिन मुखहूं तयो ॥ विश्व अचरज छयो काल बढयो रयो सिंधु शंका मयो द्विजन जप तपगयो ॥ कहै रघुराज यो धनुष लक्षण लयो राम परगति दयो गीध उतरिन भयो ॥ ७ ॥

सवैया—मारि मरीचहि आये कुटी प्रभु सूनी विलोकि भये सुख सूने ॥ वृक्ष कुरंग विहंग नदी बन पूंछत जानकी जोही कहूँने ॥ श्रीरघुराज कछू चलि आगे महा अनुरागे प्रियाते वि-हूँने॥गीधको देखि दयानिधि दोऊ दमारि दहेसे दहे दुखदूने १॥ गृहवास विनाशत्यो नाश पिता बिछुरी सिय शोकमें नाहि हटे॥ पितुसों प्रियप्राणनसों रघुराज विहंग विषादमें जैसे सटे ॥ हग ढारत बारहिं बारहिं बारि निहारि बखाने दुखी निपटे ॥ द्रुत देखत नाथ दयानिधि दूरिते दौरिके गीध गरे लपटे ॥ २ ॥ बाण उखारत आपने हाथ विहंगके अंगनके तृण टारत॥बारहिं बार निहारत घाउ बहारत शोणितधार नआरत॥ढारत आँसु उचारत हाय शरीरमें फेर नपाणि पसारत ॥ श्रीरघुराज गरीब निवाज जटायुकी धूरि जटानिसों झारत ॥ ३ ॥ घनाक्षरी ॥ प्रभु पद पंकज विलोकिकै विहंग वर मेदनीमें माथ धैके वचन कह्यो भलो ॥ नाथ मिथिलेश जाको पंचवटी आइ दुष्ट लंकापति रा-वण हरयोहै करिकै छलो ॥ जानकी पुकार सुनि धायो मैं गिरायो ताहि शम्भु. करवाल लैके उभै पखको दलो ॥ आशु मेरे जानकी त्यों नाश निज जानकी त्यों जानकीको लैके दिशि दक्षिण गयो चलो ॥ ८ ॥

दोहा—कहु कहु कछु प्रभुमुख भन्यो, खग कह रहु रहु राम ।
चितदै श्यामशरीरमहँ, गीधगयो परधाम ॥ ३ ॥

मृतक गीध तनु राम विलोकी । रुदन करन लागे अतिशोकी॥
दशरथ मरण भयो दुख आजू । मोहिं तजि अनत गयोखगराजू॥
करि विषाद इमि तहँ दोउभाई । अपने हाथन लियो उठाई ॥
गोदावरी तीर लै जाई । ईंधन बिनि तहँ चिता बनाई ॥
निजकर अगिनितासु मुखदीन्ह्यो।पुनि सरितामहँमज्जनकीन्ह्यो ॥
लैकर जल प्रभु वचन उचारो। जो खगपरसाति नेह हमारो ॥
तौ यह गीध योगि गति जोई । अरु जो किये विराग बड़ोई ॥
अरु जो ज्ञानवान गति पावै । भक्तिमान जिहि धामसिधावै॥
शूरसमर तनु तजि जहँ जाहीं । कीन्हे यजन याग जपकाहीं ॥
अरु जहँ जात मोर अनुरागी । तहँ गवनै विहंग बड़भागी ॥
संचित सुकृत होइ मम जोई । तो ममवचन सत्य हठिहोई ॥
असकहि पुनि प्रभु कियोविचारा। यह लघुलागत प्रतिउपकारा॥

दोहा—दियोतिलांजलिभाषिअस, गीधहिंरघुकुलराज ।
कोरघुनायकसरिसहै, दुतीगरीबनिवाज ॥ ४ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथ जनककी कथा ॥

दोहा—अबवर्णौंमिथलेशकी, कथा सुंदरी सोय ।
जेहिं सुनिकै दासनहिये, दृढविश्वासहठि होय ॥१ ॥

प्रथम भये तेहि कुल निमिभूपा। ज्ञानमान यशमान अनूपा ॥
नवयोगेश्वर तेहि गृह आये । देखत नृप तुरतहिं उठिधाये॥
सादर सदन आनि पगधोई । बैठायो आसन मुदमोई ॥

करनलग्यो नृप प्रश्न अनेका । ज्ञान गिराग सुभक्ति विवेका ॥
अशन पानि आदिक जगकाजू । भूलिगये सिगरे निमिराजू ॥
जबलो जीवनरह्यो नरेशा । तबलग लह्यो न जगत कलेशा॥
भये जे तेहिकुल भूप सुजाना । महाभागवत धर्मप्रमाना ॥
मैथिल जनकहु और विदेहू । भये नाम सबके हरिनेहू ॥
भये सीरध्वज पुनि कुल तेही । महाभागवत रामसनेही ॥
तिहिगृह लियो रमा अवतारा । सीता नाम संतआधारा ॥
तिहि ब्याहनहित रघुपति आये । धनुषभंजि सबको सुखछाये ॥
कथा सकल संतन सुखदाई । वाल्मीकि तुलसी सब गाई ॥

दोहा—मैं वर्ण्योंनहिंयाहितें, रामव्याह विस्तार ।
और कथा कछु कहतहौं, मैथिलकी सुखसार ॥ २ ॥

जनकराज किय राजमहाई । पाल्यो प्रजनसधर्म सदाई ॥
अंतकाल सीरध्वज भूपा । चल्यो विष्णुपुर परम अनूपा॥
पार्षदचारि चतुर नृप संगा । भूरि विभूषण भूषितअंगा ॥
यमपुरह्वै जब कढ्यो विमाना । करत प्रकाशितदशोंदिशाना॥
अहैं अनेकन नरक महाना । भोगहिं पापी तहँ दुखनाना ॥
देहिं दंड यमदूत कठोरा । चीतकार मचिरह्यो अथोरा ॥
गयो विमान बरोबर तबहीं । चीतकार मिटिगो कछुजबहीं॥
चीतकार सुनि प्रथम नरेशा । भयो बंद तब गुणि अंदेशा ॥
पूँछ्यो हरिपार्षदन नरेशा । कौन लोक यह कहहु सुरेशा॥
चीतकार कस होत अपारा । कौनहेतु मिटिगो यहिबारा ॥
बोलेविष्णुदास यह बानी । यहयमलोक लेहु नृप जानी ॥
देहिं दंडयमके भट घोरा । करहि नारकी आरत शोरा ॥

दोहा—आप अंगके पवनको, नेक परसको पाय ।
सकल नारकीजीवये, लहिसुख गये जुड़ाय ॥ ३ ॥

देखि नारकिन दशादुखारी। नृपके उर करुणाभय भारी॥
नयनवारि ढारत विज्ञानी। बोल्यो हरिदूतनसों बानी॥
जो मम अंग पवन कहँ पाई। सबै नारकी गये जुड़ाई॥
तौ हम यमपुर रहब हमेशा। नाहिं जैहैं अब विष्णु निवेशा॥
इनकी बादि हम सहब यातना। हरिपार्षद अब आन बातना॥
जेहि लोकहि हमको लैजाऊ। तहँनिरई जीवन पहुँचाऊ॥
रोकहु मम विमान हरिप्यारे। असकहितहँते नृप न सिधारे॥
शोरमच्यो यमनगर मझारी। सुनत भयो यमराज दुखारी॥
गयो महीप समीप तुरंता। कह्योवचनयहि विधि मतिवंता
आपनिवास योग थल नाहीं। जइये जनक जनार्दन पाहीं॥
कह्यो जनक रहि हैं हम इतहीं। जाहि नारकी हैं हरि जितहीं॥
देखिनारकिन अति दुखछाये। मोरचरणनाहिं चलत चलाये॥

दोहा—तब बोल्यो यम जोरि कर, तुमतो हौ हरिदास।
बाँधी हरि मर्यादसों, उचित न करब विनास॥ ४॥

जो तुम इत रहिहौ मिथिलेशा। होई यमपुर झूठ हमेशा॥
तुम इन जीवन पर किय दाया। ताते नृप अस करहु उपाया॥
प्रातकाल उठिकै नृपराई। कहत रहे मुखराम सदाई॥
फल इक बार उचारण केरो। इन उधारको अहै घनेरो॥
पाणि पानि कुशलै नृपदेहू। जाहि नारकी हठि हरिगेहू॥
यहिविधि नृप दोउ विधि सधिजाई।तरहिं जीव नाहिं नरक नशाई॥
सुनि यमवचन मुदित मिथिलेशा। लै कुशपाणिपानि तेहिंदेशा॥
रामउचार बार यक केरो। दीन्ह्यो फल जो कह्यो सवेरो॥
तुरतहि हरिपुरते विधि नाना। आये कोटिन वृहत विमाना॥
सबैनारकी दिव्य स्वरूपा। धारि धारि चढ़े विमान अनूपा॥
जय जय कहत जनककीसगरे। केशव नगर डगर महँ डगरे॥

निज-आगू सब जीव चलाई। चले जनक सुमिरतरघुराई ॥
दोहा–यहिविधि जीव उधार करि,गयो विष्णुपुर राउ ॥
नरक सून भौ काल तेहि, रामनाम परभाउ ॥ ६ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथ विश्वामित्रकी कथा ॥

दोहा–गाधि परम भागवतभो, ह्वैप्रसन्न हरिजाहि ॥
कौशिक सो सुत देतभे, मिले राम हठि ताहि ॥ १ ॥
इति त्रेताखंडे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अथ रघुराजाकी कथा ॥

दोहा–गाथा रघुमहराजकी, मैं वर्णौं चितलाइ।
द्विजको सर्वस दानदे,बस्यो विष्णुपुर जाइ ॥ १ ॥
भयो भूमि महँ रघु महिपाला। रहे डिराय ताहि दिगपाला ॥
नवोखंडमें तासु प्रभाऊ। तेहि वश सब महिके महिराऊ॥
महाचक्रवर्ती रिपु जेता। नित नित परमारथ कृत नेता॥
कियो भुवाल काल बहुराजू। येकसमय तहँ यक द्विजराजू ॥
आयो अंतहपुरके द्वारा। यकचेरी कोउ ताहि निहारा ॥
कह्यो तुरत रानीसों जाई। एक अतिथि आयो द्विजराई ॥
रानी तुरतहि ताहि बुलायो। पूजि सविधिभोजन करवायो॥
द्विजकह कौन सुकृत वशभूपा। लह्यो तोहिंसी नारि अनूपा ॥
रानि कह्यो शिरशिवहिचढ़ायो। तब यहिजन्म मोहिं नृपपायो॥
द्विजकह शिवहि शीश हौंदैहौं। जाते तोहिंसम नारी पैहौं ॥
असकहि विप्रगह्यो पथकासी। आइगये तहँ रघुमतिराशी ॥
कह्योद्विजाहिकस जाहु रिसाई। तबद्विजसगरी दशा सुनाई ॥

दोहा–भूप कह्यो लघुकाज हित, शीश चढ़ावहु नाहिं।
यह नारी तुम लेहु प्रभु,धन्य करो मोहिंकाहिं ॥ २॥
द्विजकह काकरिहौं लैनारी। हौं गरीब नहिं रोजअहारी॥
रघुकह सत्य कह्यो महिदेवा। कोकरिहै दंपतिकी सेवा॥
राजकोश लीजे सब मेरो। तब पूरण ह्वैहै सुखतेरो॥
असकहि दै द्विज कोशहुराजू। निकस चल्यो गृहते महराजू॥
बस्यो विपिनयक तरुतरजाई। बसे विहंग तहाँ युग आई॥
इंद्रसभाते यकफल ल्याये। रघुहिं निरखि पक्षी नहिं खाये॥
रघुहिं दियो रघु कह यहकाहै। तब विहंग बोले नरनाहै॥
भोजन करै जो यह फल कोई। तुरतहि वृद्ध युवा तनुहोई॥
रघु मन गुण्यो न लायक मेरे। यह फलअहै योग द्विजकेरे॥
वृद्ध विप्र पायो तिय राजू। भोगिहैभोग युवासुखसाजू॥
असगुणिलौटि नगर नृप आये। द्विजहिं दियोफलफलहुसुनाये॥
गुण्योविप्र नृपछल यह कीन्हो। राजनारिहित विषमोहिं दीन्हो

दोहा–असविचार करि विप्र फल,दियो पंथमहँ डारि॥
रंक कोऊ रोगी रह्यो, सो फल गह्यो निहारि ॥३॥
क्षुधा विवशखायो फल काहीं। भयो तरुण ताही क्षण माहीं॥
फलप्रभाव लखिद्विजपछिताना। कीन महीप समीप पयाना॥
कह्यो महीपहिकी फल देहू। नातरु भूप जीव मम लेहू॥
भूपकह्यो धीरज उर धरहू। हम फल देब शंक जन करहू॥
असकहि सोइ तरुतर नृपजाई। बसे विप्रकारज मनलाई॥
आये निशाविहँग जब दोई। नृपकह फल दीजै पुनि सोई॥
नभचर कह्यो इंद्र दरबारा। हम पायो फल भूप उदारा॥
तब नृप कह इंद्रहिं पहँ जाई। अवशिदेब विप्रहि फल ल्याई॥
असकहि गये इंद्र दरबारा। लखिसुरेशकीन्हो सतकारा॥

माँग्यो फल तब शक्र सुनायो । सोफल हम ब्रह्मापहँ पायो ॥
ब्रह्मसभा गे भूप तुरंता । कहे हवाल आदि अरु अंता ॥
विधिकह हम हरिपहँ फलपायो । रघु भूपति हरि पुरहिं सिधायो
दोहा–आवत लखि रघु नृपतिको,करि आदर भगवान ।
निकट ताहि बैठाइ कह, कीन्हे कहाँ पयान ॥ ४ ॥
दियो भूप वृत्तांत सुनाई । रमानाथ बोले मुसकाई ॥
तेरे बाग केर फल सोई । फिरहु भूप तुम खोजत जोई ॥
तादृश बहुत फरे फल बागा । खाहु बसहु इत नृप बड़भागा॥
नृपकह विप्र हेतु हम चाहैं । और काज मेरे कछु नाहैं ॥
हरि कह नरक पर्‌यो द्विजसोई। द्विज ह्वै राजगृहन किय जोई॥
यह सुनि भूपहिं भयो विषादा । हरिसो कह ममभो अपवादा॥
करहु जो प्रभु मोपर अनुरागा। द्विजहिं बुलाइ देहु यह बागा॥
भे प्रसन्न प्रभु सुनि रघुवानी । कह्योन नरकपरी द्विजमानी ॥
करहुराज्य तुम आपन जाई । ममपुर बसी आइ द्विजराई ॥
हरि अनुशाशन मानि नरेशा । आयो लौटि आपने देशा ॥
सो द्विज तुरतहिं हरिपुर गयऊ। राजा राज्य करत निज भयऊ॥
बहुत काल महँ तनु तजि राऊ। गये कृष्ण पुर भरे उराऊ ॥
दोहा–पर उपकारी दानि हूँ, रघुसम भयो न कोइ ।
जासु वंशमें अवतरे, रघुपति श्रीपति सोइ ॥ ५ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अथ दिलीपराजाकी कथा ॥

दोहा–महा महीप दिलीपभो, सप्त द्वीप किय राज ।
एक बार रावण तहाँ, आयो रणके काज ॥ १ ॥
पूजन करत रह्यो नृप जहँवाँ । विप्र रूप धर आयो तहँवाँ ॥
पूजन करि यक कुशकर लैकै । फेंक्यो दिशि दक्षिण जल छैकै

तब रावण करिकै संदेहू। पूछेहु नृपहिं देखावत नेहू ॥
कह्यो दिलीप धेनु वन माहीं। चरतरही नाहर तिन काहीं ॥
धरनलग्यो तिनहित मैं बाना। फेंक्यो करिकै मंत्रविधाना ॥
बाण वाघहनि धेनु बचाई। कहुँ यक लंका है तहँ जाई ॥
तहँ इक द्विज रावण अस नामा। पावक दिय लगाइ तेहिधामा ॥
तिहि बापुरो भवन जरिजैहै। मम फेंको जल पाइ बुझैहै ॥
यह सुनि रावणकरि अतिसंका। देख्यो जाइ धेनु अरु लंका ॥
यथा दिलीप कह्यो तस देख्यो। अपने मन अचरज अति लेख्यो
पुनि न बहुरि संगरहित आयो। नृपहिं मनाहिं मन सदा डरायो
ऐसो भो दिलीप महाराजा। त्रिभुवन महँ यश जासु दराजा

दोहा—गंगा आनन हेतु नृप, जानि लोक उपकार।
करि तप कानन तनुतज्यो, कोविय असवडवार ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अथ निषादकी कथा ॥

दोहा—अतिशयकरि अहलादमम, गहनिषादकी गाथ।
करौं तासु मैं वादशुचि, चरण सुमिरि सियनाथ ॥ १ ॥

घनाक्षरी—पितुको वचन पालिवेके हेतु दयानिधि ऐश्वरज इंद्र कैसो तृणसों विहाइकै ॥ संगलै लषण सीता परमपुनीता देवसरिता उतरिवेकी आश चितलायकै ॥ छलिपुरवासिनको आये शृंगवेरपुर खबरि निषादराजै कोऊ कही जाइकै ॥ डूबि दुख सिंधु दह्यो कोप बड़वानलसों प्रेमसों उमँगि सियराइ आयो धायकै ॥ १ ॥

सवैया—आयो निषादको नायक नेसुक दूरिते नाथनिहारि तुराई॥
आसु उठे असुवानिको ढारत भाख्यो सिया लषणैमुसक्याई ॥

देखो सखा रघुराज हमारी सिकार खिलाय जो संग सदाई ॥
यौंकहि सो नपरै पगपायो लियो गुहको गरे माहिं लगाई ॥२॥
जाको सदा शिव धारत ध्यान सदा शिवहेतु सुमानस आनी ॥
ब्रह्म विलोकिबेको नित चाहत ब्रह्म बखानत नेतिको ठानी ॥
सिद्ध मुनींद्र तपै तप जाहित कोटिन कल्प न जानत ज्ञानी ॥
सो रघुराज भुजा गलमेलि मिलेगुहसों बिसरी विलगानी ॥३॥
नेसुक सो निजदेह सँभारि कह्यो कछु कोपितहौं नहिं काँचो ॥
धारिये पाँव धरै अब काल सबै तब शत्रुन शीश पै नाँचो ॥
संपति साहिबी सैन सबै मम देहऊ गेहऊ रावरे पाँचो ॥
जो अभिषेक कराऊँ न आजु तौ मैं रघुराज सखा नहिं साँचो॥४॥
जानि सखाकी अलौकिक प्रीति बुझाइ लेवाइकै संग सिधारे ॥
देवनदी तट आइ कह्यो सखा आनिकै नाव उतारहु पारे ॥
नाव मँगाइको पार उतारै बहे सुनि नैननि नीर पनारे ॥
भूमि गिरयो मुरझाय कह्यो मुख हासियनाथ बनै पगुधारे॥५॥
रामरजाइ विचारिकै केवट कोई तहाँ तरणी इक आनी ॥
तापर नाथ अरोहन चाहे कह्यो तब सो युग जोरिकै पानी ॥
ठाढ़े रहौ सुनि लेहु कछू मैं सुनी अस आपने कान कहानी ॥
रांवरे पाँयनकी रज राज करै महिपाहन ते ऋषि रानी ॥ ६ ॥
जों अस होइ कहूँ इतहूँ तौ कहौ पुनि क्यौं परिवार जिआइहौं॥
रावरेकी करनीको बखानि कहाँ तरणी तरुणीको पठाइहौं ॥
ताते कहौं रघुराज मैं साँची बिनापग धोये न नाव चढ़ायहौं ॥
जानिकै जाहिर ऐसी दशा रोजिगार नधूरिते धूरि कराइहौं॥७॥
युक्ति सुनै सुनि केवट बैन सखागुह संग प्रभाव विचारी ॥
ताकर पाँयनकोप खराइ तरे प्रभु गंग सहानुज नारी ॥
संग सखाहू गयो तहँलौं रघुराज मिले अस बैन उचारी ॥

लक्षणपै जोहै प्रीति हमारी से देहुँ सखा उतराइ निहारी ॥ ८ ॥
घनाक्षरी–करिकै निषाद विदा विनहि विषाद राम शृंगवेर पुर ते पयान जब कीनोहै ॥ ताक्षणते और रूप देखिहौं न प्रणकरि पट्टी निज आँखिनमें गुह बाँधि लीनोहै ॥ काननते आये रघुराज सुख पाये देखि हिये मे लगाये परशंसि मोद दीनोहै ॥ गुह सों न आन भक्त रसिक जहान भयो भक्ति रस सागरमें जासु मन मीनोहै ॥ ९ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अथ भरद्वाजमुनीकी कथा ॥

दोहा–भरद्वाज मुनिकी कथा, कथन करौं कथनीय ॥
आपुहिते चलिकै मिले, राम लषण युतसीय ॥ १ ॥

घनाक्षरी-जानि भरद्वाज अभिलाष लाख लखिबेकी आयगे प्रयाग प्रभु गंगाको उतरिकै ॥ नवोद्वार बंदकरि साधिकै समाधि बैठ्यो देखत द्विभुज रूप ध्यान उरधरिकै ॥ प्रणताकियेहूँ परभान नहिं ताको भयो कीन्हो रघुराज कला मोद उर भरिकै ॥ करिलीन्हो अंतर्हित अंतरको रूप तासु चौंकि उठ्यो चितयो सुचित्त चिंता करिकै ॥ १ ॥ देखत रह्यो है जैसो रूप उर पंकजमें सुंदर स्वरूप सोई सोहे सांवरो खड़ो ॥ लोचन सुनेकु लाल बाहु त्यों विशाल युत कटि करवाल जटा जूट शिरपै मड़ो ॥ रघुराज राजत निषंग दोऊ कंधनपै येक करकंड त्यौं कोदंड येक पै जड़ो ॥ बड़ोहै विरद वारो विश्वको उधार वारो अवध अधीश को दुलारो दानिया बड़ो ॥ २ ॥ चीन्हि निजनाथ भूमि माथ धरि जोरि हाथ कह्यो धनि आज मोहिं धरणि बनायोहै ॥ जान

की लषणयुत भान कीन्हो मेरो प्रभु मेरे नाहिं मानकी जो मोह-
ग देखायोहै ॥ रघुराज रावरेको बहुत न ऐसो कछु नेति नेति
कहत विरदवेद गायोहै ॥ दीनको दयालु दूजो कौनहै दुनीमें
ऐसो दीननके हेतु आपुहीते चलि आयोहै ॥ ३ ॥

सोरठा—यह विनती प्रभु मोरि, देहु दयानिधि दानिहुत ॥
मेरे हियको चोरि, मेरे हियमें नित बसो ॥ ४ ॥
जो माँग्यो मुनिराइ, दानि शिरोमणि अवधपति ॥
सो दीन्हो अधिकाइ, लषण जानकी ते सहित॥५॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अथ वाल्मीकिकी कथा ॥

दोहा—वाल्मीकिकी अब कथा, कहौं ठीक अरु नीक ॥
रामनामको जाहि में, हैमहात्म्य रमणीक ॥ १ ॥

मित्रा वरुण येक मुनिराई। कीन्हो महाविपिन तप जाई ॥
महाकठिन तपलखि सुरभूपा। पठयो तहँ अप्सरा अनूपा ॥
निरखिताहि मुनि कंपित गाता। ह्वैगो तहँ रेतको पाता ॥
विघ्न जानि औरे बनजाई। करनलगे तप अति मनलाई ॥
महातेज तिहि रेत निहारी। लैउर्वशी कुंभ महँ डारी ॥
ताहि कुंभ ते द्वैमुनि जाये। नाम अगस्त्य वशिष्ठकहाये ॥
रेत शेष रहिगो कुशमाहीं। ताते यक शिशु भयो तहाँहीं॥
ताहि किरातिनि लै घरआई। अपनी विद्या सकल पढ़ाई ॥
हिंसा चोरी करन प्रवीना। भयो बाल पातकमहँ लीना ॥
कियो विवाह जानिनहिं चीन्ही। यकपथकेरि लूट तिहि दीन्ही॥
तिहि थल लगि पंथिन कहँ लूटै। लहै जो धननाहिं तौतिन कूटै॥
यहि विधि कियो बहुत दिनघाता।यमकागजातिहिअघनसमाता॥

दोहा—तेहि मारगह्वै यक समय, कढे सप्तऋषि आइ।
तिनकेमारन हेतुसों, गयो तुरंतहि धाइ॥ १॥

कह्यो देहु जो होइ तिहारे। नातो सबै जाहुगे मारे॥
तब सप्तर्षि कह्यो हँसि बानी। यह किरात भलबात बखानी॥
हैलूटे मारे अतिपापा। लहत लोक यमघर संतापा॥
सो यमकी नहिं राखहु भीती। मारग लागि करहु अनरीती॥
बात किरात बहोरि बखानी। यहि उद्यम जीवहि मम प्रानी॥
जो नहिं मारि वित्त लैजैहैं। क्षुधा विवश बालक दुख पैहैं॥
तब पुनि मुनि असगिरा सुनाई। पूँछु किरात बात घरजाई॥
जो करि पाप वित्त हमल्यावैं। तुमको सबको बाँटि खवाँवैं॥
तौन पाप कर यमघरमाहीं। होइहि दंड अवशि हम काहीं॥
ताके तुम भागी कीनाहीं। देहु बताइ ठीक हम पाहीं॥
अस पूछो घरजाइ किराता। कहैं जो घरके ऐसी बाता॥
बांटिलेव यमदंड तिहारो। तौ तुम पापहेतु धनुधारो॥

दोहा—जो कुलके यमदंडमें, भागीहोइ नकोइ।
तौ कत कीजत पाप हठि, घोर दंड जिहि होइ॥ २॥

सुनि मुनिबात किरात सिधारी। पूछ्यो बोलि भ्रात सुत नारी॥
जो यम दंड हमैं उत होई। ताके तुम भागी सब कोई॥
सुत तिय उत्तर दियो प्रचंडा। हम नहोब भागी यमदंडा॥
पाप पुण्य नहिं हेतु हमारा। तुम ल्यावहु सो करहिं अहारा॥
सुनि कुटुंबके वचन किराता। मुनिसमीपगो सोच अघाता॥
कह्यो कुटुंबकथित सबबानी। मुनिकह तुमहिं लेहु अबजानी॥
धनभागी कुल नहिं अघभागी। तिनहित अवकरिबो पथलागी॥
तुमहि किरातनउचितसुजाना। करहु उपाय मिलहि निरवाना॥
सुनत सप्तऋषि वचन प्रमाना। भयो किरातहिं तुरत विज्ञाना॥

त्राहि त्राहि कर गिरो चरणमें । तुम समरथ संसार हरणमें ॥
दयालागि मुनि कह्यो उपाई । मरा मरा जपियो रटलाई ॥
मम आगम प्रयंत इत खपियो। मरा मरा निशि वासर जपियो॥
दोहा—असकहिगे सप्तर्षिजब, बैठो तहाँ किरात ।
मरा मरा निशि दिन रटत, भो बमोट तेहिगात॥३॥
बहुत काल बीते मुनि आये । खोजे ताहि कहौं नहिं पाये ॥
योग दृष्टिकरि जब मुनि देखे । लगी बमौट तासु तनु पेखे ॥
तब तेहि निज हाथनते खींची । तुरत कमंडलु ते जल सींची॥
तासु शरीर पुष्ट अति कीनो । वाल्मीकि अस नामहिं दीनो॥
कीन्हो राममंत्र उपदेशा । भजन करन कहँ दियो निदेशा
सो तमसासरिता तट आई । तपकरि दिय बहु कालबिताई॥
येक समय नारद तहँ आये। मुनि आदर करि तिहिंबैठाये॥
कह्यो जोरिकर सुनहु ऋषीसा । तुमहि कौन सब ते बड़ दीसा॥
को यह लोक माहिं यहि काला । तेजवान गुणवान विशाला ॥
शील समुद्र विश्व हितकारी । को समर्थ विद्या वरधारी ॥
इंद्रियजित प्रिय दर्शन कोहै । को विजयी दारुण जग कोहै॥
प्रभावंतको द्वेष विहीना ।केहि रणमहँ सुर डरत बलीना॥
दोहा—ऐसो जन जो होइ जग, तासु सुननकी चाह ।
सो जन जानन योग तुम, वर्णन करु मुनिनाह ॥४॥
वाल्मीकिके वचन सुहाये । सुनि नारद मुनि हर्षित गाये॥
ये सब गुण दुर्लभ जगमाहीं । पै हम कहैं बसैं जिहिं पाहीं ॥
नृप इक्ष्वाकु वंश अभिरामा । भाषत लोग नाम जेहि रामा ॥
आतमजित विक्रम अतिभारी । तेजमान सम कोटि तमारी ॥
इंद्रियजित वरबुद्धि विधाता । महाचतुर अरु नीति विज्ञाता॥
समर शत्रु सूदन कर तारा ।जिहि छवि विजित अनंग अपारा॥

वृषभ कंध युग बाहु विशाला। कंबु कंठ हनु सुभग सुभाला॥
उर आयत कर चाप महाना। जत्रुअंग अतिपुष्ट बखाना॥
अनघपीन भुज शशि सम आनन। विक्रममें मानहु पंचानन॥
सबमें सम समसुंदर अंगा। निविड़ नील नीरद तनुरंगा॥
पृथुल वक्ष तिमि अक्ष विशाला। महाप्रतापवान सब काला॥
लक्ष्मीवान धर्मधुर धारी। सत्यसिंधु परजन हितकारी॥

दोहा–महायशी विज्ञान युत, भक्तनके परतंत्र।
सदाचार धारक सदा, दिनकर वंश स्वतंत्र॥ ५॥

बिन रिपु जिते न लौटन हारो। सब संसारहिं प्राणन प्यारो॥
विधि समान जग पोषक सोई। जिहि सम दयावान नहिं कोई॥
एकविश्वको रक्षण कर्ता। धर्म पवर्तक को इक भर्ता॥
महि अधर्म हर धर्म प्रचारी। सुहृद सुजन सेवक हितकारी॥
वेद वेदाँग तत्त्वको ज्ञाता। धीर धनुर्धर धरणि विख्याता॥
सर्व शास्त्रको जानन वारो। सभाचतुर श्रुत धर्मति वारो॥
सब जीवन प्रिय तिहिं प्रिय जीवा।अति अदीन दीनन प्रिय सीवा॥
परमसाधु सब बात विचक्षण। वसे ताहि महँ सकल सुलक्षण॥
सदा समीपी साधु समाजा।जिमि सरिता गण युतसरिराजा॥
सबते कोमल बोलत वाणी। सबको जानत जनु निज प्राणी॥
रूपरिपुहु कहँ रुचित निहारी। तौ मित्रनका कहिय विचारी॥
श्रीकौशल्या उदर सिंधु शसि। सब गुण रहे ताहि तनमें बसि॥

दोहा–सिंधु सरिस गंभीरता, धीरज सम हिमवान।
चंद्र सरिस अहलाद कर, विक्रम विष्णु समान॥६॥

कालानल सम क्रोध कराला। क्षमाक्षमासम जासु विशाला॥
धनद लजत लखि जिहिं धनदाना। सत्य वचन महँ धर्म समाना॥
सो नृप दशरथ जेठ कुमारा। तिलक करन कर कियो विचारा॥

कैकेयी नृप तीसर रानी। सोपतिसों अस गिरा बखानी॥
दियो पूर्व मोहिं द्वै वरदाना। सो दीजै अब वचन प्रमाना॥
राम जाहिं वन भरतहिं राजू। भयो नृपहि सुनि शोक दराजू॥
दिय वनवास भूप रघुनाथै। चले जानकी लक्ष्मण साथै॥
गंगा उतरि प्रयागहिं आये। चित्रकूट निवसे सुख छाये॥
रामशोक नृप स्वर्ग सिधाये। रामहिं भरत लिवावन आये॥
दैपादुका विदा प्रभु कीन्हो। आप अत्रि कहँ दर्शन दीन्हो॥
हनि विराध सरभंग समीपा। आइमुक्ति दिय रघुकुलदीपा॥
फेरि सुतीक्षण आश्रम आये। पुनि अगस्त्य भ्रातहिं सुख छाये

दोहा—पुनि अगस्त्यको दरशदै, पंचवटी वसिराम।
करि विरूप रावण भगिनि, मारयो खरसंग्राम॥७॥

रावण सुनि मारीच पठायो। रामहिं सो लै दूरिहिं आयो॥
हरयो दशानन जनककुमारी। गीधहिं राम दियो तहँ तारी॥
हतिकबंध शबरी फल खाई। कीन्ही पुनि सुग्रीव मिताई॥
सप्त ताल हनि वालि सँहारयो। मारुत पठै लंक प्रभुजारयो॥
सीता सुधि लहि सागर सेतू। बाँधि तरे कपिकटक समेतू॥
सकुल दशानन समर सँहारी। सीय लषणयुत अवध सिधारी॥
महाराज अभिषेक कराई। राजे राजकरत रघुराई॥
वाल्मीकि सुनि नारद वानी। बार बार मुनिपतिहि बखानी॥
शिष्य सहित पुनि पूजन कीन्हो। नारद तुरत गगनपथ लीन्हो॥
वाल्मीकि पुनि मज्जन हेतू। तमसा तीर गये मतिसेतू॥
तासु शिष्य भरद्वाजहि नामा। तेहिलखिनिकटकह्योमतिधामा॥
पंक रहित यह घाटसुहावन। भरद्वाज मन मुद उपजावन॥

दोहा—सज्जन चित्त प्रसन्नकर, अतिरमणीय सुनीर।
कपटरहित जिमि पुरुषकर, मनहारक हियपीर॥८॥

धरहु कलश वल्कल मम देहू। द्रुत मज्जनहित कह्यो सनेहू ॥
भरद्वाज वल्कल तब दीन्हो। लै वल्कल विचरनमुनिकीन्हो॥
तहँ विचरत वनमहँ मुनिराई। युगलकरंकुल परे दिखाई॥
कामातुर आनँद रसभीने। आयो वधिक येक धनु लीने॥
हन्यो विहंगहि सो जियघाती। बची विहंगी अति विलखाती॥
वाल्मीकि खगघात निहारी। दयाविवशअस गिराउचारी॥
अरे वधिक बहुकाल प्रयंता। लहै प्रतिष्ठा नाहिं अघवंता॥
क्रौंच काम मोहित ते मारयो। धर्म अधर्म न कछू विचारयो॥
भनत कह्यो अश्लोक अतूला। सकल छंद रचनाकर मूला॥

श्लोक- मानिषादप्रतिष्ठान्त्वमगमःशाश्वतीःसमाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीःकाममोहितम्॥ इति॥

यहकहि पुनि मुनिमनहिं विचारयो।शोकविवशयहकहाउचारयो
चिंतत मुनि आये सरितीरा। कह्योभरद्वाजहि मतिधीरा॥
चारि चरण अक्षर बत्तीसा। तंत्री लै युत छंदमुनीसा॥

दोहा—मेरे मुखते कढ़तभो, शोकरूप अश्लोक।
भरद्वाजमुनि मुनिवचन, कंठ कियो मतिओक॥९॥

पुनिमज्जनकरि चिंतत ताही। आये मुनि निज आश्रम माहीं॥
भरिघट भरद्वाजहू आछे। आये गुरु आश्रम महँ पाछे॥
शिष्य सहित बैठे मुनिराई। कथा कहत हरिध्यान लगाई॥
आयो तौन काल मुखचारी। उठ्यो महा मुनि ताहि निहारी॥
जोरि पाणि किय दंडप्रणामा। बैठायो आसन अभिरामा॥
विधिकहँ पूजि पूछि कुशलाई। आपहु बैठ्यो शासन पाई॥
चित्तलग्यो श्लोकहि माहीं। वधिक विहंगहि वध्यो वृथाहीं॥
क्रौंचिहि विलपतभे भरिशोकू। कह्यो जौन सो भोऽश्लोकू॥
यह चिंतत मुनिके मुखचारी। अतिप्रसन्न ह्वै गिरा उचारी॥

कढ़ी जो तेरे मुखते बानी। सो श्लोक लेहु सति जानी॥
सो जानहु यह मोर प्रभाऊ। ताते सुनहु वचन मुनिराऊ॥
धर्मात्मा गुणगृह. मतिवंता। वीर शिरोमणिकोशलकंता॥

दोहा–सो रघुपति कर चरित मुनि, तुम वर्णहु यहिरीति॥
नारद मुखते जस सुन्यो, छंदबंध बिनभीति॥१०॥

प्रगटित गोपित रामचरित्रा।अरु सिय लषणचरित्र विचित्रा॥
अरु राक्षसकुल केर विनासा। रघुवर तिलक अवधपुर वासा॥
जो कछु तुव जानो नाहिं होई। ह्वैहै विदित तुमहिं मुनि सोई॥
राउर काव्य माहिं मुनिराई। हम वरदान देत हरषाई॥
येकहु अक्षर मृषा न ह्वैहै। ह्वैहै सुखी सुकवि जो ज्वैहै॥
महामनोहर रघुवर गाथा। छंद वद्ध रचहू मुनिनाथा॥
सरित महीगिरि रहिहै जौलौं। तुव कृत काव्य चली जगतौलौं॥
रामचरित जोलौं कृत आपू। चलिहै जगमहँ परम प्रतापू॥
तौलौं तुव ममलोक निवासा। पुनि जैहौ जहँ रमानिवासा॥
असकहि अंतरहिंत भे धाता। शिष्य सहित मुनि सुखी विख्याता
सोइ श्लोक शिष्य सब गावैं। बारबार तिहिं प्रीति बढ़ावैं॥
सोकहिभो श्लोक सुहावन। चारि चरण सम अक्षर पावन॥

दोहा–वाल्मीकि मुनिके मनहिं, आई ऐसी नीति।
छंदबद्ध रघुवर चरित, रचहुँ दोष सब जीति॥११॥

कवित्त–बाँचत सरल असरलहै विचार कीन्हे उत्तम सगुण धुनि धारित अनोपमा॥रस त्यों मनोहर मनोहर वरण वृंद सुभग पदाव ली हू जमक जड़ो समा॥ रघुराज भूषण समास संधिरीति वृत्ति लक्षणहू लक्षणा सुछंद है समोसमा॥ नारायण रूप हरि पारा- यण जीवनको सुरामायण सत्य रामायण मनोरमा॥

दोहा–नारद मुख सुनि वस्तु सब, रामचरित मनलाइ।

रच्यो प्रथम संक्षेप मुनि, सूचन कथा बनाइ ॥ १२ ॥
पूर्व अग्र जिन दर्भको, बैठि सुखासन ताहिं ।
जोरिपाणिकरि आचमन, शिरधरि हरिपदमाहिं ॥१३॥
रामायणके रचनको, कियो अरंभ मुनीस ।
आदि अंत रघुवर चरित, ज्ञान दृष्टि तब दीस ॥ १४ ॥
राम लषण सीता सहित, अरु दशरथ महाराज ।
रानिनयुत अरु राजको, जौन चरित्र दराज ॥ १५ ॥
गवनित भाषित हसित थिति, अरु कपि निशिचर रारि॥
हस्तामलक समान तेहि, सिगरो परो निहारि ॥ १६ ॥
वेद रूप पै ललित अति, धर्म अर्थ सब ठौर ।
रत्नाकरइव रत्न युत, सब शास्त्रन शिरमौर ॥ १७ ॥
प्रथम जन्म वर्ण्यौ रघुपतिको । विक्रम अनुकूलता सुमतिको॥
क्षमा शील सरलता सुनायो । विश्वामित्र समागम गायो ॥
तिहि निशि कथा अनेक बखानी। धनुभंग वर्ण्यो सुख खानी ॥
कह्यो वरणि जानकी विवाहू । रामविवाद संग भृगुनाहू ॥
पुनि कीन्ह्यों रघुपति गुणगाना । प्रभु अभिषेक समाज विधाना
कैकेयी कृतसो रसभंगा । रामनिवास अनुजतिय संगा ॥
नृपविलाप पुनि स्वर्ग पयाना । वर्ण्यो प्रजन विषाद महाना ॥
प्रजा विसर्जन गुहसंवादू । पुनि सुमंत आगम कियवादू॥
गंग तरण दर्शन भरद्वाजू । चित्रकूट निवसन रघुराजू ॥
कुटी रचन पुनि भरत पयाना । रघुपति पाणि पिता जलदाना॥
लै पादुका भरत फिरि आवन । नंदिग्राम निवास सुहावन ॥
दीवो अनुसूया अंगरागू । पुनि सरभंग दरश अनुरागू ॥
दोहा—फेरि सुतीक्षणको मिलन, पुनि अगस्त्य गृहवास ॥
करन विरूपी राक्षसी, खर दूषणको नास ॥ १८ ॥

बहुरि कह्यो दशकंठ अवाई । वध मारीच कथा पुनि गाई ॥
कह्यो फेरि वैदेही हरना । रामविलाप गीध कर तरना ॥
पुनि कबंध दर्शन मुनि गायो ।पुनि जिमि प्रभु शबरी फल खायो
सिया विरह वश राम विषादू । बहुरि कह्यो हनुमत संवादू ॥
ऋष्यमूक पुनि राम अवाई । कह्यो बहुरि सुग्रीव मिताई ॥
पुनि सुग्रीव वालि कर युद्धा । वालिवधन कृत रघुवर क्रुद्धा ॥
कह्यो विलाप कीन जिमि तारा । पुनि सुग्रीव तिलक जिमि सारा
वर्षाकाल प्रवर्षण वासू । पुनि सुकंठपर कोप प्रकासू ॥
पुनि बाँदरीसैन आगमनू । वर्णन पृथ्वीकर दुख शमनू ॥
पुनि मुद्रिका दीन हनुमानै । गे जिमि कपि चारिहूँ दिशानै॥
स्वयंप्रभा विल दर्शन गायो । सो जिमि सागर तट पहुँचायो॥
पुनि अनशन व्रत कीशनकेरो । जिमि संपाति कीशदल हेरो ॥

दोहा–पुनि मारुतसुत गिरि चढ़ब, लंघन सिंधु बखान ।
दर्शन पुनि मैनाकको, सुरसा कपट विधान ॥ १९ ॥

पुनि सिंहिका निधन मुनि गायो । लंकापार कीश जिमि आयो॥
कपिको लंका निशा प्रवेशा । पुनि देखिबो नगर सबदेशा ॥
कह्यो लख्यो जिमि पुष्पविमाना। पुनि अशोक वाटिका पयाना॥
सीता दरश मुद्रिका दाना । पुनि सीता संवाद विधाना ॥
पुनि राक्षसी सकल जिमिपेख्यो। त्रिजटा स्वप्न जौनविधिदेख्यो॥
चूडामणि जिमि लै हनुमाना । कीन्हो भंग भवन तरु नाना ॥
वर्ण्यो सकल राक्षसिन त्रासा । असीसहस किंकर कर नासा॥
मंत्री सुतन विनाश बहोरी । सेनपपंच निधन बरजोरी ॥
ग्रहण पवनसुतको पुनि गायो । पुनि लंका जेहिभाँति जरायो॥
कूद सिंधु आगम यहि पारा ।पुनि मधुवन जिमि कीशउजारा
राम निकट आगम पुनिगायो । चूडामणि जिमिकीशदेखायो॥

रामसहित कपिसैन पयाना। मिलव सिंधुकरदैमणिनाना ॥
दोहा—कह्यो विभीषणआगमन, सो जिमिकह्योउपाय।
सिंधुसेत रचिवो वरणि, बसव सुवेलहिजाय ॥ २० ॥
कह्यो लंक घेरन चहुँ वोरा। कीश निशाचरको रणघोरा ॥
वर्ण्यो कुंभकर्ण संहारा। लक्ष्मण मेघनाद जिमिमारा॥
कह्यो बहुरि दशकंठ विनाशा। मिलब मैथिली कीनप्रकाशा॥
तिलक विभीषणको पुनिगायो। पुनि जिमि पुष्पविमानमँगायो
फेरि अवधि आगमन उचारा। बहुरि मिलव कैकयीकुमारा॥
रामतिलक वर्ण्यो मुनिराई। पुनि कीशन जिमिकियोबिदाई
प्रजनअनंद तजन वैदेही। वर्ण्यो पुनि रघुनाथ सनेही॥
इतनो भूतचरित मुनिगायो। आगे और भविष्यगिनायो॥
तौन काव्यको उत्तर नामा। रच्यो भविष्य चरितमतिधामा॥
याते रामायण षट कांडा। सतयो उत्तरकांड अखंडा ॥
जहँते पुनि भविष्य मुनिगायो। सो अठायों कांड छविछायो॥
अहैं कांड द्वै उत्तर ताते। यहिविधि आठकांडगणिजाते॥
दोहा—रामायणषटकांडई, उत्तरभविष्यमिलाइ।
आठकांडवर्णहिंसुकवि, असपरकरनलगाइ ॥ २१ ॥
करत रहे जब रघुपति राजू। रामायण विरच्यो मुनिराजू ॥
चौविश सहस्र सुखद श्लोका। तथा सर्ग शतपंच अशोका ॥
रच्यो प्रथम षटकांड उदारा। पुनि कीन्हो उत्तर विस्तारा ॥
फेरि भविष्य चरित मुनि गायो। आठकांड यहिभाँतिगनायो ॥
बहुरि कियो मुनिमनहिंविचारा। केहियाहि सिखवनकोअधिकारा
ताहि समय मुनिनिकटसिधाई। गहे चरण कुश लव दोउभाई॥
मधुररूप मैथिली कुमारा। शील सुयश धृतिधर्मअगारा॥
कोकिलकंठ सुआश्रम वासी। तालराग सुरशास्त्र विलासी ॥

बुद्धिवान वरवेद विज्ञाता । तिनहिं निरखिलहिमोदअघाता
श्रीरामायण वेद स्वरूपा । तिनहिं पढ़ायो परम अनूपा ॥
रामायण सियचरित प्रधाना ।कछुपुलस्त्यकुलनिधनबखाना।
पाठ गाण महँ मधुर महाना । द्रुत विलंब मधितीनिप्रमाना ॥

दोहा—सातजातिसुरकीशहित, तंत्रीलैयुतसोइ ।
औरगानउपकरणलै, तासुगानहठिहोइ ॥ २२ ॥
करुणहास्यशृंगार अरु, रौद्रभयानकवीर ।
बीभत्सादिकरसनयुत, रच्यो काव्य मुनिधीर ॥२३॥

ऐसो रामायण मुनिराई । दोउ भाइन दिय गाय पढ़ाई ॥
शुभ लक्षण स्वरूपके राशी । मनहुँ राम तनु द्युतियप्रकाशी
सकल मूर्च्छना गति जति ज्ञाता। गानशास्त्रमहँ परमविख्याता॥
कुश लव रामायण पढ़ि लीन्हे । करि अभ्यास कंठगत कीन्हे॥-
मुनिन निवासनमहँ नितजाई । साधुसमाज माँह सुखछाई ॥
कुश लव रामायण नित गावैं । मुनि मानसबहुभाँतिलोभावैं ॥
सुनि सुनि रामायण मुनिराई । पुलकित तनु दृग बारि बहाई॥
रामायण अरु कुश लव केरी ।सुखित प्रशंसा करहिं घनेरी ॥
प्रति श्लोक सुनत छकिजाहीं । महामधुर अस दूसर नाहीं ॥
सुनत सुखद रामायण काना । रामचरित प्रत्यक्ष समाना ॥
ह्वै प्रसन्न कोउ कलशहिं दीनो । कोउ वल्कलदीन्हो सुखभीनो॥
मुनिकृत अतिअद्भुत रामायण। कविजन कहँ अधार रामायण॥

दोहा—आयुष पुष्टि प्रकाश कर, श्रुति समान अतिमंजु ॥
सुधाधार सम श्रवण महँ, रसिक मधुप मनकंजु॥२४॥

येक समय कुश लव दोउ भाई । गावत रामायण सुखछाई ॥
विचरत विचरत मुनिन निवासू । आये अवध नगर सहुजासू ॥
कोशलपुरमहँ खोरिन खोरी । गानकरत विचरैं शुभ जोरी॥

जेहि सुनत तेई छकिजावैं। सादर सदन दुहूँन लै आवैं ॥
पूजनकरि भोजन करिवाई। आदर अति करि करैं बिदाई॥
येक समय सजि सैन अपारा। भाइन युत रघुनाथ उदारा ॥
खेलन चले सिकार सुखारी। मधिबजार कुश लवहिं निहारी
वीणाकर शिरजटा सुहावन। वल्कलवसनअजिनअतिपावन।
महामनोहर सुंदर रूपा। मानहु सुछवि प्रजा दोउ भूपा॥
नाथ देखि आपन अनुहारी। तुरतहि दूतन कह्यो हँकारी ॥
ये मुनिबालक वेग बुलाई। दीजै सपादि सदन पहुँचाई ॥
असकहि लौटि रामगृह आये। सुवरण सिंहासन छबिछाये ॥

दोहा—लषण भरत रिपुवदन तहँ, वैठे प्रभु कहँ घेरि।
सचिव सुहृद सामंत सब, हर्षित प्रभु कहँ हेरि॥२५॥

यथायोग्य सब सभासुहाये। पुरजन प्रभु दर्शन हित आये॥
तहँ इक प्रतीहार कर जोरी। विनयकरी बहुबार निहोरी ॥
जे मुनिबालक प्रभुबुलवाये। तेदोउ द्वार देश महँ आये ॥
प्रभुकहँ ल्यावहु तुरत लिवाई। शासन सुनत दूत द्रुतधाई ॥
कुश लव कहँ लेगयो लिवाई। रहे बंधुयुत जहँ रघुराई ॥
मानि नाथ मुनि बालक दोऊ। पूजन कियो नम्यो सब कोऊ॥
रामरूप अनुहार निहारी। सकलसभासद मनहिं विचारी॥
ये क्षत्रिय मुनि बालक वेखा। आय सभा सुख दियो अलेखा॥
सभासदन रुख जानि खरारी। सियासुवन कुश लवहिं विचारी
कह्यो लषण भरतहि रघुनंदन। येदोमुनिबालक कुलचंदन ॥
अस ममशासन देहु सुनाई। सुनत लषण कुश लव ढिग आई

दोहा—गावहु जो गावत रहे, अवधनगरकी खोरि।
जोपै रघुवर रीझिहैं, संपति मिली अथोरि ॥ २६ ॥

लषण वचनसुनि तहँदोउभाई। वीणाके सुर सकल मिलाई ॥

बैठिराम सन्मुख सुखछाई। सभासदनआनंद बढ़ाई ॥
प्रभु मुख निरखि महासुखपागे। श्रीरामायण गावन लागे ॥
छके सुनत सब निहचलकाया। मोहे मनहु मोहिनीमाया ॥
कनकसिंहासन अतिहिउतंगा। सुनि नहिं परचो गानरसरंगा॥
तब रघुपति असमनहिं विचारा। मोरे उठत उठी दरबारा ॥
कोलाहल वश सुखहतहोई। जाउँ समीप उठै नहिं कोई ॥
अस विचार प्रभु मंदहि मंदा। सिंहासन ते रघुकुल चंदा ॥
उतरे आतुर बैठेहि बैठे। मानहु मोद महोदधि पैठे ॥
आये रघुपति शिषन समीपा। उठे न कोउ सामंत महीपा ॥
सुननलगे अपनो यशनाथा। विंशतिसर्ग रोज सो गाथा ॥
जब समाप्त रामायणभयऊ। प्रभु निजउरअतिअचरजठयऊ॥

दोहा—सहस अठारह हेमको, मुद्रा तुरत मँगाइ।
दियो दुहुंन बालकनको, मुनिसुत गुणि शिरनाइ२७॥
लियो न सो अस वचन कहि, हमहिं गुरू कह दीन।
सबहिं सुनायो गीत यह, लिह्यो नकोहुकर दीन२८॥
असकहि कुश लव ह्वै विदा, अद्भुत आनँद छाय।
वाल्मीकिके आश्रमहिं, आये बहुरि सुहाय ॥ २९ ॥
वाल्मीकिकी यह कथा, कुश लवको आख्यान।
मैं प्रसंग वश कहि दियो, रामायण सविधान॥३०॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अथ अत्रिऋषिकी कथा ॥

दोहा—कहौं अत्रिऋषिकी कथा, परमभक्त तपधाम।
जाके आश्रममें बसे, सीता लक्ष्मण राम ॥ १ ॥

येक समय ऋषि कानन जाई। कीन्हो तप जल अन्न विहाई ॥

मुनिकी प्रीति रीति रुचि देखी । भये प्रसन्न मुकुंद विशेषी ॥
शिव विरंचि ले संग सिधारे । मुनिसों मोदित वचन उचारे॥
माँगहु वर तीनहु हम आये । तब मुनि कह्यो तिनहिं शिरनाये॥
दरश पाय पूज्यो मनकामा । याते अधिक कौन वर आमा ॥
तब प्रभु बोले विनय विचारी । ऐसी रुचि मुनिनाथ हमारी ॥
तीनो होव पुत्र हम तेरे । अब नहिं दूसर मानस मेरे ॥
असकहि हरि दत्तात्रय भयऊ । शंकर दुर्वासा ह्वै गयऊ ॥
भयो चंद्रमा तहँ करतारा । ये मुनि तीनहु जगत उदारा॥
फेरि महेंद्राचलगिरि माहीं । बसे अत्रि मुनि सुखित तहाँहीं॥
तप बल मंदाकिनि महिल्याई । निज आश्रम तर दियो वहाही॥
पुनि उपजी मुनि कहँ अभिलाखा।चाखहुँ राम दरश सुखदाखा॥

दोहा–निजजन आश विचारिकै, सीय लषण सँग लीन ।
अनुसूया अरु अत्रिके, आश्रम आगम कीन ॥ १ ॥
मुनि आगू चलिकै प्रभुहिं, आये आश्रम माहिं ।
सादर करि सतकार बहु, स्तुति करी तहाहिं ॥ २ ॥
अनुसुइया आभरण बहु, अंबर अमल अमोल ।
पहिरायो सियको सुखद, चूमत चारु कपोल ॥ ३ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतारखंडेत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अथ शरभंगऋषिकी कथा ॥

दोहा–अब वरणों शरभंगकी, सुखद कथा रसरंग ।
जाहि सुनत हरिजननको, उपजत अमित उमंग ॥ १ ॥

सतयुगमें शरभंग मुनीशा । कियो कठिन तप सहस बरीशा॥
कढ़ी शीशते पावक ज्वाला ।डरपि उख्यो मनमहँ सुरपाला ॥

पठयो विश्वावसु गंधर्वै। करहु भंग ऋषिको तप सर्वै॥
विश्वावसु आश्रम महँ आई। तपनाशन हित कियो उपाई॥
पै ऋषिको तप भंग न भयऊ। वासव कामहि शासन दयऊ॥
काम आइ तहँ रच्यो वसंता। चहुँकित सरवन विहँगन दंता॥
कीन्हो कोटिन काम उपावा। मुनिमानस नहिं चल्यो चलावा॥
तब लै कुसुम धनुष संधान्यो। नहिं मुनि चितयो अमरष आन्यो॥
लै कुश तज्यो कामकी ओरा। तपबल तासु सकल शरफोरा॥
जब ते ऋषि कीन्हो शरभंगा। तब ते नाम पर्‌यो शरभंगा॥
पुनि मुनि प्रण कीन्ह्यो सियरामैं। लखिहौं तनु तजिहौं तेहि जामैं॥
सोइ मुनि आश मनहि प्रभु जानी। आये मुनि आश्रम धनु पानी॥

दोहा—सीता लषण समेत प्रभु, निरखि मुदित शरभंग।
प्रेम मगन पूजन कियो, भयो सकल दुखभंग॥ २॥
निरखत तीनहुँ रूप छबि, नाइ चरण महँ शीश।
कियो भंग शरभंग तनु, लह्यो अमल पुर ईश॥३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अथ सुतीक्ष्णकी कथा॥

सवैया—कानन बैठो रह्यो थिर ह्वै कब ऐहैं मुकुंद यही अवसेरे॥
जानि सुतीक्षणके मनकी प्रभु आये सियानुज संग सबेरे॥
दौरि पर्‌यो पदपंकजमें पगधोइ धुन्यो अघजन्मनि केरे॥
श्रीरघुराज सों माँग्योयही निवसौ नितमाधव मानसमेरे॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेपंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अथ सुदर्शनऋषिकी कथा॥

कवित्त—तैसेइ आशके बैठो अगस्त्यको बंधु मैं दीनको बंधु निहा-

रिहौं॥कांधे सुकंठ निषंग उभय दयासिंधुपै त्यों तन औ मन वा-
रिहौं॥ दास मनोरथ पूरणहेतु कह्यो प्रभु जाइ तुम्हें भवतारिहौं ॥
प्रेमभरो परो पाँयनसों कह्यो या छबिहौं हियते नहिं टारिहौं ॥१॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अथ अगस्त्यऋषिकी कथा ॥

दोहा—वर्णौं बहुरि अगस्त्ययश, अद्भुत कथित पुरान।
कह्यो सुन्यो जासों विमल, रामतत्त्व हनुमान ॥ १ ॥

जबते महि मुनीश प्रगटाना। रामतत्त्व तजि और नजाना ॥
रामतत्त्व कुंभजऋषि पाहीं। आये शंभु सुनन सुखमाहीं ॥
लंकाजीति राम जब आये। तब कुंभजऋषिअवध सिधाये॥
मुनिपद परशि राम करजोरी। पूछ्यो रावण कथा अथोरी ॥
वरण्यो मुनित्रिकालको ज्ञाता। जानत यदपि नाथ अवदाता ॥
बढत विंध लखि रोकत भानू। वारण करि मुनि कियो पयानू॥
आवन अवध जानि मुनिभीती। तज्यो महीधर वर धनरीती ॥
नाम सुयज्ञ द्रविड़ नरनाहा। रह्यो रामपूजत सउछाहा ॥
गये अगस्त्य उठ्यो नहिं देखी। प्रभुपूजनमन दियोविशेषी ॥
मुनि कह गज सम उठत नराजा। जानिपरत ह्वैहै गजराजा ॥
पै हरिपूजन निरत महीशा। तरिहैं ताते त्वहिं जगदीशा ॥
भयो सो गज मुनिवचन प्रमाना। ग्राहग्रसित तार्‍यो भगवाना ॥

दोहा—आतापी वातापि शठ, छलकरि मुनि भखिलीन।
सो अगस्त्य सों छलकियो, मुनि पाचन तेहिं कीन२॥
भयो येक दानी नृपति, दानविविधविध कीन।
धरणि धाम सुवरण रतन, अन्नदान नहिं दीन ॥ ३ ॥
तनुतजि गयो विरंचिपुर, कह्यो ताहि करतार।

किये दान बहु अन्नबिन, करु निज देह अहार ॥ ४ ॥
चढ़ि विमान अप्सरन युत, गावत गंधरवभीर।
यक सर नित आवत रह्यो, जहँ तेहि पर्‍यो शरीर॥५॥
महाक्षुधित निज देहको, करिभोजन पुनि जात।
येक समय कुंभजमिले, मारग महँ अवदात ॥ ६ ॥
पूछ्यो मुनिसो सब कह्यो, रोइ पर्‍यो मुनिपाय।
कंकन दियो उतारिद्रुत, कहितारहु मुनिराय ॥ ७ ॥
अन्नदान फल मुनि दियो, भयो तासु उद्घाट।
मुनियश वर्णत सो लियो, ब्रह्मलोककी वाट ॥ ८ ॥

येक समय अगस्त्य मुनिराई। सूर्य निकट कहँ गये सिधाई॥
तिन्हैं निरखि नहिं उठेदिनेशा। तब मुनिमन अतिभयो कलेशा
मुरि मुनीश शेषाचल माहीं। बैठे आगे धरि पटकाहीं॥
कह्यो वचन उर राखि रामको। जो विश्वास मोहि रामनामको
होहुँ जो मैं साँति रघुवर दासा। तौ पटहोइ कोटि रवि भासा॥
भाषत मुनिके वचन प्रमानू। भयो भास पट कोटिन भानू॥
सूरज तेज मंद परिगयऊ। तबविधिकेअति विस्मयभयऊ॥
चलि अगस्त्यकीस्तुतिकीन्हो। मुनि निजकोपशांतकरिलीन्हे॥
येकु समय अगस्त्यभगवाना। शेष निकटकहँ किये पयाना॥
तहँ ब्रह्मर्षि सुरर्षि अपारा। बैठरहे अहिपति दरबारा॥
कुंभज सबकी मति गति जानी। शेषहिं कह्यो जोरि युगपानी॥
रामतत्त्व सुनिवेकी चाहा। सब मुनिके मोरेहु अहिनाहा॥

दोहा—तब धरणीधर अस कह्यो, मैं पीडित भूभार।
कौनभाँति वर्णन करौं, द्वितिय न धरणि अधार॥९॥

कुंभज कह्यो कृपा अस कीजै। मेरे दंड धरणि धरि दीजै॥
असकहि दंड खड़ो मुनिकीन्हो। सुमिरि रामपद असकहिदीन्हो

जो विश्वास मोहिं रामनाम को। करै दंड क्षण शेष कामको ॥
धऱ्यो धरणिधर धरणिदंडपर। डोल्यो दंड नेकु नहिं तेहिपर॥
कह्यो शेष तब सबन सुनाई। देखहु राम नाम प्रभुताई ॥
कछुनहिं रामनाम सम दूजो। सकृतहु कहत सुकृतिसब पूजो॥
लखि मुनि रामनाम परभाऊ। गये गेह निज निज भरिचाऊ॥
येक समय कुंभज ऋषिराई। संध्या करत सिंधुतट जाई ॥
मज्जन करन लगे धरि चीरा। जाननहित प्रभाव निधि नीरा॥
दियो तरंगनि वसन बहाई। कोपित भयो कछुक मुनिराई॥
रामनामको सुमरि प्रभाऊ। लियो पान करि सिंधु सुभाऊ॥
देव आइ सब स्तुति कीन्हे। मोचिमहोदधि मुनि तब दीन्हे॥

दोहा—तबहींते सागर सलिल, होत भयो अतिखार।
पै अगस्त्यपरभावते, भयो न अशुचि विचार॥१०॥
कुंभज यश कहलौं कहौं, जाहिर जगत पुराण।
मानि गुरू जेहिं सदन महँ, सियपुतगे भगवान॥११॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेसप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

अथ शृंगीऋषिकी कथा।

दोहा—शृंगीऋषिकी अब कथा,मैं वर्णों सुखदानि।
जाहि सुनत श्रीहरिरसिक,मति गति अति हुलसानि१॥

रहे विभाँडक इक मुनिराई। रामभजत बहुकाल बिताई ॥
बसे विपिनपहँ विरचिसुवासा। हरि विहाय नहिं दूसरि आसा॥
शृंगी ऋषि भो तासुकुमारा। जोतजिविपिननद्वितियनिहारा॥
रोमपाद कोउ रहे नरेशा। बसे अंगनामक शुभदेशा ॥
तासो नृप दशरथ सुजानकी। रही प्रीति जिमिजलजभानकी॥
शांता सुता अवध नृप केरी। रही परम सुंदरी निवेरी ॥

मित्रभावते अंग भुवाला। माँग्यो दशरथ सों इक काला॥
शांता सुता देहु नृप हमको। कछु दिनमें हम देहैं तुमको॥
सुता दियो नृपमान मिताई। शांतहि अंग नृपति घर ल्याई॥
मित्रसुता निज सुता समानी। मान्यो अंगनरेश विज्ञानी॥
येककाल सोइ नृप के देशा। महाअवर्षण कीन सुरेशा॥
पूंछ्यो नृपति ज्योतिषिन काहीं। जल वरसै घन किमि महि माहीं

दोहा—कह्यो वचन दैवज्ञ सव, तनय विभाँडक जोइ।
शृंगीऋषि है नाम जेहिं, तेहिं आगम जो होइ॥ १॥

वरसै मेघ मिटै दुर्भिक्ष्या। होइ रावरो राज सुभिक्ष्या॥
रोमपाद कह केहिं विधि आवै। तोहि लेवावनको अव जावै॥
जिहिं सो कहै भूप ऋषिआनै। सो अति शापभीति उरमानै॥
बारवधू नृप कह्यो बुलाई। आनहु कारि उपाय ऋषिराई॥
गणिका कही अवशि हम लैहैं। करि उपाय ऋषिशाप बचैहैं॥
असकहि गईं सवै वनमाहीं। यहचारित्र जान्यो ऋषि नाहीं॥
पिता विभांडकसो ऋषि केरो। कियो लेन फलको कहुँ फेरो॥
तब आश्रम गणिका सब आई। पहिरि वसन भूषण छबिछाई॥
ऋषिन लख्यो कबहूं पुरवासी। रह्यो जन्मते विपिन निवासी॥
भेद नारि नरको नहिं जान्यो। बारवधूगणको मुनि मान्यो॥
शृंगी ऋषि आगू चलि आयो। गणिकनकोमुनिगुणिशिरनायो
लै आयोनिज आश्रम माहीं। आतिथिजानि पूज्यो तिनकाहीं॥

दोहा—कंद मूल फल भेट दिय, सोगणिका लै लीन।
अति प्रसन्न बोली वचन, अति आदर तुम कीन॥२॥

लीजे फल मुनि कछुक हमारे। ल्यायो तुमहित मीठ अपारे॥
असकहि मोदक मुनिकहँ दीन्हो। फल गुणिमुनिभक्षणद्रुतकीन्हो
महामीठ गुणिकहँ तिन पाहीं। ये फल होत कौन वनमाँहीं॥

गणिका कह्यो जहाँ ममधामा। तहँ येई फल केर अरामा॥
असकहि तासु पिता भयमानी। कियो पयान तुरतछविखानी॥
मुनि मन लालच बढ़ो अपारा। करिहौं कबते फलन अहारा॥
दूजे दिवस विभांडक जबहीं। गये कहूं फल आनन तबहीं॥
शृंगीऋषिके आश्रम माँहीं। आये तिय चितवत चहुँघाहीं॥
शृंगीऋषि आगू पुनि लीन्हो। गुणि फल प्रदअतिआदरकीन्हो॥
गणिकनको दीन्हो फल मूला। गणिकावचन कहेउ अनुकूला॥
हैम तुरतावंश फल नहिंल्याये। मुनि चाहहु जो ते फल खाये॥
तौ हमरे आश्रम पगु धारौ। निज रुचिके फल विपुलअहारौ॥

दोहा—शृंगीऋषिसुनिकेवचन, मधुरफलनकेआस।
गणिकनसँगगवनतभयो, त्यागिपिताकीत्रास॥ ३॥

लैगणिका शृंगी ऋषि काहीं। आइ रोमपाद पुर माहीं॥
पुनि पद परत जलद बहु वर्षै। भयो सुभिक्ष प्रजा सब हर्षै॥
चलि आगू ऋषिको नृपल्यायो। निजमंदिर महँ वास करायो॥
नृप पुर प्रजा नारि नरकाहीं। मुनिसम मान्यो मुनिमनमांहीं॥
सचिव कह्यो भूपति पै जाई। नाथ तुरत ब्राह्मण बुलवाई॥
शृंगीऋषि कहँ शांता दीजै। गृहमहँ विधिवत व्याहकरीजै॥
नातो जबहिं विभांडक ऐहैं। सपुर तुमहिं करिकोप जरैहैं॥
मीत तुम्हार अवध नरनाहा। लहिहै सुख सुनि सुताविवाहा॥
सुनि नृप तुरत तैसही कीन्हो। शांता शृंगीऋषिकहँदीन्हो॥
कुपित विभाँडक जब गृहआये। सुत सुतवधू निरखिसुखछाये॥
पुनि शृंगी ऋषिकहँ मुनिराई। दियो नारि नर भेद बताई॥
तिहि शृंगीऋषिकहँ अवधेशा। ल्यायो पुत्रहेतु निजदेशा॥

दोहा—वाजिमेधकरवायऋषि, करवायोसुतयाग।
तबदशरथके चारिसुत, भयेउदितभोभाग॥ ४॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेतायुगखंडेअष्टादशोऽध्यायः॥ १८॥

अथ विश्वामित्रकी कथा ॥

दोहा–विश्वामित्रमहर्षिकी, भनों मनोहरगाथ ।
जाहिआपनोगुरुकियो,लषणसहितरघुनाथ ॥ १ ॥

विश्वामित्र रह्यो इक राजा । पाल्यो पुहुमी सहितसमाजा॥
गयो कबहुँ इक समय शिकारा। तहँ वशिष्ठ आश्रमहिंनिहारा॥
दर्शनहित नृप निकट सिधारचो। आदरयुत मुनिताहिहँकारचो
विश्वामित्र मुनिहिं शिरनायो । कुशल प्रश्न मुनिनृपहिंसुनायो
मुनिकह देहुँ निमंत्रण आजू । भोजन कीजे सहित समाजू ॥
नृपकह राउरि कृपा महाई । याते कौन और फलदाई ॥
शासनदेउ भवन अब जाहीं । भोजनकी कछु इच्छा नाहीं ॥
पुनि पुनि नृपहिं निमंत्र्योमुनिवर।मान्यो नृप तब शासनमुनिकर·
सबला नामक धेनु सुहाई । ताके निकट गये मुनिराई ॥
कह्यो देहु परिपूरण साजू । राख्यो नेवति नरेशहिंआजू ॥
सबला तब सिरज्यो पकवाना । सुधासरिस जे चारिविधाना ॥
सेनसहित भोजन करवायो । जो जाके मन सो सब पायो ॥

दोहा–जौनजौनमुनिमाँगहीं, सबलासों करजोरि ।
तौनतौनासिरजैसुरभि, वस्तु अपूर्व अथोरि ॥ २ ॥

सैनसहित परिपूरण भूपा । मान्यो सुरभिहि सुरतरुरूपा॥
धरणि रत्न यह अहै अमोला । असविचारि नृपमुनिसों बोला ॥
लेहु चतुर्दश सहस मतंगा । शतदासी सुंदर जिन अंगा ॥
दशसहस्र स्यंदन युत साजू । लेहु ग्राम शत तुम मुनिराजू॥
औरहु मन वांछित मुनि लीजै । पै सबला सुरभी मोहिं दीजै ॥
सुनि वसिष्ठ भूपतिकी बानी । कह्यो वचन अति अनरथ मानी॥
मास मास मम यज्ञ निवाहू । जानहु सबलाते नरनाहू ॥

कौन भाँति सबला हम देहीं। अस माँगव अनुचित नहिं केहीं॥
सुनि मुनि वचन नरेश रिसाई। लियो जोरसों धेनु छुड़ाई॥
जब लै चले धेनु कहँ भूपा। सबला भई क्रोधको रूपा॥
विरुझि बेझिजन बंधन टोरी। मुनि समीप आई दुख बोरी॥
रोवत कह्यो दुखित मुनि पाहीं।केहि कारण त्याग्यो मोहिं काहीं॥

दोहा—मुनि कह हम नहिं त्याग किय, राजा बली महान।
बरिआई तोकों हरचो, करि मेरो अपमान॥ ३॥

अबल विप्र हम का अब करहीं। कौन भाँति नृपसों अपहरहीं॥
धेनु कह्यो बल विप्र महाना। मोहिं शासन दीजै भगवाना॥
कह्यो वसिष्ठ करौ जसचाहौ। तुम समरथ सब कारज माहौ॥
सुनि मुनि शासन धेनु तुरंता। सिरज्यो यवन महाबलवंता॥
भयो तहाँ संगर अति घोरा। यवन हने नृप भटन करोरा॥
विश्वामित्र पुत्र शतधाये। यमन मारि शर सबन हटाये॥
सृज्यो बहुरि सुरभी बलवाना। शेख सैद अरु मुगल पठाना॥
प्रतिरोमन सुरभी तनु तेरे। निकसे म्लेच्छ करोर करेरे॥
द्रुत नृपके शत सुत तिनमारे। स्यंदन सिंधुर सुभट संहारे॥
विश्वामित्र पराजय पाई। वनमहँ कियो महातप जाई॥
शम्भु प्रसन्न अस्त्र सब दीन्हें।कौशिक पुनि आगम तहँ कीन्हें॥
कौशिक पावक अस्त्र चलायो। मुनि वसिष्ठ आश्रमहिं जरायो॥

दोहा—ब्रह्मदंड कर करि तहाँ, कौशिक सन्मुख आइ।
खरो भयो प्रलयागि सो,वरवशिष्ठ मुनिराइ॥ ४॥

अस्त्र शस्त्र जितने शिव दीन्हें। नृप वसिष्ठपर मोचन कीन्हें॥
ब्रह्मदंड महँ शांति भये सब। यथा दवानल पाइ बारि जब॥
धिगधिग कहि क्षत्रिय बलकाहीं। ब्रह्मतेज सम है कछु नाहीं॥
ब्रह्मतेज तपकरि मैं लैहौं। नातौ यह तनुतजि हठि दैहौं॥

अस कहि कियो महातप जाई। विधिसों तब महर्षि पदपाई॥
कावेरी दक्षिण तट माहीं।करन लग्यो तप कठिन तहाँहीं॥
इतै त्रिशंकु अवधपुर राजा। बोलि वसिष्ठ कह्यो यह काजा॥
नाथ मोहिं अस यज्ञ करावहु। यह शरीर तैं स्वर्ग पठावहु॥
मुनिकह यह अशक्य जग माहीं। तब नृप गो गुरु पुत्रन पाहीं॥
कह अभीष्ट अपनो शिरनाई। सुनि गुरुसुत बोले मुसक्याई॥
जोन कियो गुरु सो केहि भाँती। हम करिहैं भूपति अरिघाती॥
कह्यो नृपति करि कोप महाना। कागुरु मिली नमोकहँ आना॥

दोहा–लखि त्रिशंकुको गर्व अति, गुरुसुत दीनी शाप।
होहु भूप चंडाल तुम, पावहु अति संताप॥ ५॥

होत विहाल त्रिशंकु नरेशा। होत भयो चंडालहि भेषा॥
श्यामवसन आयस आभरणा। अतिशय रौद्र श्याम तनु वरणा॥
चल्यो नगरते जरत शरीरा। कोउ नहिं देखि परचौ हरपीरा॥
भ्रमत भ्रमत कौशिक मुनि पासू।गिरचो आय भूपति भरित्रासू॥
त्राहि त्राहि शरणागत तोरे। जानहु नाथ नाथ नहिं मोरे॥
गुरु गुरु पुत्र कथा सब गाई। लगी दया मुनि लियो टिकाई॥
जानि त्रिशंकु आश मन केरी। विश्वामित्र वानि अस टेरी॥
मुनिन बोलि अस यज्ञ करैहौं। यहि तनुते तोहिं स्वर्ग पठैहौं॥
शिष्य पठै पुनि मुनिन बुलाये। तहँ वसिष्ठके सुत नहिं आये॥
तिनहिं शापदै कौशिक जारा। विरच्यौ यज्ञ सहित संभारा॥
यज्ञ अंत तप बल दरशायो। तनुयुत स्वर्ग त्रिशंकु पठायो॥
लखि त्रिशंकु कहँ गुरु अपकारी। वारण कियो वज्रकोधारी॥

दोहा–पत पत वासव जब कह्यो, लागो गिरन नरेश॥
त्राहि त्राहि कह कौशिकहि, रोकत मोहिं सुरेश॥६॥

विश्वामित्र कोप तब कीन्हो। तिष्ठ२अस मुख कहि दीन्हो॥

पुनि हरिभजन प्रभाव दिखायो। स्वर्ग द्वितीयरचन मन लायो॥
विरच्यो देव नक्षत्र अनेका। फल तरु सोनि अन्न सविवेका॥
रचत द्वितीय मुनिहिं संसारा। लखिआये तहँ देवअपारा॥
करि स्तुति मुनिकोप छुड़ाये। बार बार मुनि कहँ समुझाये॥
मुनि कह ममकृत नखतअपारा। करैं सदा दक्षिण उजियारा॥
जौन जौन मैं वस्तु बनायो। सो सब सत्य होइ ममगायो॥
बसै स्वर्ग महँ सहितशरीरा। यह त्रिशंकु सुरसम अतिधीरा॥
एवमस्तु कह सब असुरारी। दक्षिणरही त्रिशंकु सुखारी॥
ऊरधपद अध शिर गुरुद्रोही। दक्षिणदिशागगनमहँ सोही॥
असकहि गये देव निजलोका। विश्वामित्र भये बिनशोका॥
पुनि दक्षिणते अनत सिधारी। इकसरबैठि कियो तपभारी॥

दोहा—येक समय तहँ मेनका, आई मज्जन हेत।
तिहि लखिविश्वामित्रको, भूलगयो सबचेत॥ ७॥

मुनि दशवर्ष मेनका संगा। कियविहार मुनि विवश अनंगा॥
दशयें वर्ष खबरि पुनि आई। तहँते कौशिक चल्यो पराई॥
वर्षसहस्र कठिन तप कीनो। तब सुरनाथ महाभय भीनो॥
पठयो रंभाको सुरराजा। कौशिक तप खंडनकेकाजा॥
दीन शाप रंभै मुनिराई। होहु पषाणमहा दुखपाई॥
ऐहैं कबहुँ वशिष्ठ उदारा। होई तोर तबहिं उद्धारा॥
असकहि तेहि उत्तरदिशिआये। सहसवर्षलों तप मनलाये॥
सहसवर्ष अंतहि मुनिराई। भोजनकरनलगे कछु ल्याई॥
तहाँ इंद्र द्विजवपु धरि आयो। यांचोअन्न तुरत सो पायो॥
तहँते कौशिक फेरि सिधारे। शैल हिमालय महँ व्रतधारे॥
सहसवर्ष बीत्यो जब काला। शिरते कढ़ी तपानलज्वाला॥
जरनलग्यो त्रिभुवन तेहि माहीं। सुर पराइगे विधिपुर काहीं॥

दोहा—विनय कियो मुख चारिसों, जो माँगै सोदेहु।
विश्वामित्र तपानलै, होत भुवन सबखेहु ॥ ८ ॥
तब विधि मुनि समीप चलि आये। विश्वामित्रहि वचन सुनाये
तुम ब्रह्मर्षि भये तपकरिकै। माँगहु और सबै दुख दरिकै ॥
तब कौशिक बोल्योविधिपाहीं। और आश मेरे कछु नाहीं ॥
रामभक्ति दीजै मुखचारी। उरते कबहूं टरै नटारी ॥
विधि प्रसन्न ह्वै सो वरदीन्हो। गवन भवन कहँ तुरतै कीन्हो ॥
कौशिक भजन पुंज सोइ जागे। संग संग रघुपति वनबागे ॥
पूर्वजन्म महँ द्विजसुत रहेऊ। सेवन संत बानि सो गहेऊ ॥
ह्वै प्रसन्न सेवन लखिसाधू। कोउ कह वचनआनंदअगाधू॥
जस तुम करहु सन्त सेवकाई। तस तुम्हरी करिहैं रघुराई ॥
साधुवचन सुनि उपज्यो ज्ञाना। तजि दीन्हो संसारमहाना ॥
भजन करत बहुदिवस बितायो। पुनि जब काल तासु नियरायो
मगमहँ पर्‌यो कढ़्यो तहँ भूपा। भूपहोन मन चह्यो अनूपा ॥
दोहा—सोइ वासनाके विवश, कुशक लियेअवतार।
तासु चरण चापे दोऊ कौशलराजकुमार ॥ ९ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेएकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

अथ गौतमऋषिकी कथा ॥

दोहा—अब वरणों गौतम कथा, संत श्रवण सुखदानि।
गौतमऋषि विधिको सुवन, होत भयो गुणखानि ॥ १ ॥
नारी मिली अहल्या नामा। शील रूपगुणपतिव्रतधामा ॥
गौतमको सेवन बहु कीन्हों। सब विधि ते निज वश करि लीन्हों
येक समय पुनि अस वर माँग्यो। देह सुवन सुत कर्महि जाग्यो॥
गौतम कह्यो संत सेवकाई। करिहौ सुत पैहौ सुखदाई ॥

तबते सेवन लगी संतपद। नाम अहल्या सहित प्रीति प्रद॥
सेवन करत गयो चिरकाला। येक समय कोउ साधु दयाला॥
कह्यो माँगु तियवर हम देहीं। तुमसेवा वश करै न केहीं॥
कह्यो अहल्या सुत मोहिं दीजै। जासु सुयशरस त्रिभुवन भीजै॥
संत कह्यो वांछित सुत पैहैं। जो निमिकुल आचारज ह्वै हैं॥
जो करिहौ पतिको अपकारा। शिलाहोहुगी तुम जरिछारा॥
सुखदायक फल संत कृपाके। शतानंद प्रगट्यो सुत ताके॥
सो वासवसों किय व्यभिचारा। अघवश भई शिलाकी छारा॥

दोहा—रघुपति आइ उधार किय, सोइ अहल्यानारि।
निमिकुल उपरोहित भयो, शतानंद तपधारि॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेविंशोऽध्यायः॥ २०॥

अथ सुमंतादिकनकी कथा॥

दोहा—श्रीदशरथ महाराजके, मंत्री आठ सुजान।
तिनकी गाथा मैं कहौं, सुमंतादि मतिवान॥ १॥

येकसमय भूपति दरबारा। गये धर्म श्रुति शिव सकुमारा॥
निजवपु गोइ विप्र वपुधारे। उठे भूप तनु तेज निहारे॥
करि प्रणाम आसन बैठाये। लषण कुमारनको द्विज गाये॥
बोलि कुमार नृपति दरशाये। ते मनहीं मन पद शिरनाये॥
गे निज निज गृह द्विजमति धीरा। हृदय राखिचाऱ्यो रघुवीरा॥
तब मंत्रिन सों भन्यो नरेशा। ये द्विज कौन रहत केहि देशा॥
रामरूप मंत्री उर राखी। दीन्हे नाम यथारथ भाषी॥
तब कुमार दर्शनके काजू। अपनो रूप गोय महाराजू॥
शंभु धर्म कृत्तिका कुमारा। चारों वेद गणेश उदारा॥
आये सभा आपके नाथा। पुत्रन लखि ह्वै गये सनाथा॥

मंत्रिनकी लखिकै चतुराई । परम प्रसन्न भये नृपराई ॥
तिनको यह अचरज कछु नाहीं। लखहिं राम छबि छन छन माहीं

दोहा—सुमंतादिजे सचिववसु, तिनके विविध चरित्र ।
जो सुमिरै इकवारहू, नशैं अनेक अमित्र ॥ २ ॥
त्रेतायुग हरि जननकी, मैं वरण्यो कछु गाथ ।
अहै अमित कहँलों कहौं, संतन पद मम माथ ॥ ३ ॥

इति सिद्धि श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहाराजाबहादुरश्रीसीतारामचं
द्रकृपापात्राधिकारीश्रीविश्वनाथसिंहजूदेवात्मजासिद्धिश्री
महाराजाधिराजश्रीमहाराजबहादुरश्रीकृष्णचंद्र
कृपापात्राधिकारीश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृ
तेश्रीरामरसिकावल्यांत्रेताखंडेएक
विंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

इति त्रेताखंड संपूर्णम् ॥

श्रीः।

अथ भक्तमाला।

अथ द्वापरयुगखंड प्रारंभः ॥

द्वापरके भक्तोंकीकथा।

सोरठा—जय शत पंकज भान, चरण देवकी लालके।
वर्णित वेद पुराण, अभयदानिकी वानि हठि ॥ १ ॥
जयति साधुपद कंज, दारण दारुणदुखदुसह।
शरणागत मनरंज, भववारिधि बेरो विशद ॥ २ ॥

दोहा—जय गौरी सत गजवदन, येकरदन गणनाथ।
विघन कदन आनँद सदन, ध्याऊँ धरि महि माथ १॥
जय वाणी वर्धन सुमति, हरण कुमति जगमातु।
दारुण विपति विदारिणी, कारणि सिद्धि विख्यातु २॥
हरि गुरु जयति मुकुंद पद, वंदों बारहिं बार।
मोसम अमित अधीनके, करन आसु उद्धार ॥ ३ ॥
जयति जानकी जानिके, कृपापात्र पदकंज ॥
जनकनाम विशुनाथ मम, सुमिरत कर दुखभंज ४॥
सतयुग त्रेताके सकल, भन्यो संत इतिहास।
अब द्वापरयुग संतकी, करियत कथा प्रकास ॥ ५॥
वर्णत श्रुति शुकदेव को, मुक्तजीव जग सोइ।
वामदेवहैं धौनहैं, यह नहिं जानै कोइ ॥ ६ ॥

अथ शुकदेवजीकी कथा॥

दोहा—ताते प्रथमहि मैं कहौं,श्रीशुकदेव चरित्र।
जेहि मुख निर्गत भागवत,कीन्हो जगतपवित्र॥ १॥

गौरी सहित शैल कैलासा। येक समय बैठे कृतवासा॥
आये तहँ नारद मुनिराई। बैठे दंपति को शिरनाई॥
कह्यो गौरि सों बहुरि मुनीशा। कहनचहौं जो सुनै न ईशा॥
विहँसि कह्यौ हर रहसिसिधारी। सुनौ जौन भाषै तपधारी॥
शिवा मुनशिहिं संगलिवाई। बैठी कछुक दूरि महँ जाई॥
मुनिकह कहतवनतनाहिं मोसों। राखत शंभु कपट कछु तोसों॥
तोहिं न अपनो तत्त्व उचारैं। तुवमुंडन माला उरधारैं॥
मृषा मानु तौ पूंछु भवानी। वकसै जनम मरणकी हानी॥
उमा तुरत उठि हरढिग आई। कीन्ही विनय चरण शिरनाई॥
नाथ येक संदेह निवारहु। काकर मुंडमाल उर धारहु॥
विहँसे हर नारद कृत जानी। कह्यो वचन अस सुनहुभवानी
प्राणहुँ ते प्रियहो तुम मोरे। पहिरौं मालमुंड कर तोरे॥

दोहा—जब जब तुम तनु त्यागहू, तब तब लै शिरतोर।
मैं अपने उर धारहूं, ऐसो प्रणहै मोर॥ २॥

बहुरि जोरिकर कह्यो भवानी। जन्ममरण हरु करुणाखानी॥
गौरिवचन सुनि तब त्रिपुरारी। बोलेवचन सुखित सुनु प्यारी॥
रामतत्त्व करिकै उपदेशा। हरिहौं तव जग जन्म कलेसा॥
असकहि लैसँग शिवाइशाना। महाविपिन कहँ कियो पयाना॥
तहँ पुनि डमरु बजावन लागे। वनके जीव भभरि भय भागे॥
जिहि तरुतर हर डमरु बजाये। तासु निकट वनजीव न आये॥
पैतेहि तरुमहँ कोटर रहेऊ। शुकशावक अपक्षतहँ ठयऊ॥
सोइत रुतरढिग गौरि बुलाई। भाषणलगे तत्त्व गिरिराई॥

रामतत्त्व सुनि शैलकुमारी। देनलगी सब समुझि हुँकारी॥
दियो हुँकारी किंचित काला। नींद विवश पुनि ह्वैगे बाला॥
सो शुकशावक श्रवणप्रभाऊ। भयो ज्ञान नहिं भयो अवाऊ॥

दोहा—लग्यो हुँकारी देन सोइ, कथित शंभुके ज्ञान।
कछुक कालमहँ नींदवश, जानि गौरि भगवान॥३॥

तिहिंजगाय कह वचन पुरारी। कौन देत इत रह्यो हुँकारी॥
हमनहिं जानहिं शिवा कह्यो तब। कौन हुँकारी देत रह्यो अब॥
तब सकोप शिव डमरु बजायो। शुक शावक ह्वै सपखपरायो॥
पीछे धाये शिव धनुधारी। कहत जात अस वचन पुकारी॥
रामतत्त्व छिपि शुक सुनि लीन्हों। जैहै कहाँ खोरि अति कीन्हों॥
भगत भगत शुक बच्यो कहूँना। नहिंथल लख्यो शंभुते सूना॥
अवलोक्यो यक विमल तड़गा। विकसरहे पंकज चहुँ भागा॥
तिहि सर माहिं व्यासकी नारी। मज्जन करत रही सुकुमारी॥
तिहि छन तिहि आई जमुहाई। तासु उदर प्रविश्यो शुकजाई॥
पीछे पहुँचे तहाँ इशाना। कह्यो चोर तव उदर लुकाना॥
तब भयमानि व्यासकी नारी। सुमिरचो पति नहिं गिरा उचारी
विनय कियो तहँ व्यास सिधारी। गुणि भावी फिरिगे त्रिपुरारी॥

दोहा—व्यासनारिके उदरमहँ, द्वादशवर्ष निवास।
करत भयो शुक मानिकै, हरिमायाकी त्रास॥ ४॥

तहँ नारायण तुरत सिधारे। शुकहिं बुझावत वचन उचारे॥
तजहु गर्भ माता दुखहोई। कह्यो गर्भते तब शुक रोई॥
माया लेहु सकेलि मुरारी। तब मैं ऐहौं जगत मझारी॥
हरि कह मम माया नहिं लागी। तुम ह्वैहो अनन्य अनुरागी॥
तब शुक निकसि गर्भते आयो। निरखि मातु पितु सभय परायो
लीन्हों व्यासदेव पछिआई। बारहिं बार पुकारत जाइ॥

पुत्र पुत्र हे पुत्र पियारे। फिरहु फिरहु कतजात सिधारे ॥
वचत न व्यासदेवते देखी। प्रविश्यो शुक तरु गणन विशेखी ॥
तरुगण उत्तर दियो मुनिव्यासै। फिरहु फिरहु मम छोड़हु आसै
सुनि अस वचन उलटि मुनिआये।बारबार मन अचरज लाये ॥
उतै गये जब शुक कछु दूरी। मनमहँ हरिमाया भयभूरी ॥
मिले आय सुरगुरु पथमाहीं। लगे बुझावन मुनि सुतकाहीं ॥

दोहा—ज्ञानभक्ति रत जगरहित, अनुपम व्यासकुमार।
पै बिनगुरु कीन्हे सकल, जानो वृथा विचार ॥ ८ ॥

ताते करहु योग गुरुजाई। सो माया भय सकल मिटाई ॥
कह्यो तहाँ शुकको जगत्यागी। को अनुपम यदुपति अनुरागी
किहि माया विकार नहिं लागे। काके उर दुख सुख नहिं जागे॥
कही बृहस्पति सुनि अस वानी। है अस जनक भूपविज्ञानी ॥
ताहि करौ गुरु तुम मुनिनायक। सो सब विधि उपदेशन लायक॥
सुरगुरु वचन मानि मुनिराई। चल्यो जनकपुर कहँ अतुराई॥
गयो जनकपुर प्रथम दुवारा। तब यह कौतुक तहाँ निहारा॥
रूपवती युवती इक नारी। अनुपम अभरण अंबरवारी ॥
पुरुष ताहि द्वैताड़न करते। नेकुदया उरमें नहिं धरते ॥
ताहि निरखि शुक गिरा उचारी। दया छोड़ि कित ताड़हु नारी
कंह्यो पुरुष तब हे मुनिराई। पूंछि लेहु भूपति सन जाई ॥
सुनि शुकदेव चले पुनि आगे। तहँ अस कौतुक देखन लागे॥

दोहा—तैसेहि पुनि इक नारिके, द्वै नर करत प्रहार।
तिनहूँ पै शुक कहत भो, पहुँचि दूसरे द्वार ॥ ६ ॥

तेऊ कह्यो पूंछि नृपपाहीं। करहु असंशय निज जिय काहीं॥
करत गलानि मुनीश सिधायो। महापाप नगरी महँ आयो ॥
जब पहुँच्यो नृप तीसर द्वारा। तहां येक आश्चर्य निहारा ॥

येक पुरुष कहँ नृप भट दोई। कसाहनें निरखे सब कोई॥
पूंछ्यो व्यास सुवन तिनपाहीं। कत ताड़हु सुंदर नरकाहीं॥
तेउ कह पूछहु मुनि महिपाले। नाहिं जानै हम नेकु हवाले॥
मुनि धरि मौन महीप समीपा। चलो गयो शंकित कुलदीपा॥
शुक कहँ तकत जनक उठि धाये। बारबार चरणन शिरनाये॥
कीन्हो कनकासन आसीना। सादर सविधि सुपूजनकीना॥
पूँछि कुशल पंकज करजोरी। कह्यो भागि धनि २ मुनि मोरी॥
जौन हेतु प्रभु कियो सिधारण। कहहु कहनके योग जो कारण॥
मुनि कह बहुरि कहैं निज बाता। बहु अनरथ तव द्वार दिखाता॥

दोहा–असकहि जो जो मुनि लख्यो, सो सब कह्यो बखानि।
जनक कहन लागे सकल, हेतु जोरि युगपानि॥७॥

प्रथम नारि निरख्यो मुनि जोई। ताहि कहै तृष्णा सब कोई॥
जो सिगरो संसार नचावै। सो ताड़न मेरे पुर पावै॥
जो निरख्यो मुनि दूसरि नारी। तासु नाम माया दुखकारी॥
बंधन पाय परी ममद्वारा। ताको इतै न कछु संचारा॥
ताड़न लहत पुरुष जो देख्यो। जानहु मनसिज बली विशेख्यो॥
यह सिगरे जगको दुखदाई। ताते लहत दंड मुनिराई॥
जनक वचन सुनि तब शुकदेवा। जान्यो कृपापात्र यदुदेवा॥
बहुरि कह्यो मैथिल शिरनाई। वसहु मुनीश वाटिका जाई॥
सुनत सुखित मुनि गयो अरामै। विटप भौन नलिनी अभिरामै॥
तेहि निशि मनहारी बहुनारी। भूपति भेजी तुरत सिधारी॥
पुनि बहुरतन अमोल महीपा। भेजि दियो शुकदेव समीपा॥
फेरि अनेक यज्ञ संभारा। भेज्यो शुक ढिग नृपति उदारा॥

दोहा–योग विधान अनेक पुनि, साधन अमित विराग।
पठयो पुनि शुकदेव ढिग, जानत हित अनुराग॥८॥

प्रथम पहर नारी गई, रत्न दूसरे याम ।
यज्ञ वस्तु तीजे पहर, चौथे विरति अकाम ॥ ९ ॥

अर्थ धर्म कामहु औ मोक्षा । कियो नशुक चारिहुकी इक्षा॥
गये जनक जब भयो प्रभाता । देखि दशा आनँद नसमाता ॥
पर्यो चरण पंकज महराजा । गुण्यो मुनीश रूप रघुराजा ॥
कह्यो देहु आयसु शुक मोहीं । मैं न सिखावन लायक तोहीं ॥
कह्यो मुनीश देहु उपदेशा । यहि कारण आयो तुव देशा ॥
नृप कह अब कछु रह्यो नबाकी।तुम मति तौ यदुपति रस छाकी ।
आपहि मोहिं देहु उपदेशा । मेरे शिर सब नाथ निदेशा ॥
तब प्रसन्न शुक वचन उचारा । तुव कुलहै हरिभक्त उदारा ॥
अस कहि ह्वै प्रसन्न मुनिराई । चल्यो तहाँते अनत सिधाई ॥
जितने काल धेनु दुहि जाती । तितने काल सुमुनि दिन राती॥
भिक्षा देहि कहत अस वानी । ठहरत गृही नगृहन विज्ञानी॥
विचरतजगतजगत नहिं लागत।सो नभगततिहि लखि जग भागत

दोहा—सुख इव संत समाजको, विषयन करन विषाद ।
वरणोमैं संक्षेप सों, शुक रंभा संवाद ॥ १० ॥
व्यास परीक्षा लेनहित, रंभहि शुके समीप ।
पठयो सो आवत भई, बोली वचन प्रतीप ॥ ११ ॥

सवैया—कंचन कुंभ उरोज अनूपम अंगनि चंदन चारु लगाई॥
चंद्रमुखी मृगनैनि सुधाते सुमीठि महा मुसकानि मिठाई ॥
श्रीशुकदेव सुनो चित दै रघुराज यही मोहिं साँच देखाई ॥
जो ललना न लगाय हिये जनसो दिय जन्म वृथाहिं बिताई ॥

दोहा—प्रेम लपेटे अटपटे, सुनि रंभाके वैन ॥ १ ॥
कह्यो वचन शुकदेव हँसि, कियो जगतकी भैन॥१२॥

सवैया—रूप अनूप अचिंत प्रभाव निरंजन जासु दयाकि बड़ाई॥
विश्व कु सिर्जन पोषण सोचन जाकु बसै हठि हाथ सदाई॥
कानदेरंभ बखान सुनो रघुराज सुदीन दुनीकुगुसाँई॥
मूढ़ भज्यो नहिं जो यदुराज सुदीयत जन्म वृथाहि बिताई॥२॥
रंभावाच—मैनमवासिन मोदकी मूरति सोनजुहीकिलतासि सुहाई
विंबसमान वसै अधरानि सुधारस हास प्रकाश जुन्हाई॥व्यासके
नंदन साँचीकहो रघुराजसुअंग तरंग निकाई॥ जो युवती
नलगाय हिये असि सोदिय जन्म वृथाहिं बिताई॥३॥शुकउवाच॥
चारि सुबाहु विशाल गदादिक आयुध शत्रुन भीतिके दाई॥
प्रीति बढ़ै उरमें वनमाल सुकौस्तुभराजै छटा क्षितिछाई॥ दंभ
विहाइके रंभ सुनो रघुराज दयानिधि श्रीयदुराई॥ जो नहिं
ध्यान धरचो अस मूरति सो दियो जन्म वृथाहि बिताई॥ ४॥
रंभावाच॥ भागकि रेख अलेख अनंदको वेष भरी नवयोवन
ताई॥ आनन जासु सुवासु निवासु कपोलनि आरसीकी ललि
ताई॥ मानसदैकै मुनीश सुनोजन जो करसों करिकै मुसक्याई॥
चुंबन कीन्ह नचारु कपोलनि सोदिय जन्म वृथाहिं बिताई॥५॥
॥ शुकउवाच॥ पंकजनैन सबै प्रभुके प्रभु हार विहारकी शोभ
महाई॥ अंगद बाहु करै कटकै पग नूपुर पूरै प्रभा चहुँ घाई॥
श्रीरघुराज सुनो सुर सुंदरि श्रीयदुराज सु नेह लगाई॥ जो
नहिं ध्यान धरचो असरूपहिं सो दिय जन्म वृथाहिं बिताई॥६॥
रंभाउवाच॥ माधुरि बैनकि बोलनिहारि सुकंचन काँति रही
तनुछाई॥ नाभिलुँहार विहार वरै सुविहारमें कोककला निपु-
णाई॥ हेशुकदेव सदैव धरो मुख मेरी कही रघुराज मिठाई॥
जो नभयो तियके रसके वश सो दियो जन्म वृथाहिं बिताई॥७॥
शुक उवाच॥ भालमें क्रीट सुकानन कुंडल वाहन जासु अहै

खगराई॥उद्धव सात्यकि संग सखा अरु अग्रज वीर बड़ो बलराई॥ रंभ सुनो परहूते अहै परशंभु स्वयंभू करै सेवकाई॥तापद प्रीतिमें जो नपग्यो जनसो दियो जन्म वृथाहिं बिताई ॥ ८ ॥ रंभो-वाच ॥ फूलन वेणि गुही अहिनीसी लसे अतरानिकि सौर-भताई ॥ अँगनिमें अंगराग अनेकनि ओंठनिमें तिमि बिंब ल-लाई॥श्रीरघुराज कहौं गुणिकै मुनि जो न हेमंतमें नारिसुहाई ॥ शंभु उरोज सरोज हियो दिय सो दिय जन्म वृथाहिं बिताई॥९॥ शुकउवाच ॥ विश्व भरैया विज्ञान मयो वपुहै जग व्यापि परेश सदाई ॥ दिव्य अनेक गुणानि प्रकाशक राजाधिराज अहै रघुराई ॥ रंभ न ताके सनेह सन्यो नहिं दास बन्यो यशको मुखगाई ॥ लै जगजन्महिं मानुष आकृति सो दिय जन्म वृथाहिं बिताई॥१०॥रंभावाच॥ काह कहो तुम व्यासके नंदन जो नहिं नारिसुँ प्रीति बढ़ाई ॥ वारनभार सुलंकलचीलि करी करसों नहिं जो ललचाई ॥ अंजन रंजित खंजन नैन निहारि न नैननिसों टकलाई ॥ जो न हिमंतमें लाइ तिया उरसों दिय जन्म वृथाहिं बिताई॥११॥शुकउवाच॥ जो सब देवको देव अहै द्विज भक्तिमें जाकी बनी निपुणाई ॥ दासनको सिगरो सुखदात प्रशाँत स्व रूप मनोहरताई ॥ ऐसे दयालु सुसाहिबके हियते नगयो हठि हाथ बिकाई ॥ ह्वै बिन पूछ विषाण करो पशुसो दिय जन्म वृथाहिं बिताई॥१२॥ रंभाउवाच ॥ वेणि विशाल महा अभिराम मनोजकि ओजको रोज प्रदाई ॥ आनँदखानि अनूप स्वरूप सुकोक कलानिकी भूपति ताई ॥ श्रीरघुराज सुनो शुकदेवजु जीवनमूरि तिया मन भाई ॥ जो उत कंठित कंठ कियो नहिं सो दिय जन्म वृथाहिं बिताई ॥१३॥शुकउवाच ॥ आदि अनंत अनादि अखंडित नाम अरूप न जात गनाई ॥ है तो अबोध

पबोध करावत आपनि शील स्वभाव बड़ाई ॥ रंभ सुनो जन जो नहिं जानि मुकुंदसों ठाकुरकी ठकुराई ॥ ह्वै जग कूकर शूकरके सम सो दिय जन्म वृथाहिं बिताई ॥१४॥ रंभोवाच ॥ शुद्ध शृंगार विनोदकि वेलि वहारकि वस्तु विरंचि बनाई ॥ को वरणै कहिकै लिखिकै ललनानिकि लीलनिकी ललिताई ॥ श्रीरघुराज सुनो मुनिनायक लायक लाभ न और दिखाई ॥ जो ऋतुराज रम्यो रमणी नहिं सो दिय जन्म वृथाहिं बिताई॥१५॥ शुकउवाच॥योगकि व्याधि प्रमोद समाधि सुधर्मकि आधि अगाध गनाई।गोपिनि भक्ति विलोपिनि ज्ञानकि तासि विरागपै कोपिनिगाई रंभ अधर्म अरंभ कुँ खंभ खरी अवरंभ सदंभ सदाई॥ जो जड़जाय कियो परिरंभन सो दिय जन्म वृथाहिं बिताई ॥१६॥ रंभोवाच ॥ काहभयो इक ग्रामको ठाकुर काहभये पुनि भूपतिताई ॥ काहभये भए भूपति भूप कहाभये यद्यपि भै सुरताई ॥ काह भये जुलह्यो मघवापद काह भयो जुलह्यो विधिताई ॥ काहभयो शिवहू जुभयो नहिं नारिके नेह गयो जुसमाई ॥१७॥ शुकउवाच ॥ राजनको सुखशाहनको सुख शाहनशाहकी सौखमहाई॥इंद्र विभूतिपतालकि भूति तथा करतूति विरंचिकि गाई॥ शंभुकि शंभुता शेषकिशेषता श्रीरघुराज सुनो चितलाई ॥ तुच्छ गनै हरिदास सदा जु गये यदुनाथके हाथ विकाई॥१८॥ रंभोवाच॥फूलनसेज नसोयो कहूं नहिंमीठेपदारथको लियो खाई। भूषण अंबर धार्‍यो नअंगनि याग किये सुखको गये पाई ॥ कीजत जेती विरागमे प्रीति सुतेती करो हममे चितलाई ॥ जीवनको तबहीं फल पाइहौ क्यों दियो वैस वृथाहि बिताई ॥ शुकउवाच ॥ आमिष अस्थि व चामको आनन ठीवन तामे भरो अधिकाई॥त्यों मल मूत्र मयो उदरौ दुर्गंधि प्रसेदकी पूरणताई॥

मेद औ मज्या सनी सब अंगनि मूरति मोह खरी निठुराई॥नष्ट जो नारिको नेही भयो लियो सो जन नर्क निवास बनाई॥२०॥
रंभोवाच॥यज्ञ औ दान महातप तीरथ धर्म सुकर्मनकी फलताई॥ स्वर्गहै लोकहु वेदकहै तहँ नारि बिना नहिं पूरणताई॥ कोअस योगी भयो रघुराज जो नारिके नेह न जाति बिकाई॥ व्यासके नंदन निंदन तासु करो जेहिंते जगजन्म सदाई॥२१॥
शुकउवाच॥जो फल रूप कहै अरि स्वर्गको स्वर्गसो नर्क समानल खाई॥ शोक जरा दुख चिंता तृषा क्षुधा निद्रा नगीच जहाँ नहिं जाई॥ सो हरिके पदके हम लालसी माया किहै न जहाँ प्रभुताई॥ श्रीरघुराज करो हठ सो तुम नाहक नारि सनेह बढ़ाई॥२२॥
रंभोवाच॥ सुनि शुकदेववैन चैनसों चतुरि बोली देह दुर्गंधि तिय तुम जो उचारोहै॥सोतो मुनि मानो मृषा केहूं सति जानो येक नैननिहारि देखो चरित हमारोहै॥ रघुराज ऐसो कहि देव सुंदरी तुरंत आपनो उदर निज नखनि विदारोहै॥फैलिगै सुवास दशयोजन लों आसपास वसुमतिह्वैगई वसंतको अगारोहै॥२३॥
कौतुक विलोकि मुनि विहँस्यो ठठाय तहाँ बारबार रंभाको सराहि बैन भाष्योहै॥ मोहि रह्यो धोखो अस आजलौं नदेख्योकहूं वेद औ पुराण नारि निंद करि राख्योहै॥रघुराज ऐसो विनाजानेमैं वरषबहु नाहक जननिको उदर दुखचाख्योहै॥सौरभ समोयो स्वच्छ उदर परेखि तेरो जनैको बहोरि मेरो मन अभिलाष्योहै॥

दोहा—हारि मानि शुकदेवसों, रंभा शीशनवाय।
बहुरि गई सुरसदनको, गुणिअचरज पछिताय॥१३॥

को वर्णै शुकदेव प्रभाऊ। वर्णत जासु न होत अवाऊ॥
षोडशवर्ष वैस तनुश्यामा। हरिप्रिय परमहंस सर नामा॥
बैठ्यौ अनसन व्रत करि तबहीं। शापित भयो परीक्षित जबहीं॥

तहँ ब्रह्मर्षि सुरर्षि अपारा । गये महीप समीप उदारा ॥
करि सतकार भूप बहुभाँती । दियवरआसन अति मुदमाती॥
मुनि समाज गंगाके तीरा । लागि गई जहँ नहिं जगपीरा ॥
व्यास पराशर आदिक योगी । बैठे बहु विरागके भोगी ॥
तहँ करजोरि परीक्षित राजा । कीन्हो प्रश्न मुनीश समाजा ॥
जासु मरण दिन सातकमाहीं । काकरतव्य होत तिहिकाहीं ॥
कोउ वाच्यो तहँ योगविधाना । कोऊ मुनि वैराग्य बखाना ॥
कोउ तीरथ कोउ धर्म अचारा । कोउ व्रत कोउ मखदानअपारा
परचो नठीक येकमत काहू । किय अतिशय संशय नरनाहू॥

दोहा–ताही क्षण तिहि थल तुरत, प्रगट भयो शुकदेव ।
देख परचो नरदेवको, आवत जनु यदुदेव ॥ १४ ॥

धूरि उड़ावत बालक नारी । पछिआये डगरैं दैतारी ॥
देखत शुकहिं मुनीश समाजा । उठी तुरंत सहित महराजा ॥
देखि दशा यह बालक नारी । महापुरुष तेहि भाग्य विचारी॥
आयो मध्यसमाज मुनीशा । सबै नवायो तिनको शीशा ॥
आगू चलि कहि अपनो नामा । भूपति कीन्हो दंड प्रणामा ॥
कनकासन तुरंत मँगवायो । तापर शुकदेवहि बैठायो ॥
सादर पूजन कियो भुवाला । जोरि पाणि बोल्यो तिहि काला॥
मोरि दशा मुनि जानत अहऊ ।मोहिं उचित अब सो प्रभु कहऊ॥
तब शुक हँसि अस गिरा उचारी।सात दिवसकी अवधि तिहारी॥
सोहै बहुत बनावन हेतू । जो बाँधै परमारथ नेतू ॥
इक षट्वांगराज ऋषि भयऊ।असुर विजय हित सो दिवि गयऊ॥
जीत्यो असुरन तब कह देवा । माँगहु हम प्रसन्न नरदेवा ॥

दोहा–भूप कह्यो हमरो मरब, दीजै देव बताय ।
बाकी द्वै घटिका अहै, अस कह सुर समुदाय॥१५॥

नृपकह देहु भवन पहुँचाई। यह तुम सों माँगें सुरराई॥
देव तेहि छिन तिहिं पहुँचायो।नृप अनन्य हरि ध्यान लगायो॥
द्वै घटिका में सब सधि गयऊ। नृप षट्वांगमुक्त तब भयऊ॥
अहै अवधि यह सातदिनाकी। कासंशय भूपति अपनाकी॥
अस कहि शुक सप्ताह सुनायो। भूपति कहँ हरिपुर पहुँचायो॥
संत संग देखहु रेभाई। सातहिं दिनमें नृप गतिपाई॥
और अनेक पुराणन माहीं। संत संग सुधरयो कोउ नाहीं॥
येक समय यदुपति रथ चढ़िकै।चले जनकपुर अति मुदमढ़िकै
मारग महँ शुकदेवहि पाई। लिये आपने रथहि चढ़ाई॥
तदपि नताहि भयो कछु हरषा। गुण्यो न कछु अपनो उत्कर्षा॥
को दूजो शुकदेव समाना। कहँ लौं करौं चरित्र बखाना॥
नित भागवत नित्त शुकदेवा। विचरत भुवन करत हरिसेवा॥
दोहा—जय जय श्रीशुकदेव मुनि, जिहिं मुख कथित पुराण।
श्रीभागवत अनेक अघ, नाशत जिमि तम भान॥१६॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेप्रथमोऽध्यायः॥ १॥

अथ राजा परीक्षितकी कथा॥

दोहा—कहौं परीक्षित भूपकी, कथा करन कमनीय।
जेहिं मिसि भगवत भागवत, भानु विभांसित कीय॥१॥
रही उत्तरा गर्भवती जब। पांडव वंश विनाश करन तब॥
तज्यो ब्रह्म शर द्रोणकुमारा। जासु न कबहूँ होत निवारा॥
सो उत्तरा गर्भ महँ आयो। महाप्रलय सम आगि लगायो॥
आरत पाहि पाहि कहि धाई। यदुपति चरण गिरी कुँभिलाई॥
द्रोणतनय कृत जानि मुरारी। प्रवशि उत्तरा गर्भ मँझारी॥
गदा गहे परिक्षित चहुँवोरा। भ्रमण लग्यो देवकी किशोरा॥

गदा विदारि ब्रह्मशर नाथा। परिक्षितको रक्ष्यो निज हाथा॥
सोइ परीक्षित भो महराजा। भगवतभक्तनमें शिरताजा॥
लख्यो गर्भमें जो हरिरूपा। सोइ निरख्यो सब थल महँभूपा॥
जहँ २ पांडव कर नहिं पाये। तहँ २ ते परिक्षित लै आये॥
येक समय नृप गयो शिकारा। तहँ अचरज यहि भाँति निहारा॥
येक वृषभ सुरभी इक दीना। रुदन करत ठाढ़े भयभीना॥

दोहा—येक शूद्र तिहि वृषभको, ताडन करत प्रचंड।
ताको रक्षक कोउ नहीं, देखि परयो नवखंड॥ १॥

लखि भूपति करवाल निकासी। बोल्यो वचन शूद्र कहँ त्रासी॥
को यह वृषभ धेनु यह कोहै। कौतैंताडत नहिं मोहिं जोहै॥
धेनु कह्यौ मैं हौं प्रभु धरणी। वृषभ धर्म है हत निज करणी॥
शूद्र स्वरूप जानु कलिघोरा। ताड़त यहि भय करत नतोरा॥
तीनि चरण याके हतिडारो। येक चरण ते खरो विचारो॥
तप अरु सत्य दया अरु दाना। चारिधर्मके चरण प्रमाना॥
तीनि चरण टोरयो कलि घोरा। दान रह्यो तिहिं चाहत तोरा॥
ऐसा सुन्यो महीपति जबहीं। कलिको केश पकरि लिय तबहीं॥
काटन चह्यो शीश असि कोरे। तब कलि कह शरणागत तोरे॥
देहु वास मोहिं भूप बताई। तहँ मै वसौं अभय तुम पाई॥
तब नृप असति युवा मद पाना। अरु नारी कलिवास बखाना॥
तब कलि कह्यो मोहिं संकेतू। येक और दीजै नृपकेतू॥

दोहा—तब भूपति कंचन दियो, कलिको वास बताइ।
कंचन देतहिं सकल थल, गयो क्रूर कलिछाइ॥ २॥

दीन जानि छोड़्यो कलि काहीं। भूपति लौटि गयो गृहमाहीं॥
जौलों रह्यो परीक्षित राजा। तौलों चल्यो न कलिको काजा॥
भागवशात शाप नृपपायो। तब हर्षित गंगातट आयो॥

मरण शंक कीन्हो नहिं नेकू। तहँ ब्रह्मर्षि सुरर्षि अनेकू॥
आवतभे भूपति ढिग माहीं। कीन्हो प्रश्न नृपति सब पाहीं॥
तेहि छन श्रीशुकदेव सिंधारे। नृपसों श्रीभागवत उचारे॥
सतयें दिन तक्षक मिसि राजा। गंगातट मधि मुनिन समाजा॥
प्राकृत तनुतजि दिव्य शरीरा। पाइ वसतभो ढिग यदुवीरा॥
कौन परीक्षित सरिस भुवाला। ह्वैहै कलिघालक कलिकाला॥
नृपति परीक्षितके यदुराई। जात कर्म किय निज कर आई॥
यदपि पांडवनको अति मानो। किय भोगादिक निजहिसमानो॥
तदपि परीक्षितके यदुराई। तिनहूंते दिये भक्त बड़ाई॥

दोहा– भूप परीक्षितकी कथा, कहँलो करों उचार।
भारत अरु भागवतमें, अहै सहित विस्तार॥ ३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेद्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

अथ भीष्मकी कथा॥

दोहा–भीष्मदेवकी कहतहौं, मैं गाथा विस्तार।
सुनत श्रवण समुझत मनहिं, आनँद होत अपार॥ १॥

जेहि विधि भीषम जन्म भयो है। व्यास सुभारत वरणि दयोहै॥
जन्महिते साधुन सँग रोच्यो। भूलेहु नाहिं धर्म मग मोच्यो॥
येक समय भीषम मतिवाना। मुनि पुलस्त्य ढिग कियो पयाना॥
धर्मशास्त्र कर सकल विधाना। पूछि प्रश्न पढिलियो प्रमाना॥
अर्थशास्त्र सीख्यो सुरगुरुसों। कबहुँ न कार्य कियो आतुरसों॥
रह्यो विचित्रवीर्य बड़भ्राता। तासु विवाह न कियो विधाता॥
सालुराज निज सुता स्वयंवर। करणलग्यो तहँ जुरे भूपवर॥
भीषमदेव सुरति यह पाई। चल्यो यान चढि शङ्ख बजाई॥
जित्यो येक रथ सब नर पालन। हनि हनि अतिकराल शरजालन॥

जीति नृपति लै नृपति कुमारी। आयो गृह जगविजय पसारी॥
अंबालिका दियो बड़भ्राते। द्वितिय द्वितिय भ्राते अवदाते॥
रह्यो देव व्रत ऊरध रेता। ताते किंयो न नारीनेता॥

दोहा—निराकरन जब भीष्म किय, तब अंबिका उदास।
लौटि गई अपने भवन, सालु भूपके पास॥ १॥

सालुभूप राख्यो गृहनाहीं। आई लौटि सु भीषम पाहीं॥
कह्यो भीष्म सों तुमरे हेतू। रहन दियो नहिं पिता निकेतू॥
ग्रहणकरो शंतनुसुत मोको। नातो अयश देउँगी तोको॥
दोष तुम्हार लगाइ पिता मम। दिय निकारिअब जाइ कहाँ हम
कह्यो भीष्म मैं तज्यो विवाहू॥ नारिग्रहण नहिं होत उछाहू॥
बहुतकही अंगिका बुझाई। पै त्याग्यो भीषम बरियाई॥
सो तपकरन गई वन माही। परशुराम तेहि मिले तहाँही॥
विने कियो सब कह्यो हवाला। भे प्रसन्न द्विजराज कृपाला॥
परशुराम भगवान उदारा। अस्त्र शस्त्र जे जगतअपारा॥
पूरव भीषम काहिं सिखायो। ताते तिनके मन अस आयो॥
मोरशिष्य भीषम मतिवाना। करिहै वचन मोरिनहिं आना॥
अस विचार कह सुनहु कुमारी। हम भीषमसों कहबसिधारी॥

दोहा—तोहि ग्रहण करिहैं अवशि, करी ग्रहण जो नाहिं॥
तेरे देखत तासु शिर, कटिहों संगर माहिं॥ २॥

कसकहि कुपति परशुधर वीरा। कुरुक्षेत्र आयो रणधीरा॥
भीषम सुनि भृगुनाथ अवाई। विनसन गयो लेन अगुवाई॥
कारि दंडवत पूजि पद दोऊ। कह्यो नाथ मोहिंआयसु होऊ॥
राम कह्यो अंबिकाकुमारी। ग्रहण करौ ममवचन विचारी॥
भीषम कह्यो सुनहु भगवाना। याके हित मैं अस प्रणठाना॥
करिहों तोहिं ग्रहण मैं नाहीं। जबलौं रहे प्राण तनुमाहीं॥

राम कह्यो ममवचन जोटरिहौ।तौ निजशीश कंध नहिं धरिहौ॥
किय निक्षत्रमैं इकइस वारा। लैकर अपनो कठिनकुठारा॥
भीषम कह्यो सुनहु भृगुनाथा। विनती करौं जोरि युगहाथा॥
क्षत्री जाति युद्ध नहिं मरई। डरै तो अवशि नरकमहँ परई॥
कियोनिछत्र जबहि भृगुरामा। रह्यो भूमि नहिं भीषमनामा॥
दिहेहु नशाप यही डर मोरे। किहेहु युद्ध जस बल भुज तोरे॥
दोहा—राम उठ्यो लेविशिष धनु, इत शंतनहु कुमार॥
चढ़ि स्यंदन गवनत भयो, दै धन द्विजन अपार॥३॥
राम चढ़्यो रथ वेदतुरंगा। अकृत व्रण सारथी अभंगा॥
तेइसदिवस भयो संग्रामा। जीति सक्यो नहिं भीषम रामा॥
तब बोल्यो अंबिका बुलाई। मोते भीषम जीति न जाई॥
जस भावै तस करहु कुमारी। अस कहि रामहि गये सिधारी॥
भीषम लौटि नागपुर आयो। विजयी विजय बाज बजवायो॥
पुनि जब कौरव पांडव केरो। भयो विरोध अनर्थ घनेरो॥
धर्म भूप कहँ युवा खिलाई। जीत्यो शकुनि सभा छल छाई॥
द्वादश वर्ष दियो वनवासा। पांडव भे तब राज्यनिरासा॥
वर्षचौदहें कटक समेटी। लरन चले कुरपति लघुसेटी॥
तब भीषम बहुविधि समझायो। पैकुरपति के मनहि न भायो॥
जानिदेव वृत संगर ठीका। बैठ्यो सभा भूप भट टीका॥
द्रोणाचार्य आदि भट जेते। बैठे सभा मध्य सब तेते॥
दोहा—तब बोल्यो आनंद भरि, सभासदानि सुनाइ॥
दुर्योधन मेरो वचन, सुनिये चित्त लगाइ॥ ४॥
पद—जोमैं सुरसरि सुवन कहाऊं तौप्रणसभामध्यअसगाऊँ॥
कौरव पांडवबीच दुहूं दल हरिपूजन अस ठाऊँ॥१॥
शोणित कणनहवाइ नाथको रण रज बसन उढ़ाऊँ॥

पांडव सैन मारि गोविंद अँग चंदन कोप चढ़ाऊं ॥२॥
विविधवरणको विपुल विकाशितविशिपमालपहिराऊं ॥
सन्मुख शत्रु संहारि सहस्रन कीरति सुरभि सुधाऊं॥३॥
तबहिं त्रिविक्रमको तुरंत तहँ विक्रम दीप दिखाऊं ॥
पारथ सखा समीप जायकै प्राण निवेद लगाऊं ॥ ४ ॥
सकल जगत ते खैंचि प्रीतिकी बीरी आजु खवाऊं ॥
विजययान चलवायु समर महँ जय दक्षिणा दिवाऊं५॥
रथसोंरथ मिलाय माधवको ध्वजचामरहिं चलाऊं ॥
नख शिख निरखत रूप अनूपम नैन निराजन लाऊं६॥
बार बार ध्वनि दंड प्रत्यंचा धनुषहि बाज बजाऊं ॥
रथमंडल करिदैपरदक्षिण उर आनँद उपजाऊं ॥ ७ ॥
यदुवर करसों आज अवशि मैं चक्र प्रसादहि पाऊं ॥
अर्जुन शरपंजर जंजर ह्वै गिरि सन्मुख शिरनाऊं ॥८॥
यहिविधि रण प्रभुको करिपूजन त्रिभुवनमें यशछाऊं॥
श्रीरघुराज कृपा हरिकी लहि बरबस हरिपुर जाऊं९॥१
कुरुपति हमहुँ सुन्यो अस कान ॥ यदुपतिं तुमसों
अस प्रण कीन्हो हम न धरब धनुबाण ॥ १ ॥
ताते मैं गोहराइ कहतहौं ऐसो वचन प्रमाण ॥
हरिको आयुध अवशि धरैहौं ठानि घोर घमसान ॥२॥
श्रीरघुराज सदा दासनको राखत आये मान ॥
मेरी बार विरद विसरैहै कैसे कृपानिधान ॥ ३ ॥ २ ॥
चलु चलु अब नकरहु नृप देरी ॥ बहुत दिननकी हग
अभिलाषा आजु पूजिहै मेरी ॥ १ ॥
पीतवसन वनमाल विराजत मुकुट मयूष घनेरी ॥
यक करताजन बाग येककर अर्जुन बाजिन केरी ॥२॥

चहुँदिशि चपल चलावत स्यंदन इमि यदुनंदन हेरी ॥
श्रीरघुराज आजु धनि ह्वैहौं धुनिधुनि बाणन टेरी॥३॥३

दोहा—असकहिकै कुरुपतिसहित, कुरुक्षेत्रमहँआइ ।
जुरयो पांडवनसोंबली, समरशंख धुनिछाइ ॥ ५ ॥
सहितसखायदुपतिनिरखि, मोदमगनकुरुवीर ।
कह्यो सारथीसोंवचन, लैशरधनुरणधीर ॥ ६ ॥

पद—सारथि अस अवसर नहिं पैहौ ॥
दान मान मम कृत उपकारहिं आजु उऋण ह्वैजैहौ १॥
जो अतिचपल चलाय तुरंगन हरिसमीप पहुँचैहौ ॥
तौ अपनो अरु हमरो जगमें अतिअनुपम यश छैहौ२॥
येक ओर यदुवीर विराजत येक ओर तुम ठैहौ ॥
यह सुखते नहिं और अधिक सुख अब न जगत जन ह्वैहौ
यह साँवरी माधुरी मूरति देखत जो मरिजैहौ ॥
तौ रघुराज अलभ योगिन जो सो विकुंठपुर लैहौ४॥४
सारथि आवत पाँडुकुमार ॥
आगे बैठो तुरंग बाग धरि जेहिं वसुदेव कुमार ॥ १ ॥
क्षण क्षण रणमें रथहि धवावत धुरत धूरिकी धार ॥
पारथ हनत हजारन सायक कटत वीर बलवार ॥२॥
शंतनुसुत बिनको हरिसन्मुख भट ह्वैहै यहिवार ॥
कोरिझाइहै आजु नाथको हनिशर समर मझार ॥३॥
लैचलु लैचलु तुरत तुरंगन नहिं करु कछू खभार ॥
श्रीरघुराज श्याम सुंदर पद मोको आजु अधार॥४॥५

दोहा—तहँ बुलंद दल देखिदोउ, श्रीमुकुंद सानंद ॥
मंद मंद मुसकाइकै, बोले वचन अमंद ॥ ७ ॥

पद–भीषमको लखि यदुपति भाष्यो।
परिहै कठिन आजु संगरमहँ मोपर भीषम माख्यो ॥
पारथ अब तुम अपनो विक्रम नाहिं छिपाइ कछु राख्यो।
कोउ भट भयो न अस जो भीषम भुजबल जलनिधि नाख्यो
विजय तुमहुँ बहु समरसिंधु माथि विजय सुधारस चाख्यो।
श्रीरघुराज दुहुँनमें को वर हमहुँ लखन अभिलाष्यो ६॥
पारथ लखु दल सागर घोर।
भरो वीररस वारि ग्राह गज ढालै कमठ कठोर।
धनुष मीन करवाल मकर भट सिंहनाह बहु शोर ॥
उठहिं अनेकनि विविध भाँतिकी शरतरंग चहुँ वोर ॥
वीर रतन बहु रतन विराजत समर सेवार हिलोर ॥
धर्मसुवन अरु नृप दुर्योधन वणिक बने सजि भोर ॥
तुम भीषम भुजबल जहाज चढ़ि, चहत जान वहिवोर॥
प्लवत पार कौन धों याको यह तौलत मनमोर ॥
पार सोई रघुराज होइगो तेहि नाविक वरजोर ॥ ७ ॥
दोहा–भई देवव्रत बाणसों, व्यथित पांडवी सैन ॥
तब यदुपति लै पार्थ कहँ, आयो सन्मुख भैन ॥८॥
छंद--जुरे दोउ समर महँ कोप सरसायकै ॥ इतै शर समर अँधियार चहुँदिशि भरत दरत भट प्रबल पारथ प्रबल आयकै ॥ उतै भीषम सुभट समर भीषम महा भानु ग्रीषम सरिस झिल्यो सरसायकै ॥ चले दुहुँ वोरते घोर शर चंड आति छिपत प्रगटत उभै वेग दरशायकै ॥ सखाअर्जुन इतै भक्त भीषम उतै दुहुँनकी प्रीति हिय तोलि हरिध्यायकै ॥ गयो चढ़ि चित्त कछु सरस शंतनुसुवन निरखि अर्जुन वदन रहे मुसक्यायकै॥ मोरपण रहै धौं आजु गंगेयको दुहन गुणधर्यो अस ठीक उरठा-

यकै ॥ भक्त साति हेतु मोहिं असाति ह्वैबो उचित अवशि रघुराज रणप्रणहि बिसरायकै ॥ ८ ॥
कियो कुरु पितामह परम विक्रम तहाँ ॥ झारि शर शूर शिरताज तेहि समयमहँ लस्यो दलमध्य मनु प्रलय अंतक महा ॥ रुकत नहिं बनत तहँ हनत नहिं शस्त्रभट जनत नहिं रोस हठि गुणत निज मीचहै।चटक भट हटत सब बढ़त नहिं मढ़त दुख कढ़त मुखहाय कोउ परे पलकीचहै ॥ मत्तसुवितुंड बहु झुंड विवशुंडह्वै रुंड अरु मुंड गिरि कुंड शोणितभरयो॥भये तनु जंजरन लाग मनु खेजरन धर्म नृप सकलदल बाण पंजर परयो॥ दिसाति नहिं दिशा मनु भई भादँव निशा ब्रह्मपुरलों किसा चलि रही वीरकी ॥ धीरतजि वीर लहि पीर अति जीरह्वै भीरलै भागिगे भीर गणितीरकी ॥ नकुल सहदेव भट भीम सुविराट नृप द्रुपद औ द्रुपदसुत आदि जेतेरहे ॥ कोउनहिं धनुष सन्मुख सरुष जात भो रोम मुख मुखनि शर मुखनि लगि दुखलहे॥धर्मनृप हारि हियहारि सुविचारि लिय टारि धीरज चहे वनहिं ताजिरारिहे ॥ भटन परचारि कह विरद उच्चारि मुख पै न रुकिसके भट भगे धनुडारिहै ॥ झिले कौरव सकल हनत आयुध प्रबल करत गलबल चपल मच्यो खलबल खरो ॥ कहाँ पारथ प्रबल कहाँ सात्यकि सुभट कहाँ यदुनाथ प्रभु खरो यहि अवसरो ॥ विजयस्यंदनहिंकी आड़ गहि सात्यकी खरो निज कुलविरदसुरति करिकेवलो ॥ बारही बार मुखकरत उच्चार अस फिरहुरे फिरहु भट समर मरिबोभलो ॥ प्रलयादिय पारि दलपांडवी दलन करि गंगसुत जंग रँग अंग उमगायकै ॥ देवकीसुवनको सहित कुंती सुवन सरथ सहबाजि लिय शरनसों छायकै॥सिंहरव भरतकोदंड मंडल करत चहूँदिशि संचरत भटक चितचायकै॥भनत रघुराज यदुराज सुमिरत चरण तकत तिरछोहँ मुखमंद मुसकायकै॥९॥

दोहा—भीषम शर लगि अति व्यथित, ह्वैगो पांडुकुमार।
धनुष धरणको करन में, रह्यो न नेकु सँभार ॥ ९ ॥

पद—पारथ ताक्यो समर मझारि ॥
गहत बनत नहिं धनुष विशिष कर मूर्च्छ्योसुखश्रमभारी॥
भीषम शरपंजर महँ परिकै निज विक्रमहिं बिसारी ॥
भयो अचल निज रथ पर पारथ मानि लई हिय हारी॥
काँपत वदन वचन नहिं निकसत आँखि न सकत उघारी
भूली पूरबकेरि प्रतिज्ञा जो निज वदन उचारी ॥
बिजयलाभ दुर्लभ उपज्यो मन सबविधि भई लचारी॥
श्रीरघुराज अधार येक अब देखिपरत गिरिधारी ॥१०॥
भीषम शर क्षण क्षण अधिकात ॥
मूँदे पारथ सारथि रथयुत तुरँग नहीं दरशात ॥
बार बार हरि दाबत रथको तबहुँ उड़ो जनु जात ॥
ताजनहू बाजिन तनु लागत पैन वेग सरसात ॥
बागहुछूटिगई हरिकरसों नहिं कपिध्वज फहरात ॥
मूर्छित परे चक्ररक्षकदोउ लहे विशिष बरघात ॥
करत बनत नहिं तहँ प्रभुसों कछु कौरव सब मुसकात॥
श्रीरघुराज भक्त प्रणपालन मानहु कछु नबसात॥११॥
यदुपति फिरि फिरि हाथ पसारी ॥
बार बार अर्जुनहि डोलावत मापत वदन उचारी ॥
धौंमरिगये किधौं जीवतहौ बोलहु आँखिउघारी ॥
कहतरहे अस वचन सभामहँ मैं गांडीवहि धारी ॥
दंडद्वैकमहँ कौरवदलको डरिहौं अबशिसँहारी ॥
सोप्रणकी सुधि भूलिगई अब कत दीन्हो धनुडारी ॥
उठहु उठहु अब चेत करहु तनु तेरी बहु बड़वारी ॥

आजु पांडुकुलकी मर्यादा लागी तोहिमहँ सारी ॥
धर्म भूप तुव बल चढ़िआयो देदुंदुभी प्रचारी ॥
होत शिथिल अब तोहिं समरमहँ कोकरिहैरखवारी ॥
कादर सरिस शिथिल निरखत तोहिं बिलखत बुद्धिहमारी
कैसेके अस विक्रममहँ जग कीरति चली तिहारी ॥
सखा साँच हमसों तुम भाषहु भलकै मनहिं विचारी ॥
किधौं विजय अभिलाष अहै कछु किधौं मानिलियहारी॥
जामें जीति होइगी तिहरी सोइ माति करन हमारी ॥
श्रीरघुराज तोहिं सम मेरे कौन मीत हितकारी ॥ १२ ॥
हरि हर वर सुअवसर जानि ।
तज्यो पारथको तुरत रथ चुकत दल निज मानि ॥
देव व्रत पर द्रुतहि दौरत छवि न जाति बखानि ।
भोगि भोग समान भुज ऊरध उठ्यो छबिखानि ॥
परम परकाशित सुदर्शन लसत मंजुल पानि ।
मनु सनाल सरोज पर रवि बैठ आसन ठानि ॥
बजत मृदु मंजीर पद प्रिय पीतपट फहरानि ।
समर रज रंजित रुचिर कछु अलक मुख विथुरानि ॥
छोंनिलों पट छोर छहराति गहत युगल भुजानि ।
मनहुँ माधव हरत महिकी भूरिभीर गलानि ॥
मर्‍यो भीषम मर्‍यो भीषम कढ़ित दोउदल बानि ॥
तजत नाहिं कोउ वीर शर धनुरहे निज निज तानि ॥
नैन नेसुक अरुणराजत मंदगति दरशानि ॥
जातज्यों गजराज पर मृगराज अमरष आनि ॥
कौन द्वितिय दयालु जनहित तजै जो निजबानि ॥
कृष्णपै रघुराज मतिगति बार बार बिकानि ॥

धावत आवत सन्मुख हरिको भीषम निरखि परमसुख पाग्यो ॥
तजिबो विशिष बंद करिदीन्हो अनिमिष सुखमा निरखन लाग्यो॥
दोउ करजोरि हुलसि बोल्यो सुख धन्य धरामहँ मोहिं कर दीन्हो॥
निज जन जानि दयानिधि निजप्रणटारि मोर प्रण पूरण कीन्हो॥
आवहु आवहु अब नरुकौ कहुँ मारहु चक्र अवशि मोहिंकाँहीं॥
वितेसातसै संवत जगमें अस अवसरहौं पायो नाहीं ॥
समर मरण अस पुनि तुव सन्मुख पुनि तव चक्रहिंते जो पाऊँ॥
तौ सुर असुर चराचर देखत हौं वैकुंठ निसान बजाऊँ॥
योगी यती नाहिं सुर नर मुनि कोटि यतन करि कबहुक पामैं॥
सो मोहिं हननहेतु महि धावत को मोसम अब धन्य धरामैं॥
पूरण काम दीन जन वत्सल पूरण कीन्हो मम मन कामा ॥
वीर शिरोमणि यह तवमूरति वसै सदा मेरे उरधामा ॥
जै पारथ सारथि यदुनायक जनप्रण पूरक वानि तिहारी ॥
मोसम अधम दीन दासनको दूजो नाहिं कोउ सकै उधारी ॥
ह्वै सारथि सहि दुसह घातशर निज प्रणताजि पूरयो प्रण मेरो ॥
जन रघुराज नाथ देवकिसुत अस स्वभाव त्रिभुवनमहँ तेरो॥१३॥
हरि सुनि शंतनु सुतकी बात ॥
तकत तनक तिरछे भीषमपै मंद मंद मुसकात ॥
कह्यो वचन प्रभु यह रण कारण तैहीं म्वहि दरशात ॥
जो बरजत प्रथमै कुरुनाथै तौ नहोत कुलघात ॥
बोल्यो भीषम बहुरि जोरिकर यह सत यदपि जनात ॥
कंसहिं कुलके बरज्यो सो नहिं मान्यो कहा बसात ॥
हरि कह तब यदुकुल महँ असकोउ रह्यो नवीर विख्यात ॥
जैसे तुम त्रिभुवनमहँ धनुधर धर्म निरत अवदात ॥
भीषम कह्यो जो समर न होतो तो केहिहित तजिभ्रात ॥

मोहिं अधमहि धनि धरणि बनावन होतहु देवकि जात ॥
यहि विधि भाषत वचन परस्पर जस जस हरि नियरात ॥
तस तस श्रीरघुराज भीषमहिं आनँद उर अधिकात ॥ १४ ॥
रथतजि दौरत हरिको हेरी ॥
पारथ हूँ रथतजि दौरयौ द्रुत हानि जानि निजकीरति केरी ॥
भुज विशाल सों भुज विशाल गहि लपटि गयो रोकन बरजोरी॥
मनु युग नव नीरद मारुत वश मिले गगनमहँ शोभ अथोरी ॥
पेलि चल्यौ लै सखा साँवरो भीषम वोर वीर रस बाढ़ो ॥
तब पद रोकि पुहुमि प्रभु पदगहि रोक्यो विजय वचन कहिगाढ़ो॥
पूर पितामहको प्रणकीन्हो अपनो प्रण आयुध गहि टारो ॥
लौटि चलौ स्यंदन यदुनंदन हौं कंदन करिहौं दलसारो ॥
तव प्रताप कछु दुर्लभहै नाहिं कीजत वृथा रोष कतभारी ॥
राखहु नाथ मोरि मर्यादा तुम समरथ सबभाँति मुरारी ॥
सखा वचन सुनि विहँसि मंद मुख मंद मंद निज स्यंदन आई ॥
श्रीरघुराज नाथ देवकिसुत राजत बाजिन बाग उठाई ॥ १५ ॥

दोहा—अंत भयो भारत समर, भाइन सह रणधीर ।
बैठायो नृप आसनै, धर्म नृपहिं यदुवीर ॥ १० ॥

ताही निशा नरेश सुखारी । सैन कियो निज भवन हतारी॥
बाकी निशा याम नृपजाग्यो । यदुपति चरणन सुमिरन लाग्यो॥
बहुरि विचार कियो मनमाहीं।यहि क्षण हरि दरशन हित जाहीं॥
चल्यो अकेल नृपति हरिपासा ।शयन करत जहँ रमानिवासा॥
बैठ रह्यो सात्यकि तहँ द्वारा । देखि नृपहिं उठि कियो जुहारा ॥
पूछ्यो भूप कहाँ है नाथा । सात्यकि कह्यो जोरि युगहाथा॥
मोहिं नाथ द्वारे बैठाई । काह करैं नाहिं परै जनाई ॥
भूपति मंद मंद सानंद । गे जहँ यदुकुल कैरवचंद ॥

प्रभु उठि सेज किये पद्मासन। ध्यान करत निश्चल अरिनाशन॥
प्रभुको कौतुक लखि नृपराई। विस्मित ह्वै ठिठुक्यो तेहिं ठाई॥
ठाढो रह्यो दंड द्वै राजा। बोल्यो कमल नयन यदुराजा॥
देखि नृपहिं उठि मिल्यो मुरारी। बैठायो निज सेज मझारी॥
दोहा—भूपति मन विस्मित तुरत, प्रभु सों कह करजोरि।
यह शंका वारण करहु, नाथ कृपाकरि मोरि॥ ११॥
जगत जीव जड़ चेतन नाना। नाथ करै तिहरो पद ध्याना॥
कीजत ध्यान कौन कर आपू। देहु बताय प्रचंड प्रतापू॥
भूपति बैन सुनत मुसक्याई। बोले वचन मधुर यदुराई॥
मोहिं ध्यावत सब जग कहि नाऊँ। मैं निज दासन को नितध्याऊँ॥
यहि अवसर शरसेज सुखारी। भीषम परयो महाधनुधारी॥
ताकर ध्यान करौं यहिकाला। द्वितिय न प्रिय तेहिं सममहिपाला॥
होत उत्तरायण दिनराई। तजि है तनु मेरो पद ध्याई॥
मेरे मन उपजति यह शंका। यह मोहिं लागन चहत कलंका॥
यदुपति कृपा कियो नृप धरमें। पै न बतायो कछु शुभकरमें॥
धर्म कर्म तप योग अचारा। ज्ञान विज्ञान विराग विचारा॥
राजनीति अरु अर्थहु कामा। साधन योग सकाम अकामा॥
विधि निषेध जहँ लों संसारा। सबको भीषम जाननहारा॥
दोहा—भीषमके तनु तजत में, सकल होंहिगे अस्त।
को पुनि तुमहिं बताइहै, भूपति धर्म समस्त॥१२॥
कहो जो प्रभु उपदेशहु मोहीं। तौमैं कहौं सत्य नृप तोहीं॥
जेतो भीषम जानत अहई। तेतो नहीं अपर को कहई॥
ताते चलहु संग ल भाई। मैंहू चलिहौं सपदि तहाँई॥
पूछो जो जो तुम मनभाई। भीषम देहै सकल बताई॥
मैंहू सुनिहौं तुम्हरे संगा। अस पुनि मिली नकबहुँ प्रसंगा॥

दोहा—यहिविधि कहि जहँ देवव्रत, लियो धारि व्रत मौन।
लगे सराहन सकल तब,मुनि मुकुंद मतिभौन ॥१६॥
गगन गिरा तहँ भई उताला। भयो उत्तरायण अब काला ॥
तब मुद मानि महा मनमाहीं। जोरि पाणिकहयदुपति पाहीं॥
सुनहु नाथ विनती इक मोरी। बाकी बात रही अब थोरी ॥
होउ खरे सन्मुखचखमेरे। बनत मोरि माया दृगहेरे ॥
हरि उठि भीषम पदढिग माहीं। खरे भये निरखत मुखकाहीं ॥
तहँ ब्रह्मर्षि देवऋषि सर्वा। चारण सिद्ध यक्ष गंधर्वा ॥
सिगरे कौतुक देखन लागे। कहहिं सकल भीषम बड़भागे॥
चारिबाहु सुंदर घनश्यामा। लसतपीतपट अति अभिरामा॥
मुकुट मनोहर कुंडल चारू। चंद्रवदन मारहु मद मारू ॥
अनिमिष नख शिख यदुपति रूपा।निरखत सजलनयनकुरुभूपा॥
तहँ नारद पर्वत अरु व्यासा। कौशिक भरद्वाज हरिदासा ॥
परशुराम कश्यप सुखदेवा। औरहु सब निरखत यदुदेवा ॥
दोहा—कहहिं परस्पर वचन वर, कौन श्रेष्ठ यहिकाल ॥
धौं सेवककी सेवना, कैधौं कृपाकृपाल ॥ १७॥
जासु नाम शंकर कहि काशी। जीवन्मुक्ति देत अविनाशी ॥
जासु नाम मुख करत उचारा। पुनि नहिं जन जन्मत संसारा॥
मरण समय जेहि सुमिरण आवत। कोटिजन्म अघ आसुजरावत॥
सो प्रभु भीषम चरण समीपै। बकसत खरो मुक्ति कुलदीपै॥
धन्य देव व्रत कुरुकुल माहीं। जेहि सम त्रिभुवनमेंकोउनाहीं॥
निरखि अनूप रूप हरि केरो। मनहि कराइ चरण महँडेरो॥
इंद्रिय सकल यकाग्रहि कैकै। सजलनैन पुलकिततनु ह्वैकै ॥
जोरि पाणि कुरुवंश प्रधाना। कह्यो वचन सुनुकृपानिधाना॥
संवत सुखद सप्त सतबीतै। कबहुँ नजगकारज सोंरीतै ॥

कियो जन्म भरि मैं अब कर्मा ।स्वप्नेहु नहिं जानेहु शुभकर्मा ॥
कौन सुकृत रीझो यदुराई । नाथ परत नहिं मोहिं जनाई॥
सकल मुनिन पद मोर प्रणामा। अब मोंहिं यकदीसत घनश्यामा

दोहा-असकहिकै करजोरिकै, मंद मंद मुसकाइ ॥
लग्यो करन स्तुति विमल, हरिकी चित्तलगाइ॥१२॥

कवित्त ॥ प्रजापति ईश आदि देवनके ईश जेते ईश तिनहूको त्यों अनीशहूंको ईशहै ॥ करनविहार लै अनेक अवतार कियो असुर संहारि ध्यावई हजार शीशहै ॥ आनँदको कंद रघुराज करुणाको सिंधु सिद्ध वृंद नावत पदारविंद शीशहै ॥ देइगति सोई आज मोंहिं यदुवंशराज खरो जो समाज मध्यआगे जगदीशहै ॥ १ ॥ नवल तमालतनु सायुध विशाल बाहु परमरसाल पट राजै बिंदु भालहै ॥ कालहुको काल लोकपालनको पाल जाहि ध्यावै सबकाल सुरपाल चंद्रभालहै ॥ मुखउडपालपै विराजत अलकजाल अधर प्रवाल उर मंजु वनमालहै ॥ रघुराज ऐसे काल सोई सुधिलेन वाल दीनको दयाल येक देवकीकोलालहै ॥२ ॥ तरल तुरंगनकी बाग एक पाणि लीन्हे येक पाणि कीन्हे कसा विजयविजयारथी ॥ रण रज रंजित अलख मुख डोलै वान रथको धवावत सुधर्मको यथारथी॥ झरै श्रम स्वेद विंदु मेरे शर पंजरसों जंजर कवच यदुकुलको महारथी ॥ बसै रघुराज ऐसी मूरतिहियेमें आज दीननको स्वारथी सो पारथको सारथी॥ ३॥ धर्मनृप हेतु धर्मराखन धरानिकेत करि कुनजारि हरी आय कुमतीनकी ॥ बंधु वध अवसो विचारिकै विभीत भीत भीत हरयो गीता गाइ पारथ प्रवीनकी मम कृप द्रोण आदि वीर विंशिषावलीजे वरन कियो है मीचु आपने अधीनकी ॥ रघुराज आज यदुराजही सों मेरो काज

तारणकी वानि जाकी जाहिर है दीनकी ॥ ४ ॥ धर्म क्षितिप तिकी उछिन छिन्न सेना देखि दासनके हेतु निज प्रण विसरायोहै॥ मेरो प्रण पूर करिवेको रथ रोकि तहाँ टेरि सात्यकीको भगवंत यों सुनायोहै ॥ जानदे परान कादरानको नमारोवीर ऐसीभाषि मेरे मारिवेको चित्त चायोहै॥रघुराज सोई प्रभु वसै उर मेरे आज स्यंदनको छोड़ि यदुनंदन जो धायोहै ॥५ ॥ करमे अनेक भान सोविराजमान चक्र यानको विहाइ वान छाइ दलचार्‍यो वोर ॥ ममशरविद्ध अंग अंग जंग अंगनमें अंग अंग शोणितके विंदु सुख मा न थोर ॥ सन्मुख फरात पीतपट द्युति छहरात मानत नवा रनकी वात विजय वरजोर ॥ मूरति वसै सो आज मेरे उर रघुरा-ज मोहिं सबभांति ते भरोसो देवकीकिशोर ॥६॥ धर्मराज राज सूय राजन समाज माधि वोल्यो कटु वचन अज्ञानि चेदिराज है ॥ कोटिग्रहराज सों विराजमान चक्रसों उतारि शीश कीन्हो जगदीश मुक्ति भाजहै ॥ कीन्हो उतपात देवराजके दराज कोप गहि गिरिराज राख्यो ब्रज ब्रजराजहै॥रघुराज वीर शिरता-ज जनकारी काज आज यदुराज जूके हाथ मेरी लाज है ॥७॥

दोहा—असकहिकै करजोरिकै, निरखत अनिमिष रूप ।
गह्यो देवव्रत मौनव्रत, करि मन अचल अनूप ॥ २० ॥
ऐंचि अनिल पुनि नाभितें, हृदयाकाश विहाइ ।
दियो वंद करि द्वार नव, कृष्ण कृष्ण मुखगाइ ॥ २१ ॥
ब्रह्मरंध्रसों निकासिकै, पार्थिव छोंड़ि शरीर ।
सन्मुख ठाढ़ो साँवरो, भयोलीनकुरुवीर ॥ २२ ॥

वजे विपुल दुंदुभी अकाशा । जय जय ध्वनिछाई दशआसा॥
धन्य धरामहँ कुरुकुल वीरा । वोलि उठी सिगरी मुनिभीरा॥
जरो वसन सम भयो शरीरा । परस्यो माथ हाथ यदुवीरा ॥

कोउ नहिं भीषमसमभुविभयऊ। प्रभुहिं ठाढ़करि तनुतजिदयऊ
मृतककर्म पांडव सब कीन्हो। यदुपति ताहि तिलांजलिदीन्हो
सुमिरत भीषम वचन प्रमाना। आये भवनसहित भगवाना॥
बैठि सभामधि नृपहि बुलाई। कह्यो बुझाइ वचन यदुराई॥
भीषम जो जो तुमहिं सुनायो। सो कोउ सुन्यो न अरुकोउगायो
मोरहु नहिंजानो यतनोई। कहै यदपि जग मोहिं बड़ोई॥
जो अधीन करिवो म्वहिं चाहै। भीषम वचन सिंधु अवगाहै॥
शास्त्रन श्रुति सिद्धान्त सदाहीं। भीषम भणित भूरि भवमाहीं॥
और न कोउ अस मोकहँप्यारो। यथा पितामह भूप तिहारो॥

दोहा—असकहिकैयदुनाथप्रभु, गवनद्वारकाकीन।
धर्मभूप भीषमभणित, सकलभाँतिगहिलीन॥ २३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेतृतीयोऽध्यायः॥ ३॥

अथ क्षत्ताकी कथा॥

दोहा—अबवर्णौंमैंअतिविमल, क्षत्ताको इतिहास।
जाहिसुनेहठिहोतहिय, श्रीहरिप्रेमप्रकाश॥ १॥

मुनि मांडव्य नाम इक रहेऊ। अभय जगत विचरण सोगहेऊ॥
येक समय विचरत जगमाहीं। लख्यो अनूप भूप पुरकाहीं॥
पुरबाहिर किय निशा निवासा। तहँकोउ चोर भूरिधनआसा॥
राजकोश निशि प्रविशे जाई। ले मणिमाल भये भयपाई॥
पाछे दौरे द्वार प्रचारी। भयो कोलाहल नगरमँझारी॥
चोर वचव आपनो न देख्यो। मुनि मांडव्य समीप परेख्यो॥
मुनि गलडारि तुरत मणिमाला। छिपे चोर आये पुरपाला॥
पहिरे माल लख्यो मुनि काहीं। घेरचो चोर कहत चहुँघाहीं॥
मुनिं कहँ पकरि भूपढिग लाये। धरचो चोर असवचन सुनाये॥

भूपति कहँ सूरीदे देहू। यासों कोउ नहिं कियो सनेहू॥
भट मुनिकहँ पुरबाहिर लाई। दीन्हो सूरीमाहिं चढ़ाई॥
गुदसों शिरलों प्रविशी सूरी। मुनिकहँ व्यथाभईनहिं भूरी॥

दोहा—भयो भोर तब नगरजन, जीवतमुनिकहँ देखि।
जाइकह्यो नरनाथसों, अतिशय अचरजलेखि॥ १॥

राजहु देखन कहँ तहँ आये। मुनिकहँ देखि महादुख पाये॥
जानि महामुनि मनहिं महीपा। गिरचोत्राहि कहिचरणसमीपा
सूरीते मुनि तुरत उतारी। कह्यो नाथ मोहिं लेहुउधारी॥
मोसों भयो महा अपराधा। पैहौं यमपुर दंड अगाधा॥
तब नृपसों मुनि वचन उचारा। अहै न नृप अपराधतिहारा॥
तुम तो चोर जानि दिय बाधा। यह सिगरो यमको अपराधा॥
असकहि गे यमसदन मुनीशा। देखत यमनायो पद शीशा॥
मुनिकह कौन पाप मम देखी। दियो दंडते मोहिं विशेषी॥
यमकह रहे बाल तुम जबहीं। यक फरफुंदाके गुद तबहीं॥
सींक डारि तुम ताहि उड़ायो। सोइ अपराध दंड यह पायो॥
तब मुनि कोपि कह्यो यमकाहीं। कछु विचार तोरे उरनाहीं॥
धर्म अधर्म बाल नहिं बोधू। ताते वृथा तासु परक्रोधू॥

दोहा—वर्षचतुर्दश जन्मते, बालकरै जो कर्म।
पुण्य पाप नहिंहोइतिहि, यही सनातनधर्म॥ २॥

विना विचार दियो तैं दंडा। देहुँ शाप मैं तोहि प्रचंडा॥
शूद्र योनि पावै यमराजा। तेरो काम करै दिनराजा॥
सोइ मुनि शाप विवश यम आई। भयो विदुर सब गुण समुदाई॥
नृप विचित्रवीरज सुतदासी। प्रमुख भागवत जगत निरासी॥
रह्यो सुखित हस्तिनपुर माहीं। ध्यावत निशिदिन यदुपति काहीं॥
जब पांडव करिकै वनवासा। वसि विराटपुर लहे सुपासा॥

तब गुणि कौरव कुल संहारा। आयो तहँ देवकी कुमारा॥
दुर्योधनहिं बुझावन हेतू। गयो नागपुर यदुकुल केतू॥
सुनि यदुपतिकी नगर अवाई। कौरव गये लेन अगुवाई॥
लाय प्रभुहिं दुःशासन मंदिर। दीन्हो वास सुपासहु सुंदर॥
सुनि यदुपति आगम द्रुतधाई। विदुर परचो चरणन शिरनाई॥
रह्यो न तनु कर तन कसम्हारा। आँखिन वही आँसुकी धारा॥

दोहा—सिंहासनते उठि हरी, लियो विदुर उरलाय।
कहि नसके कछु प्रेमवश, अंवक अंबु वहाय॥३॥

विह्वल भये प्रेमवश दोऊ। दंड द्वैक पूछ्यो नहिं कोऊ॥
पुनि हरि पूँछि तासु कुशलाई। प्रीति रीतिहू भाति देखाई॥
पुलकित प्रेम मगन मतिवंता। अनिमिष निरखत छवि भगवंता॥
भनत वचन विरचत सेवकाई। विदुर दियो सब निशा बिताई॥
भयो भोर मज्जन हित गयऊ। यदुपतिहू मज्जन करि लयऊ॥
भूषण वसन शृंगार सँवारी। परिकर जित निज आयुध धारी॥
गये सुयोधन सभा मझारी। उठी सभा यदुनाथ निहारी॥
यथा योग्य मिलि सब कहँ नाथा। वृद्धन कहँ नायो पुनि माथा॥
भये कनक आसन आसीना। बैठे भीषम आदि प्रवीना॥
प्रभु सुयोधनै बहुत बुझायो। पै नहिं ताके मन कछु आयो॥
शूची अग्र भूमिमैं नाहीं। देहौं नाथ पांडवन काहीं॥
जुवाजीति पायो हम सिगरो। नहिं देहौं तौ का मम बिगरो॥

दोहा—करहु वचन श्रम हरि वृथा, भोजन भयो तयार।
खान पान द्रुत कीजिये, सहित सकल परिवार॥४॥

तव हरि कछुक कुपित कह बानी। दुर्योधन तुम अति अभिमानी
छलकरि पाँडुसुतनसों जीते। कबहुँ न पापकर्म सों रीते॥
हम न भुवन तुव भोजन करिहैं। पापी अन्न उदर नहिं धरिहैं॥

उठे सभाते अस कहि नाथा। नाइ वृद्ध भीष्मादिक माथा॥
तुरत विदुरके सदन सिधारे। विदुर नारिसों वचन उचारे॥
हम भूखे भोजन कछु देहू। तुम पर मेरो सत्य सनेहू॥
रही नहात विदुरकी नारी। कनक पीठपर वसन उतारी॥
प्रभुके वचन सुनत सुखपाई। तनु सुधिगई तुरत उठिधाई॥
प्रेममगन दृढ़ ढारत नीरा। बिसरि गयो पहिरब तनुचीरा॥
घर भीतर तिहि नग्न निहारी। हरि निज पीतांबर दिय डारी॥
पहिरि प्रभुहिं भीतर लै जाई। आसुहि कनक पीठि बैठाई॥
खोजिसदन कदली फल ल्याई। छीलि २ छिलिका अतुराई॥
प्रेम विवश सुधि नाहिं सब भाँती।छिलका प्रभुहि खवावति जाती

दोहा—यदुपतिहूको प्रेमवश, रही न कछु सुधि देह।
छिलका भोजन करत प्रभु, अद्भुत निरखि सनेह॥८॥

विदुर सुन्यो प्रभु ममगृह गयऊ। तुरत सभाते धावत भयऊ॥
आइ भवनसो कौतुक देख्यो। निज तिय मूरखको करि लेख्यो
सतफेकति छिलकानि खवावति। बार बार दृग अंबु बहावति॥
बैठी लखि प्रभुके अतिनेरे। विदुर वचन तब अस तेहि टेरे॥
रेनिलज्जि सब भांति अचेती। सतहि फेकि छिलिका कस देती
बैठी बिन सुधि प्रभु ढिग कैसी। कबते भई तोरि मति ऐसी॥
पतिहि विलोकि लाज अति लागी। करते दिये छिलकको त्यागी
विदुर बुलायो तुरत सुवारा। बनवायो छप्पनहु प्रकारा॥
निजकरसों प्रभु चरण पखारी। सो जल लियो शीश निजधारी॥
सींच्यो सिगरो भवन सुजाना। कियो कोटिकुल पूत महाना॥
पुनि अंगनि अँगराग लगायो। सुमनमाल सुंदर पहिरायो॥
यहि विधि कर षोड़श उपचारा। विदुर करायो पुनि जेउनारा॥

दोहा—कह्यो विदुरसों तब हरी, ये छप्पन पकवान।
मीठ मोहिं लागत नहीं, बैछिलकान समान ॥ ६ ॥
बोले विदुर पाणि युग जोरी। प्रीतिरीति ऐसे प्रभु तोरी ॥
दीननपै हठि द्रवहु कृपाला। दीहदयानिधि देवकि लाला ॥
प्रेम मग्न पुनि बोलि न आयो। उठि यदुनाथ विदुर उरलायो॥
पुनि रथचढ़ि पांडवन समीपा। सुखित गवन किय यदुकुलदीपा
विदुर बहुरि दुर्योधन काहीं। समुझायो सो मान्यो नाहीं ॥
तब धरि धनुष द्वार हरिदासा। निकरिगयो गुणि कुरुकुलनासा॥
तीरथ करत बहुत दिन बीते। भक्तिप्रभाव जगत भय जीते॥
फिरत फिरत मधुपुरी सिधारे। तहँ उद्धव भागवत निहारे ॥
दौरि लियोउर ललकि लगाई। मानहु गयो कृष्ण कहँ पाई ॥
दीजे जानि प्रीति भरपूरी। पूछि कुशलशिरधरि पग धूरी ॥
तब उद्धव सब कह्यो हवाला। फेरि कह्यो सुधि नहिं यहि काला
प्रेषित नाथ बदरिवन जैहौं ॥ तहँ तनुतजि प्रभु निकट सिधैहौं॥
दोहा—नाथ विरहवश येक क्षण, बीतत कल्प समान ॥
तुम मित्रासुतसो सकल, पूँछि लिह्यो विज्ञान ॥ ७ ॥
असकहि उद्धव तुरत सिधारा। आये विदुर सपदि हरिद्वारा ॥
तहँ मैत्रेय समीपहि जाई। परचो चरणपुलकित शिरनाई॥
पूजि प्रमोदित वचन उचारा। तुम मित्रासुत बुद्धि उदारा ॥
दीजै मोहिं ज्ञान विज्ञाना। संत होतहै कृपानिधाना ॥
तब मैत्रेय कह्यो अस वानी। कृष्णरीति तुम्हरी सब जानी ॥
कहौ कौनविधि तुमहि सिखावै। जिनके हरि अपने ते आवै ॥
पै जबलों यह रहै शरीरा। तबलों हरि यशगावउ धीरा ॥
यही सारहै किये विचारा। रामनाम संसारहि सारा ॥
असकहि हरि गुण गावन लागे। उभय भागवत हरि अनुरागे ॥

विदुरहि पुनि हरि विरह सतायौ। निज शरीर सुरसरी बहायौ ॥
गयो कृष्ण पुर देत निसाना। विदुर महाभागवत प्रधाना ॥
यहमैं विदुरकथा कछु गाई। भारत भागवतहुकी पाई ॥
दोहा—भारत अरु भागवतमें, यह गाथा विस्तार ॥
ग्रंथवृहदके भीतितें, मैंनाहिं कियो उचार ॥ ८ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ दानपतिकी कथा ॥

दोहा—कहौं दानपतिकी कथा, अब मैं चित्त लगाय ॥
जाहि सुनत सब रसिकजन, जात परम सुखपाय १॥
जब केशीकर भयो बिनासा। सुनत कंस पायो अतित्रासा ॥
तुरत दानपति काहँ बुलायो। ताहि मनोरथ सकल सुनायो॥
जाहु दानपति गोकुल काही। तुम सम कोउ हितकर ममनाहीं
ल्यावहु राम कृष्ण दोउ भाई। धनुषयज्ञकी बात सुनाई ॥
सुनि नृपवचन दानपति काना। शोक हर्ष उर भयो समाना ॥
कहत नाथकी ल्यावन बाता। चाहतकरन तासु इत घाता ॥
कैसेंकै प्रभु सन्मुख जैहौं। घातकरावन मैं इत लैहौं ॥
पै इक मोहिं अपूरुब लाभा।लखिहौं राम श्याम तनु आभा॥
यह शठ समरथ मारन नाहीं। ह्वैहै नाश अविशि यहि काहीं॥
असविचारि सुफलकको नंदन। गोकुलओर चल्यो चढ़िस्यंदन
यदुपति चरणकमलरति गाढ़ी। दीह दरश लालस उर बाढ़ी ॥
महाभागवत मारगमाहीं। मनमें मुदित विचारत जाहीं ॥
दोहा—कौन पुण्य पूरुब कियो, दियो कौन मैं दान ।
जेहिप्रभाव इन नयनसों, लखिहौं कृपानिधान ॥ २ ॥
जे पद दुर्लभ योगिनकाहीं। तिनहिं परसिहौं मैं कर माहीं ॥

पतितशिरोमणिविषयविख्याता। अवनि अघीगणअधमअघाता
ऐसे म्वहिं दरशन हरिकेरो । यह अचरज सब कही घनेरो ॥
ह्वैहै जग जंजाल पराजै । निरखंत नवनीरद यदुराजै ॥
कौन कंससम मम हितकारी । जो पठयो लावन गिरिधारी ॥
इन आँखिनसों हरिपद कंजन । लखिहौं ललकि मुनी मनरंजन
जेहि नखकी द्युतिमंडल देखी । अंबरीषआदिक सुखलेखी ॥
तीक्षणतम संसार नशाई । भये मुक्त वैकुंठ सिधाई ॥
यदपि काज कारनके करता । यद्यपि अहंकार नहिं धरता ॥
निज तेजहिं अज्ञान भ्रमनाशी । निज मायाकृत जगत प्रकाशी॥
सखन सहित वृंदावन माहीं । रमाकंत विलसंत सदाहीं ॥
हरिगुण लीला सवलित वानी । नाशहिं कोटि अघनकीखानी॥

दोहा—जगशुचिकर शोभनकरन, जीवन जीवनदानि ।
हरियश बिन वाणीसोई, लेहु मृतकसम जानि ॥२ ॥

जे पद पूजहिं विधि त्रिपुरारी । कमला अरु मुनिप्रीतिपसारी॥
जे पद भक्तन आनँद दाई । सुमिरत भवरुज देत मिटाई॥
जे पद गौवन पाछे पाछे । विचरत ब्रज धरणी में आछे॥
ब्रजनारी कुच कुंकुम अंकित । ते पद गहिहौं आजु अशंकित॥
जेहि मुखमें युग अमल कपोला। कुंडल मंडल लोल अमोला ॥
जेहि मुखमें अति सुभगनासिका। मंदहँसनि आनँद प्रकाशिका॥
वारिज अरुण विलोचन चारू । चितवनि तिय उपजावनिमारू
जेहिमुखअलक कुटिल छविछावन। चितवतही चखचित्तचुरावन
सो मुकुंद मुखमें चलि आजू । देखहुँ गोमधि ग्वालसमाजू ॥
हरण हेतु हरि भूकर भारा । ब्रजमें लियो मनुज अवतारा ॥
त्रिभुवनकी सब सुंदरताई । नंदकुँवरके तनु दरशाई ॥
नँदनंदन छवि नैन छकैहौं । याते अधिक कौन फल पैहौं ॥

दोहा—मेरे रथको दाहिनो, दैदै जाहिं कुरंग।
होत सुमंगलप्रद शकुन, करन अमंगल भंग॥ ४॥
निजमर्याद पाल असुरारी। श्रीहरि तिनके मंगलकारी॥
लीन्हो यदुकुलमहँ अवतारा। हरण हेतु प्रभु भूकर भारा॥
निज यश विस्तारत ब्रजमाहीं। निवसत करत चरित बहुकाहीं॥
मंगलकरन सुयश जग केरो। गावत सरलहि मोद घनेरो॥
सोसज्जनके गति गिरिधारी। त्रिभुवनके गुरु दुष्टनहारी॥
नहिं त्रिभुवन अस सुंदरकोई। कमलारही मोहि जेहि जोई॥
सो छबि इन दृगकरि अनुरागा। करिहौं पान आजु धनि भागा॥
भयो आजु मोहिं सुखदप्रभाता। देखिहौं कृष्णचरणजलजाता॥
जब देखिहौं राम घनश्यामैं। रथ तजिहौं तुरतै तेहिठामैं॥
गिरिहौं दौरि चरणमहँ जाई। लेहौं पदरज नैन लगाई॥
जेहि अंघ्रिन बुधबुधिधरिध्याना। पावहिं आशु मनोरथ नाना॥
तेई चरण करनसो गहिहौं। पुनिनहिंकवँहुयोग असलहिहौं॥
दोहा—जो कोउ देख्यो कृष्णको,सपनेहुँ माहिं नजीक।
ताके नयनन में नितै, त्रिभुवन लागत फीक॥ ५॥
रामश्याम पदवंदि ललामा। पुनि करिहौं सब सखनप्रणामा॥
धनिब्रज धाम धन्य ब्रजधरणी। धनिब्रजतरु धनि ब्रजघरवरणी॥
जो करकाल भुजँग भय मेटत। शरणागत भवरुज लघु सेटत॥
जो कर पूज इंद्रपद छायो। यह त्रिलोकको इश्वरज पायो॥
त्रिभुवन दैके जिहि कर माहीं। वलि निजवश कीन्हो तिनकाहीं
जोकर ब्रजबालन मधिरासा। परसतही बिहार श्रमनासा॥
सरसिज सौरभहै जिहिं करकी। हरत विथा ब्रजनारिन नरकी॥
सोकर ताकि दया दृग कोरे। धरिहैं नाथ माथ महँ मोरे॥
यदपि कंसको पठयो जातो। बारहिंबार मनै पछितातो॥

तदपि वैर बुद्धी मोहिं माहीं। करिहैं कबहुँ दयानिधि नाहीं ॥
वै सबके घट घटकेवासी। जानहि जियकी जगतप्रकासी ॥
तिहिक्षण कोटि जन्म अव वोवा। जरिहैं मम अमोवन्ह मोवा ॥
दोहा—जब मैं धरिहौं दौरिकै, यदुपति पद निजमाथ।
तब विशेषप्रभुशिशमम, करिहैं पंकजमाथ ॥ ६ ॥
बिना अवधिका आनद पैहौं। निजसम जग मैं कोउ गनैहौं ॥
सुहृद जाति कुलदेव हमारे। करिकै कृपा भुजानि पसारे ॥
धाय मिलैंगे मोकहँ आई। देहैं मम तन पूत बनाई ॥
कर्मबंध छूटी ततकाला। ह्वै जैहौं सबभाँति निहाला ॥
मिलि प्रणामकरि पुनि करजोरी। खड़ोहोहुँगो जबहिं निहोरी ॥
तब कहिहैं वसुदेवकुमारे। खुशी कका अक्रूर हमारे ॥
तब हम सकलजनमफल पैहैं। पुनि नहिं कछु बाकी रहिजैहैं ॥
जो करिभक्ति न हरि प्रियभयऊ।तेहि धृग वृथा जन्मविधि दयऊ
जैसे सुरद्रुमढिग सब जावै। जो जस याचै सो तस पावै ॥
खडे होउँगो जब करजोरी। रामहु देखि दीनता मोरी ॥
मिलिहैं मोहिं मंजु मुसकाई। गहियुग कर मेरे बलराई ॥
लैजैहैं निज भवन लेवाई। करिसतकार मोर दोउ भाई ॥
दोहा—पगपरि ह्वैहौं ठाढ़ मैं, जब समीप करजोरि।
तब मोतन तकिहैं तुरत, करिकै कृपा नथोरि ॥ ७ ॥
शत्रु मित्र प्रिय अरु अप्रिय हरि कोहै कोउ नाहि ॥
पैजो जस हरिको भजत, तेहि तैसे दरशाहिं ॥ ८ ॥
किय जो कंस यदुन अपकारा। सो पुछिहैं मोहिं नंदकुमारा ॥
तब मैं देहौं सकल बताई। नैकहु नहिं राखिहौं दुराई ॥
यहिविधि मनमें करत विचारा। गमनत पथ गांदिनीकुमारा ॥
छुटीबाग चोरेनकी करते। अनत डगरते तुरंग डगरते ॥

सोमथुराते चल्यो प्रभाता । पहुँच्यो रविअथवत ब्रजताता ॥
गोकुलके ग्वैंडे जब गयऊ । हरिपद चिह्न लखतमहि भयऊ ॥
थल थल ब्रज धरणी रजमाहीं । हरि बल चरणचिह्न दरशाही ॥
जोपदरजको सब असुरारी । निज निज मुकुट लेतनितधारी
भूतलके भूषणपद तेई । रहत सुखित जन जिनको सेई ॥
अंकुश अंबुज आदिक रेखा । सोहि रहे जिनमाहिं विशेखा ॥
तहँब्रजकी रजकी छवि छावनि। हरिपद अवली हिय हुलसावनि
लखि सुफल्क सुत लहि अहलादा। त्यागी तुरत लाज मर्यादा ॥

दोहा—कृष्णप्रेम सागर मगन, मुदित सुफल्ककुमार ।
पंथ अपंथ तुरंगको, कछुनहि करत विचार ॥ ९ ॥
रहीतनक तनमें न सुधि, पुलकावलि सबगात ॥
क्षण क्षण दृग जलजातसों, वहत विपुल जल जात १०

तुरत कूदि रथते अनुराग्यो । ब्रजकी रजमें लोटन लाग्यो ॥
बोलत गिरा प्रेमके हदकी । यह रजहै मेरे प्रभुपदकी ॥
धन्य धन्य मैंहौं जगमाहीं । भाग्यवंतमोसम कोउ नाहीं ॥
लोटत रहेउ उठतनहिं भयऊ । तब अनुचर चढ़ाय रथ दयऊ ॥
सन्मुख डगऱ्यो नंदनिवासा । निरखत चहुँकित गोप अवासा ॥
जनको जन्मलिहे जगमाही । पुरषारथ इतने सबकाही ॥
मथुराते चलिकै अक्रूरा । कियो जो मार्ग मनोरथ पूरा॥
इतने वीच दशा अक्रूरकी । जो न भईहै प्रेम पूरकी ॥
सोई किये दंड नहिं पावैं । जो पखंड सब भाँति बचावैं ॥
होय अनन्य दास हरि केरो । करै तासु चित हरिपद डेरो ॥
पुनि अक्रूर चलि चौकमझारी । निरख्यो रामश्याम मनुहारी॥
अनिमिष नयन भये तिहिंकाला। भयो दानप्रति प्रेम विहाला ॥

दोहा—उभय मनोहर माधुरी, मूरति चेटकचोट ।
कौनपुरुष लखि जगतमें, होतहु लोटनपोट ॥ ११ ॥
सवैया—नील औ पीत पोशाक किये कल काननमें लसै कुंडल जोटा ॥ शारद अंबुजसी अँखियाँ चढ़ होतहै लोट लगे जिन चोटा ॥ श्रीरघुराज सखानिके बीच विराजि रहे करकंचन सोटा ॥ दोहनी लीन्हे खरे खरकै दोउ दूध दुहावत नंदके ढोटा॥ ॥ १ ॥ शारद सावन मेघसे मंडित श्रीकेनिवास सुबाहु विशाल है ॥ पूरण चंद्रसे सुंदर आनन कानन फूल हिये वनमालहै ॥ ज्वानी घमंड भरे रघुराज वितुंड विराजै मनो वियवाल है ॥ दाहिने ओरखडे बलराम त्यों बाम विराजि रहे नँदलाल है॥२॥ कुलिशै धुज अंकुश अंबुज पाँयन चीन्हसो अंकित भू ब्रजकी॥ निज शोभासों ताहि सलोनी करै मुखमें मुसकानि महासजकी॥ दृगमें भरी दीह दया रघुराज रसाल सुचाल मतंगजकी ॥ अस धीरको धीरन धूरि मिलै लखि मूरति मंजु बड़े धजकी॥३॥ हीरनहार पै मोतिनमाल सुमोतिन मालपै त्यों वनमाल है ॥ अंगनमें अँगराग रँगे किये मज्जन धारे दुकूल रसाल है ॥ विश्वकेईश दोऊ प्रगटे पुहुमीको उतारन भार विशाल है ॥ आनन भास सो नाशै दिशातम रोहिणी लाल यशोमति लालहै है कलधौत कड़े करमें कटिमें कलींकिंकिणि राजति खासी ॥ बाहु विजायठ बेशबने पगनूपुर नील महाछबि रासी ॥ त्यों अंगुलीनमें शोभा भली मुदरीनकी श्रीरघुराज विभासी ॥ नीलक और जताचल मानो सुकंचन दाममें बाँधे प्रकासी ॥
दोहा—यहिविधि हरिको निरखिके, सो अक्रूरहरिदास ।
आनँद सों विह्वलपरम, परचो प्रेमके पाश ॥ १२ ॥
रथते कूदि परचो तेहि ठामा । धायो हरिसन्मुख मतिधामा॥

राम कृष्णके चरणन धाई। गिरयो दंडसम सुरतिभुलाई॥
बहत नयन आनँद जल धारा। रहि नगयो तनुतनक सम्हारा॥
प्रगटी पुलकावली शरीरा। गदगद गर रहिगयो नधीरा॥
कढि नसकति मुखते कछुबानी। प्रेमदशा किमिजाय बखानी॥
लखि अक्रूरहि तहँ यदुराई। लियो दौरि द्रुत मुदितउठाई॥
उभय भुजाभरि मिलिभगवाना। प्रेमविकल ह्वैगये समाना॥
रामहुँ दौरि द्रुतै अक्रूरे। मिलत भये अतिआनँद पूरे॥
पुनि अक्रूर करते करको गहि। लैगे भवन लिवाइ चलोकहि॥
अक्रूरहिं सादर दोउभाई। दिय पर्यंक कनक बैठाई॥
पुनि मधुपर्क दियो करमाहीं। दियो धेनु दरशाय तहाँहीं॥
पुनि अक्रूर कहँ थके विचारी। चापन लगे चरण गिरिधारी॥

दोहा—राम श्याम निजहाथसों, पुनि अक्रूरके पाइ।
धोवतभे अतिप्रीतिसों, सुरभिसलिलढरकाइ॥ १३॥

सादर पुनि प्रभु वचन उचारे। रहेउ कुशल तुम ककाहमारे॥
प्रेममगन तेहि तनु सुधिनाहीं। बोलत नहिं चितवतहरिकाहीं॥
पुनि प्रभु कही गिरा सुखपागी। तुमको कका क्षुधा अतिलागी॥
ताते भोजन करहु विशेषी। सकल भाँति अपनो गृहलेखी॥
असकहि भोजन विविधप्रकारा। लाये निजकर नंदकुमारा॥
सादर दिये अक्रूर जेवाई। विधि बहु व्यंजन नाम बताई॥
पुनि बलहरि अचवन करवायो। सादर रत्न पलँग बैठायो॥
तब बलराम धर्मकेज्ञाता। लै बीरा दीन्हो कहि ताता॥
सुमनमाल पुनि दिय पहिराई। बोलतभे आनँद अति पाई॥
अति निर्दै है कंस महीपा। किहिविधि जीवहु तासु समीपा॥
जैसे अजा समीप कसाई। सोइ अचरज जिहि दिन बचि जाई॥
जो निज भगनी सुतन संहार्‍यो। यदपि देवकी दीन पुकार्‍यो॥

दोहा—नेकहुँ दया न तिहि भई, खल स्वभाउ नहिं जात ॥
ताके पुर तुम बसतहो, पूँछहिं काकुशलात ॥ १४ ॥
यहि विधि भाष्यो नंद जब, तब अक्रूर बुधराय।
मारगको श्रम दूरि किय अतिशय आनँद पाय ॥ १५ ॥
बैठे मोदित पलँगमें, लहि हरिकृत सतकार।
पूँछ्यो मार्ग मनोरथै सकल सुफल्ककुमार ॥ १६ ॥

बहुरि दानपति राम श्यामसों। कह्यो कंस वृत्तांत कामसों ॥
होत प्रभात यान मँगवायो। राम श्याम तापर बैठायो ॥
तिहि क्षण विरह उदधि ब्रजबाढ़ो।पऱ्यो महा कसमस दुखगाढ़ो
ब्रज सुंदरी कृष्णकी प्यारी। कहत हाइ हरिलाज बिसारी॥
कोहुके तनु नहिं तनक संभारा। बढ़ी यमुनलहि आँसुन धारा॥
कहहिं महाकटु वचन अक्रूरै। निरदै करत कंतको दूरै ॥
गोपी विरह समुद्र अपारा। गिरा पैरिको पावत पारा ॥
सूरदास आदिक कवि जेते। वर्णन कियो यथामति तेते ॥
नेति नेति तेइ सुकवि बखाना। तहँ लघु मोमति कौन ठिकाना
गोपी विरह रसिक आधारा। बूड़त मिलत पार संसारा ॥
गोपिन सरिस जगत महँ देही। कोउ नभयो यदुनाथ सनेही॥
पति पितु सुत अरु तनु परिवारा। कोउ नहिं हरिसम अहै पियारा

दोहा—रसना अहिपति जीवमति, लेखक होहिं गणेश।
मसिसागर गोपी विरह, लिखि नहिं सकै अशेष ॥ १७॥

रामश्याम कहँ सुफलकनंदन। लैगवन्यौ मथुरै चढ़ि स्यंदन ॥
निरखत सुखमा रामश्यामकी। भूलिगई सुधि ताहि यामकी॥
नंदनगरते चल्यो सकारे। याम युगल पहुँच्यो अँधियारे ॥
लखि अबेर यमुनातट जाई। मज्जन करन लग्यो सुखपाई ॥
तब यदुपति अस मनहिं विचारा। यह लोट्यौ ब्रज धूरि मँझारा॥

तासु प्रभाव प्रेम अधिकारा। ल्ह्यो दानपति दास हमारा ॥
ब्रजरज परसि प्रभाव विशेषी। लेइ दानपति आजुहिं देखी ॥
अस गुणि जब अक्रूर यमुना में।मज्जन करन लग्यो तिहि जामें
तब हरि ताहि विकुंठ पठायो। आपन सकलविभूति दिखायो॥
सो वर्णन भागवत मझारी। लिख्यो संतजन सकल विचारी॥
तहँ अक्रूर अति पुलकित गाता॥ स्तुति कियो सुवचन विख्याता
पुनि कढि जलते बाहर आयो। रामश्याम कहँ माथ नवायो ॥

दोहा—विनय कियो करजोरकै, यदुपति कृपानिधान ॥
मोहिं कियो धनि धरणिमें, अधम अधीश प्रमान ॥१८॥

असकहि पुनि दोउ भ्रातन काहीं। रथचढ़ाय लायो पुर माहीं ॥
कह्यो नाथ ममसदन सिधारहु। पदजल कुल परिवारहु तारहु॥
क्षणभरि तजिहों नहिं तुमकाहीं। जीवन सफल और विधि नाहीं
कह्यो नाथ तुम कका हमारे। मोको तुम प्राणहुते प्यारे ॥
ऐहैं हम गृह अवशि तुम्हारे। जैहैं जब पितुकेरि तुम्हारे ॥
प्रभु शाशन शिरधरि सुख पाई। गयो दानपति सदन सिधाई ॥
तब मधुपुरी निकट अमराई। बैठे हरिसंयुत बलराई ॥
इतनेमें नंदादिक आये। हरि पुर निरखनहेतु सिधाये॥
ग्वालबाल संयुत गोपाला। रामसहित रवि अथवत काला
प्रविशे पुर देखनको शोभा। जाहि लखत मुनिजन मनलोभा
पर्‍यो कोलाहल पुरी मँझारी। आये हलधारी गिरिधारी ॥
नगर नारि नर देखन धाये। खानपानको भानु भुलाये ॥

दोहा—रहे जे जस ते तस सकल, पट भूषण विपरीत।
दौरि दौरि उठि उठि सबै,लखन लगे गुणिमीत ॥१९॥

कवित्त—साजिकै शृंगार संग रोहिणी कुमार सखा सोहै रघुराज मुरि मोदहिं भरत जात॥ करिकै कटाक्षनि मृगाक्षिनिछकावैछै-

ल धाम धाम धूमधाम पुरमें करत जात ॥ केतीभई कायल ते परी घूमैं घायलसी केती बालबायलसी जियरो जरत जात॥जौन ही डगर ह्वैकै कान्हरो कढत तहँ तौनहीं डहरमें कहरसी परत जात ॥१॥ निमिखनेवारि घनश्यामको निहारि चित्र पूतरीसी ठाढ़ीं पुर नारि आनँदै भरी ॥ कान्हकीतकनि त्योंहीं हँसनि ॥ सुधाकी सींची पायकै सोहाग अनुराग युतहैं खरी ॥ रघुराज प्यारो प्रेम वेरी पाय नाय दीन्ही ताप हारिलीन्ही भई पुलक घ-री घरी ॥ माधवकी मूरति मनोहरीको मथुराकी पलक कपाट-दैकै धाँध्यौ उर कोठरी ॥ २ ॥

दोहा—कंसराजको रजक यक,वसनलिहे अवदात ।
अनुचर युत मदमत्त अति,चलो रहै मगजात ॥२०॥

तिहि प्रभु कह्यो कौन तुमयेहू । कछुक वसन हमहूं कहँ देहू ॥
रुषित रजक तव गिरा उचारा । रे अहीर मतिमंद गँवारा ॥
प्रथम विलोक वदन निजलेहू । कहौ फेरि पट मोकहँदेहू ॥
यह अमोल पट कंसराजके । अहैं नक्षुद्र न गोपकाजके ॥
तव करतल प्रहार हरिकीन्हौं । धरतै भिन्न शीश करि दीन्हौं॥
पहिरे वसन सखन कछु वाटे । ढील ढाल तनु भये नसाटे ॥
तहँ यक रहै धर्ममति दरजी । हारिबल गये सधावन गरजी ॥
आवत राम श्याम कहँ देखी । वायक उठ्यौ भाग्यवड़ लेखी
गिऱ्यौ चरणमें चलि शिरनाई । पुलिक प्रेम हगवारि बहाई ॥
कह्यौ जोरिकर आयसु दीजै । जानि आपनो किंकर लीजै ॥
प्रभु कह वसन साधि मम देहू । जो मनभावै सो तुम लेहू ॥
वसन साधि दीन्हौ द्रुत वायक । यदुपति कियोंताहिसवलायक

दोहा—दियो मुक्ति सारूप्य तेहि,जगमहँ विभव अतूल ।
शोभा और शरीर वल, सुमति सकल सुखमूल॥२१॥

आगे चले बहुरि दोउ भाई। सखन सहित अति आनँद पाई॥
मालाकार येक मतिवाना। रह्यो मधुपुरी भक्तप्रधाना॥
रह्यो सुदामा ताकर नामा। तासु हाटमधि हाटकधामा॥
ताके भवन गये दोउ भाई। सो देखत अतिशय अतुराई॥
पन्यो चरणगहि हेवनमाली। मैं तुवदास जातिको माली॥
करहु पुनीत गेह यदुराई। असकहि भीतर गयो लिवाई॥
उत्तम आसनमें बैठायो। अर्घ्यपाद्य आचमन करायो॥
धूप दीप नैवेद्यहु दीन्हो। चंदन प्रभु अँग लेपन कीन्हों॥
जस हरिपूजन कियो सुजाना। तैसहि सकल सखन सनमाना॥
कह्यो जोरिकर हेयदुराजू। पावनमोर कियो कुल आजू॥
सब मेंहो समान भगवाना। जे जस भजैं ताहि तस जाना॥
देव पितर ऋषि ऋणहु हमारे। आय नाथ तुम सकल उधारे॥

दोहा—धन्य भाग्य तेहि पुरुषकी,तेहि सम धन्य नआन।
जाके भवन पधारिये,ह्वै प्रसन्न भगवान॥ २२॥

सुनि मालीके वचन मुरारी। रहे मौन नाहिं गिरा उचारी॥
माली माधव मनकी जानी। धन्य धन्य निजभाग्यबखानी॥
महासुगंधित कोमल फूला। तिनकीरच द्वैमाल अतूला॥
रामश्यामके गल पहिराई। औरौ दीन्हो सखन सुहाई॥
तहँप्रभु जानि ताहि निजदासा। कह्यो माँगु जोहोवै आसा॥
नृपपद और शक्रपद भारी। विधिपद शंकर पद सुखकारी॥
अहै नकछु दुर्लभ तुम काहीं। देहु आजु मैं यहि क्षणमाहीं॥
मालाकार कह्यौ करजोरी। अहै नाथ कछु चाह नमोरी॥
देहु भक्ति अरु साधुन सेवा। याते कौन जगत महँ मेवा॥
जानि अकाम भक्ति तेहि दीन्हीं। संपति अचल सनातनकीन्हीं॥
अरु शरीरबल सुयश जहाना। आयुष पूरण कियो प्रमाना॥

हरि सम को दाता जगमाहीं। येक देत शत गुण ह्वैजाहीं ॥

दोहा—रामश्याम तहँते तुरत, सखनसहित अभिराम ॥
मंदमंद गवनत भये, लख्यो कूबरी वाम ॥ २३ ॥

करमें लीन्हे कनककटोरी। अहै कूबरी वैस किसोरी ॥
तामें चंदन कुंकुम घोरा। चितवत चली जाति चहुँओरा ॥
ताको निकट निहारि विहारी। भूचलाइ अस गिरा उचारी ॥
हमहि देहु सुंदरि अँगरागा। होहि तिहारो अचल सोहागा ॥
कुबरी कही सुनहु छविरासी। मैंहौं भूप कंसकी दासी ॥
को तुमसों प्रियहै यदुनंदन। दैहौं जाहि रचो निजचंदन ॥
चितवन चलनि चारु मनहारी। मधुरहँसनि बोलनि सुकुमारी॥
मोहिंगई यदुपति कहँ देखी। कुबरी धन्य भाग्य निजलेखी॥
लगी लगावन अँग अँगरागा। उमगत अंग अंग अनुरागा ॥
तब यदुपति असमनहि विचारा। याहि दरशफल होहि हमारा॥
अस विचार करि तहँ यदुराई। कर अंगुरी द्वै चिबुक लगाई ॥
पग अँगुठनसों पगन दबाई। वदन तासु दिय उपर उठाई॥

दोहा—दृग खंजन भ्रुकुटी धनुष, मुख शशिभाल विशाल॥
रूप कूबरी लखि लजी, सुर ललना तेहिकाल ॥२४॥

भयो रूप गुण परम उदारा। हरिहेरत उपज्यो हियमारा ॥
यदुपति कर पटुका कर छोरा। गहि बोली हँसिकै तिहिंठोरा॥
पीतम चलहु अवास हमारे।निकसत जिय अब तजत तिहारे
मैं न छोड़िहौं इकक्षण तुमको।दुतिय नप्रिय लागत कछुहमको
सुनि कुबरीकी विनय विहारी। गये सकुचि बल वदननिहारी॥
कह्यौ भामिनि थली तिहारी। मैं ऐहौं सुरकाज सँवारी ॥
सुनि मुकुंद मुख मंजुल वानी। महामोद कुबरी उर मानी ॥
तजि पटुका गवनी निज गेहू। यदुपतिपै किय परमसनेहू ॥

धनुषभंग करि रंग भूमि पुनि। गजमल्लादिक सकल दुष्टधुनि॥
ब्रजको उद्धव काह पठाये। प्रीति बिवश कुवरी गृह आये॥
मणिमंदिर सुंदर सब साजू। जाहि लखत ललचत सुरराजू॥
कुवरी लखिपीतमकहँआवत। लेन चली सुख सिंधु थहावत॥

दोहा—करगहि भवन लेवाइगै, पुनि पर्यंक बैठाइ॥
पुलकि कियो सतकार वर, धनि निज भाग्यगनाइ२५

रमासरिस प्रभु तिहि करि लीन्हों। दीनदयालु प्रगट गुण कीन्हो॥
को दयालु यदुनाथ समाना। हरहिं दीनदुख दुसह महाना॥
कहाँ अनंत आदि अविनासी। कहँ कूबरी कंसकी दासी॥
लखि निहकपट समर्पत चंदन। मिले जाय निज ते यदुनंदन॥
कृष्ण मिलनमहँ और न हेतू। सन्मुख होइ छोंड़ि छलचेतू॥
नहिं कुलजातिहुँ पाँति बड़ाई। विद्या वैभव सुंदरताई॥
मिलै कृष्ण अविचल लखिप्रीती। वहदरबार केर यह रीती॥
कृष्ण कूबरी मथुरा माहीं। करहिं निवास विलास सदाहीं॥
बहुरि श्याम बलराम समेतू। चले सुखित अक्रूर निकेतू॥
सुनि आगमन भवन अक्रूरा। मान्यो मोर मनोरथ पूरा॥
जैसहिं रह्यो तैसहीं धायो। प्रेममगन तनभान भुलायो॥
गिरचो कृष्णपद पंकज माहीं। कियो सनाथनाथ मोहिंकाहीं॥

दोहा—प्रभुपदरज निज शीशधरि, रामहु पद शिरनाइ।
सखनवंदि पुलकितवदन, चल्यो स्वसदन लिवाइ२६॥

करगहि पुनि अक्रूर दोउ भाई। रत्नसिंहासन पर बैठाई॥
कर करि चारु हेम करथारा। नाथ युगलपद कमल पखारा॥
सो जल सींच्यो गृह चहुँवोरा। भयो उभयकुल पूत करोरा॥
लग्यो करन पूजनहरिकेरो। गईभूलि विधि प्रेम घनेरो॥
जस तस करि हरिपूजनप्रेमी। लियो अंकधरि हरिपद क्षेमी॥

नंद मंद कर मरदन लाग्यो। पूरुव पुण्यपुंज तेहि जाग्यो ॥
कढ़ति न प्रेम विवशमुखवानी। अनिमिष लखत रूप रसखानी॥
पुनिसम्हारिसुधि वचन उचारा। धन्य धन्य वसुदेव कुमारा ॥
मोसमान जग अघी न होई। तुम समान पावन नहिं कोई ॥
रजकर मेरु मेरु रज करहू। वानि विशेषि अधम उद्धरहू ॥
जो न होत यदुनाथ नाथअस। तौ मम सरिस दीनउधरत कस
मंद बिहँसि प्रभु वचन उचारे। तुम सयान कुल कका हमारे ॥
दोहा—हम पालक भ्राता उभय,करेहु सर्वदा छोह।
गई गुणत शिशुकी नहीं, वृद्धक्षमा संदोह ॥ २७ ॥
जो वात्सल्य सदा सर राखिहौ। तबहीं प्रेम सुधारस चखिहौ ॥
वात्सल्य रस सरिस न दूजो। विधि शंकर कमला जिहि पूजो॥
प्रभुके वचन सिखापन मानी। सोई भक्ति दानपति ठानी ॥
को अक्रूर सम जग बड़भागी। वृंदावन रजको अनुरागी ॥
तिहि रज परस प्रगट परभाऊ। दरशायो विकुंठ यदुराऊ ॥
आये अपने ते घर माहीं। व्रजरजमहिमाकिमिकहिजाहीं ॥
कोटिजन्म मुनि यत्न कराई। जे पद उर आवत कहुँनाई ॥
ते पद धरयो दानपति अंका। रही कौन जगकीतिहिशंका ॥
द्रवहिं दीनपर दीनदयाला। जो विश्वास होहि सब काला ॥
दास विश्वास नाथकी दाया। उभयभाँति छूटैजगमाया॥
अब न और कछु करौं विचारा। रीझवप्रेमहि नंदकुमारा ॥
कोऊ करै यतन बहुनीका। विनाप्रेम लागत सब फीका ॥
दोहा—जप तप संयम नेमव्रत, ज्ञान विराग विवेक।
विनाप्रेमयदुवंशमणि, रीझत कबहुँ न नेक ॥ २८ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ सुदामाकी कथा॥

दोहा–परमसुंदरी रसभरी, संतनकी मनहारि।
कथा सुदामाकी सुखद, अब मैं कहौं उचारि॥ १॥

रह्यो एक द्विजअति धनहीना। नाम सुदामा गुणन प्रवीना॥
दंपति रहे वसतनिजधामा। रह्योउजेनपुरी ढिग ग्रामा॥
रामश्याम जब कंसहि मारचो। गुरुकर विद्या पढ़न विचारचो॥
सांदीपिनिमुनि येक विज्ञानी। रहै अवंतिपुरी गुणखानी॥
तिनसों विद्या पढ़न विचारे। बलसमेत उज्जैन सिधारे॥
सोइ सांदीपिनि मुनिके धामा। पढ़तरह्यो सो विप्र सुदामा॥
तहाँ सुदामा अरु यदुराई। पढ़त पढ़त ह्वै गई मिताई॥
जब हरि बहुरि मधुपुरी आये। सोउद्विजगयो भवन सुखछाये॥
यौवन बैस भई द्विजकेरी। तब दरिद्रता तेहि घर घेरी॥
नहिं घर तासु अन्नकर खोजू। भिक्षाटन करिभोजन रोजू॥
काँटन योजित फटे पुराना। दंपति वसन करैपरिधाना॥
करै न कौनहु उद्यम काहीं। जौ न मिलै तोषित तेहिमाहीं॥

दोहा–ज्ञानदृष्टितेविप्रसो, गुणौनकछु दुखदीह।
धर्म कर्म आचारमें, निपुणरटै हरिजीह॥ १॥

एकदिवस द्विज रोज भरोसे। माँगन भिक्षा गयो परोसे॥
मिली न भीख साँझह्वै आई। आयो भवन बहुरि श्रमपाई॥
पुनि दूजे तीजे दिन गयऊ। माँगे भीख कोउ नहिं दयऊ॥
कियो तीनव्रत जबहिं सुदामा। दंपति दुखित महाछुतछामा॥
तिहि दिन जबबीती निशिआधी। दंपति दुखितदरिद्र उपाधी॥
तबहिं सुदामाकी प्रियबामा। कह्यो कंतसों वचन ललामा॥
अब तौ क्षुधासही नहिं जाती। जारत पिय दरिद्र नित छाती॥

कौन कियो पूरव हम पापा । जाते लहत घोर संतापा ॥
कह्यो सुदामा तब मुसक्याई । भाग्य मोरि सम को जगपाई॥
यह प्रसंग तिय तोर न जाना । मोर मीत यदुपति भगवाना॥
सबके प्रिय सबके हितकारी । निज जन अवशि सकल दुखहारी
द्वारकामहँ थहि काला । त्रिभुवनपति दिगपालनपाला ॥
दोहा—दोउ मीत यक संगहीं, पढ्यो गुरूके पास ।
तो न गर्व मेरे भये, अहै मीतकी आस ॥ २ ॥
सो सुनि कही विप्रकी नारी । जो तुम्हरे हैं मीत मुरारी ॥
तौ कस मीत निकट नाहिं जाहू । कस मनवांछित लेहु नलाहू ॥
येक मीत भोगै सुख भोगू । येकमीतको भोजन सोगू ॥
यह विपरीति कहौ पिय कैसी । मीत मीतकी रीति न ऐसी ॥
कह्यो सुदामा तब सुनु प्यारी । भली बात यह मोहिं उचारी ॥
जैहौं मोर मीतके पासा । बहुत दिना ते देखन आसा ॥
पै यक होत मोहिं संदेहू । भेटदेनको नाहिं कछु गेहू ॥
मीताहिं मिलब छूँछ नाहिं रीती । मीत कही कैसी तुव प्रीती ॥
जो कछु होइ गेह महँ प्यारी । दीजै हमाहिं विलंब विसारी ॥
लेब तुम्हार नाम उतजाई । दियो मीत तुम्हरी भौजाई ॥
तब पुनि कही विप्रकी नारी । घरमें कछु न ढूँढ़ि हम हारी॥
पै हम माँगि भीख घर चारी । ल्याउब वस्तु कछुक अति प्यारी
दोहा—असकहि उठि बाहिरगई, तुरत विप्रकी नारि ॥
लै आई घर चारिते, चाउर मूठी चारि ॥ ३ ॥
दियो कंत कहँ कहि असबानी । मिल्यो मीतकहँ दै यह ज्ञानी॥
पायो मूठी चाउर चारी । कह्यो विप्र कीन्ही भल प्यारी॥
सातपरत करि चिरकुट चीरा । दृढ़करि बाँधि लियो मतिधीरा॥
फटे वसन कसि कम्मर लीनो । टूटो वंश डंड कर कीनो ॥

बाँधि शीश लघु वसन पुराना। नहिं जलपात्र नपद पदत्राना॥
विप्र छिप्र द्वारका सिधारयो। मीत मिली किमि मनहिं विचारयो
छपनकोटि यदुकुल विस्तारा। तासुनाथहै मीत हमारा॥
किहि विधि मिली मीत मुहिं आजू। भाग्यछोट अभिलाषदराजू
चीन्हत येक मीत मोहिं सोई। और मोहिं जानै का कोई॥
किहिविधि ह्वै हौं सागरपारा। को पहुँचैहै मीत दुवारा॥
यहि विधि करत मनोरथ पंथा। गवनत चटक सँभारत कंथा॥
यहि विधि गयो सिंधुके तीरा। कह्यो नाविकनसों धरिधीरा॥

दोहा—मुट्ठी चाउर येक लै,केवट देहु उतारि।
हमको यदुकुलनाथके, लीजे मीत विचारि॥ ४॥

सुनि केवट सब हँसे ठठाई। दीन्हो द्विजउतारि अतुराई॥
उतरि विप्र आयो यहिपारा। लख्यो चहूँ कित पुर विस्तारा
कनककोट गुर्जें अतिभारी। सायुध करहिं वीर रखवारी॥
पुर चहुँ कित उववन अभिरामा। बिच बिच बने सुखद आरामा
कनककोट अरतालिसकोसू। चारि द्वार चहुँ कित हतदोसू॥
लागे कंचन कलित कपाटा। द्वार बिना नहिं दूसर बाटा॥
नगर कोट द्वारहि द्विज गयऊ। वारण कोउ नकरत तेहि भयऊ
भीतर गयो नगरमहँ जबहीं। अवलोकी अद्भुत छबि तबहीं॥
जक्यो तहाँ चहुँवोर निहारत। चल्यो जात मग कोउ न निवारत
चहुँकित चितवत करतविचारा। किमि मिलिहैं वसुदेवकुमारा॥
करनचहत वारणकोउ मोही। लखिकुवेष अनजान बटोही॥
हाटन हाटक भवन उतंगा। बँधी विचित्र धुजा बहुरंगा॥

दोहा—हय गय रथ संकुल सुपथ, धनिक धनेश समान।
सुर सुरतिय सम नारि नर, नितनवमोद महान॥५॥

किला कोट ढिग पुनि द्विजगयऊ। गोपुर ऊंच लखत तहँ भयऊ

शंकित धरत मंदपग विप्रा। चितवत चकित चहूंकितछिप्रा
प्रविशि गयो जब भीतर द्वारा। निरख्यो तहँ नवलाख अगारा
यदुवंशिनके मंदिर भारी। कौन कहै कवि सु छवि उचारी
बनी विशद तहँ हय गय शाला। चौक चांदनी पुनिशशिशाला
इंद्र वरुण यम धनद विभूती। तैसे विश्वकर्मा कर तूती॥
यक यक यदुवंशिन गृह सोहै। विरतियोग रत मुनिमन मोहै॥
प्रविश्यो द्विज दूसर आवरणा। लख्यो कुमार भवनसुखभरणा
प्रद्युम्नादिक कुँवर छबीले। बैठे जहँ तहँ वीर सजीले॥
सोउ आवरण गवन किय जबहीं। लख्यो राममंदिर द्विजतबहीं॥
अति उतंग पूरित सब शोभा। जिहि लखि करतारहु मनलोभा
पुनि वसुदेव देवकी मंदिर। चमकत चारु कोटिसम चंदिर

दोहा—लख्योसुदामा तहँविमल, उग्रसेनको धाम।
स्वर्गसरिसविस्तारजिहिं, कामधामसमबाम॥ ६॥

भयो चकित मन अति सन्देहा। कहँ है मोर प्रीति कर गेहा॥
कवन भवन मैं अब चलिजाऊं। किहिविधि मीत मुकुंदहिपाऊं
बहुत भई इतलों जो आयो। वारण कौनेहुँ द्वार न पायो॥
बिना मीत मुहिको पहिचानी। वारण करी रंक द्विजमानी॥
हौं न जाउँ इतते अब आगे। मीत मिलब मिलिहैंनहिंमाँगे॥
बिना मिलेहु उपजत दुखभारी। काकहिहौं पुछिहै जब नारी॥
करत विचार विप्र मनमाहीं। परत ठीक करतब कछुनाहीं॥
पुनि दृढ़करि अस कियोविचारा। आगे जाहुँ और इक द्वारा॥
असगुणि मंद मंद पग धरतो। चकित चहूँकित चितवतडरतो
चलो भवन भीतर भुवि देवा। जानि परयो नहिं मंदिरभेवा॥
प्रविशिद्वार भीतर जब आयो। द्वारप वारण हेत नधायो॥
षोडश सहस लख्यो तहँ मंदिर। कोटिन शशिसमभासितसुंदर

दोहा—परतदीठि जहँविप्रकी, तहँते टरति न फेरि।
ठाढ़ो अनिमिष लखत तेहि, पहरन होती देरि ॥ ७॥

कछुक चलत बहुरत भयमानी। लखत चहूंकित अचरजआनी
कहुँ पगरहत उठाय तहाँहीं। कहुँ पुनि धरत चितै चहुँघाहीं
विस्मय हर्ष करत यहि भाँती। विप्रहि वेला बीतत जाती॥
षोड़श सहस भवन अतिभारी। लघु बड़ परै न भेद विचारी॥
जस तसके शंकित द्विजराई। द्वार देहरी गयो सिधाई॥
लखंत सकल मंदिरकी शोभा। विप्रहुको अतिशय मन लोभा
ह्वैहै कौने भवन मुरारी। कौन भौन महँ जाहुँ सिधारी॥
धोखे कहुँ जो मंदिर जैहौं। तहँ जो नहिं निजमीतहिं पैहौं॥
तहँते जैहौं तुरत हटाई। बिना मीत मोहिं कौन बुलाई
ताते अब आगू नहिं जाऊं। कछुक काल ठहरौं यहिठाऊं॥
मीतहि कोउ तौ खबरि जनाई। रंक बैठ द्वारे यक आई॥
मीत श्रवण परि है जो बाता। तौ मोहिं अवशि आनिहै ताता॥

दोहा—अस विचारिकै विप्रतहँ, अंतहपुरके द्वार।
खरो रह्यो कछुकाललौं, मनमहँकरतविचार ॥ ८॥
सन्मुख यक मंदिर रहै, कोटिन भानुप्रकाश।
तहँ मणीन पर्यंकपै, निवसत रमानिवास ॥ ९॥
रुक्मिणि संयुत अतिसुभग, सखी सहस चहुँवोर।
वितरत विविध विलासतहँ, श्रीवसुदेव किशोर॥१०॥

कवित्त—प्यारीको विलोकत ललौहै कंज लोयनसों प्यारी पान देन कर कमल उठायोहै॥ चितवत चारयो ओर औचकही आनिपरे चारु चख द्वारपै सुदामा जहँ ठायो है॥ भूलिगयो खान पान भूलिगई प्यारी नारि उठ्यो पर्यंकते अनंद अधिकायो।

है ॥ मेरो मीत आयो अरी मेरो मीत आयो अरी मेरो मीत आयो असगाय मुख धायो है ॥

सवैया—काँपत गात न आवत बात समातनमोद हियेहरिहेरे॥
आँखिन सों जल ढारत जात खँसातविभूषणभूमिघनेरे॥
बाहु पसारे कहैं रघुराज त्वरायुत धावत जातहैं नेरे ॥
औरनको गुहरावत आवहु आजुमिलेमुहिंमीतजुमेरे॥

घनाक्षरी—उर उरलायनैन नैनसों मिलाई नैन नीरसों नहाइ भुज भुजिनि अरुझिगो ॥ जुवनते जूट जगतीसुरकोजटाजूटवीझिगो किरीट जाको मोल नहिं ऊझिगो ॥ चिरकुट चीरनमें लपटिगो पीतपट मीतसों नप्यार दूजो नाथ असबूझिगो ॥ चित्तकी करा-ही अनुरागको अनलबारि प्रेमके सुपथमें शपथ दैकै सूझिगो ॥

दोहा—मिले सुदामै श्यामजू, छुटत छुटाये नाहिं ।
भूलिगये तनु भानप्रभु, सो सुखते नअवाहिं ॥ ११॥

कवित्त—बार बार वारिधार नैननि ढरत जात उठत न जात त्यों अनंद पुलकावली ॥ दोऊ उर लावैं नहिं प्रीति सिंधु थाह पावैं जीगरसों जूटिगे अमल अलकावली ॥रह्यो नासँभार तनु दोहन-के ताही बार टूटी तुलसीकि माल तैसे मुकुतावली ॥ रघुराज धन्य यदुराज सों न आजु कोई काकी अग्रगण्यहै ब्रह्मण्य विरदारली ॥

दोहा—घरिकद्वैकमें छूटि प्रभु,गये चरण लपटाइ ।
चलितबेवाई चरण रज,लीन्ह्यो शीश चढ़ाइ ॥१२॥

पुनि सँभारि बोले भरि आँसू । आइ मीतमिलिगे अनयासू ॥
जान्यो भाग्य उदय अबमोरी । मोघरमें आवनभै तोरी ॥
असकहि यक कर गहयदुनाथा । गह्योयेक रुक्मिणिद्विज हाथा ॥
लै गवने दंपति द्विजकाहीं । निरखतसखा सकल मुसकाहीं

मणिन जटित पर्यंक सुहावन । गोरस फेन सेज सुखछावन ॥
द्विजहि दियो तापर बैठाई । कनकथार रुक्मिणि जलल्याई
द्विजदोउ पदधोवनचहंप्यारी । लीन्हो छीनि नाथ जलथारी ॥
धोवन लगे चरण यदुराई । लीन्हो पद जल शीश चढ़ाई ॥
लीन्हो छीनि थार हरि प्यारी । बार बार द्विज चरण पखारी ॥
सोजल सींचि शीशगृहसींच्यो । मनहु प्रेम रस सिंधु उलीच्यो॥
पुनिरुक्मिणिअतिशयअनुरागी।द्विज शिर चमरचलावनलागी॥
तहँ सत्यभामा विप्र सुदामै । लगी मंजुकर विजन चलामै ॥

दोहा—हरिद्विजके पद धोयकै, पोंछि पीतपट माहिं ।
लियो धारि निज अंकमें, वदन विलोकत जाहिं॥१३॥

परम रूख तिमिसमलशरीरा । लेप्यो निजकर मलय उसीरा॥
वसन बहोरि अमल निज हाथा। पहिरायो विप्रहि यदुनाथा ॥
निजकर पंकज अतर लगायो । सुमन सुगंध माल पहिरायो ॥
पुनि रुक्मिणी और सतिभामा। विविध भाँतिरचिपाकललामा ॥
ल्याईधरि भरिकंचन भाजन । लैलै नाम जेवायो साजन ॥
बहुरि सुरभिजल पान करायो । निजहाथन कर चरण धुवायो
दियो उकिसि बीरा यदुवीरा । पथ श्रम हरि सींचोशुभनीरा
धूप दीप पुनि सविधि देखायो । प्रेमविवशाविधि विभ्रम आयो॥
पुनि आरती साजि यदुराई । लगे उतारन आनँद छाई ॥
बहुरि चारि परि दक्षिण दीन्हों । शिर धरि भूमि दंडवत कीन्हो
रुक्मिणि विजन चलावन लागी। चमरसत्यभामा सुखपागी ॥
यका पर्यंकाहिं पुनि सुखधामा । बैठिगये घनश्याम सुदामा ॥

दोह—लखत परस्पर वदन दोउ, ध्वहँसत बारहिं बार ।
मूर्तिमान मानहुँ लसत, शांति और शृंगार ॥ १४ ॥

कवित्त—येक वोर जीगर जुबानि कोहै जटाजूट येक वोर

शोभा है माणिन मौलि माथकी ॥ चिरकुट पटपीत पट समताई जैसी कलित वेवाई कर तैसे कंजहाथकी ॥ बोलनि हँसनि तैसे मिलन बरोबरकी बैठन दुहँन पर्यंक येक साथकी ॥ धन्य प्रभुताई रघुराज यदुराजजूकी देखिये मिताई ऐसी दीन दीनानाथकी॥

दोहा—अंतहपुरमें तुरतही, भयो शोर चहुँवोर ।
बैठायो पर्यंक में, रंकहि सौरि किशोर ॥ १५ ॥

षोड़शसहस कृष्णकी रानी । देखन आईं अचरजमानी ॥
देखि सुदामैं औ घनश्यामै । कहैं धन्य यह द्विजवसुधामै ॥
त्रिभुवनपति कर कंज लगाई । चरण पखारयो कलित वेवाई॥
कढे अस्थि अति मलिन शरीरा।तिहि भरि भुजन मिल्यो यदुवीरा
चिरकुट पहिरे अतिशयरंका । बैठायो समान पर्यंका ॥
हसहिं बरोवर बोलहिं बाता । मीत मीत कहि सुख न समाता॥
दीनानाथ सत्य हरि अहहीं । जे द्विजरंक मीत निज कहहीं॥
कहँ त्रिभुवनपति श्रीयदुराई । कहाँ रंक तिहि कियो मिताई॥
असकहि चहुँकित देखहिं ठाढ़ी। माधो मति मोद मन बाढ़ी ॥
हरि कर पकरि सुदामा केरे । भाष्यो वचन मीत सुनु मेरे॥
बहुत दिननमें तुमहिं निहारे । नैन सफल अब भये हमारे ॥
आवतरही सुरति नित तोरी । होइ भेट कब मीत किमोरी ॥

दोहा—मीत तुमहिं बिन जे बिते, निवसत गृह दिन याम ॥
ते मेरे अबलौं नहीं, आये कौनहु काम ॥ १६ ॥

रहे करत कहुँ सुरति हमारी । मीत सुरति धौं मोर विसारी ॥
पढ़तरहे हम तुम गुरुपाहीं । तबकी सुरति अहैकी नाहीं ॥
हौं तौ पाढ़ि मथुरा कहँ आये । कहो कहाँ तुम फेरि सिधाये ॥
कहहु भयोकी नाहिं विवाहू । भई सुताकी सुवन उछाहू ॥
देहु बताइ लुकावहु नाहीं । नाहिं अंतर हम तुम मनमाहीं॥

मीत छुट्यो जबते सँग तेरे । भोगत विपति गये दिन मेरे ॥
देखि नाथको शील सुभाऊ । मनमें चकित भयो द्विजराऊ ॥
प्रेमविवश नहिं आवत टेरी । देखत प्रीति रीति हरि केरी ॥
बहुरि कह्यो हरि सुनहु पियारे । पढ़े शास्त्र सब संग तिहारे ॥
तासु रीति करियत दिन राती । जगत विरक्त मीत सब भाँती ॥
येक समै हम तुम गुरुगेहू । पढ़तरहे जब सहित सनेहू ॥
लागि गयो जब सावन मासा । वरख्यो घेरि मेह चहुँ आसा ॥

दोहा–गुरगृहमें ईंधन चुक्यो, तब सब शिष्यन टेरि ।
कह्यो गुरू अति प्रीतिसों, ल्यावहु ईंधन ढेरि ॥१७॥

तब हम शिष्य सकल वनमाहीं । ईंधन लेन गये चहुघाँहीं ॥
हम तुम रहे मीत यक ठौरा । वरसन लगे तहाँ घनघोरा ॥
भई निशा अतिशय अँधियारा । सूझि परै नहिं हाथ पसारा ॥
अति भयावनी भई यामिनी । दमकिरही चहुँ दिशनि दामिनी
हम तुम सकल शिष्य वनमाहीं । भूलिपंथ यकतरुकी छाँहीं ॥
बीती निशा भयो भिनसारा । तब शिरधरि ईंधनकर भारा ॥
हम तुम गये सकल गुरुगेहू । आय मिले गुरु सहित सनेहू ॥
सादर भीतर भवन हँकारी । गुरू लग्यो पछितान दुखारी ॥
मेरे हित बरसत बन माहीं । परचो कलेश शिष्य सब काहीं
सबको आशिष अहै हमारी । विसरी विद्या नाहिं तिहारी ॥
हम सब शिष्य परे गुरुचरणा । सो सुख मीत जाय नहिं वरणा
यह सुधि अहै मीत धौं भूली । मीत मीत सुखकछु नहिं तूली

दोहा–तुम समप्रिय मोहिं कोउ नहीं, मोहिं समप्रिय तोहिं नाहिं
प्रीति परस्पर निरवधिक, यह जानहु मनमाहिं ॥१८॥

हरिके वचन सुनत सुख पावत । कछु न सुदामहिं उत्तर आवत ॥
प्रेम विवश ढारत दृग आँसू । मानत मिल्यो विकुंठ निवासू ॥

ब्रह्मानंद परचो मैं आई। यहिते कौन भाग्य अधिकाई॥
बहुरि कह्यो हरि सुनहु सुदामा। कहँ बसत प्यारी तुव वामा॥
जानिपरौ नहिं तासु सनेही। नहिं धन चहौ यथा सब देही॥
मीत सुमतिको आपु समाना। इंद्रियजितयुत विरतिविज्ञाना॥
करहिं गृहस्थधर्म गृह माहीं। कबहुँ अशक्त होत तेनाहीं॥
विरत निरत त्यागत संसारा। करहिं जगत कर कर्म अपारा॥
गनहिं न मनहिं लाभ अरु हानी। दैवाधीन सकल जगजानी॥
हमको अरु तुमको सबकाला। भूलै नहिं गुरुज्ञान विशाला॥
जो गुरुसेवन करि जगमाहीं। भवनिधि उतरिसहज जनजाहीं
मीत प्रथम गुरु पिता विचारो गायत्री गुरुद्वितिउचारो॥

दोहा–उपदेशकजोज्ञानको,सो तीजोगुरुहोइ।
सोतौ महींप्रत्यक्षहौं, यह जानै सब कोइ॥ १९॥

गुरुवपु मोर पाय उपदेशा। तरहि जे सहजहि भवसरितेशा॥
तेई कवि कोविद जगमाहीं। चारि वरणमहँ श्रेष्ठ सदाही॥
अपने ते साधन जे करहीं। भाग्यविवशभवसिंधु उतरहीं॥
ते नसमस्त प्रशस्त विज्ञानी। तीनकी बहु रनकीगति जानी॥
तप जप याग नियम यम ज्ञाना। तीरथ धर्म योग विज्ञाना॥
वन थिति ब्रह्मचर्य संन्यासू। औरहु साधन अमित प्रयासू॥
अरु गृहस्थके धर्म अपारा। औरहु सकल धर्म संसारा॥
ये सब मोहित सुखकर नाहीं। जस प्रसन्न गुरुसेवन माहीं॥
यहिविधि भनहिं अनेकनिवानी। मीत मीत कहि सारँगपानी॥
कछु नाहिं वचन भरत महिदेवा। आनँद मगन लखतयदुदेवा॥
सकल सुरति द्विजवर विसराई। ब्रह्मानंद परचो जनु आई॥
चितवत चकित चहूँकित शोभा।यदुपति सुछवि विप्र मनलोभा

दोहा–पुनि तनु सुरति सँभारिकै,रोकि प्रेमकी धार ।
मंद मंद बोल्यो वचन, यदुनंदनको यार ॥ २० ॥

सुनहु मीत प्रभु प्राणपियारे । कही सकल सो सुरति हमारे ॥
बाकी कछु नसुकृत अबमोरे । गुरुगृह भयो बास सँग तोरे ॥
त्रिभुवनपति सँग मोरि मिताई । मो समान किहिभाग्य गणाई॥
पै अचरज लागत मनमाहीं । समाधान ताकर कछु नाहीं ॥
मूरति जासु वेदहै चारी । जगपालक सिरजक संहारी ॥
सोप्रभु लहन हेत कल्याना । गुरुगृह निवसत पढ़न बहाना ॥
यह करुणानिधिकी करुणाई । करत दीन सँग दौरि मिताई ॥
मीत रही तुम्हरे नाहिं दारा । अबदिखाहिं षोडशहि हजारा ॥
कहहु मीत कुलकी कुशलाई । सुतासुवन कतिभे सुखदाई ॥
हरिहँसि कह्यो मीत तुव दाया ।सकल कुशल सबविधिसुखपाया
जाके तुम सम मीत सुदामा । सोई सबविधि पूरणकामा ॥
अस कहि मीत मीत सुखमाही । बैठेहिं करि लीनो गलबाहीं ॥

दोहा–बहुरि कह्यो हरिमीतजू, यह अचरज मनमाहिं ।
भौजाई हमरे लिये, कछू पठायो नाहिं ॥ २१ ॥

पै मम छोहवती भौजाई । कछु भेज्यौ ह्वै है सुखदाई ॥
जो हमको भेज्यौ भौजाई । सो नाहिं राखहु मीत लुकाई ॥
असकहि हरिकर कंजनचायन । चिरकुट हेरनलगे सुभायन ॥
जस जस हरि पट हेरत जाहीं । तस तस द्विज सकुचत मन माहीं
चिरकुट चाउर बाँधि जो नारी । दियो मीतकहँ दियो उचारी॥
सो गोवत द्विज काँख दबाई । मनहिं विचारत अतिहिं लजाई
मैं जगपति कहँ चाउर चारी । देहुँ कौन विधि दियो जो नारी
मीत कहत मोहिं त्रिभुवन नायक । यह चाउर नहिं दीबे लायक
अतुलित विभव मीत गिरिधारी । तिनहिं भेटका चाउर चारी॥

असविचारि द्विज कांखलुकावत। चितै मीत मुख नाहिं बतावत
हरि हेरत लखि काँख छिपानी। पुटकी देखि परम सुखमानी॥
कहन लगे यह काह लुकाये। अबलौं मीत नहमहिं बताये॥

दोहा—असकहि बरबशहाथनिज, पुटकी लई छुँड़ाइ।
यही भेट भौजी दई, यहभाष्यो यदुराइ॥ २२॥

खोलन लगे पुलकि सुखछाये। खोलत खोलत तंदुल पाये॥
तंदुल देखि वचन अस गाये। कहौ मीत कस रहे लुकाये॥
यह तंदुलसम कछु प्रिय नाहीं। भौजी भेजोहै मोहिं काहीं॥
मीत सुनहु चाउर इतनोई। सकल विश्वकर तोषकहोई॥
भूरि भाग्य भै भवन भलाई। भली भेट भेजी भौजाई॥
असकहि इक मूठी यदुराई। लियो तुरत अपने मुख नाई॥
चाबत चाउर अतिहिं सराहत। प्रेम नीर निज नैन प्रवाहत॥
दूसर मूठी लिये मुरारी। तब रुक्मिणि अस मनहिंविचारी
यक मूठी चाउर प्रभु लीन्हो। त्रिभुवन विभव विप्रकहँ दीन्हो
अब तौ हमहिं गई रहि बाकी। देनचहत पिय तंदुल फांकी॥
असविचारि पियको गहि हाथा। रुक्मिणि कह्यो सुनहुयदुनाथा
भेज्यो भेट जो मोरि जिठानी। हमहिं नदेहु काह प्रियजानी॥

दोहा—काहमपावनयोगनाहिं, लीजै नीति विचारि।
भोगत बुधप्रियवस्तुको, करिविभाग सुतनारि॥२३॥
ऐसे पुनि प्यारीवचन, यदुनंदन मुसकाइ।
मंदमंद बोलेवचन, आनँद उर न समाइ॥ २४॥

कवित्त—ब्रजमें यशोदा मैया मंदिरमें माखन औ मिश्री मही मोहनत्यौं मोदक मलाई है॥ खायो मैं अनेकवार तैसे मथुरामें आइ व्यंजन अनेक मोहिं जननी जिंवाई है॥ तैसे द्वारिकामें यदुवंशिनकेगेह गेह सहित सनेह पायो भोजनमें लाईहै॥

रघुराज आजलों त्रिलोकहूँ में मीत ऐसी राउरके चाउरते पाई
ना मिठाई है ॥ १ ॥

सवैया–खायो अनेकन यागन भागन मेवा रमा करवागन दीठे॥
देवसमाजके साधु समाजके लेत निवेदन नाहिं उबीठे ॥
मीत जुसांची कहो रघुराज इते कस वै भये स्वादते सीठे॥
पायो नहीं कतहूं अस मैं जस राउर चाउर लागत मीठे२

कवित्त–शंक्यो शंभु शैलजा समेत देत मेरो शैल शक्रपद हेत हींस शंक्यो सुरपाल है ॥ डगमग्यो ब्रह्म ब्रह्मसदन लहैगोकिधौं सगवगे लोकपाल पेखि यह हालहै ॥ पाँचौ मुक्ति हाजिर हजूर हाथ जोरे खड़ी चाहती सुदामा करै कौनको निहाल है ॥ रघुराज परिगै त्यों गदरि गोलोकहूंलो विप्रचारि चाउर चबात नंदलालहै ॥ आठौं सिद्धि निधि नव कोटिन कृतुनफल भुवन विभूति भूरि भवन भराइगै ॥ विधि करतूति विश्वकरमा अकूति सबै औरहू विचित्रता विकुंठकी सुहाइगै ॥ इंद्र यम वरुण कुबेरकी विभूति कहा कामधेनु देवतरु बुद्धिहू सिहाइगै ॥ रघुराज चाउर चबात यदुराजजूके विप्र घर चंचलाकी चञ्चलाहे राइगै ॥ ४ ॥

दोहा–जिहि विधि माधवमीतसों, मिले मोद उरमानि ।
सो विधि यक मुखकविनसों, केहि विधि जायबखानि

कह्यो विप्र हरिसों मुसकाई । तुम सम तुमहिं अहो यदुराई॥
शासन देहु तौ सदन सिधाऊँ । अचल बैठि तिहरो गुणगाऊं ॥
तब हरि कह्योप्रीतिउरछाई । कैसे मीत मीत बिलगाई ॥
मीत मीतकर मीत वियोगू । याते और कौन दुखभोगू ॥
कैसेकहूँ जान तुम काहीं । होत दुसह दुख मो मनमाहीं ॥
अस सुनि बोल्यो वचन सुदामा। नहिं वियोग तुम्हरो घनश्यामा

तुमतो मम हिय पंकज वासी । ममभाति तुवपद पंकज दासी॥
यहमूरति मम नयननि माहीं। गई समाइ कढ़ी अब नाहीं ॥
नेह रज्जु मममनखग बाँधी । राखहु पद पिंजर महँ धाँधी ॥
असकहि उठ्यो विप्रतजि सेजू। हरि कहँ लियो लगाइ करेजू॥
मीत मीत मिल मिलि मुदभीने । बार बार बहु रोदन कीने ॥
चले नाथ मीतहिं पहुँचावन । द्विज मानिवो भुवन दरशावन

दोहा—द्वारेलौं पहुँचाइकै, मिलि मिलि बारहिं बार ।
नाइ शीश करजोरिकै, कह वसुदेवकुमार ॥ २६ ॥

कवित्त—जाइ निजधाम देखि प्यारी निज बामताहि मेरियो प्रणाम हे सुदामा तुम भाषियो ॥ सेवन करत अपचारह्वै गयो जो होइ ताको माफकीजियो नमीत मनमाषियो ॥ दार घर बार परिवार जे हमार तिन्है करिकै विचारहै हमार अस आशियो ॥ रघुराज द्वारिका वसत यदुवंशी येक कृष्ण मेरो मीत ऐसी सुरतिको राखियो ॥ ८ ॥

दोहा—नाथ वचन सुनि विप्रजू, मोद मगन मनमाहिं ।
बार बार प्रभु कहँ मिलत, वदत वचन कछु नाहिं २७

जस तसकै तहँते महिदेवा । चल्यो भवन सुमिरत यदुदेवा
मनमहँ लाग्यो करन विचारा । धन्य धन्य वसुदेव कुमारा ॥
महारंक मैं मलिन शरीरा । तिहि निज भुजन मिल्यो यदुवीरा
निज पर्यंकसु आसन दीन्हो । इष्टदेव सम पूजन कीन्हो ॥
अवधि रहित किय अचल सनेहू । कोअस करी दीनपर नेहू ॥
प्यारी धनहित मोहिं पठायो । सो यदुपति सो कछु नहिं पायो
मीत मोर हित मनहिं विचारी । दीन्हो मोहिं न संपति भारी ॥
धनते होत अनर्थ अपारा । कोह मोह मद अघ अविचारा
संपति गर्व भरे मन माहीं । पुनि सुमिरत कोउ हरिको नाहीं

सदा सुशील होत धनहीना। परमारथ महँ परम प्रवीना॥
मोहिं लियो सबविधि हरिराखी। होतेहुँ अंध विषयरस चाखी॥
ऐसिहि मीत मीतकी रीती। हरै हमेश शोक दुखभीती॥
दोहा—रह्यो नबाकी मोहिं कछु, पावनको यहि काल।
जो इन नैननसों लिख्यो, सुंदर देवकिलाल॥ २८॥
यहिविधि द्विजवर करत विचारा। निकस्यो अंतहपुरके द्वारा॥
शोरभयो चहुँकेर तहाँहीं। येई कृष्णमीत कहवाहीं॥
तहँ आगे चलिकै बलरामा। करिप्रणाम पुनि मिले सुदामा
मदन आदि पुनि कृष्णकुमारा। कियो प्रणाम सनाम उचारा॥
पुनि सात्यकि उद्धव यदुवंशी। अरु अक्रूर आदिक मधुवंशी॥
लैलै नामहिं कियो प्रणामा। कृष्णमीत मानत मतिधामा॥
जहँ जहँ राजमार्ग महँ आयो। तहँ तहँ पुरजन सब शिरनायो
निकस दुर्गते सागरतीरा। आयो जबहिं विप्र मतिधीरा॥
तब नाविक नावन लै धायो। द्रुतहि उतारि चरण शिरनायो
चल्यो भवन गहि पंथ सुदामा। करत विचार मनहिं मतिधामा
देहौं कहा नारि कहँ जाई। पै यह सुख नहिं कहे बुझाई॥
पुँछिहै जबै ग्रामके वासी। दीन्हो काह मीत सुखरासी॥
दोहा—तब मैं अनुपम हर्ष यह, कहिहौं सबसों जाय।
लाभ कौन यहिते अधिक, जैहै सुनत अघाय॥ २९॥
यहिविधि द्विजवर मन गुणत, हर्षत लटपट पाय।
चलत चलत झटपट, निपट गयो ग्राम नजिकाय॥३०॥
कवित्त—नयननि उठाय देख्यो पूरबदिशाकी वोर देखिपरचौ कोटि मार्तंडको प्रकाश है॥ तैसही हजारन निशाकर उदित मानो हिमिके हजारन पहारन विलासहै॥ शारदकी पारद की शारद सुवारिदकी दीह द्युति गारद करत जाको भासहै॥

रघुराज भूते भानु मंडललों भासवान जागिरह्यो जगमें सुदामा को निवास है ॥ १ ॥ दूरिहीते देखिमन करन विचारलाग्यो दूसरो दिवाकर उदित उदयाचलै ॥ निशातो है नाहिं पै निशाकर उदित कैसे धनददिशाते किधौं आयो कनकाचलै ॥ मोहींको किधौं है भ्रम कैधौं यह सत्य सब कौन उतपात यह मति गति नाचलै ॥ प्रलय करनकाज कैधौं रघुराज आज प्रगटी है पावक समाज सर्व आंचलै ॥

दोहा—कछुक दूरि आगे गयो,निरख्यो भवन विधान।
विप्रसुदामा मनहिं मन, करन लग्यो अनुमान॥३१॥

कवित्त—कौनकेहैं मंदिर मनोहर विराजमान कैधौं मघवान ल्यायो आनि अमरावती॥ कैधौं अवनीतलते अति अकुलाय भोगी लाये भोगवती अवनीपै छवि छावती॥ मदन सदन कैधौं माया को वदन कैधौं रघुराज कैधौंहै धनेशअलकावती॥ आनंद विवशभयो मोहि भ्रम मारगको किधौं आयो फेरि मैंही मुरुकि द्वारावती॥

दोहा—और कछूनजिकायकै, अपनो ग्रामनिहारि।
तहाँ अनूपम धामलखि, बोल्यो वचन विचारि॥३२॥

कवित्त—रह्यो याहीठाउँ मेरो गाँउआँउमेरहीको दीन्हो को निकारि मेरे निकटबसैयाको॥ हाइ कोइ आइ इतै पापी क्षितिराइ लूटि लीन्हो मेरो ग्राम लाय तापीहै मड़ैयाको॥ विरचि निकेत इतै साहिबी समेत वस्यो कहा गईह्वैहैं कैसे पाऊँ मैं लोगैयाको॥ कौन फिरियादि सुनै कौन मेरी यादिकरै कैसे गोहराऊँ दूर द्वारिका कन्हैयाको॥

दोहा—शंकित पथमहँ पगधरत, चितवत चारिहुवोर॥
जाइ सुदामा भवनढिग, ठाढ़ भयो ठगिठोर॥३३॥

कवित्त—खासे आमखासनमें आसन अनेक सोहै चौकनमें चंद चांदिनीसी चांदिनी तनी ॥चंद्रशाला केलिशाला पानशाला पाकशाला ॥ अश्वशालागजशाला हेमकी जड़ीमनी ॥ फटिक फरशपर फावित फुहारे फूल फूली फली लतिका वितान मानही तनी ॥ तौसागर अन्नागार रतनअगार केते रघुराज जाको पार-पावै ना फनीभनी ॥बासव विभूतिवसुपतिकी विभूति सब देवनवि-भूति येक येक थलराजती ॥ विधि करतूति विश्वकर्मा विभूति मन माया करतूति ठोर ठोर छबिछाजती ॥ चिंतापाणिचित्रसारी कामतरु फुलवारी कामधेनु दूध देनवारी भूरिभ्राजती ॥ रघुराज मानोप्रगटाय सर्वस्व निज अचल इतैही भई रमा अस गाजती

दोहा—परिचर्या करती रहीं, सखीसहस्रसुभाय।
वाम सुदामाकी नज़र, परचो सुदामा आय ॥ ३४॥

कवित्त—दूरिहीते चीन्हि कह्यो आयो पिय द्वारिकाते सजिकै सुदामा बाम उठी अतुराइकै ॥ उर्वशी तिलोत्तमासी पूर्वचित्ति मेनकासी सेवकी हजारन चलीहैं संग चाइकै ॥ पानदानवारी केती पीकदानवारी चौरवारी पंखावारी पटवारी चलीं धाइकै रतनालिकासीरुंधतीसी रोहिणीसी रुचि रतिसी रमासी लसी अंगनमें आइकै ॥

दोहा—भवनद्वारते निकसिकै, आईं तिय पिय पास।
फैलिरह्यो दशहूदिशन, कोटिनचंद्र प्रकाश ॥ ३५ ॥

भयो सुदामाको भ्रमभारी। यह माया मूरति मनहारी ॥
सिगरोभवन अहै यहि केरो। उतारि स्वर्गके तिय महि डेरो ॥
असकहि लाग्यो करन विचारा। तबलगि आइगई द्विजदारा ॥
पकरि पाणि बोली मुसकाई। धन्य धन्य तुव मीत मिताई ॥
ठगेसरिस कस बोलहु नाहीं। जनि संदेह करहु मनमाहीं ॥

यह संपति तुव मीत पठायो। विश्वकर्मा क्षणमाहिं बनायो॥
दानि शिरोमणियदुकुलनायक। मीत तुम्हार पीय सब लायक॥
करत दीनसों अमित सनेहू। बरसत द्विजन यथा महि मेहू॥
हूँ तुवदार सखी सबदासी। यह मानहु पिय बातविसासी॥
सुनि निजनारि वचन दुजराई। मानी सकल मीत प्रभुताई॥
जो सुख हरि दरशनते पायो। सो सुख भवन देखि नहिं आयो॥
मंद मंद किय भवन प्रवेशा। कछु नहिं भयो हर्ष अंदेशा॥

दोहा—सत सत कृतकी साहिबी, यदपिलह्यो द्विजराइ।
तदपि भयो नहिं विषयवश,नहिं भूल्यो यदुराइ ३६
भग्यो भोग अनेक द्विज, जबलौं रह्यो शरीर।
पै न गयो अभिमान यह, मोर मीतयदुवीर॥ ३७॥
भोगि भाग बहुकाललौं, नहिं अशक्त मनलाइ।
तनुपरहरि यदुपतिनगर, गयोनिसान बजाइ॥ ३८॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेषष्टोऽध्यायः॥ ६॥

अथ मैत्रेयकी कथा॥

दोहा—वर्णहुं अब मैत्रेयकी, कथा सुनहु मनलाइ।
गुरुभ्राता श्रीव्यासको, ज्ञाता शास्त्र निकाइ॥ १॥

एक समय सनकादि मुनीशा। सुमिरण करत कृष्णजगदीशा
सुरधुनि धारहिं धारनहाते। शेष निकट गवने सुख माते॥
निरखि अहीश रूप छबि धामा। कीन्हो पुलकित दंड प्रणामा॥
कियो विनय भागवत पढ़ावहु। हम सबके मन मोद बढ़ावहु॥
शेष कृपा करि दियो पढ़ाई। सनकादिक गवने शिरनाई॥
देखन परचो कोऊ अधिकारी। जाहि भागवत देहि उचारी॥
ताही समय पराशर नामा। व्यास पिता आये मतिधामा॥

त्यों सुरगण गुरु अति सुखमानी। आये सनकादिक ढिगज्ञानी ॥
सुरगुरु सों सनकादिक प्रेमी। भन्यो भागवत करि दृढ़नेमी ॥
कह्यो वृहस्पतिसों मुनिराई। अधिकारी गुणिदयो पठाई ॥
तब सुरगुरु जग ढूंढ़न लागे। को भागवत पढ़ै अनुरागे ॥
तबहिं पराशर निकट सिधारयो। जीवतासु अधिकार विचारयो ॥

दोहा—दियो पढ़ाय सुभागवत, सुमति पराशर काहिं ॥
काहि पढ़ावै अस सोऊ, किय विचार मनमाहिं ॥२॥

श्रीभागवत केर अधिकारी। जगमें तेहि नहिं परयो निहारी॥
खोजत खोजत धरणि मँझारी। मित्रासुत कहँ लियो विचारी॥
तासु परीक्षाहित मुनिराई। लाग्यो करनविशेष उपाई ॥
कह्यो मोहि सुवर्ण तुम ल्यावो। तब मेरे पुनि शिष्य कहावो॥
मित्रासुत गुरुशासन मानी। सुवरणलेन चल्यौ मतिखानी॥
गमनत सुपथ गुणत मतिधामा। सुवरण अहै हेमकर नामा ॥
पैनाहिं कांचनमें सतिसोहै। याते होत कोह अरु मोहै ॥
अस विचारि उत्तरदिशि जाई। जहँगण्डकी नदी छबिछाई ॥
तहँकी लै इकशिला सोहावन। गवन्यो जहाँ पराशर पावन ॥
आयो गुरुसमीप महँ जबहीं। सुवरणलायो गुरु कह तबहीं॥
तब सोइ शिलाधरयो गुरु आगे। शिला देखि गुरु माषन लागे॥
शिला अहै सुवरणहै नाहीं। ठगत शिष्य तैं कस मोहिं काहीं॥

दोहा—तब मैत्रेय कह्यो वचन, सुवरणहै भगवान ॥
हरि स्वरूप यह सतशिला, भाषत वेद पुरान ॥३॥

अहै उपाधि अनेक हेममें। सोनहिं सोहत विरति नेममें ॥
जो सति सुवरण होइ मुरारी। तौ प्रगटै मूरति भुजचारी ॥
जब मित्रासुत अस मुखगायो। शिला प्रगट हरिको वपु आयो॥
तब मित्रासुत कहँ सुखछाई। लियो पराशर हिये लगाई ॥

जानि रसिकताको अधिकारी । दिय पढ़ाय भागवत विचारी ॥
सोइ मित्रासुत परम विज्ञानी । गवन जानि पुर सारँगपानी ॥
ताहि समय द्वारिका सिधारचो । पीपरतरुतर हरिहिं निहारचो॥
निरखिनाथ स्वागत अतिकीन्हो। गूढवचन मुनिसों कहिदीन्हो॥
ज्ञान विवेक विराग विचारा । तप जप नियम विधान अपारा॥
पै हरि विरह ताप मुनिताये । सुन्यो न नेकु नाथ जे गाये ॥
बार बार हरि ताहि बुझावत । विरह विवश कछु मनहिं नआवत
धरि धीरज पुनि कह्यो मुनीशा । सुनहु कृपालु विनय जगदीशा॥

दोहा—साधन ज्ञान विज्ञानके, तुले नहीं अनुराग ॥
देहु नाथ अनुराग मोहिं, ताते करि अनुराग ॥ ४ ॥

हरि कहँ तुमहिं होय अनुरागा । कहेहु विदुरसों ज्ञान विरागा ॥
कीन्हो संसारिन उपकारा । तुमहिं न कबहुँ लगी संसारा ॥
तब मैत्रेय कह्यो करजोरी । हरहु विछोह भीति प्रभुमोरी ॥
हरिकह कबहुँ न मोर बिछोहा । तुमहिं लगी नहिं माया मोहा॥
सुनिकै मित्रातनय सुखारी । करि प्रणाम ढारत दृगवारी ॥
हरिद्वार महँ कियो निवासा । नित निरखत हिय रमानिवासा
उद्धव प्रेषित विदुर तहाँहीं । आयो शीश धरचो पद माँहीं॥
विनय कियो दीजे मोहिं ज्ञाना।जोतुम सों यदुनाथ बखाना ॥
तब मैत्रेय जानि अधिकारी । कृष्णकथित सब दियो उचारी॥
सो सुनि विदुर महामतिधीरा । वदरीवनमहँ तज्यो शरीरा ॥
गयो विकुंठ सवार विमाना । भयो पारषद कृपानिधाना ॥
यमको अंश गयौ यमलोकू । मित्रासुतहु तहाँ विनशोकू ॥

दोहा—करत अनेकनि भावना, यदुपतिकी सब काल ।
यहितनु ते हरिपुर गयो, त्यागि जगत जंजाल ॥५॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथ शौनककी कथा ॥

दोहा—अब शौनक गाथा कथौं, रचिकै सुभग कवित्त ।
जाहि सुनत सब संतके, बढ़ै नित्त सुखचित्त ॥ १ ॥

कवित्त—विप्रवंश जन्मपायौ न्हान हेतु प्राग आयो सुनै कृ-
ष्णकथा रोज प्रेमको बढ़ाइकै ॥ संतनसमाज सेइ साधुनकोजूठ-
जेइ भई मतिविमल त्यों विषय विहाइकै ॥ जानि सबै मुनिताहि
श्रोता अग्रगण्य कीन्हौं नैमिष आरण्य वस्यो साधुगण ल्याइ कै॥
केवल कथाको रसपान करि धाम पायौ पायौ नहिं फेरि जन्म
रघुराज पाइकै ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अथ सूतकी कथा ॥

दोहा—अब वर्णौमैं सूतकी, परमपूत यह गाथ ।
जाहि सुनतहिय में करत, निज निवास यदुनाथ॥१॥

दासी सुवन सूत कोउ भयऊ । बालहिंते चंचल चित ठयऊ॥
फिरत रह्यो पुर करत टवाई । मान्यो नहिं जो जननिशिखाई॥
तासु मातु अतिसुजन स्वभाऊ। होतरह्यो लखि साधु उराऊ ॥
ताके सदन संत यककाला । आवतभे सुमिरत नँदलाला ॥
सूतमातु अति आदर कीन्हों । भोजनदै निवास घर दीन्हौं ॥
चंचलता वश सूत सिधाई । साधुनभोजन लियौ छुड़ाई ॥
साधु उच्छिष्ट खान तहँ लाग्यो। तिहि क्षण सुता दुरितसबभाग्यौ
भई विमलमति हरिपदप्रीती । तबते चलन लग्यो शुभरीती ॥
कछुककाल मैं मरिगै माई । नैमिष वस्यो सूत सुखछाई ॥
तहँऋषिमुनि सबसहसअठासी । वास कियो हरिदरश हुलासी॥

साधु समाज सूत नित जाई। कथा सुनै अतिशय मनलाई॥
एक समय चलिव्यास समीपा। विनय कियो हेमुनि कुलदीपा
दोहा—दयाधारि मनमाप्रभु,मोहिं कछु देहु पढ़ाइ।
गानकरहुँ मैं कृष्णयश, संसृतशोक सिराइ॥ २॥
व्यास सुमतिबालक जियजानी। दियो पढ़ाय दया उर आनी॥
ऐसी कृपा करी मुनि व्यासू। भयो पुराणशास्त्र अभ्यासू॥
पैनाहिं भयौ नेकु अभिमाना। तब प्रसन्न ह्वै मुनि परधाना॥
कहत भये वरमाँगहु सूता। तुम्हरी मति हरिसेवन पूता॥
कह्यो सूत प्रमुदित कर जोरी। हैअभिलाष नाथ अस मोरी॥
हरिको सुयश निरंतर गाऊं। नैमिष क्षेत्र छोड़ि नहिं जाऊँ॥
सुनिकै व्यास दियो वरदाना। कथा कथन सामर्थ्य विधाना॥
तबते सूत बैठ व्यासासन। कथनलग्यो हरिकथा हुलासन
तहँ ऋषि मुनि सब सहस अठासी। आये नैमिषक्षेत्रनिवासी॥
विरचे यज्ञ सुनै हरिगाथा। प्रेम मगन सुमरैं यदुनाथा॥
यहि विधि बीति गयो बहुकाला। वर्णत सूतहिं कथा रसाला॥
हरि यश सूत कथित रसवर्षण। भयो मुनीन रोमको हर्षण॥
दोहा—ताते मुनिजन करि कृपा, सूत पुराणिक काहिं।
नाम रोमहर्षण दियो, करि संमत सबमाहिं॥ ३॥
भयो जबै भारत संग्रामा। तीरथ गवनहेतु बलरामा॥
आये नैमिषक्षेत्र अहीशा। जहाँ अठासी सहस मुनीशा॥
रही होति हरिकथा सुहावनि। बैठी मुनि अवली अतिपावनि
उठी समाज रामकहँ देखी। सूतमनहिं भो मोद विशेषी॥
सूतमनहिं अस लग्यो विचारण। एई पुहुमि पतितके तारण॥
इनके करते मैं मृतपाऊं। तो वैकुंठ जाय ठहराऊं॥
जबलौं रहिहै प्राकृत देहा। तबलों नहिं हरिपुर महँ गेहा॥

अब जगमहँ रहिबो नहिं नीको। कब मरिहैं लखिहै सियपीको ॥
जेहि विधि हनै मोहिं बलराई। अब अवश्यसो करहुँ उपाई ॥
सूतठीक दीन्हो मनमाहीं। कियो मनहिं मन विनय तहाँहीं
रामश्याम अग्रज करुणाकर। तुम पूरकनिज जन मनसाकर ॥
पंचरचित ममहरहु शरीरा। सहि न जाति अब जगकी पीरा ॥

दोहा—रामसूत मनको सबै, लियो मनोरथ जानि ॥
पठयो सूतहिं हरिनगर, प्राकृत तनुको भानि ॥ ४ ॥

रामकह्यो लखिमुनिगण शोकी। सूत उठ्यो नहिं मोहिं विलोकी
ताते नाशलह्यो यहिकाला। अब मुनि कोउ नहिं होहु विहाला॥
याकोपुत्र यही सम होई। यहुते अधिक कही सब कोई ॥
कथा श्रवणहोई नहिं भंगा। दूनो बढ़ी भक्ति रसरंगा ॥
असकहि सूत सुवन कहँ आनी। दे वरदान कियो वड़ज्ञानी ॥
बांचनशक्ति पुराणन केरी। सूतहुते ह्वै गई बड़ेरी ॥
पुनि मुनिजनन बोलि तिहि देशा। कीन्हौ विविध ज्ञान उपदेशा
मुनिजन कह्यो सुनहु बलरामा। प्रायश्चित्त करहु यहि ठामा ॥
यदपि न लग्यो पाप तुम काहीं। प्रायश्चित्त जो करिहौ नाहीं॥
तौ ऐसेहि करिहै संसारा। कैसे चलिहै धर्म अपारा ॥
रामकह्यो जो देहु बताई। प्रायश्चित करों यहि ठांई ॥
मुनिकह हेरोहिणी किशोरा। बल्वलदैत्य महा वरजोरा ॥

दोहा— पर्व पर्व महँ आइकै, करत उपद्रव दुष्ट।
तासु नाशकीजे अवशि, वह दानव बलपुष्ट ॥ ५ ॥
राम तुरत लै हल मुशल, रणमहँ ताहि हँकारि।
बल्वलको संहारिकै, दियो मुनिन भय टारि ॥ ६ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अथ मुचुकुंदकी कथा ॥

दोहा—अब मान्धातानृपतिको, सुवन भूप मुचुकुंद ॥
तासु कथावर्णनकरों, जेहि चलि मिले मुकुंद ॥ १ ॥

भोमुचुकुंद महामहिपाला । वोज तेज वल बुद्धि विशाला ॥
विक्रमतासु निरखि असुरारी । निज सहाइ हित लियो हँकारी॥
दानवदैत्य कटक अतिभारी । नृप मुचुकुंद कियो रणरारी ॥
इकरथ लियो सबनकहँ जीती। मेटि दियो देवनकी भीती ॥
हैप्रसन्न देवन कह वानो । माँगहु वर भूपति वलखानी ॥
भूपनींद विन वर्षवितायो । युद्धकरत अवकाश न पायो ॥
ताते अति उनींद अरिघाती । माँग्योदेवनसो यहि भाँती ॥
जो कोउ सोवत मोहिं जगावै । तौ मम दीठ परत जरि जावै ॥
एवमस्तु देवन कहिदीन्हे । इक गिरि गुहाशरण नृप कीन्हे ॥
सतयुग त्रेता द्वापर अंता । जब अवतार लीन भगवंता ॥
जरासंध मथुरै चढ़िआयो । वार सतदश कृष्ण हरायो ॥
पुनि नृप अष्टादशईं वारा । कालयवन रण हेत हँकारा ॥

दोहा—तीनिकोटिलेयमन दल, कालयमन रणधीर ॥
मथुराको कीन्हो गवन, शमन हेतु नृपपीर ॥ २ ॥

इत मागधलै कटक अपारा । मथुराको गवन्यो वलवारा ॥
उभय ओर दल आवत देखी । राम श्याम मतिवान विशेषी ॥
कर विचार रामहि पुर राखी । कढ़े निरायुध हरि मनमाषी ॥
कालयवन लखि हरिकहँ धायो । आयो बहुत दूरि पछिआयो॥
सोवत रह्यो जहां मुचुकुंदा । तौन दरीमहँ गयो मुकुंदा ॥
पीतांबर नृप काहिं वोढ़ाई । रह्यो ताहि द्रुत दरी दुराई ॥
कोपित कालयवन तहँ गयऊ । कृष्णहि परो जानि अस लयऊ

इतने दूरि मोहिं दौराई। तैंसोवत इत पद पसराई ॥
असकहि कीन्हेसि चरण प्रहारा। उठ्यो भूप चहुँ वोर निहारा ॥
परतै दीठि यवन जरि गयऊ। राजाके मन विस्मय भयऊ ॥
कढ़ि आये तब तुरत मुरारी। भूपति सुछबि अनूप निहारी॥
जोरि पाणि बोल्यो अस बैना। अहौ कौन तुम राजिवनैना ॥

दोहा—को जरिछार भयो इतै, करि मोहिं चरण प्रहार ॥
होइ विदित जो तुमहिं कह, तुमहीं करो उचार ॥३॥

जो पूछ्यो हमको छबिवारे। मांधाता पितु अहैं हमारे ॥
सूर्यवंशको अहौं भुवारा। अहै नाम मुचुकुंद हमारा ॥
कौनेहु कारण वश इत आये। शयन करत बहुकाल बिताये॥
तीनिदेवमें हो तुम कोई। लोकपाल धौं तेज बड़ोई ॥
सुनि मुचुकुंद वचन यदुराई। मंद मंद बोले मुसकाई ॥
जन्म कर्म मम अहै अपारा। कहिन सकत सब वदन हजारा
यदुकुलमें प्रगट्यो यहि वारा। वासुदेव अस नाम हमारा ॥
यहि यवनेशहिं मैं इत लायो। आप दीठिते दहन करायो ॥
तुवचरित्र सिगरो ममजाना। भयो जौन विधि शयन विधाना
तब मुचुकुंद मुकुंदहि जानी। कियो प्रणाम भाग्य बड़मानी
स्तुति कीन्हो दोउ कर जोरी। धन्यभाग्य मैं अब प्रभु मोरी ॥
देहु नाथ पदपंकज प्रेमा। अबनहि चहौं और कछु नेमा ॥

दोहा—तब हँसि हरि बोले बचन, लहिहौ प्रेम हमार।
पै ममशासन शीश धरि, कीजै यह उपचार ॥ ४ ॥

क्षत्रीधर्म विचारि भुवारा। जीवन मारे खेल शिकारा ॥
सो तपकरि मेटहु यह पापा। तब जैहौ ममपुर विनतापा ॥
सुनि हरिवचन भूप मतिधामा। प्रभुकहँ कीन्हो दंड प्रणामा ॥
गुहा निकसि देख्यो संसारा। लघु भूरुह लघु मनुज अपारा ॥

गयो उत्तराखण्ड नरेशा। कछुककाल तप करि तेहिदेशा॥
लह्यो ब्रह्मसुख पद निर्वाना। हरि पुनि मथुरा कियो पयाना॥
यह शंका उपजै जनि भाई। हरिहिं दरशि नृप मुक्ति नपाई
अस्तुति करत माहिं अस गायो। मैंतौ परब्रह्म वपु ध्यायो॥
सन्मुख खड़े प्रत्यक्ष मुरारी। रूपमाधुरी दियो विसारी॥
चारि बाहु सुंदर घनश्यामा। सो तजि भज्यो ब्रह्मसुख धामा॥
सोइ अपराध कियो तपजाई। कछुक कालमहँपरगतिपाई॥
हरि दर्शनको प्रगट प्रभाऊ। नरकहि नाहिं गयौ नृपराऊ॥

दोहा—रूपमाधुरी छोड़िकै,भजहिं ब्रह्मको रूप।
ते नर सुखपावत नहीं, परत ब्रह्मसुख कूप॥ ९॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेदशमोऽध्यायः॥१०॥

अथ कृपाचार्यकी कथा॥

दोहा—कुरुकुलको आचार्यइक,कृपाचार्य असनाम।
महावीर रण धीर अति, कृष्णभक्त मतिधाम॥ १॥

एक समय गौतमऋषिराई। कियो कठिन तप कानन जाई॥
वासव देखि महाभयमानी। पठई रंभाको छल ठानी॥
रंभहि निरखिध्यानखुलि गयऊ। रेतपात तब मुनिको भयऊ॥
मुंजाटवी गिरचो सो रेतू। कन्या पुत्र भये छविकेतू॥
शंतनु भूप शिकार सिधारे। सुता और सुत तहां निहारे॥
दयालागि ल्याये पुर माहीं। पालिसमर्थ कियो दोउ काहीं॥
कृपा आनि उरमें पुर लाये। नाम कृपी कृप तासु धराये॥
युवा भयो तब कृप द्विजराई। धनुर्वेद पढ़िवो मतिलाई॥
परशुरामढिग कियो पयाना। शस्त्र शास्त्रके पढ्यो विधाना॥
शस्त्र शास्त्र पढ़िकै गृह आयो। तब अचार्य पदवी कहँ पायो॥

हस्तिननगर बस्यो कछुकाला। करन चह्यो तप बुद्धिविशाला
बदरीवनकहँ गयो तुरंता। करनलग्यो तप सुमिरि अनंता॥
दोहा—तासु परिश्रम निरखिकै, गौतम ऋषितहँआइ।
कह्यो मागु वरदान सुत, जैसो जिय हुलसाइ॥ २॥
करिदंडवत जोरि युगपानी। कृपाचार्य बोल्यो अस बानी॥
वरमागनकी मति नहिं मोरी। देउ सोइ जो पितुमति तोरी॥
ह्वैप्रसन्न बोले मुनिराया। अजर अमर होई तुव काया॥
बोल्यो कृप औरहु प्रभु देहू। कृष्णचंद्र पद अचल सनेहू॥
जबलगि रहै शरीर हमारा। तबलगि निरखौंनंदकुमारा॥
एवमस्तु गौतम कहि दीन्हो। मुनिकृप मुदितगवनगृहकीन्हो
पुनि जब भारत संगर भयऊ। तब जहँ जहँ पारथ रथ गयऊ॥
तहँ तहँ तासु सारथी देखी। बाग्यो कृप छबि छकत अलेखी
करैयुद्ध सब वीरन पाहीं। अनमिष लखत मुकुंदहि काहीं
पुनि जब राज युधिष्ठिर कीन्हो। जन्मपरीक्षितको हरि दीन्हो॥
तब तेहिं जाति कर्म करवाई। वस्यो एकांत विपिनमहँ जाई॥
खान पान सैनहु तजि दीन्हा। कृष्ण आय निजकर शिरकीन्हा
दोहा—यथाविभीषणपवनसुत, बलि मुनि मार्कंडेय।
परशुराम अरु व्यासजे, तस तुव होहु अजेय॥ ३॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेएकादशोऽध्यायः॥ ११॥

अथ द्रोणाचार्यकी कथा॥

दोहा—अब बर्णौंकुरुकुल गुरु, द्रोणाचारज गाथ।
जाहि तजत तनु सन्मुखै, खरेभये यदुनाथ॥ १॥
एकसमयमुनि भारद्वाजू। महाविपिन गवने तप काजू॥
करत सुतप बीते बहुकाला। पुत्रहीन हित कियो कसाला॥

एक समय ताहीपथ ह्वैके। रंभा निकसि गई मुनि ज्वैकै ॥
रंभै लखत छूटिगो ध्याना। मुनि हिय मदन प्रभाव समाना
रेत रुक्यो नहिं तब मुनिराई। दियो द्रोणमहँ ताहि धराई ॥
सोइ सुतद्रोणाचारज भयऊ। लोक वेद महँ अनुपम ठयऊ ॥
कृपकी भगिनि कृपी मनभाई। तासु विवाह कियो सुखछाई ॥
द्रोणपढ़न गुरुमनहिं विचारे। परशुरामके निकट सिधारे ॥
सकल शास्त्र कीन्हो अभ्यासा। फेरि गयो सुरगुरुके पासा ॥
वेद वेदांग तहाँ पढ़ि लीन्हो। औरहु शास्त्र कंठ गत कीन्हो ॥
बहुत दिनन महँ निज घर आयो। अश्वत्थामा सुत गृहजायो ॥
कृपी पयोधर नहिं पय भयऊ। मागन धेनु द्रुपदपहँ गयऊ ॥

दोहा—कह्यो द्रुपदनृपसोंवचन, हम तुम यक गुरुगेह ॥
पढ्यो शास्त्र विद्या सकल, ताते बढ्यो सनेह ॥ २ ॥

हम तुम मित्र मित्र दोउ अहहीं। ताते एक धेनु हम चहहीं ॥
देहु दयाकरि भूप मँगाई। तब जानै हम सत्य मिताई ॥
द्रुपद कह्यो तब वचन रिसाई। कैसे भिक्षुक भूप मिताई ॥
द्वार द्वार तैं मांगनहारो। मैं नरेश जगयश उजियारो ॥
द्रोण कह्यो फूटै नहिं आखी। सूधे भनहु भूप नहिं भाखी ॥
द्रुपदभूप तब कोपित वेशा। दियो द्वारपन तुरत निदेशा ॥
देहु निकारि पकरि भिखियारी। जोरत निज मित्रता हमारी ॥
परिचारक गहि द्रोणनिकारे। चले द्रोण मुखमौनहिंधारे ॥
पुरबाहिर काढ़ि कियो विचारा। करौं भस्मनृप लगै न वारा ॥
पै ब्राह्मणहि क्रोध बड़ दोषू। ताते करौं न नृपपर रोषू ॥
जाहुँ हस्तिनापुर यहिकाला। सकल पढ़ाऊँकुरुकुल बाला ॥
तहँ दरशन पैहौं हरिकेरो। होई पूर्णमनोरथ मेरो ॥

दोहा–अस विचारि हस्तिननगर, आयो द्रोण सुजान।
रहे पढ़ावत शिशुनको, कृपाचार्य मतिवान ॥ ३ ॥

कृपाचार्य अतिआदर कीन्हो। बहनोईको भोजन दीन्हो ॥
पढ़नगये शिशुभयो प्रभाता। कंदुक भयो कूपमहँ जाता ॥
द्रोणमारि शर ताहि उठाला। भये मुदित अचरज गुणिबाला।
सुनि भीषम द्रोणहिं ढिग आनी। कह्यो पढ़ावहु शिशुन विज्ञानी
कृपहु कियो संमत सुखपागे। द्रोणपढ़ावन बालक लागे ॥
पांडव दुर्योधनआदिक सब। पढ़ पढ़ सिगरे निपुणभयेजब॥
तब माँग्यो गुरुदक्षिण द्रोना। शिष्य कह्यो लीजे बहु सोना ॥
द्रोण कह्यो गुरुदक्षिणयेहू। द्रुपद नरेश बाँधि मोहिं देहू ॥
तब दुर्योधन आदिक वीरा। चढ़े द्रुपद पर लै धनु तीरा ॥
द्रुपद महारण कीन्हो कढ़िकै। जित्यो कौरवन सायक मढ़िकै
तब पांचौ पांडव द्रुत धाये। द्रुपदहिं पकरि द्रोण ढिगल्याये
भीषम देव छुड़ाइ नरेशै। द्रोणहिं कियो अचार्य विशेषै ॥

दोहा–पुनि जब हींसा पांडवन, दियो न कलि अवतार।
भीषम द्रोण बुझाइकै, मानि लियो हियहार ॥ ४ ॥

तबहिं द्रोण अस मनहिं विचारा। अबदेखब वसुदेव कुमारा ॥
होनलग्यो भारत संग्रामा। द्रोणलखनलाग्यो घनश्यामा॥
धृष्टद्युम्न हाथ निज मरणा। जानि द्रोण सुमिरत हरिचरणा
निजसुत विरह व्याज रणमाहीं। बैठ्यो रचिशरशय्या काहीं ॥
हाथ जोरियदुपतिसों भाष्यौ। याहि दिनहित मैं श्रम करिराख्यो
चारिबाहु सुंदर तनु श्यामा। आवहु नाथ आज यहिठामा ॥
धरहु शीश महँ निज करकंजू। करहु नाथ मेरो भवभंजू ॥
जानि अनन्यदास यदुराई। गये समीप प्रेम उरछाई ॥
द्रोण निरखिअनिमिष हरिरूपा। मान्यो बच्यो गिरतभवकूपा ॥

पुनि हरिके चरणन चितराखी । राम कृष्ण मुखमैं असभाखी॥
तनुतजि भयो लीन हरि माहीं । यह प्रसंग जान्यो कोउ नाहीं॥
द्रोण लह्यो पार्षद हरि रूपा । यहि विधि ताकर सुयशअनूपा
दोहा–वीर शिरोमणि द्रोणद्विज, भो अनन्य हरिदास ।
वीरभक्ति कीन्ही विमल, छूटिगयो यमपास ॥ ६ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेद्वादशोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ राजसूययज्ञकी कथा ॥

दोहा–सुनहु संत वर्णन करौं, अति अद्भुत यह गाथ ॥
जानि परत जिहि सुनत अस, दायानिधि यदुनाथ॥१॥

धर्मसुवन यक समय सभ्राता । सभामध्य बैठ्यौ अवदाता ॥
मनमहँ लाग्यो करन विचारा । होइ सुयश किहिभाँति अपारा॥
राजसूय मख करौं महाना । मोर सहायकहैं भगवाना ॥
अब नाहिं जो करिहौं कछु नीकौ। तौ रहिजाइ मनोरथ जीकौ ॥
यहिविधिनृपाहिं करत अनुमाना। नारद मुनि तहँ कियो पयाना॥
उठी सभा नारद कहँ देखी । पांडव माने मोद विशेषी ॥
चलि आगे मुनिवरकहँ लीन्हे । आसन हित कनकासन दीन्हे॥
पूज सविधि पग धोइ नरेशा । सो जल सींच्यो सकल निवेशा
कुशल प्रश्न नृप पूछिसुखारी । विनयसहित पुनि गिरा उचारी
मम मन इक उपजीअभिलाखा ।रहत मनोरथ हरिकर राखा॥
जाहु द्वारिका वेग मुनीशा । जहँ निवसत यदुकुलकर ईशा॥
मोरि विनय असप्रभुहिसुनायो । तुमहि नाथ तुवदास बुलायो॥
दोहा–राजसूयमख करनको, चाहतहै तुव दास ॥
सो पूरण प्रभु करहु इत, आइ तुम्हारिहि आस ॥ २॥
सुनि नृपवचन मोद मुनि मानी । कह्यो धर्म भूपतिसोंबानी ॥

भले विचार कियो महराजा । ऐहैं अवशि इतै यदुराजा ॥
असकहि चल्यो सुरर्षि सुजाना । गयो द्वारिकै जहँ भगवाना ॥
लगी सुधर्मा सभा सुहाई । बैठ्यो उग्रसेन नृपराई ॥
नृप दाहिने कनकासन माहीं । राजतहरि हेरत चहुघाहीं ॥
हरि दक्षिण दिशि सात्यकिउद्धव। पुनिअक्रूर कृतवर्म महाजव ॥
यहिविधि और बड़े यदुवंशी । लोक पाल सम शत्रुनध्वंशी ॥
उग्रसेन बाँये दिशि रामा । तेहि आगे प्रद्युम्न बलधामा ॥
सांबादिक पुनि कृष्णकुमारे । बैठे सकल आयुधन धारे ॥
औरहु वृद्ध वृद्ध यदुवंशी । बैठे निजमति वेदप्रशंसी ॥
गायकगण गावहिं गुण गाना । नचैं अप्सरा लैलैताना ॥
तहँ नारद मुनि पहुँचे जाई । उठे सभासद अति अतुराई ॥

दोहा—रामश्याम आगू लियो, सिंहासन बैठाय ॥
पूछ्यो कुशल बहोरि सब, बार बार शिरनाय ॥ ३ ॥

कहु मुनीश पांडव कुशलाई । इतना सुनत भण्यो मुनिराई॥
यदुवर राजसूय मख राजा । चाहत करन धर्म महराजा ॥
सो पूरणहित तुमहिं बुलायो । मैंही तुमहिं बुलावन आयो ॥
सुनि यदुनंदन अतिसुखभीने। सैनसजावन शासन दीने ॥
सजी सैन चतुरंग अपारा । चल्यौ सदल वसुदेव कुमारा॥
रामरहे पुररक्षण हेतू । तैसे उग्रसेन मति सेतू ॥
आये इंद्रप्रस्थ मुरारी । धाये पांडव परम सुखारी ॥
जे जस रहे ते तस उठिधाये । अशन वसन बासन बिसराये ॥
जे जैसहि पहुँच्यो चलिआगे । तेहि तस मिले नाथ अनुरागे॥
मिले नाथ कहँ पाँचोभाई । बारबार दृग वारि बहाई ॥
धर्मनृपति भीमहि करवंदन । मिले बहुरि पार्थहिं यदुनंदन ॥
सानुजनकुलहिआशिष दीन्हे । पांडव पुनि हरिवंदन कीन्हे ॥

दोहा—इंद्रप्रस्थ लेवायकै, आये पांडुकुमार ॥
सानुज सदल सपुत्रनृप, कियो परम सत्कार ॥ ४ ॥
षोडश सहस कृष्ण महरानी । चढ़ीं पालकी सुमुखि सयानी ॥
तिनहिं भूप आपुइ चलि आये । निज अंतइपुर वास देवाये ॥
सुंदर सोरहसहस अगारा । वसीं मुदित यदुनंदन दारा ॥
पृथक्पृथक् कुँवरन कहँ राजा । दियो निवास वासके काजा ॥
औरहु जे यदुवंशी आये । तिनहिं कृष्ण सम मानि वसाये
नित नवीन कीन्हों सत्कारा । वरणि जाइ किमि विभव अपारा
एक समय तहँ सभा मँझारी । वैठे पांडव सहित मुरारी ॥
धर्मनरेश कह्यो कर जोरी । राजसूय मखकी मति मोरी ॥
पूरण करहु नाथ अभिलाषा । मम सर्वस वर राउर राखा ॥
नाथकह्यो यह उत्तम काजू । करहु अवश्य धर्म महराजू ॥
असकहि लै सँग अर्जुन भीमा । गये मगधदेशै बलसीमा ॥
भीम हाथ मागधै हतायो । तासु राजतिहि सुतहि देवायो॥
दोहा—यह आनँदअंबुधि कियो, सकल कथा विस्तार ॥
अब संतो आगे सुनो, राजसूय संभार ॥ ५ ॥
पौरसचिव बंधुन युत राजा । बैठ्यो सभा मध्य छवि छाजा ॥
कनकासन आसित यदुराजा । कारक सकल पांडु सुत काजा॥
तहँ अगस्त्य कौशिकमुनि व्यासा। गौतम वाल्मीकिविन आसा
आसुरि गालव भार्गव रामा । गर्ग च्यवन लोमश तपधामा ॥
नारद सनकादिक मुनि ईशा । आये जहँ बैठे जगदीशा ॥
तहँ भूपति वसुदेव कुमारा । बैठायो करि बहु सतकारा ॥
भूपति मुनिनाथनसों भाषा । ममहिय राजसूय अभिलाषा॥
पूरण करहु लेहु प्रभु वरणा । करवावहु नृप मखमुदभरणा॥
मुनि तथास्तु कहि सुदिन विचारी । करवाई मखराज तयारी॥

तहँ सुरर्षि ब्रह्मर्षि अपारा । दीक्षित भये मखेश अगारा ॥
भई भीरकछु वरणि न जाई । राजा रंकनकी समुदाई ॥
योगी सिद्ध साधु महिदेवा । आये सकल करन हरिसेवा ॥
दोहा—चारण विद्याधर पितर, गुह्यक सुर गंधर्व ।
लोकपाल दिगपाल सब, ब्रह्मशिवादिक सर्व ॥ ६ ॥
कोउ न रह्यो त्रिभुवन में बांकी ।लखन राज मख मति नहिंजाकी
इंद्रप्रस्थ पुरमें तिहिकाला । आये देखन सब यदुपाला ॥
करिकै धर्मनृपहिं अनुरागा । मखकारज हित कियो विभागा
भीमपाकशाला अधिकारी । बनवावै व्यंजन सुखकारी ॥
भयो सुयोधनकोश अधीशा । धरै जौन बल देहि महीशा ॥
लै आवन धनको अधिकारा । नकुल करै कारज निरधारा ॥
सहदेवहु पूजा अधिकारी । विप्र भूप साधुन सत्कारी ॥
साधु विप्र सेवन अधिकारा । करन लग्यो अर्जुन सुख सारा
विप्र साधु पूजन अधिकारी । भई यज्ञ महँ द्रुपदकुमारी ॥
साधु चरण धोवन अधिकारा । लेत भयो वसुदेव कुमारा ॥
भयो करण दानहिं अधिकारी । भीषम विदुर मंत्रपद भारी ॥
यहिविधि होन लग्यो मख राजा। दीक्षित भयो धर्म महराजा ॥
दोहा—तिहि औसर मुनि मंडली, उठ्यो परमसंदेह ।
कोन अग्र पूजन लहै, कापर सबको नेह ॥ ७ ॥
तहँ देवर्षि महर्षि उदारा । लगे करन यह काज विचारा॥
बड़े बड़े भूपति जुरि आये । कोउ नाहिं यह संदेह मिटाये॥
तब सहदेव कही यह वानी । सुनिये सकल मुनीश विज्ञानी
त्रिभुवन अधिप अहैं यदुराई । जगव्यापक जगते अलगाई ॥
अहैं अग्रपूजनके योगू । यहि हित और न करिये सोगू॥
इनहींके पूजे मुनि राई । सकल विश्व पूजन ह्वै जाई ॥

यह तौ संमत अहै हमारा। पुनि जस होय विचार तुम्हारा
सुनि सहदेव वचन मुनिराई। कीन्हे संमत सब सुखपाई॥
लहै अग्रपूजन यदुदेवा। याते और न कछु हरिसेवा॥
मुनिन वचन सुनि धर्म भुवाला। मान्यो महामोद तिहि काला॥
भूषण वसन अनेक मँगाई। हरिकहँ सिंहासन बैठाई॥
निज हाथन प्रभु चरण पखारयो। भुवन पुनीत सलिल शिरधारयो

दोहा–करि प्रभुको पूजन सविधि, भयो नरेश निहाल।
हरि पूजन लखि मंदमति, सहि न सक्यो शिशुपाल॥८॥

मध्य समाज कह्यो कटुवानी। सुनहु सबै मुनीश विज्ञानी॥
किधौं बावरीभै मति सबकी। भै विपरीति कालगति अबकी॥
ऋषि परमर्षि सुरर्षि सुजाना। धर्म धुरंधर भूपति नाना॥
ब्रह्मरुद्र अरु लोकप देवा। शंकर जेहि कोउ जानन भेवा॥
ऐसे योग्यन ईशन छोड़ी। सभासदनकी मतिभइ भोड़ी॥
यक अबुद्धि बालकके भाखे। कोउ नाहिं कछु विचार उरराखे
योग मिल्यो नहिं सबको दूजा। गोपहिं दियो अग्र मख पूजा॥
नंदगोप सुत अति अविचारी। भाग्य विवश विभूति भै भारी
सकल धर्मते रहित कुजाती। कारोवपु निज मातुल घाती॥
ताहि अग्र पूजन सब दीन्हो। कहौ सकल यह कैसे कीन्हो॥
सुनत नाथ निंदन हरिदासा। हाइ हाइ बोले चहुँ पासा॥
ऋषिमुनिविप्रदीनबलहीना। निज काननअंगुलि कर लीन्हा

दोहा–हरि हरिजनकी जो सुने, निंदा अपने कान।
हनै बली जो होइ नतु, तहँते करै पयान॥ ९॥

साधु विप्र यहि भाँति उचारी। कानमूंदि उठि चले दुखारी॥
हरिनिंदा सुन पांडुकुमारा। उठे शस्त्रलै कुपित अपारा॥
विदुर भीष्म द्रोणादिक वीरा। अमरषवश धारे धनु तीरा॥

सबकहँनिरखि शस्त्र लैआवत । उठ्यौ चँदेरीपति अस गावत॥
कहौ सकल तुम गोपसहायक । यहि अघते तुम्हहौ वधलायक
असकहिउठ्योकुपिताशिशुपाला। करमें करिकराल करवाला ॥
पांडुसुतनकहँ मारन धायो । सभामध्य कोलाहल छायो ॥
जबलौं कह्यो आपने काहीं । तबलौं प्रभु बोले कछु नाहीं ॥
जब दासनकहँ मारन धायो । तब हरि उठि असवचनसुनायो
बैठहु इत उत कोउ नहिं जाहू । पावत फल चेदिप नरनाहू ॥
असकहि यदुपति चक्र चलायो। काटि तासु शिरधरणि गिरायो
साधु सिद्ध मुनिजयध्वनिकीन्हे। प्रमुदित परिचर दुंदुभि दीन्हे॥

दोहा–भगे सबै पापी नृपति, द्रोहीहरिहरिदास ।
धर्मनृपति अस्तुति करी,सकल मुनिन सहुलास॥१०॥

राजसूयमख होन लग्यो पुनि । छाइरही चहुँवोर वेद ध्वनि ॥
सिद्ध महर्षि देवऋषि ज्ञानी । सुर नर मुनितपजपअभिमानी
विप्र साधु सब जेहि मखआये। निज निज पूर मनोरथ पाये ॥
सोमखको असरह्यो प्रमाना । पूरहोइ तब यज्ञ विधाना ॥
पंचजन्य जब बजै आपते । सोइ पूरित कर्त्ता प्रतापते ॥
सो जगके सुरनर मुनि जेते । खाये पाये वांछित तेते ॥
पैनहिंबज्यौ शंख तेहिकाला । तब ह्वै गयो महीप विहाला ॥
शंकित सभामध्य नृप जाई । पूछ्यो श्रीयदुनाथ बुलाई ॥
ऋषि मुनि सिद्ध देवद्विजनाना । विद्यमान तुम यदुकुल भाना॥
भई तृप्ति मख सकलसमाजा । कारणकौन शंखनहिं बाजा ॥
को अस बाकी जो नहिं आयो। कौनहिं नाथ मनोरथ पायो ॥
बजै शंख जेहि कारण पाई । सो कहिये कृपालु यदुराई ॥

दोहा–सुनत युधिष्ठिरके वचन,सो कारण प्रभु जानि ।
मंद मंद बोले वचन, विहँसत सारँगपानि ॥ ११ ॥

कवित्त–ब्रह्मशिवइंद्रयम वरुण कुबेर आदि आये यज्ञ राजसूय देखन तिहारोहै ॥ तैसे मुनिमनुज महर्षि देवऋषि परमर्षि राजऋषि विप्रगणहूँ अपारोहै ॥ रघुराज रावरेके हाथ सतकारपाये पै न यज्ञ पूरणता कोई निरधारोहै ॥ शंख-नहिं बाजो ताको कारण यहीहै भूप आयौना अनन्यदास एक वा हमारोहै ॥ १ ॥ चाकर तिहारो झारै भवन तिहारो रोज नगर निवासीहौं तिहारो चिरकालको ॥ यथालाभ तोषित न रोषित कोहूपैहै अदोषित अनाख भक्त त्यागे जगजालको ॥ साधुनको जूंठ खात खात भै विमल बुद्धि नेही नहिं देह गेह बालकहूबालको ॥ जातिको श्वपचमहिपाल वालमीकि नाम मोहिं प्राण प्यारो तुम्हैं कारक निहालको ॥ २ ॥ केतऊखवावो विप्र देवन रिझावौ भूरि केतऊ लगावो मन भूप इष्टदेवमैं ॥ केतौ साधु सतकारौ केतौकरो उपचारौ केत उपवारौ धन राजारंक भेवमें ॥ रघुराज साँची कहौं सुनो धर्म महाराज ह्वैहैना कछूककाज कौनोदेवलेवमें ॥ पूजिहैन यज्ञ केतौ मुनिन समाज पूजे बाजिहै न शंख विन वालमीकिसेवमें ॥ ३ ॥ योग रह्यो जाइवो तिहारो ताहि ल्यायवेको दीक्षितहो यज्ञ मैं न ताते पगु-धारिये ॥ भीमसेन पारथ तुरत जाय ताके भौनल्यावैंतुवधामैं यह कामैं निरवारिये ॥ द्रौपदी बनावै निजहाथन जेंवावै आप आपनेही हाथन सों चरण पखारिये ॥ रघुराज राजसूयपूरणतौ ह्वै है तबै वालमीकि पद जलयज्ञ थल डारिये ॥ ४ ॥

दोहा–सुनिकरुणानिधिके वचन, अचरजमानिभुवाल।
मानिभक्तमहिमाप्रबल, शासनदीनउताल ॥ १२ ॥

भीमसेन पारथ तुम जाहू। ल्यावहु जाहि कहत यदुनाहू ॥
भीमसेन अर्जुन दोउ धाये। हेरत हेरत पुर नवि आये ॥

नगर छोर महँरहै मड़ैया। द्वारे बैठि तासु लो गैया॥
अर्जुन पूछ्यो केकरि वामा। कहँहै वाल्मीकिकर धामा॥
कह तिय नाम लेहु प्रभु जासू। तासु नारि मैं यह गृह तासू॥
मेरी बड़ी भाग्य भइ आजू। आये भवन आप केहिकाजू॥
अर्जुन भीम कही असवानी। कहाँ तोरपति कहै सयानी॥
नारि कह्यो बैठे घर भीतर। मैं लैहौं लेवाइ तुव पदतर॥
अर्जुन कह्यो हमैं तहँ जैहैं। तेरे पतिके पद शिर नैहैं॥
असकहि भीम धनंजय वीरा। गये जहाँ बैठो मति धीरा॥
वाल्मीकि लखि अर्जुन भीमै। कियो प्रणाम दौरि धरणीमै॥
ते दोउ ताकहँ कियो प्रणामा। देखे तासु रूप अभिरामा॥

दोहा—पहिरे ऊनवसनकरि, उर तुलसीकर माल।
सोहरिको पूजत रह्यो, ऊर्ध्व पुंड्रधृतभाल॥ १२॥

वाल्मीकि कह दोउकर जोरी। कौन सुकृत जागी प्रभुमोरी॥
भंगी भवन तुम्हार अँवाई। यह अचरज कछु कह्यो न जाई
आयसु देहु नाथ का करहूं। तुव गृह झारि उदर नितभरहूं
भीमसेन अर्जुन तब भाखे। नृप तुव दर्शनकी रुचिराखे॥
चलिये यज्ञ पूर अब कीजे। धर्मनृपति कहँ दर्शन दीजे॥
साधु शिरोमणि तुम हो साँचे। जापर जियते यदुपति राचे॥
असकहि चरण धूरि धरि शीशा। लै गवने जहँ धर्म महीशा॥
आयो वाल्मीकि जब द्वारे। नृपति सहित यदुपतिपगुधारे॥
धर्मनृपति धीरज तजि धोरी। परचो श्वपच पद दोउकरजोरी
मिलत ताहि नृप बारहिंबारा। आँखिन बहत अंबुकी धारा॥
यदुपति लियो हिये महँ लाई। वाल्मीकि पद परचो लजाई॥
प्रेम विवश कछु बोल न आवत। साधु विप्र अचरज सबगावत॥

दोहा—तासुएककरकृष्णगहि, यककरगहिमहिपाल ।
ल्याइयज्ञशालादियो, आसनपरमविशाल ॥ १४ ॥

मुनि मंडली विराजत जहँवां । बैठ्यो श्वपच शुभासन तहँवां ॥
तहँ आई पुनि द्रुपद कुमारी । धरे सलिल चामी करझारी ॥
लीन्ह्यो भूप कनक कर थारा । लग्यो पखारन चरणउदारा ॥
श्वपच चरण नृप पोंछि सुखारी। पहिरायो पुनि पट जरतारी ॥
लेप्यो पुनि चंदन निजहाथा । सुमनमाल बाँध्यो उरमाथा ॥
धूप दीप भूपति पुनि कीन्ह्यो । द्रुपदसुताकहँ आयसुदीन्ह्यो ॥
भक्तराजहित व्यंजन ल्यावहु । प्यारी पाणि परोसि खवावहु ॥
तब यदुपति बोले मुसक्याई । कृष्णा जहँलगि तव निपुणाई ॥
तहँलगि व्यंजन विरचिअनंता । ल्यावहु ममजन हेतु तुरंता ॥
पाक भवन चलिकै पांचाली । रच्यो विविध व्यंजनसुखशाली
भरिभरि हाटक भाजन लाई । धरयो भक्त आगे सुखछाई ॥
पृथक् पृथक् व्यंजन करनामा । दियो बताइ जानिमतिधामा ॥

दोहा—सबव्यंजनजबधरिगये, वाल्मीकि उठिआसु ।
अर्पणलाग्यो कृष्णको, नैनमूंदिसहुलासु ॥ १५ ॥

यहिविधि प्रभुहि निवेद लगाई । पुनि सो व्यंजन एक मिलाई॥
एक कौर डारत मुखमाहीं । शङ्खबज्यो इकबार तहाँहीं ॥
वाल्मीकि खायो सब साजा । पैनहिं शङ्ख फेरि मखवाजा ॥
शङ्खै यदुपति ताड़न दीन्ह्यो।तबहुं न शङ्ख शोर कछु कीन्ह्यो ॥
तब हरि द्रुपदसुतासों भाख्यो । कारण कौनशङ्खपुनिमाख्यो॥
तेरे मनधौं भयो विकारा । सो भामिनि सतिकरहुउचारा ॥
यदुपति वचन सुनत महराणी । नैन नवाय कही असवाणी ॥
जो हम व्यंजन सब इतल्याई । वालमीकि सब एक मिलाई ॥
भोजन कियो स्वाद नहिं जानी । यह मेरे मन भई गलानी ॥

रच्यौ परिश्रम करि मैं सिगरो । जान्यो नहीं बन्यो अरु बिगरो॥
तब हम कह्यो मनहिं मन केशो। कहत भक्त याको सब कैसो ॥
तब यदुपति बोले हँसिबानी । अबलों भयो न ज्ञान सयानी ॥
दोहा—जो जो तुम व्यंजन रच्यों, सो मोहिं अर्पणकीन ॥
जानो ताकर स्वादमैं, म्वहिं न पूँछि कसलीन ॥१६॥
मीठो मीठो याहि समाना । भामिनि मोरभक्त मतिवाना ॥
असकहि सब व्यंजन कर स्वादू। गये सकल करि यदुपति वादू॥
द्रौपदि मनमहँ अचरज मानी । परस्यो बालमीकिपद पानी ॥
श्वपच चरण परसतद्रौपदिके । शङ्ख शोर किय अनगनतीके॥
सुर नर मुनि यह अचरज देखी । मान्यो भक्त प्रभाव विशेखी ॥
मुनिवर द्विजवर नृपवर सुरवर । गहेचरणशिरनाइ श्वपचकर ॥
नाथहिं बारहिंबार सराहै । अमित आप भक्तन महिमाहै ॥
जय जय शोर मच्यो चहुँवोरा। कहहिं सबै धनि पांडु किशोरा॥
राजसूय तब पूरण भयऊ । बालमीकि यशदशदिशिछयऊ ॥
तहँ यकजन यक नकुलहि लीन्हे।आवत भयो न तेहिंकोउ चीन्हे
सो पुकारि अस वचन सुनायो । मैं तीनिहुँ लोकन फिरि आयो
मरुतराजके राजसूय महँ । गयो नकुल लै बहु मुनिवर जहँ ॥
दोहा—मुनि पद पर छालित सलिल, याको दियो लोटाइ ॥
आधो कनकशरीरभो, आधो रह्यो सुभाइ ॥ १७ ॥
राजसूय जहँ जहँ भयो, हौं पयान तहँकीन ॥
नकुल लोटायो बारबहु,कोउ न कनक करि दीन ॥१८॥
यदुपति तब बोले बिहसि, श्वपचचरण जलमाहिं ॥
दे लोटाइ निज नकुलको, होत हेम कस नाहिं॥१९॥
बालमीकिपद सलिलमें, नकुलहिं दियो लोटाइ ॥
सोउ आधो तनु कनकको, परयो तुरंत लखाइ॥२०॥

दोहा—औरहु अचरज मानि सब,कीन्ह्यो जयजयकार ॥
वालमीकि हरिभक्तकी, यह विधि कथा प्रचार॥२१॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अथ यज्ञपत्नियोंकी कथा ॥

दोहा—सुनहुं संत अब सुंदरी, कथा कृष्णरस भीन॥
मातु माथुरानी सकल, प्रेम नेम जिमिकीन ॥ १ ॥
एक समयवृन्दावन चारी। यमुनाकूल निकुंज विहारी ॥
प्रातहिं उठि सबसखाबुलाई। चले धेनु लै वेणु बजाई ॥
रामश्याम मधि सखा समाजू। जिमि उड़मधि निशिकर दिनराजू
करत वेणुध्वनि आनँदपूरी। गे वृंदावन में बहु दूरी ॥
तहाँ चरावन लागे गैया। सखन सहित बलराम कन्हैया॥
जेठमास लागो तहँ रहऊ। आतपघोर गोपगणलहेऊ ॥
शीतल कुंजकदंबन छाहीं। जातजहाँ आतप तप नाहीं ॥
सखासहित तहँ राम कन्हाई। बैठ मुदित मंडली बनाई ॥
वृंदावन भूरुह अभिलाखन। वृंदावन महि परसत साखन ॥
छाजहिं छत्रसरिस छितिछाये। हरित पत्र फल फूल सुहाये ॥
तिनहिं निरखि सब सखन बुलाई। बोले मंजुल वचन कन्हाई ॥
एतुलसीवनके तरु देखहु। बड़भागी इनको अति लेखहु॥
दोहा—हिम आतप बरषा सहत, पर उपकारहि हेत ॥
आप कछू नहिं लेतहैं, अपनौ सर्वस देत ॥ २ ॥
जन्म सफल तिनको जग माहीं। जे सप्रीति बहु जीवन काहीं॥
तन मन धन अरु वचन लगाई। परउपकारहि करहिं सदाई ॥
यहिविधि वृक्षन वर्णन करिकै। सखन सहित अतिआनँद भरिकै
तरुछाया छाया लै गैया। सखन सहित संयुत बलभैया॥

गये यमुनतट प्रीति घनेरी । निरखत नमित साख तरु केरी॥
तहँ गौवन पय पान कराई । अति शीतल सुगंध सुखदाई ॥
गोपहु सलिल पिये शीतल भल । आपहु पान कियो यमुनाजल
कूल कलिंदी कानन माहीं । गौवें चरन लगीं तृणकाहीं ॥
शीतल इक कदंबकी छाया । बैठे तहाँ राम यदुराया ॥
तहँ विहरत दुपहर ह्वै आई । पठवायो ना भोजन माई ॥
क्षुधित भये तब सबै गुवाला । गये जहाँ बैठे नँदलाला ॥
सकुचत मुख निरखत करजोरी । विनय करी सब सखा निहोरी॥

दोहा–राम राम हे अतिबली, खलखंडन नँदनंद ।
हमको अति लागी क्षुधा, मेटत सबै अनंद ॥ ३ ॥

ताकी देहु उपाय बताई । अथवा भोजन देहु मँगाई ॥
सुनि ग्वालन बालनकी बानी । भक्त आपनी द्विजतिय जानी॥
तिनपर कृपा करनके हेतू । तासु बाँधि मनमें असनेतू ॥
कह्यो सखन सों तहँ नँदलाला । यह उपायकीजे सब ग्वाला ॥
मथुरानगरीके ढिग माहीं । इतते सो दूरी है नाहीं ॥
तंहाँ ब्रह्मवादी द्विज आई । स्वर्ग गमनके हित मनलाई ॥
करहिं आंगिरस यज्ञ सुहाई । जोरे अमित अन्न समुदाई ॥
सखाजाइ तहँ याचहु ओदन । औरहु व्यंजन स्वाद समोदन॥
तिनको ऐसो वचन सुनायो । रामकृष्ण हमको पठवायो ॥
गऊ चरावन इत कढ़िआये । घरते भोजन नहिं जनल्याए ॥
इतते वृंदावन बहुदूरी । बाधति भूख सबनकहँ भूरी ॥
सुखद स्वाद भोजन बहुदेहू । क्षुधा निवारि जगत फल लेहू ॥

दोहा–सुनतनाथके वचन अस, गोप यज्ञ थलजाइ ॥
लखिविप्रनबोले वचन, बार बार शिरनाइ ॥ ४ ॥

तिनसों भोजन माँगन लागे । वचन विनीत क्षुधारस पागे ॥

सुनहुँ विप्र हम कृष्ण सखाहैं । पठयोराम न कहत मृषाहैं ॥
नंदकुँवरके शासनकारी । चितदै सुनिये विनय हमारी ॥
गऊ चरावत दूर गुपाला । काढ़ि आये संयुत बहु ग्वाला ॥
इततेहैं बहु दूरिहु नाहीं । रामश्याम मधि ग्वालनमाहीं ॥
दुपहरभै अति भूँख सतायो । घरते भोजन कछु नहिं आयो ॥
ताते तुव समीप मतिसेतू । हमहिं पठायो भोजन हेतू ॥
जो द्विज श्रद्धा होइ तुम्हारी । तौ भोजन दीजे सुखकारी ॥
तुमतौ सकल धर्मके ज्ञाता । क्षुधित खवाये फल विख्याता ॥
यदपि ग्वाल बहु वचन बखाना। पै द्विज नेकु किये नहिं काना॥
असद्विज सब मन किये विचारा।अनुचित भाषत गोप गँवारा ॥
जे न होइ दीक्षित मखमाहीं ।अनुचित यज्ञ अन्न तिन काहीं ॥

दोहा—शूद्रजाति यह यज्ञको, अन्नकबहुँ जो खाइ ॥
तौविप्रनके यज्ञ महँ, अवशि विघ्नह्वै जाइ ॥ ९ ॥

अस विचारि ते विप्र अज्ञाना । मौनरहे जनु सुने न काना ॥
ब्राह्मण क्षुद्र स्वर्गके आसी । यज्ञकरनमें परम प्रयासी ॥
न्याय और व्याकरण मिमांसा । पढ़ै पढ़ावत करत प्रशंसा ॥
हरिपद प्रीति रीति नहिं जानत। अपनेको पंडित वर मानत ॥
देशकाल ब्राह्मण अरु मंत्रा । अग्निमंत्र देवता स्वतंत्रा ॥
धर्मयज्ञ औरहु यजमाना । इनमें सबमें हैं भगवाना ॥
परब्रह्म सो कृष्ण मुरारी । तिनको द्विज लिय मनुज विचारी ॥
करी याचना तिनकी भंगा । मूरुखँरगे यज्ञके रंगा ॥
हाँ नाहीं जब कछु न प्रकाशा। ग्वालबाल तब भये निराशा ॥
लौटिकृष्ण बलके ढिग आये । क्षुधित दीनह्वै वचन सुनाये ॥
द्विजतौ बोलतऊ भरिनाहीं । देवन देव कहा कहिजाहीं ॥
अब हम नहिं मागनकहँ जैहैं । मागेते अपमानहिं पैहैं ॥

दोहा—ग्वाल गिरा गोविंद सुनि, कह्यो फेरि मुसकाइ ॥
सखाजाइकै फेरि तुम, अस कीजियो उपाइ ॥ ६ ॥
द्विजनारिनसो कह्यो बुझाई। बलयुत बैठे क्षुधित कन्हाई ॥
सुनतै मोर नाम ते आसू। भोजन दैहैं सहित हुलासू ॥
मेरे चरणप्रीति लवलीनी। द्विजनारी हैं परम प्रवीनी ॥
सुनत कृष्णके वचन गुवाला। गये फेरि आसुहि मखशाला ॥
द्विजनारिन कहँ कियो शृंगारा। बैठीं गृहमहँ लखे गुवारा ॥
ह्वै विनीत करि दंड प्रणामा। बोले वचन गोप छुत छामा ॥
वचन सुनहु द्विजनारि हमारे। इत समीप नँदकुँवर पधारे ॥
गऊ चरावत आये दूरी। ग्वालन युत भूखेहैं भूरी ॥
पठयो तुव समीप द्विजनारी। भोजन दीजै विलम विसारी ॥
जवते कृष्ण कथा सुनि राखी। तबते दरशनकी अभिलाखीं ॥
पुनि समीप सुनि नाथ अवाई। तिनके मन किमि मोद समाई ॥
जैसहिं बैठरहीं द्विजनारी। तैसहि उठीं त्वराकर भारी ॥
दोहा—भरि भरि भाजन विविधविधि, भोजन चारिप्रकार ॥
हरि समीप गवनत भईं, जिमि सरि पारावार ॥ ७ ॥
तिनके निरखि कंत सुत भाई। रोकन लगे तिन्हैं बरि आई ॥
कृष्ण प्रीतिवश रुकी न रोंके। कढ़ि आईं तिनको दै ठोंके ॥
आईं कान्हकुँवरजहँ सोहत। निरखत जाहि अतन तन मोहत ॥
यमुना कूल अशोक निकुंजैं। मधुकर पुंजमंजुजहँ गुंजैं ॥
सुंदर श्याम सलोनो गाता। सोहत पीतवसन अवदाता ॥
उरसोहत मंजुल वनमाला। धातुरंग तनु रचे रसाला ॥
मुकुट मोरपख माथ मनोहर। नटवर वेष विश्व मनको हर ॥
कुंडल अमल अलक झलकाहीं। लहत प्रवाल अधर समनाहीं ॥
यक कर कंधसखा अतिभावत। यककर लै जलजात फिरावत॥

मुरि मुरि सखन चितै मुसकाई। क्षणक्षण करत निहालकन्हाई॥
तैसहि तासु निकट बलरामा। शरद सलिल धरतनुअभिरामा
सोहति सखामंडली कैसी। उडुअवलीशशिचहुंदिशिजैसी

दोहा—भोजन देहैं अवशिम्वहिं, द्विजनारी बड़भागि।
राम श्यामके सखनयुत, मनहिं आशअसलागि॥८॥

सवैया—रूप गुण्यो प्रथमै सुनिकै हरि देखनकी अतिलालसा जागी॥ आय प्रत्यक्ष लखी तिनको अपनेको गुनीजगमें बड़ भागी॥ श्रीरघुराज अनूप स्वरूप हिये धरिमूँदि दृगै अनुरागी॥ मोहनको मिलिकै मनमें द्विजनारि बुझाइ दई विरहागी॥ १॥

दोहा—सर्वस तजि निज दरशहित, आई प्रीति बढ़ाइ।
गुनिगोविंद यह लखितिन्है, बोले मृदु मुसकाइ॥९॥

हे बड़ भागिनि सब द्विजनारी। सिगरी तुम इत भले सिधारी॥
बैठहु द्रुतै समीपहि आई। कहो जो हम सब करहिं बनाई
आई मम देखन यहि ठाँई। उचितहि कियो यदपिबारियाई॥
जे मतिवंत भक्ति रसपूरे। मम अनुराग रँगे अतिरूरे॥
ते नाहिं होयकबहुँ फल आसी। केवल तिन मति प्रेमपियासी
तिनके हम प्राणहुँ ते प्यारे। प्राणहुँते प्रिय तेइ हमारे॥
प्राणबुद्धि तन मन धन दारा। आतम योग होत अतिप्यारा॥
ते आतमके आतम हमहैं। कोप्रिय दूजो जग मोहिं समहै॥
भले इतै आई द्विजनारी। हमहु दरशलै भये सुखारी॥
धन्य जन्म तुम्हरो जगमाहीं। करियत परउपकार सदाहीं॥
तुम्हरे कुल तुमहीं बड़ भागिनि। भई सकल तजि मम अनुरागिनि
तुवपति यज्ञ कर्म फल चाहैं। तुमबिन तिनको कछु फलनाहै॥

दोहा—जाहु सबै मखभवनको, तुमहिं संगलै विप्र॥
यज्ञ समापति करहिंगे, अति आनँदसों छिप्र॥१०॥

सोरठा—तब बोलीं करजोरि, द्विजनारी हरि छवि छकीं ॥
बहु विधि हरिहिं निहोरि, वैन विनय रसमें सने॥१॥

कवित्त—नंदके कुमार ऐसो करो ना उचार अब कोमल वदन वैन कठिन न सोहते ॥ एकवार भजै मोहिं ताकूँ मैं तजहुँ नाहिं ऐसी निजवाणी सत्य करौ कहा जोहते ॥ रघुराज रावरेके चरण शरण भई तजि कुलकानि कान्ह आपहीके मोहते ॥ पद अरविंदकी उतारी तुलसीको हमै शीशधारिवेकोनाथ देह अति छोहते ॥१॥ पति पितु भ्रात मातु नीत मित्र बंधु जेते राखैंगे न भौन यह दोषको लगायकै ॥ ऐनहीकी ऐसी दशा बाहिरकी कौन कहै सूझत न और ठौर तुमको विहायकै ॥ पद अरविंद मकरंदकी पियासी दासी काहे दुखदेहु निठुराई दरशायकै ॥ मनकी हरणहारी मूरति तिहारी त्यागि कौन दईमारेके समीप बसैं जाइकै ॥ २ ॥

दोहा—सुनिद्विजनारिनकीगिरा, जानिअलौकिकप्रीति ।
बोलेप्रभुमंजुलवचन, दरशावतअतिरीति ॥ ११ ॥

तुव पतिसुत पितु बंधुनवृंदा। करि हैं नहीं तिहारी निंदा॥
है मम रचित लोक सब जेते। तहँके वासी देवहु तेते ॥
मम प्रसादते सबै तिहारी। करिहैं मुदित प्रशंसा भारी॥
हे द्विजतिय अँगसँग जगमाहीं। सुखअनुराग हेत है नाहीं॥
म्वहिंमहँ मनहिं लगाये रैहौ। तौ मोकहँ आसुहि तुम पैहौ॥
सुमिरण दरशन अरु मम ध्याना। अरु करिवो मेरो यशगाना॥
इनते जसरति होति हमारी। तस नहिं निकटरहे द्विजनारी
ऐसी जब हरि गिरा उचारी। तब सुखमानि सबै द्विजनारी॥
कियो गवन निजभवन तुरंता। सुमिरत यदुपतिसहितअनंता
प्रभुढिग प्रथमहिं आवत माहीं। द्विजरोंके बरबस इककाहीं॥

सो जस हरि मूरति सुनि राखी। सोइ धरि ध्यान मिलनअभिलाखी
तनुतजि दिव्यरूप सो पाई। हरिसो मिली प्रथमहीं आई॥
दोहा–द्विजनारिन आनितसकल, अतिसराहि पकवान।
यथायोग दै सबनको, भोजनकिय भगवान॥ १२॥
यहिविधि भक्त मनोरथ दाता। यदुपति व्रजविहरतअवदाता॥
लौटि भवन आई द्विजनारी। कछु न कहे द्विजतिनहिं निहारी॥
लै अपने सँग नारिन काहीं। कियो समापत मखसुखमाहीं॥
सुमिरि सुमिरि अपनो अपराधा। पावत भे मनमहँ द्विजबाधा॥
पुनि सिगरे असमन अनुमाने। हरियाचना न कछु हमजाने॥
पुनि जस हरिमहँ नारिन प्रीती। तैसी निरखि न अपनी रीती॥
अपनेको निंदत द्विजराई। कहे वचन यहिविधि पछिताई॥
कृष्ण विमुख धिक् जन्महमारा। धिक्धिक् शास्त्रहु पढ़बअपारा॥
धिगव्रत धिग सगरी चतुराई। धिग कुल धिग विज्ञान बड़ाई॥
हम मुनिजनके गुरू कहावैं। सबको बहु उपदेश सुनावैं॥
पै न भयो हमरे अस ज्ञाना। जाते ह्वै हमार कल्याना॥
हरि माया योगी जन काहीं। मोह करति संशय कछुनाहीं॥
दोहा–हायलखो इनतियनकी, यदुनंदनमें प्रीति।
मिली कृष्णको जाइतजि, लोकलाजकी भीस्ति॥ १३॥
भाग्यवंतिनी नारि हमारी। जे छबि छकीं निहारि विहारी॥
नहिं तप नहिं गुरुभवननिवासू। नहिं अचार विज्ञान प्रकासू॥
संस्कार नहिं कछु शुभकर्मा। नहिं कछु दान नेमनहिंधर्मा॥
केवल करि हरिके पद प्रीती। नारि निवारि दई भवभीती॥
संस्कार भे यदपि हमारे। तदपि होइ हम हरिहिं विसारे॥
अति लोभी गृहकारज माहीं। स्वर्ग काम मख करैं सदाहीं॥
इतनेहु पै हरि दीनदयाला। याचन मिसि पठवाय गुवाला॥

अपनी सुधि हमको करवाई । हाय तबहुं हमरे नहिं आई ॥
दया छांडि दूसर नाहिं हेतू । हमतौहै अज्ञान अचेतू ॥
श्री हरिको मारग हमषाहीं । नहिं कछु क्षुधा हेतु यहि माहीं ॥
देशकाल ब्राह्मण सिखिमंत्रा । देवकर्म यजमानहु तंत्रा ॥
यज्ञ धर्म औरहु सब साजू । हरिमय जानहु सकल समाजू ॥
दोहा—योगीपति यदु कुल प्रकट, सोईकृपानिधान ॥
भोजन माँग्यौ भेजिकै, सखन सनेह सयान ॥ १४ ॥
सोहम सुने आपने काना । पै मति मंद भयो नहिं ज्ञाना ॥
पै हमहूँ धनिहैं जगमाहीं । जिनकी नारि मिलीं प्रभुकाहीं ॥
जिनकी प्रीति नाथ पद लागी । ते हमहूँ कहँ किय बड़भागी॥
बार बार हरि तुम्हैं प्रणामा । तुवमाया मोहित वसुयामा ॥
भ्रमत करें हम कर्मन काँहीं । आप प्रभाव गुणन कछु नाहीं ॥
आदिपुरुष तुम अहौ सदाहीं । तुव मायावश जीव भुलाहीं ॥
तुवमाया वशलहि अति बाधा । कियो नाथ तुम्हरो अपराधा ॥
सो सब क्षमा करहु यदुराई । करुणाकर अस आप बड़ाई ॥
अस द्विजवर निज चूक विचारी। नमहिं मनहिं मन चरण मुरारी
हरि ढिग गवन करन मन कीन्ह्यो।पुनि मनमें विचार अस लीन्ह्यो
जो हम जैहैं नाथ समीपा । तौ सुनिकै शठ कंस महीपा ॥
करिहै अवशिसकुल मम नाशा।ताको नहिं कछु धर्मविश्वासा ॥
दोहा—अस विचारि द्विजवर सकल, गये न यदुपतिपास॥
नारिनको वंदन करत, निवसे यज्ञ अवास ॥ १५ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अथ संजयकी कथा ॥

दोहा—भाषों संजयकी कथा, बुद्धिमान हरिदास ।
व्यास शिष्य धृतराष्ट्रको, मंत्री धर्म विलास ॥ १ ॥

महा सत्यवादी अति ज्ञानी। संतनको अतिशय सन्मानी ॥
संजयको मनते प्रण ऐसो। मिलहिं संत भोराहिं जो कैसो॥
करै समर्पण सर्वस ताको। राखै नाहिं कछु पुत्र तियाको॥
जाय जबै धृतराष्ट्र समीपा। सज्जनता तेहि निरखि महीपा
बकसै तिहि राजा। करै ताहिमें घरकर काजा ॥
संजयवृत्ति अनूपम देखी। तापरभै हरि प्रीति विशेखी ॥
दियो नाथ ताको अधिकारा। करै नवारण कोउ परिचारा ॥
बाहिर भीतर जहँ हरि होवै। संजय चलि तहँ हरिको जोवै॥
जब विराटपुर पांडुकुमारा। प्रगट भये करि युद्धअपारा ॥
द्वादशवर्ष किये वनवासा। तेरहौ वर्ष अज्ञातहु वासा॥
हारि लौटि आयौ दुर्योधन। धर्म नृपति लायौ बहु गोधन॥
तब विराटपुर गये मुरारी। दोउ दलभै संग्राम तयारी॥

दोहा—कुलकीक्षय अवलोकिकै, विदुरभीष्महि द्रोण ॥
संजयको पठवत भये, जानि महामति भोन ॥ २ ॥

संजय चलि विराट पुरमाहीं। बहुत बुझायो भूपति काहीं॥
माननको मन कियौ भुवाला। द्रुपदी कह्यो सुनहु यदुपाला॥
केशा कर्षण कियो दुशासन। ताते जबलौं कुरुकुल नाशन॥
तबलौं हौं बँधिहौं नाहिं केशा। करे न युद्धहु धर्म नरेशा॥
तब सँगलै पारथ पंचाली। पारथगृह गवने वनमाली॥
अर्जुन कृष्ण एक पर्यंका। राजि रहे दोउ परम निशंका॥
एक ओर बैठी सतिभामा। एक ओर द्रौपदि छबिधामा॥
सतिभामाके अंकहि माहीं। धरे धनंजय चरण बताहीं॥
तैसे द्रौपदि अंक मँझारी। धरे चरण वतरात मुरारी॥
तिहि अवसर संजय तहँ आये। पद अँगुठामहँ दीठि लगाये॥
संजय सों तब कह्यो मुरारी। कह्यौ जाइ करतूतिहमारी॥

दुर्योधनसों सवन सुनाई। असभाष्यो तुमको यदुराई ॥
दोहा–द्रुपदसुतै दरबारमधि, पट करष्यो तव भ्रात।
तिय पुकार शर हिय लग्यो, क्षति सोनित गहदात३॥
पलटि जामँ वरु पांडुकुमारा। हारैं वरु डारैं हथियारा ॥
पै हमतो करि कुरुकुल नाशू। पोंछब द्रुपदसुताकर आंसू ॥
सुनि संजयप्रभुकी अस वाणी। कह्यो सत्य कह सारँगपाणी ॥
पै हम नहिं निजकुलके साथी। गाडरि गहत छोड़ि कोउ हाथी
असकहि संजयकारि परणामा। आयो हस्तिनपुर अभिरामा ॥
यदुपति वचन दियो सतगाई। सुनत सुयोधन दिय बिसराई ॥
अंधनृपाति संजयसों भाषा। युद्ध लखन हमरिउ अभिलाषा
व्यास कह्यो हमकरव उपाई। समर कथा तोहिं परी जनाई ॥
असकहि संजयनिकट बुलाई। दिय वरदान महा मुनिराई ॥
महासमर भारत जो ह्वैहै। सो चरित्र तोहिं सकल देखैहै ॥
संजयादिव्य दृष्टि तव होई। तोसम कृष्णदास नहिं कोई ॥
संजयपाय व्यास वरदाना। समरचरित सबकियो बखाना॥
दोहा–संजयकी औरहुकथा, भारत मध्यबखान।
ताते नहि यहि ग्रंथमें, कियो सविस्तरगान ॥ ४ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेपंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

॥ अथ दुर्वासाकी कथा ॥

दोहा–दुर्वासाकी कहतहौं, सुनहु कथा चितलाइ।
जाकोकोप कराल जग, पावक ज्वालदिखाइ ॥ १ ॥
कवित्त–दुरवासा मानसर कीन्हौहै निवासतहाँ जाइ दशशीश
श्यामकमल उखारोहै ॥ दीन्ही मुनिशाप आजुतेजोश्यामकंजक्ष्वै
है फटिजैहै शीशतेरेवचन हमारोहै ॥ तबते न मानसर आतरह्यो

दशमाथ तहँके मुनीश लह्यो आनँद अपारोहै ॥ रघुराज संत-
जन काज जो करत कछु अपनोन हेतु हेतु परउपकारोहै ॥ १ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अथ श्रुतदेव औ बहुलाश्वकी कथा ॥

दोहा—अब बरणौं द्वौ भक्तको, अतिविचित्र इतिहास ॥
द्विजश्रुतदेव सुजान तिमि, मिथिलापति बहुलास॥१॥
मिथिलापति भूपति बहुलासा। यदुपति दरशन रह्यो पियासा॥
विप्रभक्त तिमियदुपति केरो। नामजासु श्रुतदेव निवेरो ॥
सोन और उर कछु अभिलाखै। यदुपति दरशनकी रुचिराखै॥
विषयभोग कबहूँ नहिं चाहत। बोलत मधुर वचन दुखदाहत॥
सुकवि शांति अतिशील स्वभाऊ। यथालाभ तोषित द्विजराऊ॥
रह्योजनकपुर तासु अगारा। करै सप्रीति संत सतकारा ॥
करै न उद्यम कछु निज हेतू। वसै भवन महँ मोदनिकेतू ॥
तैसे जनकराज बहुलासू। तनक न तनु अभिमान प्रकासू ॥
उभयभक्त अस मनहिं विचारे। आवैं कब घर नाथ हमारे ॥
द्वारावती बसैं भगवाना। सुनैयदपि दोऊ निज काना ॥
वै दरशन हित नहिं तहँ जाहीं। भरेभरोस यही मन माहीं ॥
निज जन प्रणपूरक यदुनाथा। करिहैं मोहिं विशेष सनाथा ॥
दोहा—दोउ भक्तनकी लालसा, जान्यो कृपानिधान।
दारुक सारथि बोलिकैं, करगहि कै भगवान ॥ २ ॥
ल्यावहु सूत साजि रथमोरा। जान चहूँमैं पूरब वोरा ॥
मिथिला नगर बसत बहुलासू। अरु श्रुतदेव विप्र मम दासू ॥
दोहुँन दरश देहु तहँ जाई। बैठे दोउ मम आश लगाई ॥
सुनि प्रभु वचन सूत सुखपाई। लायो स्यंदन तुरत सजाई ॥

यदुनंदन चढ़ि स्यंदन चारू। चले जनकपुर मोद अपारू ॥
मनमहँ पुनि यदुनाथ विचारे। चलहिं सकल मुनि साथ हमारे॥
लियो बोलि सँग नारद व्यासू। अत्रि च्यवन सुरगुरुयुत दासू॥
वामदेव कौशिक भृगुरामा। मित्रासुत वशिष्ठ अभिरामा ॥
विचरत रहे कहूँ शुकदेवा। लीन्हों रथ चढ़ाइ यदुदेवा ॥
देशन देशन निवसत नाथा। तहँके मुनिजन करत सनाथा॥
आये जनकनगर नियराई। तहँते दियपक दूत पठाई ॥
दूतजाय मिथिलापुर माहीं। कह्यो जनक श्रुतदेवहु पाहीं ॥

दोहा—जानि मनोरथ रावरो, तुमको करव निहाल ॥
आवत मुनिन समाजलै, नाथ देवकीलाल ॥ ३ ॥
भाग विवश चातक वदन, परैस्वातिको बुंद ॥
तिमि भूपति हर्षित भयो, आगम सुनत मुकुंद ॥४॥
नगर सुनायो सो प्रजन, साजि साजि सब साजु ॥
चलहु सकल यदुराजके, अगवानीके काजु ॥ ५ ॥
सुनत जनकपुरके प्रजा, वृद्ध बाल नर नारि ॥
लैलै मंगल साज कर, तनुकी सुरति बिसारि ॥ ६ ॥
जे जस रहे ते तसचले, देखन हेतु मुरारि ॥
यक एकन परख्यो नहीं, सर्वस लाभ विचारि ॥७॥

निरखि कृष्ण मुख अति सुखपाये। विकसत वदन नैन जल छाये
शिरपरधरि धरि अंजुलि धाई। प्रभुकहँ किय प्रणाम हरषाई ॥
जेमुनीश प्रथमहिं सुनिराखे। तिनको वंदन करि असभाखे ॥
हमरे भाग्यनते इत आये। हमको नाथ सनाथ बनाये ॥
इतनेमें धावत मगमाहीं। तनुकी सुरति रही कछुनाहीं ॥
ढारत आँसुन आनँदधारा। रोमांचित तन बारहिबारा ॥
नहिं शिर वसन न पग पदत्राना। यक क्षण बीतत कल्पसमाना॥

यहिविधि जनक भूप श्रुतदेवा । आये जहँ ठाढ़े यदुदेवा ॥
दोउ प्रभु चरण गये लपटाई । दुहुँन लिये हरि हिए लगाई ॥
पुनि सब मुनिन चरण महँ दोऊ। परे दिये आशिष सब कोऊ॥
दोउके मुख निकसतिनहिं वानी। आनँदवश सब सुरति भुलानी
बहुतकाल महँ सुरति सम्हारी । विप्र भूप दोउ गिरा उचारी॥

दोहा—नाथ पधारहु मम भवन, करहु कुटुंब पुनीत ॥
अहो नाथ त्रिभुवन धनी, सदादीनके मीत ॥८॥

दोउ भक्त यक साथ उचारे । प्रथमचलहु प्रभु भवन हमारे ॥
दोउन देखि बरोबर प्रीती । दोउनकी समान परतीती ॥
परचौ नाथको तब संकेतू । जायँ कौनके प्रथम निकेतू ॥
दुस्सह मोहिं भक्त अपमाना । भेद बुद्धि नहिं वेद बखाना ॥
असविचारि हरिकौतुक कीन्हौ। मुनिन सहित द्वैवपु करि लीन्हौ
द्वैरथ द्वैसारथि द्वैसेना । रहे संग पुरलोग लखैना ॥
गये बरोबर दोउन धामा । दोउन रुचि राखी घनश्यामा ॥
भूप विप्र कछु मर्म न जाने । मम घर आये प्रेमहिंमाने ॥
प्रथमहिं करौं भूप घर गाथा । जेहि विधि मुनियुतगे यदुनाथा॥
जबहिं विदेह गेह प्रभु आये । नृप सिंहासन शिरधरिलाये ॥
यहिविधि प्रभुकहँ आसन दीन्हौं। तैसे मुनिजनहूँ कहँ कीन्हौं ॥
प्रथम मुनिनके चरण पखारयौ । पुनि हरिके पदमें जल डारयौ

दोहा—भगवत अरुभागवतको, पद परछालित नीर ॥
सीच्यौ शिर अरु भवन में, मिटीसकल भवभीर९॥

निजकर चंदन अतर लगायो । भूषणवसन माल पहिरायो ॥
धूप दीप नैवेद्य देखायो । गोवृष शकुन हेत तहँ लायो ॥
तन मन धन पुनि अर्पणकीन्हौ।कृष्ण चरणरज शिरधरि लीन्हौ
पुनि प्रभुपद धरिकै निजअंका । मैथिल अघ आभिमानहु रंका॥

मींजत मंदमंद पददोऊ । बोल्यो वचन सुनहु सब कोऊ॥
सबप्राणिनके आतम आपू । जगसाक्षी विभु परमप्रतापू ॥
जोहम बहुदिनते करिराखा । सो प्रभु पूर करी अभिलाखा॥
चरण कमलको दरशनपाई । आजु नयनगे मोर अघाई ॥
जो यह वेद पुराण बखाना । निज जन गृह गवनत भगवाना
अपनो वचन करन सतिसोई । यह घर धरचौ चरण निजदोई
श्री अज शंकर शेष उदारे । हैं न मोहिं दासनते प्यारे ॥
यह जो तुम भाषहु यदुराई । सोसब जगमहँ प्रगट देखाई ॥
दोहा–ऐसे दीनदयालुप्रभु, तुम्है देवकीलाल ।
त्यागि भजैं किमि और कहँ, कोपुनिकरै निहाल १०
और भजैं जे तुम्हैं विहाई । तिनकी गिरिपषाण समताई ॥
जे सज्जन तजि विषय विलासा । राखहिं तुव पदपंकज आसा ॥
तिनको प्रभुतुम्हकृपानिधाना । और काह दीजत निजप्राणा॥
लैयदुवंश माहिं अवतारा । सुंदर यश दिगअंत पसारा ॥
दुखी जीवसागर संसारा । गाय गाय ते पावहिंपारा ॥
यदुपति सुयश मयंक तिहारो । हरनहार त्रिभुवन तम भारो ॥
ज्ञान रूप श्रीपति भगवाना । नारायण ऋषि शांत महाना ॥
नाथकृपाकरि मुनिनसमेतू । बसहुकछुकदिन यही निकेतू ॥
ऐसी सुनि विदेहकी वाणी । अतिप्रसन्नह्वै सारँगपाणी ॥
वसे विदेह नगर कछुकाला । मिथिलापुर जनकरन निहाला॥
गेह सनेह अछेह विदेहू । सेवत हरिकहँ सुधिताजिदेहू ॥
धन्य धन्य मिथिला महराजा । जिहि घर निवसतहैं यदुराजा ॥
दोहा–जिमि विदेहके गेह में, मुनियुतकीन पयान ।
तिमि श्रुतदेवहुके भवन, गवन कीन भगवान ॥११॥
लाये गृह लिवाय यदुनाथै । नायौ सकल मुनिनपद माथै ॥

द्विज श्रुतदेव परम अनुराग्यौ। पट फहरावत नाचन लाग्यौ॥
काठ कुशासन आसन माहीं। बैठायौ मुनि युत प्रभुकाहीं॥
कुशल प्रश्नकरि बहुरि उचारा। भयो मनोरथ पूर हमारा॥
असकहि सहित नारि मुदमोयौ। मुनिन सहित यदुपतिपदधोयौ
सो जललै अपने शिरधारा। कोटिजन्म अघ आसुहिं जारा॥
पतिते दुगुणो प्रेम तियाके। दंपति कथा कहत कवि थाके॥
निजकरलै खस प्रभुहिं सुँघायौ। सुरभि मृत्तिका अंगलगायौ॥
हरि आगम प्रथमहिं ते जानी। हेरि धरयौ फल विप्र विज्ञानी॥
ते अरप्यौ द्विजलै निजहाथा। लीन्हौ सुधासरिस यदुनाथा॥
प्रभुद्विज प्रीतिउदधि अवगाही। खायौ फल निसराहि सराही॥
पुनि द्विज शीतलजललैआयौ। निजकर प्रभुकहँ पानकरायौ॥

दोहा—अतिकोमल दलकमल युत, नवतुलसीदल माल।
प्रेम विकल अविरल विमल,मेल्यौ गल ततकाल १२

यहिविधि हरिकहँमुनियुतपूजो। गुण्यौ आपने सम नहिं दूजो॥
पुनि अस मनहिंविचारनलागा। कौनसुकृतमैं कियौ अभागा॥
परयौ रह्यौ जगअंध कूपमैं। लागिरह्यौ मन कृष्णरूपमैं॥
सो हरि आपन विरद सँभारी। दरशन दीन्हौं भवनासिधारी॥
जिन पदरज सब तीरथ मूला। तेमुनियुत हरिभे अनुकूला॥
असविचार श्रुतदेव उदारा। अंबक अंबु उबाहत धारा॥
निरखत यदुपति वदन मयंका। चापत चरण चारु धरिअंका॥
मृदुल गिरा निज प्रभुहिंसुनाई। अहो मोहिं मिलिगे यदुराई॥
सुनत कहत जे कथा तुम्हारी। पूजहिं वंदहि प्रीति पसारी॥
तिनहिं ध्यानमहँ मिलहु मुरारी। पै कबहूँ शशि भाग्य उजारी॥
सो यदुवर मिथिला पगुधारी। मिले मोहिं निजभुजा पसारी॥
नीककर्म कबहूँ नहिं कीन्हौ। कबहुँन नाथ चरण मन दीन्हौ॥

दोहा—ऐसे अधमअलालकों,कीन्हो आय निहाल ॥
सोनहिं करतब मोर कछु, तुमहो दीनदयाल ॥ १२॥
जे कपटी कुमती यती, विषय वासना पूर ॥
द्रवहु दुखी लखितिनहुँपर, यदपि रहौ अतिदूर १३॥

जय जय भक्तन प्राण अधारा । जय निजजन तरु द्रोह कुठारा॥
कारण और अकारण केरे । तुमहौं कारणवेद निवेरे ॥
जे तुम्हरे माया महँ मोहे । तुवदाया बिन तेनहिं सोहे ॥
तीनिहुँ ताप नशावन वारो । ऐसोहै प्रभु दरशतिहारो ॥
मैंतौ हौं लघुराउर दासा । विनयकरूँ अबहै यक आसा ॥
प्रीतिरीति प्रभु देहु बताई । करौं तैसहीं तव सेवकाई ॥
विप्रवचन सुनि कृपा निधाना। दीननके नाशक दुख नाना ॥
गहि निजहाथहि सों द्विजहाथा। बोले विहँसि वचन यदुनाथा ॥
तुमपर कृपाकरन के काजा । आये मेरे संग मुनिराजा ॥
ये अनन्य मुनिजन मम दासा । भूरिभवन अघकरत विनासा ॥
और देव तीरथ हैं जेते । दरशत परसत सेवत तेते ॥
बहुत कालमहँ पावन करहीं । तऊ मोरजन जापर ठरहीं ॥

दोहा—जन्महिते सब जातिमें, विप्रजाति वरहोइ ।
ताहूपर जो तपकियो, तेंहिसम द्विजनहिंकोइ ॥१४॥

भई ताहुपै विद्या जाके । विनप्रयासते भवनिधि नाके ॥
तापर जो संतोषहु आने । ते द्विज सत्य विरंचि समाने ॥
तापर मोर भक्त जो होई । त्रिभुवन ताके सम नहिं कोई ॥
यही चतुर्भुज रूप हमारो । मोर दासते मोहिं न प्यारो ॥
सर्व वेदमय विप्र कहावै । सर्वदेवमें मोहिं श्रुति गावै ॥
वैष्णव रूप मोर अति गूढ़ा । जानत नाहिं जनायहु मूढ़ा ॥
मूरतिमें करि मोह महानै । ममपूरति द्विजगुरु नहिं जाने॥

जगकारण अरु जग ममरूपा। जानहिं संतत संत अनूपा॥
ताते मोते अधिक विचारे। पूजहु मुनिन महीसुर प्यारे॥
संतनके पद पूजत माहीं। ममपूजनं ह्वै जात सदाहीं॥
म्वहिं पूजै संतन तजि नेहू। पूजन कबहुं तासु नहिं लेहू॥
यहिविधि निजजन महिमा गाई। श्रुत देवहिं रति रीति सिखाई॥

दोहा–सुनि यदुपतिके वचनद्विज, मानिपरम आनंद।
पूज्यो यदुपतिते अधिक, नेहसहित मुनिवृंद॥१८॥
बहुरिविप्रसों ह्वै बिदा, तिमिबहुलासहु पास।
गवन कियो मुनिसंगलै, रमानिवास निवास॥१६॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेसप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

अथ व्यासदेवकी कथा॥

दोहा–अबमैं करहुं प्रकाशकछु, व्यासदेव इतिहास॥
पर्व सत्यवति शशि प्रगटि, करपुराण तमनास॥१॥

रच्यो सप्तदश व्यास पुराना। पुनि मनमें असकिय अनुमाना
अतिशय अधम शूद्र अरु नारी। अहै न वेदनके अधिकारी॥
तरिहैं ज्ञान विना किहि भाँती। असविचारकरि दयाअघाती॥
भाषतभो भारत भगवाना। छंद प्रबंध बंध विधि नाना॥
तदपि न भयो ताहि संतोषू। मिट्यो न दिलकर दीरघ दोषू॥
बिमन बैठि मुनि सुरसरि तीरा। तहँ आयो नारद मतिधीरा॥
क्यों उदास पूँछ्यो अस व्यासै। वर्ण्यो व्याससकल निजआसै॥
रच्यो सप्तदश पूर पुराणा। तैसहि भारतको निर्माणा॥
पै न विमलमति भै मुनिराई। कारण ताको देहु बताई॥
नारद मुनि बोले मुसक्याई। नहिं अनन्य हरिकीरति गाई॥

नहिं भागवत चरित्रहु गायो । ताते मनसंतोष न पायो ॥
रच्यो व्यास भागवत पुराना । हरिहरिजनयश रहै प्रधाना ॥
दोहा–धर्म कर्म विद्या विविध यतन योग जपजोग ॥
स्वर्ग मार्ग विरचे अमित, भक्ति रंगनहिंलाग ॥२॥
भयो अनर्थ एक जग माहीं । भक्तप्रधान कहब जेहि काहीं ॥
ते सब कहिहैं धर्मप्रमाना । व्यासदेव तौ यही बखाना ॥
तातें व्यास सर्व पर जोई । मारग भगति भनहुं भवखोई ॥
मन गति शुद्ध न आन उपाई । मिलहिं न विना प्रेम यदुराई ॥
असकहि नारद कियो पयाना । व्यास भन्यो भागवत पुराना॥
यह देखहु सतसंग प्रभाऊ । पायौ तोष व्यास मुनिराऊ ॥
ऐसेहिं व्यास अमित इतिहासा । लघुमति कहँलौं करों प्रकासा
वेद पुराण संहिता जेती । व्यास कथाको जाने केती ॥
नारायण पारायण जेते । व्यास अचारज मानत तेते ॥
कोउ नहिं व्यास सरिस उपकारी। रचि पुराणजन जूह उधारी ॥
जो नहिं होत व्यासअवतारा । तौको करत पुराण प्रचारा ॥
तरत मंदमति जग केहि भाँती। मोहराति केहिभाँति सिराती ॥
दोहा–पिता पराशर सुवन शुक, सत्यवतीसम मातु ॥
तासु सुयश वारिधि उतरि,को कवि पारहि जातु॥३॥
इतिश्री रामरसिकावल्यांद्वापरखंडे अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८॥

अथ नंदादि गोपोंकी कथा ॥

दोहा–अबवृंदावनके सकल, नंदादिक जे गोप ॥
तिनकी गाथा कथनकछु, चलति मोर चित चोप॥१॥
पै कहँलों किनकी कथा, कहौं सुनौंहो संत ॥
विहरत जिनके संग नित, वृंदावन श्रीकंत ॥ २ ॥

रूपमाला॥ अजते पिपीलकलों चराचर जीव जगत वसंत॥ सुर नाग मुनि गंधर्व किन्नर दनुज मनुज अनंत ॥ निज सूक्ष्म वपु व्यापक सकल वपु थूल अंडकटाह॥ सनकादि ब्रह्माशिवादि ध्यावत तौन यदुकुलनाह ॥ १ ॥ मचलत रहत नित नंद आंगन छाँछ रोटी हेत॥ ब्रजधूरि धूसर अंग अमित अनंग छवि हरिलेत॥रीझत रिझावत रोज रुचि खीझत खिझावत मात ॥ रवि उदयते रवि उदयलों सेवन करत जेहिंजात ॥ २ ॥ जेहिकहत माधव मुखहि नंदबबाहमैं कछु देहु ॥ सो लेत ललकि उठाय हिये लगाय सहित सनेहु ॥ यश जासु उचरत वेद सो नँदकी चरावत धेनु ॥ वृंदाविपिन विहरत बजावत बार बारहिंवेनु ॥३॥ सुत मातु पितु तिय नात भ्रातहु कुल कुटुंबहु देह ॥ नंदादि सबते ऐंचि राख्यो कृष्णहीमें नेह ॥ कोउ कहत सुत कहत कोउ कन्हुवा कहतकोऊ मीत ॥ कोउ कहतपति कोउ कहत भ्राता कोउ गवावत गीत ॥ ४ ॥ जो जग नचावत नयनलों ब्रज तिय नचावत ताहि ॥ जो भयो वशनाहिं कबहुँ सो ब्रजगोपिका वशमाहिं ॥ कहँलौं कहौं ब्रजगोप गोपी धेनु धारन महिमा ॥ भूरि मुखचारि तिमि त्रिपुरारि जिनपद चहत धूरि५॥

दोहा—वेद पुराण प्रमाण बहु, नंदादिकन चरित्र ॥
सकल कहै रघुराज किमि, जासु भये हरिमित्र ॥ ३ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेएकोनविंशतितमोऽध्यायः ॥ १९॥

अथ उद्धवकी कथा ॥

दोहा—शुद्धबुद्धि संतौ सुनौ, धरा धर्म आधार ॥
कृष्ण सखा जेहि विधि रह्यो, उद्धव बुद्धि उदार॥१॥

शिष्य बृहस्पतिको मतिवाना। ज्ञाता विरति ज्ञान विज्ञाना ॥

साधन योग समाधि अनेका । उद्धव जानत विविध विवेका ॥
रह्यो गर्भ उद्धव मनमाहीं । ज्ञान विज्ञान रसिक कछुनाहीं॥
उद्धव जियकी यदुपति जान्यो । सादर निज समीप महँ आन्यो॥
कह्यो वचन हे सखा पियारे । तुम हौ दोऊ नयन हमारे ॥
तुम मम सकल कार्यअधिकारी। जानहु मति गति गूढ़ हमारी ॥
जाहु सखा ब्रजकहँयहि काला । मोरे विरहदुखी ब्रज बाला ॥
तिनहिं सुनायो मम संदेशा । कीन्ह्यो ज्ञान योग उपदेशा ॥
सुनि उद्धव अति अचरज माना। गोपी जानहिं काह विज्ञाना ॥
यह अचरज लागत मन मोरे। प्रभु जानत मोहिं भेजत भोरे ॥
अस विचार धरि शासन शीशा । चल्यो सखा सुमिरत जगदीशा
आयो उद्धव ब्रजमें जबहीं। कृष्ण विरहमय देख्यो तबहीं ॥
दोहा—खोरि खोरि घर घर खरक, मुख मुख यही सुनात ॥
हाय श्याम मिलिहौ कबै, तुम बिन छन युगजात ॥२॥

कवित्त—कुंजनमें भौंर पुंज गुंजरत श्याम श्याम बोलत विहंग त्यों कुरंग श्याम नामहै ॥ धेनुतृण मुख धरि श्यामई पुकारती हैं यमुन तरंग शोरश्याम सब यामहै ॥ बैठतमें बाग- तमें सोवतमें जागतमें श्याम रट लागत न रागत विरामहै ॥ कृष्णचंद्र विरह मवासी ब्रजबासी सबै रघुराज हेरि रहे श्याम श्याम श्यामहै ॥ १ ॥

सवैया—उद्धव नंद यशोमतिके ढिग श्यामहिसों सतकारको पायो ॥ ज्ञान विराग विवेक विधान विशेषि तिन्हे बहुभांति बुझायो ॥ पै नहिं टरो टरो मन प्रेमते सो कन्हुवा कन्हुवा गोहरायो ॥ उद्धव प्रेमको नेम विहाय त्यों ज्ञान विज्ञानको गर्व गवायो ॥ २ ॥ सांझ समय पहुँच्यौ ब्रज उद्धव रैन यशोमति बोधत वीती ॥ भोर भये जुरि आईं सखी सब जानति प्रेमके

नेमकिरीती ॥ श्याम सखा गुणिले यमुनातट पूँछन लागीं भई परतीती ॥ श्याम कहां मुख भाषतयों गिरि भूमि गई सिगरी मनवीती॥३॥उद्धव गोपिनको नँदनंदन पै अनुरागको नेम निहारी ॥ ज्ञानविज्ञान विरागहु योग दियो मनते छनताहि विसारी ॥ दै परिदक्षिण पायँ पऱ्यौ रघुराज या बारहिं बार उचा- री॥आज कृतारथहौं ह्वै गयौ अवलोकि तुम्हैं मनमोहनप्यारी ॥

दोहा—आयो मधुपुरको बहुरि, ब्रजते उद्धव सोइ ॥
करि प्रणाम घनश्यामसों, विनय करत दिय रोइ ॥ ३ ॥

सवैया—आजुलौं ज्ञान विज्ञान विरागको मोहिं गुमान रह्यौ गिरिधारी ॥ रावरी भक्तिको लेश लह्यौ नहिं ज्ञानि सखाप्रिय सोई विचारी ॥ गोकुलको समुझावन व्याज पठायौ हमें करि कैं कृपाभारी ॥ प्रेम लह्यौ रघुराजहौं आज दियो करिछोह गुरु ब्रजनारी ॥

दोहा—सुनि उद्धवके वचन प्रभु, कह्यौ मधुर मुसक्याइ ॥
आजु भये साँचे सखा, ब्रजतिय दरशनपाइ ॥ ४ ॥
ब्रजतिय दरश प्रभावते, यात्रा समै मुरारि ॥
भक्तिरीति भाषी सकल, उद्धव निकट हँकारि ॥ ५ ॥
एकादश अस्कंधमें, श्रीभागवत पुरान ॥
ममकृत आनँद अंबुनिधि, भाषा कियो बखान ॥ ६ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडे विंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥

अथ घंटाकर्णकी कथा ॥

दोहा—अब वरणौं अद्भुत कथा, घंटाकरन पिशाच ।
भयो दास यदुनाथको, शुद्ध भाव मति साँच ॥ १ ॥

एक समय द्वारावति माहीं। जहँ हरिरुक्मिणि वसतसदाहीं॥
रुक्मिणि विनय करी करजोरी। नाथ आश ऐसी अब मोरी॥
देहु पुत्र यक त्रिभुवन जेता। महाबली यदुकुलकर नेता॥
शस्त्र शास्त्र महँ परम सुजाना। त्रिभुवन जासु सरिस नहिंआना॥
रुक्मिणि वचन सुनत यदुराई। बोले मधुर वचन मुसक्याई॥
मम सम पुत्र होइगो तेरे। अधिकहुजे गुण अहैं न मेरे॥
मैं सुतहित कैलासहि जैहौं। तपकरि शंकरदेव रिझैहौं॥
करि प्रसन्न हर लै वरदाना। देहौं तोहिं सुत आत्म समाना॥
असकहि शैन कियो घनश्यामा। रही याम यक जबै त्रियामा॥
तब उठि प्रात कर्म करिनाथा। सलिल पखारि चरण अरुहाथा॥
मज्जन पूजन विधिवत कैकै। तेरह सहस धेनु द्विजदैकै॥
आये सभा सुधर्मा माहीं। बोलेउ उद्धव सात्यकि काहीं॥

दोहा—पुरवासी सब आइकै, प्रभुकहँ कियो प्रणाम।
तहाँ सभा मधि कोटिशशि, सम आये बलराम॥२॥

उठी सभा बलरामहिं देखी। यदुपति उर भो मोद विशेखी॥
कनकासन राजत बलरामा। दक्षिण दिशि सोहत घनश्यामा॥
सभामध्य कृतवर्मा आयो। सात्यकि आइ प्रभुहिशिरनायो॥
ताही समय नकीबन शोरा। माच्यो सभा द्वार चहुँवोरा॥
आयो उग्रसेन महराजा। जेहिलखिलजितविभवसुरराजा॥
उठे सुभट सब नृपहि जोहारे। वंद्यौ दोउ वसुदेव कुमारे॥
राजासन राज्यौ महराजा। दाहिन राम वाम यदुराजा॥
तेहि अवसर उद्धव तहँ आयो। कियो प्रणाम नाथ बैठायो॥
जासु नीति बल सुरहु डेराहीं। यदुवंशी निवसैं सुख माहीं॥
जासुबुद्धि बल हरिक्षिति शास्यो। दानव दुवन दुरासद नास्यौ॥
ऐसे उद्धव सों यदुराई। कह्यो वचन यादवन सुनाई॥

मैं गमनहुं तपहित कैलासा। शंकर लखन लगी उर आसा ॥
दोहा—अवशि और कारजकछू, सुनौ सबै यदुवीर ॥
जौलोंमैं आऊं नहीं, तौलौं तुम धरि धीर ॥ ३ ॥
रक्षहु नगर सुभट सब भाँती। सजग रह्यौ संध्य दिन राती ॥
केशी कंस मल्ल मैं मार्‍यो। तिलक उग्रसेनहुँको सार्‍यो ॥
करी शत्रुता भूप घनेरे। नाश लहे लगि सायकमेरे ॥
ताते पौंड्रादिक शठभूपा। मानत वैर मोर बलरूपा ॥
मोहिं बिन सून जानि सब ऐहैं। करहिं उपद्रव छिद्र जो पैहैं ॥
सावधान ताते सब रहियो। निशि वासर आयुधको गहियो
राखेहु खुलो एक दरवाजा। रहै चारि दिशि वीर समाजा ॥
विनाचक्र अंकित नहिं आवै। विना चक्र अंकित नहिं जावै ॥
नहिं जैयो तजिनगर सिकारे। सजग चमू राख्यो पुर द्वारे ॥
पुनिसात्यकिसों कह्यो मुरारी। तुमहो वीर धीर धनु धारी ॥
पहिरि कवचकुंडल दस्ताना। लैकर षड्ग गदा धनु बाना ॥
रैन शैन कीजियौ न प्यारे। करचो जो अग्रज कहैं हमारे ॥
दोहा—सुनि यदुपतिके वचन अस, सात्यकि बोल्यो बैन ॥
तुवप्रसाद तिहुँलोकके, वीरन ते मोहिं भैन ॥ ४ ॥
इंद्र वरुण यम धनद समेतू। जो आवहिं चढ़ि वृष वृषकेतू॥
मोहिं जीवत पुर लखन न पैहैं। समर औंध शिरकरि सब जैहैं ॥
क्षुद्र महीपति केतिक बाता। तुव प्रताप सब सरल जनाता॥
सोइ करिहौं कहिहैं जस रामा। रामप्रताप सहज सब कामा ॥
पुनि बलभद्रहि प्रभु करजोरी। कह्यो विनय सुनु अग्रज मोरी
द्वारवती यदुवंश तिहारा। रक्षेहु प्रभु जस होइ विचारा॥
सुनत राम बोल्यौ मुसक्याई। कौन हेतु शंकहु यदुराई ॥
देखहुँ अस कोहुकी गति नाहीं। जो मम अछत लखै पुरकाहीं ॥

उग्रसेनसों कह भगवाना। रह्यौभवन नहिं कियौ पयाना॥
पुनि शासन यदुवंशिन दीन्ह्यों।अग्रज शासन सबविधि कीन्ह्यों
असकहि उठि निजमंदिरआये। यदुपति खगपति तुरत बोलाये
तुरत तहां आयौ उरगारी। पऱ्यो चरणकहि जय गिरिधारी
दोहा—हरि मिल बिनतासुवन कहँ, तापर भये सवार॥
चले धनद दिशिको हरी, सुमिरत शंभु उदार॥५॥
करहिं देव स्तुति नभ माहीं। पेखत प्रभुहि चले सँग जाहीं॥
बदरीवन कहँ गये मुरारी। जहँ सुरसरी बहति अघहारी॥
तहँ तप कियो वास बहु जाई। वृत्तवधन अघ दियो जराई॥
जहँरघुपति रण रावण मारी। कियो महातप जन उपकारी॥
सिद्ध मुनीश देवऋषि नाना। करहिं महातप हित कल्याना॥
सो बदरीवन तीर्थ अनूपा। पहुँच्यौ जब तहँ यदुकुलभूपा॥
तहँके मुनि आगू चलि लीन्हे। बारबार प्रभु वंदन कीन्हे॥
साँझ समय पहुंचे यदुराई। घेरलियो मुनीश समुदाई॥
मुनिमंडल प्रभु कियो प्रणामा। लही आशिषा पूरणकामा॥
कोउ मुनि चमरविजन कोउ धारे। प्रभुकहँ सेवन लगे सुखारे॥
मुनिन समाज देखि यदुराजा। उतऱ्यो भूमि तज्यो खगराजा॥
गवनत चरणकमल महि माहीं। कुशकंकर कंटकद्रविजाहीं॥
दोहा—बदरी विपिन प्रवेश किय, मुनि आश्रम यदुनाथ॥
जहँजहँ मुनिवर लखत प्रभु,तहँ तहँ नावत माथ॥ ६॥
कोउ मुनि जन दीपिका दिखावै। कोउ प्रभु कहँ आश्रम लैजावै॥
अर्घपाद्य आचमन करावै। भोजन कंद मूल फल ल्यावै॥
अतिशै मुनिन करत सतकारा। चले जात वसुदेवकुमारा॥
अत्रि वशिष्ठ अगस्त्य उदारा। गौतम भरद्वाज सुबिचारा॥
नारद वालमीकि मुनि व्यासा। औरहु मुनि अनन्य हरिदासा॥

जय हरिकरत चहूँकित सोरा । यथा निरखि नीरद कहँ मोरा ॥
जाय कछुक दूरी यदुराई । निरख्यौ सुथल मनोहर ताई ॥
बैठे यदुकुल कमल दिनेशा । आये सकल मुनिहुँ तेहि देशा
हरिकहँ घेरि चहूँकित बैठे । मानहुँ मोद महोदधि पैठे ॥
हरिकहँ सबै कुशासन दीन्हे । वार वार विनती अस कीन्हे ॥
कहा करैं हम नाथ तिहारे । है तुम्हरो सर्वस्व हमारो ॥
बोले वचन नाथ मुसकाई । हमतो अहैं दास मुनिराई ॥

दोहा—शंभु प्रसन्न करावने, हम आये यहि देश ।
तासु उपाइ बताइये, हियको हरण कलेश ॥ ७ ॥

बोले मुनिवर सुनहु मुरारी । तुम महेशमानस संचारी ॥
जाको चहो बड़ापन देहू । राखहु सदा दासपर नेहू ॥
हरि कह अब मैं यहिथल रैहौं । साधि समाधि महा तप ठैहौं ॥
निज निज आश्रम जाहुसुखारी। तुममैं अतिशय प्रीति हमारी ॥
मुनि प्रणाम करियदुपतिकाहीं । आये निज निज आश्रम माहीं
तब उतंग गंगाके तीरा । बैठ्यो आसन करि यदुवीरा ॥
कह्यो गरुड़ कहँ जाहुखगेशा । फिरि सुमिरत आयोयहिदेशा॥
पन्नगारि गवन्यौ निजधामा । मन यकाग्र करि तहँ घनश्यामा
साधि समाधि उपाधि अबाधी । मनगति बांधि शंभु अवराधी ॥
मूँदि नैन तनु अचल मुरारी । लाग्यौ करन तहां तपभारी ॥
देखि सबै सुर मुनि तहँ केरे । विस्मित भे वनमाहँ घनेरे ॥
सकल जगत इनके पद ध्यावै । सो केहिहेत समाधि लगावै ॥

दोहा—दीप शिखासम अचल जब, यदुपति मन करिलीन ॥
प्रभु कौतुक सब जानि हर,विहँसे परम प्रवीन ॥ ८ ॥
शंकरके गण अगनतहँ, रहे चारिहूं ओर ।
विना प्रयोजन हँसत हर, हेरि हियेभो भोर ॥ ९ ॥

हरगण मध्य अनन्य उपासी । ईशत्यागि वियईश न आसी ॥
घंटाकरण नाम तेहि साचा । रह्यो एक तहँ प्रबल पिशाचा ॥
घंटा बांधे कानन माहीं । शिवताजि नाम सुनै श्रुतिनाहीं
धोखे कोउ कछु ताहि सुनावे । शिरकँपाइ तब घंट बजावे ॥
सोलखि हर विनकारण विहँसत। बोल्यो वचन शंभुपद परसत॥
प्रभु मोसों यहहोत ढिठाई। चूकक्षमहु अपनी करुणाई ॥
विन कारण प्रभु हँसब तिहारा। यह संदेह टरत नहिं टारा ॥
जो कछु होइ मोहिंपर छोहू। तौ बताइ दीजै ताजि कोहू ॥
सुनि पिशाचके वचन पुरारी । बोले वचन कृपाकरि भारी ॥
मोरनाथ बदरी बन आयो। मेरे हेतु समाधि लगायो ॥
यह अचरज लागत मोहिंभारी। कौतुक करत कौन गिरि धारी
प्रभुमनकी गति जानि न जाती। किहे विचार न बुद्धि सिराती॥
दोहा—उनहींके हम दासहैं, करैं हमारो ध्यान ॥
यह विचारि हम हँसिदियो, हेतु कछू नहिं आन ॥१०॥
कह्यो पिशाच नाइ तब शीशा । अधिक कोऊ तुमहूंते ईशा ॥
शंभु कह्यो नहिं जानसि मूढ़ा । ममप्रभु तत्त्व गूढ़ते गूढ़ा ॥
हम न कहब तैं नहिं अधिकारी। यही मानि ले बात हमारी ॥
कही पिशाच तबै मुदमानी । देहु मुक्ति मोहिं डमरूपानी ॥
सेवन करत बहुत दिन बीते । ह्वै प्रसन्न बकसहु गति जीते ॥
हरिकहँ भजै जौन मोहिं देही । ताहि पदारथ हम सब देहीं ॥
मुक्ति देनकी शक्ति न मेरे । मुक्ति मिलत हरिके दृग फेरे॥
तेई हरिंपिशाच मम स्वामी । सकल जगतके अंतरयामी ॥
तब पिशाच पुनि वचनउचारा । देहु बताइ जो नाथ तुम्हारा ॥
कहाँ वसहिं केहि विधिमें पैहौं । कौन उपाय समीप सिधैहौं ॥
देहु विशेषि बताइ विधाना । जेहिविधि मिलै मोहिं भगवाना

सुनि पिशाच वाणी गौरीशा। बोले परसि पिशाचहिंशीशा॥
दोहा—ममप्रभु पदरति तोरिभै, तो पर भैरति मोरि॥
सुनु उपाइ जाते मिलैं, नाथ दूरिते दौरि॥ ११॥
पर ते परे ईश के ईशा। मैं विधि जेहिपद नाऊं शीशा॥
सो प्रभु हरण हेत भुवि भारा। लीन्ह्यो यदुकुलमहँ अवतारा॥
देनहेत प्रभु मोहिं बड़ाई। सुत याचन बदरी बन आई॥
बैठ्यो साधि समाधि अवाधी। जेहिँ सुमिरत छूटहिं सबव्याधी
असकहि शंभु कृष्ण गुणनामा। वरण्यो जसचरित्र वपुधामा॥
चहौ जो लेन मुक्तिकर लाहू। तौ पिशाच बदरीवन जाहू॥
भजिहौ कपट त्यागि हरिकाहीं। मुक्ति मिली संशय कछुनाहीं॥
मम प्रभुके यह नाहिं विचारा। नीच ऊंच तिमि गुणी गँवारा॥
शुद्ध भावते भजै कृपालै। दीनदयालु द्रवैं तेहि हालै॥
ऐसी सुनि शंकरकी बानी। घंटाकरण महामुद मानी॥
कै परदक्षिण हर शिरनाई। चल्यो पिशाच जयतिधुनिलाई॥
लाखन संग पिशाच कराला। चले कूद करि तबहिं उताला॥
दोहा—जेहिनिशिहरिबदरीविपिन, बैठिसमाधि लगाइ।
तेहिनिशि घंटाकरणतहँ, आयो अतिखछाइ॥१२॥
श्वान हजारन तेहि सँग माहीं। छोड़त व्याघ्र वराहन पाहीं॥
धरहुधरहु असभणत पिशाचा। घोर शोर यहकानन माचा॥
पकरहु मृगन जान नहिं पावैं। असकहि तेहि पिशाचमहँ धावैं॥
जातजात मृग छोड़हु श्वाना। मीठ मास पकरहु मृग नाना॥
श्वानन छोड़त जय हरि भाखीं। हनत मृगा जय हरिदै साखी॥
जय माधव मुकुंद यदुनंदन। असकहि भक्षत वनचर वृंदन॥
जयजयजय देवकी किशोरा। यही सोर माच्यो चहुँवोरा॥
कोउ गहि मृगन करहि असवादा। मिल्यौ मोहिं यह कृष्ण प्रसादा

कोउ कह ये मृग हरिके योगू । करब निवेदन हरि हित भोगू ॥
कोऊ कराहिं रुधिरकर पाना । हनत वदत जय जय भगवाना॥
कोऊ मृतक मानुष तन खाहीं । आजु लखब हरि अस बतराहीं॥
पकरैं श्वान जबै मृग काहीं । जय हरि कहि मुखपोंछत जाहीं॥
दोहा—अस कोऊ रह्यो पिशाच नहिं, क्षण क्षण जेहि मुख माहिं ॥
राम कृष्ण गोविन्द हरि, गिरधर निकसत नाहिं ॥ १३॥
भागत कूह करत करि जूहा । पीछे लगत पिशाच समूहा ॥
भर भर सोर मच्यो वनमाहीं । दौरत दिशन पिशाच देखाहीं॥
घंटाकरण कहत अस वाणी । हेरहु सब मिल सारँगपाणी ॥
शंभु वचन सत मृषा न होई । देखन चहत कृष्ण कहँ कोई ॥
बदरी वन यदुपति चलि आये । प्रभु पद लखन लागि हम धाये ॥
हेरत हरि कहँ सकल पिशाचा । वनमहँ श्याम राम रवमाचा॥
खोजत यदुपति खेलि अखेटू । यही भूमि ह्वैहै भरिभेटू ॥
इतै कृष्ण कोउ प्रेत पुकारत । सो सुनि एकहिं एक हँकारत॥
तेहि वन रीछ मृगा वनराजे । करि चिकार चारों दिशिभाजे ॥
पशुन पिशाचन सोर महाना । भुवन भीति कर भरयो दिशाना॥
आरत सोर सुन्यो यदुवीरा । लग्यो विचार करन धरि धीरा ॥
कौन उपद्रव वनमहँ भयऊ । को आयो जीवन दुख दयऊ ॥
दोहा—श्वान सोर इक वोर अति, तिमि पिशाच रव घोर ॥
बिच बिच कोउ जय जय कहत, लेत नाम पुनि मोर १४
तेहिं औसर वन जीवन जूहा । नाथ लख्यो आवत करि कूहा॥
आरत रव सुनि दीनदयाला । रहि न सकी समाधि तेहिं काला
नैन खोलिभे सजग मुरारी । सहसन श्वान समूह निहारी ॥
पीछे लगे पशुनके धावत । धरत लरत रव छावत आवत ॥
श्वानन पीछे घोर पिशाचा । आवत धावत कहि यह बाचा ॥

मिलत नाथ हेरहु सब कोई । हम प्रभुके प्रभुके प्रभु सोई ॥
भक्षत मांस रुधिर करि पाना । बोलत जय यदुपति भगवाना॥
कहुँ बाणनसे मृगन सँहारैं । बहुत पशुन श्वानहुँ धरि डारैं ॥
यहि विधि प्रेत जाति पशुश्वाना। आये जहँ बैठे भगवाना ॥
तिन प्रेतन पीछे वनमाहीं । देखिपरचो प्रकाश चहुँवाहीं ॥
लिये पिशाच मसाल हजारन ।उदित मनहुँ वन निशितम वारन
लिये मसाल प्रेत अस भाषैं । हेहरि तुव दरशन अभिलाषैं ॥

दोहा—परम कराली दूबरी, लंबवान जिन केश ॥
सहसन महा पिशाचिका, देखि परीं तेहिं देश॥१५॥

किलकिलाहिं बालक लै अंका । वसन रहित धावहिं नहिं शंका
रोवत शिशु बोधहिं बहु भांती ।मिलिहैं अवशि नाथ यहिराती॥
तौन पिशाचिनि मंडलमाहीं । लख्यो नाथ द्वै प्रेतनकाहीं ॥
मनमहँ हरि तब कियो विचारा । लेत नाम मम त्यागि अचारा॥
कोउ यह पाप पुण्यबड़ दोऊ ।जिमि विष खाय अमी पियकोऊ॥
वदन उचारत मोरहि नामा । केहिं ढिग वसी मुक्ति यहि यामा॥
यहि विधि प्रभुकहँ गुणत तहांहीं। नियराने पिशाच क्षणमाहीं॥
मुखकराल अति लंबशरीरा । पीत लोमातिमि नैन गँभीरा ॥
लंब केश रसना दोउ काढ़े । कृशतन तीनि ताल लगि बाढ़े॥
हाहा हीही बोलत वानी । मनुज भाँति अंगन लपटानी॥
एककर नरतनु लै मुखखाहीं । रुधिर पान बहुवार कराहीं ॥
मृतक मनुज तन बहु गुणबाँधे। आवत चले कढोरत काँधे ॥

दोहा—बानी बदत अनेक विधि, हँसत ठठाय ठठाय ॥
दुहुँन जंघके वेगते, टूटत तरुसमुदाय ॥ १६ ॥

कटकटाइ रद अधरन चाटत । आमिष खाय और कहँ बाँटत॥
नस अरु अस्थि चर्म तन माहीं।आमिष अंबर तनमहँ नाहीं ॥

यहिं विधि दोउ पिशाच हरि दासू। घंटाकरण अनुज पुनि तासू
घंटाकरण कहत अस बाता। कृष्ण लखब कब दृग जलजाता
कहँ निवसत बदरीवन स्वामी। केहि विधि लखब आशुखगगामी
श्याम शरीर सुराजिवनैना। महा मनोहर करुणाऐना॥
कहाँ बैठि प्रभु साधि समाधी। आजु होब हम हरि अवराधी॥
कौन पाप हम पूरुब कीन्ह्यो। योनि पिशाच विधाता दीन्ह्यो॥
पै हम सम अब को जगमाहीं। निरख बहुरि पदपंकज काहीं॥
रुधिर पान अरु मांस अहारा। हमहित निरमान्यो करतारा॥
हमते मनुज अधिक अज्ञानी। भजै न जे जग जानकि जानी॥
लरिकाई लगि गै लरिकाई। तरुणी ताकत गै तरुणाई॥

दोहा—वैस बुढ़ाईकी भई, तब असमर्थ महान॥
घरताकत मरिगो कबहुँ, भज्यौ नहीं भगवान॥१७॥

लह्यो न भजन केर अवकासू। भोगि नर्क लह गर्भनिवासू॥
गर्भ मूत्र मलकुंडहिं माहीं। दुखित दीन्ह दशमास सिराहीं॥
भयो जन्मलाग्यो जंजाला। तीनौपन बीते तोहिं हाला॥
याहि विधि भ्रमत रहत जगमाहीं। बिना भजन उधरत कोउनाहीं
जानिहुँ कै जन ठानत पापा। यहि महिमा संसार अमापा॥
राजहिं मारि करब हम राजू। कहत कहत नाशत यमराजू॥
चोरकारि जोर वधन भूरी। यही कहत भै आयुष पूरी॥
यहि डरवाइ लूटि धन लेवै। नारी सुत बंधुन कहँ देवै॥
यही कहत सब उमिरि बितायो। कछु नाहिं हाथ लग्यो न लगायो
आशा गुण बांधे इमि प्राणी। करत जीव पीड़ा अभिमानी॥
गृहको कार्य करत लगि प्रीती। कबहुँ न मानत प्रभुपरतीती॥
आनेके आमिष तन पोषैं। बार बार जीवनपर रोषैं॥

दोहा—करत कबहुं हरि भक्ति हूं, तऊ अर्थके हेत।
मरण सुरति विसरायकै, घरको बांधत नेत ॥ १८ ॥
करत अनेक मनुज रोजगारा। मनहुं आपही हैं करतारा ॥
हठ बस बूझत नाहिं बुझाये। उदरहेत बहु देशन धाये ॥
दासा सूर चतुर कहवाये। ज्ञान विराग भक्ति विसराये ॥
मति कुल बल कर तब अभिमाना। कियोजन्म भरि ताजि भगवाना
यदपि कर्म भोगत यहि लोकू। तदपि नतासु कहत कछु शोकू
भाग्यविवश कोउ सुमति सिखावत। तौ ताकेपर कोप देखावत॥
ज्ञान विज्ञान विविध मुख भाखैं। तातपर्य सब धनमहँ राखैं ॥
अजर अमर सम गुणत शरीरा। जोरत धन दे प्राणिन पीरा ॥
यदपि न सुख दुख घटत घटाये। तदपि उपाय चरत चितचाये॥
ग्रसै ग्राहइव काल कराला। सोन करत सुधि कौनेहुँ काला
भवरुज रोजहि रीझति देहू। तापर करत ताहि पर नेहू ॥
तनहूं ते प्रिय सुत तिय लागै। जे लखिमृतक दूरि ते भागै ॥
दोहा—यह जो मैं वरणन कियो, शंभु प्रसाद विराग।
ते औगुण मम तन भरे, विघन यथा बहु याग॥१९॥
घोर रोग संसार यह, छिन्न करत सब काल।
विश्वबैद दूजो नहीं, विना देवकीलाल ॥ २० ॥
याहि विधी घंटाकरण, भ्रातसंग बतराइ।
हेरत हेरत विपिन महँ, गयो नाथ नजिकाइ ॥ २१ ॥
लख्यो पिशाच बैठ गिरिधारी। मानि मनुज अस गिरा उचारी॥
अहो कौन तुम कहँ ते आये। कौन हेतु इत ध्यान लगाये ॥
निर्जन वनं संकुलित पिशाचा। घोर श्वान बन जीवन बांचा ॥
नाहिं पिशाच पेखत डर लागै। तोहिं देखि मो मति अतिरागै॥
राजिवनयन अंग सुकुमारा। श्याम शरीर द्वितिय मनुसारा॥

किधौं इंद्र यम वरुण कुबेरा। धौं किन्नर गंधर्व निवेरा॥
कहौ मनुज तुम सत्य बखानी। नहिं भय मानु प्रेत पहिंचानी॥
घंटाकरण कह्यो यहि भांती। तब बोले संतन दुख घाती॥
हम क्षत्री जानहु यदुवंशी। लोकनके रक्षक अरिध्वंसी॥
शंकर निकट जाहिं कैलासा। रजनी जानि कियो इत बासा॥
कहौ कौन तुम अहौ भयंकर। धौं कोऊ हौ किंकर शंकर॥
कौन हेत बदरीवन आये। कौन तुम्हैं मुनिवास बताये॥

दोहा—परद्रोही नास्तिक शठ, इत आवत नहिं कोइ।
सेवित सिद्ध सुरर्षिगण, जात अघौअघ धोइ॥ २२॥

अब न पिशाच जाहु तुम आगे। बैठ करत तप मुनि बड़भागे॥
खेलहु इतै न प्रेत सिकारा। जीव भयाकुल भगत अपारा॥
जो आगे जैहौ लै श्वाना। तौ हम हनब अवशि बहु बाना
मुनि सेवक हमको तुम जानो। बदरी वनके रक्षक मानो॥
बैठहु प्रेत समीप हमारे। जानन चहत हवाल तिहारे॥
सुनत प्रेत प्रभुकी अस बानी। बैठि गयो अचरज मनमानी॥
यह मानुष नहिं मोहिं डेराता। पूंछत सहज सनेहत बाता॥
मम प्रभुको यह खोज बताई। तहँ पुनि जाव उयें दिनराई॥
असविचारि दोउ प्रेत सुजाना। लगे करन वृत्तांत बखाना॥
सुनहुँ मनुज अब कथा हमारी। जयसच्चिदानंद गिरिधारी॥
हमहैं घंटाकरण पिशाचा। शंकर किंकर अधम नराचा॥
यह सेना सब अहै हमारी। श्वानहु जानहु मोर सिकारी॥

दोहा—मैं बांध्यौ घंटाश्रवण, सुनौं न जेहिं हरिनाम॥
करि बहु सेवा शंभुकी, मांग्यो मुक्ति ललाम॥ २३॥

तब जो कह्यो मोहिं त्रिपुरारी। सो वृत्तांत सुनहु तुम भारी॥
असकहि घंटाकरण सुजाना। सुमिरण करन लग्यो भगवाना

जयजय जगन्नाथ यदुनाथा। जय हरि कृष्ण विष्णु शुचिगाथा॥
घंटाकरण नाम वपुघोरा। मांस अहार करहुँ चहुँवोरा॥
मृत्यु सरिस जीवन मैं मारों। धनद अनुगमैं ग्रामन जारों॥
मोर अनुज यह कालहु काला। पैशाची मम सैन कराला॥
क्षमहु मोर अपराध अपारा। हे दयालु देवकी कुमारा॥
यहि विधि सुमिरि नाथ पद ध्याई। प्रभु पिशाच अस गिरा सुनाई
शिव सों मुक्ति जबै हम याचे। शंकर कह्यो वचन मोहिं सांचे॥
हैं हरि एक मुक्तिके दाता। अवदाता ज्ञाता जनभ्राता॥
तब मैं कह्यों बहुरि करजोरी। किमि सुधि करिहैं हरिहरमोरी॥
मैं बाँधे घंटा श्रुतिमाहीं। हरिको नाम सुनौ जेहि नाहीं॥

दोहा—करहुँ सर्वदा विष्णुकी, निंदा चित्त लगाय॥
कौनी सेवा रीझिकै, देहैं गति यदुराय॥ २४॥

तब हर कह्यों मोहिं सुनु दासा। करुणानिधि हैं रमा निवासा॥
जो छल छाँड़ि भजैगो हरिको। तो प्रभु फेरिहैं दया नजरिको॥
तब मैं कह कँहहैं भगवाना। कह्योबहुरि वन कियो पयाना॥
मैं कह केहि विधि दरशन होई। हर कह जातहँ श्रम इतनोई॥
मैं कह नाम रूप अरु धामा। सो बताइये पूरणकामा॥
तब हर कह्यो मोहिं यहि भाँती। अज अनादि अच्युत अघघाती
हरणहेत भूमंडल भारा। लियो नाथ यदुकुल अवतारा॥
वसहिं द्वारिका नाथ हमारे। सिंधु तीर देवकी दुलारे॥
तब मैं शंभु चरण शिरनाई। आयों बदरी आश्रम धाई॥
अब खोजो ह्याँ हरिहि न पाऊं। कहा करौंमैं कित चलिजाऊं॥
शंकर वचन मृषा नहिं होई। मोरे मन विश्वास इतनोई॥
ताते अस विचारहै मोरा। रजनी भई बसौं यहि ठौरा॥

दोहा—हरिहिं हेरि सब ठौर इत, मनुज भये पुनि भोर ॥
जाइ द्वारिका लखन हित, श्रीवसुदेव किशोर ॥२८॥

रोला छंद ॥ ब्रह्मण्य सूर शरण्य श्रीपति करुण वरुण निवास॥ कर्ता जगतहर्ता जगत भर्ता जगत सविलास ॥ आनंद कंद निरास द्वंद विनाश कर अरिवृंद ॥ स्वच्छंद रूप अमंद देखब आजु यदुकुलचंद ॥ सेवत सिराने वर्ष बहु शंकर सुपाद सरोज॥ जालिम जगत जंजाल भोग्यो लग्यो सुकृत न खोज॥ मोहिंदीन जानि महेश करि उपदेश दीन अनंद॥द्रुत दौरि दोऊ दृगन देखब आजु यदुकुल चंद ॥ मैं पतितपूर पिशाच तापित पाप पावक आंच ॥ नहिं यांचहित किय यांचना खचि रह्यो खेटक खांच ॥ ममसुकृत जागी भूरि भागी भयो विश्ववेलंद ॥ पद परसि पूरणकाम देखब आजु यदुकुलचंद ॥ हे मनुज जो तुम दनुज नाशन कहूं निरखे होय ॥ तौदेहु वेगि बताइ मम उपकार करु इत नोय॥ हम झपटि लपटब चरण दपटब दुरित तजि छलछंद ॥ अबजनमकरबै सुफल अपनौ लखब यदुकुलचंद ॥

दोहा—यहि विधि कह्यो पिशाच जब, निरखि तासुअभिलाष
मंद मंद मुसकाइतहँ, रीझिगये प्रभुलाष ॥ २६ ॥

कह्यो पिशाच बहुरि हरिकाहीं ।मनुज जाहु अपने थल माहीं ॥ हम इत नित्य कर्म कछुकरिहैं। भोर भये पुनि अनत सिधरिहैं असकहि घंटाकरण पिशाचा। रुधिर पानकरि अतिसुखराचा॥ कीन्ह्यो आमिष विपुल अहारा। नर आंतन को हार उतारा ॥ मज्जन कियो गंगमहँ जाई। बैठ कुशासन तहाँ बिछाई ॥ महि अभिमंत्र्यो सुरसरिबारी। श्वान समूहन दियो निकारी ॥ आसन बाँधि समाधि लगाई। कियो अचलचितसुमिरिकन्हाई नाथ मिलनमनकरिअभिलाषे। करिकै रचन वचन असभाषे ॥

जय जय वासुदेव भगवाना । शंख चक्र धर कृपा निधाना ॥
जय नारायण विष्णु मुरारी । जय यदुनंदन अधम उधारी ॥
तुम्हरे सुमिरण मनशुचिहोऊं । अपनो जन्म जगत नाहिं जोऊं
तुव सेवक ह्वै बसों समीपा । दहै चक्र ममकाय प्रतीपा ॥
दोहा–जरामरण अति दुसह दुख, होइ न मोहिं संसार ।
कोटि काम तरु सरिस तुम, अर्थनके दातार ॥२७॥
करौं बहोरि बिनै करजोरी । जो जो योनि देहु प्रभुमोरी ॥
तहँ तहँ होइ कंजपद प्रीती । नहिं भूलै परभाव प्रतीती ॥
कर्म विवश जहँ जहँ मैं जाऊं । निशिवासर तुव पदशिरनाऊं॥
बार बार विनती सुनि लीजे । मरण समैं बिसमरण न दीजे ॥
दिन दिन यामयाम क्षणक्षणमैं । रहै मोरमन पद कमलनमैं ॥
पांवर पतित पिशाच विचारी । दया न त्यागहु मोर मुरारी ॥
शरणागत मोको प्रभुजानो । पर पीड़न सुभाव मम भानो॥
तुमहीं समरथ दुतिय न कोऊ । महामूढ़हूं जानत सोऊ ॥
शरण परचो द्वारिका विलासी । अब न होइ जामें ममहाँसी ॥
राखव नाथ शरणकी लाजा । जेहि विधि राखिलियो गजराजा
पुनि पुनि हाथ जोरिअसमांगौं। सुखदुखमहँ अरु जहँ तहँ वागौं
बैठत खात पियत अनुरागत । सहज कठिन सोवतअरुजागत॥
दोहा–कर्म विवस जहँ २ जगत, जाय मोरि यह देह ।
तहां तहां अक्षय अचल, होइ नाथ पदनेह ॥ २८ ॥
अस कहि नरआंतनअँगबांधी । सुमिरत यदुपति साधिसमाधी॥
नासाअग्र अचल दृग कीन्ह्यों । लाग्यौ जपन मंत्र हरदीन्ह्यौं ॥
यहि विधि अचल समाधिलगाई। भयो अनन्य दास रघुराई ॥
भयो पषाण समान पिशाचा । छल बल छोड़ि राम रतिसाचा
पेखि प्रेत कर कौतुक नाथा । भरि आयो आंखिनमहँ पाथा ॥

अचरज मनमहँ मानि मुरारी। सत्य कियो यह भक्ति हमारी॥
सोवत जागत बैठ बतावहु। पीवत श्रोणित आमिष खावहु॥
जगन्नाथ माधव नारायण। यदुवर रघुवर दीन परायण॥
मेरो नाम जपत बसु यामा। मोर मिलन दूजो नहिं कामा॥
कियो जन्म भरि जो यह पापा। छूटयो सकल नामके जापा॥
अंतःकरण शुद्ध है गयऊ। अविचल मोर प्रेम उर ठयऊ॥
यहि अपनो अब रूप देखाऊं। अधम उधारण नाम कहाऊं॥

दोहा—अस विचार यदुनाथतहँ, प्रेत हियेमहँ जाइ।
अति अनूप अनुरूप निज, दीन्हों रूप देखाइ॥२९॥

चक्र गदाधर धनुष विराजत। कटि तुणीरते गच्छ बिछाजत
पीतवसन सोहत वनमाला। मणिकिरीटकौस्तुभछविजाला
श्याम जलद सम सुभग शरीरा। चारिबाहु सुंदर यदुवीरा॥
मुख प्रसन्न खगपति असवारा। जीव चराचर पति संसारा॥
ऐसो रूप निरखि हियमाहीं। गुण्यो कृतारथ अपने काहीं॥
अचल समाधि पिशाच लगायो। हरिपदते नहिं चित्तडोलायो॥
जबते दियो शंभु उपदेशा। तबते कीन्ह्यो यतन अशेशा॥
अस सरूप नहिं कबहुँ देखाना। देख्यो यथा आज भगवाना॥
मोपर भे प्रसन्न यदुराई। निज माधुरि मूरति दरशाई॥
अब उघारिहौं नैननि नाहीं। लखिहौं रूप सदा हियमाहीं॥
याते अधिक न और अनंदा। देखि परे हिय यदुकुलचंदा॥
प्रेम सिंधुमहँ मगन पिशाचा। ताको मनहरि मूरति राचा॥

दोहा—बार बार दृग बहत जल, रोमांचित सब गात॥
निरखि निरखि यदुपति सुछबि, आनँद उर न समात३०

यहिविधि कियो पिशाच समाधी। बीति गयो इक याम अबाधी॥
आनँद मगन न नैन उघारा। तब यदुपति उर दियो बिचारा॥

मम स्वरूप जबलगि हियमाहीं ।देखिहैं तबलगि बोलिहैं नाहीं॥
काठ सरिस रहिहैं यहि ठाईं । हमरो उठब कठिन तबताईं ॥
ताते मैं निज रूप छिपाऊं ।अचल समाधि पिशाच छोड़ाऊं ॥
अस गुनि प्रभु पिशाच उरमाहीं।गोपि लियो अपने बपुकाहीं ॥
हियमें नहिं हरिरूप निहार‍्यो।उठ्यो चौंकि निज नैनउघार‍्यो ॥
चकित चहूंकित चितवन लागा ।मानहुँ चिर सोवत सो जागा ॥
चितमें गुणत महादुखरासी । कहाँ गयो हरि मोहिय बासी ॥
चितयो प्रेत परम अकुलाई । लख्यो बैठि आगे यदुराई ॥
जेहि विधि लिख्योरूपहियमाही। तेहिविधिप्रभु सनमुखदरशाहीं
जानि लियौ येई यदुराई । इनहींको दिय शंभु बताई ॥

दोहा–द्वारावति बासी यई, मम हिय बासी सांच ॥
येईदेहैं मुक्ति मोहिं, यह सति जानि पिशाच ॥२१ ॥

उपज्यो सुखतन भानु भुलाना । बदरीवन मिलिगे भगवाना ॥
बार बार दृग बारि बहायो । प्रेम विवश कछु बोलि न आयो॥
रह्यों दंड द्वै प्रेत अचेतू । प्रेम मगन मनु यदुकुलकेतू ॥
उठ्यो सँभारि फेरि मति धीरा। कहि जय जय जय जय यदुवीरा
पायों पायों मैं प्रभुपायो । सफल जन्म आपनो बनायो ॥
अस कहि उठ्यो पिशाच तुरंता। नाचत लग्यो महामतिवंता ॥
नाचत कूदत करि किलकारी । गावत गुण गोविंद गिरिधारी ॥
देत प्रदक्षिण बारहिंबारा । अंबक चलति अंबुकी धारा ॥
दंडप्रणाम करत बहुबारा । अंबक चलति अंबुकी धारा ॥
लोटि जात कहुँ पुनि महि माहीं ।उठि बैठत पुलकत क्षण जाहीं॥
भयो पनस फल सरिस शरीरा । जन्म जन्मकी मिटिगै पीरा ॥
प्रेम मगन कहुँ रुदत हँसतहै । हेरि हेरि हरि हियहुलसतहै ॥

दोहा—जसतसकै पुनि धीर धरि, हरि सन्मुख ह्वै ठाढ़ ॥
जोरि पाणि अस्तुति करी, प्रेत प्रेम उर बाढ़ ॥३२॥
छंदहरिगीतिका—जय कृष्ण बिष्णु सहिष्णु विष्णु सखामृषा तुव तुव बिन सबै॥गोपाल परम कृपालु देवकिलाल मैं देख्यो अबै॥ जय चक्रधर सारंगधर जय गदाधर दर धारिणे॥जय खड्गधर जय तूणधर जय सुरथ समर विहारिणे॥ जय सहस शिर जय सहस बाहु सहस्र पद सहसानने॥ जय विश्व करता विश्व भरता विश्व हरता जानने॥ प्रभु प्रलय पारावार मीन स्वरूप करत बिहारहौ- बिकराल दुष्ट संहार करि तुम करत वेद उधार हौ ॥ हे कृष्ण- कमठाकार ह्वै धरि पुष्ट मंदरसुंदरै॥ मथि क्षीरनिधि रक्ष्यो सुरा- सुर प्रगटि कीरति चंदिरै॥ वाराह वपु प्रभु धारि धरणि उधारि दुवन सँहारिकै॥ कीन्ह्यो अचल श्रुतिसंतपथ महिमा अमित विस्तारिकै॥ बलिबाहु बल बारिधिहि बासव बूड वेगि विलो- किकै॥ वपुधारि वामन नापि विश्व त्रिपाद कियदुख रोकिकै॥ अति प्रबल हाटक कशिपु जब प्रहलादपर अमरष कियो॥ प्रभुप्रगटि खंभाविदारि रिपुतनफारि नरहरि सुखदियो॥ ४॥ क्षत्री छला कुलछोलि गुनि भृगुकुल कमल दिनकर भये॥ करएकविंशति बार पुहुमि निक्षत्रसब दुखहरिलये॥ दशरत्थलाल कृपालुरघुकुलपाल रूप रसालहैं॥ सबकाल सुर दुख जालहरि ततकाल करत निहालहैं ॥५॥ जय अवध अधिप बिदेह कन्याकंत हरधनु भंगकै॥ भृगुपति विमदकर पितुवचन पालयो मुनिनगण संगके॥ रघुवंश भूषण रहित दूषण निहत खर दूषण कियो॥ कपिमित्र परम विचित्रसेतु पवित्र सागर रचिदियो॥६॥ दशशिरसकुल खलदल सुसंकुल बिशिष व्याकुलकरि दल्यो॥ लंकेश अनुजहि सारि तिलक त्रिलोक यशभरि पुर चल्यो॥

दुखघालि परजन पालि शत्रुन सालिकिय सुरकाजको ॥ मह-
राज श्रीरघुराज चरण भरोसहै रघुराजको ॥ ७ ॥ यदुवंश पूषण
देव भूषण हरण दूषण जननके ॥ वसुदेवनंदन योगिवृंदन चरण
पंकजमननके ॥ वृंदाविपिन विहरण निपुण ब्रजवधू मंडलमंडितै॥
खलवृंददारुण धेनु चारण रामरास अखंडितै ॥ ८ ॥ गजकंसमल्ल
प्रबल्ल केशी आदि दानवदारिने ॥ दुख दूबरी किय कूबरी सुबधूब-
री पुरचारिने ॥ पांडवन आदिक सुहृदगण सबशोक शमन कृपा-
लुजै ॥ द्वारावती विलसत वसत रुक्मिणि सहित सबकालजै ॥९॥

दोहा—कौनपुण्य पूरब कियो, ताको प्रगट प्रभाव ॥
अधम जाति यह प्रेतको, देखिपरे यदुराव ॥ ३३ ॥
सेवकाईमें कह करौं, का अरपौं हरि काहिं ॥
मोतेदुतियन धन्यकोउ, देखि लियो जगमाहिं ॥ ३४ ॥

असकहि पुनि पुनि नाचनलाग्यो। गावतपुनिपुनि अति अनुराग्यो
नहिसमात आनँद उरमाहीं । भनतमोहिंसम धनिकोउ नाहीं ॥
लग्यो विचारन काह चढ़ाऊं । प्रभुकहँ केहिविधि आज रिझाऊं
मोहिं दियो प्रभु योनिपिशाची। मोरि तुष्टि आमिषमहँ सांची ॥
आमिषरुधिरपिशाच अहारा। यह पूरुव विरच्यो करतारा ॥
जाको जौन अहारै होई । निजप्रभु कहँ अरपै हठि सोई ॥
ताते मोहिं योग्य यहिकाला । अरपौं आमिष प्रभुहिं रसाला ॥
असविचारि सो प्रेतसुजाना । हरिअर्पणको कियो विधाना ॥
वैदिक ब्राह्मण आमिष आनी । धोइ विमल करिसुरसरिपानी ॥
मूलमंत्र अभिमंत्रित कीन्ह्यो । परमपवित्र पात्र धरिलीन्ह्यो ॥
लैकर घंटाकरण पिशाचा । चल्योकृष्ण सन्मुख मनसांचा ॥
जोरि पाणिपुनि बचन उचारा। यह तुम रच्यो पिशाच अहारा॥

दोहा—वैदिक ब्राह्मण मांसयह, परम पवित्रमुरारि ॥
तुमसम प्रभुके योग यह, ऐसोलेहु बिचारि ॥ ३५ ॥
तापर मैं अभिमंत्रित कीन्ह्यो। नहिंप्राचीन अबहिं बधिलीन्ह्यो॥
मैंतौ तुवपद दास मुरारी। मोपर कृपाकरी प्रभु भारी॥
दासन अरपित वस्तुसदाहीं। उचित ग्रहण करिबो प्रभुकाहीं॥
ताते ग्रहण करहु यदुराई। जो यामे नाहिं दोष देखाई॥
असकहिहुलसि हँसतबहुभांती। आंसुन पांति बहति दृगजाती॥
प्रेम मगन सुधि कछुन शरीरा। आमिष पाणिलिये मतिधीरा॥
प्रभुकहँ अर्पण चल्यो समीपा। द्विज आमिषलै प्रेतमहीपा॥
शुद्ध भाव ताकर प्रभुदेखी। मनमहँ मोदित भये विशेखी॥
तासुप्रेमलखि प्रभुमुसकाई। पुलकित तन दृगवारिबहाई॥
अति प्रसन्न प्रभुपरम कृपाला। कह्यो वचनहे प्रेतभुवाला॥
परम प्रीति कीन्ही मोहिँ माहीं। तोहिँ सम प्रिय मोको कोउ नाहीं
विप्र सर्वथा पूजन योगू। होत दनुज आमिषकर भोगू॥
दोहा—मोसमजे ब्रह्मण्य जग, तिनहिं न परसन योग॥
पैनहिँ तेरो दोष कुछ, यह पिशाचकर भोग॥३६॥
तेरे तनमें है नहिं पापा। कीन्ह्यों मोर नाम बहु जापा॥
कपट विहीन करी मम प्रीती। यही साधुकी संतत रीती॥
तेरी प्रीति परेखि पिशाचा। मोमन तोहीं महँ अति राचा॥
प्रीति प्रतीति भाव मैं देखी। लीन्ह्योंदास परम प्रिय लेखी॥
प्रीति प्रतीति परेखि प्रेतकी। जानि विनै प्रभु मुक्तिहेतकी॥
रहि न गयो प्रभुसे तेहिकाला। उठे तुरंतहि दीनदयाला॥
लपटि गये प्रेमहिं भगवाना। को कृपालु यदुनाथसमाना॥
प्रभुतन परसत प्रेत अपावन। भयो रूप तेहि समै सोहावन॥
सुमुखसुलोचन बाहुविशाला। दीरघ कुंचित केश रसाला॥
सजल सलिलधर श्यामशरीरा। उर वनमाल पगन मंजीरा॥

शीशमुकुटकर कटक विराजै । मानहुँ अपर देवपति आजै ॥
बारबार मिलि ताहि मुरारी । बैठे आसन बहुरि सुखारी ॥
दोहा—ज्ञानवान बलवान अति, भक्तिवान रतिवान ॥
रूपवान सब शास्त्रको, भयो निधान सुजान ॥३७॥
कोटिन जन्म योग जप यागा । योगी करहिं विज्ञान विरागा ॥
तदपि न तौ न लहै अधिकारा । दियो जे प्रेतहिं नंदकुमारा ॥
को अस दूसर दुनी दयाला । प्रीति करत करिदेत निहाला॥
को अस पतित जगत अघकारी। होइ न प्रभुके शरण सुखारी॥
लहि पिशाच पार्षदकर रूपा । ठाढ़ो हरिढिग दास अनूपा ॥
बोले नाथ वचन मुसकाई । सुनहु सुमति मम गिरा सुहाई ॥
बासव बसै स्वर्ग जबताई । तबलों तुमहुँ इंद्रकी नाईं ॥
बसहु स्वर्ग लहि विविध विलासा।तोहिं न कोउ दायक अवत्रासा
जब यह अमरनाथ मरि जाई । तब ह्वैहै वासव तुव भाई ॥
तुम ऐहौ पुनि लोक हमारे । जहाँ वसत मम दास पियारे ॥
अविचल संग हमार तुम्हारा । है सर्वदा विकुंठ अगारा ॥
औरहु जो मनवांछित होई । माँगि लेहु दैहैं हम सोई ॥
दोहा—घंटाकरण प्रसन्नह्वै, तब बोल्यो कर जोरि ॥
अब बाकी कछु ना रह्यो, कछू आस नहिं मोरि॥३८॥
यह वर मांगौं जोरे हाथा । देहु कृपा करिकै यदुनाथा ॥
जो यह कथा हमारि तुम्हारी । पढ़ै सुनै श्रद्धाकरि भारी ॥
ताहि भक्ति अपनी प्रभु दीजै । अपनो दास ताहि करिलीजै ॥
कलिमल रहै न तनमहँ ताके । नशैं पाप सिगरे मनसाके ॥
हरि प्रसन्न ह्वै वचन उचारा । सत्य होइगो भणित तुम्हारा ॥
पुनि जेहि ब्राह्मणको हति लायो।तेहि यदुनंदन तुरत जिआयो॥
ताहि आपने धाम पठायो । दै अपनो वपु परम सोहायो ॥

देखिचरित यदुनंदन केरो । सुर मुनि आनँद मानि घनेरो॥
वरषाहिं गगन सुमन सुरवृंदा । जय मुकुंद जय कहैं गोविंदा ॥
घंटाकरण सवार बिमाना । देवलोकको कियो पयाना ॥
गावत जात संग सिध चारन । नाचहिं सँग अप्सरा हजारन ॥
यहि विधि पहुँचि देवपुरमाहीं । विलस्यो इंद्रसमान सदाहीं ॥
दोहा—गयो फेरि वैकुंठको, इंद्र भयो तेहिं भ्रात ॥
घंटाकरण पिशाचकी, कथा कही अवदात ॥ ३९ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यां द्वापरखंडे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

अथ श्वेतद्वीपवासियोंकी कथा॥

दोहा—श्वेतद्वीपवासी सकल, रूप उपासी होइ ॥
तिनकी कछुक कथाकहौं, सुनो संत सब कोइ ॥१ ॥
एक समय नारद मुनिराई । मनमें कियो विचार भलाई ॥
गमनहुँ श्वेत द्वीप यहि काला । जहँ नारायण वसत कृपाला ॥
हरिपार्षद जे तहँके वासी । सकल होतहैं रूप उपासी ॥
ज्ञान विराग योग नहिं जानै । उपदेशौं चालि तिन लगि कानै॥
अस विचारि मन देवऋषीशा । क्षीरधि चल्योसुमरि जगदीशा
श्वेतद्वीप पहुँच्यो जब जाई । निरख्यो नारायण मुनिराई ॥
कियो दूरि ते दंड प्रणामा । नारद निरखि हँसे श्रीधामा ॥
नारद उर आशय प्रभुजानी । वरज्यो सैनानि सारँगपानी ॥
इहाँ देवऋषिका मन तोरा । विचरहु जगत और सब ठोरा॥
इत उपदेश न राउर लागी । इतके सकल रूप अनुरागी ॥
ज्ञान विराग योग तप नेमा । नहिं जानत बूड़े रस प्रेमा ॥
जानि देवऋषि हरिउर केरी । उरमें विषम बुद्धि किय फेरी ॥

दोहा—मैं आयो उपदेशहित, ज्ञान विवेक विराग।
हरिको ज्ञान विरागते, प्रेम अधिक प्रिय लाग ॥ २ ॥
ये सब श्वेतदीपके वासी । मृषा किये मदरूप उपासी ॥
अस विचारि लौटे मुनिराई। गे बैकुंठहि वीण बजाई ॥
हरिसों सब वृत्तांत बखाना। बहुरि कह्यो अपनो अपमाना॥
सुनु मुनीश कह हरि मुसकाई। मैं चलिहौं निज संग लेवाई ॥
अस कहि नारदको सँग लीन्ह्यो। गवन श्वेतदीपहि प्रभु कीन्ह्यो
लख्यो एक तहँ सुभग तड़ागा। बहु विहंग बोलहिं वन बागा ॥
तहँ बक लख्यो बैठ सरतीरा। अचल तृषित पीवत नहिं नीरा
मुनि शंकित पूछ्यौ हरिपाहीं। यह बक नीर पियत कस नाहीं॥
हरि कह यह बक रूप उपासी। विन प्रसाद नहिं पीवन आसी ॥
सहस वर्ष बीते बक काहीं। बिन प्रसाद पायो जल नाहीं ॥
अचरज मानि देवऋषि बोले। नाथ वदहु कत मानहु भोले ॥
पक्षी भये कबैते प्रेमी। नाथ कहौ प्रसादके नेमी ॥
दोहा—तब हरि लै मुखमें सलिल, तेहिं आगे दिय डारि।
सहस वर्षको तृषित बक, कियो पान तब बारि ॥ ३ ॥
बकहि जानि मुनि हरि अनुरागी। बार बार वंद्यो बड़भागी ॥
पुनि नारद कहँ लै हरि आगे। गवने लखत प्रेम रस पागे ॥
जब हरिधाम निकट दोउ आये। तेहि क्षण तहँके जन सब धाये ॥
होति रहै आरति तेहिं काला। जे पहुँचे ते भये निहाला ॥
हरिप्रेमी पहुँच्यो इक नाहीं। ह्वैगै आरति वंद तहाँहीं ॥
मंदिरते कढ़ि कोउ जन आयो। ह्वैगै आरति ताहि सुनायो ॥
विन आरति देखे दुख भयऊ। तेहि थल सो निज तनुतजिदयऊ
तासु पुत्र आयो तहँ धाई। बंद आरती सुनि दुखपाई ॥
हाय न आरति देखन पायो। अस कहि तनु जियतेबिलगायो

आयो दौरि तासु तहँ नाती । सोउ तनु त्यागदियोतेहिभांती
औरहु जे पाछे तहँ आये । भने आरती लखन न पाये ॥
अस कहि प्रेम विवश तनु त्यागे । प्रभुके रुचिर रूप अनुरागे ॥
दोहा—नारद यह कौतुक निरखि, लीन्ह्यो मनहिं विचारि ।
रूप उपासक सत्यहैं, श्वेतदीप नर नारि ॥ ४ ॥
महाभागवत मानि मुनीशा । कियो प्रणाम परसिमहिशीशा॥
कह्यो वचन सुनिये यदुराई । प्रेमा भक्ति महा इत पाई ॥
जैसे श्वेतदीपके वासी । अनुपम रूप अनन्य उपासी ॥
तसनाहिं कौनेहुँ लोकन कोऊ । ज्ञान विराग योग रत जोऊ ॥
मैं अनुराग अधिक गुणिज्ञाना । किये रह्यों अबलों अभिमाना॥
श्वेतदीप वासिन लखि प्रीती । आजु भई प्रभुअचलप्रतीती ॥
इहां न कछु उपदेश प्रयोजन । भयो कृतारथ मैंलखिहरिजन॥
पैसुनि मोरि विनय यदुराई । निज प्रेमिन को देहु जियाई ॥
तब प्रभु जललै वचन उचारे । श्वेतद्वीप जन मोर पियारे ॥
येजस प्रेमी तस सब होवैं । तौ उठि मृतक मोहिं द्रुत जोवैं॥
यतना कहत जिये सब लोगू । पायो अचल प्रेम कर भोगू ॥
बार बार नारद शिर नाई । चल्यो तहाँते वीण बजाई ॥
दोहा—ज्ञान विराग विवेक तब, योग याग जप नेम ।
प्रेम अधिक सबते अहै, दायक क्षेमिन क्षेम ॥ ५ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

अथ कुंतीकी कथा ॥

दोहा—कहौं कछुक कुंती कथा, भक्ति शिरोमणि सोइ ।
यदुपति ते प्रिय जगतमें, जाको रह्यो न कोइ ॥ १ ॥
कुंती कथा अपूर्व अपारा । व्यास सकल भारत विस्तारा॥

को वक्ता कवि अस जगमाहीं। वर्णत कुंती कथा सिराहीं ॥
भागवँतादि प्रसिद्ध पुराना। कुंती गाथा विविध विधाना ॥
तदपि कहौं कछु मति अनुसारा। सुनहु संत सुंदर सुखसारा ॥
आनकदुंदुभि भगिनि सयानी। बारहिंते हरि प्रीति प्रधानी ॥
जबते पांडु भवन पगुधारी। परम धर्म धार्‍यो अघहारी ॥
संपति विपति विषाद भळाई। जहँ जहँ पृथा भाग्यवश पाई॥
तहँ तहँ हानि लाभ नहिंमानी। कृष्ण प्रीति क्षण भरि नभुलानी
भारत समर कराइ मुरारी। भूमि भार प्रभु दियो उतारी॥
पृथा पास पुरुषोत्तम आये। अति विनीत ह्वै वचन सुनाये॥
सही विपति सुत सहित सयानी। भाग्य विवश अब मिटी गलानी
कहौ तो द्वारावति हम जाहीं। अबतो त्वहिं कलेश कछु नाहीं

दोहा—तब कुंती बोली वचन, जो प्रसन्न प्रभु होउ।
तौ मागहुँ वर देहु सो, यदुवर जै सब कोउ ॥ २ ॥

हरि कह त्वहिं अदेव कछु नाहीं। मांगु मांगु तैं यहिक्षण माहीं ॥
पाणि जोरि कह शूरकुमारी। देहु मोहिंवर यह गिरिधारी ॥
जौन विपति भै बारहिं बारा। बहुरि विपति सो होइ अपारा ॥
विपति परे तुम वारण ऐहो। कबहुँ न द्वारवती ठहरैहो ॥
तब हम दरशन लहब तुम्हारा। और मनोरथ नाहिं हमारा ॥
परिहै विपति मोहिं जो नाहीं। दरशामिली कैसे मोहिं काहीं॥
तुव दरशनते अधिक न लाहू। बिना दरश संपति दुख दाहू॥
प्रभुलखि प्रीति अलौकिक ताकी। कह्यो बानि सुनि प्रेम सुधाकी
दरश आश करिहै जब मोरी। पुरिहौं मैं तब मनकी तोरी ॥
मोहिं तोहिं क्षण अंतर नाहीं। अधिक मातुते तैं मोहिं काहीं
अस कहि द्वारवती प्रभु आये। कुंती उर अति आनँद छाये॥
नाग नगर प्रभु बारहिंबारा। कुन्ती दरश हेतु पगुधारा ॥

दोहा–पृथा प्रेमके वशभये, यदुकुल अमल दिनेश।
बातशल्य रस कृष्णमें, कुन्ती कियो हमेश ॥ ३ ॥
यदुकुलको समेटि यदुराई। गये धाम संतन सुखदाई ॥
अर्जुन द्वारवती ते आयो। चकित महीप सभामहँठायो ॥
बार बार पूंछ्यो नृप धर्मा। मन उदास भाषहु निज मर्मा॥
बहुत बार पूंछ्यो जब राजा। तब अर्जुन बोल्यो तजिलाजा॥
यदुवर मोहिं छलि गे निज धामा। हम सब भये आजु दुख छामा
इतनी विजय बदन सुनि बानी। खड़ी रही तहँ पृथा सयानी॥
प्रेम विवश अतिशय अकुलानी। जस तसकै निकसी यह बानी
हा हरि यदुपति प्राण अधारा। तुम बिन मोहिं शून्य संसारा
इतना कहत निकसिकै प्राना। पहुँच्यो गोपुर जहँ भगवाना॥
बसी नित्य परिकरमहँ जाई। कुन्ती सम काहुन गति पाई॥
पृथा सरिस को जगमहँ जायो। हरि हित तन मन सकल लगायो
वसी नित्य परिकर महँ यद्यपि। वत्सल भाव गयो नहिं तद्यपि॥
दोहा–यहू लोक गोलोकमें, राख्यो येकहि भाव॥
कृष्ण सुछबि पीवत अमी, ताहि न भयो अघाव॥४॥
इति त्रयोविंशोध्यायः॥ २३ ॥

अथ पांडवकी कथा॥

दोहा–कहों पांडुसुतकी कथा, सूत भणित अतिपूत॥
जासु सूत अरु दूतहू, भयो देवकी पूत ॥ १ ॥
पांडु रहे बनमहँ जेहि काला। एक समय तेहि विपिन विशाला
कोउ मुनि दंपति करि मृग रूपा। कियो विहार जहाँ रहभूपा॥
मानि मृगा शर हन्यो कठोरा। मुनि तिय शाप दीन अति घोरा
करत विहार हत्यो पति मोरा। होई काल नारि रति तोरा॥

पांडु भूप तब कर परितापा । तज्यो मरण डर नारि मिलापा
पृथा मंत्र बल पति रुख पाई । धर्म पवन लिय इंद्र बोलाई ॥
तिन प्रसंग त्रयजन्यो कुमारा । धर्म भीम अर्जुनहु उदारा ॥
माद्री कहँ सोइ मंत्र सिखायो । सोउ अश्विनी कुमार बोलायो॥
ताते भये नकुल सहदेवा । जिनके इष्ट देव यदु देवा ॥
मुनि तिय शापित पांडु भुवाला। गयो स्वर्ग बीते कछुकाला ॥
पांडुसुवन सुनि जन्मउदारा । भीषम तुरत विपिन पगुधारा
लायो गजपुर पाँचहु नाती । तिनहि देखि शीतल भइ छाती

दोहा—तहँ दुर्योधन बंधु शत, धर्मबंधु युत पांच ॥
राजभवन खेलत रहत, प्रीति परस्पर सांच ॥ २ ॥

पांडुसुतनसों तहँ दुर्योधन । राखत रह्यो कपट मन क्षणक्षण
सबते करै मल्लयुध भीमा । सबको जितै अतुल बल सीमा॥
भीम हरावन कियो उपाई । हारयो नहीं धर्म लघु भाई ॥
तब दुर्योधन वैर विचारी । विरच्यो मोदक माहुरडारी ॥
करन सबै जब भोजन लागे । दुर्योधन धरि भीमहि आगे ॥
कह्यो लेहु यह हरि परसादा । मोदक मीठ मधुर मरयादा ॥
सविष भीम लिय यद्यपि जानी। खायो हरि प्रसाद उर आनी ॥
नेकुहिं ताहि गरल नहिं लागा । खेलत रह्यो न कोपहु जागा ॥
एक समय सब बालक आये । सुरसरिता महँ सुखित नहाये ॥
तहँ दुर्योधन मंत्रिन बोली । ल्यावहु अहि अस आशय खोली
मंत्री आसी विषगहि लाये । भीमहि दुर्योधन कटवाये ॥
सो विष व्यापि अंगमें गयऊ । भीम देव सरि बूड़त भयऊ ॥

दोहा—कृष्ण कृपावश बूझिकै, गयो भीम पाताल ॥
परयो अमृतके कुंडमें, जेहिंताके सब व्याल ॥ ३ ॥

काढ़यो ताहि व्यालरिपु जानी । भई प्रथम दुखकी तब हानी॥

कीन्ह्यो भीम अमीकर पाना । वासुकि नाग ढाल सब जाना॥
लियो बोलि आपने समीपा । जान्यो सुत यह पांडु महीपा॥
वासुकि दियो ताहि वरदाना । जुरी जो कोउ तुवसँग बलवाना
आधो बल ताकर तोहिं ऐहै । कुंड पतन प्रभाव सत ह्वैहै ॥
भीमसेन लहि यह वरदाना । कुशल कियो गजनगरपयाना
देखिभीम सब अचरज माने । को यमलोकहि ते यहि आने॥
यहि विधि पांडु सुतनहितमारन। कियो सुयोधन बहु उपचारन॥
वैस किसोर भई सब केरी । शकुनि कर्णमिलिगे छल टेरी॥
दिन दिन उदय पांडवन देखी। दुर्योधन किय मंत्र विशेखी ॥
जबलौं जीहैं पांडुकुमारा । तबलौं विभव न होइ हमारा ॥
ताते कौनेहु विधिते मारी । करी राज्य पुनि सदा सुखारी॥
दोहा—अस विचारि मंत्री रह्यो, नाम पुरोचन जासु ॥
ताहि बोलायो अंध सुत, कीन्ह्यो वचन प्रकासु ॥४॥
जाहु वारना वति यक नगरी । ताहि बसायो रहै न विगरी ॥
तहां लाख के भवन बनावो । अति विचित्र निपुणता देखावो
महल यथा हस्तिनपुर माहीं । तिनते भेद परै कछु नाहीं ॥
सो प्रभु शासन शिरधरि गयऊ । तैसे रचन करत तहँ भयऊ ॥
लाख महल लाखन जिन मोला।लखि चरना भो विधिमन भोला॥
इतै सुयोधन सभा बोलाई । पांडुसुतन अस गिरा सुनाई ॥
लेहु बारनावति निज हींसा । बसहु जाइ सुमिरत निजईसा॥
भीषम द्रोण कृपादिक वीरा । यह छल नाहिं जानहिं मतिधीरा
सुनि संमत सब उचित उचारे । तेहि क्षण विदुर सभा पगु धारे॥
रह्यो चरित्र विदुर कर जाना । राज भीति नहिं खोलि बखाना
अंध नृपति सों मांगि बिदाई । चले जबै तहँ पांचहु भाई ॥
भाष्यो विदुर पारसी बानी । धर्म भूप लीन्ह्यों सब जानी ॥

दोहा—गये वारनावति पुरी, पांच पांडुके नंद ।
कुंतीहू सँगमें गई, जान्यो नहिं छलछंद ॥ ५ ॥
आइ पुरोचन आगे लीन्ह्यो । कोष वाजि गज अर्पण कीन्ह्यो ॥
लाख महलमहँ गयो लेवाई । दीन्ह्यो थल थल सकल देखाई॥
वसे पांडुसुत संयुत माता । सुमिरत कृष्ण चरण जलजाता ॥
तबहिं पुरोचन पठयो पाती । दुर्योधनके ढिग यहि भांती ॥
पांडव बसे लाख गृह माहीं । जस शासन तस होइ इहांहीं ॥
लिख्यो तासु उत्तर दुर्योधन । अनल लगाइ दह्यो पांचौजन॥
जेहि दिन चाह्यो अगिनि लगाई। तेहि दिन येक निषादी आई॥
रहे पांच सुत ताहू केरे । वसे लाख गृह कालहि प्रेरे ॥
संध्या समय पुरोचन आई । दियो द्वारते आगि लगाई ॥
जरन लग्यो जब लाख अगारा । पुरमहँ माच्यो हाहा कारा ॥
जरे कुंति युत पांडुकुमारा । दुर्योधन किय छल उपचारा ॥
निरखि पांडुसुत पावकज्वाला । सुमिरण लागे कृष्ण कृपाला॥
दोहा—गली येक मिलिगै तहाँ, गंगातट पर्यंत ।
मातु सहित तहँ पांडुसुत, तहँते तुरत ब्रजंत ॥ ६ ॥
रही नाव लागी सरि तीरा । तामें चढ़ि उतरे सब वीरा ॥
जरत द्वार प्रभाव जगदीशा । गिरचो तुरंत पुरोचन शीशा ॥
भयो भस्म जरि तुरत तहाँहीं। पांडुसुवन आँचहु लगि नाहीं ॥
आये भोरहिं प्रजा विषादी । पांच सुवन युत निरखि निषादी॥
लीन्हे पांडव पृथा विचारी । तथा पुरोचन मृतक निहारी ॥
दुर्योधनहिं लिख्यो सब हाला । जरे पांडुसुत पावक ज्वाला ॥
परी निषादी सुतन समेतू । दुर्योधन विश्वासके हेतू ॥
पांडव वसे विपिन चिरकाला । कियो स्वयंवर द्रुपद भुवाला ॥
यदुपति सैन सहित तहँ आये । मीन वेधकर विजय कराये ॥

द्रौपदि अर्जुन काहँ देवायो। इंद्रप्रस्थ विभाग करायो॥
जाहि देखि सुर सकल सिहाहीं। संपति दियो युधिष्ठिर काहीं॥
रहहिं पांडवन संग मुरारी। संगहि शयनी संग अहारी॥

दोहा—येकहि सँग बोलब हँसब,येकहि संगशिकार।
प्रीति विवश पांडवनके, श्रीवसुदेवकुमार॥ ७॥

कवित्त—वनमें बसाइ मत्स्य देश प्रकटाय सैनयूहको जमाय तीर्थ अग्रज पठाइकै॥ भीष्मते बचाय पुनि द्रोणते बचाय कर्ण शक्तिते बचाय द्रौणि अस्त्र बिलगायकै॥ संकट विकट काटि कोटिन अठाट ठाटि आप समुझाइ भीष्म मुख समझायकै॥ रघुराज धर्मराजै राज दीन्ह्यों कीन्ह्यों काज देवकी को पूत सूत दूत कहवाइकै॥ १॥

दोहा—और पांडवनकी कथा, भारतमें विस्तार।
ताते इत संक्षेपते, कीन्ह्यों कछुक उचार॥ ८॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडे चतुर्विंशतितमोऽध्यायः॥ २४॥

अथ द्रौपदीकी कथा॥

दोहा—द्रुपदसुताकी कहतहौं, कछुक कथा मनरंज।
संतसुयश मधि जासु यश, ज्योंतड़ागमें कंज॥ १॥

भूप युधिष्ठिर विभव बड़ाई। सहि न सक्यो दुर्योधन राई॥
हरणताहि छल बल कर चाहीं। द्यूत सभा विरची गृहमाहीं॥
शकुनि सुयोधन कर्ण दुशासन। कीन्ह्यो मंत्र ठीक कुलनाशन॥
बोलि पठायो धर्म महीपै। आप बैठ धृतराष्ट्र समीपै॥
बरज्यौ अर्जुनादि सब भ्राता। दूत निरत मान्यौ नहिं बाता॥
आये धर्मसहित निज भाई। बैठे अंध नृपहि शिरनाई॥
तहाँ सुयोधन वचन उचारा। होइ जुवाँ नृप मोर तुम्हारा॥

राजाको प्रण रह्यो सदाहीं। जुवाँ युद्ध कहुँ भागे नाहीं॥
खेलन लग्यो युधिष्ठिर राजा। भीष्म द्रोण जहँ बैठि समाजा॥
निजवदि शकुनि सुयोधन कीन्ह्यों। छल पासा चलाइ सो दीन्ह्यों॥
क्रम क्रम तहँ नृप पांडुकुमारा। छल वश भूरि विभव निजहारा॥
तब धृतराष्ट्र दया उर धारी। दियो देवाइ वस्तु सब हारी॥
दोहा—तब दुर्योधन विलखि कै, पितहिं बहुत समुझाय॥
लग्यो द्यूत खेलन बहुरि, धर्म नरेश बोलाय॥ २॥
प्रथमहिं अस प्रणराखि लगायो।हमहि जो विधि यहि बार जितायो
होहुँ तौ सूर्य्य बर्ष बनवासी। येक वर्ष अज्ञात निवासी॥
जो अज्ञात वास हम जानै। वसहुँ विपिन पुनि ताहि प्रमानै॥
धर्म नृपति संमत सोइ कीन्ह्यों। पांसा शकुनि फेंकि तब दीन्ह्यों॥
छलवश हारि गयो महाराजा। देखि उठी तब सकल समाजा॥
कह्यो सुयोधन पुनि मुसकाई। होइ जौन कछु देहु लगाई॥
धर्म कह्यो अब तो कछु नाहीं। है द्रौपदि हमरे घरमाहीं॥
सो हम अबकी बार लगावैं। जो हारैं तो विपिन सिधावैं॥
पांसा डारि हारि गो सोऊ। महा अनर्थ कह्यो सब कोऊ॥
कह दुर्योधन सुनहु दुशासन। मानहुँ अब हमार अस शासन॥
जाहु द्रौपदी गहि लै आवहु। सभा मध्य सब काहँ देखावहु॥
सुनत दुशासन भूपति वानी। अंतःपुर गवन्यो अघखानी॥
दोहा—द्रुपदसुता ऋतुवंतिनी, रही येक पट धारि॥
कह्यो दुशासन वचन अस, तुव पतिगो तुव हारि॥ ३॥
बोल्यो सभा सुयोधन राजा। अब विलंब कर कछू न काजा॥
पांचाली सुनि अति अकुलानी। बोली मृदुल मनोहर वानी॥
हम ऋतुवती न जैबे लायक। तुम समुझावहु चलि कुरुनायक॥
दुःशासन कह तब कटु बानी। लै जैहौं मैं गहि तुव पानी॥

शंकित मौन भई पांचाली । पूरब पुण्य मोरभै खाली ॥
देवति द्रौपदी देखि दुशासन । जिमि बनमें लखि मृगी मृगाशन ॥
रहौ दूरि जनि आउ समीपै । मोर कहा कछु जाइ महीपै ॥
भयो कुपित सुनि कुरुपति भ्राता । धायो गहन केश दुखदाता॥
श्रीविभूति आयुष कुल केरी ।जारि अनल निज शुभ गति फेरी॥
कृष्णाकेश दुशासन पकरचौ । मानहुँ कालकूट भषि अफरचौ
लै गवन्यो द्रुपदिहि बरजोरा । आरत सोर मच्यो चहुँ वोरा ॥
ल्यायो सभामध्य पांचाली । जिमि गवास गहि गाइ विहाली ॥
दोहा—सभामध्य द्रुपदी खड़ी, भइ सो नयननवाइ ॥
तब दुर्योधन कटु वचन, कह्यो हरषि मुसकाइ ॥ ४ ॥
नृपति युधिष्ठिर गे तोहि हारी । अब तैं भई हमारी नारी ॥
हमैं अब तोहिं बनाउब दासी । तू नहिं होइ पांडवन आसी ॥
असकहि ऊरू ठोंक्यो राजा । बैठी द्रुपदी इत तजि लाजा ॥
सभासदन तब वचन सुनाई । कृष्णा कह्यो नीति दरशाई ॥
मैं तौ पांचौ पांडव नारी । कैसे येक युधिष्ठिर हारी ॥
उतर सभासद देहु हमारो । होइ जो सेवित धर्मतुम्हारो ॥
रहे मौन सब जानि सुनीती । तब दुर्योधन कह्यो कुरीती ॥
वाकजाल तजु द्रुपदकुमारी । हमहिं अछत को तोहिंउबारी॥
कही कर्ण तब अनुचितबानी । सुनहु दुशासन तुम बड़ज्ञानी॥
द्रुपदसुता कहँ सभा मँझारी । वसनछोरि करि देहु उघारी ॥
यह मम शत्रुन परमपियारी । लेहिं दशा निज आंखि निहारी
नहि मानत भूपति करशासन । बसन विगत करि देहु दुशासन
दोहा—सुनि सूतजके वचन अस, दुश्शासन हरषान ।
करन लग्यो तिय विगत पट, हठि शठ नीति निदान
धर्म धुरंधर धर्म नृप, भीम महाबलवान ।

बीर सव्यसांची भुवन, जेता सुयशमहान ॥ ६ ॥
तथा नकुल सहदेव दोउ, धीर धनुर्धर धाक।
धीर धर्म धनुधरनमें, भीष्म भूप भटनाक ॥ ७ ॥
धनुर्वेद अरु धर्मके, द्रोणाचार्य अचार्य।
चिरंजीव धन धर्मके, आचारज कृप आर्य ॥८ ॥
औरहु विदुरादिकरहे, सकल सभा सद्वीर।
कोउ नहिं वारन करत भे, पांचालीकी पीर ॥ ९ ॥

कवित्त—सभासद सकल सयानपन सूनदेखि सारमेय मध्यमें मृगीसी भैविहालहै ॥ भीमको भरोसो भाग्यो पारथ धनुष त्याग्यो यम को न जाग्यो निज विक्रम विशालहै ॥ रक्षक न कोई तहाँ तक्षकसे बैठे सबै पक्षिन अकक्षण प्रत्यक्ष पेखि हालहै ॥ रघुराज द्रौपदी विचारयो मेरो रखवारो दीनके दयालु आज देवकीको लाल है ॥ १ ॥ कोई ना सगैया कोई बातना कहैया कोई गति ना पुछैया वोरहूको ना तकैयाहै ॥ वादिभे सहैया हाय दैया नागोसैंया कोई मुखको देखैया नाहिं सीखकोदेवैयाहै॥ द्रौपदी विचारै रघुराज आज जाति लाज सबहैं घरैया पै न टेरको सुनैयाहे ॥ विपति हरैया मेरी पतिको रखैया एक द्वारिका बसैया बलभद्रजीको भैयाहै ॥ २ ॥

दोहा—अस विचारि मनमें विलखि, दोऊ हाथ उठाइ ॥
कृष्णा कृष्ण पुकारती, कहांगये हरि हाइ ॥ १० ॥

कवित्त—देवव्रत द्रोण कृप विदुर विकर्ण आदि सकल सभासदनमें धाभई भोरी है॥ उचित न भाषै नाहिं माषै इन पापिनपै राखै दुर्योधनकी भीति नहिं थोरी है॥ मेरे पति पांचौ पांडुपुत्रनकी पेंच नाहिं त्राता नहिं दीसे जौन राखै पति मोरी है ॥ रघुराज आज होंतौ परी कुसमाज बीच लाज राखिबे की यदुराज आशतोरीहै३

देवता दनुज मुनि मनुज उरग आधिवादिभे मनाये नेकु मोत-नन हेरीहै ॥ कौनको पुकारैं काकी शरण सिधारैं दूजो दृग ना निहारैं सदा रावरेकी चेरीहै ॥ ऐंचत वसन दुर्योधन अनुज दुष्ट भीष्मादि बीरनकी दैव मति फेरीहै ॥ होतिहै अपतिवारै कौन मो विपति आज रघुराज राखो यदुपति पति मेरी है ॥ ४ ॥ रघुराज दूजो द्वार अबलों निहारचो नाहिं छोड़ि पदपंकज न कहूं मति गईहै ॥ रावरेकी दासी रही भीति काहूकी न गही तेरे भुज छाँहनके ठामहीमें ठईहै ॥ जानिकै अनाथ मोहिं मूढ़ कुरुनाथबंधु सभामध्य मेरी पति चाहै आजु लईहै ॥ पक्षिराज पक्षिन कीहेरुहा अपति करै हाय यदुनाथ ऐसी नई कहँभई है ॥ ५ ॥ गिरिगई गरुई गदा धों गिरिधारी जूकी कैधौं कौनौ जंगमै सरंग कहूं ह्वैगयो ॥ गाँठिलोठयो है खड्ग मोथराकै चक्र भयो कैधों गरुडासनको गरुड़हू खवै गयो ॥ येरे दई कैसीभई दयाधौं विसारि दई मेरी ना पुकार गई नाथ काह ज्वैगयो ॥ रघु-राज कैधों आज द्वारिकाविलासी जूको विरद बखान हाय हांसी हेत ह्वैगयो ॥६॥ संकट सियाको सुनि सागरमें सेतु बांधि सकुल दशानन संहारि शोक टारचोहै ॥ ग्राहते ग्रसित गाढ़ी गैयरगो हारि सुनि गरुड़ विहायकै गोविंदजू उधारचो है ॥ रुक्मिणीकी लाज राखिवेके हेत रघुराज द्वारकाते दौरि सर्व राज गर्व गारचो है ॥ कौन अपराधपरचो कहाँ करुणाको धरचो द्वारकाविलासी मेरी सुरति विसारचो है ॥ ७ ॥ आरतकीआरति निवारतनि-हारत मेदारत दुसहदुखदेवेतरोबानई ॥ सेवकको सांकरो सहब-नहिं रीति रही रघुराज सकलपुराणन प्रमाणई ॥ तेरही अछत मेरी अपतिपतित करै विपति विनाशनकी वानि विसरा दई ॥ दीनबंधु सहज सनेहिन सनेहसिंधु करुणानिधा

न तेरी करुणा कहां गई ॥८॥ जानतीहूं जियमें जरूर मशहूर यह कुरु कुल संतति विशेषि वधि जावैगी ॥ परम प्रचंड चक्र चपल चलाइ जीति दैहौ सब राज्य धर्मराजकी कहावैगी ॥ ऐहौ दौरि द्वारकाते द्वारका विलासी वेगि रघुराज पांडुपुत्र कीर्ति क्षिति छावैगी ॥ फेरि पछितैहौ मोहिं बहुत बुझैहौ यदुराज लाज गये पुनि लाज नहिं आवैगी ॥ ९ ॥

दोहा—शाल्व समर हित गवन किय, जब वसुदेव कुमार ।
सिंधुतीर यदुवीर श्रुति, द्रुपदी परी पुकार ॥ ११॥
जान्यो द्रुपदीको हरी, हरत दुशासन चीर ।
सभा मध्य अनरथ महा, दौरयो द्रुत यदुवीर॥१२॥

कवित्त—कृष्णाको कलेश काटिवेको कपटीन कृत कै गयो प्रवेश पटदासनको सोंपदी ॥ खैंचत दुशासन वसन बाढ्यो बे प्रमाण कीन्ह्यों निजदासीको समुद्र दुख गोपदी ॥ कौतुक विलोकैं सबै सभासद रघुराज पांडुपुत्र नारीको बिहारी सारी गोपदी ॥ द्रौपदीकी दुपटीकी दुपटीकी द्रौपदीहै द्रौपदी न दुपटी की दुपटी न द्रौपदी ॥१०॥ प्रथप सुरंग रंग कहूं पुनि पीतरंग श्वेत श्यामरंग पट निकसन लाग्यो है ॥ दोऊ कर कर्षत दुशासन दुकूल दुष्ट रुष्ट बल पुष्ट तऊ तनक न खाग्यौहै ॥ सभा मध्य पटको पहार लाग्यो रघुराज भीष्मादि वीर उर अचरज जाग्यो है ॥ भभरि भ्रमतिहारि श्रमित लजाइ जाइ बैठ्यो दूर कूर मनो सरवस त्याग्यो है ॥ ११ ॥

दोहा—तब भीषम बोल्यो वचन, सुनहु सबै मतिहीन ।
द्रुपदी पति राख्यो हरी, पतितनकी पति लीन॥१३

तब द्रुपदिहिं लै पांचौ भाई । चले विपिन अमरष उर छाई ॥ बारहिं वर्ष बसे वनमाहीं । सहत कलेश लेश सुख नाहीं॥

सोई द्रुपदी कर अपराधा । कौरव कुल भो नाश अगाधा॥
रहे न पांडु पुत्र वन योगू । पै देखत द्रुपदी दुख भोगू ॥
रक्षा कियो न धर्म विचारी । हरिजन रक्षन दियो बिसारी ॥
ताते रहे यदपि बध लायक । द्रुपदी दुख विचारि यदुनायक॥
कियो पांडवनको बध नाहीं । दियो बास तिनको बनमाहीं ॥
बरस्व धर्मते भगवत धर्मा । यह जानहु हरि को हठि मर्मा ॥
भीष्म द्रोण कृप कर्ण प्रवीरा । धनुर्वेद धारक रणधीरा ॥
परी पीठि रण महँ कहुँ नाहीं । धर्म धुरंधर भूतलमाहीं ॥
समर सुरासुर जीतनवारे । ते भट सहज समर गे मारे ॥
सो केवल द्रुपदी अपराधा । नत यमहू करि सकत न बाधा

दोहा—धर्मराजको राज पद, कुरुकुलको संहार ॥
उभय हेतु द्रुपदी भई, और न कछू विचार ॥ १४ ॥
पांडुपुत्र यदुनाथके, भये प्राणते प्यार ॥
सोउ हेतु है द्रौपदी, और न कछू विचार ॥ १५ ॥
और द्रौपदीकी कथा, भारतमें विस्तार ॥
तिनमें येक कथा कहौं, निजमतिके अनुसार ॥१६॥
येक समय हस्तिननगर, करत सुयोधन राज ॥
दुर्वासा आवत भये, जोरि मुनीन समाज ॥ १७ ॥

शिष्य सहसदश सोहत संगा । अनल तेज तप दुर्बल अंगा ॥
सुन्यो सुयोधन मुनि आगमनू । लीन्ह्यों आगूतें करि गमनू ॥
सुखद सदन में वास करायो । अशन यथारुचि रुचिर जेवायो॥
शांत रह्यो कामानुज मुनिको । सेवन कीन्ह्यो गुनि मुनि धुनिको
सकल करन तोषित तपसीकी । मान्यो मुनि सेवा नृप नीकी॥
बोलि समीप कह्यो अस बानी । मांगु महीप जो मति हुलसानी॥
कह्यो सुयोधन यह बर देहू । जो राखहु मोपर मुनि नेहू ॥

जौन पांडु पुत्रन हित मानी । दियो भानु भाजन सुखदानी॥
तेहि भाजन जब द्रुपदकुमारी । भोजन करिकै धरै पखारी ॥
तब तुम पांडुसुतन ढिग जाहू । यह वर देहु मोहिं मुनिनाहू ॥
एवमस्तु कहि तब दुर्वासा । चले पांडुपुत्रनके पासा ॥
साधु विप्र अरु पति जेवांई। तिन प्रसाद जब आपहु खाई॥

दोहा–भानुदत्त भाजन सुखद, द्रुपदकुमारी धोइ ॥
बैठी सुचित सुगेहमें, पतिपद पंकज जोइ ॥ १८ ॥

ताही समय सहसदशदासा । लिये संग आये दुर्वासा ॥
मुनि आगम सुनि पांडुकुमारा । लियो कछुक चलिकरिसतकारा
करि प्रणाम पदपद्म पखारी । धारयो शीश बंधु युतवारी ॥
करि विनती आश्रम लै आये । पूजन करि बहु विधि शिरनाये॥
विनय कियो मुनि भोजन करहू। नाथ विनय यह मम मन धरहू
मुनि प्रसन्न ह्वै वचन उचारे । अहो युधिष्ठिर दास हमारे ॥
भोजन भवन तिहारे करिहैं । तिहरे वचन कौन विधि टरिहैं॥
मैं मध्याह्न संध्या नहिं कीन्ह्यो। अबलों नहिं मुखमें जल लीन्ह्यो
ताते सरित समीप सिधैहौं । नित्य नेम पूरण करि लैहौं ॥
भोजन करिहौं पुनि इत आई । जबलौं राखहु पाक बनाई ॥
भूप कह्यो भल कह्यो मुनीशा । आवहु नाइ ईशपद शीशा ॥
नित्य नेम सब नाथ निबाही । करहु आइ पुनि मोहिं उछाही॥

दोहा–दुर्वासा मुनि नृप वचन, अति अचरज उर मानि ॥
मोहिं खवैहै कौन विधि, भूपति मति बौरानि ॥ १९॥

गे सरि जब मुनि मज्जन हेतू । द्रुपदिहिं बोलि पांडु कुलकेतू॥
कह्यो वचन भोजन रचि देहू । दुर्वासहिं खवाइ यश लेहू ॥
शिष्य सहसदश संग सोहाहीं । पूरण अशन देहु सब काहीं ॥
संध्या हित मुनि सरित सिधारे। आवन चहत. क्षुधा उर धारे ॥

जो विलंब होई कछुप्यारी। दै मुनि शाप सबन कहँजारी॥
कंत वचन सुनि द्रुपदकुमारी। भीति विवश तनु सुरति विसारी
चकित भई कछु कही न बानी। वज्र पात लखि जनु बौरानी॥
बैठी भीतर भवनहिं जाई। लगी विचार करन दुखछाई॥
भानुदत्त भाजनमहँ भोजू। मोहि खाये बिन प्रगटत रोजू॥
कैचुकती भोजनमें जबहीं। भाजन भोजन देत न तबहीं॥
अतिथि साधु पति सबनि खवाई।मैंहूं सुचित भई पुनिखाई॥
अब भोजन मिलिहैं केहि भांती।आयो क्षुधित अतिथिउत्पाती॥

दोहा–विन पाये भोजन विलखि, करिहैं कोप कराल॥
पतिसंयुत मोहिं शापदै, करी भस्म तत्काल॥२०॥
यह विचारि शंका उदधि, मगन द्रौपदी चित्त॥
अब न उपाय दुतीय कछु, गयो चित्त हरिजित्त॥२१॥

कवित्त–साहेब कौन समर्थहै दूसरो जो यहिकालमें काल निवारिहै॥ आकसमात जग्यो उतपात लग्योहै निपातको-वात सुधारिहै॥ कोशरणागत दीनन मीनन वारि विहीन पयो-निधि डारिहै॥ श्रीरघुराज विना यदुराजको संकट कंटक को टि उखारिहै॥ १॥ देवकिनंदन दुष्ट निकंदन दीनन वृंदनके दुखहारी॥ हेकरुणाकर सेवकसांकर देखिन कापर प्रीति पसारी तेरे अनुग्रह अंबुकी सींची दहै लतिका मुनिको पदवारी॥ श्रीरघुराज गरीबनेवाज रमापति तूपति राखौ हमारी॥२॥ आज-लौं ऐसि भई न कहूं सुरपादपके तरदारिद आवै॥ पक्षिनके पतिके पदको गहे आशु उरंगमते कहुँ जावै॥ सावनके बनकी सबुजीवन देखत दीह दवारि जरावै॥ श्रीरघुराज सुनो यदुराज विलोकत तोहिं को मोहिं सतावै।३। वेद पुराण प्रमाणवने अरु लो कहू लोग प्रमाण कहैगो। रावरी वानि नहीं विसरानि यही जिय जानि भरोस रहैगो॥ श्रीरघुराज सुनो यदुराज जो नेसुकरावरे

नेह नहैगो ॥साहेब तूसे समर्थहै सो सपन्यो नहिं सेवक शोच सहै गो ॥४॥ आरत आरति वेगि निवारत दीन पुकारतही पगुधारे॥ साहेब शूर समर्थ सुजान आपन्न प्रपन्नके पालनहारे ॥ शोच विमोचन शोचि करो अवलों न सकोच सनेह विसारे ॥ श्री-रघुराज गरीबनेवाज केही गोहरावैं कहाय तिहारे ॥५॥ मानस-वासिनि हंसिनिको उपकार कहो किमिकै सकै खूसर ॥ त्यों पुनि वोये न बीज जमै जहँ होत है ऊपर भूपर ऊसर ॥ दानव देव चराचर जीव भये तव मायाके धूम ते धूसर॥ तोहिं विहाइन दोखे परै रघुराज दुनीमे दयानिधि दूसर ॥६॥ येकई आश भरोसोहै येकई है बल विक्रम येकई मेरे ॥ येकई योग संयोगहै येकई और कुरोग कुयोग घनेरे ॥ त्रासको नाशको शोच कछू नहीं येकई शोच लगै हियहेरे ॥ सांकरेमे रघुराज दयानिधि आये नहीं हरि द्रौपदी टेरे ॥ ७ ॥ काम पर्‌यो जवहीं जब जैसो तहाँ तवहीं तव धाये तुराई ॥ दोष अदोष गन्यो न हरी विरदावलि सत्य करी श्रुति गाई ॥ कौनसी चूक विचारि हमारि मुरारि गो हारि नहीं मनलाई॥श्रीरघुराज गरीबनेवाज दयानिधि काहे दया विसराई ॥ ८ ॥जब हाटककश्यप दैत्य महामन कोप गहे करमे करवाले ॥ देखि परै हगमें नहिं दूसरो जो अब आइकै संकट घालै ॥ बाँचि सकै न अनेक उपाय किये द्रुपदी प्रहलाद उतालै॥ खंभकुटी नरसिंह विना प्रगटे रघुराज वा देवकी लालै ॥ ९ ॥ गाढ़ो ग्रस्यो गजको जव ग्राह करी यदुनाह त्वरा तव जैसी ॥ मेरईवार सभामधिमे पतिराखी हरी करिकै त्वरा वैसी ॥ श्री रघुराज सुनो यदुराज सोई तू दयानिधि दीनहौ जैसी ॥ दाया सोई तुव मेरो सोई दुखहे हरि तेरी त्वरा भई कैसी ॥ १० ॥ कोपित है दुरवासा रुखानल चाहै पतीन समेत जरावै ॥ चाहै

अनेक परै पवि पात महामुनि क्रोधी मही उलटावै ॥ हौं रघुराज गह्यो व्रतयों हरि वाहन छाहन जन्म सिरावै ॥ द्वारकावासी तिहारि ये दासी कहौ द्रुपदी केहिको गोहरावै ॥ ११ ॥ पूरुवजन्मके कर्महीके वशकै कछु कालहीकी कठिनाई ॥ कौन हू योग कुयोग बसात कुरोगको भोग परयोबरिआई॥और उपाय न औरहू औषध नेकु परै दृग मोहिं देखाई ॥ श्रीरघुराज गरीब नेवाज विना यदुराजको आजु सहाई ॥ १२ ॥ तेरे भुजानि भरोस भरी भभरी भवभीतिहूंको नहिं भारी ॥ आजलौं एकई जान्यों तुम्हैं जिमि चातक चाहत स्वातिको वारी ॥ साँवरेहू न सनेह सकोच तज्यो अबलों नहिं वानि विसारी ॥ हेयदुराज तुम्हैं अछते रघुराज दशा यह होति हमारी ॥ १३ ॥ कैधौं पुकार गई उतलों नहिं कैधों बिचारयो नहीं निज दासी ॥ सेवककी शरणाई तज्यो किधौंकी करुणाईते ह्वैगे निरासी ॥ हाय हरी तुम कैसे भये निठुराई कहां यह पाईहै खांसी ॥ द्वारिका वासी सुनो रघुराज न लागति लाज जो होयगी हाँसी ॥ १४॥ जोनहिंएहैं वचैहैं नहीं पछितैहैं सही वसुदेव दुलारे॥ दीनदयालु कहैहैं किते बिरदावली डारत काहे विगारे ॥ हौंतो मरी अफसोस भरी पै वनी नहिं जो निज वानि बिसारे ॥ श्रीरघुराज गरीबनेवाज गरीबगोहारि सुनै नहिं कारे ॥ १५ ॥

दोहा—रहे रुक्मिणी सेजमें, श्रीवसुदेव कुमार ॥
द्रुपदसुताकी जाइ तहँ, कानन परी पुकार ॥ २२ ॥

कवित्त ॥ चौंकि उठ्यो चितसों चहूँकित चवाइ रह्यो चितै रुक्मिणी की वोर चैन विसराइगो ॥ प्यारी पान देत पाणि पंकज सों लेत हीमे कृष्णाकी पुकार सुनि कृष्ण अतुराइगो ॥ करन पयान हेतु पलँग सों येक पाउँ पुहुमी उतारयो

यतनोईलो देखाइगो ॥ रघुराज द्रुपदसुताहीके समीप सोई पाणि लीन्हे वीरा यदुवंश वीर आइगो ॥ १६ ॥

दोहा—सुनि पुकार पांचालिकी, यक पग पलँगउतारि ॥
दूजोपद द्रुपदीकुटी, दीन्ह्यों पुहुमि मुरारि ॥ २३ ॥

देखि नाथ कहँ द्रुपद कुमारी। चरण गिरी तनु सुरति विसारी॥
बार बार ढारति दृगवारी। तनु पुलकित युग पलक निवारी॥
करि छवि पान विनय पुनि कीन्ही।धरणि धन्य मोको करि दीन्ही
कसन खबरि लीजै करुणाकर। तुमहीं अहौ दयाके आगर॥
कह्यौ नाथ तब वचन पियूषा। द्रुपदसुता लागी मोहिं भूषा॥
भोजन दे मोहिं तुरत मँगाई। विनभोजन अब कछु न सोहाई॥
द्रुपदी कह्यो सुनहु यदुनाहू। जानि जानि कैसे भषलाहू॥
भोजन भवन जो होत हमारे। तो कैसे जिय परत खभारे॥
काहे कटुक वचन हम कहती।अस श्रम प्रभुहि करावन चहती
भोजन हेतु भानु मोहिं भाजन। दियो जौन सुन रुक्मिणिभाजन
ताको है यहि भांति प्रमाना। जबलगि मैं खाऊं भगवाना॥
तबलगि प्रगटत भोजन सोई। क्षुधित रहत इत आय न कोई॥

दोहा—जब मैं भोजन करचुकौं, अतिथिन पतिनखवाइ॥
तब भोजन प्रगटत नहीं, कीन्हें कोटि उपाइ॥ २४॥

ऐसो जानि भानुवरदाना। करत रही मैं तेहि प्रमाना॥
अशन कैचुकी मैं जब आजू।मुनि आयो तब जोरि समाजू॥
तुम्हें न कछु छिपान गिरिधारी। विनय करौं मैं कहा उचारी॥
तब हरि कह्यो सुनहु छविरासी। उचित न करब क्षुधित सोंहाँसी
अतिशय भूखलगी मोहिं काहीं। तुम हाँसी करि कीजत नाहीं॥
जो कछु होइ सोइ मोहिं देहू। विन दीन्हे मनिहौं नहिं केहू॥

धर्मराजकी हौ तुम रानी । कसनहिं भोजन देहु सयानी ॥
बहुतवार लगि हमहिं दुराये । कैसे भूख मिटी विनखाये ॥
ल्यावहु ढूंढ़ि जौनघर होई । हम अघाइ जैहैं भखिसोई ॥
द्रुपदी कह्यो हाइ दुखदूनो । हरिभोजन माँगत घर सूनो ॥
जौन रोग हित तुमहिं बोलायो । तौन रोग अब तुमहु लगायो ॥
हरि कह दे भोजन मोहिं प्यारी। और बात नाहिं सुनब तिहारी॥

दोहा—बहु व्यंजनप्रद भानुजो, भाजन दीन्ह्यो तोहिं ॥
ह्वैहै कछुकविशेषतेहिं, सो देखरावै मोहिं ॥ २५ ॥

बहुतकाल हाँसी तुमकीन्ही । बहुत क्षुधा बाधा मोहिं दीन्ही॥
तब पांचाली कही दुखारी । सो भाजन मैं धरचोपखारी ॥
मोर वचन मानहु सति नाहीं । ल्याइ देखाऊं भाजन काहीं ॥
अस कहि तब उठि द्रुपदकुमारी ।भाजन ले आगे दिय डारी ॥
हरिभाजन कर लियो उठाई । हेरन लगे हाथ तेहि नाई ॥
हेरत हेरत भाजन काहीं । पायो शाक पत्र तेहि माहीं ॥
शाक पत्र लखि कह्यो मुरारी । कृत कृष्णा तैं झूठ उचारी ॥
यह तो मोहिं तोषकर भूरी । यहै विश्वको जीवन मूरी ॥
शाक पत्र प्रभु निज मुखडारयो।विश्व भरण अस वचन उचारयो
शाकपत्र जग तोषक होई । क्षुधित रहै यह समय न कोई ॥
अस कहि प्रभु द्रुपदी सन भाखे।अबलों मुनिन नेउति कस राखे॥
भीमहिं भेज लेहु बोलवाई । अब विलंब केहि कारण लाई ॥

दोहा—प्रभुके वचन प्रतीति करि, द्रुपदी भीम बोलाइ ॥
कह्यो जाहु लै आवहु, दुर्वासै पधराइ ॥ २६ ॥

भीमहु भोजन जानि तयारी । चले बोलावन हित तप धारी ॥
रहे करत संध्या दुर्वासा । संयुत दशहजार निज दासा ॥
सबकहँ आवन लगी डकारा । मनहुँ कंठ भर किये अहारा ॥

कहहिं एक एकन श्रुति लागी । हमरी भोजनकी रुचि भागी ॥
कहत कहत माच्यो अस सोरा। सबके उदर अजीरन घोरा ॥
कहे वचन दुर्वासा काहीं । हम सबकें भोजन रुचि नाहीं ॥
दुर्वासहुँ तब वचन उचारा । हमहूको आवती डकारा ॥
महा अनर्थ भयो यहि काला । नेउता कियो धर्म महिपाला ॥
दशहजार जन भोजन साजू । बनवायो मेरे हित आजू ॥
भोजन रुचि तनकहु जिय नाहीं। कौने पेट उहां चलि खाहीं ॥
जाइ उतै भोजन नहिं करिहैं । हमपर दोष धर्म नृप धरिहैं ॥
अन्न सुरति आवति बोकलाई । कहो सबै का करैं उपाई ॥

दोहा—भये मृषा वादी सबै, पर्‍यो परम अपराध ॥
व्यंजन गये खराब बहु, हमैं न भोजन साध ॥ २७ ॥

धर्म स्वरूप कृष्णकर दासा । भूप युधिष्ठिर तेज प्रकासा ॥
जबते अंबरीष महराजा । मोपर कीन्ह्यो कोपदराजा ॥
तबते हरिदासन सब काला । डरत रहौं मैं जैसे काला ॥
अबलों भूली सुरति न मोही । ह्वै हौं नहिं हरिदासन द्रोही ॥
ताते जो निज चहौ भलाई । तौ सब भागौ पेलि पराई ॥
यतना सुनत शिष्य गण सिगरे । भागत भे दशहूं दिशिसडरे ॥
भागत जात डकारत जाहीं । पुनि पाछे चितयो कोउ नाहीं॥
दुर्वासहु अकेल तब भागे । मनहुँ युधिष्ठिर पीछे लागे ॥
भागि गये मुनि गण द्रुत दूरी । अफरे मनहुँ खाय भरि पूरी॥
भीमसेन तेहिं थलमहँ गयऊ । एकहु मुनि नाहिं देखत भयऊ॥
हेरन लग्यो चहूंकिततहँवां । संध्या करत रहे मुनि जहँवां॥
गंगातीर हेरि सब डार्‍यो ।एकहु मुनि नहिं नैननिहार्‍यो॥

दोहा—अतिशय शोकित दुखित तहँ, भयो भीम भय मानि॥
धर्म निकट आयो बहुरि, कह्यो जोरि युग पानि२८॥

नाथ मिले मुनि मोहिं न हेरे। कहां गये कहँ कियो वसेरे॥
दुखी युधिष्ठिर भये तहांहीं। का अपराध गण्यो मोहिं माहीं॥
अथवा छल करिहैं मुनिराई। ऐहैं बहुरि विलंब लगाई॥
अस विचारि तहँ पांचौ भाई। बैठे मुनि आगम मनलाई॥
जो ऐहैं भोजन नहिं पैहैं। मुनि देशाप विशेषि जरैहैं॥
परिखे परिखे भइ अधराता। मुनि आयो नहिं जोरजमाता॥
कृष्ण कुटीते तब कढ़ि आये। पांडव देखि मुदित अति धाये॥
लपटि गये पद पांचहु भाई। कृष्ण युधिष्ठिर को शिरनाई॥
यथा योग पुनि मिलि यदुराई। पूछ्यो प्रमुदित कुशल भलाई॥
पांडव कह्यो कुशल तव दाया। कहाँ आप आये यदुराया॥
हरि कह द्रुपदी मोहिं बोलायो। दुर्वासाते भीति सुनायो॥
सो नाहिं भीति करहु नृपराई। आप तेज मुनि गयो पराई॥

दोहा—धर्म धुरंधर जे पुरुष, तिनहिं विपति कहुँ नाहिं॥
शासन दीजै भूपतो, सपदि द्वारका जाहिं॥ २९॥
पांडव तब कर जोरिकै, विनय कियो मृदुबैन॥
हमरे प्रभु जहँ आपसे, तहँ हमको कछु भैन॥३०॥
दुख समुद्र गोपद सरिस, तरिहैं हम सब काल॥
यहि विधि कृपा किये रहौ, है कृपालु नँदलाल॥३१॥
माँगि विदा पांडवन सों, गे द्वारका मुरारि॥
पांडव द्रुपदी सहित तहँ, निवसत रहे सुखारि॥३२॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडे पंचविंशतितमोऽध्यायः॥ २५॥

अथ जनार्दनब्राह्मणकी कथा॥

दोहा—एक जनार्दन नामको, रह्यो विप्र मतिवान॥
तासु कथा वर्णन करौं, है हरिवंश पुरान॥ १॥

शाल्व नगर अतिशय अभिरामा। नृपरह ब्रह्मदत्त असनामा॥
धर्मात्मा इंद्रिय जित ज्ञाता। कारक यज्ञ अनेक विख्याता॥
ताके रहीं सुमुख द्वै रानी। शील सुछवि सद्गुणकी खानी॥
भूपति मित्र मित्र सहनामा। रह्यो विप्र इक अति मतिधामा॥
विप्रहुको अरु राजहु काहीं। दियो एकहू सुत विधि नाहीं॥
कियो राज चिर नृपकुलकेतू। विप्र मित्र सह मित्र समेतू॥
एक समय नृप मानिगलानी। वैष्णव यज्ञ करन मन आनी॥
शंभु प्रसन्न हेतु महिपाला। कीन्ह्यों वैष्णव यज्ञ विशाला॥
तैसे विप्र मित्र सहनामा। कृष्ण प्रसन्न होन करि कामा॥
कीन्ह्यों वैष्णव यज्ञ महाना। वेद कथित करि सकलविधाना
जानि दुहुन कहँ परम प्रपन्ना। नृप द्विज हर हरि भये प्रसन्ना॥
भूपतिके मख शंभु सिधाये। विप्र यज्ञमें जगपति आये॥

दोहा—राजाशंकर चरणपरि, माँग्यो यह वरदान।
युगलप्रतापी पुत्र मो, देहु देव ईशान॥ २॥

तैसे विप्र मित्र सह सोई। हरिसों माँग्यो वर इतनोई॥
देहु दयानिधि सुतनिज दासा। और न मेरे कछु हिय आसा॥
दियो नृपहि हर युगलकुमारा। अजर अमर बलवान अपारा॥
तैसहि द्विज सुत दियो मुरारी। विषय विरक्त भक्तिअधिकारी॥
भूप पुत्र युग भे बलधामा। भयो हंस डिंभक असनामा॥
भयो विप्रके जौन कुमारा। तासु जनार्दन नाम उचारा॥
द्वै सुत नृपके इक द्विज केरो। तीनिहुँ भयो सनेह घनेरो॥
शस्त्र शास्त्र पढ़ि भये सुजाना। तपकरिवे वन किये पयाना॥
हंस और डिंभक दोउ भाई। कीन्ह्यों तप शिव पद मनलाई॥
विप्र जनार्दन हरिपद प्रेमी। भयो भक्ति याचनको नेमी॥
पंचवर्ष तीनो मतिमाना। हरि हर तप कीन्ह्यों सविधाना॥

हंस और डिंभकरह जहँवां। ह्वै प्रसन्न आये शिव तहँवां॥
दोहा—मांगु मांगु वर हर कह्यो, तुम्हरे परम सप्रीति।
करी तपस्या कठिन अति, करि मम चरण प्रतीति॥३॥
तबैं हंस डिंभक दोउ भाई। फिरि जन्म मानहु जगपाई॥
उठे पुलकि दोऊ मतिवाना। शिवहिं दंड सम कियो प्रणामा॥
स्तुति किय अनेक लैनामा। जय हर भालचंद्र अभिरामा॥
बहुरि दोऊ मांग्यो बरदाना। जितैं सुरासुर हे भगवाना॥
दिव्य अस्त्र सिगरे मोहिंदेहू। मीचु न होइ युद्ध महँ केहू॥
एवमस्तु शंकर कहि दीन्ह्यों। बहुरि कृपा अतुलितहरकीन्ह्यों॥
बोले वचन सुनहु ममदासा। तुम्हरे रक्षन हित तुवपासा॥
रहिहैं सदा मोरगण दोई। रिपुतोहिं जीति सकी नहिं कोई॥
रहिहैं सदा तुम्हार सहाई। तिनहिं विलोकत शत्रु पराई॥
विरूपाक्ष कुंडोदर नामा। रहिहैं तुवसमीप सब यामा॥
अस कहि भे हर अंतरधाना। हंस डिंभको अति सुखमाना॥
पहिरि कवच शंकर परसादा। धारिपरशु करशमनविषादा॥
दोहा—उभय भवन कहँ गवन किय, दोउ हर गण तिन संग॥
आइ सदन पितु वंदना, कीन्ह्यों वोज अभंग॥ ४॥
राजत रुचिर त्रिपुंड्र ललाटा। भस्म सकल तनु अद्भुतठाटा॥
सकल अंग रुद्राक्षन माला। जटाजूट सुरसरित विशाला॥
आठपहर शिवशंभु उचारत। व्याघ्र चर्म कर अंबर धारत॥
यहिविधिनिवसन लगे सदाई। प्रबलहंस डिंभक दोउ भाई॥
उतै जनार्दन काननमाहीं। हरिप्रसन्न हित किय तपकाहीं॥
हरे राम राघव रघुवंशी। हरिकेशव यादव यदुवंशी॥
यही विप्र रसना रट लागी। हगजलढारत हरि अनुरागी॥
तनुकी सिगरी सुरत बिसारी। भजत मुकुंद कृष्ण गिरिधारी॥

पंच वर्ष यहि भाँती। जपत नाम हरिको दिनराती॥
प्रेम नेम द्विज केर निहारी। प्रगट भये प्रसन्न गिरिधारी॥
प्रभुको निरखि विप्र सुख पायो। दौरि चरण पंकज शिरनायो॥
जय जय यदुवर कृपानिधाना। तुम्हहि गरीबनेवाज न आना॥
दोहा—कसन करहु निज दासपर, दया दयानिधि नाम॥
यहि सागर संसारते, आसु उधारक श्याम॥ ५॥
करी प्रीति युत स्तुति भारी। प्रेम मगन दृग ढारत वारी॥
ह्वै प्रसन्न हरि वचन उचारा। माँगहु जो मन होइ तुम्हारा॥
हम प्रसन्न तुमपर महिदेवा। कीन्ही कपट हीन मम सेवा॥
द्विज तब कह्यो जोरि कर दोऊ। पाये पर मांगै नहिं कोऊ॥
याते अधिक काह अब पैहौं। तुम कहँ नाथ छोंड़ि कहँ जैहौं॥
जो मोपर प्रभु कृपा करीजै। तो निज चरण प्रेम मोहिं दीजै॥
साधुन संग देहु भगवाना। अब नहिं मोर मनोरथ आना॥
विप्र वचन सुनि मुदित मुरारी। मिले दौरि दृग ढारत वारी॥
कह्यो भक्ति तोहिं होइ हमारी। ऐहै मम पुर सपदि सिधारी॥
असकहि अंतर हित प्रभु भयऊ। विप्रहु मुदित भवन चलिगयऊ॥
आइ भवन ठानी असरीती। क्षण क्षण बढति कृष्णपद प्रीती॥
ऊरध पुंड्र ललाट विराजत। द्वादश तिलक अंग छवि छाजत॥
गले पाणि तुलसी करमाला। शील सुभाव सनेह रसाला॥
दोहा—यहि विधि डिंभक हंसदोउ, और जनार्दन विप्र॥
बसै शाल्वपुर महँ मुदित, यशी भये जग क्षिप्र॥ ६॥
तहाँ हंस डिंभक दोउभाई। एक समय निज सैन्य सजाई॥
विप्र जनार्दन लै सँग माहीं। गये शिकार हेतु बनकाहीं॥
खेलि तहां बहु भांति शिकारा। बाघ वराहन हन्यो अपारा॥
बिहरत बिहरत विपिन ललामा। बीति गयो तिनको युग यामा॥

तृषित सैन्य युत भे दोउवीरा। आवत भे पुष्करके तीरा॥
करि जल पान कियो विश्रामा। तहँ रहे अगणित तप धामा॥
सुनत वेद ध्वनि दल तहँराखी। दोऊ द्विज दर्शन अभिलाखी॥
लै सँग मीत जनार्दन काहीं। गे मुनि आश्रम मंडल माहीं॥
निरखि मुनिन दोउ करहिं प्रणामा। आशिष देहिं मुनीश ललामा॥
करहिं ऋषिन सब विनय बहोरी। मानहुँ यह विनती सब मोरी॥
राजसूय मख पितहि करैहैं। सिगरी धरणि विजय करि लैहैं॥
अइयो सब मुनि मम पुर काहीं। जब हम तुम्हैं बोलावन जाहीं॥

दोहा–यहि विधि मुनिन समीप महँ, विनय करत दोउवीर॥
आश्रम आश्रम मुनिनके, गमन करत मतिधीर॥

दरशन करत सविधि सतकारत।मुनिगण तिनसों वचन उचारत॥
पितु तुम्हार करिहैं मख जवहीं। ऐहैं हम सिगरे तहँ तबहीं॥
यहि विधि वचन सुनत तिन केरे। गये दोऊ दुर्वासा नेरे॥
शिष्य सहसदश मध्य विराजत। मानहुँ अनल मूर्ति धरि राजत॥
विदित भुवन जेहिं कोप प्रतापा। मानत त्रास सुरासुर शापा॥
दंड पाणि तनु अरुण दुकूला। दहत होत जापर प्रतिकूला॥
रक्त नैन तनु भस्स लगाये। जटाजूट शिरश्वेत सोहाये॥
मानहुँ मुनि कालहु कर काला।कौन होइ तेहिं निरखि बिहाला॥
तेहिं दुर्वासाके ढिग जाई। हंस और डिंभक शिरनाई॥
कुशल प्रश्न पूछ्यौ सब भांती। बैठे मुनि समीप अरिघाती॥
जाइ जनार्दनहू शिरनायो। जानि कृष्ण जन मुनि सुख पायो॥
जग विरक्त दुर्वासहि देखी। अनुचित हंस डिंभकहुँ लेखी॥

दोहा–कालरूप मुनि सन्मुखै, बोले वचन कठोर॥
तजि गृहस्थआश्रम भयो, संन्यासी कस चोर॥८॥

प्रथम गृहस्थाश्रम विधि होई। प्रथम करै संन्यास न कोई॥

रेमुनि म्वहिं जनासि पाखंडी। पहिरि अरुणपट ह्वै बपुदंडी॥
कोउ नहिं प्रथमहि तोहिं सिखाये। वेद विरुद्ध रीति कहँ पाये॥
नहिं गृहस्थ सम आश्रम दूजा।जामें होति अतिथि सुरपूजा॥
होत गृहस्थ आश्रमहि ते गति। करत गृहस्थहि पर शंकर रति॥
ते पाखंड दंड करधारे। धर्म कर्म सब भांति विसारे॥
जन वंचन हित पुष्कर तीरा। बैठ्यो बक समान तजि धीरा॥
रेउन्मत्त विरूप मूर्ख बर। दुर्वासातैं वृथा दास हर॥
निराचार अतिशय अज्ञानी। राख लगावत लाज न आनी॥
तैं निर्बुद्धि प्रमत्त प्रधाना। तोर अमंगल रूप महाना॥
ऐसे पाखंडी शठ काहीं। हमहीं शासन करत सदाहीं॥
याको पकरि बाँधि युगपानी। व्याह कराउब घरमहँ आनी॥
दोहा—वेद विहित यह कुमति को, गृह आश्रमी बनाइ॥
पुनि संन्यास सिखाइ हैं, संस्कार करवाइ॥
अस कहि अत्रिमुनीके ढिगजाई। दुहुँ दिशि घेरि बैठि दोउ भाई
पुनि बोले दोउ वचन कठोरा। रेदुर्वासा तैं शठ चोरा॥
महामूर्ख कछु जानत नाहीं। नाशसि औरहु विप्रन काहीं॥
मूर्ख आप औरहु को नासी अबलौं तोर भयो नहिं शासी॥
तैं पापी पाखंडी पूरो। तोसे वसत धर्म है दूरो॥
शासन मानहुँ विप्र हमारा। लहिहौ स्वर्ग प्रमोद अपारा॥
प्रथम गृहस्थाश्रम तुम कीजै। वानप्रस्थ बहुरि मनदीजै॥
सविधि बहोरि करहु संन्यासा। तब नहिं होय धर्मपथनासा॥
जो नहिं मनिहो हुकुम हमारो।तौदुर्लभमुनि जीव तुम्हारो॥
रहे करत जप मौन मुनीशा। सुमिरत ध्यान धरे जगदीशा॥
ताते शाप वचन नहिं भाषे। मनमहँ दोहुन पर मुनि माषे॥
जानि जनार्दन दोहुँन घाता। कह्यो हंस डिंभकसों बाता॥

दोहा—वृद्धनको सेयो नहीं, कियो नहीं सतसंग ॥
मुनिहिं वृथा कटु वचनकहि, करि लिय आयुष भंग॥
काल विवश तुम कह्यो कुवादा। लहिहो डिंभक हंस विषादा ॥
महा तपी शिवको अवतारा। दुर्वासा जेहि नाम उचारा ॥
क्रोध स्वरूप डरत संसारा। संन्यासी शिरताज उदारा॥
ताको तुम कटु वचन बखान्यो। अवशि विनाश भयो हम जान्यो
अबहुँ परौ मुनिचरणन माहीं। ह्वै प्रसन्न क्षमिहैं अघ काहीं॥
रही हमारि तुम्हारि मिताई। रहे बालते संग सदाई ॥
ताते देखि तुम्हार विनाशा। महाशोक मम हिये प्रकाशा ॥
गिरहुँ शैलते की विष खाऊं। की तजिकै तुमको कढि जाऊं
सुनत जनार्दनकी शुभवानी। भने हंस डिंभक अभिमानी ॥
रेद्विज मूढ़ मौन गहि लेही। शक्ति मोहिं नाशनकी केही॥
तैं उपदेशक होत हमारे। मुनि मिलिकै कस वचन उचारे
सुनि दुर्वासा वचन कराला। जगी घोर कोपानल ज्वाला ॥
दोहा—रोम रोम पावक शिखा, जगी जोलाहल जोर ॥
बंक भ्रुकुटि दृग करि तहाँ, चितयो मुनि तिन वोर११॥
कढ़ी नैन कोपानल ज्वाला। मानौ करत प्रलय यहि काला ॥
हंस और डिंभक ढिग आई। शिव प्रसाद वश गई बुताई ॥
दुर्वासा करि कोप अखंडा। दीन्ह्यो दोहुँन शाप प्रचंडा ॥
भस्म हंस डिंभक ह्वै जाहू। शापसकी नहिं तिन करि दाहू ॥
दुर्वासा तब मानिगलानी। बार बार बिलखत कहवानी॥
टरहु टरहु यहिथलते दोऊ। तुमहि न इतराखत हैं कोऊ॥
तुम्हरो पाप जनित अभिमाना। अवशिनाशकरि हैं भगवाना॥
कृष्ण नाम अस सुनत सुरारी। महा कोप अपने उरधारी ॥
दियो लाइ मुनिकर कोपीना। बरबस भुजगहि थापित कीना॥

देखि दसा दुर्वासा केरी । भागे शिष्य हाय मुखटेरी ॥
उठन लगे पुनि कै दुर्वासा । गहि बैठायो हंस सहासा ॥
बरज्यो बहुत जनार्दन ज्ञानी । मानी नहिं तिनकी कछुबानी ॥
दोहा–दुर्वासा परसन्न ह्वै, विप्र जनार्दन काहिं ॥
कह्यो कृष्ण रति होइ तोहिं, तैं सज्जन इनमाहिं ॥
आजु कालिह अथवा परौं, तोहिं मिलि हैं भगवान ॥
देहु संग तजि दुहुँन को, इन्हैं काल नियरान ॥१३॥
विप्र जनार्दन अरु मुनि केरी । जानि मित्रता हंस घनेरी ॥
विप्रहि कह्यो दुष्टतैं साँचो । तेरेहु शीश काल अबनाचो ॥
जो अपनी तुम चहौ भलाई । तौ हमरे सँग रहो न भाई ॥
जो कहिहौ कटु वचन महीसुर । तौ काटिहैं रसना कहते फुर ॥
भयो जनार्दन मनहिं उदासा । गवनत भयो निराश अवासा ॥
तबै हंस डिंभक करि कोपा । जान्यो सकल मुनिनके झोपा ॥
टोरयो दंड कमंडलु काहीं । औरहु पात्रन फोरि तहाँहीं ॥
दुर्वासाके शिष्यन धरिकै । मारयो विविध यातना करिकै ॥
जस तसकै भागे दुर्वासा । मानि हंस डिंभककी त्रासा ॥
अति दुर्दशा करी मुनिकेरी । काल विवश विधि तिन मति फेरी॥
योगिन जटाजूट बहु जारे । बिन अंबर करि बहुत निकारे ॥
यहि विधि बहुत उपद्रव कीन्ह्यो।मुनिननिवासनाश करि दीन्ह्यो॥
दोहा–मनहुँ न मुनि आश्रम रह्यो, असह्वै गयो तहाहिं ॥
तहाँ दोउ डेरा कियो, मुदित महा मनमाहिं ॥ १४॥
तहँ दोउ बंधुन मास अहारे । पुनि अपने घर सुखित सिधारे॥
दुर्वासा भागे बहु दूरी । भये श्रमित शोकित भरिपूरी ॥
मुनि अधमरे मिले तहँ जाई । रोदन करत महादुख छाई ॥
तब दुर्वासा बोधन कीन्ह्यो । अबै न तुम हरिको कोउ चीन्ह्यो ॥

दुष्ट विनाशक दीनदयाला। बसत द्वारका देवकिलाला॥
होहु सबै शरणागतताके। हम अवलंबित तासु कृपाके॥
रक्षण करिहैं अवशि हमारा। प्रभु ब्रह्मण्य शरण्य उदारा॥
ऐसे दुष्टन बहुत सँहारा। शरणागत रक्षण विस्तारा॥
सकल शिष्य संमत करि दीन्हे। मुनिवर गमन द्वारकै कीन्हे॥
हैं शरणागत पालक नाथा। हमको करिहै अवशि सनाथा॥
करत विचार मनहिमन जाहीं। शोकित श्रमित दुखित पथमाहीं॥
पंचसहस्र शिष्य मुनि साथा। पंचसहस हतिगे नृपहाथा॥

दोहा—जस तसकै द्वारावती, निकट जाइ मुनिराइ॥
कटे फटे अंबर पहिरि, वापी लियो नहाइ॥१५॥

कियो प्रवेश नगर दुर्वासा। यदुनंदनकी देखन आसा॥
जाइ सुधर्मा सभादुवारा। द्वारपालसों वचन उचारा॥
देहु जनाइ खबरि प्रभु पाहीं। मुनि आये तुव दर्शन काहीं॥
द्वारपाल लखिकै दुर्वासै। जाइ कह्यो द्रुत रमा निवासै॥
दुर्वासा ठाढे प्रभु द्वारे। आयसु होय तौ सभासिधारे॥
हरि कह शीघ्रहि ल्याउ लेवाई। प्रतीहार मुनि आसुहि आई॥
सभामध्य लै गो मुनिराई। मुनि देख्यौ बैठे यदुराई॥
राजत यदुवंशी सरदारा। महा वीररण धीर उदारा॥
चामीकर सिंहासन भ्राजा। राजत उग्रसेन महराजा॥
मणिमय सिंहासन अति सुंदर। राजत यदुकुल कमल दिवाकर॥
तासु निकट राजत बलरामा। मनहु कोटि शशि उदित ललामा
हरिके वाम दाहिने वोरा। सात्यकि उद्धव दोउ वर जोरा॥

दोहा—औरहु वीर बिराजहीं, कृतवर्मा अक्रूर॥
हरि भ्राता गद आदि सब, राजत भुजबल पूर॥१६॥

खेलत सात्यकि संग गँजीफा। करत सभासद सकल तरीफा॥

सात्यकि संयुत पाइ प्रमोदा। विविध भाँति हरि करत विनोदा॥
बालकनिष्ठ आदि सुकुमारा। उद्धव आदिक युवा उदारा॥
वसुदेवादिक वृद्ध सुजाना। बैठे सभा सभासद नाना॥
यथा राम सुग्रीव संगमे। खेल्यो विविध सु खेल रंगमे॥
तिमि खेलत सात्यकि सँगनाथा। देखि देखि सब होत सनाथा॥
आये दुर्वासा दरबारा। निरखि मुनिहिं भट उठे अपारा॥
दुर्वासहि लखिकै भगवाना। बंदकियो निज खेल महाना॥
उठे राम युत श्याम तहाँहीं। गोलक खेल लिये करमाहीं॥
आगू चलि प्रभु कियो प्रणामा। तैसहि चरण परे पुनिरामा॥
वंद्यो पुनि मुनि आहुक राजा। मुनिवंद्यो यदुवंश समाजा॥
मुनिसँग मुनिगण पंच हजारा। सुभटन आशिष दये अपारा॥

दोहा–राम श्याम वसुदेव कहँ, अरु आहुक नृप काहिं॥
दुर्वासा आशिष दियो, औरहु सबन तहाँहिं॥ १७॥

शिष्यन युत दुर्वासा केरी। लखी दुर्दशा नाथ घनेरी॥
आधे जटा जरे कोहु करे। कोहुके तनुमें घाउ घनेरे॥
फूट कमंडलु दंडहु टूटे। जटाजूट काहूके छूटे॥
फटे कोपीन कोऊ पटहीना। हाय हाय बोलत दुखभीना॥
फरकत अधर नैन अतिलाला। दुर्वासा मनु कालहु काला॥
देखि सकल यदुवंश डेराये। केहिकारण मुनिनाथ रिसाये॥
जोरे हाथ सबै भट ठाढ़े। चितवत मुनिमुख चिंताबाढ़े॥
कनकसिंहासन तुरत मँगायो। तापर दुर्वासहिं बैठायो॥
चरण धोइ शिर धरयो मुरारी। कीन्ह्यों पूजन सविधि सुखारी॥
यथा योग सब मुनिन मुकुंदा। दीन्ह्यों आसन यदुकुलचंदा॥
भन्योनाथ पुनि कै कर जोरी। मुनिदुर्दशाकीन को तोरी॥
कौन हेतु आगम इत भयऊ। धौं मोसे आगस ह्वै गयऊ॥

दोहा—हमतौ सेवक आपके, तुमहौ देव हमार ॥
बहुरि थोरई कालमें, प्रभु आये ममद्वार ॥ १८ ॥
ताको कारण कछु नहिं जानो।तुम आगम निज कहँ धनिमानौ
असकहि अर्घ्य पाद्य सतकारा। कियो बहुत वसुदेवकुमारा ॥
हरिके पूछत मुनि मनमाहीं। भये कुपित द्रुत दून तहाँहीं ॥
श्वास लेत मुखवारहिंवारा। चितवत दृगन करत मनु छारा॥
भक्षत मनहुँ निहारत माहीं। कछु न कहत चितवत चहुँघाहीं॥
कोप विवश कछु कहत नबैना।चितवत हरिकहँ अनमिष नैना
जस तसकै पुनि कोप सँभारी। बोले वचन विलखि तपधारी॥
सतिहै सतिहै तुम नहिं जानो। काहेको अब हमको मानो ॥
हमहिं ठगनको अहैं तुम्हारे। हाँसी करियत काह विचारे ॥
विदित विश्व वृत्तांत विशेषी। मम गति नहिं जानहुँका लेषी॥
देखिदुर्दशा देव हमारी। पूंछहु आगम हेतु मुरारी ॥
हाँसी करहु दुखित मोहिं जानी।भये विभव वश तुम अभिमानी॥
दोहा—जानत जग वृत्तांत सब, मैंका देहुँ जनाइ ॥
पूछहु जानि अजानसे, बार बार मुसकाइ ॥ १९ ॥
यद्यपि जानहु सब यदुराई। तद्यपि पूछे देहुँ सुनाई ॥
पापी डिंभक हंस नरेशा। बसै शाल्वपुर शाल्वहिं देशा ॥
ते विडंबना करी हमारी। पुष्कर वसत रहे तपधारी ॥
मुनि आश्रम सिगरे शठ जारे। हनत भये बहु शिष्य हमारे ॥
कीन्ह्यों दंड कमंडलु भंगा। किय कौपीन हीन इक संगा ॥
तुमहिं अछत यह दशाहमारी। होइ अतिहिं अचरज गिरिधारी
जोनहिं हंस डिंभकहुकाहीं। वधकरिहौ तुम संगर माहीं ॥
तौ तव पुर यदुवंश समेतू। करिहौं भस्म जारि कुलकेतू ॥
अर्जुन भीषम रण भट जेते। जितैं न हंस डिंभकहिं तेते ॥

शिवप्रसाद वश गर्व अपारा। तौनिन हरै को भट असभारा॥
पराशि मोर पद कहहु मुरारी। हनौ हंस डिंभक शरमारी॥
तौ केशव कुल बची तुम्हारा। नातौ करौं यहीक्षण क्षारा॥
दोहा—सुनि दुर्वासाके वचन, बिहँसि कह्यो भगवान॥
लघुकारजके हेतु प्रभु, अस अमरष अधिकान॥२०॥
हंस डिंभकहु केतिक बाता। आपहि मरे विप्रदुखदाता॥
जो आवैं शंकर धरिशूला। होइ यदपि ब्रह्महु अनुकूला॥
कर करि काल दंड यम आवै। वरुण कुबेर यदपि सँग धावै॥
करै सुरासुर यदपि सहाई। तदपि हतौं तव चरणदोहाई॥
तजहु मुनीश मनहिं संदेहू। बचिहै तुव रिपु भगे न केहू॥
सात पताल स्वर्ग तिमि साता। सात सिंधु महि मंडल ख्याता॥
बचै न कुलिश कोठरी जाई। सत्यवचनजानहुमुनिराई॥
सुनि यदुनायक वचन उदंडा। शांत भयो मुनि कोपप्रचंडा॥
स्तुति करन लगे प्रभु केरी। दीनदयालु दास हित हेरी॥
जय जय चक्र पाणि भगवाना। जय मुकुंद जय कृष्ण सुजाना॥
करि हरिकीस्तुतियहिभाँती। होत भई मुनि शीतल छाती॥
हरि कह क्षमाकरहु मुनिराई। संन्यासिन कहँ क्षमा बड़ाई॥
दोहा—असकहि व्यंजन स्वाद बहु,विविध भाँति रचवाइ।
दुर्वासै शिष्यन सहित, भोजन दियो कराइ॥२१॥
बार बार संतुष्ट ह्वै, दैकै आशिर्वाद।
दुर्वासा गमनत भये, पाइ परम अहलाद॥२२॥
उतै हंस डिंभक गये, जब निज जनक समीप।
वंदिचरण बोले वचन,सज्जन वृंद प्रतीप॥२३॥
राजसूय मख पिता करीजै। अनुपम जगत माहिं यशलीजै॥
महिमंडल महीप हम जीती। करवैहैं मख सकल सुरीती॥

समर सुरासुर जीतन हारे । हैं हम दोऊ पुत्र तिहारे ॥
तापर हमको रक्षन हेतू । दियो उभयगण निज वृषकेतू ॥
महि महीपहैं केतिक बाता । इनको जीतव सहज जनाता ॥
ब्रह्मदत्त कह सुनि सुत वानी । करिहैं मख संभारा ठानी ॥
जहँ तुमसे सुत अहैं हमारे । दुर्लभ कछु नहिं कियो विचारे॥
डिंभक हंस वचन सुनि काना । विप्र जनार्दन भक्त सुजाना ॥
ब्रह्मदत्त सों बोल्यो वैना । गये फूटि हियरेके नैना ॥
पापी सुत वश साहस करहू । तुमहु नरक मंडल पग धरहू॥
राजसूय कौने विधि होई । अस सुजान तौ कही न कोई॥
तहाँ हंस डिंभक अति माषे । विप्र जनार्दनसों असभाषे ॥

दोहा—वारण करता यज्ञको,दीजै विप्र बताइ ।
ताको शिर हम काटिकै, पितुको देहिं देखाइ ॥२४॥

विप्र जनार्दन पुनि असभाष्यो । वृथा यज्ञ करिबो अभिलाष्यो॥
जीवत भीष्म देव जगमाहीं । जीत्यो परशुराम रणमाहीं ॥
जरासंध जीवत संसारा । जीतै को अस जननि कुमारा॥
महाप्रबल सिगरे यदुवंसी । कबहुँ न मुरे समर अरिध्वंसी॥
तिनमहँ जग पालक यदुनायक । को है तासु समरके लायक ॥
जगसिरजग पालक संहर्ता । अज अनादि अविचल श्रीभर्ता ॥
अग्रज तासु रामहै नामा । हल मूशल धारक बलधामा ॥
सरसव सरिस धरा शिर धारे । वेद विदित फण जासु हजारे ॥
शेष अशेष लोकके नाथा । आरज कहत जिन्हैं यदुनाथा॥
सात्यकि महाबली हरि प्यारो । ताहि कौन जग जीतनहारो ॥
औरहु यादव बली महाना । जीतव तिन्हैं वृथा अभिमाना॥
तुमहिं ब्रह्महत्या नृपलागी । ताते तुम दोउ भये अभागी ॥

दोहा–हमहुँ सुन्यो वृत्तांत यह,दुर्वासा दुखपाइ।
यदुपति सों तुम्हरी दशा, कहन गयो द्रुत धाइ॥२५॥
बोल्यो कुपित हंस अज्ञानी। विप्र भीति वश बात बखानी॥
दुर्बल भीष्म वीर अतिबूढ़ा। धनुष धरण जानत नहिं मूढ़ा॥
हमरे सन्मुख संगर माहीं। कबहूं ठाढ़ होइगो नाहीं॥
जो यदुवंशिन कियो बखाना। ते सब कायर क्रूर महाना॥
गिनती नहीं वीरमें इनकी। करी दुर्दशा मागध जिनकी॥
वीर गनायो सात्यकि जोई। ताको वीर कहै नहिं कोई॥
ये बालक घरहीके बाढ़े। परे कहूं संगर नहिं गाढ़े॥
जो बलरामहिं वीर गनायो। सो सुनिकै अचरज मन आयो॥
सुरापान करि सोवन जानै। कबहुँ न जान्यौ गहन कमानै॥
जो यदुपतिको ईश्वर कहेऊ। यह भ्रम तुव उर कबते रहेऊ॥
सो तौ नंद गोपको बेटा। कबहुँ नभइ हमसों भरभेटा॥
पौंड्रक मेरो मित्र भुवाला। ताकी नकल करत गोपाला॥
दोहा–धर्मधुरंधर धरणिमें, जरासंध रणधीर॥
नहिं विरोध करिहै कबहुँ, मोर सहायक वीर॥२६॥
कह्यो जनार्दन सुनु नृपबैना। गर्व विवश तोहिं समुझि परैना॥
भीष्म देव पांडव कुरुवंशिन। जगती महँ जीवत यदुवंशिन॥
राजसूय ह्वै है नहिं तेरी। मानहु हंस बात सति मेरी॥
वैसे कहौ सोहासित भाषै। पै मन महँ शंका हठि राखै॥
कह्यो हंस तब वचन रिसाई। विप्र तोरि शठता नहिं जाई॥
शत्रु बोज वर्णत बहुबारा। निर्बल हमको करत विचारा॥
पैजो भयो क्षम्यो अपराधा। विप्र तोहिं देहौं नहिं बाधा॥
विप्र मोर शासन शिर धरिकै। जाहु द्वारकै आनँद भरिकै॥
नंद गोप सुतसों मम बैना। कहियो सकल किह्यो कछु भैना

राजसूय पितु करत हमारे। हम महि मंडल जीतन हारे॥
तुम्हरे देश लवण अति होई। वृषभ भराइ चलहु लै सोई॥
और डांड़ तुमसों नहिं लैहैं। नहिं कछु पुनि धन हेतु सतैहें॥

दोहा—हंस हुकुमनहिं मानिहौ, तौ होई कुलनास॥
तातें लै सँगमें लवण, कीजै चलन प्रयास॥ २७॥

हंस वचन सुनि द्विज अनुमाना। भे सहाय यदुपति मैं जाना॥
दुर्वासा जो दिय वरदाना। मिले नाथ द्विज वचन प्रमाना॥
तेहि क्षण द्विज उर सुख न समाना। बे प्रमाण दृग जल ढरकाना
आनँद विवश बोलि नाहिं आयो। मानहुँ कृष्ण मिले सुख छायो
कही हंस पुनि ऐसी बाता। मेरी शपथ तोहिं हैं ताता॥
जस मैं कह्यो तहाँ तस कहियो। गोप भीति वश गोइन रहियो॥
सुनत जनार्दन वचन उचारा। शासन सुखकर हंस तुम्हारा॥
तुव शासन द्वारका सिधैहौं। जैसो कहो तहाँ तस कैहौं॥
आजु कालिह अथवा हम परसौं। सुदिन पूंछिकै गवनब घरसों॥
असकहि उठ्यो पुलकि द्विजराई। चल्यो भवन कहँ आनँद पाई॥
मनमहँ कियो विचार विशेषी। सानुज हंस काल वश लेषी॥
फेरि कह्यो मनमहँ द्विजराई। हंस मोर सब दियो बनाई॥

दोहा—जन्मभरे की लालसा, रहि जो नयनन केरि॥
भाग्य विवश पूरण करौं, जाइ दयानिधि हेरि॥ २८॥

असगुणिशैन रैन महँ कीन्ह्यों। नयनानि नींद वास नाहिं लीन्ह्यो
चढि तुरंग उठि होत प्रभाता। चल्यो लखन प्रभु पद जल जाता
यथा जेठको पथिक पियासा। धावत सरजल पीवन आसा॥
तथा विप्र द्वारका सिधायो। मानहुँ सुरपादप कहँ पायो॥
परम वेगसों तुरँग धवावत। तदपि मंद गति मनमहँ भावत॥
तृषा क्षुधा पथ में नाहिं लागै। पंथ निवास करन मन भागै॥

कब पहुँचौं द्वारका मँझारी । कब देखैं यदुपति गिरिधारी ॥
हंस कियो मम अति उपकारा । देखवायो वसुदेव कुमारा ॥
मोते धन्य न कोउ धरणीमें । मोते अधिक न कोउ करणीमे ॥
इन पापिन आँखिनसों जाई । आजु लखब हम कुँवर कन्हाई ॥
आजु दाहिनो भयो विधाता । देखब नाथ चरण जलजाता ॥
कहा रह्यो बाकी जग माहीं । हरिते मिलब अधिक कछु नाहीं॥

दोहा—कहा भेट देहौं प्रभुहि, पूरणकाम मुरारि ॥
करब निछावर तनहुँ मन, याही भेट हमारि ॥ २९ ॥

सवैया—मैंहीं महीमें जन्यो जननीके न मेरे समान द्विती को-ऊ जायो ॥ दुष्टके संग बिते बहुकाल प्रसंग न पुण्यको जन्म लौं आयो ॥ श्रीरघुराज गरीबनेवाज दयानिधि आपही आजु बोलायो ॥ देखिहौं हो पदपंकज जाइ जिन्हैं शिव साधि समाधि लगायो ॥ १ ॥ श्याम सरोरुहसी तनुकी छबि कंज प्रफुल्लित आनन राजै ॥ पंकजपाणि त्यौं पंकजसे पद बाहु बिशालमें आयुध भ्राजै ॥ कौस्तुभ हार हिये वनमाल प्रभा पट पीत अनूपम छाजै ॥ माधवके मुखकी मुसकानि बिलोकि हौं लालची लोचन आजै ॥ २ ॥

दोहा—सुमिरत यदुपति रूपमोहिं, जानि परत अस आज ॥
मेरे आगू चलतहैं, चारिभुजा यदुराज ॥ ३० ॥

सवैया—हाइ बड़ो दुखहै यतनो हरि हंसको लौण तुम्हौं कर दीजै ॥ कैसे कहौंगो कहा करिहौं न कहे कहे दोऊ विधै मति छीजै ॥ आनि उतै कियोहो कहिहौं कहिबो नहिं योग इतै चित भीजै ॥ श्रीवसुदेव किशोरको हाय कठोर गिरा केहि भांति कहीजै ॥ ३॥ पै यतनो मनमें है भरोस सबै जनके हियकी हरि जानै ॥ दूतको धर्म त्यों मीतको धर्म त्यों प्रीतिकि रीति सदा

पहिचानै॥देहैं नहीं कछु दोष हमैं प्रभु यद्यपि हंसको मित्रउमानै॥ दोष गणैनहीं ताको हरी जो सनेहसों जाइ मिलै भगवानै ॥ ४ ॥

सोरठा—यहि विधि करत विचार, गयो नीरनिधिके निकट॥
उतर्‍यो पारावार, प्रमुदित पुरी प्रवेश किय ॥ १॥
मगन कृष्णके रूप, चित गुणगण गमनत गुणत ॥
कब देखिहौं यदुभूप, कब सुघरी वह आइ है ॥ २ ॥

सवैया—जायकैहौंतौ सुधर्मा सभा निज नयन निमेष विशेष निवारी ॥ श्रीनँदनंदन को नखते शिखलै हौंअनूपम रूप निहारी ॥ आये कहां ते बतावहु विप्र हरी हँसिके असबानि उचारी॥श्रीरघुराज सनाथ करैंगे हमैं यदुनाथ अनाथ विचारी ५॥ हौं परिपंकज पाँयन ढारि हौं बारहिं बार विलोचन बारी ॥ जा पदकी रजको शिव ब्रह्म चहैं रजसो शिर लेउँगो धारी ॥ मोते नहीं जगती सुकृती कोउ देखिहौं छ्वै निजपाणि पसारी॥ माधवकी मनमोहनि मूरति मारहुको मद मोचनहारी॥ ६ ॥ कोटिन जन्मलौं योग कियो नाहिं योगी लहैं जोहि को तप धामी ॥ शंभु स्वयंभु सुरेश गणेश रटैं जोहिं नाम सकाम अकामी ॥ सो यदुराजको हौं रघुराज विलोकि हौं आजु समाज सुनामी ॥ मैं धनिहौं धनिहौं अब मोहिं नमामि नमामि नमामि नमामी ७॥

दोहा—यहि विधि भाषत मनहिंमन, अभिलाषत द्विज लाख॥
हरि मंदिर द्वारे गयो, चाखत प्रेमहि दाख ॥ ३१ ॥

सोरठा—ठाढ़े देव समान, द्वारपाल उर मणिमाल उर ॥
तिनसों कियो बखान, विप्र जनार्दन हर्षिकै ॥ ३ ॥

दोहा—शाल्वनगर मम भवन है, हंस भूपको मित्र ॥
नाम जनार्दन जानियो, ब्राह्मण जाति पवित्र ॥ ३२ ॥

सोरठा—आयो दरशन हेत, यदुकुल कमल दिनेशपद ॥

जहँ प्रभु कृपानिकेत, तहँ तुम खबरि जनाइयो ॥ ४ ॥
द्वारपाल सुनि बैन, दौरि गयो दरबार महँ ॥
जोरि पाणि भरि चैन, बोल्यो करुणाऐनसों ॥ ५ ॥
नाथ जनार्दन नाम, विप्र शाल्वपुरबासि यक ॥
आयो दरशन काम, होइ जो शासन आवई ॥ ६ ॥
बोले वचन कृपाल, सपदि सभा द्विज ल्याइयो ॥
दूत दौरि तत्काल, द्रुत दरबारहि लैगयो ॥ ७ ॥
देख्यो द्विज यदुनाथ, हाथजोरि पुहुमी पर्‍यो ॥
पुनि उठि मानि सनाथ, चिंतन लाग्यो चित्तमें॥८॥

सवैया—जो धरिकै सफरीको स्वरूप प्रलय जल वेद उधारन-वारो। क्षीरधिको मथ्यो कच्छपरूप नृसिंह ह्वै जो प्रहलाद उबारो॥ ह्वैकै बराह उधार्‍यो धरा बलिको छलि वामन नाम उचारो॥ सो भृगुनाथ सोई रघुनाथ सोई यदुनाथ है नाथ हमारो ॥ ८ ॥
जाको मुमुक्षु जे प्रेमबुभुक्षु गुणै यह विश्व सिसृक्षु सदाही॥ काल जिघृक्षु रुरुक्षु कृपाकी स्वपानन स्वक्ष स्वपक्ष प्रियाही ॥ सो प्रभु पेखिपर्‍यौ परपक्ष विपक्षिनको जे विपक्ष कराही ॥ भीतिको भक्षक शत्रुको तक्षक दासको रक्षक कृष्णसों नाहीं ९

सोरठा—द्विज देख्यो दरबार, यदुवर मंडल मंडली ॥
राजत सब सिरदार, चोख अनोख सरोष रण ॥ ९ ॥

नाचि रहीं अप्सरा हज़ारन। गाय रहे गंधर्व अपारन॥
चारण सूतहु मागध वंदी। हरि यश वर्णत अतुल अनंदी॥
राजत उग्रसेन महराजा। जासु हुकुम मानत सुरराजा॥
कनक सिंहासन अति विस्तारा। तापर दोउ वसुदेव कुमारा॥
सात्यकि उद्धव दुहुँ दिशि सोहैं। दोउ प्रभु चंद्रवदन दृग जोहैं॥
वीर विराजत सान समारे। सिंह सरिस यदु सिंह उदारे॥

वसन अमोल पाणि हथियारे। यदुपतिको प्राणहुँ ते प्यारे॥
भ्रमत चमर मंडल अति चारू। मनु सरोज शिर हंस विहारू॥
कनक सिंहासनं यदुवर हलधर। मेरु माथ मनु निशिकर दिनकर॥
पीतश्याम पट राजत अंगा। लाजत जिन्हैं विलोकि अनंगा॥
लोल कपोलन कुंडल मंडल। पसरति प्रभा दिगंत अखंडल॥
तकैं भौंह प्रभु वीर विशाला। शासन होत कौन केहि काला॥
दोहा—नारदमुनि बैठे निकट, तिनसों हँसि यदुनाथ॥
दुर्वासा वृत्तांत सब, भाषत गहि गहि हाथ॥ ३३॥
द्रुत द्रुत दौरि देवकी सुतके। पऱ्यो चरण पंकज सुरनुतके॥
पुनि उठि नयन बहावत अंबू। छक्यो सुछवि लखि सुछवि कदंबू॥
घरी द्वैकलगि बोलि न आयो। प्रेम पयोनिधि विप्र नहायो॥
भयो पनसफल तासु शरीरा। पुनि उर धरि धरणी सुरधीरा॥
गिऱ्यो दंडसों मही मझारी। पुनि उठि जय जय वचन उचारी॥
हे यदुनंदन कृपानिधाना। सब विधि तू समरथ भगवाना॥
भूप हंस डिंभकको मित्रा। विप्र जाति मैं जगत पवित्रा॥
नाम जनार्दन पिता धरायो। तुम्हरे दरश लागि इत आयो॥
मैं अति अधम अपावन करणी। उपज्यो अनाचार रत धरणी॥
अहो पतितपावन तुम नाथा। मोहिं दरश दै कियो सनाथा॥
अब तौ चरण शरण महँ आयो। जन्म जन्मके दुरित नशायो॥
मोहिं करो अपनो यदुराई। आरत आरति हरण सदाई॥
दोहा—उठे हेरि हरि हुलसिकै, द्विजहि लियो उरलाय॥
प्रगटकरी निज वानि प्रभु, आँखिन अंबु बहाय॥३४॥
बैठायो सिंहासन माहीं। लगे पखारन द्विजपद काहीं॥
द्विजपद सलिल सींचिशिर लीन्हो। निज ब्रह्मन्य नामसति कीन्हो
पूजन किय युग अष्ट प्रकारा। पुनि यदुनंदन वचन उचारा॥

दीन्ह्यों दरश आप द्विजराई। आजु गयो मैं सरबस पाई ॥
मोहिं ब्रह्मण्य कहत सबकोऊ। ताते प्रिय निर्गुणी द्विजसोऊ ॥
तापर भयो मोर जो दासू। सुर नर मुनिपद पूजत तासू ॥
मोहिं विप्र तुम प्राण पियारे। कबहुँन ह्वै हौ हमते न्यारे ॥
विदित मोहिं वृत्तांत तुम्हारा। तुमको नहिं होई संसारा ॥
वचन सुनत द्विज अंबुज नाभा। लह्यो जनार्दन सरबस लाभा॥
जोरि पाणि द्विज वचन उचार्‍यो। नाथ दूत ह्वै मैं पगुधारच्यो ॥
सिंहासन नहिं बैठन लायक। भूमि बैठिहौं मैं यदुनायक ॥
असकहि मही महीसुर बैठ्यो॥यदुपति सुछवि पयोनिधि पैठच्यो॥

दोहा–जोरि पाणि बोल्यो वचन, तुमहिं न कछू छिपान ॥
जेहिं हित मैं आयों इतै, नृप प्रेषित भगवान ॥ ३५ ॥

जीभि गिरै तनु होय निपाता। मोते कही जात नहिं बाता ॥
वासुदेव बोले हँसि बानी। दूतहिं दोष न कहत विज्ञानी॥
कहौ हंस डिंभक कुशलाई। बहुत दिवस ते खबरि न पाई ॥
हंस जौन विधि वचन उचारा। सो वर्णहु तजि भयकर भारा ॥
है न दोष कछु विप्र तुम्हारा। कहत वचन नहिं करहु खँभारा
तुम तो हौ अनन्य मम दासा। तुम्हरे मोरि निरंतर आसा ॥
दूत यथारथ जो नहिं भाखै। महापाप कर सो फल चाखै ॥
ताते हंस भणित द्विज कहिये। निज मनमाहिं शंक नहिं गहिये
तब द्विज बोल्यो नयन नवाई। करी हंस यहि विधि शठताई ॥
दुर्वासाको दीन्ह्यो बाधा। सो सब जानहु बोध अगाधा ॥
बहुरि हंस जब भवनसिधारच्यो। तब मोसों अस वचन उचारच्यो
जाहु विप्र द्वारकै सिधाई। यदुपति सों अस कह्यो बुझाई॥

दोहा–राजसूय मख करत पितु, हम जीतव भूभूप ॥
लोन होत तुव देश महँ, देहु डांड़ अनुरूप ॥ ३६ ॥

जो नहिं बैलन लवण भराई। ऐहो यज्ञ माहँ यदुराई ॥
तो होई यदुकुल करनासा। अस तुम मनहिं करहु विश्वासा
ऐसी कीन्ह्यो हंस ढिठाई। और बात प्रभु जाय न गाई ॥
हंसवचन सुनि प्रभु मुसकाने। कालविवश दोउ भ्रातन माने ॥
कह्यो विप्रसे करुणाऐना। कह्यो हंस डिंभक सतबैना ॥
हैं हम द्विज साति डांड़ देवैया। लवण भराय बैल लदवैया ॥
जाहु विप्र हंसहि कहि देहू। डांड़ देत हमसों तुम लेहू ॥
हरिके वचन सुनत बलराई। देतारी प्रभु हँसे ठठाई ॥
राम हँसत यादवी समाजा। हँसत भई रव भयो दराजा ॥
विप्र जनार्दन गयो लजाई। बोल्यो बार बार पछिताई ॥
हाय दूत है कहँते आयो। यदुपति कहँ कटु वचन सुनायो
गिरिते गिरूं गरलकी खाऊं। कौनभांति मैं वदन देखाऊं ॥

दोहा—कह्यो विप्र करजोरि कै, सुनिये कृपानिधान।
तुम्हैं पाय अब दुष्ट गृह, करिहैं नहीं पयान ॥३७॥

तब हरि हेर्यो सात्यकि ओरा। उठ्यो तुरंत तमकि सिनिछोरा
कह्यो नाथ सात्यकि तुम जाहू। हंस डिंभ कहँ वचन सुनाहू ॥
जौन डांड़ तुम हम से मांग्यो। हमहूं तौन देन अनुराग्यो ॥
जहाँ कहो तहँ देइँ चुकाई। ऐहैं बैलन लवण भराई ॥
पुष्कर मथुरा किधौं प्रयागा। जहां करैं तिहरे पितुयागा ॥
कह्यो विप्र सों बहुरि मुरारी। जाहु सात्यकीसंग सिधारी ॥
तुमहिं न कछू दोष द्विजराई। हौं तौ तुमहिं लियो अपनाई ॥
तुम नाहिं भाष्यो कह्यो हमारा। कहिहै सात्यकि माधि दरबारा ॥
सुनत रह्यो बैठे तुमसाखी। कहिहैं सात्यकि जो ममभाषी॥
सात्यकिसंग लौटि पुनिआवहु। मम पद निज मनसदनबनावहु
तब द्विज प्रभुशासनशिरधरिकै। जैहौं नाथ कह्यो मुद भरिकै ॥

तब सात्यकी प्रभुहि शिरनायो। गमन करनकहँअतिचितचायो

दोहा–कह्यो सात्यकी सों हरी, जाहु अकेले वीर।
हंसहि सकल बुझाइयो, मोर वचन गम्भीर ॥ ३८ ॥

सात्यकि तुम्हैं चतुर मैं जानौं। केहि विधि वचन बुझायवखानौं॥
उचित होय सो कहियो जाई। तासु सँदेश कह्यो इत आई॥
सात्यकिसुनि करि प्रभुहिं प्रणामा। महा निशंक वीर बलधामा॥
भयो तुरंत तुरंग संवारा। विप्र जनार्दन संग सिधारा॥
गयो तुरंत हंस दरबारा। ठाढ़ो भयो सभाके द्वारा॥
गयो जनार्दन सभा मँझारी। हंसहि आशिष गिरा उचारी॥
हंस ताहि पूछ्यो कुशलाई। विप्र कह्यो तुव दरशन पाई॥
हंस कह्यो जेहिं अर्थ सिधारा। सो कारज भयो सिद्धि हमारा॥
विप्र कह्यो तोहि कारज हेतू। सात्यकि पठयो कृपानिकेतू॥
सो कहिहै उतकेर हवाला। कह्यो जौन विधि वचन कृपाला॥
कह्यो हंस सात्यकि कहँ आनौ।विप्र तुमहु कछु वचन बखानौ॥
कहो राम केशव कुशलाई। देहैं करकी नाहिं यदुराई॥

दोहा–हंस वचन सुनि विप्र तहँ, सात्यकि को लै आइ॥
वर्णन लाग्यो हंस सों, जिमि देख्यो यदुराइ॥ ३९ ॥

कवित्त–तेरे सम हंस उपकारी मेरे दूजो नाहिं दूत रचि द्वारावती मोहिं जो पठायो है॥ जाय दरबार यदुवंशी सरदार जहां बैठे ऐंडदार वीर रस छवि छायो है॥ दीपति दिगंत तहँ कनक सिंहासन में राजत अनेक भान भास पसरायो है॥ रघुराज सहित समाज यदुराज जू को देख्यो आज देख्यो आज जन्म फल पायो है॥१॥एक कर शङ्ख एक कर मे विराजै चक्र श्याम एक कर गदा एक पाणि धनु भायो है॥ विलसत पीतपट परम प्रकाशमान श्याम सरसिज सों शरीरहूसोहायो

है ॥ उर वनमाल नैन नेसुकही लाल लाल परम विशाल बहु वैरिन नशायो है॥ रघुराज सहित समाज यदुराज जू को देख्यो आज देख्यो आज जन्म फल पायो है ॥ २ ॥ देवऋषि ब्रह्मऋ-षि राजऋषि महीऋषि सेवन करत सर्व काल शिरनायो है ॥ वंदी सूत मागध वदत विरदावली सुरावली मदावली लगाय सुरगायो है ॥ जगद्गुरु जगन्नाथ जगत्स्रष्टा जगत्पाल जगत नियंता जगहंता जो कहायो है ॥ रघुराज सहित समाज यदुरा-ज जूको देख्यो आज २ जन्म फल पायो है॥३॥ माधुरी हँसनि मुख कमल नयनबांके माधुरे बयन उर सुख उपजायो है ॥ देवकी दुलारे सब दुखके हरनहारे रुक्मिणीके प्राणप्यारे चारौं वेद गायो है ॥ भक्तन अधार धराधार अतिशय उदार कृपा पारावार निज विरद बढ़ायो है ॥ रघुराज सहित समाज यदुरा ज जू को देख्योआज २ जन्म फल पायो है ॥४॥राजि रहे बाम बलधाम बलराम आम और वीर वृंद ठाम ठाम ठीक ठायो है ॥ ढालन सों ढाल करवाल नसों करवाल मिलि रहीं बीरनकी ओंज मुख छायो है॥उद्धव उदंड बुद्धि दिये दिशि दाहिने सो दानपति कृतवर्मा आदि को गनायो है ॥ रघुराज सहित समाज यदुराज जू को देख्योआज २ जन्म फल पायो है ॥५॥ चलि रहे चारौं ओर चौर चंद्रमा सों चारु चांदनी सी चांदिनी जो चित्तको चोरायो है॥ छपाकर मंडल अखंडल विराजै छत्र गिलिमगलीचे दूध फेन को लजायो है ॥ वंदी विरदावली वदत वार वार ठाढे विरद वखान सो दिगंतन लों छायो है ॥ रघुराज सहित समाज यदुराज जू को देख्यो आज देख्यो आज जन्म फल पायोहै६॥ वसुदेव उग्रसेन औरो अक्रूर आदि वृद्ध वृद्ध एक ओर आसन लगायो है ॥ जगत विख्याता हरि भ्राता गद आदिक

को एक ओर मंडल अखंडल सोहायो है ॥ बड़े बड़े सरदार बड़ी भारी दरबार बड़ी सरकार जहां मोहूं जान पायो है ॥ रघुराज सहित समाज यदुराज जू को देख्यो आज देख्यो आज जन्म फल पायो है ॥७॥ दयानिधि दीन दुख दारिद विदारणको करिवो विचार बार बार मन ठायो है ॥ तापै दुर्वासा आय आरत पुकार कीन्ह्यों आरतहरण प्रण वचन सुनायो है ॥ मोहूं सों अधम अजामिल ते अधिकहूं को आपने विरद वश नाथ अपनायो है ॥ रघुराज सहित समाज यदुराज जू को देख्यो आज देख्यो आज जन्म फल पायो है ॥ ८ ॥

सोरठा–कहँ लगि करों बखान, न नगिरा न गिरा नयन ॥
अब जेहिं में कल्याण, सुनहु हंस डिंभक सपितु ॥१०॥

राजसूय जो कियो अरम्भा। सो यह गड़्यो नाशको खम्भा
अहै असाध्य यज्ञ संभारा। सिद्ध होब अति कठिन तुम्हारा
ताते तजहु याग कर योगा। जो चाहहु अपनो सुख भोगा॥
यदुपति पद पंकज चित लाई। सानुराग कीजै सेवकाई ॥
जो प्रभु तुम पर होय प्रसन्ना। होई तबै याग सम्पन्ना ॥
हमकहि उऋण होत तुमकाहीं। करहु जो होय साध मन माहीं
विप्र वचन सुनि हंस भुवाला। कह्यो क्रूर करि कोप कराला॥
अरे विप्र बालक मतिमंदा। तोरि बुद्धि हरिलिय नँदनंदा ॥
हम तीनहुँ लोकन जयवारे। तिनहिं कटुक बहु वचन उचारे
करिकै इंद्रजाल यदुराई। तोरि बुद्धि सब दियो भ्रमाई ॥
हमरे आगे गोप बड़ाई। करत बार बहु नाहिं लजाई ॥
जाने सकल मोर यदुवंशी। होत विप्र कत मृषा प्रशंशी ॥

दोहा–बालकपन ते विप्र तैं, मम समीप किय वास ॥
मित्र कह्यो मैं निज वदन, ताते करहुँ न नास ॥४०॥

रे द्विज अस चाहत चित मोरा । गहि कृपाण काटहुँ शिर तोरा
विप्र जानि कै वधहुँ न तोहीं । अब नहिं वदन देखावहु मोहीं॥
जहँ भावै तहँ जाहु तुरंता । नातौ होन चहत तुव अंता ॥
हंस वचन द्विज सरवस पायो । उठि कै आशिष वचन सुनायो
रमाकंत ढिग चल्यो तुरंता । सुमिरत चारु चरण मतिमंता॥
पुलकत द्वारवती द्रुत आयो । पुनि प्रभु पदपंकज शिरनायो॥
प्रभु मिलि तेहिं निज निकट बसायो॥अपनो पार्षद ताहि बनायो
ब्रह्मानंद मगन द्विजराई । जग की भीति सकल बिसराई॥
यथा राम उद्धव गद भ्राता । द्विजहिं गन्यो तिमिहग जलजाता
विविध विनोद विप्र सँग लहहीं। यक क्षणविना विप्र नहिं रहहीं॥
कछुक काल करि हरि अनुरागा।पुनिगवन्यो हरि पुर बड़ भागा
दोहा—भक्त जनार्दनकी कथा, इतनी है हरिवंस ॥
और कहौं जिमि हरि कियो, हंस डिंभकहिदंस॥४१॥
उतै सात्यकी जाय जब, बैठ्यो सभा लसंत ॥
पाय अनादर विप्र जब, हरि ढिग गयो तुरंत ॥ ४२ ॥
कह्यो हंस तब सात्यकि काहीं । आयो तुम केहि काज इहाहीं॥
गोपनंदसुत काह बखान्यो । मोर हुकुम काहे नहिं मान्यो ॥
मोर मित्र पौंड्रक महिपाला । रचे रूप ताकर गोपाला ॥
जो न मानिहै शासन मेरो । तौ पैहै फल भल तेहि केरो ॥
मोहिं भरोस रह्यो यहि भांती । लाग्यो कर आयो जो राती ॥
लायो किमि नहिं नोन भराई । काहे नहिं आयो यदुराई ॥
कहो सात्यकी भीति विहाई । होई तुम को नाहिं सजाई ॥
कहो कुशल सब गोप समाजा । करहिं उदर हित घर कर काजा
सात्यकि सुनत हंस की बानी । बोल्यो वीर वचन बलखानी ॥
तुम से कुशल प्रश्न के कर्ता । तहँ सब भाँति कुशल जगभर्ता॥

हम तौ नोन नहीं सँग लाये। चूक क्षमहु शासन विसराये ॥
डांड़ देन को जो कछु हमरे। सो लीजै मन होय जो तुम्हरे॥
दोहा—यही त्रिलोकधनी कह्यो, तुमहिं कहन संदेश ॥
डांड़ लिये मैं संग में, आयो तुम्हरे देश॥ ४३ ॥
हंस कह्यो का देहौडांड़ा। सात्यकि कह्यो मुहे महँ खांड़ा॥
जा मुखते कह हरि कर देहू। ता मुख तुरत तेग तुम लेहू ॥
कहत न रसना भयो निपाता। बोलहि किये पान मदमाता ॥
कहसि देन कर त्रिभुवन नाथै। जेहिं जोरैं विधि शंकर हाथै ॥
टिट्टिभ गगन गिरन भय मानी। रोंकन हित सोवती उतानी ॥
तैसहि तोर गर्व मतिमंदा। बचै को जब रणकरै गोविंदा ॥
दीन्ह्यों को सलाह यह तोही। उपर मित्र पूरो हिय द्रोही ॥
फूटिगये हिय के दृग तोरे। ऐसो मन महँ भावत मोरे ॥
जो न मानिहै मेरो बैना। रहि है तो न नेकु तुव चैना ॥
भावै भूरि भलाई भाई। नहिं विरोध कीजै यदुराई ॥
कहँ यदुसिंह सिंह भगवाना। कहँ ते हंस शृगाल समाना ॥
पठयो मोहिं तोरि हित चाही। काहे होत हंस कुलादाही ॥
दोहा—सुनत सात्यकी के वचन, करि दृग लाल कराल ॥
हँसत हंस बोल्यो वचन, बिसऱ्यो मानहुँ काल॥४४॥
अरे दुष्ट यादव सुनु पोचू। तोहिं न लागत मोर सँकोचू ॥
कौन नंदसुत को बलरामा। गोपहु जुरत कतहुँ संग्रामा ॥
संगर जरासंध सों हारा। यवन भीति त्याग्यो परिवारा ॥
सो अहीरकी करत बड़ाई। सभा मध्य तोहिं लाज न आई ॥
मेरे निकट दूत ह्वै आयो। ताते तेरो जीव बचायो ॥
ना तो काटि कृपाणहि शीशा। पठवावतो जहाँ तुव ईशा ॥
वदन बंद कुरु बुद्धिविहीना। मातु कहो जो हम कहि दीना ॥

तब हँसि कह्यो सात्यकी वीरा। रेशठ तुव मुख परि हैं कीरा॥
मोरे सन्मुख मम प्रभु काहीं। अनुचित बोलत वचन वृथाहीं॥
आयसुदियो न मोहिं यदुनाथा। नतु यहि क्षण कटत्यों तुव माथा
तोहिं हतन नहिं मम प्रभु ऐहैं। मोहिं सम लघु लघु वीर पठैहैं॥
समर सुरासुर जीतनवारे। महारथी दश हैं अनियारे॥

दोहा—रामबभ्रु अरु उद्धवहु, कृतवर्मा अक्रूर॥
विप्रुथ सारंग तारनहु, अरु बलसुत द्वै शूर॥ ४५॥

शिव वरदान विवश मद बाढ़ा। अबै न पऱ्यो समर तोहिं गाढ़ा॥
करें सैकरन शम्भु सहाई। तदपि तोहिं हनिहैं यदुराई॥
तुव सँग जो न शम्भुगण धावत। भूत कहूं भट सन्मुख आवत॥
अस रिस लागि रदन तुव टोरौं। छोरि शस्त्र यहि क्षमा पछोरौं॥
दूत धर्म पुनि करहुँ विचारा। ताते धरहुँ धीर दरबारा॥
कह्यो मोर प्रभु सुनु शठ बानी। समर करन मति जो हुलसानी॥
तो पुष्कर मधुपुरी प्रयागा। अथवा गोवर्द्धन भुव भागा॥
तहँ आवहु निज सैन्य सजाई। होय हमारि तुम्हारि लराई॥
तहँ डांड़ हम तुम कहँ देहैं। अथवा मुनिन वैर हठि लेहैं॥
तब बोल्यो पुनि हंस रिसाई। भली बात तैं मोहि सुनाई॥
ऐहैं पुष्कर परौं प्रभाता। तुमहुँ चलहु जो जिय न डराता॥
तहँ देखब गोपन मनुसाई। गोप गर्व मोहिं सहो न जाई॥

दोहा—को अस जगमें जीव धर, डांड़ न जो मोहिं देत॥
कौन कहानी गोपकी, मीच मांगि मुख लेत॥ ४६॥

सुनि सकोप भूपतिकी बानी। सिनि कुमार अस बात बखानी॥
निज प्रभु निंदन सुनै जो काना। होत ब्रह्मवध पाप महाना॥
काल विवश तैं शठ द्विज द्रोही। बहुत बुझाय कहौं का तोही॥
अस कहि सात्यकि परम निशंका। वीर बाँकुरा संगर बंका॥

उठिकै तमकि तुरंत तहाहीं। चल्यो द्वारका भय कछु नाहीं॥
आयो यदुपति सभा मझारी।करि प्रणाम असि गिरा उचारी॥
नाथ कालवश हंस महीपा।मरण चहत जिमि कृमि भ्रमि दीपा॥
अब तौ नाथ विलंब न कीजै। सैन्य सजावन शासन दीजै॥
पुष्कर चलिये होत प्रभाता। तहँ आवन कह द्विज दुखदाता॥
सात्यकि वचन सुनत यदुराई। सेनापति निज निकट बोलाई॥
सैन्य सजावन शासन दीन्ह्यों।सो मुद मानि शीश धरि लीन्ह्यों॥
जाय सैन्य सब तुरत सजाई। लायो द्वार देश अतुराई॥

सोरठा—सजी सैन्य चतुरंग, यदुकुल कमल दिनेश की॥
संयुत तुंग तरंग, मनहुँ उदधि उमडत भयो॥ ११॥

झूलना॥मत्त गज ठट्टसरपट्ट जिन पट्ट अटपट्ट गुणि हटत दिग दंति के जूट हैं॥ पट्ट गहि भट्ट रणकट्ट काटत विकट झट्टही पट्ट रिपु भट्टके कूट हैं॥करत झरपट्ट रिपुनट्टके वट्टसे पट्टमहिपरत लटपट्ट रणखूट है॥ पट्ट हाटक निटिल हट्ट हाटक समिटि खरे रघुराज उदभट्ट भट वूट है॥ १॥ ओरहैं॥ चंचला चमक सी चमक चमकत परत चौंकते चौगुने चारिहूं चंडकर चक्रधर चंद्रधर चारिमुख चित्त जादिकनके चित्त चखचोर हैं॥ चित्रपट सों लिखे चित्र अति चारु वपु उच्चस्रव चटकई चोपनी चोरहैं॥ चंदकुल चंदके चंद चंदनहु से तुरंग चोखेसु रघुराज चय चोर हैं॥ २॥

छप्पय—चामी करके चारु चक्र स्यंदन बहु राजैं॥ नहे नवीन तुरंग रंग रंगनके भ्राजैं॥ सब प्रकारके पैनधार आयुध भरिभूरे॥ जुवां जोत गुनकील सकल हाटकके रूरे॥ मणि चित्र विचित्रन से खचित मनुमनोज निजकर रचे॥ जिन सुनत घर्घरा सोररिपु भजि भजि लुकि लुकि मरिपचे॥ १॥

दोहा—आई सजकै सैन्य सब, प्रभु मंदिरके द्वार ॥
जोरि पाणि दारुक कह्यो, हे देवकीकुमार ॥ ४७ ॥
उठि हरि स्यंदन भये' सवारा। बाजि उठे यक बार नगारा ॥
बजे शङ्ख तूरज सहनाई। औरहु बाज विविध झरिलाई॥
चली सैन्य कछु वरणि न जाई। जिमि पूरुब मारुत मेघवाई ॥
लसैं हजारन फहरि निसाना। छाया छापित दशहु दिशाना॥
गगनपंथ पूऱ्यो उड़िधूरी। मूंद्योभानु भासकहँ भूरी ॥
करैं वीर बहु केहरिनादा। बाढ्यो समर मरण अहलादा ॥
श्वेत तुरंग विशोक सारथी। राजत रथपर बल महारथी ॥
सात्यकि दानपती कृतवर्मा। गद उल्मुक निसठहु धृतवर्मा॥
रणबांकुरे सकल यदुवंसी। चले समर हर्षित अरिध्वंसी ॥
बारहि अक्षोहिणि दलसाजा। पुष्कर चल्यो चाय यदुराजा॥
राजत उग्रसेन महराजा। चारिचारु चामर छविछाजा ॥
तिमि वसुदेव चल्यों रथचढ़िकै। हंस समर जीतन मुद मढ़िकै॥
दोहा—यहि विधि श्री यदुनाथ चलि, पुष्कर पहुँचे आय ॥
सुभट विकट सरतट निकट, वसे निपट मुदपाय ४८
करि पष्कर महँ मज्जन पाना। वसे विचिंत्य निशा अवसाना ॥
समर हर्ष निशि नींद न आई। लखत दिशा दिय निशा बिताई
लहे सकल भट जब भिनसारा। मज्जन कीन्हे सरशुचि सारा ॥
उतै हंस डिंभक बलवाना। रणहित पुष्कर कियो पयाना ॥
दश अक्षोहिणि सेना संगा। स्यंदन पति तुरंग मातंगा ॥
धरे धनुष दोउवीर विशाला। लसत उदंड त्रिपुंड्रहु भाला ॥
सब तनु रुद्र अक्ष कर माला। भस्म विलेपित अंग कराला ॥
जटाजूट शोभित शिरमाहीं।जयशिव जयशिव भाषत जाहीं॥
सुंदर स्यंदन उभय सँवारा। हियमहँ समर उमंग अपारा ॥

शंकर गण दोउ रूप विशाला। लसै मनहुँ कालहुके काला॥
महाकुपित अतिलंब शरीरा। ऊँचे ताल तीनि बिन चीरा॥
महा विकट कटकट रव करहीं। वमत वदन पावक भय भरहीं
दोहा-हंस और डिंभकहुँके, चले उभय दिशिजात॥
दोहुनको रक्षण करत, वारवार बतरात॥ ४९॥
दानव यक विचक्र जेहिं नामा। मित्र हंस डिंभक कर कामा॥
इंद्र वरुण यम और कुवेरा। जो संगर सन्मुख मुख फेरा॥
भयो सुरासुर संगर जवहीं। सुरन विचक्र जीतिलिय तवहीं
ऐरावत चढ़ि वासव आयो। तेहिं विचक्र विन श्रमहिं हरायो
कियो विष्णु सों आहव घोरा। हन्यो रणाजिर सुरन करोरा॥
द्वारवती महँ बारहिंबारा। जात रह्यो दानव दुर्वारा॥
करत उपद्रव रह्यो अनंता। सो श्रुति सुन्यो समर श्रीकंता
लाखन दानव ले जय आसा। आयो हंस डिंभकहि पासा॥
राक्षस यक हिडंब अस नामा। सो विचक्रकर मित्र ललामा॥
महाबली मायावी पूरा। श्रीपति समर सुन्यो श्रुति शूरा
सो विचक्र सँग कियो पयाना। जीतन चहत कुमति भगवाना
राक्षस संगहि सहस अठासी। भूरि भयंकर भट रुधिरासी॥
ऐसी सैन्य साजि दोउ भ्राता। आये पुष्कर गर्व अघाता॥
दूत दौरि प्रभु खबरि जनायो। डिंभक सहित हंस चलि आयो॥
दोहा-हंस डिंभकहु आगमन, सुनि तुरंत भगवान॥
सजे समर हित सहजहीं, कह्यो बजाव निशान॥५०॥
छंद वामन॥ हरि हुकुम सुनि सब वीर। सन्नद्ध भे रणधीर॥
बाजे अनेक निशान। रव छयो दशहुँ दिशान॥ मातंग तुंग
तरंग। स्यंदन सजे बहु रंग॥ भट वदत बर्बर वानि। करि
युद्ध हित हुलसानि॥ यदुवंश सैन्य सजाय। स्यंदन चढ़े य-

दुराय ॥ किय पांचजन्यहि शोर । चहुँ ओर छायो घोर ॥ यदुवंश दल सजि भूरि । छावत दिशन महँ धूरि ॥ सन्मुख भयो रिपु वोर ॥ हिय भीति है नहिं थोर ॥ तिमि हंस डिंभक सैन । आई समर भरि चैन ॥ दोउ दल पयोधि समान । दोउ ओर अगम देखान ॥ दोहुँ ओर विविध निशान ॥ फहरत फवत असमान ॥ दोहुँ ओर बाजत बाज । दोहुँ ओर भट घन गाज ॥ दोउ सैन्य मंदहि मंद । गमनत उमंग अनंद ॥ मिलि गई कोप अपार ॥ मनु मिले पारावार ॥ दोउ दिशन ते हथियार॥ बहु चले बारहिंवार ॥ शर शूल पट्ट कृपान ॥ तिमि भिंडिपाल महान ॥ ८ ॥

दोहा—सिंहनाद करि घोर भट, करत अभय संग्राम ॥
शूर शुद्ध रण त्यागि तनु, लहत स्वर्ग सुखधाम॥५१॥

तोटकछंद ॥ नभ धूरि चहूँ कित छाय रही । चहुँ ओरन शोणित धार बही ॥ महि आयुध की झनकार छई । ललकार प्रवीरन रोष मई ॥ १ ॥ शरलागत शीश उड़ात नभै । कोउ कातर युद्ध परात सभै ॥ पलका कहुँ कंक निशंक भखैं । गण गीधन के पल सद्द चखैं ॥ २ ॥ बहती बहु शोणित की सरिता । भुवि कादर की भय की भरिता ॥ बहु भांतिन प्रेत जमाति जगैं । सँग योगिनि शोणित पान पगैं ॥ ३ ॥ हिलिकै झिलिकै भट तेग हनैं ॥ रिपु देखत वीरन वाणि भनैं ॥ उत राक्षस दानव मानवहूं ॥ इत वीर बहादुर यादवहूं ॥४॥ संग सा संगसी दोउ फौजन की । छवि वीरन विक्रम मौजन की ॥ ललकारन की किलकारन की । भट भूतन सोभ हजारनकी ॥ यक ओरन लोथि पहार लगे । न मुरैं भट शूर सोहाग रँगे ॥ गजसों गज बाजिन बाजिन सों ॥ रथ राजिन सों रथराजिन सों ॥६॥

भट व्याकुल शंकुल युद्ध करैं। शर मारि झिलैं नहिं नेकु मुरैं॥ त्वच मांस बसा महि कर्दम भो। थल ऊंचहु नीच पलै सम भो॥ ७॥ असि घोर कवंधहु कंध धरे। धरणी पर धावत रोष भरे॥ यहि भांति महा घमसान ठयो। दुहुँ ओरन वीर विनाश भयो॥ ८॥

दोहा—करि संकुल रण भट सकल, थकि थकिगे बिलगाय॥
करन लगे तब द्वंद्व रण, वीर वीर रस छाय॥ ५२॥

छंदपद्धरी॥ दानव विचक्र यदुराज बीर। दोउ करत युद्ध भट युद्ध धीर॥ बलराम और बलधाम हंस। संग्राम करत जय काज शंस॥ १॥ सात्यकी और डिभक प्रचंड॥ दोउ करत युद्ध जगती उदंड॥ नृप उग्रसेन वसुदेव दोउ॥ राक्षस हिडंब सँग भिरे सोउ॥ २॥ कृतवर्म गदादिक भट अक्रूर॥ सब और जुरे शूरनहु शूर॥ हरि हन्यो तिहत्तर शर प्रचंड। दानव शरीर फूटे उदंड॥ ३॥ यदुनाथ मारि पुनि मार धार। दानवहिं मूंदि दिय लगि न वार॥ तब कियो कोप दानव विचक्र॥ सब बाण तुरंतहि तोरि वक्र॥ ४॥ धनुखैंचि कान लों एक बान। मारयो मुकुंदके उर महान॥ सो लगत बाण कढि गयो फोरि। कछु शिथिल भये प्रभु उठि बहोरि॥ ५॥ हरि हन्यो बाण जेहिं मुखदुफांक। कास्यो विचक्र कर ध्वज पताक॥ पुनि दल्यो शीश सारथी केर। दानव तुरंग हनि चारि फेर॥ ६॥ प्रभु पांचजन्य कर शोर कीन। खदुहुँन दलन महँ छाय दीन॥ रथ ते तुरंत कूद्यो विचक्र॥ यक गदा लियो जेहिं डरत शक्र॥ ७॥ हरिको किरीट तकि बहु भँवाय। करि सिंहनाद दीन्ह्यो चलाय॥ प्रभु रथचलाय तेहिंगे बचाय। दानव प्रचंड तब कोपछाय॥ ८॥ यक महाशिला

बहुविधि भँवाय । हरि वक्ष ताकि दीन्ह्यों चलाय ॥ सो शिला-रोकि हरि दियपवारि। सो लगी दुष्ट छाती विदारि ॥९॥ गिरिगो विचक्र वसुधा विसंग ।पुनि उठ्यो सुरति करि वीरजंग॥यकलियो परिघ अतिशय कराल।असकह्यो वचन सुनु नंदलाल॥१०॥यह परिघ हरी सब दर्पतोर । तैं खूब जानतो जोर मोर ॥ जब समर सुरासुर भयो घोर । हम तुमहुँ लरे तब एक ठोर॥११॥सोइ बाहु हमारे हमहुँ सोय । तोहिं विसरिगई सुधि कहुँ नहोय ॥ जो वीरहो-सि परिघै बचाव । हौं हरत प्राण यह घालिघाव॥१२॥असभाषि परिघ छोंड़्यो कराल ।सो पकरि पाणि देवकी लाल॥किय नंदक-ते बहु खंडताहिं। कोपित विचक्र तब समरमाहिं॥१३॥शत शाख वृक्ष लीन्ह्यों उखारि।छोंड़्यो विचारि मृतकै मुरारि ॥ प्रभु नंद-कसों बहुखंडकीन । पुनि भरि अमरष शर एक लीन ॥ १४ ॥ वह आग्नि अस्त्र संपुटित बान । मारयो विचक्र कहँ गरुडयान ॥ शर लगत भस्म ह्वैगोविचक्र । नाहिं देखि परे पद पाणि वक्र॥१५॥ प्रविस्यो पतत्रि पुनि तूण आइ । दानव पयोधि प्रविसे पराइ॥१६॥

दोहा—उतै हंस बलभद्र दोउ, करन लगे रणघोर ॥
हन्योविशिष दश हंसकहँ,उत रोहिणी किशोर॥८३॥

भुजंगप्रयातछंद ॥ हलीको हन्यो हंस नाराच पांचा । हली बाण मारयो दशै ज्यों पिशाचा ॥ हन्यो हंसके भालमें एकबाना । गिरयो मूरछा पायकै मध्यजाना ॥ १ ॥ उठ्यो सिंहसों सोरकै कोपभारी । महाबाण रामै उरै ताकि मारी ॥ गयो भेदिसो वर्मको घोरबानू । फब्यो युक्त ज्यौं कुंकुमै शीत भानू ॥ २ ॥ हली सायकै सत्त साहस्र मारयो । रथै सूत वाजी ध्वजाचापदारयो॥ गिरयो हंसहू मूर्छितै भूमिमाही ॥ गह्योचाप दूजो हन्यो रामकाहीं ॥ ३ ॥ दल्योछत्र सूतै तुरंगै ि

गदाधारि धायो तबै रामजंगै॥ गहे त्यों गदा हंसहू दौरि आयो। उभय वीर गर्वी गदाको चलायो॥ ४॥ उभयवीर राचे गदा युद्ध शुद्धा। उभयवीर राजैं मनौ कालक्रुद्धा॥ कहूं ठाढ़होते कहूं कूदिजाते। गदा घातको वेग तातें बचाते॥ ५॥ भरैं पैतरे दक्षिणै वामरीती। चहैं आपनी आपनी जंगजीती॥ हली हंसको ज्यों गदायुद्ध ठायो। न देवासुरे संगरे त्यों दिखायो॥ ६॥ चढ़े हैं विमानै खडे हैं अकासा। हलीहंसको देव देखैं तमासा॥ भरे हर्ष गीर्वान वर्षैं प्रसूना। कहैं युद्ध ऐसो लख्योहै कहूंना॥७॥ जदा हंस मारचो गदाको नेराई। तदा छीरि लीन्ह्यों गदारामराई॥ कियो लातको घात बक्षैमझारी। गिऱ्योहंस भूमे भयो मोहभारी॥ ८॥ कह्यो रामरे दुष्ट उत्तिष्ठवेगै। हनै देहँमें जोरसों आजतेगै॥ उठैगो जबैलों नहीं हंसराजा। करौंगो तबैलों न घातै दराजा॥ ९॥

दोहा—उठो हंस नहिं मोहवश, ठाढ़रहे बलराम॥
डिंभक सात्यकिको लगे, लखन महासंग्राम॥ ५४॥

छंदहरिगीतिका॥ सात्यकि डिंभक विश्ववीर विख्यातसा यक घातमें। दोउलरत अमरर्ष भरत धारत चित्त शत्रु निपातमे॥ दशविशिख सात्यकिं हन्यो डिंभक वक्षताकि तुरंतहीं॥ यकबाण मारचो सात्यकी तब भाषि अब तुव अंतहीं॥ १॥ सो बाण डिंभक लागि उर तनु फूटि भूमि समायगो। तब हन्यो डिंभक लाख शर कहि काल तेरो आयगो। तब काटि सात्यकि सकल शर कोदंड डिंभकको दल्यो। हंसानुजहु गहिचाप दूसर अर्धचंद्रहि हनिझिल्यो॥ २॥ सोइ सात्यकी तनु अर्ध चंद्र विदारि पारसको दियो। जन सकल शोणित में भयो जनु फूलि किंशुक छबिलियो॥ तब कोपि सात्यकि रिपुशरासन

एकदूसर तीसरो।दियकाट बोल्यो डांटि बैनन बीरतैं खलखूसरो॥ यहि भांति शत अरु पांच डिंभक चाप सिनिसुत काटिकै। किय सिंहनादहि भट रंणाजिर रिपुहि बहु विधि डांटिकै॥ तब कोपि डिंभक ढाल अरु करवाल लिय रथ त्यागिकै। कूद्यो तुरंतहि शत्रु सन्मुख चल्यो जै अनुरागिकै॥४॥ तब सात्यकिहु धरि धनुष कर करवाल ढालहु धारिकै। द्रुत कूदि स्यंदन ते चल्यो निज जीति मनहिं विचारिकै॥ अभिमन्यु डिंभक सात्यकी अरु सोमदत्तहु नकुल हूं॥ अरु तनै दुःशासनहुँ को षट वीर असि रण अतुलहूं॥ ५ ॥ दोउ करत खड्ग प्रहार बारहिं बार बहुत प्रकारके। तिन को कहत में नाम जे हैं हाथ मुख्यहथ्यारके॥ उद्भ्रांत भ्रांत प्रवृद्ध आकर विकर भिन्न अमानुषै। आविद्ध निर्मर्याद कुल चितबाहु निस्सृत रिपु दुषै॥६॥ तिमि सव्य जानु विजानु संकोचित सुआहित चित्रको। धृतलवन कुद्रव छिप्त सव्येतर तथा उत्तरतको॥ तिमि तुंग बाहु त्रिबाहु सव्योन्नत उदासिहु अत्तिसै॥ पृष्ठत प्रथित जोधित प्रथित ये हाथ जानौ बत्तिसै॥७॥ये हाथ बत्तिस सात्यकी डिंभक प्रहारत समर में। अति लाघवी करि पैतरे भरिहनत शिर उर कमर मैं॥ कहुं कूदि जात अकाशहूँ पुनि भूमि आय थिरात है। कहुँ चलत चहुँ कित चटक चोपित चंचला चमकात है॥ ८॥

दोहा—बढ़ि दोऊ भट जोर सों, हन्यो बरोबर घाव॥
मही दोउ मूर्छित परे, घट्यो न युद्ध उराव॥५५॥
अर्जुन दूजो सात्यकी, तीजो श्रीयदुराज॥
डिंभक षण्मुख शंभु तिमि, षट धनु धर शिरताज॥
ऐसो भाषित देव सब, चढ़े अकाश विमान॥

लखैं समर कौतुक मुदित, पावत मोद महान ॥८७॥
उग्रसेन वसुदेव प्रवीरा। वली पलित जर्जरित शरीरा॥
महावृद्ध युत ज्ञान विज्ञाना। ज्ञाता भूपति नीति निदाना॥
ते दोउ समर करन अनुरागे। रथ चढ़ि वाण चलावन लागे॥
उत राक्षस हिडंब बलवाना। आयो सन्मुख समर महाना॥
पीत केश रोमा तनु ठाढ़े। बाहु विलम्ब रदन अति बाढ़े॥
बाजि सरिस नासिका भयावनि। लंबी हनु विभीत उपजावनि॥
सिवा सरिस मुखदीरघ डाढा। वपुष विंधगिरि मानहुँ बाढ़ा॥
महा भयङ्कर दुष्ट हिडंबा। धावत भक्षत भटन कदंबा॥
गज उठाय गजपर दैमारै। बाजिन को बाजिन पै डारै॥
रथन पटकि रथपर चढ़ टोरै। करत शोर चहुँ ओर कठोरै॥
बड़े बड़े बीरन धरि खावै। गज बाजिन भक्षै अरु धावै॥
एक मनुज कहँ करत न कोरा। पंच पंच दश भक्षत जोरा॥
दोहा—कोउ भक्षत पटकत कोऊ, कोउन चपेटत पाय॥
प्रलय रुद्र सम लसत रण, लखिभट चले पराय॥८८॥
यक क्षण महँ यदुवंशी सैना। खाय हिडंबक कियो अचैना॥
कछू डिंभ भक्षण ते बाचे। ते भट समर करन नहिं राचे॥
हाहाकार करत सब भागे। पीछे नहिं चितवत भय पागे॥
कुंभकर्ण जिमि रण में आयो। मर्कट कटक कोटि भट खायो॥
तैसे सो हिडंब बलवाना। यदुवंशिन खायो भटनाना॥
सन्मुख समर भयो नहिं कोऊ। बड़े वीर बानयतहु सोऊ॥
आनकदुंदुभि आहुक राजा। चढ़ि रथ धरि कोदंड दराजा॥
गे हिडंब सन्मुख बिनदेरी। क्षुधित बाघ आगे जिमि छेरी॥
दोउ वृद्धन लखि राक्षस घोरा। धायो खान हेतु करि शोरा॥
अंध कूप सम मुख बगराये। चावत मृतक मनुज मुख लाये

उग्रसेन आहुक दोउ वीरा । राक्षस वदन भरयो बहु वीरा॥
चाबि लियो शर सकल चलाये । खान हेतु धायो मुख बाये ॥
दोहा—दोहुँ को टोरयो धनुष धरि, लीन्ह्यों सारथि खाय ॥
बाहु पसारे धरन को, धायो आनन बाय ॥ ५९ ॥
कह हिडंब तहँ हँसत ठठाई । उग्रसेन वसुदेव सुनाई ॥
रे हारि पिता तोहिं मैं खैहौं । उग्रसेन कहँ नाहिं बचैहौं ॥
वृद्ध तुम्हैं दोउनको खाई । मैं जैहौं अब आसु अघाई ॥
भले आजु आये रणमाहीं । है तुम्हार बाचिबो अब नाहीं ॥
काहे को अब श्रम करवावहु । तुमही मेरे मुखमहँ आवहु ॥
जो मेरे मुख परिहौ नाहीं । तो हम खाब काटि तुमकाहीं ॥
अस कहि दौरयो राक्षस घोरा । खान हेतु वृद्धन तेहिं ठोरा ॥
आवत काल समान भयावन । हेरि हिडंबहि महा अपावन ॥
उग्रसेन वसुदेवहु दोऊ । निरखि नगीच नहीं भट कोऊ॥
चहुँकित चितये अति भै भीने। निज रक्षक नहिं कोउ लखि लीने
भागे बूढ़ तुरत रथ कूदी । आयुध डारि उघारे चूंदी ॥
रपट्यो तहँ हिडंब दोउ काहीं । हाहाकार मच्यो चहुँ घाहीं ॥
दोहा—उग्रसेन महाराज को, अरु वसुदेवहु काहिं ॥
भक्षत आजु हिडंब है, रक्षत कोऊ नाहिं ॥ ६० ॥
ऐसो शोर मच्यो चहुँवोरा । सुन्यो श्रवण रोहिणी किशोरा ॥
लड़त रह्यो बल हंसहि संगा । लोचन फेरि लख्यो तेहि जंगा ॥
जान्यो निश्चित वोजकदंबा । पिताहिं नरेशहि भषत हिडंबा ॥
सौंप्यो हंस युद्ध हरिकाहीं । सावधानह्वै लरहु इहाँहीं ॥
अस कहि कोपित हलधर धायो । ऊंचे स्वर हिडंब गोहरायो ॥
खाय न खाय न बूढ़न काहीं । ऐसो साहस करियतु नाहीं ॥
छोंडु छोंडु शठ जरठ प्रवीरन । यह नहिं धर्म धरा रणधीरन ॥

मोहिं खाय पुनि वृद्धन खाहू। तौ ह्वैजाय तोर बल थाहू ॥
अस कहि दौरि द्रुतहि बलराई। पितु अरु राक्षस बीचहिं आई ॥
ठाढ़ भयो कोपित बलरामा। देखो रामहिं राक्षस आमा ॥
कह्यो वचन तब हँसत ठठाई। आजु अहार दियो विधिराई ॥
तोहिं पाय वृद्धन नहिं खैहौं। युवतनमहँ सबभांति अवैहौं ॥

दोहा–अस कहि दौरयो वेग सों,क्षुधित निशाचर घोर ॥
धरयो आय अति जोर सों, करिकै शोर कठोर॥६१॥

रामहु निज आयुध महि डारी। निश्चर उर मूठी इक मारी ॥
लगत मुष्टि राक्षस विकरारा। गिरयो महीमहँ खाय पछारा ॥
भयो विसंग मृतक सम जबहीं। दोउ करचरण पकरि बल तबहीं॥
ताहि उठाय भँवाय भँवाई। फेरयो बल करिकै बलराई ॥
राक्षस परयो जाय षट कोसा। रह्यो न तनुमहँ नेसुक होसा ॥
निश्चर ह्वै गो मृतक समाना। बहुत काल तहँ परे बिताना॥
रह्यो भीम कर ताकर काला। ताते मरयो न निश्चर हाला ॥
उठि हिडंब रण रोस विहाई। गयो सिंधुमहँ सभय समाई ॥
बलको बल विलोकि यदुवंसी। जयजयकार कियो अरिध्वंसी॥
इतने काल माहिं दिननाथा। परसन कियो अस्त गिरि माथा
प्राणहारिणी निशि जब आई। सूझि परै नाहिं कर पसराई ॥
दोउ दिशि भयो युद्ध तब बंदा। प्रगट्यो पूरब पूरण चन्दा ॥

दोहा–दोऊ वीरन बाहिनी, पुनि पुनि व्यूह बनाय ॥
सँभरि सँभरि भट रण करन, लागे अति हर्षाय ॥६२॥

उतै हंस डिभक रणधीरा। भये सैन्य आगे दोउ वीरा ॥
राम श्याम इत दलके आगे। होत भये रिपुजय अनुरागे ॥
मच्यो उभय दलमें घमसाना। उभय सैन्य भट लरत समाना॥
कोहुको भान रह्यो तनु नाहीं।जानि परयो नहिं कछु निशि माहीं

हंस सैन्य हरि सैन्य हटावै । कहुँ हरि सैन्य अधिक बढ़िजावै
यहि विधि बढ़त हटत निशिमाहीं । समर करत तनु तजत तहांहीं
गोवर्द्धन गिरि तट दल दोऊ । आय गये जान्यो नहिं कोऊ ॥
यमुना तट महँ भयो प्रभाता । मच्यो बराबर आयुध घाता ॥
मिल्यो न संध्याकर अवकाशा । होत बराबर वीर विनाशा ॥
सारणादि सात्यकि हरि रामा । कियो मनहिंमन शैलप्रणामा ॥
ततहँ महारथी यदुबीरा । घेरे हंस डिंभकहि धीरा ॥

दोहा—हन्यो सात वसुदेव शर, भूप तिहत्तरि बान ।
सात्यकि मार्‌यो सात शर, शठहि तिहत्तरि मान ६३

सारण सायक हन्यो पचीसा । कंक हन्यो दशशर तकिशीशा॥
विप्रथु असी बाणतक मार्‌यो । उद्धव दशइषु तिन पर झार्‌यो
हंस और डिंभक दोउ भाई । रण सबके शिर काटि तुराई ॥
हन्यो सबन कहँभरि भरि बाना ।मूंदि दियो ध्वज सारथि याना॥
वमत रुधिर भे वीर विहाला । जिमितरुकुसुमितकिंशुकलाला
डोलि उठी सब यादव सैना । हंस विशिख सहि सकत बनैना
उद्धव सात्यकि आदिक जेते । मूर्च्छित परे मही महँ केते ॥
इतर वीर सब लगे पराई । हंस डिंभकहु शर झरि लाई ॥
यदुवर हलधर भे बाढ़ि आगे । हंस डिंभकहिं मारन लागे ॥
करत युद्ध भट चारिहु क्रुद्धा । इक एकनसों वीर विरुद्धा ॥
अवसर जानि शम्भु गण दोऊ । आवत भे रक्षण हित सोऊ ॥
हंस डिंभकहि करि मधि माहीं । करन लगे माया चहुँवाहीं ॥

दोहा—डिंभक के सँग क्रुद्ध ह्वै, करत युद्ध बलराम ।
तथा समर लीला करत, हंस संग घनश्याम ॥ ६४॥

दोऊ हरके गण विकरारा । माया करहिं अनेक प्रकारा ॥
हंस डिंभकहु शंख बजावहिं। बार बार निज विजय जनावहिं ॥

शंख शोर देवकी किशोरा। करत जोरसों भारि चहुँओरा॥
शिथिल हंस डिंभक कहँजानी। शंकर गण अति अमरपठानी॥
लै लै शूल करत किलकारी। धाये जिमि शिखि पै पखियारी॥
दुहूँ ओर ते मारयो शूला। हारिहि लगे जिमि कैरवफूला॥
तराकि तुरंत तहाँ भगवंता। गह्यो शंभु दूतन वलवंता॥
दोहुँ करसों दोहुँन पद गहिकै। जाहुशम्भु लोकहिअसकहिकै॥
दोहुँन कहँ सतवार भवाँई। कैलासहि फेंक्यो यदुराई॥
परे शम्भु गण शम्भु लोकमें। अपनी अपनी जात थोकमें॥
मूर्च्छित भये तनक सुधि नाहीं। हर हँसि जीवन दिय तिन काहीं॥
पुनि नहिं समर करन मनकीने। हरि विक्रम विलोकि भयभीने

दोहा—देखि त्रिविक्रम विक्रमहिं, हंस कह्यो भारि भीति।
राजसूय महँ विघ्न हरि, करिबो अति विपरीति ६५॥

जो मन भावे सो कर देहू। लवण न होय तौ नहिं संदेहू॥
करौ सर्वथा जो तुम नाहीं। तौ हमसे कैसे सहि जाहीं॥
हम सब राजन शासन कहहीं। हमरो शासन सब नृप गहहीं॥
जो न देहु करगोप कुमारा। तौ क्षण ठाढ़ रहौ यहि बारा॥
एकहि बाण गर्व हरि लैहैं। विनागर्व यमलोक पठैहैं॥
अस कहि धनु सायक संधाना। हन्यो ललाट देश भगवाना॥
हरि ललाट शर सोहत कैसे। पुष्प शराकृति शशि उर जैसे॥
तब दारुक पीछे बैठायो। हरि सात्यकि सारथी बनायो॥
कह्यो हंस सों करलै लीजै। यहि औसर नहिं शोच करीजै॥
विप्र शत्रु पूरो तैं पापी। करि पाखंड शम्भु मनु जापी॥
मोरे जियत विप्र अपकारा। कौन करन समरथ संसारा॥

दोहा—अस कहि केशव कोपि कै, अग्नि अस्त्र लै घोर॥
हन्यो हंस कहँ तब उठी, अनल प्रबल चहुँ ओर६६॥

वारुण अस्त्र हन्यो तब हंसा। अग्निज्वालकर कियोविध्वंसा॥
पवन अस्त्र पुरुषोत्तम छांड़्यो। हनि माहेंद्र हंस सो आड़्य॥
हन्यो महेश्वर अस्त्रमुरारी। रुद्र अस्त्र रोंक्यउ नृप भारी॥
तब अति कोपित ह्वै गिरिधारी। तीनि अस्त्र दीन्ह्यो तेहि मारी
राक्षस गांधर्वहु पैशाचा। प्रगटे तहँ बहु भूत पिशाचा॥
दिव्य अस्त्र लीन्ह्यों त्रैहंसा। विधि कुबेर यम कर रिपु ध्वंसा॥
तीनि अस्त्र तीनहुं कहँ मार्‌यो। फेरि ब्रह्मशर हरिपर डार्‌यो॥
अस्त्र ब्रह्म शर हरिहु चलाई। दीन्ह्यो ज्वालामाल बुझाई॥
वैष्णव अस्त्र लियो भगवाना। है नहिं वारण जासु विधाना॥
संधानत धनु महँ दिशि चारी। ज्वालामाल उठी अति भारी॥
हाहाकार मच्यो त्रैलोका। जरन लगे देवनके वोका॥
छोंड़ि दियो सागर मर्यादा। विधि शंकर किय विषम विषादा॥

दोहा—सुर नर अस भाषन लगे, क्षुद्र हंस के हेत॥
करत प्रलय अब जगत की, काहे कृपानिकेत॥६७॥

महा भयावन अस्त्र विलोकी। भयो हंस संगर महँ शोकी॥
छूट्यो करते धनुष विशाला। गयो कोप ह्वै गयो विहाला॥
जीव बचावन हेत डराई। कूदि यान ते चल्यो पराई॥
हंस घुस्यो कालीदह जाई। ताहि गिरत भो शोर महाई॥
हंस परात निरखि यदुनाथा। कूदि यान ते दौरे साथा॥
तासु उपर देवकीकुमारा। कूदि पर्‌यो किय चरण प्रहारा॥
गयो डूब कालीदह माहीं। अबलों देखि पर्‌यो पुनि नाहीं॥
कोउ अस कहहिं हंस मरि गयऊ। कोउ कह भुजँगन भक्षणभयऊ
देखिपर्‌यो नहिं हंस बहोरी। चढ़्यो आय रथमें हरि दौरी॥
जीवत जुपै हंस जगमाहीं। यज्ञ युधिष्ठिर होती नाहीं॥
देव बजाये मुदित नगारा। लागे वर्षन फूल अपारा॥

हन्यो हंस हरि हन्यो हंस हरि। यहै शोर जगमाहिं रह्यो भरि ॥
दोहा–भ्राता मरण विलोकिकै, डिंभक अति अकुलान ॥
बलभद्रहि लखि भीति भरि, रथ ते कूदि परान॥६८॥
कूदत भयो हंस जहँ जाई । कूदि पर्‍यो डिंभकहु तहांई॥
दौर्‍यो ताके पीछे रामा । कूद्यो कालीदह बलधामा ॥
निज अग्रज कहँ अति दुख पाग्यो।डिंभक जलमहँ खोजनलाग्यो॥
पुनि पुनि बूड़त पुनि उतराता । नहिं देखात भ्राता बिलखाता॥
कहुँ जल चारिहु ओर भँवावै । कहुँ बहु दूरि इतै उत धावै ॥
हली विलोकत तासु तमाशा ।जानि निरायुधकरत न नाशा॥
बहुत काल यमुना महँ हेरी । डिंभक गोहरायो हरि टेरी ॥
अरे नंद सुत भ्रात बतावै । मम अग्रज कर खोज लगावै॥
नातौ तोहिं डारिहौं मारी । अबलन गुरु वृंदावन चारी ॥
हरिहँसि कह्यो वचन अस ताको। अग्रज हित पूछै यमुना को॥
देई यमुना तोहिं बताई । जहां गयो ह्वै है तुव भाई ॥
तब यमुना सों पूछन लाग्यो । डिंभक महाशोक सों पाग्यो॥
दोहा–तब बोल्यो हँसिकै बली, सुनु डिंभक मतिहीन ॥
मोर भ्रात तुव भ्रात कहँ, मारि बोरि जल दीन॥६९॥
अरे अंध देख्यो तैं नाहीं । का पूछसि अब जड़जलपाहीं ॥
सुनत राम के वचन कठोरा । डिंभक चित्त भयो अति भोरा॥
लग्यो करन तब विपुलविलापा। बंधु विनाश लह्यो परितापा॥
हाय भ्रात मोहिं आजु विहाई । कहाँ गयो सुरलोक सिधाई ॥
यहि विधि डिंभक रोदन कीन्ह्यो।अपनो मरन ठीकमन दीन्ह्यो॥
उभय पाणि सों जीभि निकासी।डिंभक मर्‍यो यमुनजलरासी॥
कियो देव तब जयजयकारा। सुमन वर्षि दिवि दियोनगारा॥
रामहुँ निकरि चढ़े रथ आई । मिले परस्पर आनँद पाई ॥

पुनि हरि हलधर चढ़ि रथ एका ।सात्यकि आदिकसुभटअनेका
गोवर्द्धन गिरि गे गिरिधारी । बसे सैन्ययुत सबै सुखारी ॥
आनँद रसमहँ निशासिरानी । दूरि भई श्रम व्यथा गलानी ॥
दोहा—कहहिं परस्पर रणकथा, हरि बलको परभाव ॥
यदुवंशी रण बाँकुरे, बाढ़्यो चौगुनचाव ॥७०॥
हरि जै हंसक डिभकनाशा । फैलि गयो दुनियादश आशा॥
गोप गोवर्द्धन धेनु चरावन । आये हुते यमुन जलपावन ॥
ते सब हेरि हंस हरि युद्धा । दौरे वृंदावन कहँ शुद्धा ॥
जाय यशोमति नंदहु पाहीं । कह्यो सुनो सुख जेहिं मिति नाहीं॥
कोउ पापी पुहुमीपति भागी । दुरयो गोवर्द्धनदरी अभागी ॥
तेहि रपटे युत सैन्य विशाला । आयो राम सहित तुवलाला ॥
तुव लालन कहँ लखिनृपराई । कालिंदी दह घुसे पराई ॥
कालिंदीदह रामहुँ श्यामा । कूदि परे तिनके वध कामा ॥
रहे अघी भूपति दोउ भाई । हन्यो एक हरि इक बलराई ॥
रिपु जय पाय अछत दोउ प्यारे। बसे गोवर्द्धन शैल किनारे ॥
हम आये निज आंखिन देखी । है नहिं मृषा लेहु सति लेखी ॥
मानहुँ जो न हमार विश्वासू । पठवहु देखन जन तिन पासू ॥
दोहा—नंद यशोमतिसत्य जो, मानहु वचन हमार ॥
तौ तुरते पगु धारिये,देखन प्राणपियार ॥ ७१ ॥
कवित्त—गोपन बखान परयो नंद यशुमतिकान जैसी सूखी सालि में सलिल धारपरती ॥ सुजन भवन धन तन मन जाके हेत हितू नाहिं हेरती रही है मति अरती ॥ क्षणक वियोग जासु युग जोगही सो रह्यो आवन सुन्यो है ताको जामें लगी सुरती ॥ नंद औ यशोमतिकी आनँद समुद्र मिति रघुराज लाज भरि भारती न करती ॥ १ ॥ सुनतै प्रथम तनु भूलि गई सुधि

सारी जानि स्वपनो सों चौंकि ऊंचे चितै चारों ओर ॥ तुरत संदेशीको इनाम मणिगण दीन्ह्यो धाये गिरिराज दिशि आनंदको भयो भोर ॥ तनु की वसनहूंकी मन में सुरत नाहिं पथ में पथिक पूँछैं मिलत जे ठोर ठोर ॥ रघुराज प्राणप्यारो सर्वस हमारो कहो कन्हुवां कहां है कहो कन्हुवां कहां है मोर॥२॥

दोहा—गोवर्द्धनगिरि छोर में, आयो नंदकिशोर ॥
चारि ओर ब्रज ठोर में,फैलि रह्यो यहिशोर ॥७२॥

सुनतहि गोपी ग्वाल सुखारी । धावतभे तनु सुरति बिसारी ॥
मिसिरी माखन दूध बतासा । दही मही भरि शकटन खासा॥
भेट देन नँदनंदन काहीं । ब्रजवासी दौरतपथ जाहीं ॥
बाल युवा वृद्धहु अरु नारी । चले विलोकन कृष्णमुरारी ॥
पथिकन सों पूंछैं पथमाहीं । तुम देखे नँदलालन काहीं ॥
बढ़ी लालसा हरि दर्शनकी ।इकइक क्षण सम करत युगनकी॥
कोउ अपने करमाखन लीने । देबलालको हम सुख भीने ॥
कोउ दधि लिये कहैं हम जाई । देबलाल कहँ आजु खवाई ॥
हमैंचीन्हिहैं अवधौं नाहीं । भेटहोति बहुदिवसन माहीं ॥
सुनियत श्याम विभवबड़ पायो। यदुपति अपनो नाम धरायो ॥
हमहिं प्रथम देखब अब जाई । नंदलाल कहँ अंक उठाई ॥
चूमब वदन लेब वलिहारी । महाविरह दुखदेब निवारी ॥

दोहा—ब्रजवासी को पुनि कहत, वरबस ब्रज महँ ल्याय ॥
नंदलालको द्वारका, हम न देब पुनि जाय ॥ ७३ ॥

रहे संग के सखाखेलारी । बारबार ते कहत उचारी ॥
बैठब हरिसँग दावन जोरी । भये भूप तौ नहि कछु खोरी ॥
कृष्ण संग खेलब बहुखेला । बहुत दिवस महँ परिगो भेला ॥
हारे दाँव लेब पुनि आजू । बैठब कुंजन जोरि समाजू ॥

वृद्ध वृद्ध गोपिका सयानी । गमनत कहत परस्पर वानी ॥
सुधिह्वैहै दधि माखन चोरी । करत रह्यो ब्रजखोरिन खोरी ॥
अब तो भूप भये नँदलाला । ह्वैहै विसरो बाल ग्वाला ॥
रहीं गोपिका जे हरि प्यारी । ते अस कहहिं नयन जल ढारी
आज लखब हम प्राणपियारो। जो ब्रजवासिन सुरति बिसारो ॥
लैजिय दै दुखगयो पराई । कुबरीके कर गयो बिकाई ॥
लेब वैर सिगरो गहिश्यामैं । जो दै दगा गयो ब्रजवामैं ॥
सुनियत व्याह कियो बहुतेरे । औरहि रंग मिली अब हेरे ॥

दोहा—छलिया छलकरि छटिगयो, दीन्ह्यों सुरति बिसारि ॥
मारि कटाक्ष कसानिसों, लेवै श्याम सुधारि ॥७४॥

यहिविधि हिय हुलसत ब्रजवासी।चले जात हरि दरशन आसी॥
नंद यशोमतिदोउ मधि माहीं । चहुँकित ब्रजवासी पजाहीं ॥
पहुँचे गोवर्द्धन ढिग जबहीं । यदु सेना देखे सब तबहीं ॥
हरिकें दूत दूरिसों देखी । जाय कह्यो प्रभुसों मुद लेखी ॥
नाथ सकल तिहरे ब्रजवासी । धावत आवत दरशन आसी ॥
सुनि सुखधाम राम अरु श्यामा।काम अराम त्यागि तेहि यामा॥
जैसे जहँ बैठे दोउ भाई। तैसे तहँ धाये अतुराई ॥
सैन्य मध्य माच्यो अस शोरा । जात कहूँ वसुदेव किशोरा ॥
सात्यकि उद्धव आदिक वीरा । धाये नहिं पाये यदुवीरा ॥
कोउ छत्रलै धावत जाहीं । कोउ चमरलै प्रभु पछि आहीं ॥
कोउ व्यंजनलै धावत पाछे । नहिं पावत प्रभु कहँ गति आछे॥
खरबर परचो सकलदल माहीं । धाये कौतुक देखन काहीं ॥

दोहा—यहिविधि गिरिधर हलधरहु, लखन यशोमतिनंद ॥
गोपसमाज समीपमें, पहुँचे भरे अनंद ॥ ७५ ॥

निज लालन जब यशुमति देखी।तनुसुधि त्यागि तुरंत विशेखी॥

कन्हुवां कन्हुवां कहि द्रुत धाई । लीन्ह्यों अंक उठाय कन्हाई ॥
चुंमति वदन लिहे सुत अंका । लह्यो देवतरु मानहु रंका ॥
हरि पुनि पुनि पदपरहिं मातके। खडेरोंम अवदात गातके ॥
आनँदवश मुख आव न वाता । दृगजल जात नते जलजाता ॥
यशुमति मुखपोंछतिं प्रभु केरो।कहति मिल्यो कन्हुवां अब मेरो
बहुत दिवस कहँ लाल वितायो।बहुत दिवसमहँ निज ब्रजआयो॥
पुनि बलराम परे पदमाहीं । लियो उठाइ अंक तेहि काहीं ॥
चूमिवदन शिरसूंघति माता । देति अशीश जिआवहुताता ॥
नंद चरण पुनि परे मुरारी । लियो उठाइ ढारि दृगबारी ॥
सूंघत शिर चूमत शशि आनन।कहत धन्य मोहिं सम जग आनन
परे राम पुनि नंद शरणमें । बारहिबार मिल्यो तेहि क्षणमें ॥
दोहा—राम श्यामको नंद तव, लीन्ह्यों अंक उठाइ ॥
तेहि क्षणको सुख एक मुख,केहिविधि कहे सिराइ ॥७६॥
वृद्ध वृद्ध सिगरे पुनि गोपा । राम श्याम देखनको चोपा ॥
आय आय कर प्रीति घनेरी । करहिं निछावरि हरि बलकेरी ॥
चूमहिं वदन मिलहिं बहु वारा । अंबक वहति अंबुकी धारा ॥
मिलहिं नाथ सब गोपन काहीं । रामहु यथा योग तिन काहीं ॥
वृद्धन वंदन करहिं मुरारी । मिलहिं परस्पर सखन सुखारी ॥
देइं शिशुनकहँ शुभग अशीसा ।अति मोदित द्वारका अधीसा ॥
हरि भुज गहि सब सखा बताहीं।भूलि गयो हरिब्रज तुम काहीं॥
पाय रजायसु यदुकुल केरी । भूल्यो नहिं ब्रजवासिन हेरी ॥
हरि कह जबतें ब्रज बिलगाने । तबते कबहुँ न क्षण ठहराने ॥
वृद्ध वृद्ध गोपी जुरिआई । रामश्यामकी लेइँ बलाई ॥
चूमहिं वदन निहारहिं रूपा । टोरहि तृण लखिरूप अनूपा ॥
वर्षहिं आंखिन आनँद आंसू । लेहि गोद महँ रमानिवासू ॥

दोहा—हरि पर वारहिं रत्न गण, कहहिं यशोमति लाल ॥
तुम विन जगको जीवनो, भयो हमहि जंजाल ॥७७॥
मिलहिं सखी हरि प्राण पियारी। जे हरिहित धन धाम विसारी॥
रहत हते नहिं जिन बिचहारा। तिन उर बीचनपरे पहारा ॥
असिसुधिकरिकरि पुनि हरिप्यारी।भरहिं प्राणपति भुजा पसारी।
करहिं कटाक्ष मंद मुसकाई। गुरुजन लाज डीठि बरकाई ॥
सखी सखी अस करहिं उचारा। मिल्यो बहुत दिन महँ पियप्यारा
अब छूटन छलियानहिंपावै। ब्रजवासि नित आनँद उपजावै ॥
कोउसखि कर करि हरिकर काहीं।कहहिं कान्ह चीन्हत कसनाहीं
राम श्याम ब्रजवासिन केरो। भयो समागम मोद घनेरो ॥
यदुवंशी धनि धनि मुख कहहीं। हरिकी रीति देखि चकि रहहीं
नंद यशोमतिके पदकंजनि। परहिं सकल यदुकुल सुख पुंजनि
जैसो कृष्ण मात पितु मानै। तैसे यदुवंशी जब जानै ॥
हरि पै जस नँद यशुमति प्रीती। तिन यदुवंशिनसों किय रीती
दोहा—राम श्याम कर जोरिकै नंद यशोमति काहिं ॥
चलहु हमारे शिबिरमहँ, अस भाख्यो तिनपाहिं७८॥
नंद यशोमति रामहु श्यामा। गोप गोपिका सकल ललामा॥
औरहु यदुवंशी सरदारे। सकल सुखद शुचि शिविर सिधारे ॥
परमदिव्य कनकासन माहीं। हरि बल नंद यशोमति काहीं॥
बैठायो करगहि सुख साने। यदुवर सब अचरज अतिमाने
तहाँ यशोमति राम श्यामको। लियो गोद बैठाइ आमको ॥
पोंछति मुख चूमति बहुवारा। कहति अबै नहिं कियो अहारा
लाल कलेऊ करहु सकारे। कोउ है सोपाति साधनहारे ॥
कन्हुवा कबहूँ माखन पावै। को तोहिं मिसिरी सहित खवावै
कहँ दधि कहँ गोरस कहँ मेवा। कौन करत ह्वै है तुव सेवा ॥

कन्हुवां मोरि सुरति बिसराई। कहत रहे मुख माई माई॥
म्वाहिं आचरज येक मन लागै। सब कोउ कहै मोर जिय भागै॥
बड़े बड़े नृप दैत्यन काहीं। मारचो कान्ह सुन्यो श्रुतिमाहीं

दोहा—सिख्यो शस्त्र विद्या कबै,कब अस भयो जुझार॥
कसकै जीत्यो शत्रु कहँ, अंग अतिहि सुकुमार॥७९॥

राजकाज कस करहु कन्हाई। अजहूं छुटी कि नहिं लरिकाई॥
भूलिगई माखनकी चोरी। रह्यो खेलतो खोरिन खोरी॥
दूबर मुख तुव लाल देखातौ। दधि माखन कबहूं नहिं खातौ
मैं तेरे हित रचि बहुसाजू। ल्याई लाल खवावन काजू॥
दधि माखन मिसिरी अरु खीरा। औरहु तुवहित भूषण चीरा॥
भोजन करहु लाल यहिकाला। बैठहिं संग सकल गोपाला॥
असकहि यशुमति व्यंजन खासे। माखन मिसिरी दही बतासे॥
कदली कदम पल्लवनि दोना। भरि भरि आनि धरचो चहुँकोना
राम श्याम बैठे तेहिंठामा। ग्वाल बाल सब लसत ललामा॥
हरि बल कहँ यशुमति निजपानी। लगी खवावन हिय हुलसानी॥
जौन खवावति पूछति स्वादू। हरि भाषत उरभरि अहलादू॥
जबते ब्रजते हम कढ़िआये। तबते अस भोजन नहिं पाये॥

दोहा—कहहु सकल ब्रजकी कुशल, सुखी सकल गोपाल॥
कह्यो यशोमति तोहिं बिन, ब्रजहै सकल बिहाल८०॥

हरिकह मैया तेरी दाया। मैं जीत्यो शत्रुन समुदाया॥
पै दुखही दुखमें दिनबीते। कबहुँ न कारज ते हमरीते॥
ब्रजको सुख त्रिभुवनमें नाहीं। यदपि शक्र शंत विभव समाहीं
ग्वाल बाल अस बोलत बाता। सत्य कान्ह तब जोर अघाता॥
हम देखे ब्रजमें बहुबारा। कियो अनेक असुर संहारा॥
नंदहु कहत मंद मुसकाई। काते बिवाह तुव भयो कन्हाई॥

वसहु द्वारकामें घर नीके । संग सखा सब हैं प्रियजीके ॥
अबतौ सुनियत बड़ी बड़ाई । छोड़िदई लालन लरिकाई ॥
अब न ब्रजहु ब्रज ते ब्रज प्यारे । हमरे भाग्य विवस पगुधारे ॥
नातौ चलब हमहुँ संग माहीं । तुव विन जीवन जगत वृथाहीं ॥
कह्यो नाथ पितु तोर विछोहू । कियो सकल मेरो सुखद्रोहू ॥
पैरहिहौं तुव निकट सदाहीं । यह जिय जानहु संशय नाहीं ॥

दोहा—यहिविधि भोजन करत प्रभु, बार बार बतरात ॥
नंद यशोमति सुखउदधि, नाहिं संसार समात ॥८१॥

यहि विधि भोजन करि यदुराई । बैठे नंद गोदमहँ जाई ॥
यदुवंशी हरिचरित विहारी । कहहिं परस्पर वचन सुखारी ॥
धन्य धन्य जगनंद यशोमति । इनको कौनि अहै दुर्लभगति ॥
कियो कृष्ण परसत्य सनेहू । जीवनमुक्त न कछु संदेहू ॥
कह्यो नंदसों आनँदकंदा । ब्रजमें कुशल अहै गो वृंदा ॥
कहु सुरभी बछरावहु व्यानी । देती गोरस अहैं मोटानी ॥
कहहु कुशल बछरा वाछिनकी।नाहिं भूलति जिनकी सुधि छिनकी
कहहु कुशल ब्रजकुंजन केरी । जिनमहँ लगी रहत सुधि मेरी ॥
कहहु कुशल यमुना पुलिननकी। जहँते टरतिन गति मम मनकी
सुनत नंद लालनकी बानी । बोले चूंमि बदन सुखमानी ॥
ब्रजकी कुशल कौन हम कहहीं। जहँ कान्हर तुमहीं बिन रहहीं
और सकल विधिहै कुशलाई । पै तुव बिन छिन रह्यो नजाई ॥

दोहा—इतनेमें चलि रामहूँ, नंदगोदमहँ आय ॥
बैठिगये आनंद भरि, मंद मंद मुसकाय ॥ ८२ ॥

जानि कछुक कारज भगवंता । गये दूसरे शिविर इकंता ॥
इहां नंद ऐसे अनुरागे । यदुकुल कुशल सुपूंछन लागे ॥
कहहु राम यदुकुल कुशलाई । रहहिं कुशल वसुदेव सदाई ॥

भोजराज अति कुशल रहतुहैं। अबतौ कछुनहिं शोक लहतुहैं॥
यादव देवक आदि सयाने। कहहु सकल निवसहिं मुदसाने॥
रामकह्यो यदुकुल कुशलाता। यदुकुल कुशल सबै विधि ताता
उतै यकंत कंत कहँ देखी। गोपी गईं महा मुद लेखी॥
घेरि नंदनंदन कहँ प्यारी। बैठत भईं सकल सुकुमारी॥
लालन ललना लखत लजाई। बैठे नीचे नैन नवाई॥
तब बोलीं हँसिकै हरिप्यारी। अबनहिं मानहु लाज बिहारी॥
भलीकरी जो करी कन्हाई। बीती बात कौन मुखगाई॥
अबहूं तौ सन्मुख मुख कीजै। हमनहिं तुमको दूषणदीजै॥

दोहा—जाके जो कछु होतहै, लिख्यो भाल नँदलाल॥
राई घटै न तिल बढ़ै, मिटै न कौनेहुँ काल॥ ८३॥

बिसरिगई सिगरी सुधि तबकी। राखत रहे रोच रुचि सबकी॥
अबतौ चितवनहूंकी लागी। देखिपरतहौ परम विरागी॥
तुमको कछू दोष नहिं प्यारे। रहे ऐसहीं भाग्य हमारे॥
सब दिन ऐसी रीति निहारी। मुँह देखेकी प्रीति तिहारी॥
हम अहीरनी जात गमारी। तुम व्याह्यो अब राजकुमारी॥
विसरिगई सुधि कान्ह हमारी। सुनियत उतै बड़ी बडवारी॥
छलकारि कान्ह क्रूरके संगा। करि सिगरौ ब्रजको सुखभंगा॥
चलो गयो मनमोह विहाई। जात समय भाष्यो गोहराई॥
ऐहहिं अवशि बहुरि ब्रजकाहीं। सखाशोच कीजै कछुनाहीं॥
सोकाहेको सुधि पुनि करहू। तुम छल छंद सदा उर धरहू॥
धौंसुधि हमरी करहु मुरारी। धौं कुबरी मुख जियहु निहारी॥
तुमहिं नलाज लगी ब्रजराजा। छोड़ि विरंज भख्यो कत लाजा

दोहा—कान्ह कूबरी नेह जब, हमहुँ सुन्यो घनश्याम॥
जानि परचो तबहीं हमहिं, पछितैहैं परिणाम॥ ८४॥

कबहुँ न यकरस रहत विहारी । सबसों करत छली छल वारी ॥
भयो सो सत्य हमार विचारो । तजि कुबरी द्वारका सिधारो ॥
सुनियत तहँ रुक्मिणी विवाही। कछुदिन ताकी प्रीति निबाही ॥
व्याही बहुरि आठ पटरानी । पुनि सोरहसहस्र छबिखानी ॥
प्रथम ते बिगरि गई जिनरीती । तिनकी कबहुँ नपरत प्रतीती॥
ब्रजको वारिधि विरह बहाये । अब मुहँ कौन देखावन आये ॥
कियो हंस नृप अति उपकारा । जेहिं मिसितुमतौ इत पगुधारा
अबलों गई न चंचलताई । भली निवाही प्रीति कन्हाई ॥
पै जो भयो भयो सो भयऊ । पछिताने ते केहिं दुख गयऊ ॥
दुर्घट दर्शन भये तुम्हारे । तुम्हहि लखे भरि नैन पियारे ॥
याते लाभ और कछु नाहीं । यहि लगि प्राण रहे तनुमाहीं॥
कहहु कुशल अपनी यदुराई । तुमते हमरी कुशल सदाई ॥

दोहा–जबते ब्रजते तुम ब्रजे,तबते केहि केहिं ठोर ॥
ब्रजको सुख पायो लला, कहौ रसिक शिरमोर ॥८९॥

गोपिनके सुनि वचन कन्हाई । बोलत भे लजाय मुसकाई ॥
सखी मोहिं तुम प्राणपियारी । बिसरी पलहुन सुरति तिहारी ॥
कहाकरौं कछु कारज हेतू । गमन कियो पितु मात निकेतू॥
ब्रजबनिता जस प्राणपियारी । तसनहिं त्रिभुवन परै निहारी ॥
करहु क्षमा मेरो अपराधा । तुव दुख देखि दून मोहिं बाधा
तुमहि कौन विधि मैं समुझाऊं । जुगुति चलति नहिं हारैं दाऊं ॥
सखी सत्य सुनु वचन हमारा । कबहुँ नमोहिं वियोगतुम्हारा ॥
जो यह कहहु गये पुनि काहे । सुनहु सुहेत देहुँ निरवाहे ॥
पूरक प्रीति वियोग विशेषी । विप्रलंभ सुखदेखन लेषी ॥
जस मन बसत विदेश पियामे । तस नहिं निकट रहे दुनियांमे॥
ताते मैं द्वारका सिधार्‌यो । प्रेमपयोनिधि तुमकहँ डार्‌यो॥

सत्य सखी तुम प्रेमनिबाहा । मोहीं सो परिगयो गुनाहा ॥
दोहा-धरहुधीर मनमें प्रिया, अब नहिं करहु विषाद ॥
सखि पैहो तुम सर्वदा, मोरमिलन अहलाद ॥ ८६ ॥
असकहि उठि सानंद कन्हाई । मिले सखिन दृग आंसु वहाई॥
सखी ललकि उर लियोलगाई। बिरहताप सब दियो बहाई ॥
मिलहिं कान्ह कहँ छोड़हिं नाहीं। परे अमी जिमिमृत मुखमाहीं
बहुत बुझाइ कह्यो यदुराई । प्यारी अब मोहिं देहु रजाई॥
सूनी अहै द्वारका नगरी । विन मोहिं शत्रु भीति वश विगरी ॥
कहहु तो जाहुँ सैन्य लैसंगा । जीति लियो हंसहु कर जंगा॥
यतना सुनत सबै ब्रजनारी । बूडीं विरह पयोधि मँझारी ॥
कह्यो वचन दृगवारि बहाई । अब पुनि कब मिलिहो यदुराई॥
हरिकह तुम्हरे मन मम बासा । मैंतो सदा रहौंतुम पासा ॥
कुरुक्षेत्र कहँ आउब जबहीं । यह सुख हम तुम पाउबतबहीं ॥
जबही करब मोर तुम ध्याना । प्रगटब हम तब वचन प्रमाना ॥
यह सुनि सुखी भई ब्रजनारी । बारबार मिलि मुदित मुरारी ॥
दोहा-बहुरि यशोमति नंद ढिग, आय कृष्ण करजोरि ॥
कह्यो पिता शासन करहु, अहै चलन मतिमोरि ॥८७॥
नंद यशोमति उठे दुखारी । लिये लगाय हिये गिरिधारी ॥
अब पुनिचलन कहहु नंदलाला।देहु हमहिं कस दुसह कसाला॥
प्रभुकह कबहुँ नमोर बिछोहू । तुम राखेहु मोपर नित छोहू ॥
असकहि कियो बहुत उपदेशा। नंद यशोमति हऱ्यो कलेशा॥
कुरुक्षेत्रमहँ हे पितु माता । मम मिलाप होई सुखदाता ॥
मैं सुत तात मातु तुम मेरे । कोटि कल्प यह फिरै न फेरे ॥
असकहि भूषण वसन मँगाई । विविधभांति की साज सजाई॥
दीन्ह्यो गोपी गोपन काहीं । बारबार पुनि मिले तहाँहीं ॥

नंदयशोमतिको तेहिंठामा। रामसहित प्रभु करि परिणामा ॥
ह्वैगे प्रेम विकल गिरिधारी। ढारत लोचन वारिज वारी ॥
उभै नंद यशुमति सुधि त्यागे। गोपी गोप रुदन सब लागे ॥
इतै कृष्णरथ उभय सवारा। उतै गिरे सब खाय पछारा ॥

दोहा– नाथ उतारि पुनि यानते, समुझायो पितुमात ॥
बार अनेक लगाय हिय, दंपति दुख नसमात ॥८८॥

जस तसकै पुनि नंद यशोदा। गोकुलको गवने तजिमोदा ॥
इत बलराम और घनश्यामा। चले ससैन्य विरह दुख छामा॥
बहुरि बहुरि चितवत सबग्वाला। कहँलगि अबै गये नँदलाला॥
पुनि पुनि पथ निरखहिं दोउ भाई। किमि जैहैं गृह यशुदा माई ॥
जीति हंस डिंभक बलधामा। सैन्यसहित यदुपति बलरामा॥
गये द्वारका परम सुखारी। रह्यो सुयश भरिभुवन मँझारी ॥
इतै यशोमति नंदहु ग्वाला। गोकुल गये सुमिरि नँदलाला॥
एक कृष्णकी आशलगाये। सपनेहुँ नाहिं दूसर कछु ध्याये ॥
धन्यधन्य ब्रजके ब्रजवासी। जे यदुनाथ दरशके आसी ॥
ब्रजबासिनकी कथा सोहाई। मैं यह प्रथम ग्रंथ महँगाई ॥
ताते इहां न किय विस्तारा। लहै को पैरि पयोनिधिपारा ॥
श्रोता संत सुनो मतिमाना। गोपिनको नहिं प्रेम प्रमाना ॥

दोहा–हरि प्यारी ब्रजवल्लभी, हरि तिन प्राणअधार ॥
वृंदावनसे एक पग, चलत न नंदकुमार ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यां द्वापरखंडेषड्विंशतितमोऽध्यायः ॥२६॥

अथ सुरथसुधन्वाकी कथा ॥

दोहा–अब वर्णौं उत्तम कथा, सुनहु संत मनलाइ ।
सुरथ सुधन्वा भूप जिमि, लीन्ह्यो मुक्ति बजाइ ॥ १॥

भूप युधिष्ठिर सोइककाला ।वाजि मेध मख कियो विशाला॥
छोड़्यो तुरंग पूजि सविधाना। चले संग महँ सुभट महाना॥
अर्जुन अरु प्रद्युम्न प्रवीरा। औरौ महारथी रणधीरा॥
देशन देशन बागत बाजी। करवावन रण राजन राजी॥
आयो चंपक पुरी तुरंगा। महासैन्य पारथके संगा॥
तहाँ हंसध्वज नामक राजा। धर्मधुरंधर धीरधिराजा॥
दूत खबरि दीन्ह्यो तेहिं जाई। सुनु वृत्तांत नयो नृपराई॥
अश्वमेध मख धर्म नरेशा। करत अहैं विधि सहित सुवेशा॥
ताको वाजी सैन्य समेतू। आयो तुम्हरे नाथ निकेतू॥
संग प्रद्युम्न पार्थ धनुधारी। औरौ महारथी भटभारी॥
यहकारज मनमाँह विचारी। कीजै नाथ विलंब विसारी॥
सुनत हंसध्वज दूतन बैना। होत भयो तुरंत मुद ऐना॥

दोहा—सचिव सुभट द्रुत बोलिकै, लाग्यो करन विचार॥
बड़ो लाभ आयो नगर, सुनहु सुबुद्धि उदार॥ २॥

कवित्त॥ भूपति युधिष्ठिर मुकुंद प्रीति पात्र पूरौ कीन्ह्यों अश्वमेधको अरंभ यहि कालमें॥ छोड़्यो यज्ञ बाजी दियो संग सैन राजी राजी वीरताकी ताजी जीतकाजी युद्ध हालमें॥ कृष्णसखा पारथ प्रद्युम्न कृष्णपुत्रप्यारो औरौ हरिदास आये उमंग उतालमें॥ बाँधिकै तुरंग करैं जंग सव्यसाची संग मिलैं हरि दासनको लगैं येही ख्यालमें॥ २॥

दोहा—जहँ पारथ प्रद्युम्नहैं, ऐहैं तहँ यदुवीर॥
यही व्याज यदुराजको, दरश करौ सब वीर॥ ३॥

कबहूं नहिं देखे प्रभु काहीं। गयो जन्म मम सकल वृथाहीं॥
हरिदासन रिझाय रण आजू। होब कृतारथ सहित समाजू॥
सचिव पुत्र पुरजन सब दारा। रहे सकल हरिदास उदारा॥

सुनत हंसध्वजकी असबानी। महामोद अपने मन मानी॥
कह्यो नाथ यह अवसर नीको। हरिदासन दरशन प्रिय जीको॥
नाथ निशंक निशान बजावहु। सकल सैन्य कहँ हुकुम सुनावहु॥
सुनत भूप अति मानिं उछाहा। शासन दीन्ह्यों पहिरि सनाहा॥
सजहु सकल भटसंगर हेतू। देखहु नयननि रमानिकेतू॥
वैष्णव वीर सकल हर्षाने। सजे सकल नहिं कोउ सकाने॥
यकहत्तरिं सहस्र गजमाते। यकहत्तरि सहस्ररथ भाते॥
तिमि यकहत्तरि लाख सवारा। लाख त्रिनवति पदाति उदारा॥
फेरि भूप सब वीर बोलाई। यहिविधि शासन दियो सुनाई॥

दोहा—एकनारि व्रत होइँ जे, कृष्णदास जेहोइ॥
सजैं सुभट ते समरहित, और जाइ नहिं कोइ॥ ४॥

एक नारिव्रत जे हरिदासा। निकसिचले ते सहित हुलासा॥
भूप हंसध्वजके दल माहीं। कोउ अस नाहिं जो हरिजन नाहीं
ते सब दान विविधविधि दीन्हे। सबविधि अग्रिम होमहु कीन्हे॥
ऊरधपुंड्र तिलकदै भाला। पहिरि पहिरि तुलसीकी माला॥
कवच कुंड सायक धनुधारी। समर मरण कहँ किये तयारी॥
सब भट वाजत राजनगारा। आये सजुग भूपके द्वारा॥
रहे भूपके पांचकुमारा। तिनके नामनि करौं उचारा॥
यकशशिसेन द्वितिय शशिकेतू। सुरथसुधन्वा सुबल सचेतू॥
तेऊ संग चले सानंदा। युद्ध उछाह भरे स्वच्छंदा॥
निज निज पतिन देखि रण जाते। तिन तिय हिय नहिं हर्षसमाते॥
प्रमुदित करहिं परस्पर बाता। सखितुव अधर श्याम दरशाता
तेरे पतिके हिय कदराई। तेरे अधरन प्रगट जनाई॥

दोहा—तब सो कह्यो नकादरी, मेरे पतिकी बीर॥
हरिकरते पतिमरण गुनि, मैं ध्याऊं यदुवीर॥ ५॥

सोइ श्यामता अधरन छाई । नाहिं कछुहै ममपति कदराई ॥
यहिविधि वदहिं अनेकन बानी। बीरबधू अतिशय हर्षानी ॥
आत पत्र चामर अरु छत्रा । चले हंसध्वज शीश विचित्रा ॥
चलीसैन्य कछु वरणि नजाई । यहिविधि कढ़ि पुरबाहिर आई ॥
कह्यो हंसध्वज तब प्रणरोपी । सकल प्रवीरन पर अतिकोपी ॥
जोकोउ ममशासन नहिं मानी। तौन दंड पैहै मम पानी ॥
शङ्ख लिखित उपरोहित दोई । रहे तहाँ जानत सब कोई ॥
तिनकी कथा पूर्वकी ऐसी । हेतु पाय वरणौं मैं तैसी ॥
शङ्ख लगायो इक बर बागा । तामें कियो परम अनुरागा ॥
लिखितवाटिका गे इक काला। पके रहे तहँ बेर रसाला ॥
लिखित टोरि बदरीफल खायो। पाछे तिन्है ज्ञान उर आयो ॥
बिनपूंछे फल भक्षण कियऊ। यह हमसों अनुचित है गयऊ॥

दोहा—जो हम याको दंडनाहिं,पाउब यहि तनुमाहिं ॥
स्वर्गगये दुर्गति लहब, संसारहु सुख नाहिं ॥ ६ ॥

अस विचारि भ्राता ढिग आई। कह्यो पाप हमसों भो भाई ॥
याको दंड देहु तुम अबहीं । नातो शुद्ध होब नहिं कबहीं ॥
शङ्खविचार कियो मनमाहीं । विनादंड यहकी गति नाहीं ॥
दंडदेनको यह संसारा । बिनभूपति नहिं मम अधिकारा
असविचारि राजाढिग आये । दोउ भ्राता वृत्तांत सुनाये ॥
राजा कह्यो शास्त्र तुम जानौ । करैं सोइ जो आप बखानो ॥
शङ्खविचारि कही तब बाता । बिना हाथ होवै मम भ्राता ॥
राजा तुरतहि हाथ कटायो। दोउ भ्रातन कछु दुख नहिं पायो
शङ्ख लिखित को धर्म विश्वासा। भूपतिके उर रह्यो प्रकासा ॥
ताते शङ्खलिखित बोलवाई । नृपति हंसध्वज गिरा सुनाई ॥
तुम पुर बाहेर बैठहु जाई । महाकराह तेल भरवाई ॥

नीचे पावक देहु लगाई । चुरनलगै जब तेल तपाई ॥
दोहा–तबनहिं जे भट युद्ध हित, आवैं मेरे संग ॥
तिनको डारि कराहमें, करहु भस्मसब अंग ॥ ७॥
शङ्ख लिखित सुनि भूपरजाई। तैसहि कियो कराह चढ़ाई ॥
और बीर सबगे नृप साथा । सुमिरत सुखद चरण यदुनाथा॥
नृपको लहुरो पुत्र सुधन्वा । शूर बली धर्मी शुभधन्वा ॥
कृष्ण अनन्य उपासक पूरो । समर उछाह भरो अतिरूरो ॥
सो सजि समर हेतु सब भांती । मातु समीप गयो अरिघाती ॥
आये विदा होन हम माई । लरौं शुद्धह्वै देहि रजाई ॥
यदुपति पुत्र प्रद्युम्न पियारा । तैसेहि पारथ सखा उदारा ॥
आये यज्ञ तुरंगहि संगा । होई हरिदासनसों जंगा ॥
देखब अवशि सकल हरिदासन । ऐहैं बबाशि तहां भवनाशन ॥
धन्यहोब प्रभु दर्शन पाई । याते और कौन सुखमाई ॥
मातु कही मोदित ह्वै बानी । जाहु पुत्र शंकानहिं मानी ॥
रण महँ तोषित करिप्रभुकाहीं । ल्यावहु द्रुत अपने घरमाहीं ॥
दोहा–पारथ अरु प्रद्युम्नको, औरहु सब हरिदास ।
दरश करावहु मोहु कहँ, अपने आनि अवास ॥ ८ ॥
जूझि जंगमहँ जो तुम जैहो । जगमहँ सुयश मुक्ति हाठिपैहो॥
जीवत रैहो हरि कहँ लैहो । म्वहिं समेत तुम धन्य कहैहो॥
उभय भाँति उपकार तुम्हारो । पुत्रनिशंक समर पगु धारो ॥
सोइ युवती जगती तल माहीं । जासुत शूर समर मरि जाहीं॥
जासु पुत्र रणविमुख पराहीं । तिनसों बांझि भली जगमाहीं॥
कही सुधन्वा तब असिवाता । जो तव गर्भ जनित मैं माता ॥
रणते विमुख कौन विधि ह्वैहौं । अस अवसर कबहूं नाहिं पैहौं ॥
असकहि मातुचरण शिरनाई । गयो नारिढिग आनँद छाई ॥

माँग्यो तेहिसों वीर बिदाई । प्यारी रण कहँ देहु रजाई ॥
बोली हर्षि सुधन्वा प्यारी । मोसम कौन आजु जगनारी ॥
जासु कंत श्रीकंत समीपा । शुद्ध युद्ध गमनत कुलदीपा ॥
जाहु समर कहँ प्राण पियारे । करहु दरश वसुदेव दुलारे ॥
दोहा–पैमोको दैलेहु पिय,यही समय रतिदान ।
फेरि शुद्ध ह्वै समर कहँ,कीजै सपादि पयान ॥ ९ ॥
तब रतिदान दियो तियकाहीं । बहुरि सनाह पहिरितनुमाहीं ॥
करि स्नान दान बहु दैकै । सिगरे आयुध धारण कैकै ॥
रथचढ़ि गवन्यो शङ्ख बजाई । इतनेमें भे बिलम महाई ॥
उतै हंसध्वज सैन निहारी । कहाँ सुधन्वा कह्यो पुकारी ॥
सबै बीर मेरे सँग आये । रह्यो सुधन्वा भवन डेराये ॥
जाहि यमन घसीटि तेहिं ल्यावैं । राज पुत्र गुनि नहिं वरकावैं ॥
सुनत भूप शासन तेहिकाला । दौरे यमन काढि करवाला ॥
मिल्यो सुधन्वा मारग माहीं । भूपति शासन कहते हिं काहीं ॥
आइ सुधन्वा पिता समीपा । नायो शीश चरण कुलदीपा ॥
कह्यो भूपतैं सुत नहिं मोरा । नहिं अवलोकब आनन तोरा
जानि समर घर रहे सकाई । सकलवीरता दियो बहाई ॥
कह्यो सुधन्वा तब करजोरी । पिता नहै मोरी कछु खोरी ॥
दोहा–बिदा होन मैं मातुसों,गयों पिता यहि काल ।
ताते भई बिलंब कछु,पहुँच्यो नहीं उताल ॥ १० ॥
हंसकेतु तब द्वै निज दूता । शङ्ख लिखित ढिग पठयो पूता
दूत आइ उपरोहित नेरे । कह्यो वचन अस भूपति केरे ॥
सुवन सुभट मंत्री सरदारे । युद्धहेतु ममनिकट सिधारे ॥
यह कादर सुधन्व सुत मेरा । कियो समर डर सदन बसेरा ॥
सबके पाछू ममढिग आयो । याको दंड शास्त्र का गायो ॥

उचित सुधन्वाको जो दंडा । देहु विचारि पुरोहित चंडा ॥
शङ्ख लिखित सुनि भूप सँदेशा । दियो विचारि विशेषि निदेशा॥
तातेतेल भरि बड़ो *कराहा । चढ़वावो यहि हित नरनाहा ॥
जो रण डर घर रहे लुकाई। तप्त तेल तेहिं देहु डराई ॥
ऐसी भूप प्रतिज्ञा कीन्ही । करहु अन्यथा सुत मुखचीन्ही॥
होई जो भूपति प्रण भंगा । हम नहिं रहब आपके संगा ॥
दूतकहौ अस मम संदेशा । करै उचित जो गुनै नरेशा ॥

दोहा—दूत हंस ढिग निकट चलि, कही पुरोहित बात ॥
राजा सचिव बोलाइकै, कह्यो करहु सुत घात ॥११॥

सचिव सुधन्वै लियो बोलाई । शंख लिखित ढिग चले लेवाई॥
सचिव सुधन्वै कह्यो दुखारी । राजपुत्र लखुविपति हमारी ॥
मेरे प्रभुके अहौ कुमारा । घात कौनविधि करैं तुम्हारा॥
जो नहिं प्रभुकर शासन करहीं । दोऊ लोक हमार विगरहीं ॥
कह्यो सुधन्वा परमनिशंका । सचिव करहु नेसुक नहिं शंका
जो कछु पिता रजायसु दीन्हीं । सो सब करहु धर्म निज चीन्हीं
यहि विधि कहत दूत दुख छाये। शङ्ख लिखित ढिग नृपसुतल्याये
शङ्ख लिखित लखि राजकुमारा । महाकोप करि वचन उचारा
क्षत्रिय जन्म भूप कुल पायो । तापर तू कस समर डेरायो ॥
तप्त तेलमहँ तो कहँ डारी । होई इच्छा पूर हमारी ॥
कह्यो सुधन्वा सहजहि बैना । करहु जो भावै मोहिं कछु भैना
मोरि शूरता कादरताई । जानत है हे हरि यदुराई ॥

दोहा—शङ्ख लिखित अमरष भरे, बोले वचन कठोर ॥
जेहि विधि कीन्ह्यों कर्म तुम, लेहु तासु फल घोर ॥

असकहि कोपि पुरोहित पापी । राजकुँवर कहँ कादर थापी ॥
सचिवन कह्यो पकरि यहि लेहू । तप्त कराह डारि द्रुत देहू ॥

सचिव सुधन्वै द्रुत गहि लीन्ह्यो ।विस्मय हर्ष कछू नहिं कीन्ह्यो॥
सायुध वसन सहित तेहिकाला। डारन चले कराह कराला ॥
राजकुँवर तब हरिकहँ ध्यायो ।मनहीं मन प्रभु कहँ गोहरायो॥
हेहरि करुणासिंधु मुरारी । नाथ हाथ अब सुरति हमारी॥
रह्यो जो कादरता करि गेहू । तौ कराहमहँ भस्म करेहू ॥
जो नकादरी रोमहु कोई। तप्त तेलतौ शीतल होई ॥
असकहि जरत तेल महँ वीरा ।कूदि पर्‌यो सुमिरत यदुवीरा॥
भरो तेल तहँ मनुज प्रमानू ।बलकत ज्वाला कढ़त कृशानू॥
गिर्‌यो तेलमहँ राजकुमारा। मानहुँ पर्‌यो गंगकी धारा ॥
तप्त तेल शीतल ह्वै गयऊ। लोगनके उर विस्मय भयऊ॥

दोहा—शङ्ख लिखित तब कोपिकै, सचिवन कह्यो सुनाइ ॥
चढ़ो तेल बहु बेरको, ताते गयो जुड़ाइ ॥ १३ ॥

अथवा चेटक कियो कुमारा। ताते नहीं भयो जरिछारा ॥
सचिव कहे नहिं तेल जुड़ाना । तुमहीं समुझि परत कछु आना
शङ्ख लिखित तब कोपि तहाहीं। नारिकेल फल लै कर माहीं॥
दीन्ह्यो डारि तुरंत कराहा। तप्त तेलकी लेन समाहा ॥
नरियर परत भये युगफारा। शङ्ख लिखितके लगे कपारा॥
लागत नारिकेरके टूके । गये शीश तहँ फूटि दुहूँके ॥
यह अचरज लखि सचिव समाजा। गये हंसध्वज रह जहँ राजा ॥
आदि अंत ते कह्यो हवाला। आयो दौरि द्रुतहि महिपाला ॥
मुख चूमत करगहि नरनाहा । ऐंचि लियो निजपुत्र कराहा ॥
चामीकर रथ माहिं चढ़ाई । चल्यो युद्धहित शुद्ध लेवाई ॥
भूप कह्यो तुम सुत निर्दोषू । करहु मोर अपराध समोषू ॥
कह्यो सुधन्वा तब करजोरी । पिता अहै सब मोरि नखोरी॥

दोहा–मैं नहिं जानो हेतु कछु, जानै देवकिलाल ॥
जे कहवावत दास दुख, दाहक दीनदयाल ॥ १४ ॥

असकहि मिल्यो सैनमहँ जाई। सबै वीर तिहिं करी बड़ाई ॥
हंसकेतु भूपति हरिदासा। सबवीरन अस वचन प्रकासा॥
तुलसीमाल गले महँ डारहु। शस्त्र हनत हरिनाम उचारहु॥
समरमध्य अस क्षण नहिं जाहीं। जिन हरिनाम कढ़ै मुख नाहीं॥
फेरि सुधन्वै शासन दीना। पकरहु पारथ बाजि प्रवीना ॥
सुनत सुधन्वा पिता निदेशा।पकरि अश्व ल्यायो तेहिं देशा॥
हंसकेतु नृप पद्मव्यूह रचि। ठाढ़ भयो वीरता बृहद सचि ॥
दूतन दौरि तुरंत तहाँहीं। कहे प्रद्युम्नहि पारथ पाहीं ॥
हंसकेतु नृप धरयो तुरंगा। ठाढ़ो सैन्य सहित हित जंगा॥
तब पारथ प्रद्युम्न बोलाई। कह्यो वचन अस भटन सुनाई॥
हंसकेतु पकरयो मम बाजी। ठाढ़ो समर हेतु दल साजी ॥
ताते कृष्ण पुत्र अस कीजै। अनुमति मोरि चित्तमहँ दीजै ॥

दोहा–हम अरु तुम अरु सात्यकी, अरु अनिरुद्ध प्रवीर ॥
महारथी बहु संगलै, युद्धकरैं रणधीर ॥ १५ ॥

दलनायक तुम कृष्णदुलारे। तुम सों सकल सुरासुर हारे ॥
अहहु मोर तुम प्राणहु प्यारे। आगे लरहु न लखत हमारे ॥
हमहिं समर करिहैं तुम आगे। तुम संभारि लीज्यो दलभागे॥
तब प्रद्युम्न कह्यो मुसकाई। सुनहु सव्यसाची चितलाई ॥
यह नहिं समर सुरासुर कैसो। यामें एक प्रसंग अनैसो ॥
यह राजा अनन्य पितु दासा। ताते निर्फल जइ प्रयासा ॥
युद्ध जोर भरि करब विशेषी। क्षत्री धर्म कर्म मन लेषी ॥
सुनहु न हंसकेतु दल सोरा। जय हरि छाय रह्यो चहुँओरा ॥
ऊर्ध्वपुंड्र भासित भटभाला। लसत हिये तुलसीकी माला ॥

यह राजा सब विधि अपनो है। पै याको जीतब सपनो है ॥
पार्थ कह्यो साति कह्यो कुमारा। प्राणहु ते प्रिय भूप हमारा ॥
क्षत्रिय जन्म जानि युद्ध करिहैं। नहिं शंका जितिहैं की हरिहैं ॥

दोहा—अस प्रद्युम्न पारथ उभय, करि सम्मत ससमाज ॥
सन्मुख सैन्य चलाय दिय, युद्ध करनके काज॥१६॥

तब वृषकेतु वीर बलवाना। अर्जुनसों अस वचन बखाना ॥
क्षणक रहहु ममयुद्ध निहारहु।पुनि निज विक्रम सकल पसारहु
असकहि शङ्ख शोर भल कयऊ। धीरहंसध्वज दल धसि गयऊ॥
लखि वृषकेतु सुधन्वा भाष्यो।को यक समर करन अभिलाष्यो
आवत चलो अकेल उछाही। खड़ेरहो इत सबै सिपाही ॥
यासों हमहिं अकेले लरिहैं। कैसे कै अधर्म अनुसरिहैं ॥
अस कहि चल्यो अकेल सुधन्वा।धारे पाणि बाण अरु धन्वा ॥
पूंछ्यो तेहि सन्मुख रणजाई। कौन वीर तुम देहु बताई ॥
कह वृषकेतु कर्णसुत जानौ। तुम अपनो पितु नाम बखानौ
कियो सुधन्वा नाम उचारा। मैंमरालध्वज भूप कुमारा ॥
अस सुनि सो शर हन्यो अनंता।गयो सुधन्वा मूंदि तुरंता ॥
तब सुधन्व जयकृष्ण उचारी। सायक मारि काटि शरडारी ॥

दोहा—फेरि हन्यो बहु बाण तेहि, रथ सारथि हति तासु ॥
हिय हनिशर मूर्च्छित कियो, परचो न ताहि प्रयासु॥

वृषकेतुहिं सारथि लै भाग्यो।निज दल माहिं आय सो जाग्यो
कर्णकुमार पराजय देखी। धाये भट असमंजस लेखी ॥
उतै हंसध्वज सैनहु धाई। जय हरि जयहरि छावत आई ॥
मिले दोउ दल चलि तेंहिठौरा।मानहु मिले सिंधु करि शोरा ॥
चले शस्त्र तहँ विविध प्रकारा। भयो धूरि धरणी अँधियारा ॥
गिरे वीर बहु शोणित धारा। समर सुरासुर सरिस उचारा ॥

तहाँ सुधन्वा रथहि धवाई । अर्जुन दल बाणनि झरि लाई ॥
शर मारत जययदुपति भाखै । हरि की मिलन आश उर राखै॥
गयो वीर सन्मुख नहिं कोऊ । महारथी अतिरथ रह सोऊ ॥
क्षण महँ चहत पार्थ दल नासी।असगुनिबड़े वीर बलरासी ॥
कृतवर्मा सात्यकि अक्रूरा । रहे औरहू जे अतिशूरा ॥
ते सब जाय सुधन्वै घेरे । मारे विशिख ताहि बहुतेरे ॥
दोहा—तहां धनुष टंकोर करि, शुद्ध सुधन्वा वीर ॥
हन्यो बाण मुख टेरि अस,जयजयजय यदुवीर ॥ १८ ॥
सुनि यदुवंशी यदुपति नामा । भये उछाह रहित संग्रामा ॥
तब धरि धनुष सुधन्वारणमें । कियो विरथ सबको इकक्षणमें ॥
मारि बाण इक इक उरमाहीं । दियो गिराय धरणि सबकाहीं ॥
फेरि पार्थ भट मारन लाग्यो । हाहाकार करत दल भाग्यो ॥
तब आयो प्रद्युम्न रणधीरा । शलभसरिस छाँड़त धनुतीरा ॥
चली प्रद्युम्न धनुष शर धारा । कटे मतंग तुरंग अपारा ॥
कोउ नहिं मरण भीति मन लेहीं।जय हरि कहत प्राण तजिदेहीं॥
हंसकेतु दल कोउ अस नाहीं । भगै न कहै कृष्ण मुखमाहीं ॥
यदपि प्रद्युम्न बाण लगि मरहीं । मरतहु माधव मुख उच्चरहीं ॥
देखि सुधन्वा सैन्य विनाशा। सन्मुख धस्यो भरत शर आशा ॥
उतते कृष्णकुमारहु आयो । इतै सुधन्वा स्यंदन धायो ॥
दोऊ वीर भये इकठोरा । कह सुधन्व सुनु नाथकिशोरा ॥
दोहा—तैं मम प्रभुसुत पाटवी, मैं तुव पितु पद दास ॥
आप आप पितु दरशकी, रही सदा उर आस ॥१९॥
तव प्रताप तोहि तोषित करिकै। ह्वैहौं सुखी नाथ पद परिकै ॥
रणपूजन करिहौं प्रभु तेरो । यह कुलधर्म अहै सति मेरो ॥
अस कहि कृष्ण पुत्र पद माहीं । मारयो शर प्रणाम कियताहीं॥

तब प्रद्युम्न अस मनहिं विचारे। याते बनत मोहिं अब हारे ॥
अस कहि शिथिल करन युध लागे। भट सुधन्वके प्रेमहिं पागे॥
इतै सुधन्वा तजि शरधारा। उतै प्रद्युम्नहु बाण अपारा॥
दोऊ बीर बराबर रणमें। मूर्च्छित होत भये इक क्षणमें॥
उठ्यो सुधन्वा तुरत संग्रामा। कोउ नहिं वीर रहे तेहिं ठामा॥
तब अर्जुन धायो कर कोपी। मारि शरन लीन्ह्यों रथ तोपी॥
तहाँ सुधन्वा सब शर काटी। उदघाटी अपनी परिपाटी॥
सुनहु कृष्णके सखा पियारे। आजु मनोरथ पूर हमारे॥
भीषम द्रोण कर्ण कृपवीरा। तुम जीते जितेकरणधीरा॥

दोहा—तब मेरो प्रभु सारथी, भयो धनंजय तोर॥
अब निज सारथिं त्यागिकै, कत आयोयहिठोर२०॥

बिन निज सारथि जीतिं न पैहो। कोटि करौ घरही फिर जैहौ॥
ताते सारथि लेहु बोलाई। तब मेरे सँग करहु लड़ाई॥
मैंतौ हौं अनन्य हरिदासा। कबहुँ न दूसरि राखहुँ आसा॥
अस कहि हन्यो नराच हजारन। पारथकियो तुरंतहि वारन॥
पावक अस्त्र धनंजय छाड्यों। लै जलबाण सुधन्वा आड्यो॥
अर्जुन दिव्य अस्त्र बहु मारै। सोऊ दिव्य अस्त्र सों वारै॥
कौनिहुविधिनहिंजयलखिलीन्ह्यों।तबश्रीप्रभुकोसुमिरणकीन्ह्यों॥
सुमिरतहीभे प्रगट मुरारी। सारथि भयो गोवर्द्धनधारी॥
हरिको लखि सुधन्व सुख छायो। रथते उतरि चरण शिरनायो॥
त्राहिं त्राहि जय आरत हरना। तुमहो दीन दास दुख दलना॥
कसनदास की पूरहु आसा। तुव अवलम्ब तुम्हारे दासा॥
जय सच्चिदानंद घनरासी। जय पारथ सारथिं अविनासी॥

दोहा—भयो जन्म आजहिं सफल, धन्य भयो मैं आज॥
देव पितर तोषित भये, दरश पाय यदुराज॥२१॥

लखि सुधन्व हरि मोदित भयऊ। अर्जुन वाजिन वागहि लयऊ॥
पुनि रथ चढ़ि करि प्रभुहिं प्रणामा। करन लग्यो सुधन्व संग्रामा॥
संगर महाभयावन भयऊ। सुरगण सकल प्रशंसा कयऊ॥
तब अर्जुन बोल्यो अस बानी। तीनि बाण जे मैं संधानी॥
तिनते जो तव शिर नहिं काटौं। तो पितरन पूरण अघ पाटौं॥
तब सुधन्व बोल्यो रणमाहीं। जो त्रय शायक काटौं नाहीं॥
तौ हरि विमुख पाप मोहिं लागै। मेरो यश युग युग नहिं जागै॥
हन्यो धनंजय प्रथमहि बाना। काट्यो सो शर छोंड़ि महाना॥
तज्यो सव्यसाची जब दूजो। दल्यो सुधन्वा सुर तेहिं पूजो॥
तृतिय बाण लिय पांडुकुमारा। तब यदुपति अस वचन उचारा॥
सखादास दोउ हौ प्रिय मेरे। कछु न कहौं अति अनुचित हेरे॥
छाँड्यो पारथ तीसर बाना। तहाँ सुधन्वा वीर महाना॥

दोहा—काट्यो तीसर बाणहू, पै आधो शर जाय॥
लग्यो सुधन्वा शीशमें, दीन्ह्यो भूमि गिराय॥२२॥
तासु तेज प्रभु वदन में, सबके लखत समान॥
उठिकबंध पांडव भटन, हनत भयो सहसान॥२३॥

निरखि हंसध्वज पुत्र विनासा। कियो विलाप बिसारि हुलासा॥
हा सुधंन्व मम प्राणपियारे। धर्म धुरंधर धीर उदारे॥
सुनत पुत्र परिताप तहाँई। दूजो पुत्र सुरथ तहँ आई॥
कह्यो पिता कत करहु विलापा। रण मृत करन उचित परि तापा
यहि हित जननी जनमति जगमें। शूर होइ कीरति हरि पगमें॥
अबै जियत हौं मैं जगमाहीं। पिता शोच करिये कछु नाहीं॥
हौं तोषित करिहौं प्रभु काहीं। पारथ सहित प्रद्युम्न जहाँहीं॥
अस कहि रथ चढ़ि आयुध धारी। करवायो दुंदुभी धुकारी॥
सन्मुख संगर सुरथ सिधारा। जयति जयति वसुदेव कुमारा॥

आवत सुरथ देखि यदुराई। अर्जुन को अस गिरा सुनाई॥
महारथी इत सुरथ सिधारा। सन्मुख जाहु न पांडुकुमारा॥
बंधु शोक व्यापी उर पीरा। मोर दास अनन्य रणधीरा॥
दोहा—विजयलहब याते कठिन, अबै न सन्मुख जाहु॥
पुनि प्रद्युम्नको बोलिकै, वचन कह्यो यदुनाहु॥२४॥
जाहु सुरथ सों करहु लराई। की बाधि जाइ कि जाइ पराई॥
तब प्रद्युम्न अस गिरा उचारी। सुरथ गहे पितु प्रीति तिहारी॥
अहै अनन्य तुम्हार उपासी। सकै ताहि को संगर नासी॥
क्षत्री धर्म करब हम जाई। मानि शीश महँ आपरजाई॥
अस कहि सन्मुख सुरथ धीरके। चल्यो कुँवर लै यूथ बीरके॥
देखि प्रद्युम्न सुरथ तहँ आयो। बारबार चरणन शिरनायो॥
कह्यो वचन सुनु नाथ दुलारे। रण बांकुरे वीर अनियारे॥
तुम मोहिं जीतन समरथ अहहू। सुभट सुरासुर जीतत रहहू॥
जो मैं मरयो आप शर लागी। तौ न अकीरत जगमहँ जागी॥
रही एक उरमें पछिताऊ। समर लख्यो न सखा यदुराऊ॥
दे बताय रुक्मिणी दुलारे। सखा सहित जहँ पिता तिहारे॥
तब प्रसन्न ह्वै कह्यो कुमारा। जहँ कपिध्वज फहरत छबिवारा॥
दोहा—सुरथ देख तेहिं सुरथ पर, सखा सहित पितु मोर॥
जाहु दरश कीजै तुरत, सफल मनोरथ तोर॥२५॥
सुरथ सुनत प्रद्युम्न मुखवानी। महालाभ अपने उर जानी॥
चल्यो तुरंतहि यानधवाई। पहुँच्यो खरे जहाँ यदुराई॥
शिर धरि कीन्ह्यो प्रभुहि प्रणामा। बोल्यो आजु भयो कृत कामा॥
लेहु समर पूजन मम स्वामी। तुम सबके उर अंतर्यामी॥
अस कहि हन्यो अनेक नराचा। चले मनहुँ विकराल पिशाचा
अर्जुनसों तब कह यदुराई। सावधान ह्वै करहु लराई॥

यह रणधीर धर्म धुरधारी । पूरचो गगन पंथ शर मारी ॥
अर्जुन कह प्रभु आप प्रतापा । करै न समर शत्रु संतापा ॥
दोऊ वीर बरोबर योधा । लरन लगे करिकरि अति क्रोधा ॥
महा युद्ध भो दोहुँन केरो । हार जीति नहिं होत निबेरो ॥
तहाँ सुरथ बोल्यो गहि बाना । सुनु पारथ यह बाण प्रमाना ॥
कहु तोहिं हस्तिनपुर पहुँचाऊं। कहु पताल कहु गगन उड़ाऊं ॥
दोहा—तब अर्जुनसों हरि कह्यो, यहि प्रण झूंठ न होइ ॥
करहु विरथ तुमहीं प्रथम, तबहिं बिथा नहिं कोइ२६
अर्जुन सुरथ विरथ करिदीन्ह्यों । दूसर रथ चढि सो युधकीन्ह्यो ॥
सोउ रथ तुरत धनंजय काटचो।सुरथ तृतिय रथचढ़ि शर पाटचो
सोउ रथ दल्यो पांडुको नंदन।यहि विधि काटि दियो शत स्यंदन
तब गांडीव धनुष प्रत्यंचहि ।काट्यो सुरथ जक्यो नहिं नंचहि ॥
जब जब तजत सुरथ शरधारा । तबतब हरि हरि करत उचारा॥
तब लै शर सुमिरत यदुनाहू । काट्यो पार्थ सुरथ कर बाहू ॥
बाहु कटत सन्मुख सो धायो । प्रभु पद पंकज चित्त लगायो ॥
तब अर्जुन लै शायक तीना । काटि युगल पद अरु भुज दीना
तबहुँ न रुक्यो सुरथ कर रुंडा। तब काट्यो पारथ पुनि मुंडा ॥
मुंड लग्यो अर्जुन उर आई । गिरचो धनंजय मुर्च्छितहाई ॥
सपदि शीश परस्यो हरि चरना।पार्षदरूप लह्यो शुभ बरना ॥
अर्जुन कहँ प्रभु लियो जगाई । तुरत बोलायो हरि खगराई ॥
दोहा—सुरथ शीश गरुड़ै दियो, फेंक्यो जाइ प्रयाग ॥
शिव निज मालामें धरचो, जानि वीर बड़भाग ॥२७॥
सुरथ सुधन्वा सम जगमाहीं । बीर धीर हरिदासहु नाहीं ॥
शुद्ध समर हरि सन्मुख आई । गये विकुंठ निसान बजाई ॥
सुरथ सुधन्वा मरण विलोकी । भयो हंसधुज भूपति शोकी ॥

सन्मुख चल्यो निसान बजाई। हरिदर्शन अभिलाष महाई॥
आवत हंसकेतु कहँ देखी। माधव मोदित भये विशेखी॥
अपनो दास जानि यदुराई। दौरत भे निज भुज पसराई॥
धावत आवत प्रभुहि निहारी। हंसकेतु सबशोक विसारी॥
दंडसरिस किय भूमि प्रणामा। कहि जयजय यदुपति घनश्यामा
लियो नाथ तेहि हिये लगाई। प्रेमविवश दृग बारि बहाई॥
मंजुल वचन कह्यो सुनु राजा। धन्य धन्य तैं सहित समाजा॥
तवसुत सरिस दास नहिं मोरा। लीन्ह्यों भुवन हेरि चहुँओरा॥
करहु न पुत्र शोक महिपाला। बसे विकुंठ दोऊ यहि काला॥

दोहा–तब बोल्यो करजोरि नृप, सुत पितुमातहु भ्रात॥
मोरे हौ यदुनाथ तुम, शोक न कतहुँ देखात॥२८॥

करहु मोर मंदिर प्रभु पावन। हे कृपालु यदुपति जगभावन॥
अस कहि प्रेमविवशमहिपाला। गिरयो भूमि महँ भयो विहाला॥
तेहिं उठाय प्रभु हिये लगाई। दीन्ह्यो अपनी भक्ति महाई॥
अर्जुनसों पुनि भेट कराई। प्रद्युम्नादिक दियो चिन्हाई॥
राजा बार बार शिरनाई। सादर पुर कहँ चल्यो लेवाई॥
ससुत सखायुत प्रभु गृह ल्यायो। पूजन सविधि कियो सुखछायो
अरप्यो मणिगण अरु मखबाजी। तापर भये नाथ अतिराजी॥
दिय वरदान ताहि भगवाना। सुरदुर्लभ करि भोग विधाना॥
अंत समय करु मो पुर वासा। जहां बसत सिगरे मम दासा॥
कह्यो हंसध्वज पुनि कर जोरी। यह अभिलाष नाथ अब मोरी॥
जबलों जियों जगत महँनाथा। तबलों लहौं आप जन साथा॥
एवमस्तु भाष्यो भगवाना। तोहिं सम प्रिय मोकहँ नहिं आना
पांच दिवस तहँ रहे मुरारी। नृपहिं सपुरजन कियो सुखारी॥

दोहा-सुरथ सुधन्वा हंसध्वज, भये विमल हरिदास ॥
तातें कछु विस्तारयुत, कीन्ह्यों कथा प्रकास ॥२१॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेसप्तविंशतितमोऽध्यायः २७

अथ नीलराजाकी कथा ॥

दोहा-गाथा नील नरेश की, सुनहु सबै हरिदास ॥
तीर नर्मदामें कियो, माहिष्मती विलास ॥ १ ॥

तहाँ गयो अर्जुन को घोरा । जहँ प्रवीर रह नील किशोरा ॥
बाँचि पट्ट सो गह्यो तुरंगा । कियो धनंजय सों बहु जंगा ॥
हारयो अंत भूप सुत भाग्यो ।कह्यो नीलसों अति भय पाग्यो॥
व्याह्यो पावक नील कुमारी । ताते करी नगर रखवारी ॥
नील तुरत पावक बोलवाई । दियो सकल वृत्तांत सुनाई ॥
पावक कह्यो समर हरि कीजै।अपने संग मोहूँ कहँ लीजै ॥
नील चलो लै पावक संगा । कीन्ह्यों जुरि जालिम जमि जंगा॥
पावक पारथ सैन्य जरायो । अर्जुन वारुण अस्त्र चलायो ॥
तदपि न शांतभई सिखिज्वाला। तब बोल्यो रुक्मिणिकोलाला॥
मारहु वैष्णव अस्त्र सुजाना । तब होई सिखि शांत महाना॥
अर्जुन वैष्णव अस्त्र चलायो । सोलखि पावक पेलि परायो ॥
कह्यो नीलसों जाय दुखारी । देहु तुरँग नाहिं जैहो हारी ॥

दोहा-नील तुरंग तुरंतही,दीन्ह्यो पार्थहिं आइ ।
अर्जुनसों कर जोरिकै, कह्यो विनय दरशाइ ॥ १ ॥
सखापुत्र यदुनाथके, पकरयो शरण तुम्हार ।
हरिसों भक्ति देवाइये, यह अभिलाष हमार ॥ २ ॥
तब अर्जुन प्रद्युम्नहू, जामिनिभे यहि हेत ।
देहैं निज पद कमल रति,तोको रमानिकेत ॥ ३ ॥

अश्वमेधके अंत में, नील नागपुर जाइ ।
अर्जुन अरु प्रद्युम्न के,बैठ्यो धरन सुनाइ ॥ ४ ॥
तब अर्जुन प्रद्युम्नहूं, वरवस हरिसों माँगि ।
नीलहिं हरि निष्ठा दई,गैभवकी भय भागि ॥ ५ ॥
राज कोष परिवार तजि, नील विपिन करिवास ।
कछुक कालमें लहत भो, अचल विकुंठ विलास॥६॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेअष्टाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २८॥

अथ मोरध्वज अरु ताम्रध्वजकी कथा॥

दोहा–मोरध्वज अरु ताम्रध्वज, पिता पुत्र हरिदास ।
तिनको मैं वर्णन करौं, परम सुखद इतिहास ॥

फिरत फिरत नृप धर्म तुरंगा । जीतत विविध नरेशन जंगा ॥
रतन नगर आयो तेहि काला । जहाँ मोरध्वज रह्यो भुवाला॥
मोरध्वज रेवाके तीरा । करत रह्यो हयमखमतिधीरा ॥
भवन ताम्रध्वज ताहि कुमारा । रह्यो महाबल बुद्धि अगारा ॥
मंत्री तासु बहुलध्वज नामा । सकल कर्मकारक मतिधामा ॥
देखि तुरंग पट्टतेहिबाँची । ताम्रध्वज मति युधहित रांची॥
कह्यो सचिवसों पकरहु बाजी । होहु सजग सिगरो दल साजी ॥
याते अधिक न दूसर काजू । क्षत्री धर्म दरश यदुराजू ॥
ऐसो रह्यो मनोरथ मोरा । कबदेखब वसुदेव किशोरा ॥
यदुनंदनको दर्शन कीजै । धाराक्षेत्र त्यागि तनु दीजै ॥
उभय लोक अब लेहिं सुधारी । भई भाग्य की उदय हमारी ॥
अस कहि साजि सैन्य चतुरंगा। चल्योताम्रध्वज सहित उमंगा॥

दोहा–जबते सुरथ सुधन्व दोउ,लिये मुक्ति रणमाहिं ।
तबते अर्जुन संगमें,यदुपति रहे तहाँहिं ॥ १ ॥

दूतन आय खबरि असदीन्ह्यों। नाथ ताम्रध्वज हय गहिलीन्ह्यो
आवति सैन्य संग अति भारी। युद्ध करनकी किये तयारी॥
दूत वचन सुनि हरि असबोले। रहहु न पार्थ और नृप भोले॥
अति विक्रमी मोरध्वजनंदन। नाम ताम्रध्वज दुष्ट निकंदन॥
धर्म धुरंधर धरणि उदारा। मोर अनन्य भक्त अविकारा॥
महाकठिन संगर यह होई। जानि परत बचिहै नहिं कोई॥
अर्जुन कह्यो सुनहु यदुनाथा। विजय अवशि पाउबतुवसाथा॥
तब प्रद्युम्न तुरत प्रभु टेरा। गृध्रव्यूह विचरहु दलकेरा॥
तुरत प्रद्युम्न विरचि खगव्यूहा। चल्यो संग लै बीर समूहा॥
यदुपति पार्थ सैन्य मधि माहीं। और बीर बांके चहुँ घाही॥
उतै ताम्रध्वज सैन्य समेता। आयो सुमिरत कृपानिकेता॥
देखि दूरि ते यदुपति काहीं। कियो प्रणाम उतरि महिमाहीं॥

दोहा—जय यदुपति करुणायतन,शरणागतके पाल।
सखा पुत्र युत दरश दै, मोकहँ कियो निहाल॥२॥

क्षत्री धर्म करौं कछु आजू। हैयदुनाथहाथ मम लाजू॥
अस कहि कुँवर पसर करिदीन्ह्यो।बाणचलाइ छाय दल लीन्ह्यो
उतै यादवी सैन्य प्रवीरा। मारत भये अनेकनि तीरा॥
भयो भयावन तहँ संग्रामा। जूझे विविध वीर तेहि ठामा॥
वसुधा बही रुधिर की धारा। प्रगटे प्रेत पिशाच अपारा॥
तहां ताम्रध्वज रथहि धवाई। आयो जहां वीर समुदाई॥
सात्यकि आदिक वीरन काहीं। मारि शरन किय विकल तहांहीं
सकल यादवी सैन्य विदारयो। चहुँकित वेगवंत शर झारयो॥
कोउ नहिं सन्मुख रुक्यो प्रवीरा।आड़ि सक्यो कोऊ नहिं तीरा॥
तब प्रद्युम्न तहँ कियो पयाना। धारे कर कोदंड महाना॥
निरखि ताम्रध्वज हरि सुत काहीं। किय प्रणाम संग्रामहि माहीं॥

बोल्यो वचन विनय रस साने। हैं हम तुव भुज विक्रम जाने॥
दोहा—पूर मनोरथ ह्वैगयो, तुमको निरखिकुमार॥
कौन घरी वह होयगी, देखब पिता तुम्हार॥ ३॥
लखहु कछुक विक्रम हुदासको। सिखि राख्यों जो करि प्रयासको
अस कहि विविध बाण संधाना। मारि चहूंकित भयो दिशाना॥
कियो लाघवी भूप कुमारा। कुवँर तुरंग तुरंत संहारा॥
तब प्रशंसि तेहिं कृष्णकुमारा। कह्यो वचन सुनु वीर उदारा॥
मम पितुके अनन्य तुम दासा। तोरे यश पूरित दश आसा॥
मैंहौं यदुपति पुत्र भुवाला। सुतते सेवक प्रिय सब काला॥
तुमसों हम सब विधितेहारे। प्रेम जंजीर पगन तुम डारे॥
पै कछु विक्रम लखहु हमारा। क्षात्रधर्म कर करहु विचारा॥
अस कहि कुवँर कोदंड टँकोरा। छांड़्यो विशिखविविधअतिघोरा
चले अनेकन सायक पैना। विनशन लगी ताम्रध्वज सैना॥
चहुँ दिशि रणरथ मंडल दीन्ह्यों। मघा बूंद सम शर झरि कीन्ह्यों
रहे भुवन भरि पूरित बाना। कटे मतंग तुरंगहु याना॥
दोहा—चारि दंड महँ तासु दल, कीन्ह्यों कुवँरसँहार॥
तीनि अक्षोहिणि हति गई, माच्यो हाहाकार॥ ४॥
तबै ताम्रध्वज रथहि धवाई। बोल्यो कृष्ण कुवँर ढिग आई॥
साधु साधु रुक्मिणी दुलारे। तोसम विक्रम कहुँ न निहारे॥
रोकहु रथ काटत हौं तोरा। लख विक्रम रुक्मिणी किशोरा॥
महामंत्र आवत यक मोको। वारन करै जगत महँ सोको॥
अस कहि जय यदुनंदन नाथा। मार्‍यो बाण ऐंचि यक भाथा॥
लागत बाण मदन को स्यदंन। भस्म भयो तब कह हरिनंदन।
जौन मंत्र पढि तैं शर मारा। सो त्रिभुवन नहिं रोकनहारा॥
पुनि प्रद्युम्न बाण यक मार्‍यो। तुरत ताम्रध्वज को रथ जार्‍यो॥

चढ़ि द्वितीय रथ भूप कुमारा। समर मध्य अस वचन उचारा॥
जो अनन्य मैं तुव पितु दासा। तौ यह बाणकरे तव नासा॥
अस कहि छोंड़ि दियो शर घोरा। लग्यो प्रद्युम्न हृदय वरजोरा॥
मूर्च्छित भयो कुवँर संग्रामा। हाय हाय माच्यौ तेहिं ठामा॥

दोहा– तब सात्यकी तुरंतही, मारत विशिखनिकाइ॥
जुऱ्यो ताम्रध्वज सों सपदि, ठाढ़ रहो असगाइ॥९॥

तुरत ताम्रध्वज सात्यकि काहीं। मूर्च्छित कियो परचो श्रम नाहीं
तब अनिरुद्ध बाण तकि मारी। तासों युद्ध भयो अति भारी॥
सोऊ लगत ताम्रध्वज बांना। गिऱ्यो मुरछि महि वीर प्रधाना॥
औरौ महारथी जे आये। सबनि ताम्रध्वज मारि गिराये॥
भगी पांडवी फौज डेराई। समर ताम्रध्वज शर झरिलाई॥
तब अर्जुन सब भटन पुकारे। जैहौ कहां भागि भटभारे॥
मैं यह भट कर करौं विनाशा। देखहु सिगरे परे तमाशा॥
अस कहि पारथ सारथि काहीं। कह्यो चलहु प्रभु लै रथकाहीं॥
तुरतहि यदुपति यान धवाई। दियो ताम्रध्वज पहँ पहुँचाई॥
पारथ सात बाण तेहिं मारा। करि रथ खंडित सूत सँहारा॥
द्वितिययान चढ़ि भूपकुमारा। कुंती सुत सों वचन उचारा॥
आजुहिं जन्म सफल ह्वैगयऊ। रणआंखिन प्रभु देखत भयऊ॥

दोहा–यहि हित मैं बांध्यौ तुरँग, यहि हित कीन्ह्यों रारि॥
यहि हित मारचो अमित भट, देख्यो आजु मुरारि६॥

हे प्रभु दयासिंधु जगदीशा। तुम्हरे चरण मोरहै शीशा॥
जस मैं राख्यो उरमें आसा। तस दरशन दिय रमानिवासा॥
क्षत्रीकुल महँ जन्म हमारा। क्षत्रधर्म युध तुमहिं उचारा॥
ताते जो आज्ञा प्रभु पाऊं। तौ पारथ कहँ समर देखाऊं॥
प्रभु प्रसन्न ह्वै बोले वचना। करहु वीर विक्रमकी रचना॥

तब प्रभु पंकजमें शिरनाई। तज्यो ताम्रध्वज शर समुदाई ॥
पार्थहु सायक विविध पवाँरा। होत भयो दशदिशि अँधियारा ॥
बहुत काल लगि दोउयुध कीन्ह्यो। विस्तर भीति नमैंकहिदीन्ह्यो॥
कह्यो ताम्रध्वज तब कर जोरी। सुनहुँ नाथ विनती अस मोरी॥
जोइ जब किय प्रण दास तिहारे। तिनको तुमहि जाइ निरधारे॥
हौं प्रण अस करतोयहिकाला। सखा सहित गहि तुमहि कृपाला॥
नाती पुत्र सहित पग पकरी। प्रेम जँजीरन में पुनि जकरी ॥

दोहा—लैजैहौं पितुके निकट, वसत नर्मदा तीर ॥
वाजिमेध मख करतहै, तोहिं ध्यावत यदुवीर ॥ ७ ॥

अस कहि तुरत ताम्रध्वज धायो। प्रभु पद पंकज पाणि लगायो॥
गहि प्रभुका लिय कंध चढ़ाई। चल्यो जनक ढिग आनँद छाई॥
पारथ हूं लीन्ह्यों पछिआई। प्रद्युम्नादिक आये धाई ॥
देखि भक्त वत्सलता हरिकी। विसर गई सुधि संगर अरिकी ॥
चली सैन्य सब हरिके पाछे। धन्य धन्य सब कह तेहि आछे ॥
गयो ताम्रध्वज रेवा तीरा। जहँ बैठो मोरध्वज धीरा ॥
दूत कह्यो आगे कछु जाई। आवत सुत हरि कंध चढ़ाई ॥
सुनत मोरध्वज अचरज माना। सन्मुख दौरत कियो पयाना ॥
देख्यो पुत्र कंध प्रभु काहीं। गिरचो दंड सम धरणि तहांहीं ॥
कूदिकंधते प्रभु द्रुत धाई। मोरध्वजहि लिये उरलाई ॥
मोरध्वजकर गहि यदुराई। मखशाला महँ गये लेवाई ॥
तहां भूप सिंहासन माहीं। बैठायो त्रिभुवन पति काहीं ॥

दोहा—पूजि सविधि पुनि कमलपद, सादर लियो पखारि ॥
सकुल सबंधु सदार नृप, लीन्ह्यों शिरमहँ धारि ॥ ८॥

प्रभु पदपंकज अंकहि धरिकै। कह्यो मोरध्वज आनँद भरिकै ॥
आजु धन्य मैं सकुल भयो है। कोटि जन्मको दुरित गयोहै ॥

तुव समान को दीनदयाला। मोहिं दरश दै कियो निहाला ॥
मैं पामर पापी सब भांती। नाथनिरखि भइ शीतल छाती ॥
सुत कुल बंधु धरणि धंन धामा।प्रिय परिजन पुरजन वसु वामा॥
प्रभुको अर्पण सकल हमारो। यह सगरो है नाथ तिहारो ॥
अस कहि उठि मोरध्वज राजा। अर्जुन युत यादवी समाजा॥
पूजन कीन्ह्यों कृष्ण समाना। हरिते भिन्न भाव नहिं ठाना ॥
भूषण वसन विचित्र बनाई। यथायोग्य सबको पहिराई ॥
सबको चरणोदक शिर धारयो। हरिते वर हरिदास बिचारयो॥
नभते देव फूल वरषाहीं। धन्य धन्य कहि भूपति काहीं ॥
सुतहि कह्यो तैं भो कुलतारन। मोहिं दरशायो वारन तारन॥

दोहा—मोरध्वजकी प्रीति लखि,भे प्रसन्न यदुनाथ ॥
बार बार ताको मिले, धरयो माथमें हाथ ॥ ९ ॥

कह्यो भूप नहिं तोहि सम आना। धर्मधुरंधर भक्त प्रधाना ॥
तो सुत सरिस न वीर त्रिलोका। वाजि बांधि मेरो दल रोका॥
जीत्यो अर्जुनादि सब वीरा। सहसबाहु सम रिपु रणधीरा ॥
मो पद प्रेम जँजीरन डारी। तेरे ढिग ल्यायो प्रणधारी ॥
कह्यो मोरध्वज तब शिरनाई। नाथ रावरी है प्रभुताई ॥
तुम्हरे सुतहि सखहि जगमाहीं। अज शंकर जेता हैं नाहीं ॥
मम कुमार तो केतिक बाता। निज जन प्रण राखहु सुखदाता॥
अस कहि तुरँग तुरंत मँगाई। सौंप्यो प्रभुहिं चरण शिरनाई ॥
लै तुरंग निज सैन्य लेवाई। चले नाथ भूपति गुणगाई ॥
यादव सकल सराहन लागे। नृपकी प्रीति रीति रस पागे ॥
कछुकदूरि जब प्रभु कढ़ि आये। तब अर्जुन हरिपद शिरनाये ॥
विनय कियो कर जोरि सुखारी। धन्यभाग्य यदुनाथ हमारी ॥

दोहा—मो सम धरणी में अपर, धन्य परत नहिं जोहि ॥
प्रभुसबनृपन जितायकै, दियो सुयश जग मोहि १०॥
नाथ कहौं कछु करत ढिठाई। क्षमहु चूक जो नहिं बनि आई॥
मैं मानहुँ अपने मन माहीं। मोते अधिक दास कोउ नाहीं॥
अग्रज मोर धर्म अवतारा। को तेहि सरिस अपर संसारा॥
धर्म हेतु बहु सह्यो कलेशा। सो तुम जानहु सकल रमेशा॥
धर्म वान पद पंकज दासा। औरहु कहुँ अस रमा निवासा॥
तेहि यदुपति तुम देहु बताई। मोहिं द्वितिय नहिं परत लखाई॥
तब बोले माधव मुसकाई। पारथ सुनहुँ वचन मन लाई॥
यदपि युधिष्ठिर अहैं अनूपा। धर्म धुरंधर औरहु भूपा॥
जे द्विज हित सर्वस निज त्यागैं। तन धन तिय सुत नहिं अनुरागैं
तब पारथ बोल्यो कर जोरी। को अस देहु बताय बहोरी॥
हरि कह यही मोरध्वज राजा। जाके सुत सों आयुध बाजा॥
सुतको विक्रम भक्ति हमारी। लख्यो सखा संग्राम मँझारी॥
दोहा—मोरध्वजको धर्मधृत, सखा जो देखन चाहु॥
तो द्विज वपु धरि तहँ चलौ, जाहिर करि नहिं काहु॥
पारथ कह्यो चलहु यदुनाथा। हमहूं चलब तिहारे साथा॥
तब अर्जुन अरु कृष्ण कृपाला। धर्यो विप्र वपु परम विशाला
तहँ राखि यादवी समाजा। चले परीक्षा कारण राजा॥
विप्र रूप धरिगे तहँ दोऊ। तिन कर कपट जान नहिं कोऊ
द्वारपाल द्रुत जाय सुनाये। कछु कारज हित द्वै द्विज आये॥
सुनत भूप तुरतहिं उठि धायो। दोउ विप्रन मंडप महँ ल्यायो॥
सविधि पूजि तिमि चरण पखारी। लीन्ह्यों चरणोदक शिर धारी
करि प्रणाम पुनि बारहिंबारा। जोरि पाणि अस वचन उचारा
कहौ विप्र केहि कारज हेतू। कियो पवित्र हमार निकेतू॥

बोले विप्र सुनहु महराजा। हम आये जौने हित काजा॥
धर्म धुरंधर धरणि मँझारी। तुम्हैं सुने द्विज आरतहारी॥
अतिशय कठिन मोरि अभिलाखू। बनै जो राखत तौ प्रभुराखू॥
दोहा–दानी नाम तुम्हार सुनि, तुम्हरे ढिग नरनाथ॥
धन हित हम आवत हते, लिये पुत्र निज साथ१२॥
मिल्यो विपिन महँ व्याघ्र कराला। मोरे सुतहि धरचो ततकाला॥
तब मैं परचों चरण महँ ताके। विनय करी कहि वचन दयाके॥
मोरे एक पुत्र बनराऊ। छोड़ि देहु करि सरल सुभाऊ॥
धर्म किये सुधरत दोउ लोका। सब प्राणी नहिं पावत शोका॥
बाघ कह्यो हम मांस अहारी। दया धर्म नहिं रीति हमारी॥
तब मैं कह कौनेहु उपाई। देहौ त्यागि पुत्र बनराई॥
तब केशरी कही यह बाता। एक उपाय बची सुत ताता॥
भूप मोरध्वज नामक कोई। धर्मधुरंधर है यक सोई॥
तेहिं अंगदहिं ल्याउ मोहिं पाहीं। तब मैं नाहिं भक्षहुँ सुतकाहीं॥
अस मोहिं सिंह कह्यो महिपाला। सुनतहि मैं है गयो बिहाला॥
हैं राजा निजतनु नाहीं। केहिविधि मिली पुत्र म्वहिकाहीं॥
विप्रवचन सुनि नृपति उदारा। कह्यो पाइ उर मोद अपारा॥
दोहा–धन्यभाग्यमै मोरि अब, बचिहैं विप्रकुमार॥
विदित वेद अरु लोकहू, धर्म नसम उपकार॥१३॥
धन्य विप्रहित लगै शरीरा। विप्रकाज लगि होति नपीरा॥
देहौं तुमहिं विप्रतनु आधा। करी न सुतहिं सिंह अब बाधा॥
अस सुधि सुनि आई तहँरानी। तनय ताम्रध्वज तिमि मतिखानी॥
दुहुँन विप्र वृत्तांत सुनाये। तिरिया तनय महासुखपाये॥
नृपतिय कही अर्ध अँगनारी। म्वहिं दै निजसुत लेहु उबारी॥
सुत कह आत्मज पुत्र कहावै। ताते पितहि रूप जग भावै॥

मोहिंदे सिंहहि निजसुत काहीं। लेहु बचाय होहु सुखमाहीं॥
सुनि द्विज कह्यो सुरति अब आई। वाणी वाघ जो मोहिं सुनाई॥
नृपतिय तनय दोउ सुख भरिकै। निज निज कर मे आरा करिकै॥
मोरध्वज तनु युगफारा। तेहिलै मोहिं दै लेहु कुमारा॥
सुनि कह नृपति विलम नहिं कीजै। आरा उभय पाणिमहँ लीजै॥
शिरते पगलों करु युगखंडा। उदय होय कीरति मार्तंडा॥
दोहा—सुनत मोरध्वजके वचन, तिरिया तनय उदार॥
आरा दिय नृपशिर निरखि,जन किय हाहाकार१४॥
किय पयान कौतुक लखन, चढ़ि चढ़ि देवविमान॥
मंडप मधि भूपति खरो, आरा चलत महान॥ १५॥
धन्य धन्य सुर मुनि करत, बारहिं बार बखान॥
पुरजन परिजन दुखित अति,ठाढ़े वदन मलान॥१६॥
रानी कुमुदवती जेहि नामा। तनय ताम्रध्वज धर्महि धामा॥
निजपतिनिजपितु शिरमहँआरा। खैंचतदुहुँदिशित्यागिखँभारा॥
विप्रकाज गुनि दुख भजिगयऊ। दोहुनको प्रसन्नमन भयऊ॥
चलत चलत आरा तेहिं काला। आयो भूपतिके मधिभाला॥
तबै वाम आंखीते नीरा। बहनलग्यो मानहु भै पीरा॥
दोउ द्विज देखि बहत हगवारी। ह्वै उदास अस गिरा उचारी॥
हम नलेब तनु भूपति केरा। यह करिहै नहिं कारज मेरा॥
देत शरीर भयो दुखभारी। राजा वाम नयन बह वारी॥
लेत विप्र जो दुख भरिदाना। होत अहै तेहि नरक निदाना॥
असकहि विप्र दियो चल दोऊ। वरजतभे यद्यपि सब कोऊ॥
तब बोले भूपति अस बानी। सुनहु विप्र दोउ विनयप्रमानी॥
तनुकी पीर बहै नहिं आंसू। और हेतु कछु करौं प्रकासू॥
दोहा—दाहिन मेरो अंग यह,छिप्र विप्र हितलाग॥

वाम अंग यह ह्वै गयो, संयुत परम अभाग ॥१७॥
सोइ दुख रोवति बाईं आंखी । याकोहै यदुपति प्रभु साखी ॥
देखि धर्म वीरता भूपकी । हरिको खबरि रही नस्वरूपकी ॥
भये प्रगट तहँ दीनदयाला । चारिबाहु शोभित वनमाला ॥
मणिमय मुकुट माथमें राजै । कोटिनभानु लखत जेहिं लाजै॥
सजल जलदसमसुभग श्यामतन।पीतवसनछनछबिछबि छनछन
उरद्विजपद श्रीवत्स विभाता। अति प्रसन्न ह्वै मृदु मुसक्याता॥
पकरि लियो आरा निजहाथा । धन्य धन्य कह यदुकुलनाथा ॥
धर्मधुरंधर धीर प्रधाना।त्वहिं सम मोहिं प्रिय जग नहिं आना॥
मनभावत वरमांग भुवालू । विनादिहे सूखत मम तालू ॥
हरि कर परश पाइ शिरघाऊ ।भयो अरुज जस रह्यो सुभाऊ॥
भूपति सावधान करजोरी । कह्यो नाथ विनती यह मोरी ॥
जोप्रसन्नहौ दीनदयाला । तौ वरदेहु यही नँदलाला ॥

दोहा—ऐसी औरे दासकी, कियो परीक्षा नाहिं ॥
आवत कलियुग घोर अब,नहिं दृढ़ता तनुमाहिं॥१८॥

एवमस्तु कहि मुदित मुरारी । भूपतिसों पुनि गिरा उचारी ॥
लेहु विप्रपार्थहु कर वाजी । पूरहु यज्ञ साज सब साजी ॥
तुम्हरे मख महँ धर्मभुवाला । मनिहैं आपन यज्ञ विशाला ॥
तबै महीप मोरध्वज भाषा । अबनहिं नाथ यज्ञ अभिलाषा॥
तप जप यज्ञ योग फल जोई । दुर्लभ पाय गयों मैं सोई ॥
जेहिहित योगी यतन कराहीं । सो पायो बैठे घरमांहीं ॥
अब सुत राज कोष परिवारा । लेहु सकल वसुदेव कुमारा ॥
मोहिं देहु पदपंकज प्रीती । अबनहिं मोहिं जगतकी भीती॥
एवमस्तु कहि कृपानिधाना । मिले महीपहि सुखनसमाना ॥
भूपति दै प्रदक्षिणा चारी । लै अपने संगमें निजनारी ॥

चल्यो विपिन सुमिरत गिरिधारी। भवसंभव सुखसुरति बिसारी॥
बनवासि करि हरिपद अनुरागा। दंपति गे बिकुंठ बड़भागा ॥
दोहा—तब यदुपति पुनि ताम्रध्वज, राजासन बैठाय ॥
निजपद पंकज प्रीतिदै, भवभय दीन छोड़ाय ॥१९॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेएकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

अथ चन्द्रहासराजाकी कथा ॥

दोहा—मोरध्वजके नगरते, डगर्‌यो चपलतुरंग ॥
करत जंग नृप संगमें, करवावत भट भंग ॥ १ ॥
कुंतलपुर महँ पहुँच्यो जाई । चंद्रहास जहँ रह नृपराई ॥
चंद्रहास सुनि तुरंग अवाई । पठै दूत लीन्ह्यों पकराई ॥
बांच्यो पट्ट अर्थ सब जान्यो । मनमें मोद महीपति मान्यो ॥
भूपयुधिष्ठिरको यह वाजी । रक्षत यहि अर्जुन दलसाजी ॥
याके साथ नाथ मम ह्वैहैं । आजु विलोचन फल हम पैहैं॥
असकहि सैन्यतुरंत सजायो । युद्धहेतु भूपति कढ़िआयो ॥
इत प्रद्युम्न पार्थ धनुधारी । खरे भये सजि समरतयारी ॥
तब अकाश महँ तेजहि राशी । देखि परे देवर्षि प्रकाशी ॥
आये नारद सब शिरनाये । अर्जुन तब अस वचन सुनाये॥
कौन नगर यह कौन भुवाला । देहु बताय मुनीश कृपाला ॥
तब नारद बोले हँसि वानी । यहि सम भूप न और विज्ञानी
तुव सँग महँ अस नृप कोउ नाहीं। चंद्रहाससों समर कराहीं ॥
दोहा—कहत अहौं शशिहासको, यह अनूप इतिहास ॥
रामनाममें जाहि सुनि, उपजत अचल विश्वास॥१॥
एक अनूपम केरल देशा । रह्यो सुधार्मिक तासु नरेशा ॥

ताके चंद्रहास सुत भयऊ । राजा सुत उछाह अति कयऊ ॥
ताके षटअंगुलि करमाहीं । यही दोष दैवज्ञ बताहीं ॥
बीति गयो जब नेसुक काला । चढ़िआयो तहँ कोउ भुवाला ॥
कढ़्यो सुधार्मिक संगरहेतू । गयो जूझि भट सचिव समेतू ॥
सो नृप सकलसुधार्मिकराजू । अमल्यो कोशदेश कृतकाजू ॥
सतीभईं सिगरी नृपरानी । रही धाइ इक तहँ मतिमानी ॥
सोलै चंद्रहास कहँ भागी । आई कुंतलपुर भय भागी ॥
तहां रह्यो कुंतल नृप नामा । धृष्टबुद्धि मंत्री अतिवामा ॥
बसी नगर तेहिं नाम छिपाई । कीन्ह्यों चंद्रहास सेवकाई ॥
पंचवर्षको भो शशिहासू । खेलन लाग्यो सहित हुलासू ॥
पुरबालकनि संग नित खेलै । जीतै सबसों रहै अकेलै ॥

दोहा—एक समयकहुँ विप्र घर,होतो रह्यो पुरान ॥
चंद्रहास कहुँ जाइकै, सुन्यो आपने कान ॥ २ ॥

रामनाम मुदमंगल मूला । रामनाम हारक भवशूला ॥
रामनाम सब संपति दाता । रामनाम है मुक्ति विधाता ॥
रामनाम सम कछु नाहिं आना । रामनाम अति शास्त्र पुराना ॥
रामनाम जीवन हितकारी । रामनाम नाशक भयभारी ॥
रामनाम सज्जन सुर रूषा । रामनाम कलि मृतक पियूषा॥
रामनाम जप योग विरागा । रामनाम साधन शिर भागा ॥
रामनाम नर नरक नशावन । रामनाम पतितन कर पावन॥
रामनाम सब सुकृत समाजू । रामनाम कारण कृतकाजू ॥
रामनाम विधि शिव उरवासी । रामनाम ब्रह्मानँद रासी ॥
रामनाम त्रिभुवनकर भर्ता । रामनाम कारण अरु कर्ता ॥
रामनाम हठि दीन सनेही । रामनाम दाहक दुखदेही ॥
रामनामते अपर न कोई। रामनाम जानै, जन

दोहा—ऐसो कथित पुराणमें, चंद्रहास सुनि लीन ।
रामनाम तबते सदा,रटन लग्यो ह्वैलीन ॥ ३ ॥

तबते रामनाम रटलागी । रामनाम सुमिरण अनुरागी ॥
खेलत बागत बैठत माहीं । रामनाम मुखनिकसत जाहीं ॥
बीत्योकछुककाल यहिभाँती । जपत राम रघुपतिदिनराती ॥
येकसमय आये कोउ साधू । बैठे सरतट बोध अगाधू ॥
संपुटते निकास तेहिं ठामा । पूजन लागे शालिग्रामा ॥
खेलत खेलत तहँ तेहिकाला । चंद्रहासगो बुद्धि विशाला ॥
साधुहि पूछन लग्यो विनीता । देहु बताइ जो पूजहु प्रीता ॥
साधु कह्यो रामजी हमारे । जे कोटिन अधमन उद्धारे ॥
येई राम जानि तहँ बालक । ह्वैहै मोर अमित दुखघालक॥
साधुनजरि तहँ तुरत बचाई । लै भाग्यो मूरति अतिराई ॥
रपट्यो ताहि बहुत नहिं पायो । तासु प्रीतिगुनिनहिंपछितायो॥
चंद्रहास राख्यो तेहि काहीं । शालिग्रामशिला मुख माहीं ॥

दोहा—नित नहाइ हनवाइ तेहि, खावै भोग लगाय ।
खेलतमें सबसों जितै, बंदी ताहि बनाय ॥ ४ ॥

यहि विधि बीतिगये कछुमासा । मरी धाय गै देव निवासा ॥
तबते रह्यो ठिकाना नाहीं । भोजन शयन निवासहु काहीं॥
बालक सुभग देखि पुरवासी । होत भये सब तासु सुपासी ॥
कोइ लेवाइधर तेहिं नहवावै । कोउ उबटन बहुभाँति लगावै॥
कोउ बहु व्यंजन विरचि जवावै । कोउ निज ऐन शयन करवावे
रामकृपाते तेहि पुर लोगू । करवावैं यहिविधि सब भोगू॥
धृष्टबुद्धि गृह तब यककाला । विप्रन नेउता भयो विशाला ॥
विप्रन संग गयो शशिहासा । भोजन किये विप्र सहुलासा ॥
विप्र चंद्रहासहि जब देखे । बालक ताहि अपूरब लेखे ॥

धृष्टबुद्धि कहँ कह्यो बोलाई। यह बालकको देहु बताई॥
केहि सुत कौन देशते आयो। कहां रहत को यहि पठवायो॥
धृष्टबुद्धि कह मैंनहिं जानो। बालक सकल एक करि मानो
दोहा—विप्रकह्यो बालक यही, ह्वैहै यहि पुर भूप।
तेरी दुहिता व्याहिकै, भोगी भोग अनूप॥ ५॥
धृष्टबुद्धि सुनि अमरष छायो। निजघरते विप्रन निकरायो॥
कौनजातिको है केहि बालक। ताहि कहत ह्वैहै पुरपालक॥
यहि मम सुता व्याह किमि होई। जाति पांति जानै नहिं कोई॥
तबसब दुष्ट मित्र तेहि केरे। बैन धृष्टबुद्धिहि अस टेरे॥
विप्रवचन नहिं मृषा विचारहु। आसु उपाइ तासु निर्धारहु॥
धृष्टबुद्धि तब बोलि कसाई। चंद्रहास कहँ द्रुत पकराई॥
रुषित कसाइन गिरा उचारी। वनलै जाइ मारिये मारी॥
यहिबालकहि कालवश कीजे। मोको आइ चीन्ह कछु दीजै॥
तुमको महिषी देव पचासा। पैहौ पय भखि परम हुलासा॥
चंद्रहास कहँ तुरत कसाई। गहि लैचले विपिनि भयदाई॥
चंद्रहास तब मनहिं विचारा। मारत मोहिं बिना अपकारा॥
अब रक्षक अवधेशकुमारा। रामनाम जेहिं भुवन अधारा॥
दोहा—सुमिरचो श्रीरघुवंशमणि, चंद्रहास मतिवान॥
रामकृपा वश श्वपचते,करन लगे अनुमान॥ ६॥
यह बालककी सुंदरताई। हमसों देखि मारि नहिं जाई॥
कोउकहै धृष्टबुद्धि नहिं देखी। साच असाच कौन विधि लेखी॥
काटि अंगुली अब विनदेरी। करहु प्रतीति धृष्टमति केरी॥
असकहि चंद्रहास कहँ डाटी। ताकी छठईं अँगुली काटी॥
धृष्टबुद्धिके निकट सिधाई। अंगुलि दियो देखाइ कसाई॥
भई सचिवके परम प्रतीती। दियो इनाम कसाइन प्रीती॥

चंद्रहास बालक वनमाहीं । रोवत बैठ अकेल तहाँहीं ॥
पक्षी जाइ जाइ फल देहीं । तरुछाया शासन करिलेहीं ॥
मधुमाखिन छातन मधु श्रवहीं ।विपिन जीव चाहहिं हित सबहीं॥
यहि विधि बीतिगये दिनचारी । रामकृपा वशविपिन मझारी ॥
रह्यो कुलिंद जासु असनामा । कुंतल नृप सेवक मतिधामा ॥
सोइ कुंतल नृपकेर देवाना । धृष्टबुद्धि सोइ रह्यो अज्ञाना ॥

दोहा–कुंतलभूप कुलिंद कहँ,दिहे रह्यो शतग्राम ॥
ग्राम दिव्य प्रति वर्षमें,लेत रह्यो करिकाम ॥ ७ ॥

सोइ कुलिंद आयो वनमाहीं । देखत चन्द्रहास शिशुकाहीं ॥
ताके रह्यो पुत्र नहिं कोई । चंद्रहासको लखि मुद मोई ॥
निजरथपर चढ़ाइ घर जाई । निजनारी सों गिरा सुनाई ॥
लेहुपुत्र दीन्ह्यों भगवाना । यामें करहु नकछु अनुमाना ॥
नारिपाइ शिशुचंद्रहासको । मानि अनुग्रह श्रीनिवासको ॥
चंद्रहासको सेवन कीन्ह्यों । द्विजन दान नानाविधि दीन्ह्यों॥
तब कुलिंदशशिहासपढ़ावन । पठै दियो पंडित वर पावन ॥
लग्यो पढ़ावन तेहि उपरोहित। बोल्यो चंद्रहास गुनि अनहित॥
मैंतोद्वै अक्षर पढ़ि लीन्ह्यों । और शास्त्रमें नहिं मनदीन्ह्यो ॥
नहिं ऐहैं मोहिं शास्त्रपुराना । कीजत वृथा परिश्रम नाना ॥
पंडित करगहि तेहि शिशुकेरे । लै आयो कुलिंद नृप नेरे ॥
कह्यो भूप बालक मतिहीना । रामकहनमें परमप्रवीना ॥

दोहा–हारयो कोटि पढ़ाय कै,द्वै अक्षरको त्यागि ॥
यह बालक कछु नहिं पढ़त,जानी परति अभागि ॥८॥

मैं जो कौनहु ग्रंथ पढ़ावत । रामराम यह मुखरटलावत ॥
रह्योकुलिंद राम कर दासा । सुत हवाल सुनि लह्यो हुलासा ॥
कह्यो पुरोहितसों अस बानी। अबै नबाल दोष कछु मानी ॥

जब व्रतबंध होइ सुतकेरो। तब करिहैं गुणदोष निबेरो ॥
पंडित अपने भवन सिधारहु। याहि पढ़ावन अब न विचारहु ॥
पंडित विमन गयो गृह काहीं। रहन लग्यो शशिहास तहांहीं ॥
एकादश संवत जबबीते। किय कुलिंद व्रतबंध पिरीते ॥
धनुर्वेद तब कियो अभ्यासू। रामकृपा आयो सब आसू ॥
एकसमय शशिहास प्रवीरा। कह कुलिंदसों वचन गँभीरा ॥
पितादेहु हमको कछु सैना। करहुँ दिशा जय अस उर चैना।
कह कुलिंद बालक मतिहीना। हम कुंतल नरेश आधीना ॥
दुष्टबुद्धि मंत्री तेहि केरा। सुनै जो कतहुँ उजारै खेरा ॥

दोहा—चंद्रहास तब हँसि कह्यो, पांचरथीमोहि देहु ॥
और देश बहु जीतिके,ल्याऊं धन निज गेहु ॥ ९ ॥

पंचरथी कलिंद तेहि दीन्ह्यो। गवन दिशजीतन कहँ कीन्ह्यो ॥
जीति अनेक देश शशिहासा। ल्यायो धनसमूह निजवासा ॥
बीतिगयो तहँ पुनि कछुकाला। गोकुलिंद सुरलोक विशाला ॥
चंद्रहास भूपति तब भयऊ। शासन सकल राज्य मय दयऊ ॥
चंद्रहासकी फिरीदोहाई। एकादशी रहै सब भाई ॥
विष्णुभक्ति जो करी नकोई। पैहैं घोर दंड हठि मोई ॥
जो नहिं साधुचरण जल पीहै। सो मेरे करते नहिं जीहै ॥
जो नहिं साधु करी सतकारा। होई ताको भवन उजारा ॥
जो द्विज धेनु साधु सनमानी। सो पैहै विशेषि सुखखानी ॥
चंद्रहास अस शासन फेरा। सबके उर किय भक्ति बसेरा ॥
राममयो सब पुर ह्वै गयऊ। चंद्रहास यश फैलत भयऊ ॥
उपजै राज मध्य धन जोई। विप्र साधु महँ खरचै सोई ॥

दोहा—कुंतल नृपको डांड़ जो, देत रह्यो प्रतिपाल ॥
सो नहिं दीन्ह्यो भूपको, बीतिगयो बहुकाल ॥ १० ॥

तब कुंतलनृप अमरष छाई । दुष्टिबुद्धि निज सचिव बोलाई॥
कह्यो कुलिंद भूप कर बेटा । डांड़ देत में डारत छेटा ॥
साजि सैन्य तुम तहाँ सिधारहु । जो नदेई तो पकरहु मारहु ॥
दुष्टबुद्धि सुनि भूपति शासन । गवन्यो चंद्रहासको नाशन ॥
चंदनवती पुरीमहँ आयो । चंद्रहास सुनि आनँद पायो ॥
लै अगवानी गृहमहँ ल्यायो । विविध भांति सतकार पठायो ॥
दुष्टबुद्धि चीन्ह्यों शशिहासै । यहतौ वही कह्यो जेहि नासै ॥
कीन्ह्यो हमसों कपटकसाई । अँगुरी काटि मोहिं देखराई ॥
कौनहेतु यहि दियो बचाई । मैं मारौं करि अवशि उपाई ॥
करहुँ जो सन्मुख शस्त्र प्रहारा । तौ याके भट करहिं संहारा ॥
ताते यतन सहित यहि मारौं । अब नहिं और कछू निरधारौं॥
दुष्टबुद्धि अस मनहिं विचारी। चंद्रहाससों गिरा उचारी ॥

दोहा–जबते मरे कुलिंदनृप, तबते तुम शशिहास ॥
दियो न भूपहि दण्डकछु, लिय वेसाहि निजनास ११॥

चंद्रहास तब कह मुसकाई । ब्राह्मण वैष्णव लिय धनखाई ॥
देहुँ कहांते कहँ धनपाऊं । रोजहि साधुन हेतु उठाऊं ॥
ऊपर मृदुल हिये कुटिलाई । दुष्टबुद्धि बोल्यो मुसकाई ॥ ३ ॥
हौं एक देत उपाइ बताई । जाते तोर जीव बचिजाई ॥
तोहिं देखि लागति मोहिदाया।विरची निजकर विधि तब काया॥
चंद्रहास बोल्यो करजोरी । तुम्हरे हाथ जीव गति मोरी ॥
दुष्टबुद्धि तब कागज आनी । लिखी पत्रिका छलकी सानी ॥
दुष्टबुद्धि सुत मदननामको । करतरह्यो सो नृपति कामको ॥
ताको दुष्टबुद्धि यहिभांती । लिख्यो मदन कहँ रचिरचि पाती॥
नहिंकुलजाति विचारेहु बेटा । जब शशिहासकेर होइ भेंटा ॥
तबहीं विष यहिको हठि दीजै । और कछू विचार नहिंकीजै ॥

अस पाती लखि खाँभि देवाना । चंद्रहास कर दियो अज्ञाना ॥
दोहा–दुष्टबुद्धि पुनि कहतभो, देहु मदन करजाइ ॥
चंद्रहास सब काज तुव, दैहै मदन बनाइ ॥ १२ ॥
चंद्रहास अति आनँद पायो । लैपाती निजशीस चढ़ायो ॥
चढ़ितुरंग कुंतलपुर आसू । चलतभयो करि परमप्रयासू ॥
वाजि धवावत तीजे यामा । आयो कुंतलपुर आरामा ॥
नगर बाहिरे उपवनयेका । रहे प्रफुल्लित वृक्ष अनेका ॥
दुष्टबुद्धि मंत्रीकर बागा । चंद्रहासको अतिप्रियलागा ॥
फूलिरहीं लतिका चहुँवोरा । कूप अनूप रूप इकठोरा ॥
छाया सघन फले तरुवृंदा । बोलिरहे विहंग सानंदा ॥
रोस हौद बहु कटीं कियारी । चौक चारु चहुँ कित चितहारी ॥
देखि बाग शशिहास कुमारा । श्रमित रह्यो अस कियो विचारा ॥
नेसुक करौं कूप जल पाना । फेरि मदन ढिग करौं पयाना ॥
तुरत तुरंगते उतरि तहांहीं । कीन्ह्यों पान कूप जल काहीं ॥
पुनि करि मज्जन सहित विधाना । पूज्यो सानुराग भगवाना ॥
दोहा–शीतल मंद सुगंध तहँ, प्रवहत रह्यो समीर ॥
तरुछाया शीतछ सघन, हरन पंथ श्रमपीर ॥ १३ ॥
निद्रा चंद्रहास कहँ आई । सोयो पंथ श्रमित अलसाई ॥
ताही समय तौनहीं बागा । दुष्टबुद्धिकी सुता सुभागा ॥
सहित सहेलिन तहँ चलि आई । देखन हेतु मंजु फुलवाई ॥
तोरि कुसुम विहरत चहुँ वोरा । गुंजत कुंजन कुंजन भौंरा ॥
बोलिरहे विहंग मदमाते । नवपल्लवित वृक्ष लहराते ॥
विचरत बीति गयो कछु काला । तृषावती भै सखि युतबाला ॥
चली हंसगति कूपहि वोरा । सोवत रह जहँ भूप किशोरा ॥
बिषया कूप निकट जब आई । देख्यो शशिहासहिं सुखदाई ॥

कुवँर मनोहर वैस किशोरा ।निजकर विधि विरच्यो सबठौरा॥
अस जगतीतल सुंदरताई । नयन दीखनहिं श्रवण सुनाई॥
जबते चंद्रहास मुख जोहा । तबते विषयाकर मनमोहा ॥
भूलिगयो करिवो जलपाना ।तासु निकट किय तुरत पयाना॥

सोरठा—चंद्रहासको रूप, नखते शिख निरखतभई ॥
अंग अनंग अनूप, चकित एक क्षण ह्वैगई ॥१४॥

विषया बुद्धि विचारन लागी । कोहै कहँ आयो बड़भागी ॥
कछुनहिं परचो तासु अनुमाना। बारबार मन निरखिलोभाना॥
गई पाग विषयाकी डीठी । तहँ खोसी देखी यक चीठी ॥
ताहि पाणिते लियो निकारी । बांचन लागी खांभ उघारी ॥
बाँचि जानि निज पितुकी पाती। दरकि उठी विषयाकी छाती॥
हाय महापापी पितु मोरा । ऐसहु रूप घात किय घोरा ॥
होइ प्राणपति यही हमारा । अस करुकारुणीक करतारा ॥
तहँ कीन्हीं विषया निपुणाई । दृगकज्जलकी मसी बनाई ॥
करिलेखनी नोक नखकेरी । कन्याकीन्ही चारु चितेरी ॥
जहँ अस रह्यो दियो विषयाको । तहँ अस कियो दियो विषयाको
तैसहि पाती खांभि कुमारी । खोसि दियो पुनि पाग मझारी
गई भवन सुमिरत भगवाना । देहु यही पति कृपानिधाना ॥

दोहा—कछुक कालमें जगतभो, चंद्रहास मतिवान ॥
गुणि विलंब चढ़िकै तुरँग, कीन्ह्यो पुरहि पयान१५॥

पहुँच्यो मदन समीप कुमारा।सचिव सुतहि किय मुदित जोहारा॥
मदनहुँ मोहि गयो वपु देखी । चंद्रहासको अतिप्रिय लेखी ॥
मदन ताहि अस वचन सुनाये। को तुम तात कहांते आये ॥
चंद्रहास तब नाम सुनायो । क्षत्रिय कुल निज संभव गायो॥
दुष्टबुद्धिकी पाती दीन्ही । बाँचन लग्यो मदन तेहिं चीन्ही॥

नहिं कुल जाति विचारेहु याको । पाती लखत दियो विषयाको॥
मदन बाँचि अस पितुकी पाती । सब प्रकार भै शीतल छाती॥
लिय तुरंत ज्योतिषी बोलाई। लग्न घरी सब भाँति सोधाई ॥
तेहिं दिन पंडित लग्न बतायो ।व्याह साज सब मदन सजायो॥
दियो व्याहि विषया शशिहासै । माचि रह्यो सब नगर हुलासै॥
याचक वृंद सुनत शुभ व्याहा । आये मदन द्वार सउमाहा ॥
दीन्ह्यों धन द्विज वृंदनकाहीं । जाकी जस आशा मनमाहीं ॥

दोहा–दुष्टबुद्धिको मदन तब, पाती दई पठाय ॥
दियो व्याहि विषया तुरत, शासन तिहरो पाय १६॥

दुष्टबुद्धि पाती जब पाई । बाँचि कोप पावक तनु लाई॥
कियो विचार मदन बौराना ।लिख्यो आन समुझ्यो कछु आना॥
लिखत राम रावण लिखिगयऊ । मोहिं विपरीत दैव अब भयऊ॥
असकहि तुरत यान मँगवाई । दुष्टबुद्धि चढ़ि चल्यो तुराई ॥
आयो कुंतलपुरके नेरे । याचक वृंद अशीशत हेरे ॥
दुष्टबुद्धि जय सचिव शिरोमनि । युग २ जीवहु पुत्र सहित धनि॥
मदन कियो निज भगिनि विवाहा। दियो दान करि महाउछाहा
धन्य दुष्टबुधि द्विज सुखदाई । चंद्रहास अस लह्यो जमाई ॥
दुष्टबुद्धि तब अति अनखायो । मारिकसा याचकन भगायो ॥
जरत बरत आयो घर माहीं । मंगलचार लख्यो चहुँघाहीं ॥
मदन पितै आगू चलि लीन्ह्यो ।पुत्र विलोकि कोपअति कीन्ह्यो॥
अरे मंदमति तैं का ठान्यो । निज वैरी जामाता जान्यो ॥

दोहा–पाती मेरी कौनविधि, तैबाँच्यो मतिमंद ।
वैरिको भगिनी दई, कियो कौनतैं छंद ॥ १७ ॥

पितावचन सुनि मदन डेराना ।कहिनसक्योकछुबदनसुखाना॥
पुनि पाती पितुके कर दीन्ह्यों । तातलिख्योजसतसहमकीन्ह्यो॥

नाहिं मानहु कछु दोष हमारा। बाँचि पत्रिका करहु विचारा॥
पाती बाँचि धुनन शिरलागा। दीन्ही दगा दैव दुर्भागा॥
पुत्र सहित घर भीतर आयो। तब शशिहास जाइ शिरनायो॥
देखि चंद्रहासहि उर दहेऊ। ऊपर कोमल वैनहिं कहेऊ॥
भलीभई जो भयो विवाहा। तुमतौ चंद्रहास नरनाहा॥
तब शशिहास गिरा असगाई। यह सिगरी रावरी बड़ाई॥
दुष्टबुद्धि तब कियो विचारा। याको करौं अवशि संहारा॥
विधवा सुता होइ तौ होई। बची न यह उपाइ करि कोई॥
अस मन ठीक दियो अघखानी। चंद्रहाससों बोल्यो बानी॥
हमरे कुलमहँ है असरीती। चंद्रहास तुम करहु प्रतीती॥

दोहा—व्याह अंतमे वरस विधि, देवी पूजन जात।
तातें आजुनिशीथमें, देवी पूजहु तात॥ १८॥

चंद्रहास शासन शिरधरिकै। बोल्यो वचन महामुद भरिकै॥
अर्धरातिमें आजुहिं जाई। पुजिहौं सविधि चंडिका माई॥
दुष्टबुद्धि तब अति सुखपाई। बैठ्यो तुरत इकांतहि जाई॥
तहाँ कसाइनको बोलवायो। महा अमर्षित वचन सुनायो॥
अरे कसाई सुनहु अभागी। मोरिभीति तुमको नहिं लागी॥
बालक वधन दियो मैं शासन। तुम अँगुरीदेखाइ कियनाशन॥
तातें युत परिवार तुम्हारा। मैंझोंकवाय देउँगो भारा॥
पैतुम्हार इक वचन उपाई। जीव चहहु तौ करहु तुराई॥
कहे कसाई काँपत अंगा। अब न करब तव शासन भंगा॥
शासन भंग जो होइ तुम्हारा। तौ मारहु सबकुल परिवारा॥
दुष्टबुद्धि तब कह अस बाता। आजु शिवामंदिर अधराता॥
जो आवै ताको हठि मारौ। नीच ऊंच नाहिं नेकु विचारौ॥

दोहा—दुष्टबुद्धि शासन सुनत, सकल कसाई जाइ।
देवीके मंदिर रहे, सायुध सुखित लुकाइ॥ १९॥

रह्यो तहाँ कुंतल महाराजा। दुष्टबुद्धि जेहिं सचिव दराजा॥
तेहिदिन कुंतल भूपति भवना। गालव मुनि आये दुखदवना॥
राजा उठि कीन्ह्यों सतकारा। गालवमुनि तबवचन उचारा॥
होतहि भोर भूप तव मरना। सुमिरहुअवयदुकुलमणिचरना
मोहिं ब्रह्मा तुव ढिग पठवायो। तासु निदेश कहन सतिआयो
चंद्रहास कहँ तुरत बोलाई। देहु राज्य छलछंद विहाई॥
मानहु तेहि सुत प्राण पियारा। जो चाहो निज स्वर्ग अगारा॥
कुंतलभूप सुनत सुखपायो। तुरत मदन कहँ सदन बोलायो॥
कह्यो तुरत शशिहासहि आनो। अब न और कछु कारज ठानो॥
मदन चल्यो शशिहास बोलावन। तहँ कौतुक कीन्ह्यो जगपावन॥
चंद्रहास लै पूजन साजू। अर्धरात तजि सकल समाजू॥
चल्यो चंडिकापूजन हेतू। जान्यो नाहिं कछु हरिकर नेतू॥

दोहा—मारगमें मिलिगे मदन, वचन कह्यो गहिपानि।
चंद्रहास कहँ जातहौ, सुनहु हमारी बानि॥ २०॥

महाराज तुमको बोलवायो। तोहिं बोलावन मैं इत आयो॥
चंद्रहास तब कह कर जोरी। एकबातकी विनती मोरी॥
पिता आपके दियो रजाई। देवी पूजहु निशिमहँ जाई॥
शासन उभय कौनविधि टारहु। मदन तुम्हीं संदेह निवारहु॥
मदन कह्यो कीजै अस काजू। म्वहिं दीजै सब पूजन साजू॥
देवी पूजब हम तहँ जाई। तुम नरेश ढिग जाहु तुराई॥
असकहि देवी पूजन साजू। लियो मदन मान्यो कृतकाजू॥
चंद्रहास भूपति गृहआयो। राजा देखि परमसुख पायो॥
उतै मदन देवीघर गयऊ। माथद्वार जब नावत भयऊ॥

किया कसाई खड्ग प्रहारा । कद्यो मदनशिर लगी नबारा ॥
मदन शीशलै द्रुत अधराता । चले कसाई पुलकित गाता ॥
कुंतलभूप इतै सुखमानी । रत्न जटित कनकासन आनी ॥

दोहा—चंद्रहासको ताहि पर,दिय बैठाइ तुरंत ॥
राजतिलककीन्ह्यों हुलसि,दै द्विजदान अनंत ॥२१॥

राजा गयो गंगके तीरा । भोरहोत तजि दियो शरीरा ॥
इतै सकल पुरमहँ सुखदाई । चंद्रहासकी फिरी दोहाई ॥
मदनशीशलै निशा कसाई । आये दुष्टबुद्धि ढिग धाई ॥
कह्यो नाथ जो दियो निदेशा । सो हमकीन्ही विनहिं कलेशा॥
दुष्टबुद्धि गुणि वध शशिहासा । मान्यो हियमहँ परमहुलासा ॥
भोरभयो चीन्ह्यों सुतशीशा । हाइ कहा कीन्ह्यों जगदीशा ॥
मानि गलानि निकारि कटारी । दुष्टबुद्धि मरिगो उरफारी ॥
देखहु दाया श्रीनिवासकी । राजिय कंटक चंद्रहासकी ॥
भयो चक्रवर्ती महराजा । चंद्रहास है बली दराजा ॥
सुनु अर्जुन सोइ युधहित आयो । निजतेजहिते भूप हटायो ॥
याते युद्ध करब नहिं लायक । हरिको कृपापात्र नृपनायक ॥
सुनि अर्जुन नारदकी बानी । चंद्रहासकी कथा पुरानी ॥

दोहा—चंद्रहासको आपनो, मान्यो अति प्रियभ्रात ॥
रथते उतरि चल्यो मिलन,आनँद उर न समात२२॥
आवत अर्जुनको निरखि,नाथ सखा जिय जानि ॥
दौरि दूरिते मिलत भो,जगत जन्म धनिमानि॥२३॥
पुनि प्रद्युम्न शशिहासको, मिल्यो जानि पितुदास ॥
यथायोग सब मिलतभे, शशिहासहि सहुलास॥२४॥
प्रीति परस्पर बढ़तिभे, दोउ दल महँ तेहिकाल ॥
चंद्रहास अर्जुन चले, जहँ हरि दीनदयाल ॥ २५ ॥

चंद्रहासकी यह कथा, वरण्यो यथा पुरान ॥
एते द्वापर भक्तभे, जिनको शास्त्र प्रमान ॥ २६ ॥
रच्यो रामरसिकावली, पूर्वारध सुखराशि ॥
सुनहु संत सबचित्तदै, भवबासना विनाशि ॥ २७ ॥

रामभक्त जे परम सुजाना । कथा रसिक भागवत प्रधाना ॥
सुनन रामरसिकावलि आमैं । तिनके पदमहँ मोरि प्रणामैं ॥
मैं नहिं जानहुँ ग्रंथन रीती । नहिं कछु धर्ममाहिं परतीती ॥
कबहुँ न कीन्ह्यों शुभ आचारा । नहिं चीन्ह्यों संतन सतकारा ॥
काम क्रोध मद लोभ विकारा । मेरेई तनु किये अगारा ॥
विषय विवस चंचल चितमेरो । करत नरामचरण महँ डेरो ॥
ताहूपर मैं करी ढिठाई । सुखद रामरसिकावलि गाई ॥
श्रोता संत सुबुद्धि अगाधा । अपनो जानि क्षमहु अपराधा ॥
संतचरित्र जानि तजिरोषू । किह्यो कृपा करि दोष समोषू ॥
विनय मोरि सब श्रोतन पाहीं । जो कछु बन्यो होय यहि माहीं ॥
तौ निजदास जानिकरि छोहू । यह बरके दानी सब होहू ॥
होय प्रीति संतन पद मोरी । मिलैं सियावर जनक किशोरी ॥

दोहा—वक्ता श्रोता संतपद, पुनि पुनि नाऊंमाथ ॥
कहहु सबै रघुराजको, किय अपनो यदुनाथ ॥ २८ ॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजबान्धवेशश्रीविश्वनाथसिंहात्मज सिद्धि श्रीमहाराजाधिराजमहाराजबहादुरश्रीकृष्णचंद्रकृपापात्राधिकारिश्रीरघुराजसिंहजूदेवविरचितायांश्रीरामरसिकावल्यांद्वापरखंडेत्रिंशोऽध्यायःसमाप्तः ॥ ३० ॥

श्रीः।

भक्तमाला.

अथ कलियुगखंड प्रारंभः ॥

सोरठा—जय जय संतसमाज, कलिकल्मष दारुणहरन ॥
कारन जन कृत काज, हेतु परमपद एकई ॥ १ ॥
जप तप तीरथ दान, ज्ञान विरागहु योगऊ ॥
साधन शास्त्र प्रमान, संसृत हरन अनेक जे ॥ २ ॥
सत्य शिरोमणि तासु, विन प्रयास संसृतहरन ॥
दायक रमानिवासु, संतसमागम शमनकछु ॥३॥
जय वसुदेवकुमार, दीनसनेही सत्यजे ॥
संतनके आधार, जानि मोहिंजन भ्रम हरहु ॥ ४ ॥
जड़तानिशि रविभास, जयति जगत जननी गिरा ॥
मम रसना करिवास, रचिय राम रसिकावली ॥ ५ ॥
विघ्नहरण गणनाथ, शिवनंदन कंदन कुमति ॥
तुवपद नाऊं माथ, करहु पूर संतन सुयश ॥ ६ ॥
जय जय परमदयाल, श्रीहरि गुरू मुकुंदपद ॥
जासु कृपा कलिकाल, कछु नकरत दासन असर॥७॥
जय हरि पितु विश्वनाथ, रामो पासक वर जगत ॥
जासु प्रताप सनाथ, मैंहू भयो विहायभय ॥ ८ ॥

दोहा—ग्रंथ रामरसिकावली, रच्यो तीनि जे खंड ॥
तिनमें प्रथित पुराणकी, साधु कथा उद्दंड ॥ १ ॥

अब विर्चत कलिखंडमें, कलिसंतन इतिहास ॥
भक्तमालमें जो कियो, नाभा गुरू प्रकास ॥ २ ॥
औरहु जो संतन वदन, सुन्यो संत इतिहास ॥
निज नयन निदेख्यो चरित, करिहौं कथा प्रकास॥३॥
भक्तमालमें है नहीं, जिन भक्तनको गान ॥
सकल भक्त यहि कालके, तिनको करहुँ बखान ॥४॥
मोरे जिय अति होत उराऊ । वर्णत सकल संत परभाऊ ॥
सब संतन राखहुँ सम भाऊ । मोरे मनमहँ भेद नकाऊ ॥
पै जो अद्भुत चरित निहारा । ताहि कथनकहँ प्रथम विचारा ॥
ग्रंथ प्रपन्नामृत महँ ताते । जे भक्तन इतिहास सुहाते ॥
दिव्यसूरि चारित्र ग्रंथपर । आचार्यनकी कथा मोदभर ॥
और भणित भार्गवहु पुराना । तिन संतनकी करहुँ बखाना ॥
जिनकछु दोष दियो मोहिंकाहीं। जानहुँ मैं रचना विधिनाहीं ॥
जोनशाय सो लियो सुधारी । सब श्रोतन पहँ विनय हमारी॥
हरि हरिजनकर चरित बखाना ।कहत सुनत सुख लहत निदाना।
गाथ गाय भवसागर तरते । फिरि नहिं कबहुँ जगतमहँ परते
शास्त्र संत मुख यह सुनि राख्यो। ताते महूं संत गुण भाख्यो ॥
नहिंकवि नहिं कछुकाव्य अभ्यासू।नहिंकछु बुद्धि विशेषिविलासू
दोहा-श्रोता संत सुशील निधि, करि तिनचरण प्रणाम ॥
कहौं रामरसिकावली, यह कलिखंड सुनाम ॥ ५ ॥

अथ भक्तभूतकी कथा ॥

दिव्य सूरि चारित्र ग्रंथ महँ । अहैं भक्त वर्णों मैं तिन कहँ ॥
तिनमहँ भूत नाम हरिदासा । तिनको कहौं प्रथम इतिहासा॥
श्रीविकुंठमहँ हरि इक काला । बैठि मनहिमन गुण्यो कृपाला॥
हैं सब कलियुगके जन पापी । केहि विधि होहिं नाम मम जापी

तबहिं पद्मकहँ दियो निदेशा। तुम अवतार लेहु भुवि देशा॥
जीव विमुख जे ममपद तेरे। तिनहिं करहु उपदेश घनेरे॥
दै ममभक्ति मुक्ति अधिकारा। पठवहु ममपुर जीव अपारा॥
प्रभुशासन शिरधरि तेहिंवारा। पद्मलियो अवनी अवतारा॥
मल्लपुरी इक रही सुहावनि।अश्वनिसुदि अष्टमि अतिपावनि
तेहिदिन सरसिज ते अनयासू। प्रगट्यो भूतनाम भो तासू॥
पाचजन्य दरकाहीं। हरिशासन दीन्ह्यो सुखमाहीं॥
सोऊ लियो अवनि अवतारा। सर अस तिनको नाम उचारा॥

दोहा—तैसहिं नंदकखङ्गको, दीन्ह्यो शासन नाथ॥
तुमहुँ प्रगटि महिमंडलै,जीवनकरो सनाथ॥ १॥

सो हरिशासनशिरधरि लीन्ह्यो। कैरवते प्रगटित तनु कीन्ह्यो॥
तिनको भयो महत अस नामा। ज्ञानविज्ञान भक्तिके धामा॥
मल्लपुरी महँ भये भूत मुनि। भे मयूरपुरि भक्त महत पुनि॥
कांचीपुरी भये सरस्वामी। तीनहुँ ध्यायो अंतर्यामी॥
जीवनको करि करि उपदेशा। पठयो जहँ निवसत कमलेशा॥
होइ सांझ तहँ करहिं निवासा। यक थल करैं नवहु दिन वासा॥
नहिं कछु चाह करैं मनमाहीं। यथालाभ महँ सदा अघाहीं॥
वामनक्षेत्र माहँ यककाला। आये तीनहुँ भक्त उताला॥
जुरी रहै तहँ मनुज समाजा। तहँ कीन्ह्यो तीनौ असकाजा॥
सब जन कहँ हरिनाम सुनाई। सबको भक्तिरीति सिखवाई॥
पठये हरिपुर जीव अपारा। कलिहि जीति दै ज्ञान नगारा॥
बहुतकाल लगि मही सुखारी। जीव उधारि जीव हितकारी॥

दोहा—गये फेरि वैकुंठ कहँ,तीनो भक्त उदार॥
यह संक्षेपहि मैं कियो, भक्त कथा विस्तार॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांभक्तमालकलियुगखंडेप्रथमोऽध्यायः॥ १॥

अथ भक्तिसार अरु कनिकृष्णकी कथा ॥

दोहा—भक्तिसारको हौं करौं, अब इतिहास उचार ॥
श्रीमुकुंदकेचंक्रको,है जगहित अवतार ॥ १ ॥

महिसुरपुरी सिंधुतट जोई । भार्गवविप्र रह्यो तहँ कोई ॥
सो कानन कीन्ह्यों तप जाई । यदुपति चरण कमल मनलाई ॥
डरपे देव देखि तप ताको । विघ्न हेतु कीन्ह्यों मायाको ॥
पठयो एक सुंदरी नारी । सोद्विजढिग आई मनहारी ॥
देखत तियहि मोहि मुनि गयऊ । तियाहिविप्रसंगम तहँ भयऊ ॥
गर्भवती ह्वैगे बरनारी । कियो वास मुनि संग सुखारी ॥
आमिषपिंड भयो तिय केरे । दंपति विमन भये तेहि हेरे ॥
रह्यो बेत बनं तहँ अति भारी । सोई वनमहँ पिंडहि डारी ॥
गेमुनि कहुँ तिय स्वर्गसिधारी । रह्यो पिंड तहँ विपिन मझारी ॥
फूल्यो पिंड पाइ कछुकाला । प्रगट्यो बालक तेज विशाला ॥
विपिन जंतु श्रीपतिकीदाया । सो बालक को कोउ नखाया ॥
रोवंत शीतल तरुकी छाया । वढ़त भई ताकी कछुकाया ॥

दोहा—महि सुर पुरमंदिर रह्यो, तहँ नारायण देव ॥
सो बालकहि अनाथ गुणि,कियो आइ प्रभुसेव ॥ १ ॥

तेहि वन शूप बनावन हारे । वेत लेन इक समय सिधारे ॥
आवत जानि जननकर वृंदा । अंतर्हित ह्वैगयो गोविंदा ॥
चहुँकित शिशु अपनो प्रभु जोयो। लख्यो न तब ऊंचे स्वर रोयो
ते जन सुनत बालकर रोदन । आवत भये बालढिग तिहि छन
निर्जन वनमहँ बालक देषी । ते सब अचरज गुन्यो विशेषी ॥
तिनमे यकके सुत नहिं रहेऊ। सो बालक तुरतै लै लयऊ ॥
भवन आइ दीन्ह्यों तियकाहीं । कह्यो पुत्र मिलिगो वनमाहीं ॥

याको पालहु शिशु सम जानी। दियो वंश मोहिं सारंगपानी ॥
सो तियशिशुकहँ पालन लागी। भई परम तापर अनुरागी ॥
अपनो पुत्रसरिस तेहि मान्यो। ताते प्रिथा दूर नहिं जान्यो ॥
बालक पंचवर्ष ह्वै गयऊ। तव इक दिन अस कौतुक भयऊ ॥
वृद्ध जो वेत बनावनहारा। बालक रोवत क्षुधित विचारा ॥
दोहा—ताहि पियावन पय लग्यो, बालक करि पयपान ॥
निज जूठो दंपतिहि दिय, ते करि पान अघान ॥२॥
बालकजूंठ दूध करि पाना। दंपति ह्वैगे तुरत जवाना ॥
सो शूद्री पुनि जन्यो कुमारा। नाम तासु कनि कृष्ण उचारा॥
उभय बालकन भै अति प्रीती। बालहिते हरि माहिं प्रतीती ॥
तब कनिकृष्ण ताहि गुरुमानी। सेवन करन लग्यो सुख जानी॥
भक्ति सार कहँ शास्त्र पुराना। यदुपति कृष्ण सकल प्रगटाना॥
सो कनिकृष्णहि लगे पढ़ावन। योग विज्ञान विधान सुपावन॥
भूतन दया तोष सब काला। निशिदिन सुमिरण दशरथ लाला
जाय इकांत उभय मतिवाना। सुमिराहिं प्रेम सहित भगवाना॥
सकल शास्त्र गुणिहेत विचारी। मान्यो परम तत्वगिरिधारी ॥
नास्तिक वाद शास्त्र दोउ खंडे। वैष्णवम तत्त्व सिद्धांतहि मंडे॥
हरि विमुखन हरि सन्मुख कीन्हे। विविध भांति उपदेशन दीन्हे॥
हरि अनन्य निजसेवक जानी। तिनपरकीन्ही कृपा महानी ॥
दोहा—एक समय अधरातको, प्रगट भये यदुनाथ ॥
दियो भक्ति अनपायिनी, कीन्ह्यों तिन्है सनाथ ॥३॥
तब ते दोउ हरिभक्त उदारा। उपदेशत विचरैं संसारा ॥
भक्तिसार अस कियो विचारा। भजै कृष्णपद विपिन मँझारा॥
असविचारि निर्जनवन जाई। लै कनिकृष्ण संग सुखछाई ॥
तेहिं कानन महँ वसे यकांता। करत विचार विमल वेदांता॥

वृषभचढ़े तहँ शंभु भवानी। निकसे तेहि मग औघड़दानी॥
भक्तिसार तपतेज निहारी। कह्यो शंभु सों शैलकुमारी॥
यहि वन कोउ हरि भक्त सुजाना। वसत मोहिं परतो अस जाना॥
चलहु नाथ दरशन तेहि कीजै। ताकी कछू परीक्षा लीजै॥
गौरिगिरा सुनि तुरत महेशू। आइगये तुरंत तेहि देशू॥
भक्तिसारको लखि भगवाना। कह्यो महेश मांगु वरदाना॥
हमरो दरशन विफल न जावै। मनवांछित प्राणी वर पावै॥
भक्तिसार मन कियो विचारा। कछु न मनोरथ अहै हमारा॥

दोहा—भक्तिसार तब करतभे, शंकर सों परिहास॥
शूची छिद्र समानवर, देहु नाथ कैलास॥ ४॥

जानि महेश मनहिं परिहासा। कीन्ह्यों तापर कोप प्रकासा॥
भस्म कियो जस मनसिज काहीं। भस्म करौं तस यहि क्षण माहीं
अस विचारि दृग तीसर घोरा। शंभु उघारि तक्यो तेहि वोरा॥
भक्तिसार हरिभक्त महाना। तहँ ताको प्रभाव प्रगटाना॥
वामचरण अंगुष्ठ विशाला। ताते कढ़ी ज्वाल विकराला॥
उभय तेज मिलि नभमहँ छाये। जानि परयो त्रैलोक्य जराये॥
ज्वाला माल बुझावन हेतू। प्रगट्यो प्रलय मेघ वृषकेतू॥
सिंधुर शुंडादंड समाना। वृष्टि भई तहँ रहित प्रमाना॥
पै नहिं तेज शांत कछु भयऊ। भक्तिसार निहचल तहँ ठयऊ॥
मुदित महेश विलोकि प्रभाऊ। लगे सराहन शील स्वभाऊ॥
ह्वै प्रसन्न परदक्षिण दीन्ह्यों। हरिजन जानि प्रणति तेहिं कीन्ह्यों॥
करि प्रणाम हर सहित भवानी। भक्तिसार बहुवार बखानी॥

दोहा—भक्तिसार हरिदासको, वर्णत सुयश महान॥
गमन कियो कैलासको, गौरि सहित भगवान॥ ५॥

तेहि वन भक्तिसार कछु काला। निवसतभे ध्यावत नँदलाला॥

भक्तिसार यक समय तहांहीं । बैठे सियत गूदरी काहीं ॥
तहँ ह्वै नभ पथ सिद्ध सवारा । कढ्यो सिद्ध यक तेज अपारा॥
तेहिं थल उपर सिंह रुकि गयऊ । भल भल हांक्यो चलत नभयऊ
चिते चहूंकित लखि भुवि माहीं। निरख्यो भक्तिसार मुनि काहीं
भगवत भक्त सिद्ध तेहि जानी । कियो प्रणाम आय भय मानी
सियत गूदरी तिनहि निहारी । जोरि पाणि अस गिरा उचारी॥
मेरोवसन दिव्य यह लेहू । यह गूदरी त्यागि मुनि देहू ॥
फटे बसन लागत नहिं नीके । तुम अनन्यजन हौ सियपीके॥
भक्तिसार कह लखु तनुमाहीं । देखि परत कछु तो कहँ नाहीं॥
सिद्धलख्यो मुनितनु तेहिकाला।कनककवचमणिजटितविशाला
सिद्ध दियो मोतीकी माला । भक्तिसार तब विहँसि उताला

दोहा—तुलसीकी यकमाल निज, दीन्ही ताहि उतारि ॥
चिंतामणिकी माल सो, ह्वैगै प्रभा पसारी ॥ ६ ॥

सिद्ध अचर्ज मानि मन माहीं । दियो प्रदक्षिण तब मुनि काहीं
तेहि मग सिद्ध अनुजपुनि आयो।मुनिहि विलोकि दौरिशिरनायो
सिद्ध सो निज भ्रातहि बैठायो । मुनिकर सकल प्रभाव सुनायो
सोऊ मनमहँ अचरज मानी । बोल्यो भक्तिसारसों वानी ॥
दीसहु महारंक मुनिराई । तोहिं देखि दाया मोहिं आई ॥
पारस तुम्हैं देत हौं सोई । छुवत लोह सुवरण हठि होई ॥
असकहि पारस दियो सिद्ध जब। भक्तिसार मुनि हँसे हेरि तब॥
सिद्ध अनुजसों कह अस बाता। मोरहु पारस लेहु विख्याता ॥
सोतो लोह कनक करि लेतो । यह पाषाण पुरट करिदेतो ॥
सिद्ध अनुज अचरज करिजाना । करि प्रणाम द्रुत कियो पयाना
यक पर्वत महँ दोउ सिध जाई । मुनि कृत पारस दियो छुवाई॥
भयो पुरटको पर्वत परसत । सिद्ध गयो निजघरअति हरषत

दोहा-इतै भक्तिसारहु तुरत, उठि तहँते तिहिकाल ॥
प्रविसे अचलसमाधि हित, गिरिकंदरा विशाल ॥७॥
तहाँ भूत औसर दोउ स्वामी। आवतभे सुमिरत खगगामी ॥
गुहा मध्यलखि अतुल प्रकासा। जान्यो इत कोउ संत निवासा॥
गुहा प्रविसि तब उभयउदारा। भक्तिसार मुनिनाथ निहारा ॥
मुनिनाथहिं पूंछी कुशलाई। सो कह हरिकी कृपा भलाई ॥
वसे भूत सर दोउ कछु काला। गमन किये पुनि देश विशाला॥
फेरि महतस्वामी तहँ आये। भक्तिसारको लखि सुख पाये ॥
तहँ दोउ वर्णत हरि गुण गाथा। बितये कछुक काल सुखसाथा
सिंधुतीर यक नगर मयूरा। तहँ आवतभे दोउ सुखपूरा ॥
तहँ केसरिके तरुतर माहीं। किये निवास सुमिरि हरिकाहीं
तहँ दोउ संत समाधि लगाये।महत भक्त पुनि अनत सिधाये॥
भक्तिसार निवसे तेहि ठामा। सुमिरत रामचरण अभिरामा
तब तिनको चंदन चुकि गयऊ। अति संदेह तासु मन भयऊ॥
दोहा-तब रघुपति पदकंजको, सुमिरण लागे सोइ ॥
निशा नींद आई नहीं, दिय जागत निशिखोइ ॥८॥
भोर चले मुनि मज्जन हेतू। लग्यो न चंदनकर कछुनेतू ॥
हरिसंकित गुणि निज जनकाहीं। प्रगट्यो चंदन कुंड तहाँहीं ॥
लैचंदन अंगन महँ दीन्ह्यो। कांचीपुरी गमन पुनिकीन्ह्यो॥
अबलौं चंदन कुंड सुहावन। तौन देश महँहै अतिपावन ॥
भक्तिसार कांची महँ आये। तहँ गिरि गुहा वास मन लाये
गुहा बैठि गोविंद गुण गावै। तहँते अनत कहूं नाहिं जावै ॥
शिष्य तासु कनिकृष्ण इदारा। भिक्षादन करि करै अहारा ॥
कोउ नहिं जान्यो नगर निवासी। रही एक वृद्धा हरिदासी॥
सोई धन हितगै वनमाहीं। दरी वसत लखि संतन काहीं ॥

गोमय लीपि गुहा कर द्वारा। करि पूजन तेहि विविधप्रकारा ॥
आई अपने भवन तुराई। जान्यो नाहिं मुनि तेहि सेवकाई ॥
यहि विधि रोज गुप्त तहँ जावै। गुहा दुवार लीपि घर आवै ॥
सोरठा–गुहाद्वार यक वार, भक्तिसार लेपित निरखि ॥
मनमहँ कियो विचार, सेवन करत हमारको ॥ ९ ॥
भक्तिसार यक समय प्रभाता। वृद्धनारि निरख्यो अवदाता ॥
लेपित गुहा द्वार निज पानी। भक्तिसार बोले तेहिं बानी ॥
बहुसेवन तैं कियो हमारो। मांगु जौन मन होइ तिहारो ॥
वृद्धनारि तब कह करजोरी। नाथ देहु विनती सुनि मोरी ॥
वयगत मोर वर्ष चौरासी। सेवा करत लहौं दुखरासी ॥
युवाभेसकीजै प्रभु मेरी। सेवा करौं रोज़ मैं तेरी ॥
सुनि मुनि लख्यो डीठि करिदाया।ताकी तुरत युवा भै काया ॥
देवदारु सम भयो स्वरूपा। महा मनोहर सुछवि अनूपा ॥
प्रगट करन लागी सेवकाई। घरते चंदन सुमनहुँ लाई ॥
रह्यो एक कांचीकर राजा। जातरह्यो मृगयाके काजा ॥
मारगमें सो ताहि निहारी। बरबस पकरि कियो निजनारी ॥
भवन ल्याइ पूँछ्यो अस बाता। को तोहि युवा वैसको दाता ॥
दोहा–तब बोली करजोरि तिय,यहि गिरिगुहा विशाल ॥
बसत संत यक शिष्ययुत,सो मोहिं कियो निहाल।१०।
तुमहुँ जरठपन ग्रसित भुवाला। चहहु जो युवा भेस यहिकाला॥
तौ न विलंब करौ नृपराई। शिष्य तासु कनिकृष्ण बुलाई॥
करहुविनय सबविधि तिनपाहीं। देहैंयुवा उमिरि तुम काहीं ॥
तब राजा निजदूत पठायो। तुरत तहाँ कनिकृष्ण बोलायो॥
कह्यो वचन तिनसों यहिभांती। तुम्हरी कीरति जगत विख्याती॥
तिहरे गुर वृद्धा यक नारी। कीन्ह्यो युवा उमिरि मनहारी ॥

महूँ जरठपन दुखित मुनीशा। कीजै युवा सुमिरि जगदीशा॥
अथवा अपनो गुरू बोलाई। देहु युवापन मोहिं देवाई॥
जब मुनि हम ह्वैजाहिं किशोरा। तब वर्णहु अनुपम यशमोरा॥
नरयश वर्णब शासन सुनिकै। तब कनिकृष्ण अयोगहि गुनिकै
कोपित कह्यो भूपकहँ वानी। राजा कहत मोहिं नहिं जानी॥
और देवको नहिं यश गाऊं। भूपतिकी का बात चलाऊं॥

दोहा—सीतापति सुंदर सुयश,ताहि त्यागि महिपाल॥
कौन बापुरो को सुयश,मैंवर्णौं भ्रम जाल॥ ११॥

तेरेगृह गुरुदेव हमारा। नहिं ऐहैं यह सत्य विचारा॥
ममगुरु त्यागि भवन निज काहीं। औरेभवन कबहुँ नहिं जाहीं॥
सुनि कनिकृष्ण वचन यहिभांती।कुपित भयो आंखी करि राती॥
बोल्यो राजा वचन कठोरा। श्वपच नमानसि शासन मोरा॥
जाति श्वपच है गर्व महाना। जो मम सुयश न करै बखाना॥
तौ मम पुरते करै पयाना। लै अपने सँग गुरु भगवाना॥
सुनि कनिकृष्ण कुपित नृपबैना। उठ्यो तुरंत तहां ते भैना॥
भक्तिसारके निकट सिधाये। राजाके सब वचन सुनाये॥
कह्यो नाथ यह बात सहीहै। यहि नृप राज्य सलिल नहिं पीहै॥
भक्तिसार सुनि सकल प्रसंगा। कह्यो चलब हमहूं तव संगा॥
यक क्षण करहु विलंब इहाहीं। करहुँ एक मैं कारजकाहीं॥
असकहि भक्तिसार हरिदासा। चल्यो तहांते मानि हुलासा॥

दोहा—कांचीनगरी में रहे, वरदराज भगवान॥
जिनको मंगलप्रद सुयश,गावत सकल जहान॥१२॥

भक्तिसार तिन मंदिर आये। जोरिपाणि विनती अस गाये॥
हमहि देत यह भूप निकारे। बिदा होन तुव निकट सिधारे॥
भक्तिसार यतनो कहि नाथै।निकसि चल्यो नवाइ प्रभु माथै॥

भक्तिसारके गमनत माहीं। प्रभुसों रहत बन्यो तहँ नाहीं ॥
रेंगिचली मंदिरते मूरति। बारबार निजदास विसूरति ॥
भक्तिसारके पाछे पाछे। चलेजात प्रभु काछनि काछे ॥
यह अचरज लखि नगर निवासी। धाये सब ह्वै जीवनिरासी ॥
जाय पुजारी नृपाहिं पुकारे। वरदराज प्रभु जात सिधारे ॥
सुनि राजा रानी दुखपायो। रह्यो बैठ जस तस उठिधायो॥
बालक युवा वृद्ध नर नारी। धाये हाहाकार पुकारी ॥
पुरमहँ मच्यौ कुलाहल भारी। छाइ गई अंबर अँधियारी ॥
भक्तिसारके पदमहँ आई। गिरे सकल अतिशय बिलखाई॥
दोहा–विनय कियो करजोरिकै, अब न अनत प्रभु जाहु ॥
तुम्हरे गवनत गवनतौ, सिंधुसुताको नाहु ॥ १३ ॥
भक्तिसार बोले तब बानी। है न बात हमरी कछु जानी ॥
जो कनिक्रुष्ण बहुरि इत आवै। तौ हमकाहेको कहुँ जावै ॥
भक्तिसारकी सुनि अस बाता। राजा रानी अति बिलखाता ॥
परे जाइ कनिकृष्ण चरणमें। गहे चरण निज युगल करनमें॥
लौटि चलहु क्षमिये अपराधा। वसति साधु उर दया अगाधा॥
राजा रानी औ पुरवासी। लखि कनिकृष्ण महा दुखरासी॥
लौटिचले कांचीपुर काहीं। पाछे चले प्रजा सँगमाहीं ॥
लौटत तहँ कनिकृष्ण निहारी। भक्तिसार लौटे तपधारी ॥
भक्तिसारके करत पयाना। लौटे वरदराज भगवाना ॥
भक्तिसार तेहि मंदिर आये। करगहि वरदराज बैठाये ॥
राजा रानी औ पुरवासी। भये सकल तब आनँदरासी ॥
भक्तिसारके शिष्य भये सब। मेट्यो भूरि भीति भव उदभव ॥
दोहा–भक्तिसार कछुकाल तहँ, कीन्ह्यों मुदित निवास ॥
सुभग द्राविड़ भाषा कियो, विशद प्रबंध प्रकास ॥१४॥

हरिगुण गावत निशिदिन जाहीं । विते सप्त शत वरष तहाहीं ॥
पुनि चोलीमहेश्वरहि आये । कुंभकोनको बहुरि सिधाये ॥
कुंभकोन पुरमाहि विशाला । रह्यो एक श्रीनाथ देवाला ॥
शारंगपाणि तहां भगवाना । मूरति मधुर रही सविधाना ॥
भक्तिसार तेहि मंदिर जाई । नारायणके पद शिरनाई ॥
कह्यो नाथ सों अस करजोरी । शंका सपदि निवारहु मोरी ॥
सर्प सेज महँ तुम केहिहेतू । कीजत शयन विहँगपति केतू ॥
वपुवराहधरि धरा उधारयो । सो श्रमधौं इत सोइ निवारयो ॥
धौंदंडकवनमहँ अतिधाये । थाकिगये सो बहु सुखपाये ॥
धौं समुद्र कहँ मथ्यो मुरारी । सोवहु तौनपाय श्रम भारी ॥
निजजन वचन सुनत भगवंता । बोले शीश उठाइ तुरंता ॥
भक्तहेतु दौरत हम रहहीं । सो श्रम पाइ शयन इत करहीं ॥

दोहा–अबलों मूरति शीशसो, उठो अहै कर एक ॥
भक्तहेतु प्रगटत हरी, जानहु वेद विवेक ॥ १८ ॥

भक्तिसार तहँ वसि सुखपाये । चौदहिसै संवतन विताये ॥
पुनि तेहिते गमने हरिदासा । मारगमहँ इक भयो तमासा ॥
जुरे विप्र वैदिक यक ठामा । रहे वेदको पढ़त ललामा ॥
भक्तिसारको तुरत निहारी । मौन भये तेहि शूद्र विचारी ॥
मौनहोत सब बाउर ह्वैगे । बोलि न आयो अति दुखि छैगे ॥
दौरि दौरि सब द्विज दुखछाये । भक्तिसारके पद शिरनाये ॥
भक्तिसार कहँ दाया लागी । लैकर धान कृष्ण अनुरागी ॥
फारयो ताहि सुमिरि भगवंता । मिटी द्विजन मूकता तुरंता ॥
तहँ यक नगर सिंहपुर नामा । रह्यो तहां यक हरिको धामा ॥
यात्री दरशन हेतु हजारा । खड़े रहे मंदिरके द्वारा ॥
रहे सुपूजन करत पुजारी । लखि नपरे तहँ ते गिरिधारी ॥

भक्तिसार तब दूसर द्वारे। जाइ तहाँते प्रभुहि निहारे॥
दोहा—तब मूरति यदुनाथकी, फिरिगै तौनिहिं वोर।
सकलपुजारिन यात्रिकन, ह्वैगो अतिशयभोर॥१६॥
अचरजमानि सबै भ्रम पागे। बाहेर कढ़िकै हेरन लागे॥
भक्तिसार कहँ लखि द्वारे पर। जानि अनन्यदास यदुपतिकर
गिरे सकल चरणन शिरनाई। ल्याये मंदिर तिनहि लेवाई॥
भक्तिसारसों सब यशगाये। आप प्रभाव नाथ दरशाये॥
जो हम पूजन करैं तुम्हारा। सो सब कीजै ग्रहण उदारा॥
होत रही तहँ यज्ञ महाई। जुरी सकल ब्राह्मण समुदाई॥
तेहि मख भक्तिसार कहँ ल्याई। दिय ऊंचे आसन बैठाई॥
कियो अग्र पूजन ह्वै चेरो। यथा युधिष्ठिर यदुपति केरो॥
तहांरहे पंडित अभिमानी। जे नहिं भक्तिरीति कछु जानी॥
करनलगे तिनको सबनिंदन। जेहिकिय भक्तिसारको वंदन॥
भक्तिसार निंदन सुनिकाना। सभामध्य यह वचन बखाना॥
जो सति होइ मोर विश्वासू। तौ प्रगटै इत रमानिवासू॥
दोहा—भक्तिसारके कहत अस, तिनके उरमें आसु।
चारिबाहु घनश्याम तनु, प्रगटेरमानिवासु॥१७॥
सिगरे प्रभुको निरखिकै, अचरज मनमहँ मानि।
भक्तिसारके चरण महँ, परे गुमानहिं भानि॥१८॥
सोरठा—यहिविधि निज परभाव, भक्तिसार प्रगटत जगत॥
करत अनेकनिभाव, रंगनगर चलि वसतभे॥१॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांद्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

अथ शठकोपकी कथा ॥

दोहा–अब वरणौं शठ कोपकी, कथा सुनहु सब संत ।
जानि परत अस जाहि सुनि, करुणाकर भगवंत ॥१॥

दक्षिण देश सिंधुके तीरा । नदी ताम्रपर्णी गंभीरा ॥
तहँ कुरका नगरी अस नामा । सुंदर सकल सुछबिकी धामा ॥
तहँ द्विज वैदिक वसत अनंता । शूद्रहु वसत निरत भगवंता ॥
तिन शूद्रन महँ यक मतिधामा । भोहरिजन पल्ली अस नामा ॥
ताके वंशमांहिं सब कोऊ । भे हरिभक्त बाल लघु सोऊ ॥
तिनमें भयो कारि असनामा । जापक राम नाम वसु यामा ॥
नाथ नायिका नाम कतारी । गोपी सरिसभई हरि प्यारी ॥
सो इक दिवस कढ़ी पथ ह्वैकै । यकमंदिर महँ प्रभुकहँ ज्वैकै ॥
मनहीमनतिय कियो प्रणामा । पुत्र देहु निज सरिस ललामा ॥
हरि तेहिं स्वप्न माहँ अस भाषे । जोतैं मम सम सुत अभिलाषे ॥
मैंही पुत्र होउँगो तेरे । यही मनोरथ है मन मेरे ॥
असकहि हरिभे अंतर्धाना । नारी उरभो मोद महाना ॥

दोहा–कछुक कालमहँ तहँ तिया, गर्भवती भै सोइ ॥
कालपाइ प्रगट्यो तनय, गयोविश्वमुद मोइ ॥ १ ॥

जन्मतहीते बालक सोई । नाहिं पय पियो मातुसों रोई ॥
रह्यो अष्ट वर्षहि लों भौना । कछु नाहिं कह्यो रह्यो सो मौना ॥
हरिकी कृपा भयो तेहि ज्ञाना । बालकही वन कियो पयाना ॥
विपिन जाइ अस कियो विचारा । मिलै मोहि किमि नंदकुमारा ॥
कहुँ वन कहुँ पुर महँ सो आवै । हरिगुण गाय गाय सुख पावै ॥
वीते अष्ट वर्ष यहि भांती । भे प्रसन्न हरि तब यक राती ॥
यदुपालक बालक ढिग आई । प्रगट भये प्रकाश पस राई ॥

हरिको निरखि बढ्यो तनुप्रेमा । तबहुँ न तज्यो मौनकर नेमा॥
रोमांचित तनु दृगजलधारा । अनमिष निरखत नाथ हमारा॥
कीन्ह्यो हरि तेहि कृपा महाई । रसना वसी शास्त्र समुदाई ॥
हरिकह तजहु मौनव्रत प्यारे । गावहु गुण गण सकल हमारे ॥
अस कहि भे हरिअंतर्धाना । तब बालक किय हरि गुणगाना
दोहा–शठन सुमति कीन्ह्यो अमित, करि अज्ञानकर लोप ॥
ताते ताको जगतमें, भयो नाम शठ कोप ॥ २ ॥
तेहि पुर महँ यक विप्र सुजाना। भयो मधुर कवि नाम बखाना॥
जन्महिते हरिभक्त सो भयऊ। जगतवासना क्षय ह्वै गयऊ ॥
तीरथ करन विप्र मन लायो । अवध आइ सरयू महँ न्हायो ॥
औरहु तीरथ कियो अनेका । ज्ञानवान युत धर्म विवेका ॥
पुनि कुरुकानगरी सो आयो । श्रीशठकोप दरश मन लायो ॥
निकट जाय करि दंडप्रणामा । भयो समाशृत गुणि तपधामा॥
ताको योग्य देखि शठकोपा । दैउपदेश कियो भ्रम लोपा ॥
सकलशास्त्र दिय ताहि पढ़ाई । यदुपति भक्ति रीति शिखवाई ॥
तहँ शठकोप वेदको अर्था । रचत भये सब शास्त्र समर्था ॥
सहसगाथ विरच्यो मतिधामा। तेहि सहस्र गीता असनामा ॥
मधुरकविहि सो सकल पढ़ायो। इतिहासहु पुराण तेहि आयो ॥
यकशत आठ विष्णुके धामा । भरतखंड महँ परमललामा ॥
दोहा–तिनमें विचरत सर्वदा, गावत हरिगुण गाथ ॥
गुरू शिष्य यक सँग रहे, जीवन करत सनाथ ॥ ३ ॥
सोरठा–गुणि अनन्य हरिदास, अति प्रसन्नह्वै ताहिपर
दीन्ह्यों रमानिवास, बकुल माल यक सुंदरी ॥ ४ ॥
दोहा–ताते बकुलाभरन अस, लह्यो नाम जगमाहिं ॥
अमिलीके तरुकी तरी, करी कुटी भय नाहिं ॥ ५ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ कुलशेखर महिपालकी कथा ॥

सोरठा—अब वरणों इतिहास, कुलशेखर महिपालको ॥
जाको सुयशप्रकाश, छाइरह्यो तिहुँलोकमें ॥ १ ॥

केरलदेश अहै यक जोई। नगर अनंतसेन तहँ सोई ॥
तहँ कुलशेखर निवसत भयऊ। साधुचरण सेवन मन दयऊ ॥
उदयनरेश दिनेश प्रतापू। अरी उलूक दुरे लहि तापू ॥
दान कुशोदककी लहिधारा। बही सरित विय ढाहि करारा ॥
कामधनु सुरतरु दिविमाहीं। लखि कुलशेखर दान सिहाहीं ॥
राजकोष परिजन परिवारू। गज वाजी दल नारि कुमारू ॥
सिगरो यदुपतिको नृपमान्यो। हरिको दास निजहि पहिचान्यो
हरिते अधिक गुण्यो हरिदासा। उपजी कबहुँ न कौनिहुँ आसा॥
संपति जासु धनेश सिहाहीं। वासव विभव जासु सम नाहीं ॥
भूप चक्रवर्ती कुलशेखर। जेहि वर्णत स्वयंभुशशिशेखर ॥
पुत्रसमान प्रजा नृपमान्यो। सुखद साधु सेवन नित ठान्यो ॥
करत साधुसेवन महिपालै। राज्यकरत बीत्यो बहुकालै ॥

दोहा—इष्टदेव संतन गुण्यो, सर्वस मान्यो संत ॥
संतनको सेवन गुण्यो, सेवन कमलाकंत ॥ १ ॥

एकसमय भूपति भंडारा। भंडारी नहिं हार निहारा ॥
जटित जवाहिर जेवर भारी। भंडारी अस मनहिं विचारी ॥
कियो नेत यह वैष्णव द्रोही। राजा अहै साधुको छोही ॥
साधुन छोंड़ि आननहिं मानै। करत रोज हमरो अपमानै ॥
ता ते हम अस करैं उपाई। देहि वैष्णवन चोर बनाई ॥
अस विचारि भूपति भंडारी। बाहिर कढ़ि अस दियो पुकारी ॥
साधु चारि भंडारे आये। मोहिं दुरायके हार चोराये ॥
सुनि मंत्री कोशाधिप वानी। जाइ भूपसों गिरा बखानी ॥

प्रभु तुम वैरागी अनुरागी। ते वैरागी परम अभागी॥
जाय भंडारै हार चोरायो। भंडारी मोहिं आइ सुनायो॥
भूपति कह्यो साधुनहिं चोरा। यह मनमैं विश्वास है मोरा॥
तब मंत्री अरु परिकर जेते। साधु चोरायो कहि दिय तेते॥

दोहा—तब राजा बोल्यो वचन, साधु चोरायो नाहिं।
साधुनकीबदि शपथहम, करिहैं यहिक्षण माहिं॥२॥

असकहि एक कुंभ मँगवायो। तामें कारोनाग डरायो॥
मुद्राकनक तज्यो तेहि माहीं। बोल्यो वचन भूप सब पाहीं॥
हम यहि कुंभमाँह कर डारी। कंचनमुद्रा लेहिं निकारी॥
जो यह साधु चोरायो हारा। तौ भुजंग कर डसै हमारा॥
असकहि कुंभमाहिं करडारी। भूपति मुद्रा लियो निकारी॥
डस्यो नताहि भुजंग भयावन। सेवक संत भूप अति पावन॥
भये संत द्रोहिन मुख कारे। तब सकोप नृप वचन उचारे॥
साधुन चोरी वृथा लगायो। सिगरे शठ मम धर्म नशायो॥
ताते सकल सजा तुम पैहौ। जाते पुनि अस नाहिं बतैहौ॥
असकहि भूपति धर्म उदंडा। दीन्ह्यो सब कहँ दंड प्रचंडा॥
पुनि अस हुकुमदियोसबद्वारन। करै नकोई संत निवारन॥
जो वारन संतनको करिहैं। कालपाश महँ सो जन परिहैं॥

दोहा—तबते ताके नगरमहँ, यहिविधि भै मर्याद।
जहाँ संत चाहैं तहां, विचरै लहि अहलाद॥३॥

राजा राम उपासक पूरो। विषय विलास रास रस झूरो॥
बाढ़ी रामभक्त पद प्रीती। रामभक्ति महँ अति परतीती॥
बाल्मीकिकृतअतिचितचायन। सुभग मुक्ति भाजन रामायन॥
वेदरूप वेदार्थ विख्याता। चारिपदारथको जग दाता॥

रामरूप रामायण साँचो। सुर नर मुनिन सकल मनराचो
श्रीवैष्णवको परम अधारा। दीरघशरणागत श्रुति सारा ॥
रामायणते पर कछु नाहीं। जिनके मुक्ति आश मन माहीं
एकसर्ग एकहु श्लोका। पढ़त सुनत नाशत सबशोका
रामभक्तकी अस मर्यादा। जीवतलों संयुत अहलादा॥
एकसर्ग श्लोकहु एका। सुनै पढ़ै जन सहित विवेका॥
रामायण पढ़ि भोजन पाना। करै सुमति अस वेद विधाना॥
श्रीवैष्णवन जानि अस प्रेमा। नृपरामायणपर किय नेमा॥

दोहा—श्रद्धायुत प्रतिदिन सुनत,पढ़त जात जेहिकाल।
भयो अनन्य उपासकै,भूपति दशरथ लाल ॥ ४ ॥

एकसमय पौराणिक आई। बांचत रह्यो कथा सुखदाई॥
कथा अरण्यकांडकी वांच्यो। श्रोतन युत भूपति मनराच्यो
बांचत बांचत कथा सुहाई। खर दूषण गाथा जब आई॥
रघुनंदन अकेल धनुहाथा। चले लरन राक्षस गण साथा॥
चौदहि सहस निशाचर घोरा। धाये कोशलपतिकी बोरा॥
तब राजा मनमाहिं विचारा। है अकेल मम प्रभु सुकुमारा॥
खर दूषण दल भीम अपारा। किमि करिहै दुष्टन संहारा॥
तासु सहाय करब सब लायक। चलो तुरंत जहां रघुनायक ॥
अस विचारि नृप उठ्यो तुरंता। पहिरचो कुंड कवच बलवंता॥
ढाल पीठि कटि कसिकरवाला। चल्यो तुरंग तुरंत भुवाला॥
शासन दीन्ह्यो वीरन काहीं। चलैं समरहित मम सँग माहीं॥
भूपति शासन सुनत प्रवीरा। सजे समरहित सब रणधीरा॥

दोहा—बज्यो नगारा भूपको, खर दूषण वधहेत।
साजि सैन्य भूपति चल्यो, भ्रातन सुतन समेत ॥५॥

तीनि कोशं जबकाढि नृपगयऊ। मंत्रिनके उर विस्मय भयऊ॥

भूपति मतौ प्रेमरस माहीं । हमरे कहे लौटि है नाहीं ॥
साधुनको नृप निकट पठावैं । ते समुझाइ प्रभुहि लौटावैं ॥
तब संतनको सचिव बोलाये । तिनको कहि नृपनिकट पठाये
संत भूप कहँ जाइ सुनाये । हमहिं राम तुव पास पठाये ॥
प्रभुको शासन तुम सुनिलेहू । जाते मिटै सकल संदेहू ॥
नाथ कह्यो अस हम रण माहीं । कियो विनाश निशाचर काहीं
आये खल युग सातहजारा । तिनहिं छार किय बाण हमारा
जनकसुता सौमित्र समेतू । पंचवटी निवसहिं सुख सेतू ॥
अब काहे भूपति पगुधारै । लौटि जाहि आपने अगारै ॥
यह सुनि कुलशेखर सुख पायो।तेहि क्षण विजय निसान बजायो
मानि आपनी जीति भुवाला । लौट्यो संयुत सैन्य विसाला॥

दोहा—खबरि कहे जे संत यह, तिनको मिलि बहुवार ॥
भूषण दियो अनेक नृप, कर विशेष सतकार ॥६॥

आये लौटि महल महराजा । भाइन भृत्यन सहित समाजा॥
मंत्री मंत्र बैठि करि लीन्हे । बोलि पुराणिक सों कहि दीन्हे॥
जहँ जहँ राम दुःखकी गाथा । तहँ तहँ तुम नहिं बाँचहु नाथा
जहँ अस कथा आइ परि जाई । तहँ दीजै पत्रा उलटाई ॥
सुनत पुराणिक मंत्रिन वैना । तेहि विधि बाँचन लग्यो सचैना
एकदिवस पौराणिक काहीं । अवशिकाज परिगो घरमाहीं ॥
ताते अपनो पुत्र पठायो । बांचनकथा सभामधि आयो ॥
ताकीरही रीति नहिं जानी । जौन उपाय सचिव सब ठानी॥
सीताहरण कथा सब वांची । भूपतिको लागी सब साँची ॥
रावण आइ हर्‍यो वैदेही । लैगो लंकभीति नहिं तेही ॥
इतना सुनत भूपकर कोपा । चह्यो करन रावण कर लोपा॥
सभा मध्य अस गिरा उचारी । हर्‍यो लंकपति मातु हमारी॥

दोहा—रावणको हनिकै सकुल, लै सीता निजमात ॥
कौशलपतिको देहिंगे, तबै सत्य ममबात ॥ ७ ॥

असकहि कह्यो बजाउ नगारा । सजै सकलदल आजु हमारा ॥
जो कोउ होइ मोर हितकारी । सो रावण पर करै तयारी ॥
यतना सुनत सुभट सब जेते । सजे सकल संगर हित तेते ॥
रथ मातंग तुरंग अपारा । मंत्री सुहृद सुवन सरदारा ॥
सजे सकल नृप संग सिधारे । चल्यो धरापति धनु शर धारे ॥
बार बार नृप करत उचारा । आजु करब रावण संहारा ॥
सूधो कर सागरपर हल्ला । रावणको लैलेब महल्ला ॥
प्रभु रघुनायक जान नपैहैं । हम रण मारि शत्रु सिय लैहैं ॥
यहि विधि भनत नरेश उछाहा । चल्यो तुरँग चढ़ि कसे सनाहा
यदपि बहुतजन बारन कीन्हे । तदपि न भूप चित्त कछु दीन्हे ॥
आजु करब रावण संग्रामा । जय राजीव विलोचन रामा ॥
जात जात यहि विधि रणधीरा । पहुँच्यो जाइ सिंधुके तीरा ॥

दोहा—महा भयावन सिंधु जल, उठत तरंग अपार ॥
गर्जत कोटिन मेघ सम, पार जाब दुरवार ॥ ८ ॥

तदपि न भूप भीति कछु कीन्ह्यो। रामकाज महँ निज मन दीन्ह्यो
रामकाज लगि लगै शरीरा । तौ उपजै नाहिं तनु कछु पीरा
अस विचारि रघुवरको दासा । रावण विजय राखि उर आसा
हनि ताजन वाजी धनुधारी । दियो तुरंग सिंधु महँ डारी ॥
कंठ प्रयंत गयो जब राजा । तब ताकी सब सैन्य समाजा ॥
रथ तुरंग मातंग अपारा । कूदिपरे सब सिंधु मँझारा ॥
हाहाकार मच्यौ चहुँ वोरा । बूड्यो सिंधु भक्त शिरमोरा ॥
भाइन भृत्यन सुवन समेतू । सचिव सैन्य युत नृप मतिकेतू
बूड़त जानि सिंधु तेहि काला । सीतापति प्रभु दीनदयाला ॥

सीय लषण युत कृपानिधाना । लै कपिदल चढ़ि पुष्प विमाना
प्रगट भये कृपालु रघुनाथा । कह्यो आइ गहि भूपति हाथा॥
गमनहु नृपति लंक अबनाहीं । हम मारंचो रावण रणमाहीं ॥
दोहा—लै सीता लछिमन सहित, चढ़िकै पुष्प विमान ॥
भरत मिलन हित करत हम, कौशलनगर पयान॥९॥
असकहि जलते भूपति काहीं । ठाढ़ कियो करगहि तटमाहीं॥
रामकृपा भूपतिकी सैना । गई सकल बचि पायौ चैना ॥
राजा प्रभुकी स्तुति कीन्ह्यों । आपन जन्म धन्य गुणि लीन्ह्यों॥
पुनि भूपतिसों कह रघुनायक । कुलशेखर तुम हौ सब लायक
अब हम जात अवधपुर काहीं । भरत लखन लालस उरमाहीं॥
जो हम आजु अवध नाहिं जैहैं । तौ भरतहि जीवत नहिं पैहैं ॥
अस कहि भे प्रभु अंतर्द्धाना । राजा लह्यो अनंद महाना ॥
सैन्य सहित अपने पुर आयो । बारहि बार निसान बजायो ॥
भूप अनन्य रामकर दासा । वस्यो भवन महँ पाय हुलासा
सकल राज्य वैष्णव आधीना । करत भयो नरनाथ प्रवीना ॥
नित्य राम उत्सव नृप करई । संतन उर आनँद अति भरई॥
कोउ पुरमहँ अस रह्यो नवाकी । नहिजाकी मति हरिरति छाकी
दोहा—घर घर रामायण प्रजा, सुनत नेमकर नित्त ॥
रामनाम अंकित भवन, रामचरण रति चित्त ॥१०॥
जेहिपुर वसत नरेश प्रवीना । तहँते कोश रंगपुर तीना ॥
रंगनाथ पूजनकी साजू । सबविधि साजि समेत समाजू॥
संतन सहित रोज महराजा । चलत रंग दरशनके काजा ॥
कहुँ पुरबाहिर कहुँ यक कोसा। जब कढ़िजाय नरेश अदोसा ॥
जहँ संत कोऊ मिलिजावै । रंगनाथ सम तेहि नृप भावै ॥
रंगनाथ पूजनकी साजू । सोइ संत पूजन महराजू ॥

ल्यावै ताहि निवेश लेवाई । जानै घर आये रघुराई ॥
यहि भांति जबते कियराजू । जबलों जियत रह्यो महाराजू ॥
रंगनगर गमन्यो नृप नाहीं । मान्यो हरि सम संतन काहीं ॥
रंग दरशहित रोजहि जावै । साधु पाइ तेहि निज घर लावै॥
रघुपति सरिस संत कहुँ मानत। अपनेको लघु किंकर जानत ॥
यहिविधि कुलशेखर महाराजू । कियो राज्य भूपति शिरताजू॥
दोहा—कालपाइ संतनचरण, रज अपने शिरधारि ॥
दैनिसान तिहुँ लोकमें, गो साकेत सिधारि ॥ ११ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यां कलियुगखंडे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ विष्णुचित्तकी कथा ॥

दोहा—विष्णुचित्त स्वामी चरित, अब वरणौं सुखदानि ॥
सुनहु सकल श्रोता सुमति, सुनत अखिल अघहानि॥
दक्षिण देश सिंधुके तीरा । पांडुदेश नाशक सब पीरा ॥
तहँ यक धन्विनगर अतिपावन । उपवन वनवाटिका सुहावन ॥
विप्रमुकुंद नाम यक रहेऊ । धर्मरीति सबविधि सो गहेऊ ॥
पद्मानाम रही तिन नारी । तनमनते पति सेवन कारी ॥
तेहि पुरमहँ प्रभु दीनपरायण । वट दल सांई श्रीनारायण ॥
मंदिर महा मनोहर जाको । सुंदररूप सदन सुखमाको ॥
तेहि मुकुंद नित पूजनकरही । यथालाभ संतोषहि धरही ॥
द्विज मुकुंदके सुतनहिं भयऊ। ताते अति शोकित ह्वै गयऊ ॥
भज्यो मुकुंद मुकुंदहि काहीं । तब हरि भये प्रसन्न तहाहीं ॥
कह्यो स्वप्नमहँ यक सुत ह्वै है । जाको सुयश चहूंदिशि वैहै ॥
कालपाइकै भयो कुमारा । विष्णुचित्त तेहिं नाम उचारा॥
जातकर्म माता पितु कीन्हे । विप्रनदान विविध विधि दीन्हे॥

दोहा-हरिपार्षदजेते अहैं, तिनमे परमप्रधान ॥
विष्वक्सेन सुनाम जेहि, जासु प्रकाश अमान ॥१॥
ऐसे विष्वक्सेन कृपाला। आये संत समीप यक काला ॥
कियो शङ्ख चक्रांकित ताको। ऊर्ध्व पुंड्र दिय परम प्रभाको॥
संस्कार करि बालक केरो। कीन्ह्यो बहुरि विकुंठ बसेरो ॥
विष्णुचित्त जब भये सयाने। करन साधु सेवन मनआने ॥
साधुसमाजहि रोजहि जाई। करहिं संत सबविधि सेवकाई॥
सेवत साधुन भयो अघाऊ। विष्णुचित्तको बढ़्यो प्रभाऊ ॥
विष्णुचित्त मनकियो विचारा। प्रभुके अहैं जे दशअवतारा ॥
तिनमें महामनोहर रूपा। जानिपरतमोहि यदुकुल भूपा ॥
तिनको सेवत काल बिताऊं। ऐसो दीनबंधु कहँ पाऊं ॥
यदुपति चरण बढ्यो अनुरागा। सबसों कहन लग्यो बड़भागा॥
देखो यदुपतिकी करुणाई। पार न पाव वेद जेहिं गाई ॥
नारदादि सनकादि मुनीशा। ध्यानहि धरत जासु पदशीशा ॥
दोहा-ब्रह्म शक्र शिव आदि सुर, करत जासु नित ध्यान।
सोयदुपतिको गोपिका, करवावतिपयपान ॥ २ ॥
मथ्यो सिंधु बांध्यौ बलिराजे। बँध्यो उलूखल माखन काजे ॥
कंसवधन हित मथुरा जाई। मालीके घर गयो सिधाई ॥
माली माला इक पहिराई। भक्तिमुक्ति दीन्ह्यो यदुराई ॥
हन्योकंस मथुरा महँ जाई। पुनि द्वारावति गयो सिधाई ॥
पांडव वाजि बाग धरि हाथा। तिनके दूत सूत भे नाथा ॥
क्षीरसिंधु तजि सो प्रभु आई। वसे धन्विपुर देखहु भाई ॥
तिनको है अतिशयप्रिय माला। ताते हम रचिमाल विशाला ॥
अपने हाथनसों पहिरैहैं। करिसेवन निजनाथ रिझैहैं ॥
असकहि निजवाटिका बनायो। विविध भांतिके कुसुमलगायो॥

अपने हाथनसों रचिमाले । पहिरावे नित देवकिलाले ॥
यहिविधि बस्यो कृष्ण अनुरागी । जियमें प्रेमभक्ति अनुरागी ॥
तहँ दक्षिण मथुरा इक नगरी । पूरित प्रजा अनूपम सिगरी ॥

दोहा—तहँ इक वल्लभदेवको, नाम भयो महिपाल ।
धर्मधुरंधर शास्त्ररत, किय सुधर्म जनपाल ॥ ३ ॥

राज्यकियो राजा बहुकाला । लहे प्रजा नहिं तनक कसाला॥
एक समय अधरातहि माहीं । राजा कढ़्यो अकेल तहाँहीं ॥
बागन लग्यो रूप निज गोई । निरख्यो तहँ वैष्णव इक कोई
सोवतपथ महँ परमअभीता । तेजवंत हरिदास पुनीता ॥
राजा पूछ्यो ताहि जगाई । को तुम बसे कहांते आई ॥
साधुजागि भूपति जियजानी । कह्यो विप्र लीजै मोहिं मानी॥
हम मज्जनकरि सुरसरि माहीं । सेतुबंध रामेश्वर जाहीं ॥
तब राजा करि ताहि प्रणामा । बोल्यो वचन महामति धामा॥
जामें मोर होइ कल्याना । सोवैष्णव तुम करहु बखाना ॥
तबहिं साधु बोल्यो मुसकाई । हैकल्यानकि यही उपाई ॥
जैसे आठमास रोजगारी । करि मेहनत जोरत धनभारी॥
चारिमास बैठे घरखावै । वर्षाकाल अनत नहिं जावै ॥

दोहा—चारिपहर जिमि कामकरि, सुखसोवै जन रैन ।
युवा उमिरि उद्यमकरै, करै बुढ़ाई चैन ॥ ४ ॥

तैसहि मनुज जन्म जिय पाई । लेहि अवशि परलोक बनाई ॥
सौपचास इत वर्षन माहीं । करै जो पुण्यपापहूंकाहीं ॥
सो उत लाखन वर्षन भोगै । ऐसोहै सबशास्त्र नियोगै ॥
बनै जौनविधि नृप परलोका । सोई कर्म करो तजिशोका ॥
सुनिराजा वैष्णवकी बानी । मनमें लियो यथारथ जानी ॥
लौटि आपने घरको आयो । प्रात पुरोहितको बोलवायो ॥

कह्यो पुरोहित सों असबानी। केहिविधि बनै जन्म मतिखानी॥
तब अस कहे पुरोहित बाता। बोलहु सब पंडित अवदाता॥
तिनसों पूछेहु भूप उपाई। देहैं ते सबभांति बताई॥
तब राजा निज सभा मँझारी। गाड़्यो खंभ एक अतिभारी॥
तामें मुद्रा धरि दशलाखा। सब पंडितन वचन असभाखा॥
कहै कोउ परलोक उपाई। सो दश लाखो मुद्रा पाई॥

दोहा—सभा मध्य पंडित सकल, निज निज मति अनुसार॥
कहन लगे बहु विधि वचन, पर्‍यो न एक विचार५॥

विष्णुचित्त कह तब यदुराई। धन्विपुरी महँ कह्यो बुझाई॥
मथुरापुरी जाहु तुम ज्ञानी। राजहि लेउ दास मम जानी॥
भूपहि कह्यो ज्ञान उपदेशा। मिटै नाहिं संसार कलेशा॥
विष्णुचित्त सुनि प्रभुके बैना। मथुराको गमने भरि चैना॥
सभा मध्य प्रविशे जहँ राजा। विष्णुचित्त लखि उठी समाजा॥
राजा कियो ताहि परणामा। सादर सतकार्‍यो मतिधामा॥
पूछ्यो नृप परलोक उपाई। विष्णुचित्त तब दियो बताई॥
भजहु भूप यदुपति पदकंजन। और उपाइ नहीं भव भंजन॥
राजा सत्य निदेश विचारी। पावत भयो मोद अति भारी॥
विष्णुचित्तको शिष्य भयो पुनि। दस लाखो मुद्रादिय प्रभु गुनि॥
उत्सव कियो नगर महँ राजा। भाइन भृत्यन जोरि समाजा॥
विष्णुचित्त कहँ नाग चढ़ाई। नगर प्रदक्षिण किय नरराई॥

दोहा—अगणित पुरवासी चले, अवनीपतिके संग॥
विष्णुचित्त आगे लसत, चढ़े तुंग मातंग॥ ६॥

जय जय करत सकल पुरवासी। भये सकल हरि दरशन आसी
राजहु अस चाह्यो मनमाहीं। केहि विधि लखौं यदूत्तम काहीं॥
विष्णुचित्त सब की मन आसा। जान्यो हरि प्रभाव हरिदासा॥

कियो विनय प्रभुपहँ तेहि काला। प्रगटहु इत अब दीनदयाला ॥
प्रगटे विना जाति मम बाता । तुम तौ भक्त मनोरथदाता ॥
भक्त मनोरथ जानि मुरारी । प्रगटत भये प्रकाश प्रसारी ॥
गरुड़ सवार रमा सँग माहीं । अतुलित छबि नहिं वरणि सिराहीं
सहसब पुरजन दरशन पाये । सिगरे विष्णुचित्त यश गाये ॥
राजाधन्य जन्म निज मान्यो । प्रेम विवश तनु भान भुलान्यो ॥
विष्णुचित्त लै कुसुम सुमाला । पहिरायो गल देवकिलाला ॥
बार बार प्रभु स्तुति गायो । भक्तवश्यता नाथ देखायो ॥
भये नाथ पुनि अंतर्द्धाना । जयरव भो चारिहू दिशाना ॥

दोहा–यहि विधि पुरजन सहित नृप, विष्णुचित्त शिरनाइ ॥
कियसानंद प्रवेश पुर, धनि निज भाग्य गनाई ॥७ ॥
विष्णुचित्त पुनि धनिपुरी, बसे आइ मतिवान ॥
जौन रही सम्पति सकल, अर्प्यो श्रीभगवान ॥ ८ ॥
भक्त अधीन मुकुंद प्रभु, विष्णुचित्तके पास ॥
शालग्राम शिला सरिस, कीन्ह्यो प्रगट निवास ॥ ९ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेपंचमोध्यायः ॥ ५ ॥

अथ अंघ्रिराजकी कथा ॥

दोहा–भक्त अंघ्रिरज नाम जेहि, महाभागवत सोइ ॥
तासु कथा वर्णन करौं, सुनहु संत मुदमोइ ॥ १ ॥
चौल महेश्वर दक्षिण देसा । कावेरी तट सुखद हमेसा ॥
मँडेग्रुटि तहँ नगर अनूपा । रह्यो तहाँकर धार्मिक भूपा ॥
विप्र सप्तदश वैदिक ज्ञानी । वसत रहे तहँ परम प्रमानी ॥
एक समय हरि कियो विचारा ।कलियुग महँ जन अघी अपारा॥

मेरो दरशन कैसे पैहैं। कैसे के भव पारहि जैहैं॥
अस विचारि प्रभु प्रगट भये तहँ। रंगनाथ अस धरचो नाम कहँ॥
नगर मंडगुटि रंगनगर ते। रह्यो न बहुत दूरिपुरबरते॥
नगर मंडगुटि महँ इक काला। लिय अवतार कृष्ण वनमाला॥
नाम तासु नारायण भयऊ। जन्महि ते ज्ञानी ह्वै गयऊ॥
जातकर्म माता पितु कीन्हे। पुनि व्रतबंध तासु करि दीन्हे॥
सो तजि भवन रंगपुर आयो। रंग चरण सेवन चित लायो॥
रंगनाथ पूजन नित करहीं। भिक्षा मांगि उदर निज भरहीं॥

दोहा–पर्णकुटी तृणकी रच्यो,तहँवाटिका लगाइ।
निज कर तुलसी फूल लै,अरपैमालबनाइ॥ १॥

निज हाथनसों वृक्ष लगावै। निज हाथनसों तेहिं जलनावै॥
तहँ यक निचुलापुरी विशाला। तहँ को रह्यौ जौन महिपाला॥
ताके रहीं वारातिय दोई। रूपवती रंभा छवि खोई॥
तेहि नृप निकट काल बहु रहिकै।ह्वै उदास कछु कारण लहिकै॥
रंगनगर गवनी गणिकाते। लै सहचरी अनेक तहाँते॥
रंगनगर संनिधि छदिपागा। रह्यो विप्र नारायण बागा॥
महामनोहर लखि आरामा। करन लगी दोऊ विश्रामा॥
शोचत रहे तरुन तेहिकाला। नारायण हरिदास विशाला॥
दोऊ यदपि रहीं रंभासी। लखत परै गल मनसिजफांसी
तदपि तिन्है नारायण दासा। कियो न तनक तनककी आसा॥
तब छोटी भगिनी तेहि केरी। जेठी भगिनी कहँ अस टेरी॥
यह नर धौ पषाणकर अहई। धौ बिनजीव वाटिका रहई॥

दोहा–याके सन्मुख हम दोऊ,बैठी रूप बनाय।
हमपै तनक तकै नहीं, अचरज लगत महाय॥ २॥

जो यहिको वश करु छबिवारी। तौ हम दासी होयँ तिहारी॥

तब जेठी छोटी सों बोली। अपने उरकी आशयखोली॥
यहि न करौं वश जो यहि बेरी। हमही होव दासिका तेरी॥
जेठी कौ दै सकल सहेली। आप चली वश करन अकेली॥
सिगरो भूषण वसन उतारी। गणिका पहिरि एकही सारी॥
परी विप्रके चरणन जाई। बोली गिरा महा सुखदाई॥
मैंहौं बारवधू द्विजराई। छोंडि कुटुंब शरण तुव आई॥
राखहु म्वहिं अपनी सेवकाई। सिंचिहौं मैं वाटिका सदाई॥
भिक्षा मांगि जौन तुमल्यावहु। अपनो जूठन मोहिं खवावहु॥
सुनि नारायण गणिका वानी। परमप्रीति ताकी पहिंचानी॥
लियो आपने कुटी टिकाई। तासों सिंचवावहिं फुलवाई॥
भिक्षा मांगि अन्न जो ल्यावै। अपनो जूठन ताहि खवावै॥
दोहा—यहि विधि बीते कालकछु, लाग्यो मास अषाढ़॥
घन घुमंड चहुँ वोरते, वर्षा कीन्ही गाढ़॥ ३॥
महावृष्टि लहि परम सुखारी। बारवधू गै कुटी मझारी॥
सोवत रहे विप्र नारायण। इंद्रियजित अति धर्म परायण॥
चापन लगी चरण मनहारी। कोमल पंकज पाणि पसारी॥
जागिउठ्यो द्विजतेहिक्षणमाहीं। रह्यो न धीर निरखि तियकाहीं
बारवधू हग बाण चलाई। लिय मनमनसिज फांसफँसाई॥
यदापिरहे अति धीरज धारी। तदपि लगी हिय काम कटारी
विसर्यो सकल धर्म अरु ज्ञाना। तनुते किय वैराग्य पयाना॥
रम्यो ताहि लै कुटी मझारी। धर्म कर्म निज सकल विसारी
याहीते कह वेद पुराना। करै जो कोउ वैराग्य विज्ञाना॥
रहै न संग इकांतहि नारी। नारी डारति सकल बिगारी॥
बारवधू लैविप्र तहांई। रहनलगे वैसिक के नाई॥
रंगनाथ सेवन सब भूलो। काम विटप उरमें अति फूलो॥

दोहा—यहि विधि लै निजसंग द्विज, गवन भवन कहँ कीन ।
हाव भाव करिके अमित, चेरो सों करि लीन ॥ ४ ॥
भगिनीसों अस जाय सुनाई । कियो सत्य प्रण जो मैं गाई ॥
ताहि सराहन लगीं सयानी । तुवसम कोउ न रूप गुणखानी ॥
विप्रचित्त जो कछु घर रहेऊ । बारवधू सरबस सो गहेऊ ॥
जब कछु रह्यो न द्विज घरमाहीं। तब आदर कीन्ही कछु नाहीं ॥
द्विजको घरते दियो निकारी । बारवधू पीठहि पद मारी ॥
गणिका विवश रह्यो महिदेवा । तदपि तज्यो नहिं ताकी सेवा ॥
परे रहैं ताही के द्वारा । मिलै न यद्यपि कछू अहारा ॥
एक समय जब भइ अधराता । तब प्रभु भुक्ति मुक्तिके दाता ॥
कमला कर गहि विचरन हेतू । कढ़े नगर महँ कृपानिकेतू ॥
सोइ गणिका द्वारे है नाथा । निकसत भयो रमाके साथा ॥
गणिका द्वार देखि द्विज काहीं। हँसत भये पछिताय तहाहीं ॥
पूछ्यो रमा हँस्यो प्रभु कैसो । देहु बताय प्रयोजन जैसो ॥
दोहा—प्रभु कह यह द्विज माल रचि, रह्यो चढ़ावत मोहिं ॥
सो विवेक तजि वश भयो, गणिका को मुखजोहि ॥५॥
तब कमला बोली मुसकाई । तवजन किमि दिय धर्म विहाई ॥
तुम्हरो दास विषय वश होई । यह अचरज मानी सब कोई ॥
ताते प्रभु पूरण करि आसा । निर्मल करहु आपनो दासा ॥
सुनि कमलके वैन कृपाला । लै कंचन भाजन तेहि काला ॥
गणिका भवन गवन प्रभु कीन्ह्यो। ताहि जगाय वचन कहि दीन्ह्यो
नारायण द्विज मोहिं पठायो । तोहिं देन कछु मैं इत आयो ॥
सुनि गणिका द्रुत खोलि कपाटा। जोहन लगी नरायण बाटा ॥
तेहि कंचन भाजन प्रभु दीन्ह्यो । गणिका मोद सहित लै लीन्ह्यो ॥
कहत भई हेदूत तुराई । ल्यावहु नारायणहिं बोलाई ॥

दूत रूप धरि द्रुत प्रभु आये। नारायणको वचन सुनाये॥
जाके हित तैं अति दुखपावै। प्राणप्रिया सो तोहिं बोलावै॥
वचन सुनत नारायण काना। मान्यो बहुरि मिले मम प्राना॥
दोहा—दौरतहीं गमनत भयो, द्रुत गणिका के गेह॥
रंगनाथ मंदिर गये, किये दास पर नेह॥ ६॥
भयो भोर तब आय पुजारी। तहाँ न कंचन पात्र निहारी॥
चहूं वोर माच्यो अस सोरा। कंचनपात्र चोरायो चोरा॥
हेरन लागे सबै पुजारी। राजाके ढिग कह्यो पुकारी॥
भूपति दूत नगरमहँ हेरे। गणिका के घर पात्रहि हेरे॥
भूपहि कह्यो दूत तब जाई। गणिका लीन्ह्यों पात्र चोराई॥
राजा वेश्या पकरि बोलायो। गणिका संग नारायण आयो॥
राजा कह्यो पात्र कहँ पायो। बारवधू तब वचन सुनायो॥
दूत हाथ मोहिं विप्र पठायो। द्विज कह दूत कहां मैं पायो॥
गणिका अरु नारायण केरो। होत भयो संवाद घनेरो॥
तब राजा कह सचिव बोलाई। पात्र देहु मंदिर पठवाई॥
इन दोइमें जो होवै चोरा। पावै तीन दंड अति घोरा॥
तौने निशा स्वप्न महँ आई। राजा कहँ भाष्यो यदुराई॥
दोहा—नारायणहै दास मम, भयो विषय आधीन॥
यहि हित हमही पात्रलै, बारवधू कहँ दीन॥ ७॥
राजा जागि सभा महँ आयो। द्रुत नारायण द्विजहिं बोलायो॥
किय प्रणाम नरनाह उदारा। क्षमहु विप्र अपराध हमारा॥
तुमतो हौ अनन्य हरिदासा। तुम्हरे हित हरि कियो प्रयासा॥
कंचन भाजन गणिकहि दीन्ह्यों। दूत कर्म तुम्हरे हित कीन्ह्यों॥
अस कहि छोंड़ि दियो दोउकाहीं। गणिका गै अपने घर माहीं॥
विप्र विचार कियो तिहि काला। मोर नाथहै दीनदयाला॥

धिगधिग मोहिं अस नाथ विहाई। भयो विवश गणिकाके जाई॥
अस विचारि मंदिर द्विज आयो। रुदन करत प्रभुको शिरनायो॥
बार बार कह प्रभुहिं पुकारी। मेरे नहिं प्रभु संपति भारी॥
बारवधू लागी मम छाती। प्रायश्चित्त करौं केहि भाँती॥
अस कहि व्रत करि भूसुर सोई। रोवत सोइ रह्यो दुख गोई॥
स्वप्न माहँ कह द्विजहि मुरारी। प्रायाश्चित्त करहु अस भारी॥

दोहा—तीरथ सब अरु व्रत सकल, यज्ञ सकल अरु दान॥
संतचरण जल में बसत, ताहि करौ तुम पान॥८॥

भोर जागि द्विज लहि सुख भारी। सब साधुन पद लियो पखारी॥
सादर किय चरणामृत पाना। मिटे अनंत जन्म अघ नाना॥
तबते सकल संत मतिधामा। दिय भक्तांघ्रि रेणु अस नामा॥
तबते सकल आश द्विज छोड़ी। भज्यो अनंद रमा हरि जोड़ी॥
विविधभाँति रचिपद हरि केरे। गावैं रंग नाथके नेरे॥
सो गणिका हरि चरित विलोकी। मानि गलानि भई अति शोकी॥
घरकी संपति संतन दीन्ही। आप विरति पंथा गहि लीन्ही॥
रंगनाथके मंदिर जाई। त्राहि त्राहि कहि पद शिरनाई॥
क्षमहु नाथ मेरो अपराधा। तुम्हरे शरण न एकौ बाधा॥
रचिरचि कोमल पद सुखदाई। गावति निशि दिन लाजविहाई॥
साधुनको जूठन मितखाती। प्रेममग्न चितवति दिन राती॥
कछु दिन महँ गणिका हरिदासी। भै वैकुंठ नगरकी वासी॥

दोहा—देखहुरे भाई सकल, यह सतसंग प्रभाउ॥
गणिका पाई परमपद, लग्यो न कलिकर दाउ॥९॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेषष्ठोऽध्यायः॥ ६॥

अथ चोलमहीपकी कथा ॥

सोरठा—अब वरणौं इतिहास, सुंदर चोल महीपको ॥
सुनहु संत सहुलास, निचुलानगरीजोरह्यो ॥ १ ॥

धर्मधुरंधर धरणि अधीशा। नित नावत संतन पद शीशा ॥
क्षत्री जाति विप्र पद सेई। परमप्रतापी शत्रु अजेई ॥
सत्यसंध अति सुंदर दानी। गो द्विज देव सदा सनमानी ॥
भूप अनन्य रंगपति दासा। विषय विहीन भक्ति की आसा॥
निचुला नगरी परम सोहावनि। जामे वसति विप्रतति पावनि ॥
नृपकर यक अभिराम अरामा। जामें जात मिलत मनकामा ॥
रोज राव वाटिका सिधारै। प्रभु अर्पण हित कुसुम उतारै ॥
तेहि वाटिका मध्य छवि छाई। सरसीरही एक सुखदाई ॥
एक समय नृप गये प्रभाता। तोरन लगे विमल जलजाता ॥
तहँ निरख्यो सरसीके तीरा। कन्या एक सुछवि गंभीरा ॥
कोहौ तुम पूछ्यो नरनाहा। कन्या बोली सहित उछाहा ॥
का करिहौ नृप पूछि प्रसंगा। चाहहिं हम श्रीपति अँग संगा॥

दोहा—और पुरुष की आशनहिं, करु यतनो उपकार ॥
रंगनाथके संगमें, होइ विवाह हमार ॥ १ ॥

भूपति महा भागवत जानी। कन्या को अपने घर आनी ॥
ताको निजकन्या नृप मान्यो। तासु विवाह नाथ सँग ठान्यो ॥
जाइ रंगमंदिर महँ राजा। कीन्ह्यों विनय प्रेम भरि काजा॥
भौन आइ पुनि तिलक पठायो। लग्न सोधाइ बरात बोलायो ॥
सत्य पुहुमिपति प्रेम विचारे। प्रभु प्रत्यक्ष पालकी सवारे ॥
मंदिर ते कढ़ि नृप घर आये। विधि विवाह की सकल कराये॥
राजा दीन्ह्यों कन्यादाना। अपने कर लीन्ह्यों भगवाना ॥
कन्या मंदिर पगुधारा। माचि रह्यो पुर जयजयकारा॥

निजसर्वस दिय दाइज राजा। मान्यो अपने को कृतकाजा॥
कन्या लीन भई हरिमाहीं। नृप कीरति फैली चहुँ पाहीं॥
भूपति संतन जूठनखाहीं। रंगद्वार महँ रहैं सदाहीं॥
प्रेम प्रभाव लखहु सब भाई। प्रगट विवाह कीन यदुराई॥

दोहा—धनि भूपति धनि कन्यका, धनि नगरीके लोग॥
जे देख्यो प्रत्यक्ष यह, हरि विवाह संयोग॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेसप्तमोऽध्यायः॥ ७॥

अथ जोगिबाहकी कथा॥

दोहा—जोगिबाह हरिभक्त को, कहौं सुभग इतिहास॥
रंगनाथको पद विरचि, कीन्ह्यों भव दुख नास॥१॥

सोई निचुला नगरी माहीं। रह्यो शूद्र इक रचि घर काहीं॥
ताकी गर्भवती भै नारी। हरि तेहिं कृपा कटाक्ष निहारी॥
गर्भहि में उपज्यो तेहि ज्ञाना। बालक भयो विज्ञान निधाना॥
रोवत गावत हँसत बताती। राम नाम मुख निकसतजाती॥
बिन हरि नाम कढ़ै नहिं बानी। हरिको सुमिरत उमिर सिरानी॥
द्वादश वार्षिक भो जब बालक। तज्यो कुटुंबसुमिरियदुपालक॥
रंगनगरमहँ बस्यो सिधारी। रचन लग्यो हरि पद मनहारी॥
सुर मूर्च्छना ग्राम लै ताला। गावत कृष्ण सुयश सब काला॥
याम यामेक राग रागिनी। हरि पदावली मोद पागिनी॥
रंगद्वार महँ गाय सदाहीं। कालक्षेप करत सुखमाहीं॥
प्रेम मगन ढारत दृग आंसू। गावत रहै न भूंख पियासू॥
रैन दिवस तेहि गान अधारा। भूली सकल सुरति संसारा॥

दोहा– एकसमय अधरात कै, सुकवि करत रह गान ।
है प्रसन्न सुनि गान कह, कमलासोंभगवान ॥ १ ॥

सुकवि नाम मम दास सुजाना । रचि पद करत मोर यश गाना॥
अतिशय नीक लगत मोहिं प्यारी। तब बोलीं पुनि सिंधुकुमारी॥
रुचत तुमहिं जो गायक गाना । तौबोलवावहु ढिग भगवाना ॥
रमा वचन सुनि गुनि जन अपनो। सुक पूजकहि दियो प्रभु सपनो
गायक सुकविनामपहँ जाई । ल्यावहु ममढिगतुरतलेवाई ॥
पूजक सुकवि जागि निशिमाहीं । मंदिर खोलि कपाटन काहीं॥
बाहिर काढ़ि हेरन तेहिलागा । कहँगावत गायक बड़भागा ॥
सुकवि बैठि कावेरी तीरा । गान करत रह प्रेम अधीरा ॥
सुक पूजक तेहिं कंध चढ़ायो । रंगनाथके ढिग पहुँचायो ॥
रंग चरण ढिग गावन लाग्यो । हरिहू तासु प्रेम महँ पाग्यो ॥
दैकेमार पूजक पगु धारचो । भोर भये पुनि द्वार उघारचो ॥
लखो सुकवि कहँ तेहि थल नाहीं । लीन भयो हरिचरणन माहीं ॥

दोहा–केवल हरि यश गानते, सुकवि पाय अनुराग ।
गोपद सम भवनिधि तरचो, लग्यो न कलियुग दाग२

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेअष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अथ भक्तपरकालकी कथा ॥

सोरठा–भयो भक्त परकाल, तासु कथा अब कः
श्रोता बुद्धि विशाल, सुनहु सबै चित लाइकै ॥ १ ॥

कावेरी पश्चिम तटमाहीं । नाम पुरी परिरंभ तहाँहीं ॥
तहँ इक शूद्र नील असनामा । रह्यो शंभुपदरत बलधामा ॥
महामनोहर तासु स्वरूपा । गुणआगर नागर कवि भूपा ॥

याचक कल्पवृक्ष तेहि जान्यो। रमनी तेहिं रतिपतिअनुमान्यो
अंतक सरिस शत्रु तेहि देख्यो। कवि सब वाल्मीकि सम लेख्यो
तहँ परिरंभपुरी कर राजा। रह्यो एक जो बली दराजा॥
दियो ताहि संतति नहिं धाता। ताते रह्यो दुखित कृशगाता॥
सो मनमें अस कियो विचारा। सबगुण पूरित करौं कुमारा॥
सबगुण पूरित नर जग माहीं। खोजन लग्यो भूप चहुँ घाहीं॥
सब गुण पूरित नील निहारयो। पुत्र करन तेहि भूप विचारयो॥
शूद्र जानि बरज्यो सबकाहू। पै कछु नहिं मान्यो नरनाहू॥
शंभुकृपा वश नील उदारै। सुदिन पूंछि नृप कियो कुमारै॥
ताको नाम धऱ्यो परकाला। वोज तेज बलबुद्धि विशाला॥

दोहा—कछुक काल महँ रागवश, भयो भूप वशकाल।
पुहुमीपति पुहुमी प्रथित, शासन किय परकाल॥१॥

नित नवमोद प्रजन कहँ बाढ़ा। धर्म बढ़यो जल यथाअषाढ़ा॥
भयो विभव सुरपति सम ताको।शासन कियो सकल वसुधाको॥
शासन करत ताहि दश दिशहूं। रह्यो अधर्म अवनिमहँनकहूं॥
तेहि परिरंभ पुरीके नेरे। रह्यो नागपुर प्रजा घनेरे॥
तहँ यक वैद्य रह्यो मतिवाना। शीलवंत भागवत प्रधाना॥
पुरी निकट यक रही तलाई। फूली कंजन की समुदाई॥
वैद्य रोज मज्जन हित जाई। तहँ पूजै यदुनाथ नहाई॥
एक दिवस सरसी तट माहीं। लख्यो वैद्य लघु कन्या काहीं॥
रही वैद्यके संतति नाहीं। लिय उठाय दारिका तहाँहीं॥
घरमे ल्याइ दियो घरनीको। मानहु पुत्र कह्यो अस तीको॥
दंपति दुहिता पालन करहीं। अपने उर आनँद अति भरहीं॥
जस जस बढ़ति कन्यकाजाई। तस२ विभव होत अधिकाई॥

दोहा–सुता रूप गुण शील सुनि, सो परकाल भुवाल॥
बोलि चिकित्सक भवन में, वचन कह्यो तेहिकाल ॥२॥
वैद्य कहाँ कन्या तुम पाई। कौन भाँति तुम्हरे घर आई॥
वैद्य कहो सरसीके तीरा। हम दुहिता पाई मतिधीरा॥
मेरे घर यह भई सयानी। सकल भांति संपति सुखदानी॥
राजा कह्यो कन्यका केरो। वैद्य विवाह करहु तुम मेरो॥
वैद्य कही यह भली बखानी। पै कछु कारण लीजैजानी॥
विनाशंख चक्राङ्कित काहीं। व्याह करन कहती यहनाहीं॥
रोज़हि भोजन साधु करावै। तब यह अन्न पान मुखल्यावै॥
वैद्य वचन सुनितुरत भुवाला। चक्रांकित ह्वैगो परकाला॥
तबदै साक्षी पावक काही। वैद्य कन्यका नृपहि विवाही॥
नित नृप सदन जे साधु सिधारैं। भूपति भोजन दै सतकारैं॥
सहस साधु भोजन करवाई। भोजन पान करै नृपराई॥
जेतो धन नृपके घर होवै। सकल संत सेवन महँ खोवै॥
दोहा–तहँ यक बड़ो भुवाल कोउ, चढ़ि आयो दल साजि॥
तोप तुपक आयुध विविध, पैदर वारन बाजि॥ ३॥
सो पठयो सेनापति काहीं। भूपति घर आयो भय नाहीं॥
कह परकालहिसों अस बाता। देहु दंड नहिं दंड अघाता॥
तब परकाल कही अस बानी। हमरे नहिं सुवरण की खानी॥
जो कछु राज्य माहिं धन पावैं। सो सब विप्रन साधु खवावैं॥
जो भूपति करिहैं बरजोरी। तौ देहैं कृपाण मुख मोरी॥
हम तो हैं अनन्य हरिदासा। राखैं कबहुँ न कोहुकी त्रासा॥
अस कहि सेनापति कहँ राजा। दियो निकासि समेत समाजा॥
सेनापति चलि निज प्रभु पाहीं। बचन कह्यो भय भरि उरमाहीं
बड़ो घमंडी नृप परकाला। तुमरो शासन मान्यो ख्याला॥

तातें ताहि दंड अस दीजै । ताको राज्य सकल लै लीजै ॥
सुनि भूपति किय कोप प्रचंडा। दीन्हो शासन भटन उदंडा ॥
घेरि लेहु परकालपुरी को । रहै न थल निकसन अगुरीको
दोहा–भूपवचन सुनि सैन्य सब, चली निसान बजाय ॥
हय गय पैदर पदन की, धूरिधुंध रहि छाय ॥ ४ ॥
नृप आवत लै सैन्य विशाला । सुनी खबरि अस नृपपरकाला ॥
रामचरण सुमिरचो मनमाहीं । लैनेसुक दल भय कछु नाहीं॥
साधु चरण धरि अपनो शीशा । भाषत जयति कौशलाधीशा॥
पुनि अस विनय कियो परकाला। हे दयालु दशरथके लाला ॥
तुमहिं समर्पितहै यह राजू । राखहु आजु लाज रघुराजू ॥
असकहि सन्मुख भयो नरेशा। जिमि मतंग गण माहिं मृगेशा॥
दुहुँ दिशिते बहु बजे नगारे । दुहुँ दिशि भट हथियार निकारे
प्रथमहि पसर कियो परकाला । सुमिरि चरण युग कोशलपाला॥
तोपैं तुपक तीर तरवारी । चलत भईं दुहुँ दिशते भारी ॥
जानि अनन्यदास रघुनाथा । प्रगटत भे लै धनु शर हाथा॥
क्षणमें सकल भूप दल भारी । प्रभुडारचो निज सायक मारी ॥
भग्यो भूप जय लह्यो प्रकाला । लह्यो न कछु परकाल कसाला ॥
दोहा–भूप दीन ह्वै दल रहित, जानि प्रकाल प्रभाव ॥
त्राहित्राहि कहि दौरिकै, गहत भयो दोउ पांव ॥ ५ ॥
कीन्ह्यो बहुरि विनय करजोरी । मैंहौं नाथ शरण अब तोरी ॥
देहु कछुक धन तौ घर जाऊं । तिहरो सुयश सदा मैं गाऊं ॥
तब परकाल कह्यो अस बैना । हमरे घर महँ धन कछु हैना ॥
रह्यो सो ब्राह्मण वैष्णव खायो । तुम्हरेहेतु न भवन धरायो ॥
तेहि निशि माहिजानि जनअपनो।रघुपतिदिय परकालहि सपनो
उचित देव धन भूपति काहीं । शरणागत कहँ अनुचित नाहीं ॥

कांचीपुरी माहँ जब ऐहौ । भूपतिदेन हेतु धन पैहौ ॥
भोर जागि परकाल भुवाला । भाष्यो तुरत ताहि महिपाला ॥
मम सँग दीजै सचिव पठाई । ल्यावै कांचीते धन जाई ॥
अस कहि कांची गयो प्रकाला । संग सचिव पठयो महिपाला ॥
जा दिन कांचीं सचिव सिधारचो। तादिननाथ मनुज वपु धारचो॥
वृषभनमें धन भूरि भराई । दियो तासु डेरा पहुँचाई ॥

दोहा—मंत्री लै धन घर गयो, जान्यो नहिं परकाल ॥
पूंछन लाग्यो जननसों, कहां सचिव यहि काल॥६॥

प्रजा कह्यो तिहरो जन दयऊ । धन लै सचिव बहुरि सो गयऊ॥
प्रभु चरित्र परकाल विचारी । हरिकी कीन्ही स्तुति भारी ॥
बहुरि आपने भवन सिधारी । तुरत बोलाय कह्यो निज नारी ॥
मोरि दीनता देखि मुरारी । कीन्ह्यों समर सबन सँग भारी ॥
मेरे हित धरि मनुज स्वरूपा । दीन्ह्यों वित्त विपुल तेहिभूपा ॥
मोहिधिगमोहिधिग बारहिंबारा। तजौं न तिनके हित परिवारा ॥
चलु वन बसि कहुँ भजिय सियापति। देहिं लुटाय साधु कहँ संपति
नारी सुनि संमत सो कीन्ह्यों । साधुन बोलि सकल धन दीन्ह्यों॥
आप बसे वन महँ दोउ प्रानी । भजहिं सप्रेम जानकी जानी ॥
तँहँ जे साधु तासु ढिग आवैं । बिन संपति केहि भांति खवांवैं॥
तब परकाल चोरावन लागे । साधुखवावन महँ अनुरागे ॥
छल बल चोरी कर धन ल्यावै । ताते सिगरे संत

दोहा—एक समय चोरी करन, गये धनिकके धाम ॥
कनक कटोरा लै कढ़ी, तौन धनिक की वाम ॥ ७ ॥

तासु कटोरा हरचो प्रकाला । जय गुरु कही धनिक की बाला॥
तब फेंक्यौ परकाल कटोरा । भयो धनिक तियको अति भोरा
तब तिय निज पतिसों कह जाई। भाजन कनक हरचो कोउआई॥

सो सुनि धनिक नारि युत तहँवा। कढ़ि आयो प्रकाल रह जहँवा॥
परकालहि वैष्णव अवलोकी। महिगत भाजन लखिभोशोकी॥
कह्यो नारि कहँ आँखि देखाई। साधु संग का करी ढिठाई॥
साधु कौनहित पात्र न लीन्ह्यों। कारण कौन फेंकि महि दीन्ह्यों॥
तिय कह मैं अपराध न ठान्यो। जयगुरु यतनो वचन बखान्यो॥
तब तिय को पति भयो सकोपा। भाष्यो अरी धर्म किय लोपा॥
संपति सोइ जो साधु हित लागै। सोइ कीरति जो जगमहँ जागै॥
दोहुँन की लखि अनुपम प्रीती। तब परकाल कियो अति प्रीती॥
दे परिदक्षिण कियो प्रणामा। पुनि परकाल गयो निजधामा॥

दोहा—तबते सबके भवनकी, चोरी तज्यो प्रकाल॥
राह लागि लूटै जनन, साधुन हित सब काल॥८॥

लूंट्यो जबहिं जनन बहुकाहीं। पथिक चले पंथा तेहिं नाहीं॥
मिल्यो न धन नित परचो उपासा। साधु न आवै तब तेहिंपासा॥
तब परकाल महादुखछायो। मरन आपनो उचित गनायो॥
तब प्रभुको संकट अति परेऊ। पार्षद सहित मनुज वपु धरेऊ॥
भये पक्षिपति तुरत तुरंगा। पार्षद भे सेवक बहुरंगा॥
कमलाको दुलही रचि लीने। दूलह आप भये परवीने॥
तेहि मारगह्वै कढ़े मुरारी। लखिप्रकाल तहँ गयो सिधारी॥
घेरि भटनसों सकल बराता। बोल्यो वणिक जानि असबाता॥
भूषण दीजै सकल उतारी। नातौ हम हनिहैं तरवारी॥
हरि अपनो अरु कमला केरो। दिय उतारि आभरण घनेरो॥
औरहु जो धन रह्यो अनंता। सो परकालहि दियो तुरंता॥
उच्यो न सो धन तासु उठायो। तब प्रकाल अस वचन सुनायो॥

दोहा—शिरधरि मेरे भवन महँ, दीजै धन पहुँचाय॥
नातो यहिथल ते कहूं, तुम पैहौ नहिंजाय॥९॥

तब प्रभु वचन कह्यो मुसकाई। देत एक हम मंत्र बताई ॥
धन उठाय कै मंत्र प्रभाऊ। जाहु भवन कहँ सहित उराऊ॥
देहु मंत्र तब कह परकाला। तबहिं कान लगि दीनदयाला॥
दिय अष्टाक्षर मंत्र सुनाई। धरयो हाथ माथे यदुराई ॥
पुनि पार्षद युत त्रिभुवन भूपा। प्रगट कियो आपनो स्वरूपा ॥
रमा सहित निज नाथ निहारी। त्राहि त्राहि परकाल पुकारी ॥
गिरयो चरणमहँ प्रेम अगाधा। कह्यो क्षमहु मेरो अपराधा ॥
प्रभु कह नहिं अपराध तिहारो। रह्यो मनोरथ यही हमारो ॥
अस कहि भे प्रभु अंतर्द्धाना। कांची किय परकाल पयाना ॥
मारग महँ भूखो अति भयऊ। ताको कोउ भोजन नहिं दयऊ॥
तहाँ अष्टभुज नरहरि देवा। सो भरि कनक थार महँ मेवा ॥
भोजन दियो पंथ महँ आई। तहँ प्रकाल अति गयो अघाई ॥

दोहा—पुनि पूछयो परकाल तेहि, तुम कोहौ महिदेव ॥
किमि जान्यो मोहिं क्षुधित अति, करी आय अति सेव॥

नरहरि कह हमहैं तुव नाथा। तोहि रक्षत वागैं तुव साथा ॥
परयो चरण महँ तब परकाला। कह्यो तुमहिं सति दीनदयाला॥
नरहरि भे तब अंतर्द्धाना। कांची किय परकाल पयाना ॥
वरदराज को दरशन लीन्ह्यो। बासरतीनि बास तहँ कीन्ह्यो ॥
पुनि परकाल रंगपुर आये। रंगनाथ लखि अति सुख पाये॥
हरिसों जो धन लियो छँड़ाई। सो सब रंगनगर महँ लाई ॥
कारीगरन बोलाय अपारा। बनवायो पुर सात प्रकारा ॥
कछु धन घट्यो बनावत माहीं। गयो तुरंत नागपुरकाहीं ॥
तेहिं पुर रहे जैन बहुतेरे। तिनके भवन माहँ चलि हेरे ॥
पारसनाथ केरि मनहारी। रही कनक मूरति अति भारी ॥
बरबस तेहिं उठाय परकाला। ल्यायो रंगनगर तेहिं काला ॥

सोइ मूरतिको सोन कटाई । दीन्ह्यों कारीगरन बँटाई ॥
दोहा—होत भये पूरे जबै, पुरके सात प्रकार ॥
तब परकाल उदार अति,मन महँ कियो विचार॥११॥
कारीगर कीन्ह्यों अति कामा । इनको दीजै कौन इनामा ॥
अस विचारि कावेरी तीरा । बैठ्यो सो प्रकाल मतिधीरा ॥
हरिसों कह्यो पुकारि पुकारी । रंनगाथ सुनु विनय हमारी ॥
कारीगरन मुक्ति प्रभु दीजै । नातौ प्राण हमारे लीजै ॥
प्रभु प्रसन्नह्वै शिलिपन काहीं । पठयो सबन धाम निजमाहीं ॥
जैन जाय निज भूप पुकारे । हरचौ प्रकालहि प्रभुहि हमारे॥
राजा तुरत प्रकाल बोलायो । जैनिन सों संवाद करायो ॥
लियो प्रकाल जैनमत जीती । तब राजा कीन्ह्यो अति प्रीती॥
भो प्रकाल को शिष्य भुवाला ।नास्तिक भे आस्तिक तेहिकाला
रंगनगर परकाल सिधारे । कियेवास चिरकाल सुखारे ॥
प्रभु शासन लहि पुनि परकाला । भद्राश्रम गमन्यो तेहिकाला ॥
परकाल समाधि लगाई । बैठ्यो रामचरण मन लाई ॥
दोहा—करि समाधि बहु काल लगि, भक्तराज परकाल ।
ब्रह्मरंध्रह्वैप्राणतजि, गयो जहाँ रघुलाल ॥ १२ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अथ गोदाअंबाकी कथा ॥

दोहा—विष्णुचित्तिकी कन्यका, गोदाअंबा नाम ।
तिनको मैं इतिहास अब, वर्णनकरौं ललाम ॥ १ ॥
विष्णुचित्तिको तुलसी बागा । तामें कियो परम अनुरागा ॥
तुलसी सींचतही इक काला । मिली कन्यका रूप रसाला ॥
लखि कन्यका भयो संदेहा । दयालागि ल्याये निजगेहा ॥

रातिस्वप्नमहँ तेहि भगवाना । कन्याको सब भेद बखाना ॥
जब वराहवपु धरणि उधारयो । तब धरणी मोहिं वचन उचारयो
पूजा तुमहिं कौन प्रियलागै । केहिविधि तुमहिंदासअनुरागै॥
तब मैं कह्यो सुमनकी पूजा । ताते म्वहिं प्रिय और न दूजा
करै नामकीर्तन जो मोरा । तापर मम अनुराग अथोरा ॥
ताते भूमि कन्यका भई । तुम्हरे भवन वास मन दई ॥
यह कन्या सेवत जो रहिहौ । तौ तुम अवशिपरमपद लहिहौ
यहिविधि राति स्वप्न जब देख्यो । विष्णुचित्तिबड़भागहिलेख्यो
जातकर्म कन्याकर कीन्ह्यो । दंपति महामोद मन लीन्ह्यो ॥

दोहा—कालपाइ जब कन्यका, भई युवा छविछाइ ।
हरिके हित मालारचै, हरिके गुण गण गाइ ॥ १ ॥

कन्याकर विरचत वनमाला । विष्णुचित्तिलै प्रेम विशाला ॥
रंगनाथके मंदिर जाई । देहिं आपने कर पहिराई ॥
एकसमय गोदा सुकुमारी । तुलसीमाल रची मनहारी ॥
अतिशय सुंदर माल निहारी । लियो आपने शिरमहँ धारी ॥
लैदर्पण देखन मुखलागी । विष्णुचित्ति आये बड़भागी ॥
सुता उछिष्ट देखि वनमाला । विरच्यो दूसर द्रुत तेहिंकाला॥
लै वनमाल रंग गृह गयऊ । निजकरसों पहिरावत भयऊ॥
रंगनाथ प्रभु तब मुसकाई । विष्णुचित्तिको गिरा सुनाई ॥
गोदाकी जूंठी जो माला । सो पहिरावहु म्वहिं यहिकाला
यद्यपि यह वनमाल अनूठी । पैमोहिं प्रिय गोदाकी जूंठी ॥
विष्णुचित्ति सुनि प्रभुकी वानी । अपने मन अतिआनँदमानी ॥
सोइ वनमाल कन्यका सोऊ । प्रभुको अर्पण कीन्ह्यों दोऊ ॥

दोहा—तब भाष्यो प्रभु बैन अस, राखहु सुता निकेत ।
हम व्याहब यह कन्यका, ठानु स्वयंवर नेत ॥ २ ॥

विष्णुचित्ति तब अति सुखपायो । कन्यालै अपने घर आयो ॥
कन्याएक समय पितुकाहीं । वचन कह्यो मोदित मनमाहीं॥
यहिब्रह्मांड माहँ सुनु ताता । केतने दिव्य धाम अवदाता॥
विष्णुचित्ति तब लग्यो सुनावन । जेतने दिव्य धाम हरिपावन॥
श्रीविकुंठमहँ परमउदारा । वासकरैं वसुदेवकुमारा ॥
पुनि आमोद लोक जेहिं नामा । निवसत संकर्षण बलरामा ॥
लोक प्रमोद प्रद्युम्न निवासा । सो मोदहि अनिरुद्ध अवासा॥
श्वेतद्वीपमहँ परमसुजाना । वसैं क्षीरशायी भगवाना ॥
बदरीवन जो धाम विशाला । नरनारायण रहैं कृपाला ॥
नीमषार जो क्षेत्र विख्याता । रहैं योगपति हरि गति दाता॥
मुक्तिनाथ महँ शालिग्रामा । अवध वसे सिय सानुज रामा॥
मथुरामहँ निवसे यदुनंदन । हरत प्रपन्न जनन भव फंदन॥

दोहा—विश्वनाथवपु वसतहैं, काशी महँ भगवान ।
तारकमंत्र सुनायकै, देत जनन निरवान ॥ ३ ॥

अवनी नाथ नाम जिन केरो । किये अवंतीनगरी डेरो ॥
द्वारवती यदुवंश विभूषण । शरणागत वत्सल हत दूषण ॥
नंदनँदन जिनको है नाऊं । निवसत वरसाने नँदगाऊं ॥
वृंदावनमहँ आनँद रासी । निवसत वृंदाविपिनविलासी ॥
कालीदह गोविंद निवासा । गोवर्द्धन गिरिधर करवासा ॥
गिरिगोमंत सौरि प्रभु रहहीं । हरिद्वार यदुपति सुखलहहीं ॥
प्रागराजमहँ वेणी माधो । गया गदाधर पूरित साधो ॥
गंगासागर कपिल अनूपा । नंदिग्राम भरताग्रज रूपा ॥
सीतालषण सहित रघुराई । निवसैं चित्रकूट नितआई ॥
विश्वरूप वस क्षेत्र प्रभासा । कूर्मक्षेत्र महँ कूर्म निवासा ॥
जगन्नाथ नीलाजल माहीं । युत बलभद्र सुभद्र सोहाहीं ॥

सिंहशैल नरसिंह विराजैं। गदानाथ तुलसी वन भ्राजैं ॥

दोहा—श्वेताचलमहँ नरहरी,करैं वास सब काल।
साक्षी नारायण वसैं, क्षेत्रपरात्म विशाल ॥ ४ ॥

धर्मपुरी गोदावरि तीरा। योगानंद वसैं यदुवीरा ॥
कृष्णावेणी तट अस्थाना। वसैं अंधनायक भगवाना ॥
धाम अहे। बल सुपरन गिरिपर। तहँनृसिंहनिवसतभवभयहर॥
पंढरपुरमहँ विठ्ठल स्वामी। कांचीवरद राज खगगामी ॥
शेषाचल महँ व्यंकटनाथा। करैं वास करि जनन सनाथा
यादवगिरि नारायण वसहीं। घटिकागिरि नृसिंह वपुलसहीं॥
सोई कांची नगरी माहीं। पारथ सारथि लसैं सदाहीं ॥
तहँ यथोक्त कारी असनामा। लसै रमापति धाम ललामा ॥
तेहि नगरी महँ नरहरि स्वामी। दक्षिण निवसत अंतर्यामी ॥
पश्चिमदिशा त्रिविक्रम सोहैं। निज छबि सुर नर मुनिमनमोहैं
गृध्रसरोवरके तट आई। वसैं विजय राघव रघुराई ॥
वीक्षारम्य क्षेत्र अस नामा। वसैं वीर राघव छबिधामा ॥

दोहा—त्रोतादारीलसत हैं, रंगसैन भगवान।
गजनगरी गज शोकहर, श्रीहरिको स्थान ॥ ५ ॥

बलिपुरवसैं महाबल नामा। श्रीबलिराग रूप छबिधामा ॥
क्षीरवती तट पुरी गोपाला। राजतहैं तहँ बालगोपाला ॥
क्षेत्रनाम श्रीमुष्ण अतोला। तहांवसैं प्रभुधरि वपुकोला ॥
नगरएक दक्षिण महि तूरा। वसैं कमललोचन सुखपूरा ॥
तहँ कावेरीके मधिमाहीं। दीप एक भासत चौधाहीं ॥
रंगनाथ सोहत भगवाना। दरशन करत मिलत निर्वाना॥
इष्टदेव रघुवंशिन केरे। श्रीवैष्णव तहँ वसत घनेरे ॥
महामनोहर सुंदर रूपा। श्रीभूलीला सहित अनूपा ॥

दक्षिण रामक्षेत्रहै जहँवां। राम जानकी सोहत तहँवां ॥
श्रीनिवास इक क्षेत्र महाना। तहाँ लसैं पूरण भगवाना ॥
सुभग सुवर्ण नगर इक जोई। सुवरण सुख प्रभु निवसतसोई
महाबाहु प्रभु व्याघ्र पुरीमहँ। लसैं चित्रहरि व्योम नगर जहँ

दोहा—क्षेत्रउत्पलावर्तमें, यदुकुल कमल दिनेश।
मणिकोटीमें महाप्रभु,करैं निवास हमेश ॥ ६ ॥

नाम कृष्णपुर सागर तीरा। महाकृष्ण निवसैं यदुवीरा ॥
विष्णुक्षेत्र इक परम विख्याता। वसैं अनंत भक्तिके दाता ॥
कृष्ण क्षेत्र यक साधु परायण। निवसैं तहँ लक्ष्मी नारायण ॥
श्वेत शैल इक वेद प्रमाना। वसैं शांत मूरति भगवाना ॥
अग्निहोत्र पुर परम सोहावन। वसैं तहां सुर प्रिय प्रभुपावन ॥
भार्गवक्षेत्र एक अभिरामा। निवसैं तहां परशुधररामा ॥
इक वैकुंठनगर छविधामा। वसैं तहां प्रभु माधवनामा ॥
क्षेत्र गरिष्ठ विदित चहुँ पाहीं।भक्त सखा तहँ वसैं सदाहीं ॥
चक्र तीर्थ महँ परमप्रकाशी। वसैं सुदर्शन प्रभु छबिराशी ॥
कुंभकोण महँ शारंगपानी। भूतपुरी महँ सोइ छबिखानी ॥
कलुष हरन इक क्षेत्रविख्याता। तहँ प्रभुहैं गजेंद्र गतिदाता ॥
चित्रकूट इक दक्षिण माहीं। तहाँ वसैं गोविंद सदाहीं ॥

दोहा—पुरी उत्तमामें वसैं, नाम अनुत्तम ईश ॥
पद्मविलोचन वसतहैं, श्वेतशैल जगदीश ॥ ७ ॥

परब्रह्म पारथपुर राजै। वृद्धपुरी वृष आश्रय भ्राजै ॥
संगमपुरी असंग मुरारी। शरणपुरी शरण्य सुखकारी ॥
धनुषक्षेत्र जगदीश्वर नामा। कालमेघ मुद्गरपुर आमा ॥
दक्षिण मथुरामें शुभ मंदिर। तहाँ वसैं नामक प्रभु सुंदर ॥
वृषपर्वतमहँ सब सुखमाको। नाम सुपर्व राजहै जाको ॥

वर गुण क्षेत्र महा अभिरामा। नाथ नाम तिनको तहँ धामा॥
कुरकापुरी रमापति राजैं। गोष्ठीपुर गोष्ठी प्रभु छाजैं॥
दर्भसेन महँ सागर तीरा। निवसैं भूमि सैन रघुवीरा॥
धन्वी मंगल पुर सुखदाई। वसैं तहाँ प्रभु कुँवर कन्हाई॥
भँवर क्षेत्र महँ शास्त्र प्रमाना। निवसैं बलशाली भगवाना॥
यक कुरंगपुर अति रमणीया। तहँ प्रभु पूर्ण लसत कमनीया॥
नगर तटी थल सर्वंग नामा। वसैं विष्णु वपु अति अभिरामा॥

दोहा—छुद्र नदीके तीरमें, अच्युत नाम विख्यात॥
नाम अनंतसैन प्रभु, भद्रपुरी अवदात॥ ८॥

यहि विधि विपुल पुण्य थलमाहीं। विग्रह दिव्य विशेष सोहाहीं॥
जे तिनको पूजन जन करहीं। चारि पदारथ सुख उर भरहीं॥
हरिके विग्रह पंच प्रकारा। तिनमें अर्चा सुलभ अपारा॥
दिव्य रूप जे सकल गिनाये। तिनके चरणामृतको पाये॥
भोजन कीन्हे तासु प्रसादा। पावत गति अस श्रुति मर्यादा॥
हरि मूरति जिनकी नहिं प्रीती। तेशठ लहैं भूरि भव भीती॥
यहि विधि सुनि पितु मुखते बानी। गोदा परम मोद उरमानी॥
सब हरिकी मूरति गुणि सांची। गोदा रंगनाथ महँ राची॥
नितही रंगनाथ गुणगावै। नितहीं माल बनाइ पठावै॥
सोवत जागत तेहिं दिन रैना। रंगनाथ दीसत दोउ नैना॥
इक शत आठ दिव्य हरि रूपा। भारतखंडहि परम अनूपा॥
कथा सकल रूपन सुनि सांची। गोदा रंगनाथमहँ रांची॥

दोहा—रंगनाथके चरणमहँ, गुणि गोदाकी प्रीति॥
रंगनाथकी सब कथा,कहन लगे शुभ रीति॥ ९॥

रंगनाथकी गाथा सारी। हम वर्णैं सुनु सुभग कुमारी॥

एक समय तप किय करतारा। भये प्रगट भगवंत उदारा॥
हरि कह का चाहहु मुखचारी। कह विरंचि अस आश हमारी॥
तुमको पूजहिं करिमख भारी। सोपूरण करि देहु मुरारी॥
प्रभु कह यज्ञ करहु चतुरानन। पुण्य क्षेत्र कुसुमित जहँ कानन॥
अस कहि भे प्रभु अंतर्द्धाना। ब्रह्मा रच्यो यज्ञ सविधाना॥
तेहि मखमहँ सुर असुर मुनीशा। आवत भे ध्यावत जगदीशा॥
तेहि मखमहँ अति आनँद छाये। महाराज इक्ष्वाकु सिधाये॥
रंगनाथ मूरति मखमाहीं। पूजत रहैं विरंचि सदाहीं॥
रंगनाथको लखि इक्ष्वाकू। मान्यौ सकल पुण्य परिपाकू॥
कह विरंचिसों दोउकर जोरी। इनके पूजनकी मति मोरी॥
जो मोपर प्रसन्न प्रभु होहू। रंगनाथ दीजै करि छोहू॥

दोहा—तब विरंचि बोल्यो वचन, तप कीजै नरनाह॥
तब अधिकारी होहुगे, पूजनके जगमाँह॥ १०॥

सुनि विरंचिके वचन नरेशा। कीन्ह्यो तप सरयूतट देशा॥
ह्वै प्रसन्न विधि अवध सिधाई। दीन्ह्यों रंगनाथ सुख छाई॥
तबते रविकुलके नरदेवा। माँग्यो रंगनाथ कुलदेवा॥
जब रघुनाथ रावणहिं मारी। सीता सहित अवध पगु धारी॥
तिनके संग विभीषण आयो। जान लग्यो लंकहि सुख छायो॥
तब रघुपतिसों विनय सुनाई। तुव बिछोह नहिं मोहिं सहिजाई
निशिचर पतिकी प्रीति विचारी। रंगनाथको दियो खरारी॥
धन्य भाग्य गुणि निशिचर नाथा। लंकहि चल्यो वंदि रघुनाथा॥
जब कावेरी तटमहँ आयो। तहँ कछु नेम विभीषण ठायो॥
नेम समापत करि असुरेशा। चलन लग्यो जब अपने देशा॥
रंगनाथको लग्यो उठावन। उठे उठाये नाहिं जगपावन॥
जब शोकितह्वै रोवन लाग्यो। निशिचर नाथ महादुख पाग्यो॥

दोहा—तब अकाश वाणी भई, सुनहु निशाचर नाथ ।
हम याहीथल महँ रहब,अब न चलब तुव साथ॥११॥
यही भूमि मोको अतिप्यारी । यहि थल महँ रुचि रहनहमारी ॥
लंकाते तुम रोजहि आई । मेरो पूजन करहु सदाई ॥
जब तुम सुमिरण करिहौ मोहीं । तब मैं प्रगट होब हठि तोहीं ॥
प्रभुको शाशनमानि विभीषन । लंकहि गयो सुमिरि आनँदघन॥
रोजहि पूजन करहिं सिधारी । रंगनाथ पद करि रति भारी ॥
वसि कावेरीके तट माहीं । रंगनाथ पालत जग काहीं ॥
रचो विश्वकर्मासो मंदिर । परम प्रकाशित मानहुँ चंदिर ॥
अति ऊंचे हैं सात प्रकारा । तहाँ वसैं हरिभक्त अपारा ॥
कथा रंगनायक सुनि गोदा । मान्यो मनमहँ परम प्रमोदा ॥
इकसै आठ रूप हरि केरे । रंगहि गुन्यो अधिक सब तेरे॥
गोदा कही पितासों वानी ।मिलहिंमोहिंकिमिजानकिजानी ॥
विष्णुचित्त तब गिरा उचारी । मार्गशीर्ष व्रत करहु कुमारी ॥
दोहा—वृंदावन महँ गोपिका, मार्गशीर्ष व्रत ठानि ।
लह्यो नंद नंदनचरण, भई सकल सुखखानि ॥ १२ ॥
गोदा मार्गशीर्ष व्रत कीन्ह्यों । गान प्रबंध युगल रचि लीन्ह्यों॥
व्रत करि करै मधुर नित गाना । केहि विधि मिलै मोहिंभगवाना
एक दिवस निशिमाहँ कुमारी । सपन माहिं मिलिगई मुरारी ॥
जागि चहूं कित चितवन लागी । लख्योनहरिकहँअतिदुखपागी
तबते बैठत बागत माहीं । सोवत जागत वदत सदाहीं ॥
देखै रंगनाथकहँ सोई । चितवति काल रैन दिन रोई॥
एक समय गे चंदन बागा । हरिको विरह दून तहँ जागा ॥
तासु सखी इक विप्रकुमारी । आई चतुर चारु वपुधारी ॥
पूंछ्यो ताहि सखी दुख कैसो । होइ यथावरणो मोहिं तैसो ॥

तब गोदा अस गिरा सुनाई । नारायण सपने महँ आई ॥
मिले मोहिं दुरिगे पुनि सजनी । तबते कल न परतिदिनरजनी
विप्रसुता तहँ कह तेहिपाहीं । बहुत रूप हरिके जगमाहीं ॥
दोहा—कौन रूपमें रावरी, उपजीहै अति प्रीति ।
सो देखराऊं चित्र लिखि, जातेहोइप्रतीति ॥ १३ ॥
असकहि सखी उतारन लागी । हरिके सकल रूप रति पागी ॥
लिखत लिखत जब रंगनाथकी । लिखत भई तसवीर हाथकी ॥
तेहि लखि गोदा गई लजाई । बोली मंद मंद मुसकाई ॥
यह छलिया सपने मिलि मोसों । गयो पराइ कहौं सति तोसों ॥
सखी कह्यो सुनु गोदा प्यारी । सखि जो ह्वैहैं सत्य तिहारी॥
रंगनाथ कहँ तोहिं मिलैहौं । तोर मनोरथ पूर करैहौं ॥
तब गोदा बोली करजोरी । अब जीवन गति तुव कर मोरी
जाय रंग मंदिर महँ प्यारी । कहहु पियहि जस दशाहमारी
गोदा वचन सुनत मनभाई । चली रंगमंदिर अतुराई ॥
प्रथमहिं गई मनोहर बागा । रह छबिवंत वसंत सुलागा ॥
तहँ देख्यो इक कौतुक प्यारी । सुंदर फूल सेज सुकुमारी ॥
विरहाकुल श्रीपति तेहि माहीं । लोटिरहे इक पल कल नाहीं ॥
दोहा—विप्रसुता तब चलि निकट, पूछ्यो मधुरिपु काहिं ॥
कौन अहौ तुम हेतुकेहि, लोटहु इत महिमाहिं॥१४॥
कह्यो वचन तब प्रभु तेहिटेरी । गोदाविरह दशा यह मेरी ॥
तुमहौ कौनि कहौ केहि हेतू । मोहिं पूछहु यहिविधि छबिसेतू॥
हौंतो रंगनाथ हेप्यारी । निज कारण तुम देहु उचारी ॥
तब अनुग्रहा सखी सयानी । बोली विहँसि काज सिधि मानी॥
मोहिं गोदा तुव पास पठाई । तासु दशावर्णन इत आई ॥
गोदा नाम सुनत उठिनाथा । बोले वचन जोरि युगहाथा ॥

मैं हूं ध्यान करतरह ताई। जासु नाम तैं दियो सुनाई॥
कहु कहु गोदाकी कुशलाई। कौन हेतु तोहिं इतैपठाई॥
सखीकही तब सुंदर वानी। पहिरि मालती माल सयानी॥
सोइ मालिका तुमहि पठवाई। लेहुनाथ मैंही इत ल्याई॥
वचन कह्यो कछु सुन यदुराई। स्वप्नमाहँ मिलि गये पराई॥
ऐसो कोउ न करत कोहु काहीं। बाँह पकर त्यागत प्रभुनाहीं॥
दोहा—जबते निरख्यो रूप तव, तबते कल मोहिं नाहिं॥
तुम्हरे विरह विषाद वश, निशिदिन शोचत जाहिं १८
सुनहुनाथ ताकर असहाला। गोदा तुमविन बहुत विहाला॥
निशिदिन तुमहिं मिलन अभिलाषै। तुमविनआशऔरनाहिंराखै॥
चौकविरचि मोतिनकी चारू। करति मिलनहितशकुनविचारू
सोवति नहिं जोवति दिनराती। खोवति भोजन पान अघाती॥
जो ताकर चाहहु प्रभु प्राना। तौद्रुत मिलहु बात नहिं आना॥
सीता हित बांध्यो तुमसागर। हन्यो दशानन तेज उजागर॥
शिशुपालादिक नृपमदमोरी। लायो रुक्मिणि करि बरजोरी॥
मेरी वार गही निठुराई। काहे नाथ दया विसराई॥
द्रौपदिगज गोपी मुनिनारी। राखिलियो जे तुमहिं पुकारी॥
अब जो मोहि ग्रहण नहिंकरिहौ। तौ यह अयश नाथ कहँ धरिहौ॥
सखी वचन सुनि सुखी मुरारी। कह्यो वचन सुनु दशाहमारी॥
गोदाकी जब सुधि मोहिं आवै। तबते और न कछू सोहावै॥
दोहा—ज्यों चकोर चंद्रहि चहै, ज्यों चातक घनश्याम॥
त्यों गोदहि हम चाहते, तेहिंविन मोहिं न अराम॥१६॥
असकहि जो माला सखिदीन्ही। सो प्रभु पहिरि कंठमहँलीन्ही॥
कह्यो वचन सुनु सखीसुजानी। प्राणराखिलिय माला आनी॥
जो हम आजु माल नहिं पावत। तौ तनुते जियरो कढ़ि जावत॥

असकहि प्रभु मूंदरी उतारी । तैसहि कमलमाल निज प्यारी ॥
उभयवस्तु दीन्ह्यों सखिहाथा । बोले वचन रंगपुर नाथा ॥
उभयवस्तु दीन्ह्यों तेहि जाई । और दियो अस वचन सुनाई ॥
कुरकानगर माहँ याहिवारा । होइ स्वयंवर अवशिहमारा ॥
तहँ ऐहैं मम सब अवतारा । सुरमहर्षि देवर्षि अपारा ॥
जुरि हैं मेरे भक्त घनेरे । तेहिं करमाल परी गर मेरे ॥
सुनि हरिवचन सखी सुखपाई । गोदाके समीप द्रुत आई ॥
दईमाल मुँदरी हरिकेरी । वचन कह्यो सब जो हरिटेरी ॥
गोदा सुनत प्राण इव पायो । सखीचरण पुनिपुनि शिरनायो ॥

दोहा–पांचसात बीते दिवस, विष्णुचित्त मतिवान ॥
लैदुहिता कुरकानगर, कीन्ह्यों तुरत पयान ॥ १७ ॥

बल्लव देव भूप तहँ केरो । चल्यो संगलै सुदल घनेरो ॥
विष्णुचित्त कुरकापुर माहीं । पहुँचे जब लै दुहिता काहीं ॥
तब शठकोप स्वामि तहँ आये । औरहु सब आचार्य सिधाये ॥
विष्णुचित्त शठकोप बोलाई । दियो सकल वृत्तांत सुनाई ॥
तब शठकोप नरेश बोलायो । वल्लभदेवहि वचन सुनायो ॥
तुम अरु सुमति मधुर कविराजू। साजहु सकल स्वयंवर साजू ॥
सुनिशठकोप वचन कविभूपा । रच्यो स्वयंवर साज अनूपा ॥
कनकमंच बहु रचे उतंगा । तने वितान प्रमाण अभंगा ॥
फरसैं फावि रहीं अतिचारू । लागिरही तहँ विविध बजारू ॥
बिछे जरकसी दिव्य बिछौना । चारिखंभ सोहत चहुँकोना ॥
तहँ महर्षि देवर्षि सिधारे । औरहु सुर मुनि सकल सुखारे ॥
भयो भूपमंडल अतिभारी । जगकी जन जमाति पगुधारी ॥

दोहा–यथायोग्य बैठत भये, सुर नर मुनि महिनाथ ॥
यथायोग्य परणामकिय, जोरि जोरि युगहाथ ॥ १८ ॥

आचारज निज निज निरमाने। करहिं प्रबंध गान सुखमाने॥
तहँइकसत अरु आठ प्रमाना। आये दिव्य रूप भगवाना॥
इक इक मंचन पर सब बैठे। गोदा छबि पयोधि महँ पैठे॥
आये रंगनाथ भगवाना। उच्चमंच बैठे सविधाना॥
लखिलखिहार मूरति मनहारी। सुर नर मुनि सब भये सुखारी॥
तेहि औसर शठकोप सुजाना। विष्णुचित्तसों वचन बखाना॥
बोलवावहु गोदा कहँ आसू। होय स्वयंवर मोद प्रकासू॥
विष्णुचित्त गोदहि बोलवाये। बहुविधि भूषण वसनसजाये॥
पिता कह्यो दुहितासों वानी। जापै तेरी मति हुलसानी॥
ताके गल मेलहु वनमाला। आयो अबहिं स्वयंवर काला॥
सखी नाम जाको अनुग्रहा। तेहिं शठ कोप वचन अस कहा॥
यकसै आठ विष्णु वपु जेहैं। कहहु नाम गुण तुम तिनकेहैं॥

दोहा—तब अनुग्रहा करपकरि, गोदाको तेहिंकाल॥
हरिके वपुके नाम गुण, वर्णन लगी विशाल॥ १९॥

इकसैआठ कृष्णवपु जेते। नामधाम गुणवर्ण्यों तेते॥
अनुग्रहा कर गहि गोदाको। चलीदेखावन हरि वपु भाको॥
जाके मंचनिकट चलिजावै। ताके गुण अरु रूप सुनावै॥
जातजात यहि विधि मनभाई। रंगनाथ ढिग पहुँची जाई॥
सबरूपनते गोदा मनमें। रंगनाथ छबि छाकी क्षणमें॥
लै वनमाल रंगपति कंठा। डारयो गोदा भरिउत्कंठा॥
जोहि जनन जमाति जय कीन्ही। देवन दीह दुंदुभी दीन्ही॥
भई गगनते फूलन वर्षा। उपज्यो सुर नर मुनि मन हर्षा॥
विष्णुदिव्य वपु निरखि अनूपा। आश्चर्यितभे सुर नर भूपा॥
तेहिं क्षण ब्रह्मा सभासिधारे। रंगनाथभे गरुड़ सवारे॥
सूरज चंद्र चमर कर लीने। पंखा हांकत पवन प्रवीने॥

शंभु इंद्र धारे कर सोटा। लियो कुबेर छत्र सुख मोटा॥
दोहा–सुर किन्नर गंधर्व बहु, साजे सकल विमान॥
कुरकानगर भयो तहां, श्रीवैकुंठ समान॥ २०॥
विष्णुचित्त कहँ धनि धनि कहहीं। जासु प्रभाव महासुख लहहीं॥
विष्णुचित्त तब कह करजोरी। रंगनाथसों कह्यो बहोरी॥
श्रीशठकोप भवन सउछाहा। करहु सुताकर नाथ विवाहा॥
एवमस्तु कह रंग अधीशा। शठरिपु मंदिर गयो मुनीशा॥
तहँ विवाहकी करी तयारी। सोन वदन इक जाइ उचारी॥
तहँ देवर्षि महर्षि अपारा। अरु आचारज सकल उदारा॥
सिगरे व्याह साज सब साजे। भवन भवन बाजे बहुबाजे॥
रंगनाथकी सजी बराता। कोवरणै विभूति अवदाता॥
चलीवरात वरणि नहिं जाई। दशौदिशनि वाजन धुनिछाई॥
ब्रह्मा वेद पढ़त चलि आगे। पैठे जाइ द्वार सुख पागे॥
विश्वकर्महिं हरि कह्यो बुलाई। देहु अनूपम नगर बनाई॥
विश्वकर्मा तुरंत तेहिंकाला। रच्यो विकुंठ समान विशाला॥
दोहा–सोपुर छबि केहि भांतिते, मो मुखजाइ बखानि॥
जहँ व्याहन आवत भये, दूलह शारंगपानि॥ २१॥
नचहिं नवीन अप्सरा नाना। बहु गंधर्व कराहिं गुणगाना॥
मंद मंद तहँ चली वराता। पुरवासिन उर सुख न समाता॥
देखहिं धाय नगर नर नारी। कोउ देखनहित चढ़ीं अटारी॥
कढ़ी वरात राजपथह्वैकै। सुर नर मुनि मोदित भे ज्वैकै॥
आई जबै वरात दुवारा। कहि नसकै सुखवदन हजारा॥
माथे मोर पीतपट जामा। दूलह रंगनाथ छबिधामा॥
तहँ मोतिनकी चौक पुराई। वेद पढ़ैं महर्षि समुदाई॥
बैठे रंगनाथ तहँ आई। देवसमाज सहित छबिछाई॥

तहँ ब्रह्मा अतिशय अनुरागे। द्वार चार करवावन लागे॥
मणि गण देव समूह लुटावैं। सुरतरु कुसुमनकी झरिलावैं॥
हरिछवि छके नगर नर नारी। कोउ न लेत मन सुरति बिसारी॥

दोहा—द्वारचार जब ह्वैगयो, गेजनवास बरात॥
पठयो भोजन पान बहु, विधि गोदाको तात॥ २२॥

जौनदेवकी रहि रुचि जैसी। विष्णुचित्त पूरण किय तैसी॥
आठौं सिद्धि निद्धि नव जेती। विष्णुचित्त गृह निवसीं तेती॥
तेतिसकोटि देव समुदाई। औरहु जन अवली जो आई।
ते सब खानपान सन्माना। पूरित भे पाये पकवाना।
विष्णुचित्त गृह तव करतारा। आइ सबनसों वचन उचारा।
रंगनाथकी लगन विवाहा। यहिक्षणहै अब करहु उछाहा।
तब शठकोप आदि मुनिराई। गेजनवास अतिहिं अतुराई।
रंगनाथसों विनती कीन्ह्यों। सुर समान लै प्रभु चलि दीन्ह्यों।
विष्णुचित्त गृह जब प्रभु आये। सनकादिक स्वस्तेन सुनाये।
कहि न जाइ मंडपकी शोभा। जेहि लखिसुरसमाजमन लोभा
फैली मणि दीपन उजियारी। चहुँदिशिरत्न झालरैं भारी
पुरटपात्र मणिजटित सोहाये। पीठि जवाहिर युगल धराये।

दोहा—विष्णुचित्तको करकमल, कमलापति गहिलीन॥
सुरसमाजलै मंडपहि, शुभ प्रवेशप्रभुकीन॥ २३॥
तहँ ब्रह्मर्षि सुरर्षि अरु, महामहर्षि उदार॥
पढ़ैंवेद चहुँ वोर सब, करवावैं विधिचार॥ २४॥

विष्णुचित्त अति आनँद छायो। प्रभुकहँ रत्न पीठ बैठायो।
दक्षिण दिशि गोदातहँ बैठी। मनहुँ अनंद उदधि महँ पैठी।
तहाँ बृहस्पति सुदिन सुनायो। विष्णुचित्त कर कुशा धरायो।
विष्णुचित्त कर कुश जल धरिकै।पुनि गोदाको पाणि पकरिकै।

सदा प्रसन्न रंगपति रहहीं। मोहिं सदा अपनो जन कहहीं॥
विष्णुचित्त अस पढ़ि संकल्पा। प्रभुको करगहि मोद अनल्पा॥
गोदापाणि नाथके पानी। धरिदीन्ह्यों ढारत दृगपानी॥
पाणिग्रहण रंगपति कीन्ह्यों। स्वस्तिस्वस्ति अस मुख कहिदीन्ह्यों
ताही समय गगन महि माहीं। माची दुंदुभि ध्वनि चहुँ घाहीं॥
मच्यो भुवन महँ जयजय कारा। सुमन वृष्टिसुर करहिं अपारा॥
सुर नर मुनि भाषहिं बहुवारा। धनि धनि विष्णुचित्त संसारा॥
जाके हेतु प्रत्यक्ष सोहाये। रंगनाथ व्याहन इतआये॥

दोहा—ब्रह्मा शिव इंद्रादि सुर, प्रगट भये कलिकाल॥
रंगनाथको देखिकै, हम सब भये निहाल॥ २५॥

रंगनाथ गोदाकर गहिकै। दियो सात भाँवरी उमहिकै॥
हवन कियो पुनि पावक माहीं। विष्णुचित्त कह पुनि प्रभुपाहीं॥
दाइज लीजै सर्वस मेरौ। मममन नाथ करहु पद चेरौ॥
एवमस्तु कहि दीनदयाला। कोहवर गये जुरी जहँ बाला॥
कोउ पीतांबर ऐचहिं नारी। कोउ प्रभुकहँ देती बहु गारी॥
गोदा रंगनाथ मुखमाहीं। मेलतिहै लहकौर तहाहीं॥
रंगनाथ गोदाके आनन। मेलहिं कौर सुखी तनभानन॥
सो सुखइक मुख किमि कहिजाई। बार बार तिय लेहिं बलाई॥
यहिविधि भयो नाथ कर व्याहू। गे जनवास भुवनके नाहू॥
भये भोर शठकोप सिधारा। कीन्ह्यो सकल देव सतकारा॥
रंगनाथ कहँ घरपहँ ल्यायो। विविध भांति व्यंजन बनवायो॥
करवायो बहुभाँति कलेवा। विविध भांति व्यंजन अरु मेवा॥

दोहा—बनवायो पुनि विविध विधि, देवनकी जेउनार॥
सुर मुनि सब भोजनकिये, जाको जौन अहार॥ २६॥

जब ह्वै गई देव जेउनारा। लागि गयो सुंदर दरबारा॥

सुर मुनि मनुज महीप अपारा। बैठे सकल सजे शृंगारा॥
तब शठकोप विष्णुचित दोऊ। औरहु आचारज सब कोऊ॥
अनुपम भूषण वसन मँगाये। यथायोग्य सबको पहिराये॥
कीन्ह्यों विविध भांति सतकारा। सकल लहे आनंद अपारा॥
विष्णुचित्त कहँ सबै सराहैं। असकोउ जन जगतीतल नाहैं॥
पुनि दरबार भई बरखासू। गये बराती सब जनवासू॥
चौथे दिवस रंगपति आये। विधिचौथी कर चार कराये॥
तेहि निशि रंगनाथ भगवाना। विष्णुचित्तके विमल मकाना॥
गोदा सहित शयन प्रभुकीन्हे। हास विलास रास रस भीने॥
चारिदंड निशिरहि जब बांकी। तबशठकोपादिक सुखछाकी॥
आचारज हरि भवन दुवारे। प्रभुहि जगावन सकल सिधारे॥

दोहा—उक्तियुक्ति बहुभांतिकी, रचि रचि छंद प्रबंधु।
भये जगावत गायकै, पूरणकरुणासिंधु॥ २७॥

रंगनाथ गोदा दोउ जागे। भवन गवन करिवो अनुरागे॥
विष्णु चित्त शठकोपादिक सब। विदातयारी करतभये तब॥
सुभगपालकी रत्नजालकी। आवतभे तहँ भुवनपालकी॥
विष्णुचित्त दंपति बड़भागी। रंगनाथचरणन अनुरागी॥
रंगनाथ अरु गोदाकाहीं। दियो चढ़ाय पालकी माहीं॥
करिपरिछन आरती उतारी। कीन्ह्यो रुदन रीतिसंसारी॥
विदा कियो पुनि रंगनाथको। किय प्रणाम युगजोरि हाथको
रंगनाथ अरु गोदा प्यारी। चढ़ि पालकि जनवास सिधारी
तहँते भे दोउ गरुड़ सवारा। छाइ रही दुंदुभी धुकारा॥
शिव नंदी मराल मुखचारी। किय ऐरावति शक्र सवारी॥
सिखीस्वामिकार्तिक शुभ वेशा। भो अरूढ़ पालकी जलेशा॥
पुष्प विमान धनद असवारा। चढ्यो महिष यमराज उदारा॥

दोहा—औरहु सिगरे देवता, चढ़ि चढ़ि निज निजयान ।
रंगनाथ संग रंगपुर, कीन्हे मुदित पयान ॥ २८ ॥
सकल भक्त अनुरागी । लीन्हे छत्र चमर बड़भागी ॥
यहिविधि चली वरात सुहावन । गोदासों बोले जगपावन ॥
वनउपवन गिरि ग्राम सुखारी । मंजु सरित सर देखहु प्यारी ॥
यहि थल मोर भक्त परकाला । मोहि लूटि लीन्ह्यों इक काला॥
दिय साधुन भोजन करि चोरी। राख्यो भवन वस्तु नहिं थोरी॥
यहिविधि देखरावत गोदाको । गयो रंगपुर पति कमलाको ॥
करिकरि रंगनाथ परणामा । गये देव सब निज निज धामा ॥
गोदा संग रंगपतिपावन । षटऋतु कियो विहार सुहावन॥
कछुदिन महँ गोदा सुखभीनी । भई रंगपति अंगहि लीनी ॥
गोदा अंबाको इतिहासा । मैं कीन्ह्यों संक्षेप प्रकाशा ॥
गोदा सरिस भयो कोउ नाहीं । जाके हित कलिकालहु माहीं॥
प्रगट प्रत्यक्ष रमा करनाहा । विष्णु चित्त घर कियो विवाहा॥
दोहा—मनुजलखे प्रत्यक्ष सुर,भो जगरीति विवाह ।
जनि अचरज श्रोता गुणहु, हरि निज जन गुणगाह ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यां कलियुगखंडे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अथ श्रीरामानुजकी कथा ॥

दोहा—श्रोता श्रद्धा सहित सब, सुनहु सुमति दैकान ।
कथा प्रपन्नामृत उदधि, मैं अब करौं बखान ॥ १ ॥
रामानुजको मुख्य चरित्रा । और अचारज कथा पवित्रा ॥
अहै प्रपन्नामृत विस्तारा । जेहिं नब्बे अध्याय उचारा॥
मैंसंक्षेपहि करौं बखाना । पै प्रबंध सम्बन्धन आना ॥
एक समय विकुंठपुर माहीं । शेष सेजपर नाथ सोहाहीं ॥

महा घोर लखि कलियुग काहीं। प्रभु विचार कीन्ह्यो मनमाहीं ॥
केहिविधि मम सन्मुखजन होहीं। ह्वैगे सिगरे नरक बटोही ॥
प्रभुको चिंतत जानि अहीशा । बोल्यो वचन नाइ पद शीशा ॥
का चिंतत हौ प्रभुकर सोगू । कहौ जो होइ कहनके योगू ॥
तब नारायण वचन उचारा । सुनहु वचन मम वदन हजारा ॥
कलिके जीव कहौं केहि भांती । मेरे पुर आवैं सब जाती ॥
तुमहिं विना अस कोउ न देखावै। जो मम सन्मुख जीव करावै ॥
ताते लेहु मही अवतारा । सब जीवन कर करहु उधारा ॥

दोहा—सुनि नारायणके वचन, कियो विनय फणिराज ॥
दीजे दोऊ विभूति मोहिं, तब ह्वै हैं सिधि काज ॥ १ ॥

एवमस्तु तब श्रीपति भाषे । अहिप अवनि आवन अभिलाषे ॥
दै प्रदक्षिणा प्रभुकहँ चारी । लाग्यो चरण जबै महिधारी ॥
तब नारायण वचन उचारे । भक्ति काज अब हाथ तुम्हारे ॥
करियो तस जैसो मन आवै । तुम विन को अज्ञान मिटावै ॥
शंख चक्र आदिक पठवाये । मनुज स्वरूप धारि जग आये ॥
नेसुक जीव इतै भेजवाये । औरन नहिं उपदेश बताये ॥
तुमहुँ मौन धरि रह्यो न ताता । जीवन उपदेश्यो यश माता ॥
सुनि शासन प्रभुको धरि शीशा। एवमस्तु कहि चल्यो अहीशा॥
दक्षिण कावेरी सरि पावनि । भूत पुरी तहँ रही सोहावनि ॥
तेहि नगरी महँ अति मतिधामा । रहद्विज केशव जज्वा नामा ॥
संपाति सकल भवन रह भूरी । कांतिमती तेहिं तिय छवि पूरी॥
पुत्र रह्यो नहिं विप्र दुखारी । सुमिरत नित यदुनाथ मुरारी ॥

दोहा—ह्वै प्रसंग अहिराज प्रभु, वसे गर्भ तेहिं आय ॥
होन लगे तबते पुरी, नित नव मोद निकाय ॥ २ ॥

चैत शुक्ल पंचमि गुरुवारा । कांतिमती तहँ जन्यो कुमारा ॥

केशव जज्वा पुत्र निहारी। दीन्ह्यों दान द्विजनगण भारी॥
केशव जज्वाके गुरुरहेऊ। नाम शैलपूरण जग लहेऊ॥
केशव जज्वा गुरुहि बोलायो। सुतको जातकर्म करवायो॥
छठी भई बरहौं पुनि भयऊ। नाम तासु रामानुज दयऊ॥
भै पसनी पुनि छठयें मासा। बालक बढ़्यो भानुसम भासा॥
संस्कार किय पंच प्रकारा। जान्यो सबै शेष अवतारा॥
पुनि व्रतबंध भयो कछु काला। पढ़्यो चारिऊ वेदविशाला॥
षोड़श वर्ष वैस जब आई। दियो पिता जब ब्याह कराई॥
काल पाइकै पुनि कृत कामा। केशव जज्वा गे हरिधामा॥
प्रेतकर्म पितुको करि दीन्ह्यों। शास्त्रन पढ़न मनोरथ कीन्ह्यों॥
यादव गिरि इक रह्यो गोसाई। पूरण पंडित सुरगुरु नाई॥

दोहा—पढ़न हेतु ताके निकट, रामानुज मतिवान॥
लै पुस्तक करते भये, कांचीपुरी पयान॥ ३॥
न्याय व्याकरण आदि सब, पढ्यो सांग सविधान॥
पुनि वेदांत अरंभ किय, सुमिरत कृपा निधान॥४॥

पढ़त पढ़त बीत्यो कछु काला। तहँको रह्यो जौन महिपाला॥
तासु सुता रहि सुछबि विशाला। ताहि लग्यो इक ब्रह्म कराला॥
राजा यतन अनेकन ओडचो। पैन ब्रह्मराक्षस तेहि छोंड़्यो॥
यादवको तहँ सुन्यो नरेशा। बड़े मंत्र शास्त्री यहि देशा॥
सुता हेतु राजा बोलवायो। शिष्य सहित यादव तहँ आयो॥
रामानुजहु गये सँग ताके। ध्यावत मनहि नाथ कमलाके॥
यादवके ढिग सुता बोलाई। राजा विनय कियो शिरनाई॥
लग्यो ब्रह्मराक्षस दुहिताको। छूटत नाहिं यतन करिथाको॥
यंत्र मंत्र कर देहु छोड़ाई। तुमहिं छोंड़ि नहिं और उपाई॥
यादव ब्रह्मराक्षसहिं देख्यो। अतिशय प्रबल ताहि मन लेख्यो॥

पढ़ि पढ़ि मंत्र लग्यो द्विज झारन। भई न सुता विथा कछु वारन॥
प्रेत बैठ तब हँसत ठठाई। यादव ओर पाउँ पसराई॥
दोहा—तबहिं ब्रह्मराक्षस कह्यो, यादवसों असवैन॥
लाखयतन द्विज तुम करो, तुमसों मोहिं कछु भैन॥८॥
अस अस मंत्र शास्त्रकेज्ञातन। हमउड़ायदेते हैं बातन॥
पूर्वजन्मकी खबरि तुम्हारी। सिगरी जानी अहै हमारी॥
गोहर है तुम पूरुव जन्मा। वसे विमौट येक कहुँ बनमा॥
कढेताहि मारग कोउ साधू। जिनको हरिपर प्रेम अगाधू॥
निर्मल जल तहँ देखि तलाई। भोजन रच्यो तुरंत नहाई॥
करि पूजा प्रभुकी सुखदाई। भोजन कीन्ह्यों भोग लगाई॥
भोजन करि पतरीसर मोटे। फेंकि दियो तेरोइ विमोटे॥
साधु जवै मारग गहि लीन्हे। तबतैं कढि भोजनसोइ कीन्हे॥
साधु जूठ भोजन परभाऊ। भये आय यादव द्विजराऊ॥
साधु उच्छिष्ट पुण्य अतिवाढ़ी। विद्या त्वहिं आई अतिगाढ़ी॥
भयो ब्रह्मराक्षस जेहिं हेतू। सो मैं कहत सुनहु मतिकेतू॥
मैं द्विज रह्यो सहित निजनारी। कीन्ह्यों यज्ञ जगत महँभारी॥
दोहा—भूलि गयो मोहिं मंत्र तब, भयो कृपाकर लोप॥
सोइ पापतें मैं भयो, ब्रह्म प्रेत भरिकोप॥९॥
जरन लग्योनिशि दिवस शरीरा। भ्रमत रह्यों भूमहँ सहिपीरा॥
भ्रमत भ्रमत इक समय तहांहीं। आयो कांची नगरी मांहीं॥
नृपके सुता काहँ मैं लाग्यौ। तबते कछुक मोर दुखभाग्यो॥
यंत्री मंत्री सबै ह जारन। करिनहिसके मोहिं कछु वारन॥
तुमहुँ जाहु द्विज अब घरमाहीं। हम छोंड़ब कैसेहु यहि नाहीं॥
यहि छोंड़नकी एक उपाई। सो हम तुमको देत बताई॥
तुम्हरे शिष्यन महँ इक अहई। मोहिं छोंडाय देहि जो चहई॥
अपनो चरणोदक मोहिं देवै। अपनो शिष्य मोहिं करि लेवै॥

नाम तासु रामानुज जानो। तुम्हरे सँग महँ कियो पयानो॥
यादव भयो चकित सुनि ऐसो। लै दुहिता कहँ भूपति तैसो॥
रामानुजके चरणन माहीं। डारि दियो नृप दुहिता काहीं॥
कह्यो नाथ यह रक्षि कुमारी। लग्यो ब्रह्मराक्षस यहि भारी॥
दोहा–रामानुज स्वामी तबै, निजपद कंज पखारि॥
दियो सुताके वदन महँ, एक बारहीं डारि॥ ७॥
सुता शीश निजपद धरि दीन्ह्यों। जाहु जाहु अस शासन कीन्ह्यों॥
दिय अष्टाक्षर मंत्र सुनाई। तरयो प्रेत गो स्वर्ग सिधाई॥
यह चरित्र लखि यादव सोई। गयो लजाइ मौन भो रोई॥
भूपति सुतै अरोग निहारी। पूज्यो रामानुजै सुखारी॥
यादवहूंको किय सतकारा। यादव लौटि भवन पगुधारा॥
तब रामानुज अति सुखछायो। पूजा माहिं जौन धन पायो॥
सिगरो यादव कहँ दैडारयो। तदपि न यादवशोचविचारयो॥
रामानुजसों बाँध्यो वयरा। ऊपर सरल पेट महँ कयरा॥
रामानुज मौसीके बेटा। आये करन भ्रातसों भेटा॥
नाम तासु गोविंदाचारज। सकल साधु जन कारककारज॥
यादवके ढिग तुरत सिधाई। रामानुजहि मिले शिरनाई॥
पढ़त वेदांत निरखि निज भ्रातै। आपहु पढ़न लगे वेदांतै॥
दोहा–एक समय श्रुति अर्थको, यादव करयो विरुद्ध।
रामानुज बोलत भये, गुरु यह है नहिं शुद्ध॥ ८॥
तब यादव कह कुपित अपावन। भये तुमहिं गुरु लगे पढ़ावन॥
यादव कियो आंखि अरुणारी। रामानुजको दियो निकारी॥
रामानुज अपने घर आई। चिंतत बैठ शास्त्र समुदाई॥
पढ़न हेतु गुरु गृह नहिं गयऊ। यादव महाकोप उर ठयऊ॥
कह्यो आपने शिष्य बोलाई। रामानुज मम रिपु दुखदाई॥

मोहिंसों पच्यो वैर किय मोंसो। बालकसों मैं पाल्यो पोसो॥
मेरो मत अद्वैत अखंडा। ताहि करन चाहत शतखंडा॥
ताते अस सब करहुं उपाई। रामानुज मारहु जेहि जाई॥
हम उपाय ऐसी करि राखी। तुमसों सकल देतहैं भाखी॥
चलिये मज्जन मकर प्रयागै। वेणीमहँ वोरिहैं अभागै॥
शिष्य कह्यो शंका नहिं कीजै। रामानुजहि मरो गुण लीजै॥
अस कहि रामनुज गृह आई। कोउ शिष्य तेहिं गयो लेवाई॥

दोहा—यादव लखि रामानुजै, कियो प्रशंसा भूरि।
मकर माघ स्नान हित, चलहु प्रयागै दूरि॥ ९॥

रामानुज जननी ढिग आई। प्राग जानि हित माँगि विदाई॥
करन प्रयाग मकर स्नाना। यादवके सँग कियो पयाना॥
आये जब यहि विंध पहारा। लहि एकांत गोविंद उदारा॥
रामानुजको सकल बुझायो। यादव तोहिं मारन लै आयो॥
रहियो सावधान महँ भाई। यादवसों बचिहौ वरियाई॥
यह सुनि रामानुज तेहि ठामा। बैठ रह्यो तरुतर मतिधामा॥
यादव जात रह्यो कछु आगू। मिल्यो जाइ गोविंद बड़भागू॥
यादव भाष्यो गोविंदकाहीं। रामानुज आयो कस नाहीं॥
गोविंद कह्यो मोहिं भ्रम भयऊ। रामानुज आगे कढ़ि गयऊ॥
ताते हम तुमको मिलि लीन्ह्यों। रामानुजकरखोजनकीन्ह्यों॥
यादव तब शिष्यन दौरायो। रामानुजको खोज करायो॥
मिल्यो न रामानुज तेहि कानन। जान्यो खाय लियो पंचानन॥

दोहा—रामानुजको मृतक गुणि, यादव अति सुखमानि।
गंगामज्जन मानिफल, सोये पग पटतानि॥ १०॥

यादव शिष्य समेत प्रयागा। मज्जनहेतु गयो छलपागा॥
विजन विपिन रामानुज जाई। तरुतर बैठ्यो शंका छाई॥

मम आगे पाछे कोउ नाहीं। काहकरैं केहि विधि कहँ जाहीं
असविचारि बैठ्यो करि ध्याना। सँकरेके सहाय भगवाना॥
निजजन दुख करुणानिधि देषी। रहि न गयो उठि चले विशेषी
आये कमला सहित मुरारी। व्याध व्याधिनी कर वपु धारी
जहँ रामानुज बैठ यकंता। तहँह्वैकढ्यो रमाकर कंता॥
कमठातीर तेग कर धारे। दंपतिरामानुजहि निहारे॥
रामानुज बोले अस ताते। व्याध नारि युत कहँ तुम जाते॥
कह्यो व्याध रामानुज काहीं। सत्यव्रतै क्षेत्र हम जाहीं॥
तुमकोहौ अकेल वन बैठे। मानहुशोक समुद्रहि पैठे॥
तब रामानुज वचन उचारा। कांचीपुर महँ भवन हमारा॥

दोहा-मकर प्रयाग नहानहित, आये तजि गृहकाहिं॥
राह भूल बैठे इतै, साथीपावत नाहिं॥ ११॥

अब नहिं मकर प्रयाग नहैहैं। मिलै सहायक तौ घरजैहैं॥
व्याध कह्यो कछु ज्ञान नतेरे। क्षेत्र सत्यव्रत कांची नेरे॥
चलु हम त्वहिं कांची पहुँचैहैं। बहुरि सत्यव्रत क्षेत्रहि जैहैं॥
व्याधा वचन सुनत द्विजराई। चल्यो व्याध सँग आनँद पाई॥
कोश प्रयंत गये दोउ जबहीं। रविभे अस्त निशा भै तबहीं॥
तब यक तरुतर कीन्ह्यों शयना। व्याधिनि जगी अर्द्धगै रैना॥
कह पियसों मोहिं लगी पियासा। ल्यावहु जल तौ जीवनआसा॥
व्याधा कह्यो कूपहै दूरी। नहिं जैहौंलागति भयभूरी॥
तब रामानुज कह अस वानी। भोरभये देहैं हम पानी॥
यहिविधि तिनहिं भयो भिनसारा। तब व्याधा अस वचन उचारा॥
रातिदेन कहि राख्यो पानी। देहु कूपते तुरतहि आनी॥
तब रामानुज जलहित गयऊ। कूपमाहिं जब पैठत भयऊ॥

दोहा–व्याधा व्याधिनि दोउ तहँ, कूपसमीप सिधारि ॥
व्याध कह्यो द्रुत देहु जल, प्यासनमरतीनारि ॥१२॥
रामानुज जल अंजलि भरिके। दियोपियाइ दुहुँन श्रम करिकै॥
पुनि दूसरि अंजलि भरिलाये। सोउव्याध दंपतिहि पियाये ॥
पुनि तीजी अंजलि भरिनीरा। दियो पियाइ जानि अतिपीरा॥
चौथी अंजलि भरनगये जब। दंपति अंतर्द्धान भये तब ॥
निकसि कूपते लख्यो मुनीशा। अपनो देश दृगनमें दीशा ॥
तब आश्चर्य गुन्यो द्विजराई। कोमोहिं देश दियो पहुँचाई ॥
विस्मय करत गये पुरमाहीं। पूछ्यौ तहँके वासिनकाहीं ॥
देहु बताय कौन यह ग्रामा। ते सब कह कांचीअसनामा ॥
कांचीपुरी जानि मनमाहीं। रामानुज वंद्यो हरिकाहीं ॥
पुनि अस मनमहँ कियो विचारा।मेरो जानि खँभार अपारा ॥
करुणा कर देवकी कुमारा। पहुँचायो क्षणकोशहजारा ॥
दोहा–पुनि प्रमुदित ह्वै निजभवन, गवनकियो द्विजराइ ॥
यादवको वृत्तांत सब, मातहि गये सुनाइ ॥ १३ ॥
पुरवासी रामानुज देखी। पुनर्जन्म लीन्ह्यो जिय लेखी ॥
माता रामानुजहि बोलाई। कह्यो वचन यहिभांति बुझाई॥
क्षेत्र सत्यव्रत महँ मतिधामा। है इक कांची पूरण नामा ॥
है अनन्य नारायण दासा। जाहु पुत्र तुम ताके पासा ॥
मार्ग वृतांत सकल कहिजइयो। जो कछु कहै मानि सो लइयो ॥
तब रामानुज करि अतिनेहा। गवन्यो कांचीपूरण गेहा ॥
कांची पूरणको शिरनाई। पथहवाल सब गयो सुनाई ॥
कांची पूरण सुनि अस भाख्यो।प्रभु करुणाकर तोहिं जग राख्यो।
व्याध व्याधिनीको धरि वेशा। रक्ष्यो तोहिं कमला कमलेशा॥
ताते तीन कूप तैं जाई। कनककुंभमहँ जल भरिल्याई॥

वरदराजको पूजन कीजै । तासु कमलपद महँ मन दीजै ॥
कांचीपूरणके सुनि वैना । रामानुज आयो निज ऐना ॥
दोहा—मातासोंवृत्तांत कहि, तासु निदेशहि पाइ ॥
कनककुंभलै कूप ढिग, जाइ तुरत जललयाइ ॥१४॥
वरदराजके मंदिर जाई । पूज्यो सानुराग चितलाई ॥
यहिं विधि नितप्रति पूजन करहीं।वसि कांची नगरी सुखभरहीं ॥
उत यादव मज्जन किय प्रागा । तहां रोगवशभयोअभागा ॥
जे गोविंदाचारज स्वामी । ध्यावत रहे सु अंतर्यामी ॥
ते जब वेणी गये नहाना । बुड़की मारयो सहित विधाना ॥
इकशिवलिंग ताहि मिलि गयऊ।गोविंदार्य सुखी अति भयऊ ॥
जाय गुरूकहँ मूर्ति देखायो । गुरुकहँ धनि तैं जो प्रभु पायो ॥
यादव गोविंद मकर प्रयंता । वसत भये ध्यावत भगवंता ॥
यादव कांचीको चलि दीन्ह्यों ।शिष्यहु सकल गमन सँगकीन्ह्यों
जब यादव कांचीकहँ आयो । गोविंदहु निज भवन सिधायो ॥
शिवमूरतिको थापन कीन्ह्यों । हरपद पंकज निजचित दीन्ह्यों॥
यादवसों सब कांची वासी । रामानुजकी खबरि प्रकासी ॥
दोहा—तब यादव मनमे डरयो, कीन्ह्यों बहुत विचार ॥
तासु सहायक भुवनपति,का किय होत हमार ॥१५॥
अस गुणि अपनोशिष्य पठायो । रामानुजको बहुरि बोलायो ॥
रामानुज प्रभु संत स्वभाऊ । विसरायो वैरीकर भाऊ ॥
यादव निकट रहे पूरुब जस । रहन लगे अरु पढ़न लगे तस ॥
रंगनगरमहँ तौने काला । जामुनभयो अचार्य विशाला ॥
पंचशिष्य भे तासु उदारा । तिनके नामनि करौं उचारा ॥
गोष्ठी पूरण कांची पूरण । महापूर्ण औ श्रीगिरिपूरण ॥
पँचयो माला धर अवदाता । ये पांचों भे शिष्य सुज्ञाता ॥

रंगनाथ पूजन अधिकारा। जामुनि पायो विभव अपारा॥
बैठरह्यौ जामुनि इककाला। कियो विचार सुबुद्धि विशाला॥
मिले मोहिं बालक यक सुंदर। राम उपासक विद्या मंदिर॥
रंगनाथ पूजन करवाऊं। घटिका इक विश्रामहि पाऊं॥
अस विचारि सबशिष्य बोलाये। बालक खोजनको पठवाये॥

दोहा—खोजत खोजत शिष्य सब, कांचीपुर महँ आइ॥
रामानुजको लिखत भे, सकल गुणनि समुदाइ॥१६॥

शिष्य बहोरि रंगपुर आये। रामानुज वृत्तांत सुनाये॥
सुनि जामुन रामानुज काहीं। अति आनँद पायो मनमाहीं॥
रामानुज के देखन हेतू। कांचीपुरी चल्यो मतिसेतू॥
जब जामुन कांचीपुर आयो। वरदराज दरशन चितलायो॥
वरदराज मंदिर महँ गयऊ। करि प्रणाम स्तुति निर्मयऊ॥
करि स्तुति जामुनि चलि दीन्ह्यों। तहां आगमन यादव कीन्ह्यों॥
लसत शिष्य मंडल चहुँ फेरो। गहे हाथ रामानुज केरो॥
तब कांचीपूरन द्रुत धाई। जामुनसों सब कह्यो बुझाई॥
जामुन जाको पकरे हाथा। सो रामानुजहै मुनिनाथा॥
यादव यहि लैगयो प्रयागा। विंध विपिन मधि मारन लागा॥
व्याधरूप करि कृष्ण बचायो। निजप्रभाव कांची पहुँचायो॥
जामुन रामानुजको चीन्ह्यों। तासों संभाषण मन कीन्ह्यो॥

दोहा—पै नहिं अवसर मिलतभो, तब सुमिरचौ भगवान॥
हे प्रभुबालक मोहिंमिलै, ज्ञाता वेद पुरान॥ १७॥

वैष्णव मत यह खूब चलै है। वाद विवाद जीति सब लैहै॥
नास्तिकमतको खंडन करि है। मेरे उर अति आनँद भरिहै॥
असकहि जामुन शिष्य समेतू। आयो रंगनगर मतिसेतू॥
जबते रामानुजको देख्यो। तबते प्राण समानहि लेख्यो॥

केहिविधि रामानुज इतआवै। श्रीवैष्णव मत जगत चलावै ॥
अस अभिलाषा करि मन माहीं। रंगनाथ मंदिर नितजाहीं ॥
शुभ स्तोत्र आलवंदारू। जामुन रच्यो वेदकर सारू ॥
उत रामानुज यादव नेरे। पढ़े वेदांतन शास्त्र घनेरे ॥
एक समय रामानुज ज्ञानी। यादवको अपनो गुरुमानी ॥
रहे पीठिमहँ तेल लगावत। यादव तिनको रह्यो पढ़ावत ॥
यादव किय श्रुति अर्थ विरुद्धा। तब रामानुज भे अतिक्रुद्धा ॥
तात तेल सम दृगते आसू। यादव जंघ गिरत भो आसू ॥
दोहा-तब यादव निजशीशको, कहउठाइ अस बात ॥
रामानुज कसरोवतो, गिरत आंसु अतितात ॥ १८ ॥
तब रामानुज कह अस बानी। यह श्रुति अर्थ विरुद्ध बखानी॥
कपि नितंब सम नाहिं हरि नैना। पुंडरीक सब क्यों भाषैना ॥
तब यादव कीन्ह्यों अतिकोपा। रे शठ शिष्य वादकी चोपा ॥
तोहिं पढ़ावन मैं अनुराग्यो। उलटातुहीं पढ़ावन लाग्यो ॥
जाहु जाहु अपने घरमाहीं। हम अब तोहिं पढ़ाउब नाहीं ॥
रामानुज सुनि यादव बैना। आयो सुखित आपने ऐना ॥
कांचीपूरणके ढिग जाई। दियो सकल वृत्तांत सुनाई ॥
कांची पूरण कह्यो बुझाई। कीजे वरदराज सेवकाई ॥
कांचीपूरणके सुनिबैना। करन लग्यो पूजन सुख ऐना ॥
उतश्रीरंगनगर तेहिकाला। सुन्यो जामुनाचार्य हवाला ॥
रामानुजको यादव पापी। किय अपमान अज्ञानी थापी ॥
कांची पूरणके ढिग जाई। रामानुज निवसत सुखछाई ॥
दोहा-शालकूपते कनकघट, भरि ल्यावतहै नित्य ॥
रामानुज पूजन करत, वरदराजको भृत्य ॥१९॥
सुनि वृत्तांत महासुख पाई। जामुन पूर्णाचार्य बोलाई ॥

कह्यो जाहु कांचीपुर काहीं। ल्यावहु रामानुजै इहाहीं॥
पूर्णाचार्य सुनत गुरुवानी। कांचीको गवन्यो सुखमानी॥
वरदराजके मंदिर आयो। प्रभुहिं आलवंदार सुनायो॥
कनककुंभ जलभरे तहाँहीं। रामानुजको मंदिर माहीं॥
सुनि स्तोत्र आलवंदारा। पूरणसों अस वचन उचारा॥
को स्तोत्र रच्यो मनहारी। कहां रहहु तुम देहु उचारी॥
तब पूरण अस वचन सुनाये। हमतौ रंगनगरते आये॥
तुमहि लैन जामुनिपठवाये। ते ममगुरु स्तोत्र बनाये॥
सुनि पूरणके वचन विधाना। चह्यो रंगपुर करन पयाना॥
तब पूरन अतिशय अतुराई। कांचीपूरणके ढिगजाई॥
कह्यो वचन आशय सब खोल्यो। जामुनार्य रामानुज बोल्यो॥

दोहा–कांची पूरण सुनतभे, गुरुशासनयहि भाँति॥
रामानुजकी किय विदा, रंगनगर तेहिं राति॥ २०॥

पूरण रामानुजै लेवाई। रंगनगर कहँ चल्यो तुराई॥
रंगनाथ उत कियो विचारा। अबतरिहै सिगरो संसारा॥
यामुनार्य रामानुज दोई। सिगरे नरक डारिहैं खोई॥
करिहौं अब ऐसही उपाई। जामें भेंट होन नाहिं पाई॥
अस प्रभु निशिमहँ कियो विचारा।उये भानु जब भो भिनुसारा॥
रंगनाथके पूजन हेतू। गो यामुन जब नाथ निकेतू॥
रंगनाथ तब बोले वानी। करु कारज मम शासन मानी॥
आठ रोजके अंतर माहीं। जाहु विकुंठ रहो इतनाहीं॥
सुनि यामुनाचार्य प्रभु वैना। मानत भे अखंड उर चैना॥
अठयें रोज यामुनाचारज। गेविकुंठ धरि शिर गुरु पदरज॥
शिष्य सकल अतिशय दुखछाये। प्लावन हित कावेरी ल्याये॥
रामानुज पूरण सँग माहीं। आइ गये तेहि दिवस तहाँहीं॥

दोहा—देखि जननकी भीर बहु, पूरण पूछो आइ ॥
कावेरीके तीरमें, केहि हित जन समुदाइ ॥ २१ ॥
शिष्य कह्यो सब सुन्यो न काना। यामुन कियो विकुंठ पयाना ॥
गुरुको गवन परमपद सुनिकै । पूरणगिर्‌यो धरा शिर धुनिकै ॥
रामानुज पूरणलहि तापा । करन लगे तहँ महा विलापा ॥
रुदन करत यामुनढिग आये । गुरुशरीरके पद शिरनाये ॥
यामुनार्यकी अँगुरी तीना । गई सकल जन विस्मयकीना ॥
तब रामानुज कह्यो पुकारी । सुनहु सुनहु यह बात हमारी ॥
श्रीवैष्णव मत जगत पसारी । मैं तारिहौं जीव संसारी ॥
सुनि रामानुज गिरा सोहाई । यक अंगुलि तुरंत उठि आई ॥
पुनि रामानुज कह अस बानी। रचिहौं भाष्य संत सुखदानी ॥
यतनौ सुनि पुनि वचन विशाला।उठी दुती अंगुलि ततकाला॥
पुनि रामानुज वचन बखाना । रच्यो पराशर विष्णुपुराना ॥
सो पुराण वैष्णवन पढैहौं । ताकर नाम पराशर दैहौं ॥
दोहा—सो पुराण वर्णित सकल, साधन करि जगजीव ॥
पै हैं मोक्ष परोक्षगति, ब्रह्मानंदहि सीव ॥ २२ ॥
रामानुज मुख गिरा जु निसरी । फैलि गई अंगुलि तब तिसरी ॥
यह लीला लखि मनुजन काहीं । लागत भो अचरज मनमाहीं॥
पुनि वैष्णव यामुनहि उठाये। विधिवत कावेरी पधराये ॥
सब वैष्णव रामानुज काहीं । बोले वचन चलहु पुरमाहीं ॥
रंगनाथको दरशन कीजै । तिनको सब कैंकर्य करीजै ॥
तब रामानुज कह्यो सकोपा । कीन्ह्यो नाथ मनोरथ लोपा ॥
रंगनगर जैहैं हम नाहीं । कांची जैहैं यहि क्षणमाहीं ॥
यामुनार्य दरशन हित आये । तिनको नाथ विकुंठ पठाये ॥
मेरे हेतु दया नहिं कीन्ह्यो । आजहुकालिह रहन नहिंदीन्ह्यो॥

निर्दै रंगनाथ हैं साचे। भक्त मनोरथ पूरण काचे॥
ताते हम दरशन नहिं करिहैं। कांचीपुरी अवशि पशु धरिहैं
अस सिगरे वैष्णवन उचारचो। रामानुज कांची पगुधारयो॥

दोहा–कांचीपुरी सिधारिकै, क्षीर नदीमें न्हाय॥
वरदराजको दरशकै, वसे भवनमें जाय॥२३॥

सुखसों सोवत भयो प्रभाता। तब रामानुज मति अवदाता॥
कांचीपूरण सदन सिधायो। यामुन गवन परमपद गायो॥
गुरुयात्रा सुनि श्रीपति पद कहँ। कांचीपूरण दुखित भयो तहँ॥
रामानुज अतिशय अनुराग्यौ। कांचीपूरण सेवन लाग्यौ॥
रामानुज यक दिन कर जोरी। कह्यो गुरू सुनु विनती मोरी॥
यक दिन मोघर भोजन कीजै। दै परसादी पूत करीजै॥
कांचीपूरण कह्यो सुवैना। भोजन करिहैं चलि तुव ऐना॥
रामानुज अपने घर आयो। विविध भांति व्यंजन बनवायो॥
और मार्ग ह्वै गयो लेवावन। तहँ कांचीपूरण अति पावन॥
और पंथ ह्वै तेहि घर आयो। तासु प्रिया कहँ वचन सुनायो
मोहिं क्षुधा अतिशय अब लागी। भोजन देहु तुरत बड़भागी॥
रामानुज तिय भोजन दीन्ह्यो। कांचीपूरण भोजन कीन्ह्यो॥

दोहा–कांचीपूरण धोइ कर, फेंकि पातरी पूरि॥
वरदराज मंदिर गये, सेवन हित रति भूरि॥२४॥

रामानुज कांचीपूरण गृह। जात भये देख्यो नहिं तिनकह
आये निज आलै दुख मोई। तबलौं तिय किय द्वितिय रसोई॥
रामानुज पूंछ्यो निज नारी। सो वृतांत गै सकल उचारी॥
रामानुज तब भोजन कीन्ह्यौ। द्रुत हरिमंदिरको चलि दीन्ह्यौ॥
तहँ कांचीपूरण ढिग जाई। विनय कियो चरणन शिरनाई॥
मोहि समाश्रै करहु विज्ञानी। भव निधि तरण उपाइ न आनी॥

तब कांचीपूरण कह बाता। प्रभुसों पूंछि लेहुँ मैं ताता ॥
बिन पूंछे तोहिं शिष्य न करिहौं। जस प्रभुकी आज्ञा अनुसरिहौं ॥
अस कहि कांचीपूरण स्वामी। ध्यावत मनमहँ अंतर्यामी ॥
वरदराज भगवान समीपा। गो कांची पूरण कुलदीपा ॥
हरिके विजन चलावन लागा। विनय कियो उमगत अनुरागा ॥
शिष्य होन रामानुज चाहैं। जस प्रभु आज्ञा तस निरवाहैं ॥
दोहा—कांचीपूरण वचन सुनि, वरदराज भगवान ॥
कह्यो वचन षट वस्तु तुम, तासों कह्यो बखान ॥ २५ ॥
हमहीं परम तत्त्व जगकारन। जिय अरु ईश भेद साधारन ॥
सब विधि गहब मोरि शरणाई। यही मुख्य है मोक्ष उपाई ॥
मरत जोनहिं सुमिरै जन मोहीं। तौ हमहीं सुधि करते छोहीं ॥
जो अनन्य है मेरो दासा। तेहि मैं देहुँ परम पद वासा ॥
रामानुज करि अति अतुराई। होइ शिष्य पूरणको जाई ॥
कांचीपूरण ये षट बाता। रामानुजहि कह्यो विख्याता ॥
तब कांचीपूरण द्रुत आई। रामानुजको गये सुनाई ॥
रामानुज हरि शासन पायो। रंगनगरको तुरत सिधायो ॥
इते रंगपुरमहँ तेहिं काला। श्रीवैष्णव सब रहे विहाला ॥
यामुन विरह सह्यो नहिं जाई। कहैं कौन अब ज्ञान बताई ॥
महापूरण आदिक सब साधू। शोकित यामुन विरह अगाधू ॥
सकल संत संमत तब कीना। होइ अचारज कौन प्रवीना ॥
दोहा—वैष्णव मतको जगतमें, पार्षंडिन मत खंडि ॥
कोउ दंड मंडित करै, कौन अखंड अडंडि ॥ २६ ॥
सब संतन मिलि कियो विचारा। है रामानुज यही प्रकारा ॥
रंगनगर रामानुज आवै। तौ वैष्णव मत सकल चलावै ॥
सकल संत संमत अस करिकै। पूरणसों बोले मुद भरिकै ॥

कांचीपुरी जाहु तुम स्वामी । दरशन किन्ह्यो वरद खगगामी ॥
रामानुजको निकट बोलाई । लिन्ह्यो आपनो शिष्य बनाई ॥
संसकार पांचौ तेहि करिकै । ल्यावहु रंगनगर सुखभरिकै ॥
पूरण सुनि सब संतन बानी । कांची चल्यो महा मुद मानी ॥
उतते रामानुज हू आयो । इतते पूरण आर्य सिधायो ॥
कांची रंगनगर बिचमाहीं । अग्रहार यक ग्राम तहाहीं ॥
तहँ भै भेंट दुहुँनसों जबहीं । माने सिद्ध मनोरथ तबहीं ॥
रामानुज पूरण पदमाहीं । गिरयो प्रेमवश कह कछु नाहीं ॥
पुनि धीरज धरि कह अस बाता। कहँ पगु धारब पूरण ताता ॥

दोहा–रामानुजके वचन सुनि, पूर्णाचार्य सुजान ॥
निज आगम कारण सकल,तासोंकियो बखान ॥२७॥

कह रामानुज बुद्धिविशाला । कीजै शिष्य मोहिं यहि काला ॥
पूर्णाचार्य कह्यो तब ताको । क्षेत्र सत्यव्रत चलहु तहांको ॥
तहँ हम तुम्हैं समाश्रित करिहैं। दीक्षाविधि सिगरी अनुसरिहैं ॥
तब रामानुज गिरा सुनाई । नाथ अचिंत्य काल कठिनाई ॥
हम तुम यामुन दरशन हेतू । आये रंगनगर मतिसेतू ॥
तेहि दिन यामुन परगति पाई । दरशन आश न मिटी मिटाई ॥
नहिं कछु काल केर विश्वासा । केहि क्षण जीवन केहिं क्षण नासा
ताते अबहिं समाश्रित कीजै । और कछू शासन नहिं दीजै ॥
जहँ गुरु मिलै शिष्य तहँ होवै । देश कालको कछु नहिं जोवै ॥
सकल शास्त्रसिद्धांत यही है । शिष्य होइ गुरु मिलै जहीहै ॥
प्रीति अलौकिक पूरण देखी। संतशिरोमणि तेहि जिय लेखी॥
राम धाम यक रह्यो तहाँही । रामानुजको लै सँगमाहीं ॥

दोहा–पूरणार्य तहँ जाइकै, दीक्षाविधि सब कीन ॥
रामानुज भुज मूलमें, शङ्ख चक्र धरि दीन ॥ २८ ॥

ऊर्ध्व पुंड्र पुनि दियो ललाटा । जाहि लखत विसरत यम वाटा ॥
लक्ष्मणार्य अस नाम धरायो । अष्टाक्षर तेहि मंत्र सुनायो ॥
पुनि विधि सहित हवन तहँ कीन्ह्यो । पांचहु संस्कार करि दीन्ह्यो ॥
वरदराज पूजन अधिकारा । रामानुजको दियो उदारा ॥
रामानुजको संग लेवाई । पूरणार्य कांचीपुर जाई ॥
वरदराज लखि लह्यो हुलासा । रामानुज निवास किय वासा ॥
पूरणार्य रामानुज बोली । कहत भये मन आशय खोली ॥
यामुनार्यके यात्रा पाछे । तुम वैष्णव मत थापहु आछे ॥
सब वैष्णवन माहँ मति धामा । अहै चक्रवर्ती तुव नामा ॥
सुनि रामानुज गुरुकी वानी । कियो प्रणाम जन्म धनि जानी ॥
पुनि गुरुसों बहु शास्त्र पुराना । पढ़्यो अंग क्रमसहित विधाना ॥
पाखंडिनके मत बहु खंडे । श्रीवैष्णव मत महि महँ मंडे ॥

दोहा–कांचीनगरी महँ रही, तेजी संतसमाज ॥
तिन सबको सत्कार किय, रामानुज द्विजराज ॥२९॥

कांचीनगरी महँ गुरुपासा । कीन्ह्यों वास सुखित षट्मासा
एकदिवस अपने गृह पाहीं । तेललगावत अंगनि माहीं ॥
तहँ इक कोउ भिक्षुक द्विजआयो । तेहिं लखि करुणा रसउरछायो
निजनारीको कह्यो बोलाई । देहु अन्न याको कछुल्याई ॥
नारी कह्यो कछू घर नाहीं । अन्नहेतु ढूंढन कहँ जाहीं ॥
तब स्वामी अमर्ष करि भारी । आपहि ढूंढ़न चले सुखारी ॥
अपने घरमें ढूंढन लागे । पायो अन्न कछू सुख पागे ॥
लै ओदन तियको देखरायो । कह्यो मूर्खिनी कहँते आयो ॥
तैं दुष्टा नाहिं करसि विचारा । करतिअतिथिकोअतिअपकारा
तब सभीतिरामानुज नारी । बैठरही घर कछु न उचारी ॥
एकसमय पुनि तेहि पुर माहीं । जहँ जलभरन सकल त्रियजाहीं

तौने कूप माहि घट लेकै। पूरणार्यकी तिय सुख म्वैकै ॥
दोहा–गई भरनजल तेहि समय, रामानुजकी नारि॥
गई तौनही कूंपमें, भरनहेतुवरवारि ॥ ३० ॥
रामानुज तिय पूरणनारी। एक संग गगरी दोउ डारी ॥
पूरण तिय जब जलभरि लयऊ। रामानुज तिय घट पर परेऊ॥
रामानुज तिय अतिहिं रिसाई। गुरुनारीकी कानि विहाई ॥
बोली वचन कुंभजल तोरा। कियो अशुचि परिकै घट मोरा
रे कुलनीच न जानसि बाता। हमरो कुल जगमें विख्याता ॥
तेरो परशित जल नहिं पीहैं। यह घट कूपडारि हम देहैं ॥
तब कोपित कह पूरणनारी। मैंतेरी जानहु वडवारी ॥
यहि विधि दुहुँसो भयो विवादा। छूटी गुरू शिष्यमर्यादा ॥
पूरण तिय तब निज घर आई। निजपतिसों सब कथा सुनाई ॥
पूरण मानि मनहिं अपमाना। तुरत रंगपुर कियो पयाना ॥
उत रामानुज सेवन हेतू। सांझसमयगे गुरूनिकेतू ॥
गुरुको तहँ न देखिदुखपागे। सबै परोसिन पूंछन लागे ॥
दोहा–तहँके जन भाषत भये, तुवतिय पूरणनारि ॥
दोउ कूपजल भरतमहँ, करत भई अतिरारि ॥ ३१ ॥
कारण हम कछु तासु न जाना। रंगनगर गुरु कियो पयाना ॥
रामानुज तुरंत घर आई। पूंछन लागे नारि बोलाई ॥
तब बोली रामानुज दारा। तेहिं परसितजल अशुचि अपारा॥
तातेकुंभ कूपमहँ डारी। मैं आई ताको दैगारी ॥
सुनि रामानुज किय अतिकोपा। कीन्हो अरी धर्मकर लोपा ॥
जासु उच्छिष्ट सदा हम खाहीं। तेहि तिय परसित जलशुचिनाहीं
यहको सुनै को करै उचारा। तैं किय गुरु अपकार अपारा॥
अब नहिं मैं रखिहौं गृह तोको। क्षणभरि नीक लगत नहिं मोको

तब डेराइ रामानुज नारी। ह्वै नम्रित बहु विनय उचारी ॥
वरदराजके मंदिरमाहीं। रामानुजगे पूजन काहीं ॥
मनमें लागे करन विचारा। तजौं कौनविधि मैं निजदारा ॥
ताही समय विप्रइक आयो। लागि क्षुधा अस वचन सुनायो॥

दोहा—तब रामानुज यह कह्यो, लै सहिजानी मोरि ॥
जाहु भवन ममनारि है, क्षुधानिवारीतोरि ॥ ३२ ॥

भवन गयो लै द्विज सहिजानी। भोजन देहु कह्यो अस वानी ॥
तब रामानुज तिय अनखाई। राख्यो का तुव हेतु धराई ॥
जाहु जाहु घरते भिखियारी। नहिं रुचि पैसहु देन हमारी ॥
बहुरिविप्र रामानुज नेरे। आइ कह्यो जस गुणतियकेरे ॥
तब रामानुज मनहिंविचारा। लागि गयो अब यतन हमारा ॥
सह्यो तीनि अपराध तियाके। तियमहँ अवगुण सब वसुधाके॥
अस विचारि पुनि विप्र बोलायो। ताहिभांतिं यह वचन सुनायो ॥
तेरे मैकेते हम आये। तुव ढिग जननी जनक पठाये॥
है तेरे भ्राताकर व्याहा। तैं आवै इत होइ उछाहा ॥
निजकर पुनि पत्रिका बनाई। कुंकुम मलयज बिंदु सिंचाई ॥
लिख्यो ताहि महँ यहीहवाला। ममसुत होत व्याह यहिकाला॥
तोरे आये पूरण होई। विन आये हँसिहैं सब कोई ॥

दोहा—अस पाती लिखि विप्रकर, रामानुज दै दीन ॥
विप्रचल्यो पछितात घर, कौन काज हम कीन ॥ ३३ ॥

जब द्विजजाइ पत्रिका दीनी। रामानुज तिय सादर लीनी ॥
पितु पठयो गुणि करि सतकारा।दिय अहार तेहिं विविध प्रकारा॥
रामानुज जब घर पुनि आये। तब तिय कह्यो मोदमन छाये॥
ममभ्राता कर होत विवाहू। कहौ तौ देखन जाउँ उछाहू ॥
जननी जनक मोहिं बोलवायो। यह द्विज कंत बोलावन आयो ॥

तब रामानुज आनँद मान्यो। जाहु अवशि अस वचन बखान्यो
लै पट भूषण औरहु साजू। दिहेहु अनुजकहँ मध्यसमाजू॥
हम दिन पांच गये उत ऐहैं। तुमको पुनि लेवाइ इत लैहैं॥
नारि विविध पट भूषण लैकै। चली पीरकहँ प्रमुदित ह्वैकै॥
तब रामानुज लहि सुखरासी। जान्यों छूटि गयो गलफाँसी॥
पुनि विचार किय परमउदंडा। अब धारण करि लेहिं त्रिदंडा॥
अब न गृहस्थाश्रम हम रहिहैं। औरहु कछू वस्तु नहिं चहिहैं॥

दोहा—पठै मायकै निज सती, त्यागि जगतकी आस॥
नारायणपद प्रेमकरि, दियो विहाइ अवास॥ ३४॥

यहिविधि तहां त्यागि निजनारी। घर कुटुंबकी सुरति विसारी॥
वसन कषाय सुपात्र अखंडा। तथा कमंडलु और त्रिदंडा॥
ग्रहण करब त्रिदंडकी साजू। लै अपने सँग मोद दराजू॥
वरदराज मंदिरमहँ जाई। आगे धरयो साज समुदाई॥
पुनि करजोड़ खड़ेभये आगे। रामानुज अच्युत अनुरागे॥
विनय कियो है त्रिभुवन राऊ। जो तुम्हारि अनुशासन पाऊं॥
ग्रहणकरूं त्रिदंड यहिकाला। जो निरवाहहु दीनदयाला॥
सुनि रामानुज गिरा सुहाई। प्रभु प्रत्यक्ष बोले मुसकाई॥
जाहु अनंत सरोवर काहीं। तहाँ बसै ममभक्त सदाहीं॥
तिनसों भूरि मित्रता कीजै। सविधि त्रिदंड ग्रहण करिलीजै॥
रामानुज सुनि वचन नाथके। गुन्यो भये जन रमानाथके॥
सो आनँद उरमहँ नसमाई। गयो अनंत सरोवर धाई॥

दोहा—तहँ हरिदासन बोलि बहु, करि शिरभरि परणाम॥
चरण यामुनाचार्यके, वंदन करि तेहि याम॥ ३५॥

सादर सविधि सुसंत हुलासी। गह्यो त्रिदंड भयो संन्यासी॥
तबते यतिवर नाम कहायो। देव गगन दुंदुभी बजायो॥

भई गगनते फूलनि वर्षा। जय जय कियो सुसंत सहर्षा॥
महिमंडल महँ मंगल छायो। लुक्यो जाय कलि विपिनडरायो॥
इत कांची पूरण कहँराती। सपनदियो मधुकैटभ घाती॥
मम पादुका और पद नीरा। छत्र विशाल जटित बहु हीरा॥
चामर चारु चारि छबिछाई। रत्न जटित पालकी सोहाई॥
तेहिं पालकीमाहँ छबिछावन। धरि मेरे पादुका सुहावन॥
रामानुजके निकट सिधाई। ल्यावहु तिनको इहाँ लेवाई॥
कांचीपूरण गुणिप्रभु शासन। उठे प्रभात त्यागि निजआसन॥
प्रभु पादुका पालकी धरिकै। चामर छत्र सहित सुख भरिकै॥
लेन सुरामानुज अगुवाई। कांचीपूरण चले तुराई॥

दोहा—रामानुजके निकट चालि, धारि खराऊंशीश॥
कांचीपुर ल्याये सुखित, सुमिरि वरद जगदीश॥३६॥
और त्रिदंडहि ग्रहणकी, कृत्तिरही जो बाचि॥
कांचीपूरण सकलसो, करवायो मनराचि॥३७॥
यतिवर लहि आनँद निकर, हरिमंदिर महँ जाइ॥
बारहिंबार प्रणामकिय, स्तुति अमित सुनाइ॥ ३८॥
वरदराज मंदिर सदा, रामानुज कियवास॥
सादर संतन बोलिकै, भोजन दिय सहुलास॥ ३९॥
रामानुजको वरदप्रभु, दीन्ह्यों यतिवरनाम॥
कांचीपूरण देतभे, प्रभुआज्ञाते धाम॥ ४०॥
रामानुजको चरित यह, सुनै जो प्रीति समेत॥
सो संसार असारतजि, बसै मुकुंद निकेत॥४१॥

श्लोक—रामानुजायनाथाययतींद्रायमहात्मने॥
कृपापात्रप्रसन्नायलक्ष्मणार्यायतेनमः॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेएकादशोऽध्यायः॥ ११॥

अथ दाशरथि अरु कूरेशकी कथा ॥

दोहा—कांचीपुरके पूर्वदिशि, रह्यौ निकट इक ग्राम ॥
तहँ अनंतदीक्षित रह्यो, विप्र एक मतिधाम ॥ १ ॥

यतिवरको भगिनी पति सोई । अति सुशील तेहिं कह सब कोई॥
ताके भो सुकुमार कुमारा । दाशरथी अस नाम उचारा ॥
वेद वेदांत दांत अति शांता । कमलाकांत दास क्षिति क्षांता॥
सो सुनि मातुल भक्त उदंडा । आचारज ग्रहीत तिरडंडा ॥
दाशरथी मातुल ढिग आयो । भैने लखि यतिवर सुखपायो ॥
भयो समासृत मातुल पाहीं । पढ्यो ग्रंथ शतपंथ सदाहीं ॥
भट्ट अनंत एक द्विज रहेऊ । ताके एक आत्मज भयऊ ॥
ताको नाम भयो कूरेशा । सेवक संत श्रीकंत हमेशा ॥
सो कहुँ कांचीपुरमहँ आयो । रामानुजको लखिसुख पायो ॥
भयो शिष्य रामानुज केरो । ज्ञाता वैष्णव शास्त्र घनेरो ॥
दासरथी कूरेश शिष्य दोउ । यतिपतिअतिप्रियकहतेसबकोउ
कांचीपुरी गुरूके पासा । वसतभये किय शास्त्र विलासा

दोहा—एक समय कांचीपुरी, यादव द्विजकी मात ॥
यतिवरको कहु पंथमहँ, पेख्यो अति अवदात ॥ २ ॥

ऊर्ध्वपुण्ड्र सोहत जेहिंभाला । शंख चक्र भुज मूल विशाला॥
भानुसमान भास चहुँ घाहीं । पट कषाय सोहत तनुमाहीं ॥
धरे त्रिदंड उदंड पाणिमें । रति अछिन्नजानकी जानिमें ॥
लखि तिनको यादव द्विजमाता। कियो प्रणाम धाम विख्याता
लौटि भवनको सो चलिआई । यादवको अस गिरा सुनाई ॥
रामानुजसों वैर बढ़ायो । अपनो अति अपवाद बनायो॥
अब नहिं तासों वैर करीजै । शासनमोर मानि सुत लीजै ॥

यहि विकुंठते हरिपठवायो । जीवउधार हेतु जग आयो ॥
सत्य अनंत अहै अवतारा । वैष्णव मति करिहै परचारा ॥
जो द्विज विष्णुभक्ति नहिं कीना।ताको जन्म वृथा विधि दीना ॥
पढ़ै विपुल विद्या समुदाई । विष्णुभक्ति विन सकल वृथाई ॥
अलंकार जिमि मृतकशरीरा । नहिं सोहत दायक अतिपीरा ॥

दोहा–कांचीपूरण आदिजे,ज्ञान विज्ञान निधान ।
लखि रामानुज आचरण,पूजहि करहिं बखान ॥ २ ॥

ताते पुत्र त्यागि सब द्रोहू । रामानुज शरणागत होहू ॥
यादव सुनि जननीके वैना । बोल्यो वचन मानि उर भैना॥
कही सत्य जननी तैं वानी । मोरेउ उर अतिभई गलानी ॥
शेष रूप आचार्य प्रधाना ।रामानुज सम नहिं कोउ आना॥
पै हम अस मन कियअनुमाना । भूप्रदक्षिणा दै सविधाना ॥
पुनि यतिवरकै निकट सिधारैं । ताको शासन शिरमहँ धारैं ॥
जब जननी बोली मुसक्याई । अबलौं तुव जड़ता नहिं जाई॥
रामानुजहि प्रदक्षिण देहू । भूप्रदक्षिणा कर फल लेहू ॥
जननी वचन मृषाद्विज जाना । रामानुज मठ कियो पयाना ॥
तहँ शिष्यनयुत यतिवर सोहै । सुरगण युत सुरगुरु मनमोहै ॥
तब यादव अस वचन उचारा । सुनु रामानुज वचन हमारा ॥
शङ्ख चक्र जो करहु विधाना । ताके भाषहु सकल प्रमाना ॥

दोहा–सुनि यादवके वचन तहँ, रामानुज मतिवान ॥
शासन दिय कूरेशको, दीजै सकल प्रमान ॥ ३ ॥

सुनि कूरेश गुरूकी वानी । यादवसों बोल्यो विज्ञानी ॥
ऊर्ध्वपुंड्र धारणहित भाला । शङ्ख चक्र भुजमूल विशाला ॥
साधारण जिय ईश्वरभेदा । सबते परहरिको कह वेदा ॥
सगुण कौनविधि ईश्वर जाने । येते प्रश्न जे आप बखाने ॥

उत्तर तासु सुनहु देकाना। मैं वरणौं जस वेद पुराना॥
अस कहि तहँ कूरेश सुजाना। लै संत श्रुति शास्त्र पुराना॥
वेद पुराण प्रमाण उचारी। दीन्ह्यों सबशंका निरवारी॥
यादव सुनत चकित अति भयऊ।ताहि विचारत निज घर गयऊ॥
सोइ रह्यो जब निजघर जाई। वरदराज कह सपनहिं आई॥
यादव अब जो कस बौराना। तोको अबलों कछु न देखाना॥
विन रामानुज शरण सिधारे। ह्वैहौनहिं संसारहि पारे॥
यादव स्वप्न देखि यहि भांती। चौंकि उठ्यो सेजहि तेहि राती॥

दोहा—काह कह्यो यहि मोहिं प्रभु, केहिविधि होइ उधार॥
करत विचार अपार अस, जागतभो भिनसार॥ ४॥

भोरभये यादव महतारी। गवनी कूप भरनहित वारी॥
तेहि मारग ह्वै शिष्यसमेतू। रामानुज हरिपूजन हेतू॥
आवतरहे देखि तेहिंकाहीं। यादव मातु गुन्यो मनमाहीं॥
रामानुज रवि सरिस प्रकासा। सकलशास्त्र ज्ञाता हरिदासा॥
यासों राखत मम सुत द्वेषा। होई नहिं कल्याण विशेषा॥
जो रामानुजको शिषहोई। तौकल्याण कलपतरु जोई॥
यही विचारत गई भवनको। कह्यो बुझाय बोलाइ सुवनको॥
होहु जो रामानुज शिष बेटा। तौ होई हरिसों हठि भेंटा॥
नातौ उभयलोक नशि जाई। और कछू नहिं मोक्ष उपाई॥
मातु वचन सुनि यादव बोल्यो। हरिके वचन स्वपनके खोल्यो॥
पैनहिं मिट्यो तासु संदेहू। कियो न रामानुज पद नेहू॥
संशय मेटनहित इकवारा। कांचीपूरण भवन सिधारा॥

दोहा—करि प्रणाम भाषत भयो, मोरे अति संदेहु॥
सो मेटहु करिकै कृपा, शुभ उपदेशहि देहु॥ ५॥

वरदराज प्रभुके ढिग जाई। मोरि विनय अस देहु सुनाई

केहिविधि होय मोर कल्याना। देहु तोहि शासन भगवाना॥
कांचीपूरण उठ्यो तुरंता। आयो जहां वरद भगवंता॥
यादवकी सब विनय सुनाई। तब बोले प्रत्यक्ष यदुराई॥
कांचीपूरण तुम द्रुत जाई। यादवसों अस कह्यो बुझाई॥
बिन रामानुज शरण सिधारे। किमि ह्वैहै भवसागर पारे॥
यही हेतुमैं स्वपन देखायो। तबहुँ ताहि विश्वास न आयो॥
अबहूं भलो बिगरिगो नाहीं। गिरै जाय यतिवर पद माहीं॥
दुर्लभ मानुष तनुकहँ पाई। करै जो नहिं कछु मोक्ष उपाई॥
ताते कौन अधम जगमाहीं। कूकर शूकर सरिस सदाहीं॥
कांचीपूरण सुनि हरिवानी। आय यादवहि कह्यो बखानी॥
चहहु नाश जो माया मोहू। रामानुज शरणागत होहू॥

दोहा–हरिशासन यादव सुन्यो, मिटिगे संशय शूल॥
रामानुज ढिग जाइकै, परि पदपंकज मूल॥ ६॥

आंखि बहावत आंसुन धारा। त्राहि त्राहि अस कियो पुकारा॥
क्षमा करहु अपराध हमारा। तुम बिन अब न मोर उद्धारा॥
असकहि उठ्यो उठाये नाहीं। भई दया यतिवर उरमाहीं॥
कह्यो वचन रामानुज स्वामी। यादव दुख हरिहैं खगगामी॥
उठहु उठहु यादव द्विजराई। तजहु सकल शंका दुखदाई॥
तब उठि यादव दोउ करजोरी। कह्यो नाथ विनती सुनु मोरी॥
पांचहु संस्कार मम कीजै। बूड़त ऐंचि मोहिं प्रभु लीजै॥
तब यादव द्विजको यतिराजू। करिकै सकल सुमंगल काजू॥
पाँचहु संस्कार प्रभु कीना। गोविंद दास नाम तेहि दीना॥
वैष्णव ग्रंथनि सकल पढ़ायो। पुनि प्रपत्तिको धर्म सुनायो॥
पुनि रामानुज आज्ञा दीनी। तुम वैष्णवकी निंदा कीनी॥
ताते वैष्णव ग्रंथ बनावहु। सकल महाअपराध मिटावहु॥

दोहा—तब यादव गुरुवंदिकै, करिकै विमल विचार ॥
वेद पुराण प्रमान धरि, लै सब शास्त्रनसार ॥ ७ ॥
रच्यो ग्रंथ सब ग्रंथनि उच्चै। नाम जासु यति धर्म समुच्चै ॥
ग्रंथ बनाय गुरू ढिग ल्यायो।गुरुको सकल सुनाय शोधायो॥
तामें कियो विशेष प्रकासा। ग्रहणकरब त्रिदंड संन्यासा ॥
सुनि रामानुज भये प्रसन्ना। मान्यो ताहि अनन्य प्रपन्ना ॥
यादव रामानुज पद केरी। सेवत कीन्हो प्रीति घनेरी ॥
कछुक कालमहँ गोविंद दासा। लहि गुरुकृपा गयो हरिवासा॥
हरि महिमा देखहुरे भाई।यहि विधि निजजन लेत बचाई॥
सोइ यादव है दूसर नाहीं। जहँ रामानुज पढ़ने जाहीं ॥
सोइ यादवहै दूसर नाहीं। हतन चह्यो रामानुज काहीं ॥
सोइ यादव है दूसरनाहीं। जेहिं रामानुज देखि डराहीं ॥
सोइ यादवहै दूसर नाहीं। छुवत नरह वैष्णव परिछाहीं ॥
दोहा—सोइ यादव यतिवर चरण, शरणागत भो आइ।
लहि गुरु कृपा विकुंठको, गयो निसान बजाइ॥ ८ ॥
रामानुज कांचीपुर माहीं। वसे पढावत शिष्यन काहीं ॥
उतै रंगपुर महँ सब संता। यामुन विरहित दुखी अनंता॥
कोऊ नाहिं आचार्य रह्यो तहँ। शास्त्र पढ़ावै सब संतन कहँ ॥
तब सब संत रंगपुर वासी। रामानुजके दर्शन आसी ॥
रंगनाथके द्वारहि आये। बार बार अस विनय सुनाये ॥
नाथ जो रामानुजै बोलावहु। तौ हम सबन कृतार्थ बनावहु॥
असकहि निशिमहँ संत तहाँही। वसे रंगमंदिर इकठाहीं ॥
दीन्हो राति स्वप्न भगवाना। कोउ जन कांची करै पयाना॥
मेरी लिखी पत्रिका प्यारी। वरदराज कहँ देय सिधारी ॥
मम सिंहासन निकट सोहाती। मिलिहै ओर लिखी ममपाती ॥

भोर भये सब संत सिधाये। पट खोले पाती तहँ पाये ॥
लै पाती इक द्विजकर दीन्हे। कांचीपुरहि बिदा तेहिं कीन्हे ॥
दोहा–सो द्विज कांची आइकै, वरदराज ढिग जाइ।
करि प्रणाम पाती दियो, अपनो नाम सुनाइ ॥ ९ ॥
रंगनाथकी पाती पायो। वरदराज अतिशय सुख छायो॥
यह वृत्तांत लिखो तेहि माहीं। रामानुजै देहु हम काहीं ॥
रंगनाथ यह वरदराज यह। करहिं याचना जानि काज कह॥
तब तेहिं निशा वरद भगवाना। पाती उत्तर लिख्यो प्रमाना ॥
माँगे ते सब कछु दै डारत। पै नहिं अपनो प्राण निकारत॥
रामानुज मो प्राण समाना। कैसे तुमहिं देहिं भगवाना ॥
अस पातीलिखिनिशि धरि राख्यो। पूजक पट खोलन अभिलाख्यो
भोर भये खोल्यो पट काहीं। पाइ गयो पत्रिका तहाँहीं ॥
रंगनाथको विप्र बोलाई। पूजक दिय पत्रिका बुझाई ॥
सो द्विज तहँ कोहु सों न बतायो। पाती पाइ रंगपुर आयो ॥
पाती रंगनाथ कहँ दीन्हो। संतनसों सो वर्णन कीन्हो ॥
तहँ यामुनसुत इक मतिमाना। नाम जासु वररंग बखाना ॥
दोहा–रंगनाथ वररंगको, कह्यो स्वप्नमें आइ ॥
रामानुजको ल्याइये, कांचीपुरमें जाइ ॥ १० ॥
गानशास्त्रके तुम अतिज्ञाता। गाइ रिझाइहु वरद विख्याता॥
पट भूषण जो कछु तोहिं देहीं। तौ तुम लिह्यो न मोर सनेही ॥
माँगेहु रामानुज कहँ प्यारे। और वस्तु नहिं नेकु निहारे ॥
दिख्यो स्वप्नसो अस तेहि राती। भई रंगवर शीतल छाती ॥
भोर भये वररंग तुरंता। कांचीपुर गमन्यो मतिवंता ॥
वरदराजके मंदिर आयो। तहँ प्रभुको चरणामृत पायो ॥
तब वररंग पहिरि पट भूषण। नाचन गायन लग्यो अदूषण ॥

सुनि वररंग केर मृदु गाना । भये प्रसन्न वरद भगवाना ॥
वरदराज प्रत्यक्ष बखाना । हे वररंग माँगु वरदाना ॥
तब वररंग कह्यो कर जोरी । जो आज्ञा पूरहु प्रभु मोरी ॥
तब माँगहुँ मनको वरदाना । नहीं करौं किमि वृथा बखाना॥
वरद कह्यो द्विज रमा विहाई । माँगहु जो चैहो सो पाई ॥

दोहा–तब वररंग कह्यो वचन, रामानुजको देहु ॥
अब न टरहु कहिकै हरी,निज प्रण सुधि करलेहु॥ ११

वरद कह्यो अति दुर्लभ माँगे । पै हराइ लिय मोकहँ आगे ॥
ताते रामानुजको दैहौं । किमि असत्य निज प्रणकरिलैहौं
अस कहि रामानुजै बोलाई । वररंगहि को पाणिधराई ॥
वरद दियो रामानुज काहीं । भाष्यो जाहु रंगपुरमाहीं ॥
रामानुज करि दंड प्रणामा । आयो तुरत आपने धामा ॥
तहँ सब शिष्यन तुरत बोलाई । चल्यो रंगपुर कहँ दुख छाई ॥
ज्यों पितुगृहते पतिगृह माहीं । कन्या जाति महादुखमाहीं ॥
वरदराज सुमिरत बहुवारा । रंगनगर तिमि गयो उदारा ॥
कावेरी महँ मज्जन कीन्हो । द्वादश तिलक सबै अंगलीन्हो॥
तब वररंग रंगमंदिरचलि । रामानुज आये नाशककलि ॥
खबरि दियो यह रंगनाथको । बारहिं बार नवाइ माथको ॥
रामानुजकी सुनत अवाई । रंगनाथ अति आनँद पाई ॥

दोहा–रंग कह्यो वररंगसों, पढ़त वेद सब संत ॥
रामानुज अगवान हित, यहि क्षण सकल व्रजंत १२॥

रंगनाथकी सुनि यह वानी । रामानुजको आगम जानी ॥
पूर्णाचार्य सबन सँग लीन्हे । अगवानी हित गवनहि कीन्हे ॥
ताते रामानुजौ सिधाई । गिरत भये पूरण पद धाई ॥
उभय ओर वैष्णव अभिरामा । किये परस्पर दंड प्रणामा ॥

पूरण आदिक संत सुजाना। लै रामानुज किये पयाना॥
गये रंग मंदिर महँ जबहीं। लीला रंगनाथ प्रभु तबहीं॥
चलि सतयें प्रकारहीं द्वारा। लिय अगवानी मोद अपारा॥
रामानुज वैष्णवन समेता। अंतःपुरगे रंग निकेता॥
महारंगको दर्शन लीन्हो। करि प्रणाम विनती अस कीन्हो॥
मेरे हित आगवन गोसाईं। कीन्हो कहा बंधुकी नाईं॥
त्रिभुवन धनी रंग भगवाना। मैं लघु सेवक अति अज्ञाना॥
परगट रंगनाथ तब भाषे। हमहूँ तुम दर्शन अभिलाषे॥

दोहा–जो मैं अपने दासको, करौं अशन सतकार॥
दीनबंधु यह नामतौ, कोपुनि लेइ हमार॥ १३॥

रामानुज तुम हौ सब लायक। करौ उभय विभूति कर नायक॥
सुनि रामानुज प्रभुकी वानी। दै परदक्षिण आनँद मानी॥
गये रंगमंदिरके भीतर। दर्शन कीन्हो महा मूर्तिकर॥
लै प्रसाद तहँते पुनि आई। बैठ गरुड़ मंदिर सुखपाई॥
वैष्णव यूह तहाँ जुरि आयो। श्रीमन्नारायण रव छायो॥
सकल बोलाइ रंग अधिकारी। तहँ रामानुज गिरा उचारी॥
जौन नमनुहै जेहि अधिकारे। सावधान सो ताहि सँवारे॥
जो कछु काम बिगारि अब जाई। अवशि सो दंड पाइहै भाई॥
पूरणाचार्य कह्यौ तब बाता। सत्य कह्यो शठकोप विख्याता॥
कोइक हमरे कुलमहँ होई। यतिवर ताहि कही सब कोई॥
सो श्रीवैष्णव मत प्रगटैहैं। कलियुग धर्म धूरि करिहैहैं॥
यामुन निज यात्राके काला। कह्यो वचन यह बुद्धि विशाला॥

दोहा–हरिको भक्त अनन्य इक, कछु दिन महँ इत आइ॥
सुखी करैगो जगत सब, वैष्णव मत प्रगटाइ॥ १४॥

सो रामानुज तुमहीं अहहू। वैष्णव मत निर्वाह हित करहू॥

सुनि रामानुज पूरण वानी। पूरणके पद परयो विज्ञानी ॥
कह्यो नाथ रावरी बड़ाई। मोते नहिं कबहूँ बनि आई ॥
अस कहि तहँते उठे उदारा। देखन लगे प्रकार प्रकारा ॥
तब परकालहि बहुत सराही। बसे रंगपुर परम उछाही ॥
वरदराज त्यागन दुख जेतो। निरखत रंग मिल्यो सब तेतो ॥
जिन जिन पर रामानुज केरी। परी दीठि भरि दया घनेरी ॥
ते ते सकल त्याग संसारा। वसते भये विकुंठ मँझारा ॥
अनुपम रामानुज परभाऊ। जाहिर जाको शील सुभाऊ ॥
जब कांचीते कियो पयाना। बोलि वैष्णवन चारि सुजाना ॥
कह्यो इकांत वैष्णवन काहीं। गवनहु शैल पूर्णढिग माहीं ॥
मम फूफूको सुत गोविंदा। वैष्णव मतकी भाषत निंदा ॥

दोहा—वैष्णव ताको करन हित,शैलपूर्ण मतिवान ॥
काल हस्तिपुरको अबै,आयेज्ञाननिधान ॥ १९ ॥

सो तुम जाइ तहाँ ह्वै शांता। जानि सकल तहँ कर वृत्तांता ॥
आवहु रंगनगर मम पासा। करहु मोहिं वृत्तांत प्रकासा ॥
अस कहि वैष्णव तहाँ पठाये। रंगनगर रामानुज आये ॥
कछुक कालमहँ वैष्णव तेई। आये रंगनगर हरि सेई ॥
रामानुज पद वंदन करिकै। लागे कहन खबरि सुख भरिकै ॥
काल हस्तिपुर महँ हे नाथा। आये शैलपूर्ण द्विज साथा ॥
बैठे एक तडागहि तीरा। शिष्यन शास्त्र पढावत धीरा ॥
तहँ गोविंद घट कांधे धरिकै। आयो भरन सलिल श्रम करिकै
घट भरि चल्यो भवन कहँ जबहीं। शैलपूर्ण बोले तेहिं तबहीं ॥
का फल है घट भरि लै जावहु। अवसर होइ तो हमहिं बतावहु
तब गोविंद कही नहिं वानी। गयो गेह सुनि गिरा विज्ञानी ॥
गयो भरन जल फेरि तहाँहीं। शैलपूर्ण तब मारगमाहीं ॥

दोहा—लिखि कागद श्लोक इक, दियो डारि तेहि ठाम ॥
सो श्लोक उठाइ लिय,चलि गोविंद मतिधाम ॥ १६ ॥
सो लाग्यो चितवन चहुँ वोरा । लख्यो शैलपूरण तहिं ठोरा ॥
तिनके निकट जाइ अस भाख्यो। को यह पत्र डारि पथ राख्यो॥
दीजै हमको अर्थ बताई । शैलपूर्ण तव अर्थ सुनाई ॥
औरहु भाषो शास्त्र प्रमाणा । तब गोविंद बहु वाद बखाना ॥
भो शास्त्रार्थ दहुँनसों भारी । हर्यो गोविंद न सक्यो उचारी ॥
ऐसी सुनि वैष्णव मुख वानी । शैलपूर्ण कहँ विपुल बखानी ॥
रामानुज सब संतन काहीं । कह्यो प्रमाण अनेक तहाँही ॥
पुनि संतनसों पूछन लागे । गोविंद तहाँ रहेकी भागे ॥
वैष्णव कहनलगे पुनि गाथा । गुरुहि सरहिं जोरी युग हाथा ॥
सुनहु यतीश्वर तेहिं सरतीरा । शैलपूर्ण जब कह मतिधीरा ॥
तब गोविंदहि उतर न आयो । तहँते तुरतहि पेलि परायो ॥
शैलपूर्ण व्यंकट गिरि आये । दिवस तीसरे फेरि सिधाये ॥

दोहा—वनमें शिष्यन जोरिकै, सहस गीतिको अर्थ ॥
लगे पढ़ावन प्रीतिसों,मेटत सकल अनर्थ ॥ १७ ॥

फूल लेन तब अतिशय चायो । तेहिं वन गोविंद राज सिधायो॥
पाटलि तरुमहँ चढ़े गोविंदा । तोरन लगे कुसुम सानंदा ॥
चौथे गीति माहँ तेहिं काला ।निकसी तहँ यह कथा विशाला॥
नारायण के नाभी तेरे । कह्यो कमल इक पत्र घनेरे ॥
ताते चारि वदन प्रगटाना । ताते प्रगट्यो जगत महाना ॥
नारायण सर्वेश्वर अहँहीं । ऐसे वेद पुराणहु कहहीं ॥
नारायणको कुसुम चढ़ावै । सो जगमें अनंत फल पावै ॥
यही कियो त्रैवार उचारा । तब गोविंद मन माहँ विचारा ॥
नारायण त्रिभुवनके नाथा । धरहि रुद्र विधि जेहि पद माथा॥

ताते नारायणको ध्याऊँ। तौ भवसिंधुपार मैं पाऊँ॥
असगुणि कूदि तुरत तरु तेरे। गोविंद त्राहि त्राहि मुखटेरे॥
गिरयो शैल पूरणके चरणा। नाथ भयो मैं तिहरे शरणा॥
दोहा—अबलों म्वहिं अति भ्रम रह्यो, तजि नारायण काहिं॥
भजत रह्यो औरे सुरन, लग्यो ठिकाना नाहिं॥ १८॥
बार बार अस कहत गोविंदा। तजत शैलपूरण पदद्वंद्वा॥
शैलपूर्ण तब गोविंद काहीं। लियो लगाइ तुरत हिय माहीं॥
झारत तनु रज कोमल वैना। बोल्यो गोविंद सोंभरि चैना॥
गई सो गई सुरति नहिं कीजै। लई सो लई ताहि मन दीजै॥
अब करु हरि पद दृढ़ विश्वासा। ते प्रभु करिहै भव निधि नासा॥
तब गोविंद अति आदर कीन्हो। शैलपूर्णको गुरु अस चीन्हो॥
गोविंद वैष्णव भये तहाँहीं। भयो सोर चहुँकित पुर माहीं॥
तब गोविंदके सिगरे संगी। आये तेहि समीप मति भंगी॥
शैल पूर्ण सों बोले बाता। तुम तौ जादू मैं अति ज्ञाता॥
गोविंदको धौं कहा खवायो। हमरे साथी को बौरायो॥
शैलपूर्ण तब कह मुसिकाई। पूँछिलेहु गोविंद सों भाई॥
जो हम कछू सिखाये ह्वै हैं। तो गोविंद आपहि कहि दैहैं॥
दोहा—शैलपूर्णके वचन सुनि, सिगरे कुमती धाइ।
लियो गोविंदहि घेरितहँ, गहे हाथ अनखाइ॥ १९॥
कहे वचन अति आँखि तरेरी। चलौ भवन होती अति देरी॥
अपनो धर्म करहु मन लाई। कौतुक केह गये बौराई॥
तब गोविंद निज हाथ छँडाई। कह्यो वचन निज नैनदेखाई॥
जबलौं हम तुमही महँ रहे। तबलों तिहरो शासन गहे॥
जबते त्यागि दियो हम तुमहीं। तबते तुम तुमहीं हम हमहीं॥
तब सब गये मानि हिय हारी। गोविंद सुमिरण लग्यो मुरारी॥

शैलपूर्ण ढिग किय निशि वासा । गोविंद भो अनन्य हरिदासा ॥
तेहि निशि वैष्णव द्रोहिन काहीं। शंकर भाष्यो स्वप्ने माहीं ॥
नास्तिक वैष्णव धर्म बिगारयो । वैष्णव ताको फेरि प्रचारयो॥
ताते जो करिहौ वरियाई । तौ तिहरो हटि जई नशाई ॥
गोविंदको नाहिं रोकहु कोई । यह अनन्य हरिको जन होई ॥
हरिद्रोही अस स्वप्नो देखी । शैलपूर्ण सों कह्यो विशेखी ॥
दोहा–निज निज भवनन गमन किय, ह्वैगे सकल निरास ॥
गोविंदको निज संग लिय, शैलपूर्ण हरिदास ॥ २०॥
संतन युत व्यंकट गिरि आये । गोविंदको निज निकट बोलाये॥
संस्कार पांचहु तेहि कीन्हे । वैष्णव शास्त्र पढाइ सुदीन्हे ॥
अब व्यंकटगिरिमे गोविंदा । सेवत शैल पूर्ण सानंदा ॥
यह तहँको वृत्तांत विशाला । जानहु यतिपति दीन दयाला॥
यतिपति सुनि गोविंद वृत्तांता । मान्यो महामोद दुखसांता ॥
किय सत्कार वैष्णवन काहीं । भली सुनाई आइ इहांहीं ॥
पुनि रामानुज सिगरे संतन । विदा कियो तिन घरमतिवंतन
तहँते आपहु उठे तुरंता । गये रंगमंदिर सुखवंता ॥
करि प्रणाम प्रभुको बहु वारा । तनुपुलकित अस वचन उचारा
तुम राखहु संतन मर्यादा । दूरि करहु सब जगत विषादा॥
तुम सम प्रभु जो जग नहिं होतो। संतनकी सुधि राखत कोतो ॥
हैसंतन अवलंब तुम्हारा । द्रवहु सदा देवकी कुमारा ॥
दोहा–असप्रभुसों विनती कियो, जानि सकल कृतकाम ।
रामानुज स्वामी तुरत, आवतभे निजधाम ॥ २१ ॥
येकसमय यतिराज प्रभु,करि मनमाँह विचार ।
गवन कियो गुरुदरसहित, पूर्णाचार्यअगार ॥२२॥
गुरुपद द्वंद्वन वंदन करिकै । जोरि पाणि कहअतिसुखभरिकै॥

यामुनको नहिं दर्शन पायो । ताते मोहि अति शोक सतायो ॥
शोक जनित सिगरो दुखघोरा । हरि लीन्हो हरि गुरुतुम मोरा ॥
मैंहौं तुव चरणनको दासा । करहु मोहिं उपदेश प्रकासा ॥
सुनि रामानुजके अस वैना । महापूर्ण बोल्यो भरि चैना ॥
मंत्ररत्न है मंत्र अनूपा । जानहु सब मंत्र नकर भूपा ॥
द्वै अस जाको नाम उचारा । कारक कोटि जन्म अवछारा ॥
सब विधि भक्ति मुक्तिको दाता । जन रक्षक मानहु पितु माता ॥
चारिहु वर्ण माहिं जन कोई । जपै जो जाहि पूज्य सतिसोई ॥
संसारार्णवके तारण कारण । वेदमूल अधमनि उद्धारण ॥
असद्वैमंत्र पतित पावनकर । तुम्हैं देत हम लीजे यतिवर ॥
असकहि पूर्णाचार्य महाना । दियद्वै मंत्र सुनाइ सुकाना ॥

दोहा—न्यायतत्त्व गीतार्थ तिमि, व्यास सूत्र त्रैसिद्ध ।
पंचरात्र आदिक सबै, उपदेश्यो गुणि सिद्ध ॥ २३ ॥

पुत्र पुंडरीकाक्ष नामजेहि । रामानुजको शिष्य कियो तेहिं ॥
महापूर्णपुनि कह असवानी । गवनहु गोष्ठीपुर विज्ञानी ॥
तहँहै गोष्ठीपूरन स्वामी । भक्त अनन्य विहंगमगामी ॥
तिनसों शास्त्र अर्थ सुनि लेहू । अस नहिं आवत दूसर केहू ॥
रामानुज सुनि गुरुकी वानी । गोष्ठीपूर्ण बन्यो सुख मानी ॥
गोष्ठीपूरणके ढिग जाई । बोल्यो वचन चरण शिरनाई ॥
मोहिं मंत्रार्थ देहु तुम नाथा । बार बार नाऊं पदमाथा ॥
गोष्ठीपूरण गिरा उचारी । याको अब कोउनहिं अधिकारी ॥
गोष्ठीपूरण भो पुनि मौना । रामानुज आयो निज भौना ॥
कछु दिन बीते रंग नगर महँ । भयो महाउत्सव घर घर तहँ ॥
गोष्ठीपूरण तब सुखपायो । उत्सव लखन रंगपुर आयो ॥
हरि मंदिर दर्शन हित गयऊ । पूजक ताहि कहत अस भयऊ ॥

दोहा–रंगनाथ शासनकरत, तुम रामानुज काहिं।
मंत्रअर्थ उपदेशियो, गुनि सज्जन मन माहिं॥ २४॥
तब गोष्ठीपूरण अस भाष्यो। प्रथमहि रंगनाथ कहि राष्यो॥
होई जो याको अधिकारी। विना परीक्षा लिहे विचारी॥
तेहि मंत्रार्थ कबहुँ ना दीजै। अबशासन यहकीसो कीजै॥
गोष्ठीपूरण सों पूजक पुनि। कह्यो वचन यहि शासनकोगुनि॥
रामानुज सब गुणनिनिधाना। याके सम जगमे को आना॥
तुम मंत्रार्थ देहु यहि जाई। जियकी शंका सकल विहाई॥
गोष्ठीपूरण सुनि हरि शासन। रामानुजहि कह्यो दुखनाशन॥
रामानुज मम भवनहि आवहु। तब मंत्रार्थ अवशि तुम पावहु॥
असकहि गोष्ठीपूरण गयऊ। जात तहैं रामानुज भयऊ॥
पैमंत्रार्थ न किय उपदेशा। यतिवर आयो बहुरि निवेशा॥
यहि विधि यतिवर वार अठारा। गोष्ठीपूरण भवन सिधारा॥
पैनहिं उपदेश्यो मंत्रारथ। करन परीक्षा गुणि परमारथ॥
दोहा–वारवोंनैसे पुनि गयो, गोष्ठीपूरण पास।
जाहु जाहु सो असकह्यो, रोवत चल्यो निरास॥२५॥
रामानुज निज भवन सिधारी। लंघन कियो मानि दुखभारी॥
गोष्ठीपुरको कोउ यक संता। आयो रंगनगर मतिवंता॥
सो रामानुज दशा निहारी। गोष्ठीपूर्णहि जाइ उचारी॥
तब गोष्ठीपूरण निजदासा। पठवायो रामानुज पासा॥
सो वैष्णव रामानुज काहीं। कह्यो वचन अति आनँद माहीं॥
गोष्ठीपूरण तुमहि बोलायो। तुमको लेन हेतु मैं आयो॥
अब मंत्रारथ तुमको दैहैं। अब निराशनहिं तुमहिं फिरैहैं॥
चलहु अकेले सकल विहाई। सुनि रामानुज अति सुखगाई॥
गोष्ठीपूरण गुरुके गेहू। गवन्यो रामानुज करि नेहू॥

तब कूरेश दाशरथि दोऊ। गवने रामानुज सँग वोऊ॥
तब गोष्ठीपूरणके दासा। रामानुजसूं वचन प्रकासा॥
हरि गुरु कह्यो अकेले आवहु। दंडजनेऊ भरि सँग ल्यावहु॥
दोहा—तुम अपने द्वै शिष्यको, लिये संग कसजात॥
दूषण देहैं गुरु अवशि,हम इत तिनहिं डेरात॥२६॥
तब रामानुज वचन उचारा। लेइ बनाइ न करहु खँभारा॥
यहि विधि कहत पंथ महँवानी। गोष्ठीपुर आये सुखमानी॥
गोष्ठीपूरण निकट सिधारे। कियो दंडवत पाणि पसारे॥
रामानुजहि शिष्ययुत देखी। गोष्ठीपूरण अनुचित लेखी॥
कहयतिराजहि आंख देखाई। ल्याये केहि हित शिष्य लेवाई॥
हमतौ कहि पठयो तुम पाहीं। और न आवै कोइ सँग माहीं॥
यक त्रिदंड दूसर उपवीता। लइयो ये द्वै संग पुनीता॥
तब रामानुज कह कर जोरी। मोसे नाथ भई नहिं खोरी॥
दंड और उपवीतहि काहीं। तुम कह ल्यावहु निजसँग माहीं॥
दोऊ शिष्य दंड उपवीता। गुरु ल्यायो मैं परमपुनीता॥
तब गोष्ठीपूरण गुरु बोले। को उपवीत दंड केहि तोले॥
तब रामानुज गिरा उचारी। हे गुरु असजिय मैं निरधारी॥
दोहा—दाशरथीको जानियो, मोर त्रिदंड हमेश॥
तिमि जनेउ कूरेश हैं, नहिं दूसर यहि देश॥२७॥
तब गोष्ठीपूरण अस भाषे। यदपि जनेउ दंड करि राषे॥
तदपि अकेले तुम इत आवहु। मंत्रराज लहिकै सुख छावहु॥
इनको तुमही किय उपदेशा। बोलि दाशरथि और कुरेशा॥
पुनि रामानुज जाइ अकेले। बैठे गोष्ठी पूरण भेले॥
तब गोष्ठीपूरण लगि काना। मंत्रराज मंत्रार्थ बखाना॥
दै मंत्रार्थ पात्र पहिचाने। गोष्ठीपूरण अति सुखमाने॥

गोष्ठीपूरण कह बहुवारा। मंत्रनकोहुसे कियो उचारा॥
महामंत्र यह गोपन योगू। दायक मुक्ति भुक्ति कर भोगू॥
एवमस्तु कहि यतिवर ज्ञानी। करि प्रणाम पद परसत पानी॥
आयो बहुरि रंगपुर काहीं। धन्य जन्म निज गुनि मन माहीं॥
रंगनगरमहँ महा विशालै। रह्यो येक नरहरिको आलै॥
तहँ आयो जब माधव मासा। नरहरि जन्म उछाह प्रकासा॥

दोहा—होत भयो उत्सव महा, नरहरि जन्म अनंद॥
देश देशते आइकै, जुरे संतके वृंद॥ २८॥

अति संघर्ष भयो पुरमाहीं। चहुँकित साधु समाज देखाहीं॥
तब रामानुज कियो विचारा। जुरे सकल इत संत अपारा॥
अष्टाक्षरते पर कछु नाहीं। श्रवण परत अघ कोटि नशाहीं॥
ताते करौं अवशि यह काजा। चढ़िकै इक ऊंचे दरवाजा॥
अष्टाक्षरको करौ पुकारा। होइ अनेक अधम उद्धारा॥
अस विचार रामानुज स्वामी। सुमिरि अनन्य मंजुपद गामी॥
तेहि दिन भई जबै अधराता। उठि अकेल सज्जन सुखदाता॥
चढ्यो उतंग रंग दरवाजा। जहाँ जुरी सब संत समाजा॥
तहँते रामानुज बहुवारा। किय अष्टाक्षर मंत्र उचारा॥
तहँ चौहत्तर जनके काना। परत भयो सो मंत्र महाना॥
तेचौहत्तर भेजन योगी। भाजन मुक्ति महासुख भोगी॥
तेइ चौहत्तर पीठ कहावैं। अबलों दक्षिणमें सब ठावैं॥

दोहा—श्रीअष्टाक्षर मंत्रको, यतिवर कीन पुकार।
गोष्ठीपूरणदास बहु, सुने जे रहे अगार॥ २९॥

गोष्ठीपूरण पहँ सब जाई। रामानुजकी दशा सुनाई॥
नाथ जो गुप्त मंत्र तुम दीन्हो। रामानुजको सज्जन चीन्हो॥
वरजि दियो भलभलतेहिं काहीं। कियो प्रकाश कबहुँ यहि नाहीं॥

तौन मंत्र रामानुज जाई। ऊंचे चढ़ि ऊंचे गोहराई॥
सबको दीन्हो मंत्र सुनाई। अनुचित जानि कहे हम आई॥
गोष्ठीपूरण सुनि यह हाला। यतिवर पर किय कोप कराला॥
संतन कह्यो यही छन जाई। ल्यावहु रामानुजै लेवाई॥
संत आइ रामानुज काहीं। तेहि क्षण गये लेवाइ तहाँहीं॥
गोष्ठीपूरण ताहि विलोकी। कियो कोप ह्वै अतिशय सोकी॥
कह्यो वचन रे मूर्ख प्रधाना। जो मैं दीन्हों मंत्र महाना॥
महा गोप सब शास्त्रन सोई। कबहुँ अधर बाहिर नाहिं होई॥
भली तरा करि तोरि परीक्षा। तब मैं दीन्हों लखि तुव इक्षा॥

दोहा—वार अनेकानि तोहिं मैं, दीन्हो शपथ धराइ॥
काहूसों कबहूँ नहीं, दीजो मंत्र सुनाइ॥ ३०॥

जो तैं मंत्र प्रकाशित करिहै। ताते अवशि नरकमहँ परिहै॥
मंत्रराजसों परम प्रधाना। रंगद्वार चढ़ि तुङ्ग भकाना॥
मंत्र राज बहु वार पुकारा। सुनत भये तहँ मनुज अपारा॥
गुरुशासन तै कीन्हो भंगा। दीसततैं मनु मत्त मतंगा॥
कहु गुरुद्रोह केर फलकाहै। तेरी मति सब शास्त्रन माहै॥
तब रामानुज कह कर जोरी। सुनहु नाथ विनती अस मोरी॥
प्रथमहि तुम अस किय उपदेशा। यह अष्टाक्षर रूप रमेशा॥
देत तुमहिं सादर सो लीजै। कबहुँ काहुसों नाहिं कहि दीजै॥
जाके कान परत यह मंत्रा। सो विकुंठ कहँ जात स्वतंत्रा॥
पुनि नाहिं आवत यहि संसारा। पावत हरि सेवन सुखसारा॥
विना परिक्षित अरु विन आशा। जो कोउ करै मंत्र प्रकाशा॥
सो विशेषि जन नरक सिधारै। ऐसो वेद पुराण उचारै॥

दोहा—सो अपने मनमें कियो, मैं यह विमल विचार।
चढ़ि उतंग अति भवनमें, मंत्रहि करौं उचार॥ ३१॥

यह नृसिंह उत्सवके काजा। लाखन आई संत समाजा ॥
मंत्र परी यह जिन जिन काना। करिहैं ते वैकुंठ पयाना ॥
मैं इक नरक जाउँ तौ जाऊं। जनन परमपदको पहुँचाऊं ॥
नरक गये मम मंत्र पुकारे। हरिपुर लाखन जीव सिधारे ॥
तौ नहिं नाथ मोरि कछु हानी।नरक गवनमोहिं अति सुखदानी॥
नाथ यही मैं कियो विचारा। किय अष्टाक्षर मंत्र पुकारा ॥
रामानुजके वचन सुहाये। गोष्ठीपूरण सुनि सुखपाये ॥
याकी जिय पर दयाअपारा। सांचो अहै शेष अवतारा॥
अधम उधारण हित जग आयो।जीवन हित निज दुख विसरायो
गोष्ठीपूरण यही विचारी। मिले दौरि निज भुजा पसारी॥
कहत भये तैं गुरू हमारा। रह्यो न पूरव मोहिं विचारा ॥
तेरो नाम अहै मंनाथा। रैहौं मैं तिहरैलैसाथा ॥

दोहा—रामानुजको बोलि पुनि, अपने ढिग बैठाइ।
चर्मवाक्य दीन्हो हुलसि, जिमि अर्जुन यदुराइ॥३२॥

पुनि अपनो आत्मज बोलवायो। रामानुजको शिष्य करायो ॥
पुनि गोष्ठीपूरण कह बाता। रंगनगर गवनहु तुम ताता ॥
यामुन सुवन नाम वररंगा। तासों करहु अवशिसतसंगा॥
यामुनतेहि गुप्तार्थ पढ़ायो। सो तुम लेहु जाइ मन भायो॥
सुनि गोष्ठीपूरण की वानी। रामानुज गवने सुख मानी ॥
सँगमहँ दाशरथी कूरेशा। औरशिष्य सब चले सुवेशा ॥
गोष्ठी पूरण सुतमाति धामा। चल्यो सौम्य नारायण नामा ॥
रंग नगर रामानुज आयो। अपने भवन बस्यो सुखछायो ॥
अष्टाक्षर जो कियो पुकारा। भयो अनेकनि जीव उधारा ॥
यह पुहुमीतल मैं अश छायो। रामानुज सों कोउ नहिं भायो॥
मंत्र दान करि यति गणराजू।कियो सकल मनुजन कृत काजू॥

रंगनाथ मंदिर पुनि गयऊ । सब वृत्तांत कहत तहँ भयऊ ॥

दोहा—रामानुजके वचन सुनि, रंगनाथ कहहै बैन ॥
जीव उधारचो भलकियो, सबहु चैन युतऐन ॥३३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यां कलियुगखंडेएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

एकसमय कूरेश सुजाना । रामानुजसों वचन बखाना ॥
चरम अर्थ मोकूं प्रभु देहू । तब रामानुज कह युतनेहू ॥
गुरु गोष्ठीपूरण अस भाष्यो । जो चरमार्थ पढन अभिलाष्यो ॥
सो जो वर्ष करै ढिगवासा । नहि कीन्ह्यो तुम चरण प्रकासा ॥
तब कूरेश कही असवानी । परै न मोहिं सरी गति जानी ॥
तब रामानुज वचन प्रकासा । करौ जो एक मास उपवासा ॥
तौ संवत्सरको फल होई । पैहौ चरम अर्थ सुखसोई ॥
तब कूरेश महासुख मानी । कियो मास उपवास विज्ञानी ॥
चरम अर्थ रामानुज दीन्हो । जेहिं कूरेश ग्रहण करिलीन्हो ॥
दाशरथी गुरुसों कहजाई । चरम अर्थ हमहूँ प्रभुपाई ॥
यतिवर दाशरथीसों बोल्यो । गुरुसों मैं अस आयसुबोल्यो ॥
कूरेशहि चरमारथ दैहो । दुसरेसों यह कबहुँन कैहो ॥

दोहा—गोष्ठीपूरण निकट चलि, चरमारथ तुम लेहु ॥
उनकी अति सेवा करौ, दैहैं सहित सनेहु ॥ ३४ ॥

दाशरथी सुनि यतिवर वानी । गोष्ठीपुरहि गयो मुदमानी ॥
गोष्ठीपूरण पद शिर नायो । चरम अर्थ दीजै अस गायो ॥
गुरुता कर अधिकारन हेरी । तासों लेत भयो मुख फेरी ॥
दाशरथी तहँ वसि षटमासा । सेवन कियो लगाये आसा ॥

गुरु कह क्यों पद सेवत मोरा। यतिवरको संबंध न तोरा ॥
को तुम कौनहेतु इत आये। दाशरथी तब वचन सुनाये ॥
प्रभु मैं रामानुज कर चेला। चरमारथ हित मोहिं इत मेला॥
चरमारथ करिये उपदेशा। तब गुरु दीन्हों ताहि निदेशा ॥
विद्या कुल धन मद हत जेई। चरमारथ तुम को सो देई ॥
गोष्ठी पूरणकी सुनिवानी। रंग नगर आयो मतिखानी ॥
जाय तुरत रामानुज आलै। करि प्रणाम सब कह्यो हवालै॥
तेहि दिन पूर्णारजकी कन्या। अतुला नाम रही अतिधन्या ॥

दोहा—आइपितासों अस कह्यो, सलिल भरन हम जाहिं ॥
सासु न पठवति संगकोउ, हमहुँ अकेल डराहिं ॥३५॥

पूरणार्य कह सुनहु कुमारी। रामानुज ढिग जाहु सिधारी ॥
कहियो सकल जो मनमें भावे। सोइ तुमरो सब शोक नशावै ॥
अतुला रामानुज ढिग आई। सब हवाल निज गई सुनाई ॥
यतिवर कह्यो दाशरथि काहीं। तुम गवनहु याके सँग माहीं ॥
याको सकल सुधारहु काजा। दाशरथिहि गुनि मोद दराजा॥
अतुलासंग चल्यो अतुराई। करन लग्यो ताकी सेवकाई ॥
पंडित येक रह्यो तेहि ग्रामा। सो किय श्रुतिको अर्थ निकामा॥
दाशरथिहिसुनि सहि नहिं गयऊ। शुद्ध अर्थ भाषत तहँ भयऊ॥
तब पंडित तापर अति कोप्यो। वाद विवाद तहाँ अति रोप्यो॥
दाशरथी पुनि अर्थ बखाना। जामें मिट्यो विरोध महाना ॥
सो सुनि सकल ग्रामके वासी। कियो प्रशंसा गुनि मतिरासी॥
पुनि सिगरे अस वचन सुनायो। कौन काज हित तुम इत आयो

दोहा—दास वृत्त कैसे करत, है पंडित मतिवान।
दाशरथी तब अस कह्यो, गुरुशासन बलवान ॥३६॥

तब सब दाशरथी पद वंदे। भूषण वसन दियो सानंदे ॥

कह्यो क्षमहु हमरो अपराधा। दियो नाथ तुमको सब बाधा॥
अब हम पर करिकै अति दाया। जाहु भवन अपने द्विजराया॥
दाशरथी तब वचन सुनाये। हम गुरु शासनते इत आये॥
विन गुरुशासन हम नाहिं जैहैं। ज्वाब कौन गुरुदेवहि दैहैं॥
तब अतुलायुत सब पुर केरे। जाय कहे रामानुज नेरे॥
यतिवर दाशरथी बोलवायो। ह्वै प्रसन्न चर्मार्थ सुनायो॥
पुनिवर रंगभवन पगु धारा। द्राविडार्थ सब पढ्यो उदारा॥
पुनि निज शिष्यन किय उपदेशा। आयवसे आपने निवेशा॥
यामुन शिष्य महा मति धामा। रह्यो जासु माला धर नामा॥
ताको अपने संग लेवाये। गोष्ठीपूर्ण रंगपुर आये॥
रामानुजसों वचन बखाना। पढहू सहस गीति व्याख्याना॥

दोहा—मालाधर तुव गुरु अहैं, सहस गीतिके ज्ञात।
सहस गीति इनसों पढो, सकल अर्थ अवदात॥३७॥

रामानुज सुनि गुरुकी वानी। पढ़न लगे अति आनँद मानी॥
एक समय रामानुज भाष्यो। अर्थ न यामुन यह कहि राष्यो॥
सुनि मालाधर भये उदासा। जात भये आपने अवासा॥
गोष्ठीपूरण माला धरको। ल्याये फेरि यतीश्वर घरको॥
मालाधरको दियो बुझाई। रामानुजहि गुनो अहिराई॥
पढ्यो यथा सांदीपिनसों हरि। तथा पढ़ावहु तुमहि प्रीति करि॥
अर्थ यामुनाचारज केरे। जानतहैं यतिराज घनेरे॥
मालाधर तब लग्यो पढ़ावन। पुनि बोल्यो रामानुज पावन॥
यामुन अर्थ अहै यह नाहीं। तब माला धर कह ताहिं काहीं॥
लख्यो न तुम यामुन मति केतू। तासु अर्थ जानहु केहि हेतू॥
तब रामानुज कह मुसकाई। यामुन अर्थ गयो मोहिं आई॥
एकलव्य जिमि रह्यो निषादा। द्रोणहि मान्यो गुरु मर्यादा॥

दोहा—कबहुँ लख्यो नहिं द्राणको, तेहि मूरति गृहराखि ॥
सकल शास्त्र विद्या पढ़ी, तिमि जानहु हरि साखि॥३८॥
रामानुजके वचन सुनि, मालाधर मन माहिं ।
तासु प्रभाव विचारि मन, गुन्यो शेषतेंहिं काहिं॥३९॥
अपने सुतको शिष्य करायो। रामानुज पढाइ घर आयो ॥
एकसमय रामानुज स्वामी। ध्यावत रंगनाथ खगगामी ॥
यामुन सुत वर रंगहि नामा। कीन्हा गवन सुरत तेहि धामा॥
मारग मास रह्यो तहि काला। राम विवाह उछाह विशाला ॥
तीन उछाह माहँ वर रंगा। राच्यो रुचिर रामके रंगा ॥
नृत्य करत रह रघुपति आगे। गावत मधुर सुपद अनुरागे ॥
ताहि देख रामानुज हरष्यो। बार बार नैननि जल बरष्यो ॥
करन लग्यो ताकी सेवकाई। रैन दिवस नम्रता दिखाई ॥
रामानुजकी लखि सेवकाई। सो वर रंग कह्यो सुनु भाई ॥
सेवन करहु मोर जेहि हेतू। सो अब कहहु प्रगट कुलकेतू॥
तब रामानुज कह कर जोरी। चरम अर्थ पढने मति मोरी ॥
तब वररंग कृपा अति कीन्हो। रामानुजहि पढ़ाइ सो दीन्हा ॥
दोहा—परब्रह्म गुरुदेवहै, परधन गुरुहि विचार ।
परम काम गुरुहैं सदा, गुरुहैं परमअधार ॥ ४० ॥
परविद्या गुरु जानिय, परगति गुरुको मान ॥
उपदेशकजो जानको, गुरुते गुरु नहिं आन ॥ ४१ ॥
सकल उपाय उपेय जग, गुरुको लेहु विचारि ॥
यह उपाइ पंचम अहै, दियो वेद निर्धारि ॥ ४२ ॥
ऐसो जब वर रंग पढ़ायो। रामानुज अति आनँद पायो ॥
तब वररंग यतीश्वर काहीं। जान्यो शेष रूपमनमाहीं ॥
अपने अनुजहि सव्य करायो। रामानुज अपने घर आयो ॥

वस्यो रंगपुर सहित समाजा। कारक सकल जनन कर काजा॥
गोष्ठीपूरण कांची पूरण। शैलपूर्ण औरहु जो पूरण॥
अरु मालाधर सुमति निवेरे। पाव शिष्य ये यामुन केरे॥
पाँचहु रामानुजहि पढायो। निज निज पुत्रन शिष्य करायो॥
रंग नगर रामानुज आजा। जैसे सुरन सहित सुरराजा॥
विन गुरु कृपा परमगति नाहीं। जानहु यही सत्य मनमाहीं॥
सब आचार्यनके मधिमाहीं। रामानुज मुनि सरिस सोहाहीं॥
गुह्यत्रय यतिवर निर्माना। जामें सर्व श्रेष्ठ भगवाना॥
हरि आराधन क्रम जेहिं माहीं। सकल शास्त्र सिद्धांत सोहाहीं॥

दोहा—रंगनाथको विधि सहित, पूजन आठौ याम॥
करवावन वैष्णवनसों, यतिवर लह्यो अराम॥ ४३॥

कवित्तघनाक्षरी—जालिम जगत कलिकालहै कराल साचो धर्मको न ख्याल रहै ख्याल मुक्त मालमें॥ रंगनाथ पूजकते माथ धुनि डारचो नाहिं लाग्यो कछु हाथ धन गाथ कौन्यो कालमें॥ पूजक प्रधान अनुमान कीन्हो मानस मे रामानुज प्राण हरौ खुशी यहि ख्यालमें॥ द्विज भरमाया ताकी जायाको बुझाया जाइ दशकोटिगुण देन गुरुको कुचालमें॥ १॥

।—रामानुज यति राज, साधारण परभातमें॥
भिक्षा माँगन काज,तेहि द्विज भवन कियो गवन॥४४॥

सो द्विज निकट बोलि निज नारी। लहि इकांत अस गिरा उचारी॥
आयो भीखलेन यतिराई। देहु गरल मुखसरल सुनाई॥
सुनि पति वचन नारि दुखमानी। भिक्षा माहिं गरल कछु सानी॥
तौन अन्नलै बाहेर आई। दीन्हो यतिवर कर शिरनाई॥
तासु चरणमहँ तिय लखिदीन्ही। यह विष वलित भीखल्यो चीन्ही
यतिवर जानि भीखलै लीन्हो। श्वानहि सो खवाइ प्रभु दीन्हो॥

करि जलपान बहुरि घर आये। यह सुनि गुरु श्रीपूर्ण सिधाये ॥
यतिवर लेन गये अगवानी। कावेरी तट मिले विज्ञानी ॥
लखि गोष्ठीपूरण गुरु काहीं। परे दंड सम अवनी माहीं ॥
गोष्ठीपूरण तेहि न उठायो। करन परिक्षा हित चित चायो॥
लागि रह्यो तहँ माधव मासा। रही तपित रज मनहुँ हुतासा॥
रामानुज तनु चल्यो प्रसेदू। सो लखि भयो येक द्विजखेदू ॥

दोहा–गोष्ठीपूरणसों कह्यो, शिष्यसो अति अकुलाइ ॥
क्यों न उठावहु मम गुरुहि, आरो मारन धाइ ॥४८॥

गोष्ठीपूरण तुरत उठाई। रामानुजको कह्यो बुझाई ॥
याके कर अब भोजन करहू। और विश्वास हिये नहिं धरहू ॥
सिकता तापित तुमहि निहारी। लीन्हों तुमहि पीठि निज धारी॥
मोको कह्यो कुपित अति बानी। याकी मति तुवहित अति सानी॥
गोष्ठीपूरण शासन शिरधरि। रामानुज आयो पुनि घर फिरि॥
रंगभवन इक दिवस अकेले। गयो दरशहित कोउ नहिं भेले॥
पूजक चरणामृत विष घोरी। दीन्हो यतिवर कहँ द्रुत दोरी॥
विषहु जानि चरणामृत मानी। कियो पान यतिवर सुखआनी॥
सो विष अमृत भो तेहिं काला। तेहिं बचाइ लिय दीनदयाला॥
यहि विधि सिगरे पूजक पापी। रामानुज परसंतन तापी ॥
बहु विधि मारण कियो प्रयोगू। पैसब वृथा भये उत योगू ॥
यतिवर तिनहि कह्यो कछु नाहीं। मान्यो जैसे रह्यो सदाहीं ॥

सोरठा–साधुनकी यह रीति, करहिं कबहुँ अपकारनहिं ॥
मानहिं सबसों प्रीति, शत्रुहि मित्र समान गुनि॥४९॥

गंगातट तीरथ पति प्रागा। जासु सुयश जग जाहिर जागा॥
तहँ इक यज्ञ मूर्ति अस नामा। भयो विप्र इक विद्या धामा ॥
पढ़िबहु शास्त्र वाद बहु कीन्हो। पंडित सभा जीति सब लीन्हो॥

सुन्यो श्रवणसों दक्षिण देशा। रामानुज पंडित इक वेशा॥
रामानुज जीतन चित चहिकै। गवन्यो दक्षिण देश उमहिकै॥
शत पंचाशत शकटन माहीं। भरे अनेकनि पुस्तक काहीं॥
लीन्हे संग शिष्य समुदाई। रंगनगर पहुँच्यो सो जाई॥
रंग नाथको दर्शन करिकै। रामानुजहि कह्यो तहँ अरिकै॥
पंडित सुनियत तुमहिं प्रवीना। ताते वादकरन मन कीना॥
होय हमार तुमार विवादा। होवै जीतनकी मर्यादा॥
तुमसों अजय मान हम होवैं। तुव पादिका शीश महँढोवैं॥
हमसों जो जावहु तुमहारी। तौ मम शिष्यन होहु अचारी॥

दोहा—यज्ञ मूर्तिके वचन अस, सुनि यतिराज सुजान।
एवमस्तु कहि देतभे, माच्यो वाद महान॥ ४७॥

रंगनाथ मंदिर महँ दोऊ। भयो विवाद लख्यो सब कोऊ॥
भयो सप्तदश दिवश विवादा। रही समान उक्ति मरयादा॥
यज्ञमूर्ति सत्रहवैं द्योसा। प्रबल परचो अनेकदै दोसा॥
समाधान रामानुज केरे। परेशिथिल तेहि द्यौसघनेरे॥
उठि यतिपति निजमंदिर आये। निज मन शोक समुद्रडुबाये॥
करि व्रत शयन कियोनिशिमाहीं। सुमिरचो बार बार प्रभु काहीं
रंगनाथसों कह्यो पुकारी। अब मर्यादा जाति तिहारी॥
तुमहीं यह मत थापित कीन्हो। तुमहीं अब खंडन मन दीन्हो॥
करन हतो जो ऐसहि नाथा। प्रथमहि दियो शीश कसहाथा॥
अस कहि यतिवर कीन्होशयना। रात स्वप्नमहँ कह श्रीअयना॥
काल्हि विजय पैहौ यतिराई। जैहै यज्ञ मूर्ति शिरनाई॥
हरि निदेशसुनिअतिसुखमानी। जागि उठ्यो यतिवर मति खानी॥

दोहा—हरि हरि कहि उठि नाइ द्रुत, नित्य नेम निरधारि।
रंगभवन आवत भयो, ध्यावत चरणखरारि॥ ४८॥

यज्ञमूर्ति यतिपति कहँ जोह्यो। मानहुँ सिंह शैल अवरोह्यो ॥
औरहु दिनते दुगुन प्रकासा। दूनो हर्ष दुगुन मुख हासा ॥
यज्ञमूर्ति तब मनहिं विचारी। मोसों काल्हि गयो यहहारी ॥
हर्षवान आवत अति आजू। कारण कौन कियो नहिं लाजू ॥
यहहै रंगनाथ परभाऊ। याके जीतन को न उपाऊ ॥
रंगनाथकर रूपा। उद्धत सार्वभौम यति भूपा ॥
यज्ञमूर्ति अस मनहिं विचारी। गह्यो तासु पद पाणि पसारी ॥
बार २ करि दंड प्रणामा। बोल्यो वचन महामति धामा॥
तुमसों हम विवाद नहिं करिहैं। आप पादुका शिरमहँ धरिहैं ॥
तब रामानुज वचन बखाना। क्यों नहिं करहु विवाद सुजाना॥
यज्ञमूर्ति तब कह कर जोरी। नहिं सामर्थ्य वादकी मोरी ॥
जन जन सों जग होत विवादा। ईश जीवकी नहिं मर्यादा ॥

दोहा–रंगनाथके रूप तुम, हम लघु पंडित विप्र।
मोहिं शिष्य अपनो करो, करि दाया प्रभु क्षिप्र॥४९
यज्ञमूर्तिको तुरतहीं, शिष्य कियो यतिराज।
रंगनगरमें वसत भो,सेवत सहित समाज ॥ ५० ॥
तजो जनेऊ जो प्रथम, ताको प्रायश्चित्त।
करवायो यतिराज तेहि, विमल भयो तब चित ५१॥
संस्कारकरि पाँचहू, शीश शिखा रखवाइ।
नामदेव मन्नाथ दिय, मतके ग्रंथ बढ़ाइ ॥ ५२ ॥
देवरायइक नाम अरु, द्वितिय देव मन्नाथ ।
यज्ञमूर्तिको देत भे, उभयनाम यति साथ ॥ ५३ ॥

तासु तेज विद्या बुधि देखी। रामानुज निज ते वर लेखी ॥
इक नवीन मठ बृहद बनायो। देवराज कहँ तहाँ टिकायो ॥
तहँ ऐश्वर्य बनाइ महाना। राख्यो बहु भागवत प्रधाना ॥

तहँ चारि द्विज पंडित आये ।यतिपति शरण होन चित चाये॥
यतिपति देवराज मुनि नेरे । पठवायो करवावन चेरे ॥
देवराज मुनि चारिहु 'काहीं । किये समाश्रित अति सुखमाहीं॥
कह्यो द्विजनसूं सुनहु पियारे । है यतिराज अधार हमारे ॥
यह विभूति सब यदुपति केरी । धोखेहु विप्र न जानहु मेरी ॥
गुरुके वचन विप्र सुनि चारी । धन्य धन्य अस गिरा उचारी॥
तहँ पश्चिमते वैष्णव आये । रंगनगर मधि ते गोहराये ॥
कहँ मंदिर मन्नाथ सुमतिको । देहु बताइ हमहि यतिपतिको ॥
पुरजन कह्यो रंगपुर माहीं । द्वैमन्नाथ भवन दरशाहीं ॥

दोहा—पुरजनके अस वचन सुनि, वैष्णव विस्मयमानि ।
कहत भये पुरजनन सों, परैनदूसरजानि ॥ ५४ ॥

इक यति पति मन्नाथ महाना । मम ईश्वर भागवत प्रधाना ॥
अबलौं हम जान्यो इक काहीं । दूसरहै मन्नाथ कहाहीं ॥
गुरुजन तब सब भेद बतायो । यतिपति जस मन्नाथ बनायो॥
देवराज मुनि सुन्यो हवालै । मोर नाम भ्रम होत कृपालै ॥
अति दुख मानि गुरू ढिगआयो।बहुत विलखि अस विनयसुनायो
नाथ विभूति आपनी लेहू । तोहिं तजि रहौं न दूसर गेहू ॥
भटकत भटकत यह संसारा । बहुत दिवस महँ भयो उधारा॥
तुम्हरे नाम होइ भ्रम मोरा । यह दुख मोहिं पिया पत घोरा॥
अस कहि सकल विभूति विहाई।रहन लग्यो यतिपतिगृहआई॥
रामानुज स्वामी अति हर्षै । तापर कृपा सलिल अति वर्षै॥
वरदराज पूजन अधिकारा । दीन्हो ताहि जानि अविकारा॥
देवराज मुनि किय द्वै ग्रंथा । जामें गुरुपद रतिकी पंथा ॥

दोहा—एक समय यति नाथ प्रभु, शिष्य पढावत माहिं ।
वचन कह्यो यहि भांतिते, देखि शिष्यगण काहिं५५

व्यंकट नाथहि गो चित लाई। पूजे तुलसी फूल चढ़ाई ॥
ताको फल अनंत विधि होवै। कोटि जन्मके पातक खोवै ॥
तब अनंत इक शिष्य सुजाना। नाइ चरण शिर वचन बखाना॥
व्यंकटेश पूजन मोहिं देहू। मेरो तापर परम सनेहू॥
एवमस्तु स्वामी कहि दीन्हो। गवन सुव्यंकट गिरि कहँ कीन्हो॥
रच्यो विमल वृंदावन बागा। तुलसि पुहुपते पूजन लागा ॥
निष्ठा तासु सुनत यति राजा। व्यंकट गिरि गवने कृत काजा॥
महित क्षेत्र तेहि मारग माहीं। देख्यो पद्मविलोचन काहीं ॥
तिनलो वंदि धनद दिशि जाई। वसे देहलीपुर यतिराई ॥
तहाँ त्रिविक्रम प्रभुको वंदे। चित्रकूटगे परम अनंदे ॥
तहँ बहु विषम वाद करतारा।समय जानि नाहिं तिनहिं सुधारा॥
अष्ट सहस्र गाउँ पुनि गयऊ। तहँ वै शिष्यनाथके रहेऊ ॥

दोहा–एक दरिद्री एक रह, धनि यतिपती समीप।
पठवायो निज शिष्य द्वै, श्रीवैष्णव कुलदीप ॥५६॥

धनमद विवश धनी अज्ञाना। कीन्हो नहिं वैष्णव सन्माना॥
गुरु सत्कार साजि सब साजा। वैष्णव फिरे जानि हत काजा॥
यतिपतिसों कह आइ दुखारी। धनी सुन्यो नाहिं बात हमारी॥
सोतो धनमद अंध महाना। कीन्हो नहिं हमरो सन्माना ॥
यद्यपि चह आपन सत्कारा। पै कीन्हो वैष्णव अपकारा ॥
नहिं प्रसन्न भे यतिपतिताते। फिरत भये तापर अनपाते॥
चह्यो करन सत्कार हमारा। पैनसाधु सत्कार सुधारा ॥
मोतें अधिक अहैं मम दासा। तिन अपमान मान ममनासा ॥
मुख न विलोकव ताकर ताते। जैहै जन्म जगति पछिताते ॥
असविचारि रामानुज स्वामी। भये दरिद्रि शिष्य गृहस्वामी ॥
जो न समय गुरु आगम भयऊ। रह्यो न सो भिक्षाटन गयऊ ॥

रही भवन महँ ताकर दारा। गुर आगम निज भवन निहारा॥
दोहा–तनु भरि वसनहु नहिं रह्यो, लाज विवश सो नारि॥
कढी न बाहिर भवन के,सकी न गुरुहि निहारि॥८७॥
रामानुज तहँ शिष्य समेता। भवनद्वारगे कृपानिकेता॥
तब तिय दियो हुंहु करतारी। तब प्रभु तिय विन बसन विचारी
दीन्हों फेंकि शीश निज चीरा। सो तिय धारण कियो शरीरा॥
स्वामीचरण गिरी कढि परते। सादर चरण धोइ दुहुँ करते॥
बहुरि सकल संतनपद धोयौ। धनि २ जगत जन्म निज जोयौ॥
यतिपतिसों किय विनय बहोरी। रहहु आजु इत असरुचि मोरी
अहौं दरिद्रिनाथ सब भांती। तुमहि देखि भै शीतल छाती॥
जो कछु होइ अन्न घर मेरे। लागै नाथ आजुहित तोरे॥
भोजन करहिं इहां सब संता। भूरि भाग्य भेट्यो भगवंता॥
असकहि भीतर भवन सिधारी। नहिं कछु घरमहँ अन्न निहारी॥
लगी विचार करन द्विजदारा। केहि विधि करौं नाथ सत्कारा॥
भूषण वसन अन्न धन नाहीं। गेपति कहुँ भिक्षाटन काहीं॥
दोहा–एकवणिक मम मिलनहित,देनकह्यो धनभूरि॥
राखनहितपतिधर्ममें, दीन्हों आशातूरि॥ ८८॥
भाषतहैं अस वेद पुराना। करै अवहु करि गुरु सन्माना॥
तदपि न होइ धर्मकी हानी। सुमति अनेक यहू भल जानी॥
ताते वनिक निकट चलि जाऊं। ताकी आश पूरि धन ल्याऊं॥
गुरुकारजजो लगै शरीरा। सफल जन्म सोइ कह मतिधीरा॥
अस विचारि तेहिं वनिक निकेतू। द्विजरवनी गवनी गुरुहेतू॥
कह्यो वचन सुनु वणिक सुजाना। बहुदिन ते तैं रहे लोभाना॥
मन भावत अपनो करि लीजै। गुरुहित आजु साजु सब दीजै॥
शिष्यसहित रामानुज स्वामी। करैं न कछुक मोर बदनामी॥

वणिक विचार कियो मनमाहीं।गुरहित याहि तनुकी सुधि नाहीं
धर्म हेतु त्यागति मर्यादा। गुरुहित कछु न भीति अपवादा॥
धन्य धन्य युवती जग ऐसी। किय गुरुभक्ति वेद महँ जैसी॥
अस गुणि उठ्यो वणिक मतिवंता। नारि चरण महँ पर्यो तुरंता॥

दोहा—गौरीसम जगवंदनी, नारि शिरोमणि आप॥
पतिव्रतानि समाजमें, सत्य रावरी थाप॥ ५९॥

जाउ भवन भगवतकी प्यारी। मैं गुरसेवन साजु सँवारी॥
ऐहौं तेरे भवन तुरंता। करिहौं दरश गुरू भगवंता॥
अस कहि वणिक साजु बहु भांती। पठवायो तिय सँग सुख माती
रचि भोजन बहुविधि निजहाथै। भोजन करवायो निजनाथै॥
कीन्हों जेहि विधि गुरु सत्कारा। सब संतनको तेहि परकारा॥
विप्रप्रियाकी पेषत प्रीती। गुन्यो गुरू लिय सेवा जीती॥
करि भोजन गुरु बैठे जबहीं। आयो नारि कंतगृह तबहीं॥
यतिपति पदसों कियो प्रणामा। तारि काम सुनि भो कृतकामा॥
पतिसों तिय सब कह्यो हवाला।जेहि विधि भोजन दियो विशाला
परम प्रसन्न भयो पतिताको। मान्यो फल गुरुदेव कृपाको॥
पतिसों तिय निज कपट दुराई। लैइकांत वृत्तांत सुनाई॥
तियको पति कछु गन्यो न दोषू। वाम धर्मकी धाम अदोषू॥

दोहा—दंपति गुरुपद वंदि पुनि, दियो प्रदक्षिण चारि॥
जोरि पाणि स्तुति करत, नयन बहावत वारि॥६०॥
गुरु आशिषदै शिष्यको, हर्षित हिये लगाय॥
बारहिंबार सराहिकै, बसत भये सुखपाय॥ ६१॥

तब प्रमुदित नारी पुनि आई। गुरुपद धोइ सलिल लैधाई॥
गुरुको जूठहु अन्नहु लीन्हो। जाइ तुरतसों वैश्यहि दीन्हो॥
कह्यो वचन यह गुरुपरसादू। शिर धरि खाहु सहित अहलादू॥

शिर धारि किय चरणोदक पाना। गुरुजूंठनखायो पकवाना ॥
ताक्षण भई विमल ममताकी। पऱ्यो चरण तियके सुखछाकी॥
जोरि पाणि बोल्यो अस बाता। तैं मम गुरु ईश्वर पितु माता ॥
क्षमहु मोर अपराध महाना। मैं कछु तव प्रभाव नहिं जाना॥
लै चलु अपने संग लेवाई। गुरुशरणागत वेगि कराई ॥
तब ताको तिय करगहि ल्याई। स्वामी शरणागत करवाई ॥
छूटे कोटि जन्मके पापा। करन लग्यो अष्टाक्षर जापा ॥
तापर ह्वै प्रसन्न यतिराई। लियो जो संपति वैश्य चढ़ाई ॥
उपजो वैश्यहि विमल विरागा। तजि धन धाम राम अनुरागा ॥

दोहा–विप्र विप्र तिय अरु वणिक, रामानुजकेसंग ॥
वसुधामें विचरन लगे, रँगे राम रतिरंग ॥ ६२ ॥

धनिक शिष्य जो यतिवर केरो। करिऽपमान जो संतन फेरो ॥
सुन्यो सो गुरुपुर आगम जबहीं।गिऱ्यो आइ यतिपतिपद तबहीं
विनय कियो नम्रित कर जोरी। करहु पवित्रकुटी प्रभु मोरी ॥
तब रामानुज तेहिं अस भाष्यो। साधु सेवतें नहिं अभिलाष्यौं ॥
नहिं यहि भांति संतकी रीती। तैं त्याग्यो जिय ते यम भीती॥
मुख्य धर्म यह चारि प्रकारा। तामें प्रथम संत सत्कारा ॥
गुरुविश्वास राम अनुरागू। जगकर विषय भोग सब त्यागू ॥
सब कर साधु सेवहिं मूला। तामें प्रथम भये प्रतिकूला ॥
जवै संत घर पाहुन आवै। चरण धोइ तेहिं विजन चलावै॥
भोजन दै पुनि प्रभु सम पूजी। मंगल तासु उपाइ न दूजी ॥
हाले तब आलै नहिं जैहैं। तब पखंड केहिभांति छिपैहैं ॥
कालांतर महँ पुनि तुम ऐहौं। सेइ संत तब घरलै जैहौं ॥

दोहा–बहुत भांतिसों किय विनय, पै न गये यतिराज ॥
क्षेत्र सत्य व्रत गवन किय,लै निज संत समाज॥६३॥

तहँ रह कांचीपूरण स्वामी। मिले तिनहिं गुणि जगत अकामी॥
वरदराजको दरशन लीन्हो। वासित रात्र संत सँग कीन्हो॥
पुनि कीन्हो व्यंकट गिरि गवना। तहँ रह कपिलतीर्थ अघदवना॥
दश योगी तहँ वसे सदाहीं। कछु दिन वसे यतीश तहांही॥
तहँ इक विठ्ठल देव भुवाला। प्रभु सेवन आयो तेहिं काला॥
लखि अनूप यतिराज प्रभाऊ। भयो शिष्य भरि भूरि उराऊ॥
गुरुहि समर्प्यो सो धनभूरी। भैतेहिते यमकी भय दूरी॥
पुनि तुँडीर मंडल इक देशा। तहँ विलमंगल ग्राम सुवेशा॥
गवन कीय तहँ यति गण कंता। सुनि आये तहँके सब संता॥
विनय कीन्ह प्रभु गिरिपर चलहू। हरिहि दरशि जन दुखदल दलहू॥
प्रभु कहं वसैं सुसंत इहाँहीं। हम किमि शैल शीशपर जाहीं॥
करै अचारज सो सिखि गहई। शेष रूप यह भूधर अहई॥

दोहा—संत कहे कर जोरिकै, जो तुम जैहौ नाहिं॥
तौ किमि कोई जायगो, होई धर्म वृथाहि॥ ६४॥

दीन वचन सुनि संतन केरे। नाथ शैलचढ़िवो चितहेरे॥
व्यंकट नाथ चरण धरि माथा। चढे शैलपर साधुन साथा॥
बीचहि शैलपूर्ण गुरु आये। दै प्रसाद गुरु को सुख छाये॥
यतिपति किय तेहिं दंड प्रणामा। कह्यो नाथ आये केहिकामा॥
जो प्रसाद शिशुकर पठावते। तबहूँ हम अति मोद पावते॥
गुरु कह बालक रहे न कोई। आयो मही प्रीति तव जोई॥
शैल पूर्ण लै यतिपति काहीं। गवन किये हरि मंदिर माहीं॥
तहँके तीरथ सकल नहाई। तीनि दिवस बिन अशन विताई॥
उतरि शैलसे संत समेतू। शैल पूर्णके गये निकेतू॥
कीन्हो तहाँ वर्ष दिन वासा। शैल पूर्ण सँग सहित हुलासा॥
शैलपूर्णकी करि सेवकाई। रामायणहि पढ़्यो यतिराई॥

तहँ गोविंदाचार्य सुजाना। एक दिवस करि प्रेम महाना॥
दोहा—यतिपति सोवन सेज रचि, आप रहे तेहिं सोइ।
रामानुज गोविंद सों, बोले अनुचित जोइ॥ ६५॥
गुरुहितसेज विरचि तुम सोये। शास्त्ररीति कस कबहुँ न जोये॥
तब गोविंद कह्यो कर जोरी। सेज परीक्षा इत किय खोरी॥
वरुक नरक दुख लहौं अभागै। पै नाहिं तुव तनु कंटक लागै॥
सुनि गोविंद वचन यतिराई। प्रीति पेखि उर लियो लगाई॥
एक समय यतिपति गोविंदा। गये विपिन विहरन सानंदा॥
तहँ मुख कंटक वेधित व्याला। लखि गोविंद दयालु विहाला॥
भय तजि अहि मुख अंगुलि डारी। कंटक लियो तुरंत निकारी॥
पुनि मज्जन करि यतिपति नेरे। आवत भे तब यतिपति टेरे॥
बिलमें कह गोविंद यहि काला। तब गोविंद कह व्यालहवाला॥
शैल पूर्ण ढिग पुनि दोउ आये। रंगनगर हित विदा कराये॥
शैल पूर्ण कह कहा त्वहि देहू। सकल लगत लघु निरखि सनेहू॥
यतिपति कह मानहु जो सेवा। देहु गोविंदहि तो गुरुदेवा॥
दोहा—शैलपूर्ण कर करि कुशा, लै जल पढि संकल्प।
यतिपतिको गोविंद दिय, करिकै प्रेम अनल्प॥६६॥
तब गोविंद और यतिराजू। गवने कांची सहित समाजू॥
घटिकाचल नृसिंह अभिरामा। गृध्र तड़ाग तीर सिय रामा॥
दर्शन करत पंथ यहि भांती। आये कांची सहित जमाती॥
वरदराजको दर्शन कीन्हो। गुरु गृह पदै गोविंदहि दीन्हो॥
शैल पूर्ण ढिग गोविंद आये। खान पान सन्मान न पाये॥
शैल पूर्ण तिय तब अस कहेऊ। किमि गोविंद सत्कार न लहेऊ
शैल पूर्ण तब गिरा उचारी। उचित न ग्रहन वस्तु दैडारी॥
सुनि गोविंद गुरु वचन तुरंता। कांची चल्यो जहाँ यतिकंता॥

यतिपतिसों सब कह्यो हवाला। सो सुनि मान्यो मोद विशाला॥
रंगनगर आये यतिराजा। लै सँग गोविंद संत समाजा॥
तेहि वैष्णव आगू चलि लीन्हे। रंग भवनको गवनहि कीन्हे॥
रंगनाथको माथ नवाई। पाइ प्रसाद महामुद छाई॥

दोहा—करि स्तुति कर जोरिकै, आये पुनि निज धाम।
रामायण चिंतन लगे, यतिपति पूरण काम॥ ६७॥

एक समय यतिपति गृह माहीं। श्रीगोविंदाचारज काहीं॥
वैष्णव सकल प्रशंसन लागे। धरि गोविंद गुरुपद अनुरागे॥
अपनी सुनी प्रशंसा जबहीं। गोविंद अति प्रसन्न भो तबहीं॥
तब रामानुज वचन उचारे। कस स्तुति सुनि भये सुखारे॥
अपनी स्तुति सुनि मतिवाना। कोउ प्रसन्न कबहूँ नहिं आना॥
तब गोविंद कही अस वानी। निजसम धन्य नमैं प्रभु जानी॥
भ्रमत रह्यो योनिहिं चौरासी। लही कृपा तव आनँद रासी॥
ताते मो सम नाथ न कोई। अस तो मोहिं परत है जोई॥
गोविंद गिरा सुनत यतिराई। तेहिं सराहि उर लियो लगाई॥
एक समय गोविंद विज्ञानी। गये रंग मंदिर छबि खानी॥
तासुद्वार यतिपति यश गावत। रही एक गणिका छविछावत॥
सुनन लगे भो विलम बडोई। यतिपतिसों कह वैष्णव कोई॥

दोहा—नाथ सुनत गोविंद उत, इक गणिकाको गान।
रामानुज गोविंदको, कियो तुरत आह्वान॥ ६८॥

गुरू कह्यो जब गोविंद आये। गणिका गान कहा चित लाये॥
गोविंद कह गुरु सुयश तिहारा। गावत रहीलग्यो मोहिं प्यारा॥
हे गुरु तव कीरति कोउ गावै। सो मेरो चितफाँसि फँसावै॥
यतिपति गुनि गुरु भक्ति दृढ़ाई। गोविंदहि दिय भूरि बड़ाई॥
एक समय गोविंद की माता। गोविंद सों बोली अस बाता॥

जाहु घरै ऋतुवंतिनि नारी। मातु वचन सुनि भये दुखारी॥
गुरुसेवाते नहिं अवकासा। नहिं सुधि मोहिं कहँ तिय कहँ वासा
तब गोविंद जननी यतिराजै। कियो निवेदित सिगरो काजै॥
यतिपति हूं गोविंद पठायो। बार बार अस वचन सुनायो॥
करहु गृहस्थ धर्म जब ताईं। तब लगि चलु गृहस्थकीनाईं॥
हम अस सुन्यो जबै घर जाहू। ज्ञान विराग तिये बतराहू॥
जो न गृहस्थ धर्म मन होई। ग्रहण करो त्रिदंड विधि जोई॥
दोहा—तब गोविंद कर जोरिकै, मोहिं देहु संन्यास।
बिन दीन्हे संन्यासके, नहिं छूटी यम पास॥ ६९॥
तब रामानुज विरति विलासी। कीन्हो गोविंदको संन्यासी॥
लागे दैन नाम मन्नाथा। कह गोविंद जोरि युग हाथा॥
मोहि मन्नाम नाम नहिं योगू। कहत नाम तिहरो यह लोगू॥
तब तेहिं नाम दियो जंवारा। गोविंद पायो मोद अपारा॥
आनँद सहित वित्यो कछु काला। किय विचार यतिराज कृपाला॥
जामुन अंत समय हम आये। भाष्य करनको प्रणमुख गाये॥
ताते भाष्य करहुँ यहि काला। ज्ञान भक्ति वैराग्य विशाला॥
नहिं इतहैं बोधायन ग्रंथा। कैसे कै प्रगटी सतपंथा॥
अस विचारि सँग लै कूरेशै। गये शारदापीठि सुदेशै॥
तहँ के लियो पंडितन जीती। कियो शारदा प्रभुपै प्रीती॥
लै बोधाइन ग्रंथ मुनीशा। चलत भये सुमिरत जगदीशा॥
तहँके पंडित सब अकुलाने। बिन बोधायन ग्रंथ सुजाने॥
दोहा—चले चारि पंडित तुरत, आये यतिपति पास।
सो बोधायन ग्रंथको, लिय छड़ाय अनयास॥ ७०॥
जब पुस्तकलै गये छँड़ाई। रामानुज दुख लह्यो महाई॥
तब कूरेश कही अस वानी। स्वामी मति मनकरहुगलानी॥

एकवारमैं सब अवलोका। ह्वै गो कंठ करहु नहिं शोका॥
अस कहि तहँ कूरेश सुजाना। सो बोधायन ग्रंथ महाना॥
रह्यो लक्ष श्लोक प्रमाना। ताको कंठकियो सब गाना॥
रामानुज अचरज मन माना। रंगनगरको कियो पयाना॥
आइ रंगपुर भवनसिधारा। रचन हेतु श्रीभाष्यविचारा॥
तब यतिपति कूरेश बोलायो। तेहिं कर भाष्य प्रबंध लिखायो
रचि यतिपति श्रीभाष्य सुहाई। दिय वेदांत प्रदीप बनाई॥
पुनि वेदार्थ संग्रह निर्माना। पुनि वेदांतसार किय गाना॥
गीता भाष्य रच्यो सुखदाई। ये ते ग्रंथ रच्यो यतिराई॥
श्रीसंप्रदा प्रसिद्ध सुग्रंथा। ताते जानि परत सतपंथा॥

दोहा—एक समय वैष्णव सकल, यतिपतिके ढिगआइ।
विनय कियो प्रभु अवनि मे, करी दिग्विजय जाइ ७१

रामानुज संमत कर दीन्हो। सुघरी साधि गवन प्रभु कीन्हो॥
सादर रंगनाथपद ध्याई। चौलदेश आये यतिराई॥
तहँ करि विजय विष्णुमत थापी। पांडुदेस आये हरि जापी॥
तहाँ जीति कुरका पुर आये। तहँ दश ग्रंथ पढे सुख छाये॥
तहँशठकोपस्वामि कर मंदिर। गवन कियो तहँ यति कुल चंदिर
यतिपुंगव करि ग्रहण प्रसादा। यह श्लोक कियो तहँ वादा॥

श्लोक—बकुल धवल माला वक्षसं वेदबाह्य प्रबल समय वाद च्छेदनं पूजनीयम्॥ विपुलकुरुकनाथं कारिसूनुं कवीशं शरण मुपगतोहंचक्रहस्तेभवक्रम्॥ १॥

गये कुरंगनगर यतिनाथा। द्वादशसहस संतलै साथा॥
संग जासु चौहत्तर पीठा। वादयुद्धजे दिये न पीठा॥
पुनि रामानुज संतन संगा। आये सादर नगर कुरंगा॥
तहँ कुरंगपूरण भगवाना। तिनको दरश कियो सविधाना॥

जब मंदिरमहँ गये यतीशा। प्रगट कह्यो तहँते जगदीशा ॥
इतके लोग मोहिं नहिंमानै। विविध भांतिके नाम बखानै ॥
दोहा—सबको तुम शासन करहु, प्रगटहु मोर प्रभाव ॥
अनाचार करते महा, सो मेटहु यतिराव ॥ ७२ ॥
अपने शिष्य करहु मोहिं काहीं। बैठि कनक सिंहासन माहीं ॥
अस कहि उतरि सिंहासनते हरि। बैठायो रामानुज करधरि ॥
शीश नवाइ वदन ढिग लाये। हरि कहँ यतिपति मंत्र सुनाये
पांचहु संस्कार प्रभु केरो। यतिपति किय जस वेदनिवेरो॥
यह आचार्य देखि सब लोगा। सत्य सत्य कह भक्ति प्रयोगा॥
रामानुजके शिष हरि भयऊ। यह यश त्रिभुवनमहँ भरिगयऊ॥
रामानुजको रथहि चढ़ाई। विदा कियो हरि शीश नवाई ॥
रामानुज किय दंडप्रणामा। मम अपराध क्षमहु गुणधामा ॥
तौन देशवासी जन सिगरे। जे हरिविमुख रहे मति बिगरे ॥
ते प्रभुपद पूरी किय प्रीती। कीन्हों वैष्णव शास्त्रप्रतीती ॥
रामानुज गे केरलदेशा। लख्यो अनंत सैन कमलेशा ॥
रामानुज नामक इक मंदिर। रचि नास्तिकन जीति यतिचंदिर
दोहा—पश्चिम सागर तटहि तट,द्वारावती सिधारि ॥
तहँ यदुपतिको दरश करि,गे मधुपुरी पधारि ॥७३॥
मथुराते वृंदावन आये। पुनि बदरीवनकाहँ सिधाये ॥
बदरीवनते अवध पधारे। मुक्तिनाथको फेरि सिधारे ॥
औरहु नैमिष पुष्कर आदी। सकल तीर्थ कीन्हे अहलादी॥
तहँ तहँ जे नास्तिक मतवारे। तिनहिं जीति निजपंथ पसारे॥
पुनि शारदपीठि महँ आई। जहँ ज्वाला देवी सुखदाई ॥
गे दर्शन हित मंदिर माहीं। देवी भई प्रत्यक्ष तहाँहीं ॥
पूछ्यो श्रुतिको अर्थ भवानी। यतिपतिके सब अर्थ बखानी

सुनि चंडिका लह्यो सुखधामा। भाष्यकार दीन्हो असनामा॥
यतिपति कह केहि कारणमाता।भाषसि मोर सुयश अब दाता॥
कह्यो अंबिका पंडित केते। अस न कह्यो आये इत येते॥
तहँ पंडित बहु किये विवादा। पायपराजय लहे विषादा॥
तहँको भूप शिष्य ह्वै गयऊ। यतिपति शेषरूप गनि लयऊ॥

दोहा—यतिपति पर पंडित कुमति, किय मारन अभिचार।
ते वैकल बागन लगे, विष्टा करत अहार॥ ७४॥
पुनि राजासों ह्वै विदा,वैकल बुधन सुधारि।
गंगातट आवत भये, रामानुज यशकारि॥ ७५॥

पुनी काशी आये यतिराई। तहँ निजकीरति चहुँकितछाई
पुनि पुर खोजत ध्येव सिधारे। लखि नीलाचलभये सुखारे॥
करि जगदीश दर्श कछु काला। बसत भये तहँ पुरी कृपाला॥
मठ विरच्यो रामानुज नामा। अब लौंहै प्रसिद्ध सो धामा॥
कछुदिन प्रभु तहँ कियो निवासा। वितरन वैष्णव वृंदहुलासा॥
देख्यो तहँकी पूजन रीती। जान्यो सकल वेद विपरीती॥
तब पूजकन बोलि यतिराई। साधुनमध्य कह्यो समुझाई॥
जौन भाँति पूजन तुम करते। सो सब वेदविमुख नहिं डरते॥
भोग लगावहु जो सब अटका। वेदविमुख लखि होत सो खटका
कौने ग्रंथन को मत करहू। सो समझाय मोर मन भरहू॥
जौन वेद सम्मत जग माहीं। सो सब निष्फल होत सदाहीं॥
पूजक सकल जोरि युग पानी। यतिपति सों अस विनय बखानी

दोहा—जौन रीति प्रभु सर्वदा,चलि आई यहि देश॥
तौन रीति पूजन करैं,भोग लगाय हमेश॥ ७६॥

यद्यपि जानहिं वेद विधाना। पैयत है प्रभु यही प्रमाना॥
नहिं कबहूं शास्यो जगदीशा। नहिं हमको दूसर मत दीसा॥

यतिपति सुनि पंडन की बानी। बोले कुपित अनै अनुमानी॥
वेद विमुख हरि को उपचारा। करत होत शिर पातक भारा॥
मोरे लखत वेद विपरीती। तुम करिहौ तौ पैहौ भीती॥
द्वादश सहस शिष्य हैं मेरे। पूजब हमहिं रहब प्रभु नेरे॥
तुम सबको हम देब निकारी। वेद विरुद्ध विधान विचारी॥
पंचरात्र विधि पूजन करहू। की निज शिविर अनत कहँ धरहू॥
अस कहि यतिपति शिष्य बोलाये। जगन्नाथ मंदिर महँ आये॥
सिगरे पंडन तुरत बोलाई। पंचरात्र विधि दियो सुनाई॥
बहुरि कह्यो कीजे यहरीती। नातौ पावहुगे अति भीती॥
पंडा यतिपति सीख न माने। मौन सदन गे शोकहि साने॥

दोहा—भये भोर पंडा सबै, कीन्हे सोइ विधान॥
यतिपति शिष्यनबोल तब, शासन दियो प्रमान॥७७॥

मंदिर ते सब पंडन काहीं। देहु निकारि रहै क्षण नाहीं॥
द्वादश सहस शिष्य सब धाये। पंडन मंदिर बाहिर लाये॥
रामानुज के शिष्य उदंडा। मंदिर ते काढे सब पंडा॥
रोवत पंडा सकल दुखारी। गये आपने भवन सिधारी॥
तब यतिपति मंदिर पगुधारा। सहित शिष्य वसु वेद हजारा॥
पढि पढि वेदमंत्र सविधाना। मंदिर मार्जन कियो प्रमाना॥
वेद विधान कियो पुनि होमा। करी प्रतिष्ठा यज्ञ ससोमा॥
वेद विहित षोडश उपचारा। कीन्ह्यो पूजन चारिहु बारा॥
द्वारन द्वारन वैष्णवन थापा। ते कीन्हे अष्टाक्षर जापा॥
बीति गयो इक दिन यहि भांती। कियो शयन मंदिर तेहिं राती
यतिपति को जगदीश निशामें। दीन्ह्यो स्वप्न पाछिले यामै॥

दोहा—यतिपति तुम कीन्ह्यो यदपि, सुंदर वेद विधान॥
तदपि मोरि इच्छा प्रबल, यह थल सोइ प्रमान॥७८॥

तातें शासन मानिय मोरा। रहन देहु सोइ विधि यहि ठोरा॥
गयो मोहिं लंघन परि आजू। लग्यो भोग नाहिं यति शिरताजू॥
यहि विधि स्वप्न दियो भगवाना। जागे यतिपति भयो विहाना॥
प्रभु सन्मुख यतिनायक जाई। करी विविध विधि स्तुति गाई॥
पुनि सोइ वासर वेद विधाना। किय पूजन यतियूह प्रधाना॥
पंडा सब जुरिकै तहँ आये। प्रभुको आरत वचन सुनाये॥
बैठे द्वार धरन सब ठाना। यतिपति कियो वचन नहिं काना
बीत्यो यहि विधि वासर सोऊ। पंडन विनय सुन्यो नहिं कोऊ॥
राति स्वप्न दीन्ह्यो जगदीशा। मोरि विनय मानिये यतीशा॥
गंगा दक्षिण दिशि जे देशा। तिन महँ तुव अधिकार हमेशा॥
यह थल मेरे अहै अधीना। लखहु न तुम इत विधिरहीना॥
जागे जब प्रभात यतिराई। जगन्नाथपर गे अनखाई॥
पंडनहूं को दिय प्रभु सपना। तुम अधिकार पाइहौ अपना॥

दोहा–प्रभुको शासन सुनत सब, गये सदन सुखमानि॥
इत यतीश जगदीश ढिग, कहत भये अस वानि॥७९॥

तुमहीं कियो वेद कर वादा। अब तुमही मेटहु मर्यादा॥
तातें प्रथम वचन हम मानै। यह शासनहि मृषा अनुमानै॥
वदहु मोहवश पंडन केरे। जे श्रुति शास्त्र विधानहि फेरे॥
हमहिं दियो अपनो अधिकारा। तब नहिं यह कस कियो विचारा॥
तुमहिं कह्यो श्रुति शास्त्रन माहीं। जहँ विक्षिप्त भूप ह्वै चाहीं॥
तहां सचिव सब लेहि सुधारी। भूपहि विजन भवन महँ डारी॥
तातें नहिं मानव तुव भाखा। करब सो जो प्रथमहि कहि राखा॥
अस कहि पूजन वेद विधाना। करवायो यति वंश प्रधाना॥
वेद विहित विधि भोग लगायो। महाप्रसाद जनन बटवायो॥
सोउ दिन बीति गयो यहि रीती। तब जगदीश मानि अति भीती॥

दीनदयालु भक्त आधीना। यतिपति काहिं स्वप्न पुनि दीना॥
आज हमहिं भे तीनि उपासा। कहि न सकै कछु तुम्हरे त्रासा॥
दोहा—स्वप्नहिं भे यतिनाथ हू, नहिं मानी प्रभु वानि।
तब जगदीश विचार किय, भक्त प्रबल अनुमानि८०॥
जबलों इत रहिहैं यतिराजा। तबलों करिहैं ऐसेहि काजा॥
सेवा करि लीन्ह्यो मोहिं जीती। यापर मोरि परमहै प्रीती॥
ताते यहि अनतै पठवाऊं। पुनि प्रथमहि की रीति चलाऊं॥
अस विचारि प्रभु गरुड़ बोलायो। सो निशि माहिं नाथ ढिगआयो
कह्यो वचन गरुड़हिं जगदीशा। तुम उड़ाय लैजाहु यतीशा॥
कूरमक्षेत्र देहु पहुँचाई। कानहु कान न परै जनाई॥
तब तेहि निशि सोवत खगराई। शिष्य समेतहि पच्छ चढ़ाई॥
कूरमक्षेत्र दियो पहुँचाई। नहिं जागे नहिं पर्यो जनाई॥
भोर भये जागे यतिराई। चहुँदिशि लखत भये चौआई॥
नहिं वह देश न मंदिर सोई। चकित भये जागत सब कोई॥
जगन्नाथ नगरी महँ सोये। जागे कूर्मक्षेत्र कहँ जोये॥
यतिपति सों पूछे भ्रम छाये। केहि विधि नाथ इतै सब आये॥
दोहा—तब विचारि यतिपति कह्यो, प्रभु इच्छा यहिभांति।
पठवायो जगदीश इत, शिष्य सहित यहि राति८१॥
करै न करै अन्यथा करई। अस समर्थ को गुण श्रुति कहई॥
नीलाचल महँ मम प्रभु केरी। यहि विधि इच्छा अहै तमेरी॥
ताते करहि जो कछु मन भावै। अब नहिं हम नीलाचल जावै॥
अस कहि कूर्म समीप सिधारे। तहँ शिवलिङ्ग अकारन हारे॥
तहँ के सकल देश के वासी। कच्छप कहँ मानैं कैलासी॥
तिनके वचन सुने यतिराई। कियो वास कछु अंन नखाई॥
स्वप्न दियो कूरम भगवाना। इतके सकल मनुज अज्ञाना॥

पूजैं मोहिं शिवलिङ्ग विचारी। गुनैं न कमठरूप अविचारी॥
तातें मोहिं प्रगटौ यहि ठोरा। मंदिरढिग सित चंदन मोरा॥
भोर जागि यतिनाथ तहाँहीं। लियो खोदि सित चंदन काहीं॥
वैष्णव दिये तिलक शिरभाला। थप्यो कूर्म यतिराज कृपाला॥
दोहा—तबते कूर्म सरूप तहँ,प्रगट भयो जगमाहिं॥
तेहि प्रसाद अह्लादभरि,भोजन कियो तहाँहिं॥ ८२॥
तहाँ वसे कछु काल यतीशा। इत नीलाचल महँ जगदीशा॥
पंडन बोलि भोग लगवायो। प्रथमकेर निज पंथ चलायो॥
उत जन कमठक्षेत्र के वासी। स्वामी शिष्य भये गति आसी॥
कमठक्षेत्र करि यहि विधि वासा। सिंहाचल आयो सहुलासा॥
पुनि यतिपति गे गरुड़ गिरीशै। तहां नाय नरहरि कहँ शीशै॥
गये वेंकटाचल यतिराई। तहँ कौतुक लखि परचो महाई॥
जोरि जमाति शैव सब आये। सकल वैष्णवन वचन सुनाये॥
स्वामिकार्तिक की यह मूरति। वृथा विष्णु की कहहु मंदमति॥
शङ्ख चक्र नहिं बाहुन माहीं। तातें विष्णुरूप है नाहीं॥
वैष्णव कहैं विष्णु को रूपा। शैव कहैं स्कंद अनूपा॥
वैष्णव शैवन भै अति रारी। तेहिं अवसर यतिपति पगुधारी॥
कह्यो शैव वैष्णवन बोलाई। हम झगरो सब देत मिटाई॥
दोहा—आयुधहै स्कंद के, डमरू शूलहु आदि॥
आयुधहैं श्रीविष्णुके, शारंग चक्र गदादि॥ ८३॥
दोनहुँ के आयुध लै आई। यह वपु आगे देहु धराई॥
जो आयुध धृतप्रात देखाहीं। सोइ रूप मानहु यहि काहीं॥
यतिपति जब अस वचन बखाना। शैवहु वैष्णव मानि प्रमाना॥
दोनहुँके आयुध धरि आगे। दै कपाट निशिमहँ सब भागे॥
जाय प्रभात कपाट उघारी। देख्यो शङ्ख चक्र कर धारी॥

माने सकल विष्णुको रूपा। जब वेंकट ध्वनि भई अनूपा॥
शैव निराश गये निज ऐना। यतिनायक मान्यो मन चैना॥
सुवरण मूरति रमा बनाई। अरप्यो वेंकटनाथहि जाई॥
तबते ससुर भये हरिकेरे। कियो विवाह विधान घनेरे॥
राखितहाँ प्रभु ह्वै संन्यासी। गये सत्यव्रत क्षेत्र हुलासी॥
दक्षिण मथुरा कहँगे चाये। नगर वीरनारायण आये॥
पुनि बहुरूप नवावत शीशा। रंगनगर आये यतिईशा॥

दोहा—रंगनाथ के चरणको, करि वंदन यतिराज॥
आय सदन महँ वसत भे, शिष्य सहित कृत काज॥८४॥

रह्यो जौन कूरेश सुजाना। सो पश्चिम दिशि कियो पयाना॥
कांची पश्चिम दिशि इक कोसा। बस्यो तहाँ करि राम भरोसा॥
धन अरु अन्न अमित घर बाढ़ा। दियो दान जल यथा अषाढ़ा॥
दीनन देत भयो अतिशोरा। सुनि निशि भयो रमाको शोरा॥
कही प्रभुहि कमला कर जोरी। यह रव सुनत डरी मति मोरी॥
होत शोर कहँ देहु बताई। तब कुरेश कीरति हरिगाई॥
रमा कह्यो तेहिं इतहिं बोलावहु। मेरे दृगगोचर करवावहु॥
तब कांचीपूरण कह नाथा। कह्यो स्वप्न महँ ल्यावहु साथा॥
कांचीपूरण कुरपुर जाई। हरि शासन सब गये सुनाई॥
सुनि कूरेश नाथ को शासन। मान्यो सकल लोक को नाशन॥
घर सम्पति सब दियो लुटाई। पुनि विचार कीन्ह्यो सुखछाई॥
मैं धनि हौं जेहिं नाथ बोलाऊ। यह सबहै गुरुचरण प्रभाऊ॥

दोहा—ताते प्रथमहि गुरु निकट, जाइ कमल पद वंदि।
जस शासन गुरु देहिं गे, तस पुनि करब स्वछंदि८५

अस गुण रंगनगर गमनोसो। भार्य्या रही तासु भवनोसो॥
कनक पात्र लै सकल बिहाई। मिली पंथ महँ कंथहि जाई॥

पति सों कही भीति तो नाहीं। कनक कटोरा ममकर माहीं॥
कह कूरेश भीति तुव हाथा। याहि तजे नहिं भय मम साथा॥
तज्यो विपिन महँ कनक कटोरा।धर्म चारिणी तिय तेहि ठोरा॥
दम्पति रंगनगर कहँ आये।सुनि रामानुज अति सुख छाये॥
कांचीपूरण कांची जाई। वरदहिंगे वृत्तांत सुनाई॥
इत रामानुज शिष्य पठायो। सादर कूरेशहि बोलवायो॥
वंद्यो सो गुरुपद तहँ जाई। गुरु उठाय लिय हृदय लगाई॥
दम्पति गुरु निवास किय वासा। कछुक काल सहुलास निरासा॥
विष समान सब विषय विहाई। बसै तहाँ सीला विनि खाई॥
एक समय वर्षा भे भारी। सीला वीनन गये सिधारी॥

दोहा—पतिहि परत व्रत जानि तिय, सुनि बाजनको शोर॥
भोग समय गुणि रंग को, मनमें कियो निहोर॥८६॥

परत आजु लंघन पति काहीं। हे प्रभु सुर विकरहु कस नाहीं॥
रंगनाथ तिय विनय विचारी। स्वप्न दियो अपने अधिकारी॥
छत्र चमर बाजन युत भेरो। भोग अनेक प्रकार घनेरो॥
चमर चलावत छत्र देखवत। देहु कुरेशहि बाज बजावत॥
पूजक सुनि सब भोग उठाई। चमर छत्र युत बाज बजाई॥
दियो निशा कूरेशहि आई। सो लखि चरित गयो चौआई॥
मैं नाहिं मांग्यो प्रभु पहँ जाई। कौन हेतु दिय भोग पठाई॥
तब तिय कह्यो कंत मैं मांग्यो। तुव लंघनलखिम्वहिंदुखलाग्यो
कृपानिधान रंगपति दीन्हो। दीनदयालु नाम सत कीन्ह्यो॥
तब कूरेश तियहि अनखाई। कछु प्रसाद शिर धरिमुखनाई
कह्यो नारि कहँ मांग्यो तैंही। खाय तहीं न क्षुधा कछु मैंही॥
तब तिय भोजन कियोप्रसादा। रह्यो गर्भ पायो अहलादा॥

दोहा—व्यास पराशर अंश ते, जनमें युगल कुमार।
भट्ट पराशर नाम द्वै, दिये यतीश उदार॥ ८७॥
सुखमें बीति गयो कछु काला। एक समय यतिराज कृपाला॥
गवन कियो कूरेश भवनमें। करि अभिलाषलखनाशिशुमनमें
गोविंदाचार्य्यहि कह्यो बोलाई। ल्यायशिशुन मोहिं देहु देखाई॥
जाय गोविंद शिशुन ले आयो। मुख द्वै मंत्र जपत सुख छायो॥
तब बोले यतिपति जगबंधू। आवत इत द्वै मंत्र सुगंधू॥
कह गोविंद मैं मंत्र रतन को। लायोंमैं इत जपत शिशुन को॥
तब रामानुज कह्यो विचारी। करहु शिशुन कहँ शिष्य सुखारी
पांचहु संस्कार कर देहू। अस कहि पुनि प्रभुसहितसनेहू॥
हरि आयुध भूखन लग कीन्ह्यो। आचारज पदवीतिनदीन्ह्यो॥
गोविंद अनुज एक सुत जायो। नाम परांकुश पूर्ण धरायो॥
यहि विधि यामुनार्य दुखतीना। सविधिसमनययतिनायककीना
बीत्यो सुख सों तहँ कछुकाला। भये अष्टहाइन दोउ बाला॥
दोहा—पढ़न लगे गुरु पास दोउ, खेलन लगे बजार॥
कोउ सर्वज्ञ महातमा, निकसे पंथ मझार॥ ८८॥
गह्यो तासु कर करत ढिठाई। मूठी भरि वालुका उठाई॥
पूछ्यो बालक तेहिं मतिधामा। जो सर्वज्ञ धरयो तुम नामा॥
तौ सिकता जो है मम मूठी। संख्या करहु तासु नहिं झूठी॥
सिकताकन जो जानहु नाहीं। तौ सर्वज्ञ कहाउ वृथाहीं॥
सुनि सर्वज्ञ चकित ह्वै गयऊ। केहिं बालक अस पूछत भयऊ॥
सुनि कूरेश सुवन लहि मोदा। पहुँचायो घर तेहिं लै गोदा॥
पुनि व्रतबंध भए दुहुँकेरे। वेद पढ़नलागे गुरुनेरे॥
एक समय कूरेश बजारा। खेलत देख्यो युगल कुमारा॥
पकरि कह्यो पढ़ते कस नाहीं। शिशु कह पढ़ित सकलगलमाहीं

पढ़ितहु अपढ़ित कंठहि भाषा। सुनि सुत पर सनेह पितु राखा
रंग सुवन कमलाकर पाली। किमि न होय सब विद्याशाली॥
भयो पराशर केर विवाहा। किय रामानुज परम उछाहा॥
दोहा—रंगनाथ के मंदिरै, एक समय यतिराज।
बोलत भे सुंदर वचन, श्रीवैष्णवी समाज॥ ८९॥
दाशरथी विन म्वोहिं सुखनाहीं। ल्यावहुकोउ लेवाय मोहिं पाहीं
दाशरथी है मोर त्रिदंडा। सब शास्त्रन में बुद्धि उदंडा॥
तब वैष्णवतुरंत तहँ जाई। ल्याये दाशरथीहि बोलाई॥
तहँ रामायण को श्लोका। रामानुज बोले विनशंका॥
श्लोक—वेदवेद्येपरेपुंसि जातेदशरथात्मजे।
वेदःप्राचेतसादासीत्साक्षाद्रामायणात्मना॥ १॥
रामायण हैं वेद स्वरूपा। तिमि द्राविड़ प्रबंध श्रुति रूपा॥
यह जानहु मत मोर प्रवीना। कहहिं अन्यथा ते मतिहीना॥
उपदेशत अस शिष्य समाजू। सुखितरंगपुर बस यतिराजू॥
रामानुज सत्संगहि पाई। भे सज्जन दुर्जन समुदाई॥
निछुलापुर महँ अति बलवाना। धनुषदास इक मल्ल महाना॥
कबहुँ रंगपुर उत्सव भयऊ। लै निज वाम मल्ल तहँ गयऊ॥
निज तियवदनविलोकतचलतो। गिरतपरतपथचलतपछिलतो
महामंद मति रमनी दासा। कबहुँ न ज्ञान विवेक प्रकासा॥
दोहा—रामानुज मज्जन हितै, कावेरी महँ जाइ।
करि मज्जन लौटत भये,सहित शिष्य समुदाइ॥९०॥
छंद—किय दास सो धनुदास पथ महँ चलत स्वामीदेखि॥
शिष्यन हँसत अस वचन भाष्यो नाहिंजड़अतिलेखि।
श्रीरंग दरश करायलेव बनाय यहि हरि दास॥
अस भाषि शिष्य पठाय ताहि बोलायकै निज पास॥

अस कह्यो तुम कत लाज तजि डोलहु पशून समान॥
एकांत महँ जन जात तिय ढिग जगत रीति प्रमान ॥
धनुदास कह कर जोरि मैं नाहिं प्रभु अनंग अधीन ॥
याके नयनसम नयन नाहिं ताते भयो मैंलीन ॥
मैं चलहुँ पथ पट ओट करि कुँभिलात दृगरवि ताप॥
तब कह्यो यतिपति वचन यह तुम करहु मिथ्यालाप॥
हमयाहुते सुंदर विलोचन तुमहिं देव देखाय ॥
अस कहत गवने रंग गृह धनुदास संग लेवाय ॥
तनु श्यामसुंदर कंज लोचन दुख विमोचननाथ ॥
शर मुकुट शोभित पीतपट सायुध कटक वर हाथ॥
यतिपति कह्यो धनुदास सुनु अस भुवन महँको शोभ॥
जल रुधिर मज्जा चाम तिय दृग वृथा किय तेहिलोभ।
श्रीरंग दरश प्रभाव ते धनुदास को भो ज्ञान ॥
यतिनाथ चरणन हाथ धरि ध्वनि माथ अतिपछितान
पुनि भयो स्वामी के समासृत गयो छूटि विमोह ॥
तिय तासु तैसहि ठानि बानि कियो रमापति छोह ॥
दोहा—यथा राम के होतभे, सेवक पवनकुमार ॥
रामानुज के होत भे, त्यों धनुदास उदार ॥ ९१ ॥
छंद—यक काल तहँ यतिनाथ गवने रंगभवन प्रभात ॥
धनुदास को गहि हाथ पाय प्रसाद बुधि अवदात ॥
कावेरि करि मज्जन मुदित धनुदास को गहि हाथ ॥
यति सार्व भौम सुभौन आये सुमिरि रघु कुल नाथ॥
वैष्णव सकल धनुदास को अति नीच जाति विचारि॥
युग जोरि कर यति राज सों कह विनय वचन उचारि॥
यह नीच को कर ग्रहण प्रभु मज्जन किये कस कीन ॥

यह महा अनुचित हमाहिं लागत आप धर्म प्रवीन ॥
दोहा–तब रामानुज वचन कह, मंद मंद मुसकाय ॥
सुनहु संत सिगरे कहत, जो मैं हेतु देखाय ॥ ९२ ॥
जाति पांति पूछै नहिं कोई । हरि को भजै सो हरिको होई ॥
जाके विरति विवेक विज्ञाना । सो सब संतन माहँ प्रधाना ॥
नहिं निर्मल होवै तनु धोये ।निर्मल सोइ जो विषय विगोये ॥
काम क्रोध मद लोभ विहीना । तिनहिं कहत श्रुतिसंतप्रवीना॥
पै जो तुव मन शंका आई । तासु हेतु हम देव देखाई ॥
अस कहियतिपतिपूजनकीन्ह्यो।संतन कार्य्य करनकहिदीन्ह्यो॥
दिना द्वैक महँ प्रभु परभाता । लख्यो वैष्णवन वसन सुखाता॥
संचहि वैष्णव एक बोलाई । कह्यो करतरी लै तुम जाई ॥
सब वैष्णवन वसन कछु काटी । ल्यावहु इत राखहु पट सांटी॥
जानै नहिं कोउ कानहुँ काना । यामें है कछु काज महाना ॥
सो वैष्णवकियजसगुरुभाख्यो । वैष्णव पटन काटि धरिराख्यो॥
वैष्णव आय लखे पट काटे । यक एकन चोरी हित डाटे ॥
दोहा–महाकलह उपजत भयो, तहँ वैष्णवन समाज ।
कहत परस्पर चोर तुम, पट काटे मम आज ॥९३॥
यतिपातितदपिबहुतसमुझायो । यदपि न तिनकेमनकछुआयो
तेहिवासर जबपहर निशागै । यतिपाति धनुषदास बड़ भागै॥
कह्यो रंग मंदिर तुम जाहू । गवन्यो सो मन मानि उछाहू ॥
पुनि यतिपाति वैष्णवबोलवायो। तिन सबको अस वचनसुनायो॥
धनुषदास घर जाहु तुरंता । तासु तिया सोवति विन कंता ॥
ल्यावहु भूषण तासु उतारी । जानै निशा नेकु नहिं नारी ॥
धनुषदास गृह वैष्णव आये । लख्यो नारि सोवत सुख पाये ॥
लगे उतारन भूषण ताके । तिय जगि अस गुनि पुनि दृग ढांके॥

लेत विभूषण साधु उतारी। अहो भाग्य है जगत हमारी॥
तन मन धन संतन हित लागै। ताते और कौन बड़ भागै॥
रही करौंटा जेहिं बरनारी। तेहिं अँग भूषण लिये उतारी॥
तब तिय लियो करौंट बहोरी। जाने संत कही अब चोरी॥
दोहा—जागि नारिको मानि मन, भागे संत तुरंत।
लै आये भूषण जहाँ, रामानुज भगवंत॥ ९४॥
तिय उठि तहाँ बहुत पछिताई। अधभूषण किमि दियो बचाई॥
अभरण अर्ध संत हित लागे। तेई भये आजु बड़ भागे॥
आधे रहे अंग जे मेरे। वृथा भये दुखदायक हेरे॥
अस पछिताति बैठि घरमाहीं। वैष्णव जाइ यतीश्वरमाहीं॥
धरिदीन्ह्यो भूषण घर आगे। तिया चरित्र कहन सब लागे॥
धनुषदास तब दर्शन लैकै। आइ बैठ गुरुवंदन कैकै॥
यतिपति कह्यो सुनहु धनदासा। जाहु निशा आपने अवासा॥
धनुषदास करि गुरुहि प्रणामा। गयो तुरत मोदित निजधामा॥
तब यतिपति कह साधुन वानी। जाहु तासु घर परै न जानी॥
जो पति कहै नारि सों बाता। सो इत आइ करौ आख्याता॥
धनुषदास जब गे निज ऐना। तब तिय तासु मानि अति चैना॥
मिली कलश शिर धारि चलि आगे। अर्द्ध अंगके भूषण त्यागे॥
दोहा—अर्द्ध अंग भूषण विगत, निरखि कह्यो धनुदास।
कहँ डारयो अभरण प्रिया, ताको करहु प्रकास ९५॥
भई धन्य मैं कह अस नारी। भूषण लीन्ह्यो संत उतारी॥
निशा मध्य इत संत सिधारे। सोवत गुनि आभरण उतारे॥
तब मैं करवट लीन्ह्यों जागी। जाते सोउ लेइँ बड़ भागी॥
तब मोहिं जगी जानि सबसंता। इत ते गये पराय तुरंता॥
धनुषदास सुनि कह अनखाई। किमि लीन्ह्यो करवट मनभाई॥

जानि जगी तोहिं संत पराने। लिये न भूषण अर्द्ध डेराने ॥
संतन कीहै सम्पति सिगरी। लगी न संत हेतु सो बिगरी ॥
जो तन धन संतन हित होई। स्वारथ परमारथ सति सोई ॥
अस कहि रहे निशा महँ सोई। गुरु ढिग चलि वैष्णव सब कोई॥
धनुषदासको कह्यो हवाला। भे निहाल यतिपाल कृपाला ॥
बहुरि वचन वैष्णवन सुनायो। अबहूं नाहिं तुम्हरे मन आयो ॥
बीता भर पट काटत माहीं। कियो कलह यक एकन पाहीं ॥

दोहा–तुम्हरे शांति विवेक नहिं, वैष्णव नामहि केर।
धनुषदासको देखिये, जेहि किय नीचनिवेर ॥ ९६॥

तुम चोराय भूषण तेहिं लीन्हों। तापर तिय करवट तन कीन्हों॥
तापर धनुषदास किय कोपा। तैं भूषण हित धर्महि लोपा ॥
संत शिरोमणिहै धनुदासा। जाहि न धर्म हेतु धन आसा॥
अस कहि धनुषदास बोलवायो। भूषण दै वृत्तांत सुनायो ॥
विस्मय हर्ष न किय धनुदासा। गुरुपद सेयो सहित हुलासा॥
ते वैष्णव माने अति लाजा। माने सकल वृथा निज काजा॥
यहि विधिके धनुदास चरित्रा। अहैं अनेक विचित्र पवित्रा ॥
रामानुजके गुरु पर धाना। पूर्णाचार्य नाम जग जाना ॥
तिन इक शूद्र शिष्य निज कीन्ह्यो। पांचहु संस्कार करि दीन्ह्यो॥
दीन्ह्यो संत समाज मिलाई। तबहि सबै वैष्णव समुदाई ॥
पूर्णाचार्यहि निंदन लागे। कहहिं शूद्र महँ किमि अनुरागे॥
पूर्णाचार्य्य सुता इक असुला। भक्ति विवेक माहिं सो अतुला॥

दोहा–सो पितुछै भोजन तज्यो,और ज्ञाति तजि दीन ॥
तब रामानुज गुरु भवन, गवन प्रमोदित कीन ॥९७॥

विनय कियो गुरु सों कर जोरी। शूद्र शिष्य की भइ अति खोरी॥
तब पूरण बोले मुसकाई। हम नहिं किय हरि तें अधिकाई॥

शबरी विदुर गीध गजराजू। अपनो किय यदुकुल रघुराजू ॥
जोहरिभक्त शूद्र नाहिं सोई। विन हरिभक्त विप्र नहिं होई ॥
सुनि रामानुज अति सुखपाई। सकल वैष्णवन दियो बुझाई ॥
सब वैष्णवन भयो परबोधा। दियो त्यागि पूरण पर क्रोधा ॥
पुनि यतीश निज भवन सिधारे। लख्यो बैठ इक बाउर द्वारे ॥
गहि कर तासु कोठरी जाई। दै कपाट निज रूप देखाई ॥
देशक कियो मंत्र उपदेशा। कोटि जन्म कर हर्यो कलेशा ॥
सो वाचाल भयो विज्ञानी। लखिकूरेश उचित नहिं जानी॥
रामानुज को दियो ओलम्बा। कीन्ह्यो काह धर्म अवलम्बा ॥
तब जस पूरण ताहि सुनायो। तिमि यतिपति कूरेश बुझायो॥

दोहा—सुनि कूरेश लह्यो हरष, गुरुपद वंदनकीन।
उपज्योजौन विषाद मन, सो सिगरो तजि दीन॥९८॥
गोष्ठीपूरण इक समय, दै कोठरी कपाट।
ध्यानावस्थित तहँ रहे, कियो अचल मन बाट॥९९॥

रामानुज तेहि समय सिधारी। वंदन करि अस गिरा उचारी ॥
कहा करौ एकांतहि बैठे। मानहु ब्रह्मानंदहि पैठे ॥
गोष्ठीपूरण कहत बखानी। सुनु लक्ष्मणदेसुकविज्ञानी ॥
गुरु स्वरूप कर तो मैं ध्याना। जपौं नाम गुरुमंत्र महाना ॥
बालक बधिरै अंध जड़ मूका। गुरुप्रसाद भेजा गहि रूका ॥
गुरुप्रसाद ते ज्ञान विज्ञाना। गुरुप्रसाद ते पद निर्वाना ॥
गुरुप्रसाद ते विभव बड़ाई। गुरूप्रसाद मिलत यदुराई ॥
नहिं दुर्लभ कछु गुरू प्रसादा। ऐहिक पारमार्थिक वादा ॥
जो केवल गुरुपद मन लायो। सो सब धर्म कर्म फल पायो ॥
भुजा उठाय कहौं यह बानी। श्रुति संहिता पुराण बखानी ॥
गुरुते अधिक न दूसर देवा। मिलत हरी कीन्हे गुरुसेवा ॥

साधन सकल मूल यह जानौ। गुरुते अधिक देव नहिं मानौ॥
दोहा-सुनि गोष्ठीपूरण वचन, रामानुज मतिवान॥
शिष्य दाशरथि आदिकन, कीन्ह्यो यही बखान १००॥
यहिविधि रंगनगर यतिराई। बसत भये जीवन गति दाई॥
जीवउधार भार जगदीशा। रंगनाथ धरि यतिपति शीशा॥
आप सदा सुख सोवन लागे। रमावदन बारिज अनुरागे॥
रामानुज किय शिष्य घनेरे। तासु प्रशिष्य शिष्य बहुतेरे॥
विचरत महिमंडल सब ठोरा। कीन्हो जीवोद्धार करोरा॥
यमपुर झूठ नरक भे सूना। भै वसती वैकुंठकि दूना॥
जिमि एकादश व्रत विस्तारी। रुक्मांगद मनुजन दिय तारी॥
बढ़ीयथा यतिनाथ प्रसंदा। छूटीजन यमलोक आपदा॥
यमह्वै दुखित विगत व्यापारा। ब्रह्मासों तब जाय पुकारा॥
ब्रह्मा रंगनगर को आयो। रंगनाथ को सकल सुनायो॥
अब यम लोक झूठ भो स्वामी। भये जीव सबपरगति गामी॥
रामानुज है तारक मूला। तारत प्रतिकूलहु अनुकूला॥
दोहा-तब विरंचिसों रंगपति, वचन कह्यो समुझाय।
कियो विनय तुम तासु मैं, करिहौं अवशि उपाय १॥
अस कहि बिदा कियो कर्त्तारा। रंगनाथ अस मनहिं विचारा॥
सेतुबंध हिमगिरि मधिमाहीं। रह्यो मुक्तिबिन कोउजिय नाहीं
कर्म भूमि यह भारतखंडा। तहँरामानुज भयो उदंडा॥
तारत मनुज मोक्ष मन मूठी। कीन्हो नरक स्वर्ग गति झूंठी॥
है लीला विभूति यह मेरी। लीला करिहौं कहाँ घनेरी॥
वसुधा और विकुंठ महाना। करिदीन्ह्यो यतिराज समाना॥
ताते अस मैं करौं उपाई। चलै न अब संप्रदा चलाई॥
अस गुणि रंगनाथ मन माहीं। प्रगट्यो चोलनगर नृपकाहीं॥

तेहिं कृमि कंठ भयङ्कर नामा। उपज्यो भूप पाप को धामा॥
श्याम शरीर नयन विकराला। बालहि तें पहिरयो अघमाला॥
मिले सहायक तैसहिताको। हिरण्याक्ष रावणको नाको॥
संत विरोधी जीवन हंता। धर्मधुरा ध्वंसक अघवंता॥

दोहा—फोरयो देवन मूर्त्तिबहु, मंदिर दियो ढहाय॥
बोलि बोलि बहु वैष्णवन, जीवत दियो गड़ाय॥ २॥

छंद—नहिं सुनत सब श्रुति विष्णु नाम अराम कल्मषकाम
विजदेशके बहु बोलि पंडित कहत आठोयाम॥
मम नाम शिव है ताहि ते इक लिखहु सिगरे पत्र॥
शिव ते अधिक नहिं दूसरो परमान है सरवत्र॥
तेहि देशके सब विबुध गण नृप भीतिगुनिलखिदीन॥
जिनकी रही नहिं जीविका ते द्रुत पलायन कीन॥
नरनाथ दानाध्यक्ष यक कूरेश शिष्य प्रवीन॥
सो कीन विनय नरेश सों पंडित सभा मधि दीन॥
मम गुरू है कूरेश तिनके गुरू हैं यतिराज॥
बोलवाय दुहुन लिखाइये तौ होय सब विधि काज॥
नरपति पचास सवार पठयो रंगपुरहि तुरंत॥
धरिलाव रामानुज कुरेशहि क्षणहु नहिं बिलवंत॥
ते रंगनगर सिधारि अश्वारूढ़ कह्यो पुकारि॥
कूरेश कह रामानुजौ हम संग चलहिं सिधारि॥
निज शिष्य को अधिकार गुनि कूरेश कीन पयान॥
पाछे चले पूरनाचारज नृपति नगर सुजान॥
तब दाशरथि यतिराज सों यह कह्यो सकल हवाल॥
नहिंगुन्यो मंगल गवन तिनको जानि नृप चंडाल॥
कूरेश पूर्णाचार्य दोउ पहुँचे नगर जब चोल॥

तब रंगपुर महँ सकल वैष्णव यतिपतिहिंअस बोल ॥
गुरु आपके नहिं रहन लायक रंगपुर यहि काल ॥
करिहैं उपद्रव अवशि अब नृप चोलपुर चंडाल ॥
सुनि शिष्य वचन विचारि उचितपयानकिय यतिईश॥
तब बोलि नृपति सवार पकरन चले संग पचीस ॥
तब वालुका पढ़ि मंत्र दीन्हो शिष्य करि यतिराय॥
ते शिष्य सिकताफेंक दिये सवार गये पराय ॥
तहँ पऱ्यो पथ महँ महावन भै बात वर्षा घोर ॥
नहिं लग्यौ भोजन योग कहुँ नाहिं मिल्यौ निवसन ठोर॥
षटराति लों पथ चलतगे बहु दूरि लौं यतिनाथ॥
गिरि निकट धूम विलोकितहँ सब गये गहि गहि हाथ
तहँ रह्यो एक अहीरपुर पूछन लगे तहँ राह ॥
ते आय वैष्णव देखि कह तुव भवन केहि पुरमाह ॥
वैष्णव कह्यो हम रंगपुर वासी अहैं यह जान ॥
तब कह्यो सकल अहीर तहँ यतिराजकेरमकान ॥
वैष्णव कह्यो यतिराज को केहिंभांति तुम लियजानि॥
ते कह्यो इत यक साधु आये दीन तेइ बखानि ॥
हम शिष्य हैं तेहिं साधु के ते सो साधु असकहि दीन॥
हम दासहैं यतिनाथ के रंगनगर प्रवीन ॥
तब साधु भिल्लन को दियो रामानुजै देखराय ॥
ते जानि गुरुको कीयगुरु परणाम शीशनवाय ॥
मधु अन्न कोदौलाय अर्पे कियो अति सतकार॥
तेहि राति भोजन करिवसे यतिराज मुदित अपार ॥
पुनि भोर अपनो शिष्य दीन्ह्यों रंगपुरहि पठाय॥
यतिराज पहुँचे जाय व्याधापुर विपिन समुदाय ॥

तहँ रही डुजकी नारि चेला नाम की हरिदास ॥
ताके भवन यतिराज कीन्ह्यों वास सहित हुलास ॥
सब व्याध मृगया ते बहुरि यतिराज सुनि आगौन ॥
बहु अन्न तंदुल आदि पठयो ब्राह्मणनके भौन ॥
गुनि व्याधपुर वैष्णव सकल मान्यो नभोजन योग ॥
तब कही चेला ब्राह्मणी सब सुनहु ममउतयोग ॥
दुर्भिक्ष परिगो देशइत हम रंगपुर महँ जाय ॥
यतिराज शरणागत भइउँदिय मंत्र मोहिं सुनाय ॥
सो बिसरिगो अब मंत्र मोहिं करि कृपा देहु बताय ।
यतिराज सुनि द्विज नारि बैन कह्यो अनंदहि छाय ॥
यह सत्य दासी मोरि सिगरे करहु भोजन संत ।
तब रच्यो व्यंजन विविध विधि सो ब्राह्मणि मतिवंत ॥
गुरु को सविधि पूजन कियो तिमि सकल संतन केर ।
सब साधु भोजन कियो तोहिं कृत गुन्यो नाहिं कछु फेर।
रामानुजौ तोहिं हाथ को भोजन कियो सुख छाय ।
सो संतको उच्छिष्ट लै निज पतिहि दियो खवाय ॥
सब संत जूठ प्रभावते तेहि भयो हिय महँ ज्ञान ।
परभात सो यतिराजके भो शरण सहित विधान ॥
दम्पति कियो गुरु सहित संतन विविधिविध सत्कार
रामानुजौ तहँ कियो बहुरि त्रिदंडको अधिकार ॥

दोहा—व्याध ग्रामते यति नृपति, पावक क्षेत्र सिधारि ।
तहँ त्रयवासर वास करि, मथुरा गये सिधारि ॥ ३ ॥

तहँ कछु काल वास करि स्वामी। मुक्त क्षेत्र गवने शुभ नामी ॥
तहँ मायावादी मतवारे । ते यतिपतिहि न कछु सत्कारे॥
तोन देश इक रह्यो तड़ागा । विमल नीर बंधित चहुँ भागा ॥

कह्यो दाशरथि सों यतिराई। सर तट परहु पाँवपसराई ॥
दाशरथी तड़ाग तट जाई। परे बोरि जल पद पसराई ॥
भयो साधुचरणोदक ताला। जे जे पान किये तेहिं काला ॥
ते सब भये विमल मतिवारे। रामानुज के शिष्य उदारे ॥
धन्य साधु महिमा जग माहीं। पद जल करत शुद्ध सब काहीं॥
अंधपूर्ण इक शिष्य सुजाना। तेहि सँग लै यतिवंश प्रधाना ॥
गये नृसिंहक्षेत्र यतिराई। वसत भये संतन समुदाई ॥
तहँ इक दिन उपजी अभिलाषा। चोल भूप हरि मत नहिं राखा॥
जो राखहि नृसिंह मत अपने। तौ नहिं मिटै चारि युग सपने॥

दोहा—नरहरि यतिवर चित्त की, आशय जानि तुरंत।
चोल नृपति पै करत भे, कोप कटाक्ष दुरंत ॥ ४ ॥

तेहि दिन चोलभूप गलमाहीं। कीरा परे मिटे पुनि नाहीं ॥
यतिपति गे आये इक ग्रामा। रह्यो ग्राम पूरत द्विज नामा ॥
शिष्य रह्यो रामानुज केरो। सो कीन्ह्यो सत्कार घनेरो ॥
वसे तहाँ ले संत समाजा। विट्ठल देव रह्यो तहँ राजा ॥
तासु सुता कहँ ब्रह्मपिशाचा। लगि तेहि बहुत नचावहिनाचा
बहुत मंत्रशास्त्री तहँ आये। कोउनहिं तासु पिशाचछोड़ाये
विप्र ग्राम पूरन तहँ आयो। निज गुरु को वृत्तांत सुनायो॥
राजा यतिवर को बुलवायो। यतिवर लखन पिशाच परायो॥
लखि यतिपति महिमा नृप भूरी। भयो शिष्य अघ भे सब दूरी॥
रह्यो बौद्ध को शिष्य सुजाना। जुरे बौध दश सहस समाना ॥
डेरा घेरि लियो प्रभुकेरो। वाद कुवाद बकैं बहुतेरो ॥
शास्त्रार्थ हम सों करि लीजै। तौ पयान अनते कहँ कीजै ॥

दोहा—रामनुज बोले वचन,करहु आपनो वाद।
उत्तर देब यथार्थ हम, मेटब सकल प्रमाद ॥ ५ ॥

सुनत बौध जन पंचहजारा। द्वै द्वै बदन लगे इकबारा ॥
तब यतिपति आवरन कराये। आप तासु भीतर महँ आये ॥
तहाँ बैठिकै वचन उचारा। तब नास्तिक सब कट इकबारा॥
तहँ यतिपति भे वचनहजारा। सत्य शेषबपु जगत अधारा ॥
एकै बार पराजय पाई। गये बौध सब देश पराई ॥
पुनि सब आय भये शरणागत। रामानुज कीन्ह्यो अतिस्वागत
पुरजन सहित भूप तेहि काला। निरखिसहस मुखभयोनिहाला
सिगरो मिथिला देशहि वासी। भये शिष्य परगतिके आसी॥
रामानुज किय देश उधारा। छायो सुयश सकल संसारा ॥
जनक नगर महँ सहित हुलासा। करत भये कछु वासर वासा॥
तहँ तिनको चंदन चुकिगयऊ। संतसमाज शोच अति भयऊ॥
संत आय रामानुज नेरे। चंदन चुक्यो वचन अस टेरे ॥

दोहा—यतिपतिहूँ शोकित भये, लखि चंदनकी हानि।
ध्यायो मन महँ सोच यह, हरिये शारँगपानि ॥६ ॥

रंगनाथ तब स्वप्ने माहीं। कह्यो जाय रामानुज काहीं ॥
यादव गिरि महँ वास हमारा। तहँ अब कानन भयो अपारा॥
तहाँ मोरि मूरति मनहारी। गड़ी भूमि नहिं परै निहारी ॥
आय तहाँ तुम लेहु उपारी। तहँ चंदन मिलि है सुखकारी॥
तहाँ मोर मंदिर बनवावहु। तामें सोइ मूरति पधरावहु ॥
तहाँ महाउत्सव करु मोरा। यह यश फैल रही चहुँ ओरा॥
ऐसो स्वप्न दीख यतिराई। कह मिथिलेशहि भोर बोलाई॥
लै वैष्णवी समाज यतीशा। कियो गवन सँग चल्यो महीशा ॥
गये यादवाचल कछु काला। कटवायो तहँ विपिनविशाला ॥
रही एक सुंदर पुष्करनी। नीर गँभीर मुनिन मन हरनी॥
तहँ मज्जन करि अति अनुरागे। हरि मूरति प्रभु खोजन लागे॥

विविध थलनमें सो खोजवायो । पै माधव मूरति नहिं पायो ॥

दोहा-तब मनमें चिंता भई, कहँ खोजें प्रभु काहिं ।
व्यापक हैं यह विश्व में, माधव सब थल माहिं ॥७॥

चिंता करत नींद दृग आई । स्वप्न माहिं हरि दियो बताई॥
गिरि दक्षिण तीरथ कल्याना । तहँ चम्पकके भूरुह नाना ॥
तेहि उत्तर तुलसी तरु एका । तहँ इक बांबी नाहिं अनेका ॥
ताके तर मूरति है मेरी । लेहु भोर यतिनायक हेरी ॥
तहाँ श्वेत चंदन छबि छायो । श्वेत द्वीप ते खगपति ल्यायो॥
ऐसो स्वप्न दियो भगवाना । जगि प्रभात यतिवंश प्रधाना॥
लै सँग वैष्णव भूपहु काहीं । यतिपति गये तौन थल माहीं॥
तुलसीके तर तुरत खनायो । तहाँ मनोहर मूरति पायो ॥
यतिपति कीन्ह्यो महा उछाहा । मिट्यो सकल उरको दुखदाहा॥
बाजे बाजन विविध प्रकारा । यतिनायक दिय दान अपारा ॥
कीन्ह्यो पूजन वेद विधाना । धूप दीप भोगहु स्नाना ॥
उत्तर दिशि तीरथ कल्याना । खन्यो श्वेत चंदन सविधाना॥

दोहा-बोलि भिल्ल जन दूरिलौं, काननको कटवाय ।
नारायण पद नामको, दीन्ह्यो शहर बसाय ॥८॥

तहाँ महामंदिर बनवायो । गोपुर अतिशय ऊंच करायो॥
अति उतङ्ग तिमि रच्यो प्रकारा । चारु चारि द्वारन विस्तारा॥
तेहिं मंदिर महँ कियो प्रतिष्ठा । यादवनायक नाम गरिष्ठा ॥
संत समाज समेत यतीशा । कियो वास सुमिरत जगदीशा॥
काल काल महँ उत्सव करहीं । जोरि जमात जनन सुख भरहीं॥
याम याम पूजन करवावै । वेद विधान विशेष बतावै ॥
यादव पति मूरति मनहारी । उठै उठाये नहिं वपु भारी ॥
जब यात्राके उत्सव आवै । किमि प्रभुको बाहर लै जावै ॥

उठै न मूरति मनुज उठाई । कौन सकै रथ माहँ चढ़ाई ॥
यात्रा उत्सव खंडित होई । मन आशा पूरै नहिं कोई ॥
यह लखि यतिपति भये दुखारी । नाहिं उत्सव मूरति मनहारी॥
मिलै जो उत्सव मूरति प्यारी । होय तौ यात्रा उत्सव भारी ॥

दोहा—अस विचारि यतिराज मन, कियो रैनिमें शयन ॥
तब यदुनायक यतिपतिहि, कह्यो स्वप्न महँ बयन ९

मोरि परम मूरति मनहारी । यात्रा उत्सव योग विचारी ॥
है दिल्लीपति बादशाहके । सोलायक है सब उछाहके ॥
बादशाह जब नौरंगजेवा । चल्यो सकोप फोरावन देवा॥
रूप फोरावत देवन केरा । कियो यादवाचल जब डेरा ॥
रह्यो मंजु मंदिर इत मोरा । कोउ इक साधु रहे यहि ठोरा॥
बादशाह बहु मूरति भंज्यो । देवालय अनेक तिमि गंज्यो ॥
देखि उपद्रव साधु महाना । मम मूरति हित अति भय माना॥
बड़ी मूर्ति दीन्ह्यो खनि गाड़ी । शाह सैन्य तहँ गई पछाड़ी ॥
सो मूरति गाड़न नहिं पायो । बादशाह मंदिर फोरवायो ॥
सो मूरति फोरन सब लागा । बरजेहु नाहिं मान्यो दुरभागा॥
रह्यो संग महँ तासु जनाना । लाये मूरति तहँ भट नाना॥
रही शाह की यक शहिजादी । लखि सो मूरति छबि मरयादी॥

दोहा—खेलन हित गुणि पूतरी, लियो पिता सों मांगि ।
शाह सहज गुनि देत भो, सो नित खेलन लागि११०॥

कियो प्रीति तापर शहिजादी । क्षणहु लखे बिन होति विषादी॥
भूषण वसन विवध पहिरावै । अपने संगहि माहिं जेवावै ॥
शयन करावति एकहि सेजू । निशिदिन कियो मोर बंधेजू ॥
मैं प्रगट्यो तेहि प्रीति निहारी । सो मम चरण प्रीति रजु डारी॥
शहिजादी मोहिं वशकरि लीन्ह्यो। गमन तुरत दिल्लीको कीन्हो ॥

शाहिजादी ऐना। बसो अनेकन पावत चैना ॥
तोते बादशाह ढिग जाई। माँगि लेहु मूरति मन भाई ॥
अवशि मोरि मूरति तुम पैहौ। जो म्लेच्छ तेहि मानि न लैहौ॥
ऐसो स्वप्न लख्यो यतिराई। उठि प्रभात सब संत बोलाई॥
कह्यो वचन शंकित यतिराई। भवन म्लेच्छ जाय किमि जाई॥
यह झगरो प्रभु दियो लगाई। काह उचित सब देहु बताई ॥
नाम विष्णु वर्द्धन मिथिलेशा। कह्यो वचन प्रभु तजहु कलेशा

दोहा—दिल्लीको पगुधारिये, लै वैष्णवी समाज।
जो स्वप्नो तुमको, दियो सोइ करिहैं सब काज ११॥

सकुल संत सम्मत करि दीन्हे। दिल्ली गवन यतीश्वर कीन्हे ॥
संत सङ्ग वसु चारि हजारा। मिथिला भूपति सैन्य अपारा॥
औरहु संत विपुल जुरिआये। दिल्लीको प्रभु सङ्ग सिधाये ॥
दिल्ली जाय यमुनके तीरा। डेरा कियो संतकी भीरा ॥
खोजन लागे एक उसीला। मिलै संत हितकर शुभ शीला॥
म्लेच्छ पुरी वैष्णव उपकारी। मिलै कौन विधि तहँ नर नारी॥
शाह समीप जनावन हेतू। बांध्यो यतिनायक बहु नेतू ॥
पहुँची खबरि न शाह समीपा। खड़े रहत जेहि द्वार महीपा ॥
तब यतिनायक मन अकुलाने। साधुन सों अस वचन बखाने॥
बिन लिय मूरति टरब न टारे। देब प्राण दिल्लीपति द्वारे ॥
चलहु किला लीजै सब घेरी। और उपाय परत नहिं हेरी ॥
संतहु किय सम्मत तेहिं भांती। बीती यही विचारत राती ॥

दोहा—करि मज्जन हरि पूजि सब, वैष्णव होत प्रभात।
रामानुज सँग चलत भे, शाहै कछु न डेरात ॥ १२॥

चारिहु दिल्लीके दरवाजा। रोंकि लियो वैष्णवी समाजा ॥
आवन जान न पावत कोई। भयो कोलाहल नगर बड़ोई ॥

रहे मुसाहिब बादशाहके । अति समीप वर्ती सलाहके ॥
ते सुधि पाय शाह ढिग आये । जोरि पाणि अस वचन सुनाये॥
हजरत बहुत जुरे वैरागी । एकै दरवाजे केहि लागी ॥
कहते हैं मरिहैं यहि ठौरा । ना तो दीजै ठाकुर मोरा ॥
हुकुम होय कर तोपन फैरा । देंहिं उड़ाय लखैं अति सैरा ॥
हुकुम होय मतलब को बूझैं । करिकै कतल हुकुमते जूझैं ॥
बादशाह सुनि सचिवन बानी । बार बार मनमें अनुमानी ॥
विहँसि वचन सचिवन सों भाष्यो।गुनि फकीर मन मोरनमाष्यो॥
कहौ वचन उनसों अस मेरा । किस बाइस दिल्ली तुम घेरा॥
दौलत मांगें जो बहुतेरी । दै द्रुत विदा करहु तिनकेरी॥

दोहा—शीशशाह शासन सचिव, धरि करि सपदि सलाम ।
रामानुज ढिग गवन किय, पूछन को तिन काम १३॥

शाह दियो अस हुकुम सुनाई । देहु दुवार कपाट देवाई ॥
घुसैं न बैरागी पुर धाई । देहु तुरंत तोप फिरवाई ॥
जो नहिं शासन मानहिं मोरा । करहु फैर तिनपै अति घोरा॥
भये बंद दिल्ली दरवाजा । सचिव गये जहँ रह यतिराजा॥
पूछ्यो केहि कारण पुर घेरे । नगर लोग व्याकुल बहुतेरे ॥
तब यतिराज कह्यो अस बानी। शाह भवन हैं शारंगपानी ॥
ते ठाकुर प्रिय प्राण हमारे । तिनके हेतु बैठ हम द्वारे ॥
ठाकुर देहु मँगाय हमारे । चलेजाब हम मौनहिं मारे ॥
नातो देब द्वार महँ प्राना । यह सिद्धान्त होय नहिंआना ॥
हय गय धन पटकी नहिंचाहै । और न काज कहैं कछु याहै ॥
सचिव सुनत रामानुज वानी । गये शाह ढिग विस्मय मानी॥
बोले बात शाहसों बयना । हजरत वह फकीर के भयना॥

दोहा—तेज तासु जालिम जुलम, बेहतर रूपउवाच।
ठाकुर माँगत आपनो, दीजै कौन जवाब ॥ १४ ॥
शाह कह्यो फकीर जो पूरा। तौ हम लैब तासु पद धूरा ॥
अस कहि शाह सजाय सवारी। रामानुज पहँ चल्यो सिधारी॥
कटक छोंड़िदशपांचमुसाहिब।लैसँगचल्योसुमिरिनिजसगाहिब
देख्यो जाय जबहिं यतिराजा। तेजपुंज मानहु दिनराजा ॥
करि प्रणाम मोहर बहु दीन्हो। दियो अशीश यतीशन लीन्ह्यो
शाह कह्यो घेरे केहिं कारन। जुरे बहुत बैरागी द्वारन ॥
रामानुज तब वचन उचारे। ठाकुर हैं मम भवन तिहारे ॥
शाह कह्यो चलि मंदिर मेरे। लेहु खोजि ठाकुर जे तेरे ॥
एवमस्तु तब कह यतिराई। शाह संग महँ चले तुराई ॥
बादशाह के गये मकाना। शाह मँगाया मूरति नाना ॥
जो जो देशन ते लै आयो। सो सब यतिपति कहँ दरशायो
इन महँ कौन अहै प्रभु मेरा। यह भ्रम भरि यतीश गे नेरा॥
दोहा—राति स्वप्न तब हरि दियो,हम इनमें हैं नाहिं ॥
शहिजादीके सेजमें,विलसत निशि दिन जाहिं ॥१५॥
शाह सदन यतिराज प्रभाता। जाइ कह्यो निर्भय अस बाता ॥
इन महँ मम ठाकुर हैं नाहीं। तुव शहिजादी के ढिग माहीं ॥
बादशाह अनुचरी बोलाई। शहिजादी समीप पठवाई ॥
शाह हुकुम बोली तहँ चेटी। दे फकीर की पुतली बेटी ॥
कनक रत्न पुतली मन भाई। हम तोहिं देब आन बनवाई ॥
शहिजादी तब कोपित बोली। लेब न पुतली कोटिन मोली ॥
और पूतली लेहि फकीरा। यहि दीन्हें रहिहै नहिं जीरा ॥
शाह समीप आइ सो बांदी। कह्यो सकल जस कहि शहिजादी
शाहबहुत पुनि ताहि बुझाई। मूरति हित चेटी पठवाई ॥

कनक पूतली लाखन लेई । यह पुतली फकीर को देई ॥
ठाकुर मम अस कहत फकीरा । बेटी तजै अयोग जिकीरा ॥
शाह सुता तब वचन उचारा । यह ठाकुर तौ अहै हमारा ॥

दोहा—एक ओर मैं बैठती, यक दिशि रहै फकीर ॥
मूरति मध्य धराइये, जुरै जननकी भीर ॥ १६ ॥

आपहि ते जेहिंओर सिधावैं । तेई यह मूरति कहँ पावैं ॥
सुनत शाह दुहिता की बानी । मनमें अति अचरज अनुमानी ॥
यतिपति सों कह नौरंगजेवा । होंयजु सत्य तुम्हारे देवा ॥
तौ हम मधि महँ देयँ धराई । जो पहँ आपहि ते चलि जाई ॥
सांचो देव ताहिको सोई । यामें नहिं कछु संशय होई ॥
कह रामानुज करि विश्वासा । करहु तैसही जो मन आसा ॥
शाह तुरत बेटी बोलवायो । सभा सदन को यूह जोरायो ॥
करि मूरति सुंदर शृंङ्गारा । लिये संगमहँ सखी हजारा ॥
अङ्क लिये प्रभु को शहिजादी । आई सभा मध्य अह्लादी ॥
यतिपति आदिक वैष्णव जेते । जमनी अङ्क निरखि प्रभु तेते ॥
सब अतिशय अचरज मन माने । हरि जमनीके प्रेम लोभाने ॥
दियो मध्य मूरति बैठाई । आप बैठ दूरी पुनि जाई ॥

दोहा—बादशाह बोल्यो वचन, जाको ठाकुर होय ॥
तासु अङ्क चलि आप ते, जाय लखै सब कोय ॥ १७ ॥

सब निरखैं मुख मूरति केरो । सबके मन आश्चर्य घनेरो ॥
बादशाह जब कह अस बानी । हरि मति शाह सुता रति सानो ॥
झुनझुन करि नूपुर झनकारी । रेंगि चली मूरति मनहारी ॥
चले नाथ शहिजादी ओरा । कियो कोप तब यतिपति घोरा ॥
निज कर तुरत त्रिदंड उठाई । वचन कह्यो प्रभु कहँ गोहराई ॥
बोरत आजु वेद मर्य्यादा । पूरुब जौन कियो मुख वादा ॥

मोको तैं लेवाय इत लाये। मध्य सभा हाँसी करवाये॥
तेरे ऊपर त्रिदंडहि टोरी। धोउब तिलक हमैं नहिं खोरी॥
तैं जगपति जमनी रस साने। तोहिं आपने काज भुलाने॥
अस कहि पटक्यो भूमि त्रिदंडा। भयो कोलाहल सभा प्रचंडा॥
मुरकी मूरति सभा मँझारी। रामानुज पहँ चली सिधारी॥
आय बैठिगे यतिपति गोदू। रामानुज पायो अतिमोदू॥

दोहा—रहि न गई तनुमें सुरति, नैन बही जल धार॥
सभा मध्य वैष्णव सकल, कीन्हे जयजयकार॥१८॥

प्रेम मगन यतिपति ह्वै गयऊ। कछु न वचन मुख आवत भयऊ
जस तस कै प्रभु अङ्क उठाई। डेरहिं चले सुमिर यदुराई॥
भये आज ते सुत श्रीधामा। भो शङ्कत कुमार अस नामा॥
वैष्णव करहिं कृष्ण गुण गाना। बादशाह अति अचरज माना॥
उठि रामानुज पाँयन परेऊ। बहु विधि सादर पूजन करेऊ॥
मुद्रा एक करोर चढ़ायो। मणिमाणिक भूषण पहिरायो॥
नौरंगजेब विनय पुनि कीन्ह्यो। नाथ आपको अब हम चीन्ह्यो॥
कह्यो शाह सों यतिपति वानी। गमन हेतु मम मति हुलसानी॥
द्रुतहिं यादवाचल अब जैहैं। प्रभु को तेहि मंदिर पधैरैहैं॥
बादशाह तब कह कर जोरी। जाहु नाथ सुधिराखहु मोरी॥
लै ठाकुर अपने सँग माहीं। गमन करहु शङ्का कछु नाहीं॥
सुनत रह्यो हरिभक्त अधीना। लख्यो प्रत्यक्ष मलिच्छ मलीना॥

दोहा—इत यादवगिरि चलनको, यतिपति भये तयार॥
उत शाहिजादी को चरित, श्रोता सुनहु अपार॥१९॥

श्रीसम्पतकुमार जेहिं क्षणते। गे रामानुज अङ्कश मन ते॥
ताही क्षणते सो शाहिजादी। कृष्ण विरह वश भई विषादी॥
परी सेजमहँ श्वासहि लेती। मानहु तनु तुरंत तजि देती॥

हापिय हापिय मुख रट लागी । जारत तनु तीक्षण विरहागी ॥
चेटी बादशाह ढिग आई । शहिजादी की खबरि सुनाई ॥
बादशाह दुहिता ढिग गयऊ । बहुत भांति समुझावत भयऊ॥
बेटी कनकपूतरी केती । रत्नहु की ले भावे जेती ॥
एक पषाण पूतरी हेतै । कत भोजन तजि भई अचेतै ॥
शहिजादी बोली तब वानी । सो मूरति मम प्राण समानी ॥
जीहौं तेहि विन मैं क्षण नाहीं । लागत भोजन पान वृथाहीं ॥
कीमूरति दीजै मँगवाई । की मोहि दीजै संग पठाई ॥
पिता तीसरी बात न होई । करौं कसम सुनते सब कोई ॥

दोहा—शाह दुखित उठिकै तुरत, यतिवर डेराजाय ॥
बेटीको वृत्तांत सब, दीन्ह्यो तिन्हैं सुनाय ॥ १२० ॥

तब बोले सकोप यतिराऊ । भयो समाज मध्य सब न्याऊ॥
मूरति हम केहू नहिं दैहैं । तेहि मूरति सँग प्राण पठैहैं ॥
तब उठि शाह सचिव बोलवाई । सुता प्रसंगहि दियो सुनाई ॥
सचिव कहे सुनु शाह सुजाना । तजिहैं बिन मूरति सो प्राना ॥
जो बरवस छोड़ाय तुम लेहौ । तौ फकीर हत्या हठि पैहौ ॥
उभय भांति तैं बिगरति बाता । ताते उचित यही दरशाता ॥
साजु साजि बहु करि सँग बादी । पठौ फकीरि संग शहिजादी ॥
पादशाह सम्मत सो कीन्ह्यो । तुरत मँगाय पालकी लीन्ह्यो ॥
तामें शहिजादी चढ़वाई । बहु सम्पति दे साज सजाई ॥
यतिपति निकट सुता पठवायो । सुनि रामानुज विस्मय आयो
यतिपति डेरा गइ शहिजादी । सुख पायो मानहुभै सादी ॥
शाहसुता विनती अस कीन्ही । मम आयुष मूरतिआधीनी ॥

दोहा—बाबा बिन देखे तिनहिं, नहिं रहिहैं क्षणप्राण ।
गमन करौ भावै जितै, करिहौं संग पयान ॥ २१ ॥

बाबा पूजि यथाविधि लेहू। मोर प्राणवल्लभ मोहिं देहू ॥
सुन्यो महूं अपने अस काना। मम पियको तुम सुतकरिमाना॥
हौं तुम्हारि अब भई पतोहू। देहु प्राणपति करि अति छोहू॥
नतशरीर त्यागन कर पापा। तुमहु पाय पैहौ संतापा ॥
प्रीति अलौकिक लखि यमनी की।विस्मितप्रीतिमानिनिजफीकी।
शाह सुते सराहि बहु भांती। यतिपति कह मधि संत जमाती॥
यमनजाति तैं धन्य कुमारी। भई प्रीति करि कृष्ण पियारी॥
तेरे दरश होत अघ दूरी। चलु मम संग कृपा करि पूरी ॥
श्रीसम्पत कुमार कहँ लीजै। जो भावै सो मनकी कीजै ॥
लै संपत कुमार शहिजादी। यतिपति संग चली अहलादी॥
बादशाह यह मनहिं विचारी। जाति अकेली मोरि कुमारी ॥

दोहा–पांच हजार सवार दै, गज रथ सहित उमाह।
पठयो कबरू नाम जेहिं, शहिजादा को शाह ॥ २२॥

यतिनायक संगहि शहिजादी। चल्यो सैन्य लै त्यागि विषादी॥
चढ़ी पालकी शाह कुमारी। लै सम्पत कुमार मनहारी ॥
करै जहाँ डेरा यतिराई। आपहु डेरा करै तहाँई ॥
पूजन हित यतिपति कहँ देती। पुनि मँगाय अपनो पिय लेती॥
भोजन पान शयन सब काला। प्रभुसँग करै शाह की बाला ॥
यहि विधि चलत पंथ महँ दूरी। शाह सुता शंका भै भूरी ॥
घटिका द्वै पूजन हित लेते। मांगे ते जस तस कै देते ॥
क्षणभर ओट चोट उर लागै। बिन देखे विरहानलजागै ॥
कह्यो नाथ सों प्राणपियारा। क्षण भर विरह न होय तुम्हारा॥
शाह सुता की प्रीति परेषी। नाथ कह्यो तैं रमा विशेषी ॥
अस कहि कियो लीन हरि ताको। लखो मुकुंद प्रभाव कृपा को ॥
क्षुद्र जाति यमनी अघखानी। कियो नाथ तेहि रमा समानी॥

दोहा—नहिं जप नहिं तप नहिं नियम, नहिं व्रत तीरथ दान ।
केवल प्रीति परेखि कै, रीझत कृपानिधान ॥ २३ ॥

रजनी गवन करै यतिराई । उवत भानु डेरा पर जाई ॥
तेहि प्रभात डेरै जब आये । पूजन हित निज नाथ मँगाये ॥
संत पालकी निकट सिधारे । करिकै विनय ओहार उघारे ॥
देखि परी मूरति भरि सोई । शहिजादी दृग परी न जोई ॥
तब विस्मित यतिपति पहँ आये । शाह सुता वृत्तांत सुनाये ॥
रामानुज विस्मित अति भयऊ ।प्रभु निजलीन कियोगुणलयऊ॥
शहिजादा सुनि भगिनि हवाला । रोवन लाग्यो भयो विहाला ॥
रामानुज तेहि बहु समुझाई । सँग यादव गिरि गये लेवाई ॥
तहँ संपत कुमार कहँ थापी । कियो महा उत्सव जग व्यापी
जब जब उत्सवके दिन आवैं । तब संपत कुमार कहँ लावैं ॥
अति उतंग स्यंदन बनवाई । तेहि संपत कुमार चढ़वाई ॥
यात्रा उत्सव करैं महाई । विविध भांति ते बाज बजाई ॥

दोहा—दीनन दान अनेक विधि, देत यतीशउदार ।
नित नव पट भूषण करत, नित नव हरि शृङ्गार२४
नाथ पियारी जानिकै, शाह सुता यतिराय ।
ताकी मूरति कनककी, अति सुंदर बनवाय ॥ २५ ॥
मंत्र प्रतिष्ठा तासु करि, हरि चरणन मधि माहिं ।
यवन सुता थापित कियो, अबलौं अहै तहाँहिं॥२६॥
शहिजादी को मैं चरित, वरण्यों युत विस्तार ।
अब शहिजादा को चरित, श्रोता सुनहु उदार॥२७॥

यतिनायक सँग सो शहिजादा । बस्यो यादवाचल अविषादा॥
नित नव हरि उत्सव दृग देखै । धरणी धन्य भाग्यनिज लेखै॥
कछु दिन बसि यादवगिरि माहीं । मांगि विदा यतिनायकपाहीं॥

दिल्ली चल्यो सैन लै संगा। गुनत मनहिं मन भगिनि प्रसंगा॥
रामानुज सतसंग प्रभाऊ। भयो म्लेच्छहू शुद्ध सुभाऊ॥
बादशाह ढिग गे शहिजादा। कीन्ह्यो भगिनी केर विवादा॥
सुता चरित सुनि शाह सुजाना। हर्ष विषादहु भयो समाना॥
रामानुजहि सराहन लाग्यो। बादशाह हरिपद अनुराग्यो॥
अंगराग भूषण पट नाना। हाटक भाजन विविध विधाना॥
पठयो यतिपति निकट सप्रेमा। मान्यो तासु कृपा नित क्षेमा॥
शाह सुवन उर हरि रति बाढ़ी। तासु विछोह दुचितई गाढ़ी॥
शहिजादा पितु सों अस भाषौ। अब मोहिं दिल्ली महँ नहिंराखौ
दोहा—विदा करो यतिनाथ ढिग, जहँ भगिनी पतिमोर॥
उन बिन इक क्षण नहिं रहौं, सहौं दुसह दुख घोर॥२८॥
शाह कह्यो सुत जाहु तुरंता। जहँ तुम्हारि भगिनी कर कंता॥
कीन्ह्यो रामानुजसेवकाई। तुम्हरो उभय लोक बनि जाई॥
शाह चरण शिर धरि शहिजादा। चल्यो यादवाचल अहलादा॥
कबरू जब यादव गिरि आयो। सादर रामानुज बोलवायो॥
जानि अनन्य दास हरिकेरो। यतिपति कीन्ह्यो मान घनेरो॥
कछु दिन बसि यादव गिरि माहीं। कबरू कह रामानुज पाहीं॥
उभय विभूति आपके हाथे। पतित अभय आपहि के माथे॥
ताते मैं शरणागत आयो। तुम्हरो सुयश भुवन महँ छायो
जो न मुक्ति मोहिं दियो गोसाई। तौ तुम्हरो सब कार्य्य वृथाई॥
रामानुज कह तुव बहनोई। ताके शरण मुक्ति हठि होई॥
प्रभु सम्पत कुमार पहँ जाई। मांगहु गति दीनता देखाई॥
शाह सुवन सुनि यतिपति बयना। गो सम्पत कुमारके अयना
दोहा—कियो विनय करजोरिकै, मैं यदुपति तुव सार।
अचरज तेहि अब होयबो, यह असार संसार॥२९॥

शुद्ध भाव हरि तासु विचारी । दीनबंधु प्रणतारतिहारी ॥
कह्यो प्रत्यक्ष ताहि भगवाना । रंगनाथ कहँ करहु पयाना ॥
रंगनाथ शासन सुनि लीजै । विनहि विचार विशेषि करीजै॥
हरि शासन यवनेश कुमारा । सुनत तुरत श्रीरंग सिधारा ॥
जाय रंगपुरके दरवाजा । कीन्ह्यो धरन मुक्तिके काजा॥
राति स्वप्न दीन्ह्यो भगवाना । सुनु यवनेश कुमार सुजाना ॥
हम प्रपन्न पावन जग माहीं । बसहिं मुक्ति प्रपन्नहि काहीं ॥
बिन चक्राङ्कित मुक्ति न होई । यह सिद्धांत जान सब कोई ॥
नीलचक्र नीलाचल माहीं । निरखत मिलति मुक्ति सब काहीं॥
जगन्नाथ नगरी तहँ जाहू । सादर महाप्रसादहि खाहू ॥
अहैं पतित पावन जगदीशा । देहैं तोहिं गति नावत शीशा॥
कवरू सुनि रंगेश निदेशा । चल्यो पुरी सुमिरत कमलेशा॥

दोहा–जगन्नाथपुर आयकै, पाया महाप्रसाद ।
नाचन लाग्यो द्वार मम, मगन प्रेम मर्याद ॥ १३० ॥

तासु प्रीति परतीति निहारी । सपने पंडन कह्यो मुरारी ॥
कवरू को मंदिर के भीतर । ल्यावहु वेगि विचारि शुद्धतर ॥
पंडा शाहसुवन कहँ ल्याये । कवरू लखि नाथहि सुख पाये ॥
पुलकित तनु बह नैननि नीरा । रही सुरति नहिं तनक शरीरा ॥
नाचन लागो हाथ उठाई । जय जय दीनबंधु यदुराई ॥
यहि विधि नित मंदिर महँ जाई । दर्शन करै प्रसादहि पाई ॥
विचरै पुरी मलेच्छ सुजाना । नित नव प्रेम मगन भगवाना ॥
एक समय उत्सव अवसरमें । महाभीरभइ हरिमंदिरमें ॥
महाप्रसाद कोउ नाहिं दीन्ह्यो । तब कवरू विचार मन कीन्ह्यो ॥
रोटी चारिक लेहुँ बनाई । भोजन करि देखों प्रभु जाई ॥
अस विचारि बनयो कहुँ रोटी । लेपन लाग्यो घृत गुनि मोटी ॥

तासु परीक्षा लेन विचारी। श्रीजगदीश श्वान वपुधारी ॥
दोहा—आय अचानक यमन ढिग, लै रोटी प्रभु भाग।
कवरू के उरलखतही, उपज्यो अति अनुराग ॥३१॥
सब महँ लखत रह्यो जगदीशा। हरिगुनि रह्यो नवावत शीशा ॥
श्वानरूप भगवानहि भायो। पाछे कवरू ले घृत धायो ॥
श्वानहि कह्यो पुकारि पुकारी। कौन हेतु घृत दियो विसारी ॥
भोजन करहु सघृत प्रभु रोटी। विनघृत रुक्ष अहै अति मोटी॥
श्वान गयो सागरके तीरा। पाछे कवरू गो अति धीरा ॥
मानि अनन्यदास जगदीशा। प्रगट भये प्रभु सहित फणीशा॥
चारि बाहु पीताम्बर धारी। रूप कोटि मन्मथ मदहारी ॥
कवरू कहँ निज अङ्क उठाई। चूमत बदन आंशु झरिलाई ॥
तब कवरू बोल्यो अस वानी। सत्य पतितपावन हम जानी ॥
हरि विकुंठ कहँ ताहि पठायो। सो बहु विधि स्तुति मुख गायो॥
फैलिगई यह जग महँ बाता। भे जगदीश यमन जामाता ॥
पुरवासी यह अचरज देखे। यमनहिं महाभागवत लेखे ॥
दोहा—पुर दक्षिण दिशि सिंधु तट, रचे तासु स्थान।
सो अबलों यात्री लखत, जाहिर सकल जहान॥३२॥
धन धन है कवरू धरणि, धनि धनि कृपानिवास ॥
की प्रभुकी प्रभुता कहौं, की सेवक विश्वास ॥ ३३ ॥
शाह सुनत सुत सुता हवाला। मानि सुगति नहिं भयो बिहाला॥
पुनि सम्पत कुमार प्रभु पासा। भेजा विविध भाँति धनवासा ॥
अरु जगदीश समीपहु नाना। मणि भूषण पठयेसविधाना ॥
जब संपतकुमार भगवाना। कियो यादवाचलहि पयाना ॥
नीच जाति तिन सँग बहुआये। चर्मकार जे जगत कहाये ॥
तिनकी भइ प्रभुपर अति प्रीती। जानि तासु यतिराज प्रतीती ॥

बाँधि दई मर्य्याद प्रवीनी । वर्षरोज महँते दिन तीनी ॥
होत महास्नान नाथको । परश होत तब तिनहि हाथको ॥
यतिपति यादव गिरिपर सुंदर। बनवायो उतंक इक मंदिर ॥
कछु दिन कीन्ह्यो तहाँ निवासा।शिष्य सहित मत करत प्रकाशा
रंगनगर ते वैष्णव आयो । रामानुज तेहि निकट बोलायो॥
पूरणार्य्य कूरेश हवाला । पूंछन लागे मनहिं विहाला ॥

दोहा–पूरण अरु कूरेश को, भयो जौन विरतंत ॥
अरु चोलहु नृपको चरित, कहे आदि ते अंत॥३४॥

पूरणार्य्य कूरेशहु दोऊ । चोल नगर गे संग न कोऊ ॥
चोलराज निज सभा बोलायो । दोहुन को अस वचन सुनायो॥
तीनि देव महँको बड़ होई । यह तुम कहहु शास्त्र गति जोई॥
तब कूरेश कह्यो सुनु राजा । मोहिं बड़ जानि परत यदुराजा॥
वामन वपु प्रभु पाँव पसारा । चरण धोय लीन्ह्यो करतारा ॥
सो जल शम्भु शीश महँ धारत । गङ्गा नाम सकल जग तारत॥
तब राजा कह कोपित वानी । तुम बुध अहो युक्ति बहु जानी॥
यह लिखि देहु जो मानहु सेवा । शिवते पर दूसर नाहिं देवा ॥
तब हँसि कह्यो वयन कूरेशा । कौन हेतु हम लिखैं नरेशा ॥
तीनि देव महँ भेद न होई । अंतर्यामी हैं हरि सोई ॥
शास्त्र पुराण संहिता नाना । वर्णत यहि विधि वेद विधाना॥
निज निज इष्टदेव कहँ प्रानी । पूजहिं सर्वोपरि जिय जानी ॥

दोहा–हम नारायण भक्त हैं, तुम शिव भक्त उदार ॥
तुम निज मति अनुसार हौ, हम निज मति अनुसार३५॥

जो अस कहौ न शिव पर कोई । शेर कहावत है शिव कोई ॥
ताते होत अधिक है धारा । यामें कछु नाहिं देव विचारा ॥
राजा मानि वचन परिहासा । किय कुरेश पर कोप प्रकासा॥

तुरत भटन कहँ शासन दीन्ह्यो।आंखि कढ़ाय दुहुँनकी लीन्ह्यो॥
दोनहुँ दीन्ह्यो नगर निकारी। चले रंगपुर अंध दुखारी॥
बीच मिले वैष्णव कोउ आई। तिनसों पूरण कह्यो बोलाई॥
यक शत पंच वर्ष वय मोरी। नाहिं शरीर राखन मति थोरी॥
ताते यहि थल वपुष विहाई। मिलिहौं रंगनाथ कहँ जाई॥
अस कहि गुरुपद पंकज ध्याई। यति तनु मिले कृष्ण कहँ जाई
प्रेत कर्म तिनके सुत कीन्ह्यो। लै कूरेश रंग चलि दीन्ह्यो॥
सुनि परगति गुरुकी यतिराई। तासु नाम बहु साधु खवाई॥
रामायण अरु वेदहु केरो। पारायण कीन्ह्यो बहुतेरो॥

दोहा—यतिपति तब कूरेश को, नयन हीन जियजानि।
महादुखित मनमें भये, मम सहाय भय हानि॥३६॥

पुनि कूरेश हवालहि पूंछे। मानहु भये सकल सुख छूंछे॥
तब वृत्तान्त संत सब गाये। जिमि कूरेश रंगपुर आये॥
नाथ शिष्य अति दुखित तुम्हारा। आयो जबै रंगपुर द्वारा॥
द्वारपाल चाकर नृप केरे। जान दियो नाहिं प्रभुके नेरे॥
हाकिम हुकुम अहै यहि भांती। रामानुज जन राति विराती॥
मंदिर भीतर जान न पावैं। पकरि नगर बाहर करि आवैं॥
तिन महँ कोउ कह साधु विचारा। काहे कीजत वारण वारा॥
तब कूरेश कह्यो मतिरासी। हम यतिनाथ अनन्य उपासी॥
गुरु पद पंकज सेव विहाई। नहिं चाहत हरिकी सेवकाई॥
जो मम गुरुको कीन न होई। हरिको कीन होय नहिं सोई॥
अस कहि लौटि लियो सुत नारी। वस्यो जाय वृषभाचल भारी॥
सुंदर बाहु तहाँ भगवाना। सेवन लाग्यो सहित विधाना॥

दोहा—रच्यो चारि स्तोत्र तहँ, मान्यो सुख वसुयाम।
नेत्र हीनकी तनु विथा, गन्यो न कछु मतिधाम॥३७॥

दशा देखि यह संत दुखारी। गोष्ठी पूरण निकट सिधारी ॥
कह्यो वचन शिर धुनि धरणीमें। नाथ दुखी हम नृप करणीमें ॥
यतिपति यादव गिरि महँ वसही। पूरणार्य्य हरिके सँग लसही॥
वृषभाचल कूरेश निवासा। भये सकल हम संत निरासा॥
तब गोष्ठीपूरण कह वानी। मेरे वचन लेहु सति जानी ॥
सुरपति सुवन जयंत अभागा। सीता चरणचोंच हति भागा ॥
ताहि दंड दीन्ह्यो रघुराई। कस नहिं दंड चोल नृप पाई ॥
अस कहि जामुन पद चित लाई। गोष्ठीपूरण वपुष विहाई ॥
भेदि भानुमंडल तेहिं काला। गयो जहाँ यदुनाथ कृपाला ॥
यह वृत्तांत सुनत यतिराई। कह्यो वैष्णवन सों तुम जाई ॥
कूरेशहि बहु विधि समुझायो। मोरि कुशल सब भांति सुनायो॥
वैष्णव सुनत चले अतुराई। गये रंगपुर वेष छिपाई ॥

दोहा–सुनि कूरेश हवाल तहँ, वृषभाचल को जाय ॥
कूरेशहि यतिराजकी, दीन्ह्यो कुशल सुनाइ ॥ ३८ ॥
नेत्रहीन तुम को सुन्यो, अरु गुरुको परधाम ॥
रामानुज अतिशय दुखित, विकल रहत वसुयाम३९॥
तब कूरेश कह्यो वचन, सुखी जो गुजरत माहिं ॥
तौ मोहिं नैन वियोग को, नेसुक दुखहै नाहिं॥१४०॥

अस कहि किये गुरू सत्कारा। लह्यो कूरेश अनंद अपारा ॥
इत कूरेश परमसुख पायो। उत यादवगिरि संत सिधायो ॥
तिनसों पुनि पूछ्यो यतिनाथा। कहहु चोल भूपतिकी गाथा॥
तब यतिपतिसों साधु बखाना।जेहिं विधि किय यमपुरहि पयाना॥
चोल भूप पापिन को राजा। भई पातकी तासु समाजा ॥
जब कूरेश आँखि निकरायो। पूर्नारज परधाम सिधायो ॥
विष्णुद्रोह महँ अति अनुराग्यो। हरिमंदिर फोरवावन लाग्यो ॥

चोल देश हरिमंदिर जेते। दियो ढहाय रहे महि तेते ॥
रह्यो बचा इक रंग विमाना। ताहि ढहावन कियो पयाना ॥
मारग महँ इक दिन अधराता। फूलि उठे आपहि सबगाता ॥
ताके परे कंठ महँकीरा। भये अनेकन घाव शरीरा ॥
कीरावंत पुकारत आरत। मरयो भूप सुखसंत पसारत ॥
दोहा—कुशल क्षेम अब रंगपुर, यतिपति चलहु सिधारि ॥
चोल मरण सुनि संत सब, जय हरि कहे पुकारि॥४१॥
रामानुज अति आनँद पायो। नरहरिके चरणन शिरनायो ॥
दियो वैष्णवन बहुत इनामा। जे कह भूप गमन यमधामा ॥
हरिमंदिर रामानुज जाई। प्रभुहि जोरि कर विनय सुनाई॥
हिरणकशिपु अरु हाटक नयना। कुम्भकर्ण रावण बलअयना ॥
राक्षस दानव दैत्य नरेशा। जबजबदीन्ह्यो संत कलेशा ॥
तबतबजेहि विधि हने मुरारी। तेहि विधि चोलहि हने मुरारी॥
यतिपति वचन सुनत भगवाना। दियो प्रसाद मोद अति माना॥
पुनि शासन कीन्ह्यो कमलेशा। यतिपति जाहु रंगपुर देशा ॥
अब नहिं तहाँ कछुक दुचिताई। बसहु तहाँ पूरबकी नाई ॥
सुनि हरि हुकुम हर्ष हिय हेरी। चले रंगपुर कियो न देरी ॥
कह वैष्णवन बोलि यतिदेवा। नित संपत कुमारकी सेवा ॥
कीन्ह्यो तनक बीच नहिं परई। सावधान जिमि श्रुति अनुसरई॥
दोहा—असह विरह सब संत गुनि, रुदन करन तहँ लाग ॥
निज मूरति थाप्यो तहाँ, संत हेतु बड़ भाग ॥ ४२ ॥
आये रंगनगर यतिराई। बारह वर्ष विदेश बिताई ॥
आगू लिये रंगपुर वासी। यतिपति निरखि लहेसुखरासी॥
विविध भाँतिके बाजन बाजे। विजन छत्र चामर सब साजे ॥
गयो रंगमंदिर यतिराई। रंगनाथ कहँ शीश नवाई ॥

स्तुति कीन्ह्यो विविध प्रकारा। आंखिन बही अम्बुकी धारा॥
रंगनाथ कर पाय प्रसादा। आये भवन सहित अहलादा॥
सुनि कुरेश यतिनाथ अवाई। आयो वृषभाचल ते धाई॥
लखि कूरेश यतींद्र दुखारी। मिले विलोचन ढारत वारी॥
कह कूरेश वचन गुरुपाहीं। मम अपराध और कर नाहीं॥
यतिपति कह मोरे अपराधा। जाते तुम पाई अस बाधा॥
कहत परस्पर दोउ यहि भांती। आय भवन निवसे तेहिराती॥
यतिपति देखन देश निवासी। आवत भये मानि सुखरासी॥

दोहा—करि प्रणाम बोले वचन, चित्रकूट नृप चोल॥
हरिमंदिर नाश्यो अमित, दैअधर्म्म कर ढोल॥४३॥

तहँ गोविंदराज भगवाना। फेंकन चाह्यो उदधि महाना॥
तहँ तिह्ठा तिय विरचि उपाई। लै गोविंद मूरत पहिराई॥
व्यंकट शैल माहिं तेहिथाप्यो। भूपति भीति देश सब काँप्यो॥
सुनि यतिपति व्यंकटगिरिआये। श्रीगोविंद विधि युत बैठाये॥
व्यंकटनाथ दरश पुनि लीन्ह्यो।गवन सत्य व्रत क्षेत्रहि कीन्ह्यो॥
यतिपति बहुरि रंगपुर आये। सब संतन अति आनँद छाये॥
तहँ कूरेशहि निकट बुलाये। अंध विलोकि महादुखपाये॥
कूरेशहि बोले यति राई। हरि स्तुति विरचौ मनलाई॥
मन वांछित देहैं भगवाना। दास दरनदुख दयानिधाना॥
देहैं दृग संशय कछु नाहीं। यह भरोस हमरे मनमाहीं॥
तब कूरेश कह्यो मुसकाई। अबदृग होब मोहिं दुख दाई॥
दिव्य नैन मोहिं दिय श्रीधामा। लखौं नाम लीला वपुधामा॥

दोहा—है न नयन की चाह चित, देखन विषय विलाश।
दिव्य दृगन देखत रहौं, प्रभुको चरित प्रकाश॥४४॥

गुरुकह करु स्तोत्र विशेषी। मम शासन अवश्य उर लेखी॥

तब स्तोत्र रच्यो कूरेशा। भयो प्रसन्न सुनत कमलेशा॥
दिय कूरेश दिव्य विज्ञाना। लख्यो त्रिलोक वस्तुविधिनाना॥
प्रभु कहँ तब स्तोत्र सुनाई। पुनि कूरेश गुरू ढिग आई॥
विनय कियो गुरुसों शिर नाई। दिव्य नयन दीन्ह्यो यदुराई॥
लै कूरेश शिष्य समुदाई। कांचीपुरी गये यतिराई॥
वरदराजकी स्तुति कीन्ह्यो। माँगहु वर अस हरि कह दीन्ह्यो॥
तब कूरेश कहत अस भयऊ। जो मोहि चोल निकटलैगयऊ
तेहिं भागवत लग्यो अपराधा। ताहि दया करि करहु अबाधा
एवमस्तु हरि कह्यो सराही। परउपकारी तोहिं सम नाहीं॥
सो वृत्तांत सुनत यतिराई। कूरेशहि बोले अनखाई॥
माँगन नेत्र तुमहि हम कहेऊ। तुम औरहि हरिसों बरलहेऊ

दोहा—वरदराज तब स्वप्न में, कह्यो यतीशहि आय।
ह्वैहैं दृग कूरेशके, तब दुख जई नशाय॥ ४९॥

तब कूरेशहि होत प्रभाता। प्रगटे नैन सरिस जलजाता॥
रामानुज अति आनँद पायो। बहुरि रंग पुरको पुनिआयो॥
पुनि सतघट अरप्यो नवनीता। धन्नीपुर पुनि गये पुनीता॥
तहँ बट पत्र शयन भगवाना। दरशन कीन्ह्यो सहितविधाना॥
गोदांवाके दर्शन लीन्ह्यो। कुरका नगर गवनपुनिकीन्ह्यो॥
बीच मिली इक विप्र कुमारी। यतिपति तासों गिरा उचारी॥
कुरकापुरी अहै कति दूरी। कही कुमारि त्यागि भय भूरी॥
सहसगीत शठ रिपु कृत जोई। भूली नाथ तुमहिं का सोई॥
अस कहिसहस गीतपढ़ि दयऊ। रामानुज सुनिविस्मितभयऊ॥
रामानुज तेहिं गये अगारा। सो कीन्हो बहुविधिसत्कारा॥
यतिपति तेहिं उपदेश्यो ज्ञाना। लह्यो कुटुम्बसहितनिर्वाना॥
पुनि कुरकानगरी महँ जाई। आदिनाथ हरिके शिर नाई॥

दोहा–पुनि अमिली तरु तर गये,शठरिपु पद शिरनाय ।
इन सम नाहिं कोउ दूसरो,असकहि सबहिं सुनाय ॥ ४६॥
शैलपूर्ण सुत निकट बोलाई । श्रीशठकोप रचित मन भाई॥
सहस गीत तेहिं दियो पठाई । अपनो पुत्र गन्यो यतिराई ॥
रामानुज पुनि रंग निवासा । आवत भे करि सुयशप्रकासा ॥
पुनि हरिविमुखनविविधप्रकारा। हरि शरणागत कियो अपारा ॥
बसे रंगपुर शिष्य समेतू । जीवन ज्ञान भक्ति रति हेतू॥
आचारज सब यतिपति सेवा । करहिं यामवसु गुनि निज देवा॥
आठ और शत शिष्य प्रधाना । गने को और शिष्य सहसाना॥
सकल शिष्यमिलिहरिगुरुदासा। कीन्ह्यो इक स्तोत्र प्रकासा ॥
दिव्यजाति कीन्ह्यो नाहिं भाषा । लिख्यो ग्रंथ जस तस इत राखा

श्लोक–इति ध्रुवं विनिश्चित्य यतिराजपदाम्बुजम् ॥
अष्टोत्तरशतैर्दिव्यैर्नामभिर्भक्तितत्परः ॥ १ ॥
नित्यमाराधयंस्तस्थौ इष्टदेवमिवादरात् ॥
रामानुजः पुष्कराक्षो यतीन्द्रः करुणाकरः ॥ २ ॥
कांतिमत्यात्मजः श्रीमाँल्लीलामानुषविग्रहः ॥
सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञः सर्वज्ञः सज्जनप्रियः ॥ ३ ॥
नारायणकृपापात्रः श्रीभूतपुरनायकः ॥
अनघो भक्तमंदारः केशवानंदवर्द्धनः ॥ ४ ॥
कांचीपूर्णप्रियसखः प्रणतार्तिविनाशनः ॥
पुण्यसंकीर्तनः पुण्यो ब्रह्मराक्षसमोचकः ॥ ५ ॥
यादवापादितापार्थवृक्षच्छेदकुठारकः ॥
अमोघो लक्ष्मणमुनिः शारदाशोकनाशनः ॥ ६ ॥
निरंतरजनाज्ञाननिर्मोचनविचक्षणः ॥
वेदांतद्वयसारज्ञो वरदाम्बुप्रदायकः ॥ ७ ॥

पराभिप्रायतत्त्वज्ञो यामुनांगुलिमोचकः ॥
देवराजकृपालब्धषड्वाक्यार्थमहोदधिः ॥ ८ ॥
पूर्णार्यलब्धसन्मंत्रः शौरिपादाब्जषट्पदः ॥
त्रिदंडधारी ब्रह्मज्ञो ब्रह्मध्यानपरायणः ॥ ९ ॥
रंगेशकैंकर्यरतो विभूतिद्वयनायकः ॥
गोष्ठीपूर्णकृपालब्धमंत्रराजप्रकाशकः ॥ १० ॥
वररंगानुकंपी च द्राविडाम्नायसागरः ॥
मालाधरार्यसुज्ञातद्राविडाम्नायतत्त्वधीः ॥ ११ ॥
चतुःसप्ततिशिष्यार्यः पंचाचार्यपदाश्रयः ॥
प्रपीतविषतीर्थांभः प्रकटीकृतवैभवः ॥ १२ ॥
प्रणतार्तिहराचार्यो दत्तभिक्षैकभोजनः ॥
पवित्रीकृतकूरेशभागिनेयत्रिदंडकः ॥ १३ ॥
कूरेशदाशरथ्यादिचरमार्थप्रदायकः ॥
रंगेशवेंकटेशादिप्रकाशीकृतवैभवः ॥ १४ ॥
देवराजार्चनरतो मूकमुक्तिप्रदायकः ॥
यज्ञमूर्तिप्रतिष्ठाता मन्नाथो धरणीधरः ॥ १५ ॥
वरदाचार्यसद्भक्तो यज्ञेशार्तिविनाशकः ॥
अनंताभीष्टफलदो विठ्ठलेशप्रपूजितः ॥ १६॥
श्रीशैलपूर्णकरुणालब्धरामायणार्थकः ॥
प्रवृत्तिधर्मैकरतो गोविंदार्यप्रियानुजः ॥ १७॥
व्याससूत्रार्थतत्त्वज्ञो बौधायनमतानुगः ॥
श्रीभाष्यादिमहाग्रंथकारकः कलिनाशनः ॥
अद्वैतमतविच्छेत्ता विशिष्टाद्वैतपालकः ॥
कुरंगनगरीपूर्णमंत्ररत्नोपदेशकः ॥ १९ ॥
विनाशिताखिलमतः शेषीकृतरमापतिः ॥

पुत्रीकृतशठारातिः शठजिदृणमोचकः ॥ २० ॥
भाषादत्तहयग्रीवो भाष्यकारो महायशाः ॥
पवित्रीकृतभूभागः कूर्मनाथप्रकाशकः ॥ २१ ॥
श्रीवेंकटाचलाधीशशंखचक्रप्रदायकः ॥
श्रीवेंकटेशश्वशुरः श्रीरमासखदेशिकः ॥ २२ ॥
कृपामात्रप्रसन्नार्यो गोपिकामोक्षदायकः ॥
समीचीनार्यसच्छिष्यः सत्कृतो वैष्णवप्रियः ॥ २३ ॥
कृमिकंठनृपध्वंसी सर्वमंत्रमहोदधिः ॥
अंगीकृतांध्रपूर्णार्यः शालिग्रामप्रतिष्ठितः ॥ २४ ॥
श्रीभक्तग्रामपूर्णार्यो विष्णुवर्द्धनरक्षकः ॥
बौद्धध्वांतसहस्रांशुः शेषरूपप्रदर्शकः ॥ २५ ॥
नगरीकृतवेदाद्रिर्दिल्लीश्वरसमर्चितः ॥
नारायणप्रतिष्ठाता संपत्पुत्रविमोचकः ॥ २६ ॥
संपत्कुमारजनकः साधुलोकशिखामणिः ॥
सुप्रतिष्ठितगोविंदराजः पूर्णमनोरथः ॥
गोदाग्रजो दिग्विजयी गोदाभीष्टप्रपूरकः ॥
सर्वसंशयविछेत्ता विष्णुलोकप्रदायकः ॥ २८ ॥
अव्याहतमहद्वर्त्मा यतिराजोजगद्गुरुः ॥
एवंरामानुजार्यस्य नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ॥
यः पठेच्छृणुयाद्वापिसर्वान्कामान्समश्नुते ॥ २९ ॥
यदांध्रपूर्णेन महात्मनेदं स्तोत्रं कृतं सर्वजनावनाय ॥
तज्जीवभूतं भुवि वैष्णवानां बभूव रामानुजमानसानाम् ॥ ३० ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यां रघुराजसिंहजूदेवकृतायां श्रीप्रपन्नामृते रामानुजाचरिते रामानुजाष्टोत्तरशतनामवर्णनं चतुःपंचाशोऽध्यायः ॥

अष्टोत्तर शत यतिपति नामा। पाठकरत पूरत सब कामा॥
यतिपति शिष्य सकल मतिधामा। पै वर आंध्रपूर्ण जेहिं नामा॥
एक समय सब कियो पयाना। यतिनायक ताको पछि आना॥
दोहा—नारायण मंत्रहि जपत, निरख्यो निज गुरुकाहिं।
तुव प्रभु ते मम प्रभु न लघु, अस बोल्यो गुरुपाहिं४७
इष्टदेव यदुनाथ तुम्हारे। इष्टदेव यतिनाथ हमारे॥
फेरि रंगमंदिर इक काला। गुरुकहँ लखि हरि नैन विशाला॥
आंध्रपूर्ण कह मम गुरु नैना। तिनकी छवि कछु कहत बनैना॥
आंध्रपूर्ण कर लखिगुरुनेमा। यतिपति कियतापरअति प्रेमा॥
निज उच्छिष्ट दियो तेहिकाहीं। लियो खाय कर धोयो नाहीं॥
गुरुते अधिक देव नहिं जान्यो। इष्टदेव अपनो गुरुमान्यो॥
पय औटावत महँ इक काला। कढेरंगपति विभव विशाला॥
रामानुज कह कीजे दरशन। आंध्रपूर्ण कह नहिं अवसरक्षन॥
जो मैं रंगदरश कहँ जाऊं। गुरुहित गोरस तुरत नशाऊं॥
इक दिन ज्ञाति बंधु के आये। आंध्रपूर्ण नहिं मिलन सिधाये
जब वे जात भये घर माहीं। आंध्रपूर्ण आये घर काहीं॥
जानि अवैष्णव पात्रन फोर्‌यो। ज्ञातिन ते सनेह नहिं जोर्‌यो॥
दोहा—अंतकाल आयो जबै, आंध्रपूर्ण मतिवान।
बोलि वैष्णवको तुरत, तिनसों कियो बखान॥ ४८॥
मोर शरण यतिपति चरण, ऐसो कह्यो पुकारि।
जै यतिपति अशरणशरण, बोले संत विचारि॥ ४९॥
रामानुज पद कमल में, करि मन मुदित मिलिंद॥
आंध्रपूर्ण तनु तजि भयो, श्रीवैकुंठ वसिंद॥ ५०॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांएकादशोऽध्यायः॥ ११॥

दोहा—रामानुज को कोउ रह्यो, शिष्य सु नाम अनंत।
वसत रह्यो व्यंकट सहित, हरिके कर्ज करंत॥ १॥
व्यंकटगिरि के उपर मनोहर। रामानुज इक रह्यो सरोवर॥
ताहि अनंत खनावन लागे। व्यंकट चारु चरण अनुरागे॥
खनि मृत्तिकासहित निज नारी। शिर धरि देहिं बाहिरे डारी॥
दंपति करहिं परीश्रम भारी। औरहु आये परउपकारी॥
तेऊ धर्म मानि खनि माटी। शिर धरि डारहिं बाहर पाटी॥
रही सगर्भ अनन्तहि दारा। ताहि परचो श्रम ढोवत भारा॥
गुरु तड़ाग हरि की सेवकाई। मानि तियातनु सुधि बिसराई॥
यह लखि करुणानिधिभगवाना। अपनो बालरूप निरमाना॥
तुरत अनंत नारि ढिगआई। माटी ढोवन लगे अतुराई॥
खनि अनंत तिय हरि कहँ देही। फेंकि अनत सो पुनि शिर लेही
अतिशय शीघ्र फेंकि हरि माटी।यहि विधि प्रीति रीति उद्घाटी॥
अति आतुरता तिय की देखी। तब अनंत पूछचो श्रम लेखी॥
दोहा—तुम माटी उत फेंकि कै, आवहु इत अतुराय॥
ताको कारण कौन है, दीजै वेगि बताय॥ २॥
तब नारी पति सों कह वानी। इक बालक आवै छबिखानी॥
सो माटी मम करसों लैकै। आवै फेंकि त्वरा अति कैकै॥
तब अनंत मन माहिं विचारा। है सांचो वसुदेव कुमारा॥
दीन दयानिधि अस को दूजो। जाको पदपंकज विधि पूजो॥
अस विचारि मन माहिं अनंता। धायो धरन तुरत श्रीकंता॥
विप्रहि धावन आवत देखी। भागे हरि प्रगटब निज लेखी॥
बोले तब अनंत पछि आने। बचिहो नाहिं यदुनाथ पराने॥
विघ्न करहु मेरी सेवकाई। नारि न जानति तोरि ढिठाई॥
प्रविशे भवन भागि भगवाना। खनन लग्यो पुनि विप्र सुजाना॥

एक समय तुलसी बन माहीं। लेन गये तुलसीदल काहीं॥
तहँ अनंत कहँ सर्प सतायो। मनमहँ विप्र भीति तहिं ल्यायो
तेहि विधि लग्यो करन सेवकाई। तब कोउ संत कह्यो तेहिं आई

दोहा—घोर भुजंग तुम्हैं डस्यो, ताको करहु उपाय।
मंत्र यंत्र अरु तंत्रहू, औषधि अवशि मँगाय॥ ३॥

तब अनंत बोले मुसकाई। जो विष प्रबल होयगो भाई॥
तौ तनु तजि वैकुंठ सिधारब। तहँ हरि पद सेवन विस्तारब॥
हरिके कर्ज प्रबल यदि होई। तौ डारी अहिको विष खोई॥
अस कहि लगे करन सेवकाई। गयो भुजंगम गरल पराई॥
एक समय अनंत मतिवाना। अवधपुरीको कियो पयाना॥
चिउरा दही बाँधि पट माहीं। उतरे कहुँ पथ भोजन काहीं॥
तामें चढ़ी पिपीलिक आई। संत कह्यो फेंकहु कहुँ जाई॥
तब अनंत बोले मुसकाई। वारण करत मोहिं रघुराई॥
अस कहि व्यंकटगिरि फिरि आये। तहँते रामचरण शिरनाये॥
एक समय अनंत मतिवाना। रहे करत माला निरमाना॥
तहँ कोउ हरिको पूजक आयो। कह्यो तिनहिं हरि तुमहिं बोलायो॥
मालारचन त्यागि नहिं गवने। रचि माला पुनि गे हरि भवने॥

दोहा—हरि प्रत्यक्ष तिनसों कह्यो, कत मम शासन टारि॥
तुम नहिं आये ताहिते, दे हैं तुमहिं निकारि॥ ४॥

तब अनंत बोले तेहिं ठोरा। मोहिं निकासन तुमहिं न जोरा॥
मैं गुरु शासन को शिर धारी। तिहरो सेवन करहुँ मुरारी॥
भक्त हेतु वैकुंठ बिहाई। तुम जग महँ विचरहु सब ठाईं॥
सदा रहौ भक्तन रुख राखे। कबहुँ न निज दासन पर माखे॥
मोपर है यतिपति कर जोरा। तिनहीं पै प्रभु शासन तोरा॥
हम गुरुभक्त भक्त नहिं तुम्हरे। गुरु तजि दूसर ईश न मेरे॥

नहिं कछु जोर पराये चाकर । गुनिहौ अब अस काकर काकर॥
लखि अति दृढ़ गुरुभक्ति मुरारी।भे प्रसन्न तापर अघहारी ॥
यहि विधिके जग करन पवित्रा। अहैं अनंत अनंत चरित्रा ॥
अब कूरेश विकुंठ पयाना । श्रोता सकल सुनहु दै काना ॥
एक समय कूरेश विज्ञानी । गयो रंगमंदिर छबि खानी ॥
तासों कह्यो प्रत्यक्ष मुरारी । माँगहु जो मन लियो विचारी॥
दोहा—तब अति मंजुल मधुर पद, रचि अनेक श्लोक ॥
रंगनाथ सों किय विनय, ह्वैके विश्व विशोक ॥ ५ ॥
जो प्रसन्न मोपर भगवाना । तौ करि कृपा देहु निरवाना ॥
और आश नहिं कछु मन मोरे । यहि लगि लागि रह्यो पद तोरे॥
रंगनाथ तब वचन उचारा । अहै परमपद तुव अधिकारा ॥
जाहु विकुंठ अवशि शठ द्रोही । यतिपति शपथ न वारव तोही॥
शिष्य प्रशिष्य मुक्त सब तेरे । तोहिं कौन विधि कौन निवेरे॥
तब कूरेश मानि मुद भारी । नाचत गयो निवेस सिधारी ॥
रामानुज सुनि हरिको शासन । वसन उड़ाय लगे तहँ नाचन॥
बोलि वैष्णवन कियो बखाना । दिय वरदान आजु भगवाना॥
शिष्य प्रशिष्य हमारे ह्वैहैं । ते सब अवशि विकुंठहि जैहैं ॥
गे कूरेश निकट यतिराई । कियो प्रणति कूरेशहु आई ॥
दियो मंत्र शरणागत काना । विरह विचारि बहुरि विलखाना॥
पुनि बहु वचन भाषि यतिनाथा । धरि कूरेश पीठि पद हाथा ॥
दोहा—रामानुज निज भवनको, गवन कियो दुखमानि ।
तब कूरेश कह्यो वचन, तनय तिया निज आनि॥६॥
रंगनाथ पूजन कह्यो, गुरु सेवों सब भांति ।
इष्टदेव मानत रह्यो, श्रीवैष्णवकी जाति ॥ ७ ॥
अस कहि पग तिय अंक धरि, शिर सुत अंक निधाय

गुरुपद चित कूरेश दै, वस्यो परमपद जाय ॥ ८ ॥
जेहिं विधि रामानुज मुख वरणी।करी तथा विधि सुत सब करणी॥
भट्टारज कूरेश कुमारा। तेहि रामानुज तुरत हँकारा ॥
गये रंग मंदिरहि लेवाई। तहँ प्रत्यक्ष बोले यदुराई ॥
पिता सोच मत करहु पियारे। मैंहीं हौं अब पिता तिहारे ॥
रंगवचन सुनि यतिपति वंदे। गये भवन ले सुतन अनंदे ॥
पुनि कूरेश पुत्र दोउ भाई। गोविंदहि सौंप्यो यतिराई ॥
पुनि सुमिरतमन अंतर्य्यामी। बसे रंगपुर यतिगण स्वामी ॥
रंगनगर नायक इक काला। बोले वचन विचारि विशाला ॥
जे रामानुज मत महँ ऐहैं। ते सायुज्य मुक्ति नर पैहैं ॥
व्यंकट नायक यतिपति बोली। कह्यो गिरा यह जगत अतोली॥
उभय विभूति नाथ तुम भयऊ। जीवन तारि परमपद दयऊ ॥
फैली बात सकलसंसारा। सो सुनि एक गोपकी दारा ॥
बेंचन दही रंगपुर आई।तब कोउ यतिपतिशिष्यसिधाई॥

दोहा—लै दधि रामानुज भवन, आयो मोल न लीन।
रही बैठि सो द्वार में, धन हित मन नहिं कीन ॥ ९ ॥

रंग दरश हित जब यतिराई। कढ़े द्वार शिष्यन समुदाई ॥
कह्यो पुकारि अहीर कुमारी। दहीमोल दीजै सुखकारी ॥
यतिपति कह्यो मोल का लैहै। जो कछु उचित वित्त सो पैहै॥
गोपसुता कह धन समुदाई। मैं नाहिं लेहौं हे यतिराई ॥
दही मोल मैं मुक्ति लेउँगी। नातो यतिपति जीव देउँगी ॥
तब यतिनाथ कहा मुसकाई। है नारायण परगतिदाई ॥
हमरी दीन नहीं दैजाती। तैं भजु माधव को दिन राती ॥
तब अहीर कन्या कह वानी। देहु पत्रिका मोहिं गति दानी ॥
मैं पत्रिका देहुँ हरिकाहीं। दैहै गति कछु संशयनाहीं ॥

तब यतिपति निज कर लिखि पाती । दीन्ही गोपसुतै मुदमाती ॥
लै पत्रिका अहीर कुमारी । व्यंकटगिरि को सपदि सिधारी ॥
दीन्ह्यो व्यंकटनाथहिं पाती । प्रभु पत्रिका बाँचि गति दाती ॥
दोहा—गोपसुता कहँ बोलि द्रुत, सो पाती शिरधारि ।
तुरत परमपद दीन तेहिं, निज जन वचन विचारि ॥ १० ॥
यज्ञमूर्त्ति इक पंडित भारी । गयो रंगपुर विजय विचारी ॥
यतिपति यज्ञ मूर्ति अविषादा । दिवस अठारहिं किय संवादा ॥
यज्ञमूर्ति शास्त्रार्थ न हार्‌यो । तब यदुपति यतिनाथ सँभार्‌यो ॥
यज्ञमूर्ति को स्वप्नहिं आई । हरि कह जिते न तोरि भलाई ॥
रामानुज शरणागत होहू । तो छूटिहै तोर मद मोहू ॥
यज्ञमूर्ति उठि तुरत प्रभाता । पकर्‌यो यतिपति पदजलजाता ॥
भयो समासृत वाद विहाई । दीन्ह्यो परगति तेहिं यतिराई ॥
ऐसे चरित अनेकन देखी । तब वैष्णव अचरज मन लेखी ॥
नगर नगर महँ जोरि समाजा । भाषत सदा चरित यतिराजा ॥
एक समय तहँ दीनदयाला । ठाकुर सुंदर बाहु विशाला ॥
कह्यो स्वप्न महँ बोलिपुजारी । लीजै यतिपति शिष्य हँकारी ॥
पूजक सब वैष्णवनबोलाये । रामानुज शिष्यहि भरि आये ॥
दोहा—तब हरिसों पूजक कहे, और न आये कोह ।
यतिपति गुरुके शिष्य जे, रहते अति मद मोह ॥ ११ ॥
तब पूजकन कही हरि बानी । लेहु सत्य ऐसो तुम जानी ॥
जस दशरथ हैं पिता हमारे । तस यतिपति के गुरू अपारे ॥
स्वप्ने महँ सुनि नाथ रजायी । विस्मित लैपूजक समुदायी ॥
कोउ वैष्णव तहँ मंदिर आयो । सुंदर बाहु प्रभुहिं शिरनायो ॥
कह अपराध सहस मैं भाजन । बोले ताहि सिंधुजा साजन ॥
रामानुज सम गुरू तिहारे । दया अनल अपराधनजारे ॥

तबते श्रीवैष्णवमत केरी। यह मर्य्यादा चली घनेरी ॥
जो कोउ रामानुज मत आवै। सो पापिहु परगति कहँ पावै ॥
श्रीकुरंग नगरी भगवानै। यतिपति कियो शिष्यसविधानै
ह्वैगै विश्व विदित यह बाता। यक रामानुज परगति दाता ॥
औरहु पूर्वाचार्यन केरी। कहहि संत इत कथा घनेरी ॥
औरहु रामानुज आख्याना। श्रोता सकल सुनहु दै काना ॥

दोहा—एक समय यतिवृंद प्रभु, गुरुदर्शनके हेत ॥
पूर्णाचारजके भवन, जात भये मति सेत ॥ १२ ॥

पूर्णाचारज यतिपति देखी। कियो प्रणाम गुरू निज लेखी ॥
पूर्णाचार्य सुता तब गायो। यह अनुचित मेरे दृग आयो ॥
तब पूर्णार्य कह्यो सुनु हेतू। कोउ न अधिक सम है यतिकेतू ॥
पुनि पूर्णार्य सबन सुनाई। बोले वचन महा मुद छाई ॥
सब के गुरु रामानुज अहहीं। शठकोपादिक अस सब कहहीं ॥
ताते इनहिं कियो परणामा। इनमें सब श्रुति अर्थनिग्रामा ॥
को रामानुज अस जगमाहीं। मम नैनन दीसत कोउ नाहीं ॥
मंत्र रत्न गुरु इनहिं सिखायो। कह्यो न कोहुसों अस समुझायो ॥
रामानुज चढिकै दरवाजा। ऊंचे स्वर टेरयो मनु राजा ॥
गुरु कह अति अनर्थ तैं कीन्ह्यो। सबको मंत्र सुनाय जो दीन्ह्यो ॥
रामानुज तब वचन उचारा। सुनहु गुरू मैं जौन विचारा ॥
मंत्रराजको अस परमाना। लहै परमपद परै जो काना ॥

दोहा—मोहिं नरक वरु होहि हठि, पै जो परिजन कान ॥
ते जीवनको परमपद, ह्वैहै अवशि निदान ॥ १३ ॥

भये अकेल नरक जो मोरे। लहै परमपद जीव करोरे ॥
तौ नाहिं नाथ हानि कछु मेरी। ताते कह्यो मंत्र मैं टेरी ॥
ऐसी सुनि रामानुज बाता। गह्यो गुरू इन पद जलजाता ॥

इनके पाँचहु गुरू नामके। एई सबके गुरु अकामके ॥
सुनि पूर्णारज की अस बानी। सिगरे शिष्य सत्य करि जानी॥
ऐसेय तिपति चरित अनेका। कैसे कहूं जीह मुख एका॥
औरहु सुनहु चरित सब श्रोता। पूर पियूष पयोनिधि सोता॥
भयो कोउ द्विज कुल इक मूका। जो दृग संज्ञा ते नहिं चूका॥
भो विय वर्षसो अंतर्द्धाना। कांची वासिन नाहिं देखाना॥
विते वर्ष विय प्रगट भयो सो। भाषन लाग्यो वचन नयो सो॥
पुरवासी अति अचरज माने। ताहि घेरि अस वचन बखाने॥
मिटी मूकता केहि विधि तोरी। अबलों रहे वसत केहिं ठोरी॥

दोहा—तब लाग्यो वर्णन करन, मूक सो पूरुव केर॥
श्वेतद्वीपको मैं गयो, तहँ हरि पार्षद ढेर॥ १४॥

रामानुज सब वर्णन करहीं। आपुस महँ सब मुद उर भरहीं॥
विष्वक्सेन मुख्य हरिदासू। जाय विश्व महँ परम प्रकासू॥
रामानुज अस नाम धराई। उद्धारत जीवन समुदाई॥
अस कहि सो जन तहाँ विलान्यो। कांचीजन अचरज अति मान्यो
औरहु रामानुज कछु गाथा। श्रोता सुनहु नाइ तेहि माथा॥
एक ब्रह्मराक्षस वन माहीं। लागत रह्यो बटोहिन काहीं॥
निकसे रामानुज तेहि राहू। लग्यो आय सो वैष्णव काहू॥
जन रामानुज ढिग ले आये। कह यतिपति केहिं हेतु सताये॥
कह्यो ब्रह्मराक्षस गति दीजै। शरणागत गुनि उधरन कीजै॥
तेहि अष्टाक्षर नाथ सुनाई। दियो तुरत वैकुंठ पठाई॥
यह यादव प्रकाश सुनि गाथा। नायो यतिपति के पद माथा॥
नाम बालस्वामी इक संता। नगर नगर सो कहत फिरंता॥

दोहा—रामानुज के शरण विन, मोक्ष उपाय न आन॥
सो सुनि जन यतिपति चरण, गहे लहे निर्वान॥१५॥

देवराज रामानुज चेला । नगर नगर कीन्ह्यो सो हेला ॥
अगणित जनन सुमंत्र सुनाई । दियो परमपद तुरत पठाई ॥
कोउ कूरेश शिष्य अज्ञानी । वैष्णव निंदा विविध बखानी ॥
सो सुनिकै कूरेश सिधाई । माँग्यो गुरु दक्षिणा छिपाई ॥
सो वाणी गुरुदक्षिण दीन्ह्यो । ह्वै पुनि मूक वास घर कीन्ह्यो ॥
एक समय देख्यो कोउ दीना । गुनि उपकार वचन कहि दीना ॥
पुनि मनमहँ कीन्ह्यो पछिताऊ। मैं प्रण कियो न बोलहुँ काऊ ॥
किय अनशन व्रत मानि गलानी । आयकुरेश कह्यो तेहि वानी॥
तजहु वानि जो परअपवादा । करहु सदा गुरुगुणगणवादा ॥
सो सुनि निज गुरु मुखके वैना । तजि अनशन व्रत पायो चैना॥
एक समय कावेरी तीरा । भई सकल साधुनकीभीरा ॥
तहँ कूरेश कह्यो सब पाहीं । गुरुते पर नारायण नाहीं ॥

दोहा—गुरु पदपंकज सेव विन, मुक्ति लहै नाहिं कोय ।
योग ज्ञान वैराग्य तप, साधन कोटि करोय ॥ १६ ॥

एक समय कोउ नास्तिक आयो । सभा मध्य अस प्रणहिसुनायो
शास्त्रार्थ महँ जो जय पावै । तेहि जो हारै कंध चढ़ावै ॥
कियो दाशरथि तेहि सँग वादा । पायो विजय शास्त्र मर्यादा ॥
दाशरथिहि सो कंध चढ़ायो । संत अंगपरशि ज्ञानउरआयो ॥
तेहि प्रणाम करि माँग्यो ज्ञाना । दिय उपदेशसो पद निर्वाना॥
कोउ इक संत शास्त्र पढ़िआयो । शास्त्र पठन को गर्वदेखायो॥
तेहिं लोकाचारज भट्टारज । कह्यो शास्त्र को गर्व तुर्त तज॥
सो तजि गर्व भयो शरणागत । गर्व विनाशत सोवत जागत॥
कोउ आचार्य कुरकापुर माहीं । गयो साधु कोउ पढ़िवे काहीं॥
पढ़्यो भाष्य तिनसों त्रयबारा । पुनि पूछ्यो छूटन संसारा ॥
तब आचार्य कह बिन गुरुसेवा। मिलै न मोक्ष भजे बहु देवा ॥

कोउ संत नारायण पुरमें । भाष्य प्रचारयो धर्महि धुरमें॥

दोहा—विद्यावान महान भो, सो चेला बहु कीन ।
कोउ शिष्य पूछत भयो, मोक्ष मार्ग परवीन ॥ १७॥

सो कह भाष्य पढ़ै गुरु सेवै । तब संसृत तजि परगति लेवै॥
कोउ वरद विश्वार्य नामके । भये अचार्य सुबुद्धि धाम के ॥
ते बहु शिष्यन शास्त्र पढाये । भक्तिमार्ग बहु भाँति बताये ॥
शिष्य सकल पूछैं तिन पाहीं ।केहि विधि सहज परमपद जाहीं
तब कीन्हो प्रपत्ति उपदेशा । ते कह यहि महँ बड़ो कलेशा॥
तब गुरु कह सुनु सुलभ उपाई। कीजै रामानुज सेवकाई ॥
याते मुक्ति उपाय न आनी । गुरु सेवत का कर भयहानी॥
शिष्य सुलभ गुनि मुक्ति उपाई। गुरुपदमें किय प्रीति दृढ़ाई ॥
यहि विधि चौहत्तर परधाना । रामानुज के शिष्य सुजाना ॥
अपने अपने शिष्यन काहीं । यही कियो उपदेश सदाहीं ॥
यहि विधि जगत विभयपरकाशी ।यतिपति लसैं रंगपुर वासी ॥
जिमि बहु हरि अवतारन माहीं।दश अवतार मुख्य कहि जाहीं॥

दोहा—दश अवतारन माहँ जिमि,त्रय अवतार प्रधान ।
यदुपति रघुपति नरहरी,जिन जग यश सित भान॥१८॥

अधम जाति गुरु नाथनिषादा । तासों करी मित्र मर्यादा ॥
धूरि जटायु जटा निज झारे । शबरीसों अति नेह पसारे ॥
लंका तिलक विभीषण सारे । कपि सुकंठ कहँ सखा उचारे॥
शरणागत रक्षण प्रभु कीन्ह्यो । ताते मुख्य रूप गुणि लीन्ह्यो॥
कीन्ह्यो कृष्ण अहीर मिताई । लीन्ह्योबहु भय तिनहिं बचाई॥
कियो श्रिदाम सुदाम मिताई । कुविजै दीन्ह्यो रमा बड़ाई ॥
दूत सूत भे पांडव केरे । गुरुद्विज तनय मृतक पुनिहेरे॥
तजि दुर्योधन घर पकवाना । विदुर शाक खायो भगवाना ॥

कृष्ण समान दीन हितकारी। कतहुँ मोहिं नाहिं परै निहारी॥
कियो आर्त रक्षण यदुराई। लही सकल वपु विशद बड़ाई॥
श्रीप्रह्लाद भक्त के कारण। प्रगटे खम्भ फारि खलदारन॥
तामें दश अवतार प्रधाना। नरहरिहूको वेद बखाना॥
दोहा–तैसहि सब आचार्य मधि,श्रीशठकोप प्रधान।
सहस गीत हरि सुयशमय,किय अपने मुख गान॥१९॥
जिमि आचारज माधि शठदेखी। तिमि रामानुज शिष्य विशेषी
सहस गीत सब वेदन सारा। तासु सार श्रीभाष्यउचारा॥
जिमि मुनि गण नारद गनिजाहीं। सुरगणमहँ गोविंद वर आहीं॥
रामानुज तिमि भक्त शिरोमनि। करिउपदेशकियोमुनिजनधनि
जो नाशै अज्ञान अँधियारे। हरि पद नेह प्रकाशपसारे॥
सो गुरु कहवावत जग माहीं। कौडी हेतु होत गुरुनाहीं॥
परब्रह्म गुरुकहँ सब जानौ। परगति हेतु गुरूकहँ मानौ॥
पर विद्या गुरु गुरु पर धन है। मुक्ति हेतु गुरु पद दृढ़ मन है॥
माता पिता सखा प्रिय भ्राता। गुरुते अधिक न कोउ जगजाता॥
पूर्वाचार्य्य कहे सब वाणी। रामानुज करिहैं कल्याणी॥
सो प्रगट्यो रामानुज आई। दिय वैकुंठ सोपान लगाई॥
रंगनगर महँ तहँ इक काला। धनुषदास कह बुद्धि विशाला॥
दोहा–रामानुज आचार्यवर,देहु मुक्ति हमकाहि॥
शरणागत हम रावरे, तुमहिं छोड़ि कहँ जांहि॥२०॥
रामानुज कह सुनु धनुदासा। मुक्तिलहन में संशय नासा॥
जो हमको हरि परगति देहैं। तौ मम शिष्य सकल गति पैहैं॥
जिमि लंकेश अनुज द्रुत धाई। परचो शरण महँ पद रघुराई॥
शरण विभीषण एकहि भये। राक्षस चारि संग तरिगये॥
ऐसेहि जे संतन पद सेवें। तिनको हरि हठि परगति देवें॥

श्रीसंप्रदा माहिं जे ऐहैं। अघी अनेक परमगति पैहैं॥
सुनि वाणी सब संत समाजा। माने सकल भये कृत काजा॥
नहिं गति पद विराग विज्ञाना। गुरु सेवन दायक निर्वाना॥
यहि विधि वितरत मनुजन ज्ञाना। पावन करत अपावन नाना॥
साठि वर्ष यतिराज हुलासा। कीन्ह्यो रंगनगर महँ वासा॥
साठि वर्ष लौं तिमि यतिराई। भूतपूरिमहँ वसे सुहाई॥
धरणी उदै अस्त पर्यंता। यतिपति कीरति भई वसंता॥

दोहा—एक समय यतिराज प्रभु, मन महँ किये विचार॥
शत अरु विंशत वरष हम, रहत भये संसार॥२१॥

अब विकुंठ कहँ करैं पयाना। उचित न आयु मुलंघि प्रमाना॥
रंगनाथ कह स्वप्ने आई। अबै रहो कछु दिन यतिराई॥
पुनि२ विनय कियो यतिराजा। अब न रुचत मोहिं जग कर काजा।
एवमस्तु तब हरि कहि दीन्ह्यो। तब यतिराज विनय अस कीन्ह्यो॥
मम संप्रदा माहिं जे आवैं। ते जन पापिष्ठ परगति पावैं॥
एवमस्तु कह रंगअधीशा। किय बहुवार प्रणाम यतीशा॥
बोलि शिष्य गण बैठि निवेशा। कियो बहत्तर विधि उपदेशा॥
तीनि दिवस लगि यतिगण नाथा। दै उपदेशहि कियो सनाथा॥
शिष्य सकल सुनि यतिपति वानी। लीन्ह्यो निज सरवस धन मानी
सो यह सर्व संत सिद्धांता। सार सकल शास्त्रन वेदांता॥
याते अधिक धर्म कछु नाहीं। इतनो करतब संतन काहीं॥
इतनोई कीन्हे संसारा। मिलत मनुज वसुदेव कुमारा॥

दोहा—सो मैं भाषाबद्ध यह, करतो सकल बखान॥
श्रोता श्रद्धा सहित तुम, सुनहु सबै दे कान॥ १॥
प्रथम अहै उपदेश यह, जिमि निज गुरु सत्कार॥
तिमि सब संतनको करै, जन उपकार अपार॥ १॥

दूजो जिमि सब संतजन, कीन्ह्यो धर्म प्रकाश ॥
तामें इंद्रिय वश रहित, करै विशेष विश्वास ॥ २ ॥
तीजो हरि जस गुनि रहित, पढ़ै न शास्त्र पुरान ॥
हरि यश लीला ग्रंथ जे, पढ़ै सुनै मतिवान ॥ ३ ॥
चौथो लहि गुरुपद कृपा, भयो जो भक्ति विज्ञान ॥
विषय विवश पुनि होय नाहिं, करै सयुग हरि ध्यान४
पांचौ विषय समान सब, गुनै सदा हरिदास ॥
स्वर्गहु ते संसार लौं, विषय वासना नास ॥ ५ ॥
छठौं यथा हरि नामके, कथन करै जन प्रीति ।
तैसहि संतन नाम में, करै प्रीति परतीति ॥ ६ ॥
सातौं भगवत मिलनमें, कारण संत सनेह ।
तातें संत कहैं यथा, करै सो तजि संदेह ॥ ७ ॥
आठौं हरि हरि जनन को, सेवन करै न त्याग ।
भगवत भागवतहुनकी, सेवा तजब अभाग ॥८॥
नवयों संतन सेवको, सब साधन फल जान ।
संत सेव साधन गनब, यह पूरो अज्ञान ॥ ९ ॥
दशयों कहि तुम संत को, कबहुँ बोलावै नाहिं ।
रौरे आप कहै सदा, सहजहु कठिनहु माहिं ॥ १० ॥
ग्यारहयों सब संत को, हाथ जोरि बतराय ।
पहिले करै प्रणाम सब, संतन शीश नवाय ॥ ११ ॥
बरहौं प्रभु अरु संत ढिग, बैठे जब जब जाय ।
दूरिहु औ तिन सन्मुखौ, नाहिं पावँ पसराय ॥१२॥
तेरहौं हरिगुरु संतके, ओर पायँ पसराय ।
करै शयन कबहूं नहीं, यदपि कठिन परिजाय ॥१३॥
चतुर्दशौं उठि प्रात नित, सुमिरै हरि गुरु नाम ।

श्रीगुरु परम्परा भनै, यही अवशि जन काम ॥१४॥
पंद्रहयों हरिजनन को, दुखित देखि मतिधाम ।
मूल मंत्र मुख में कहै, करै हरिहि परणाम ॥ १५ ॥
सोरहौं श्रीगुरु संत जन, हरि गाथा हरिनाम ।
संत कथा जबलौं कहै, तजै न तबलौं ठाम ॥
जो मधि में तहँ ते उठै, करै न पूजन तासु ।
महापाप तौ शिर परै, जाकर कबहुँ न नासु ॥ १६ ॥
सत्रहयों श्रीसंत गुरु, आवत आगू लेय ।
जात समय कछु दूरिलौं, पहुँचावै पद सेय ॥ १७ ॥
अष्टादश सब संतको, साधारण जन केर ।
करै न कबहुँ समानता, किहे लहै अघ टेर ॥ १८ ॥
उनइसयों गुरु श्रेष्ठ के, लैलै ताकर नाम ।
घर घर माँगै भीख जो, ताहि पाप वसुयाम॥ १९ ॥
वीसों हरि मंदिर निरखि, दूरिहिं ते मतिवान ।
हाथ जोरि परणाम करि, मानै मोद महान ॥२०॥
यकैसवों सुर और को, सुनत महातम नाम ।
अन्य देव गृह ऊंच लखि, करै न विस्मय काम॥२१॥
बाइसयों संतन वदन, सुनि कीर्तन हरि साधु ।
निंदा करै न सुख लहै, तेहि अघ होत अगाधु॥२२॥
तेइसों छाया साधुकी, नाकै नहिं मतिधीर ।
चौविसयों छाया स्वतन, परै न साधु शरीर ॥२३॥
पचीसयों जब पातकिन, लखै आपने नयन ।
तब संतन के चरण को, करै परस भरि चैन ॥२४॥
छबीसयों अपने को, जो संत करै परणाम ।
लघु गुनि ताहि अनादरै, तौ पापी जगआम ॥२५॥

सत्ताइसयों संत को, दोष न करै प्रकाश।
गुणको करे प्रकाश नित, दोष कहे हठि नाश ॥२७॥
अट्ठाइसयों संत को, चरणोदक चितलाय।
हरिचरणोदकहूं पिये, दुर्जन दीठि दुराय ॥२८॥
उन्तिसयों हरितत्त्व हत, हरिको मंत्र विहीन।
तिनको चरणामृत कबहुँ, पान करै न प्रवीन॥२९॥
तीसौं हरि अनुराग युत, अरु संयुत आचार।
तासु चरण जल नित पिये, सो न परै संसार ॥३०॥
यकतिसयों भगवत्जनन, गुनै न निजहि समान।
औरहु ते समता कबहुँ, करै नहीं मतिवान ॥३१॥
बत्तिसयों जो पातकी, कार्य विवश छुइजाय।
तौ संतन पद जल पिये, पहिरै वसन नहाय ॥३२॥
तेंतिसयों हरिदास वर, भक्ति ज्ञान युत जेइ।
तिन भागवतन भक्ति जन, भगवत समगनि लेइ३३
चौंतिसयों पापी सदन, मिलै जो हरि पद नीर।
पान करै सो कबहुँ नाहिं, शीश धरै मतिधीर ॥३४॥
पैंतिसयों जो शूद्र कर, संस्थापित हरि रूप।
ताहि सुमति पूजै नहीं, देय द्रव्य अनुरूप ॥ ३५ ॥
छत्तिसयों तीरथहुमें, पापिन देखत माहिं।
हरि प्रसादको पाइबो, उचित संतको नाहिं ॥ ३६॥
सैंतिसयों जो संत कोउ, देय कृष्ण परसाद।
एकादश आदिक व्रतन, तजै न धारि प्रमाद॥३७॥
अरतिसयों हरि संत को, मिलै जो कहूँ प्रसाद।
ताहि जूठ मानै नहीं, यही धर्म मर्य्याद ॥ ३८ ॥
उन्तालिसयों संतके, निकट जो बैठे जाय।

तौ अपने गुण गणनको, कबहुँ न वदन बताय३९॥
चालिसयों जब जायकै, बैठै संत समाज ॥
करै कोप कोहु पर नहीं,यदपि बिगारै काज ॥ ४० ॥
यकतालिसयों जाइ जब,बैठै संत समीप ॥
कहै साधुहीके गुणन,नहिं गुण कहै महीप ॥ ४१ ॥
बयालिसों प्रभुको करै,पूजन जन सब काल ॥
द्वै घटिका लगि गुरुन के,वरणै गुणन विशाल॥४२॥
तेंतालिस द्वै याम लगि,संत मंडली जोरि ॥
हरि गुरु संतन के गुणन, वरणै प्रीति न थोरि ॥ ४३॥
चौंआलिसयों देह को,जो अभिमानी होय ॥
हरि विमुखी तेहि संग में, कबहुँ न बैठै कोय ॥ ४४॥
पैंतालिसयों ठगन हित,धरै जो वैष्णव रूप ॥
तिनको संग करै नहीं,होय यदपि ते भूप ॥ ४५ ॥
छयालियों जे दुष्ट जन, पर दूषण रत होइ ॥
संभाषण तिन संग में, करै सुमति नहिं कोइ ॥४६ ॥
सैंतालिसयों जेकुमति,भूत प्रेत रत होय ॥
तिनको संग करै नहीं,जानि हानि गति दोय ॥ ४७॥
अरतालिसयों हरि रसिक, साधु भागवत संग ॥
संभाषण नितहीं करै, तजिकै कपट कुसंग ॥ ४८ ॥
उञ्चासो जे जन तजैं, रामकृष्णविश्वास ॥
तिनको संग करै नहीं,संग किहेतेहास ॥ ४९ ॥
पचासयों जे रसिक जन,कीन्हे हरि दृढ़ नेम ॥
तिनके संग बसै सदा, ते दायक हठिक्षेम ॥ ५० ॥
इक्यावनो विकान जे, ललना लोभ बजार ॥
तिनके नेह न हैनहीं, रामदास युग चार ॥ ५१ ॥

बामन जो कहुँ साधु ते, लहै अनादर भूरि ॥
तौ हठि साधुन चरणकी,धरै शीश में धूरि ॥ ५२ ॥
तिरपनयों जो जगत्में,मानै महा गलानि ॥
तबहि परमपद वासना,उठै मनहिं सुखदानि ॥५३॥
चौवनयों सब साधु ते,हित राखै अभिलाषि ॥
संतनसों अपनो चहै,हित नित चित वित माषि ॥५४॥
पचपनयों जेहि कर्मजे, यद्पि महाफल होइ ॥
पै जो धर्म विहीन है, तौ नहिं सेवै कोइ ॥ ५५ ॥
छप्पनयों जल फूल फल,भोजन पट अँगराग ॥
विन हरि अरपे कबहुँ नहिं, ग्रहण करै बड़भाग ॥ ५६॥
सत्तावनयों संत हरि, हित लागै जोनाहिं ॥
मिलै जो विन माँगेहु तदपि, चित न देय तेहि माहिं५७
अट्ठावनों जो शास्त्र ते, वर्जित हैं अन्नादि ॥
करै न भक्षण कबहुँ तेहि,कहै वयन नहिं वादि॥५८॥
उन्सठयों जो आप को, वस्तु परमप्रिय होय ॥
सो अरपै भगवान को, विहित शास्त्रगणजोय ॥ ५९॥
साठौं औरहु शास्त्र में, विहित जो वस्तु पुनीत ॥
सोउ अरपै प्रभु को सुमति, राखि प्रीतिकी रीत ६०॥
इकसठयों प्रभु अर्पितै, पट भूषण अन्नाद ॥
भोगबुद्धि तेहि नहिं करै, मानै ताहि प्रसाद ॥ ६१ ॥
बासठयों जे शास्त्र में, लिखे कर्म बहु भांति ॥
ते हरि सेवन मानिकै, करै सुमति दिन राति ॥६२॥
तिरसठयों जो भागवत, हरिमंत्री हरिदास ॥
तासु अवशि अपकार को, गुनै आपनो नास ॥ ६३ ॥
चौसठयों जब साधुजन, निज पर होय प्रसन्न ॥

तव अपनो संसार ते, गुनै उद्धार प्रपन्न ॥ ६४ ॥
पैंसठयों भगवान की, मूरति गुनै पषान ॥
ताको सति करि जानिये, यह पाषाण महान ॥६५॥
छाछठयों गुरु देव को, गुनै जो मनुज समान ॥
महापातकी ताहि को, भाषत वेद पुरान ॥ ६६ ॥
सरसठयों जो संत में, राखै जाति विभेद ॥
सो पावतहै नरक में, कोटि वर्ष लों खेद ॥ ६७ ॥
अरसठयों कलिमल हरण, हरिचरणामृत काहिं ॥
साधुचरण जल जल गुनै, तेहिंउद्धारहै नाहिं ॥ ६८॥
उनहत्तरयों कृष्णके, अहैं जे नाम अनंत ॥
और शब्द सम तेहि गुनै, सो न नरक निकसंत॥६९॥
सत्तरयों हरि को गुनै, औरन देव समान ॥
सो पापी यमराजपुर, पावत दंड महान ॥ ७० ॥
इकहत्तरयों कृष्णके, पूजन ते मतिवान ॥
अधिक संत पूजन गुनै, ऐसो वेद प्रमान ॥ ७१ ॥
बहत्तरौं श्रोता सुनो, उभय भांति सब कोय ॥
कृष्ण चरण जल ते अधिक, साधु चरण जल होय॥७२॥
यदुपति के अपराध ते, अधिक साधु अपचार ॥
हरि अपराध मिटै कबहुँ, मिटै न सो युग चार ॥७३॥

धर्म बहत्तर यह परधाना । दायक सकल अवाशिनिर्वाना ॥
येइ बहत्तर धर्म जोकरई । तासु नाम सज्जन जग धरई ॥
कीन्हें विना बहत्तर धर्मा । वृथा होत सिगरे सत्कर्मा ॥
यह सर्वस संतन को जानो । मुख्यसंतको धर्महि मानो ॥
और करै वा करै न कोई । पै जो निरत बहत्तरहोई ॥
सो पूरो जग संत कहावै । जियत मोद अंतहि गति पावै ॥

गे जे कही बहत्तर रीती। संत होहु तो करहु प्रतीती ॥
संतरसिक सुशील मतिवंता। जे अनोख प्यारे भगवंता ॥
ते सब करैं बहत्तर रीती। इतने अहैं संतकी रीती ॥
इतनोई कर्त्तव्य संतको। मिलन होत रुक्मिणीकंतको॥
वेद पुराण शास्त्र कर सारा। रामानुज यह कियो उचारा ॥
सरल रीति भाषा सो गाई। याके करत न कछु कठिनाई॥

दोहा—तन मन धन जो संतको, मानि करै सत्कार।
ताहि आपते मिलतहैं, श्रीवसुदेवकुमार ॥ २२ ॥

यहि विधि जब किय गुरु उपदेशा। तब जेशिष्य रहे तेहिंदेशा॥
ते तब अचरज गुने प्रवीना। कस गुरु उपदेश्यो जन पीना॥
पूंछे सकल शिष्य कर जोरी। कास्वामी मनकी गति तोरी॥
तब यतिराज कह्यो मुसकाई। मोहिं बखस्यो विकुंठ यदुराई ॥
बीते आजसहित दिन चारी। मैं जैहौं विकुंठ पगुधारी ॥
सुनत शिष्य सब भये विहाला। मरण ठीक दीन्हो तेहिंकाला॥
तब बोले रामानुज वानी। तजहु शिष्य यह वृथा गलानी॥
पूर्वाचार्य गये हरि धामा। पंचभूत तन को यह कामा ॥
शिष्य कहे नहिं सहब वियोगा। धीरज होय सो करहु नियोगा॥
तब रामानुज अपने रूपा। बनवायो अनुरूप अनूपा ॥
तेहि मिलि शक्ति धर्‌यो तेहि माहीं।थापित कियो रंगपुर काहीं॥
दूसरि निज मूरति बनवाई। भूतपूरी महँ दिय पधराई ॥

दोहा—तीसर अपनो रूप रचि, व्यंकट शैल धराय।
कह्यो सकल शिष्यन करहु, यामें प्रीति महाय॥२३॥

अबलों मूरति तीनहु थाना। है प्रत्यक्ष प्रभाव महाना ॥
पुनि सब शिष्य विनय अस कीन्हे। केहि विधि रहबईशचितदीन्हे
यतिपति कह जेहि विधि हरि राखै।तेहिविधिरह्यो मुक्तिअभिलाखै

कियो उपाय न परगति हेतू। तनु अधीन यह कृपानिकेतू॥
पूर्वाचारज रचित प्रबंधा। पढ़ेहु पढ़ायहु करि सम्बधा॥
मंत्रराज नित जपेहु सुजाना। याते गति उपाय नहिं आना॥
और सुनहु इक परम उपाई। जाके किये सकल बनिजाई॥
रसिक विज्ञ वैष्णव शुभ शीला।अहमित रहित निरत हरिलीला।
तिनको शासन शिरपर धरिये। तिनसों हरिसों भेद न करिये॥
यह जानहु तुम परम उपाई। यह श्लोक दियो हम गाई॥
श्लोक—श्रीभाष्य द्रविडागमप्रवचनं श्रीशस्थलेष्वन्वहं॥
कैङ्कर्यं यदुशैलनित्यवसतिःसार्थद्वयोच्चारणम्॥
यद्वाभागववताभिमानमननं श्रेयःसतामित्यलं।
शिष्यान्प्राहयतीश्वरःपरमगाद्विष्णोःपदंशाश्वतम्॥
विषय भोग द्वै भांति समूला। एक विरोधी इक अनुकूला॥
तजै समूल विरोधिन काहीं। प्रीति करे अनुकूलनमाहीं॥
दोहा—हरि अनुरागी लोभ हत, जेहैं संत सुजान।
तिनको संग किये सदा, लहत अवशि निर्वान॥२४॥
यहि विधि शिष्यन करि उपदेशा।बोलि पराशर को तेहि देशा
कर गहि रंगनाथ ढिग गयऊ। हाथ जोरि बोलत अस भयऊ॥
देहु प्रसाद पराशर काहीं। पूजक सकल तेहि क्षणमाहीं॥
द्रुत प्रसाद पादुका लै आये। सुखित पराशर शीश धराये॥
रंगनाथ आगे अह्लादी। दियो पराशरको निज गादी॥
सौंप्यो सकल वैष्णवन काहीं। राख्यो प्रीति यथा मोहिं माहीं
पकरि पराशर कर घर आये। शिष्य गणन यह वचनसुनाये॥
मम वियोग वश तजहु न देहू। मोरि शपथ राखेउ धरि नेहू॥
जब वैकुंठ भवन दिन आयो। तब सब शिष्यनबहुरिबोलायो॥
कह्यो आजु भोजन करि लेहू। सुचित होहु तजि मन संदेहू॥

रंगनाथ पूजकन हँकारी। तिनको सबसंदेह निवारी ॥
पुनि आंगनमहँविरचिकुशासन। धरिनिजशिरगोविंदपद्मासन ॥
दोहा—आंध्रपूर्ण के अंक में,धरचो चरण यतिराज।
वेद पढ़न लागे सबै, चहुँ दिशि साधु समाज ॥२५॥
बाजा बाजन लगे सुहावन। जय हरिजय हरि दिशिध्वनिछावन॥
महापूर्ण पादुक धरि आगे। ध्यावत यामुन पद अनुरागे॥
माघ शुक्ल दशमी शनिवारा। मध्य दिवस यतिराजउदारा ॥
ब्रह्म रंध्र है यतिगण स्वामी। गे विकुंठ जहँ अंतर्यामी ॥
लिखे चित्र सम जन सब ठाढ़े। सबके उर दुख वारिधि बाढ़े॥
दाशरथी कुरकेश्वर गोविंद। आन्ध्रपूर्ण ये चारि शास्त्रविद॥
अंतिम क्रिया करी गुरु केरी। कुरकेश्वर सब भांति निवेरी ॥
दुसह विरह गोविंद कछु कालै। हरि मत थापि गयेहरि आलै॥
भये पराशर महा प्रभाऊ। हरि पद सेवक जस यतिराऊ॥
गीता भाष्य वेदार्थहु संग्रह। अरु वेदान्त प्रदीप ग्रंथ कहँ॥
अरु श्रीभाष्यो वेदान्तहुसारा। गद्य त्रय प्रपत्ति परकारा ॥
ये षट ग्रंथ पराशर स्वामी। प्रचरित कियो जगत शुभनामी॥
दोहा—तहँ पंडित कोउ आयकै, कह्यो पराशर काहिं।
वेदान्ती अस नाम यह, कह बुधवर जग माहिं॥२६॥
है मायावादी वर सोई। जीति सकै विवाद नहिं कोई ॥
कह्यो पराशर तब तेहिं वानी। तेंहि देखन मम मतिहुलसानी॥
गयो विप्र सो तेहि बुध नेरे। कह्यो पराशर जो मुख टेरे ॥
सो कहल्याउँ पराशर बोली। जीतिलेहु गो निज मतखोली॥
इतै पराशर रंगनाथ सों। विनय कियो युग जोरिहाथसों
मायावादी जीतन जाऊं। जो जै कर तुव शासन पाऊं॥
रंगनाथ तब करि निज दाया। चमरछत्र तेहिं संग पठाया ॥

जाय पराशर विगत विभीती। मायावादी को लिय जीती॥
रंगनगर विजयी फिरि आये। भुवमंडल अखंड यश छाये॥
रंगनगर वेदान्तिहु आयो। माधवदास नाश सो पायो॥
शिष्य पराशर को ह्वै गयऊ। अपनी कुमति छोड़ि सोदयऊ॥
रंगनगर महँ सो चिरकाला। बसत भयो विज्ञान विशाला॥

दोहा—चलन चह्यो बैकुंठ को, रच्यो पंच वर ग्रंथ।
माधवदासैबोलि ढिग, उपदेश्यो सतपंथ॥ २७॥

हमहुँ चहत विकुंठ कहँ जाना। तुम विचरो विहाय अभिमाना
सहसगीति को अर्थहि शाषा। रचहु विमल तुम द्राविड़भाषा॥
शिष्य पराशर शिर धरि सोई। माधवदास रह्यो मुद मोई॥
माधवदास कह्यो कर जोरी। भक्त चरित सुनिबो मति मोरी॥
तबहिं पराशर वर्णन लागे। श्रोता सकल सुनन अनुरागे॥
एक समय गिरिवर कैलासा। भयो गौरिहर व्याह विलासा॥
तहाँ जुरे सब सुर मुनि नाना। तहँ कुम्भजमुनिकियोपयाना॥
तहँ अगस्त्य सों कह असुरारी। बसहु दिशा दक्षिण तपधारी॥
कुम्भज सुरगण शासन मानी। बस्यो दिशा दक्षिण तप ठानी॥
बीते वर्ष सहसदश जबहीं। ह्वै प्रसन्न प्रगटे हरि तबहीं॥
विविधभांतिमुनिस्तुतिकीन्हों। वरंब्रूहि श्रीपति कहिदीन्ह्यो॥
तब कह घटसंभव यह देशा। होय पुनीत तुम्हार निवेशा॥

दोहा—हरि कह सिगरे देशते, मोहिं प्रिय द्राविड देश।
मैं विचरन करिहों इतै, धरि अवतार हमेश॥ २८॥

जो कोउ द्रविड प्रबंधहि गाई। सो जन अवशि मुक्तह्वै जाई॥
शठकोपादिक महाभागवत। ह्वैहै जगत मोर थापक मत॥
उद्धारण पापी जन नाना। अस कहि भे हरि अंतर्ध्याना॥
रंग वेंकटादिक क्षेत्रन महँ।प्रगट कृष्ण सत कियो वचन कहँ॥

हरि पार्षद विकुंठ पुर वासी। शठकोपादिक भे सुख रासी॥
भारतवर्षहि नाशि पखंडा। थाप्यो वैष्णव मतहि अखंडा॥
हरिको प्रिय अति द्राविड़ भाखा। संवत वेद शास्त्र श्रुति शाखा॥
द्राविड़ भाषा संतन काहीं। उचित अवशि पढ़िवो जग माहीं॥
सहसगीत तामें परिधाना। जो शठकोप कियो निरमाना॥
माधवदास सुन्यो गुरु वैना। तिहि विधि कियो मानि अति चैना
पुनि बोल्यो तहँ माधवदासा। करहु सूरि वृत्तांत प्रकासा॥
तबहिं पराशर अति सुखछाये। सबआचार्य प्रबंध सुनाये॥

दोहा—ते सिगरे इति हासको, संक्षेपहु विस्तार॥
मैं पूरव वर्णन कर्‌यो, निजमतिके अनुसार॥ २९॥

जग भागवत सरिस कोउ नाहीं। यह सिद्धांत पुराणन माहीं॥
नर सो नारायण अस गायो। सो मैं तुमसों देत सुनायो॥
कमला शिव विरंचि अरु शेषा। इतने सब ते साधु विशेषा॥
मम पूजन ते संतन पूजा। है विशेष सिद्धांत न दूजा॥
केवल करत संत सेवकाई। मुक्ति मिलति नाहिं आन उपाई॥
नरनारायण सों अस भाषा। संत प्रभाव सुनत अभिलाषा॥
कहन लगे नारायण गाथा। कहौं सो नाय साधु पद माथा॥
पूरुब एक भयो द्विज पापी। चोर और चंडाल सुरापी॥
गो ब्राह्मण गण हन्यो हज़ारन। लागत पंथ पथिक धन हारन॥
राखे रह्यो सो एक निषादी। कबहुँ न रामकृष्ण मुखवादी॥
एक समय कौनेहु मग माहीं। लीन्ह्यो लूटि साधु जन काहीं॥
दुखी साधु सब वचन उचारे। कस अनित्यन शरीर निहारे॥

दोहा—यह अनित्य तनु हेतु तुम, करहु जगत अनघोर॥
कोटिन वर्षन नरक ते, नाहिं उधार है तोर॥ ३०॥

तब पापी बोल्यो अस वाणी। चोरी तजे मरे मम प्राणी॥

काह खवाऊं मैं सुत नारी । पूजे साधु कौन फल भारी ॥
तब पापी सों कह सब साधू । यह सागर संसार अगाधू ॥
मरे जात कोउ सँग महँ नाहीं । है कुटुंब संग जगमाहीं ॥
जाई धर्महि संग तिहारे । तिय सुत तजे चिता लगि जारे॥
यहि विधि संत कही जब बानी। तब कछु मन सोच्यो अभिमानी
साधु संग परभाव महाना । उपज्यो पापी हिय महँ ज्ञाना ॥
तब बोल्यो दोऊ कर जोरी । क्षमहु संत यह मम बड़ि खोरी॥
देहु उधार उपाय बताई । त्राहित्राहि मोहिं राम दोहाई ॥
तबै संत बोले मुसकाई । सेवत साधु पाप जरि जाई ॥
महाभागवत मूर्ति बनाई । पूजहु तिन्हैं सदा चित लाई ॥
औरहु संत करहु सेवकाई । तरिजैहौ है राम दोहाई ॥

दोहा–अस कहि साधु चले गये, सो शठमानि गलानि ॥
रामानुज आदिकन की, रचि मूरति विधि ठानि॥ ३१॥

पूजन लग्यो सप्रीति सो पापी । संतन नाम भयो मुख जापी ॥
संतन सेवत अस चंडालै । बीत्यो जियत जगत कछु कालै॥
आयो अंतकाल जबताको । धाये यम भट धारि गदा को ॥
कोऊ लिये हाथ महँ फांसी । लियो बाँधि तनु गोभत गांसी॥
सो शठ कीन्ही संत दोहाई । तब हरि पार्षद आये धाई ॥
यमदूतन कहँ आँखि दिखाई । सो पापी कहँ लियो छोड़ाई ॥
सूर्य्य समानं विमान चढ़ाई । दियो ताहि हरिपुर पहुँचाई ॥
तब यमकिंकर रोवत जाई । यमको दिय वृत्तान्त सुनाई ॥
कह्यो बहोरि पाप अस कीन्हे । मिली मुक्ति प्राणिन दुख दीन्हे॥
तौ पुनि मनुज धर्म किमि करिहैं । हठि अधर्म पंथा पग धरिहैं॥
याको दीजै हेतु बताई । तब संदेह दूरि ह्वै जाई ॥
तब यमराज संत शिरनाई । कह्यो साधु महिमा मुख गाई॥

दोहा–महाभागवत सर्वदा, जे पूजैं करि नेह।
ते पापी सब पाप हत, जात अवशि हरि गेह ॥३२॥
जे जग महँ हैं संत सनेही। मोते भीति लहैं नहिं देही॥
जे नित सेवत संतन चरना। ते विकुंठवासी सुख भरना॥
साधु चरण सेवक जग माहीं। कबहुँ समीप जाइयो नाहीं॥
संत उपासक जे बड़भागी। तिन पर जोर तुम्हार न लागी॥
अस दूतन यमराज बुझाये। दूत गये संतन शिरनाये॥
तब ते दूत करी यह रीती। देखि संत भागैं भरि भीती॥
अपने पूजन ते गिरिधारी। साधुन पूजा जानै प्यारी॥
जो साधुन गण जन सो मानै। कोटि वर्ष लगि नरक महानै॥
संतन देय सुवर्ण जो माशा। मेरु तुल्य तेहि पुण्य प्रकाशा॥
जो साधुन पद रज शिरधारी। नहिं मानै गति भई हमारी॥
सो प्रत्यक्ष पशु शृंग विहीना। नहिं फल सकल तासु कर कीना॥
तासों विमुख रहत रघुराई। जीवत कुयश मरे नरकाई॥
दोहा–जे पथ श्रमित सुसंत कहँ, श्रमहि निवारत सेइ।
ते सुकृती कहँ हरि अवशि, भव विनाश करि देइ३३॥
जे संतन पूजत अवशि, तिनहिं निवारत जोय।
स्वर्ग गवन तिनके करत, रोकत सुर सब कोय३४॥
जो जन निंदा साधुकी, करत एकहू बार।
नरक भोगि सो जन्म बहु, मूक होत संसार ॥३५॥
जो हरि भक्त विलोकि कै, उठै न गर्वहि धारि।
होतो अवशि पहार को, सो पषाण युग चारि॥३६॥
जो सप्रीति पूजै सदा, संत चरण विधि युक्त।
जियत भोग भोगै विपुल, अंत होत हठि मुक्त॥३७॥
पग मींजै पंखा करै, बीरी देय खवाय।

साधुनकी सेवा सदा, निज मानै यदुराय ॥ ३८ ॥
संतन अर्चन छोड़िकै, जो पूजै हरि कोइ।
पूजा तासु मुकुंद प्रभु, ग्रहण करैं नहिं सोइ ॥ ३९ ॥
पढ़ै विप्र षट्शास्त्र जो, कृष्ण भक्त नहिं होइ।
कृष्ण भक्ति जो जन करै, पंडित ते वर सोइ ॥४०॥
शूद्र श्वपचहू जाति को, राम रसिक जो होय।
भक्ति विगत वैदिकहु ते, अधिक विप्र ते सोय॥४१॥
भक्तिहीन जे विप्रजन, करहिं जे कर्म विधान।
ते सब निष्फल कर्म हैं, भक्ति सहित फल दान४२॥
कृष्ण प्रतिष्ठा ते अधिक, संत प्रतिष्ठा जान।
हरिते अधिक विचारिये, हरिको दास महान॥४३॥
तुलसी माला चिह्न ते, चिह्नित जो जन होइ।
ते भागवत सुजगत में, वेद पढ़े नहिं कोइ॥ ४४॥
माला चंदन चक्र धर, संतन को जग माहिं।
मानै नारायण सरिस, भेद कछू है नाहिं ॥ ४५ ॥
आये साधुन भौन में, जो शठ पूजै नाहिं।
सात जन्मके पुण्य तेहिं, क्षीण होत क्षण माहिं॥४६॥
जो न खवावै साधुको, करिकै अति अनुराग।
सो जस भोजन करत हरि, यथा न मख को भाग४७
जो वैष्णवको देखिकै, करै नहीं परणाम।
जो प्रदक्षिणा देत नहिं, तापर कोपत राम ॥ ४८ ॥

जो कोइ तुलसी वृक्ष लगावै। सविधि सो हरिपूजन फल पावै॥
जो माधव मंदिर बनवावै। करै प्रतिष्ठा प्रभु पधरावै॥
सो हरि सँग विकुंठ पुर माहीं। करत विलाश काल तेहि जाहीं॥
यथा गरुड़ अहिपति हरि केरे। ताहि करत हरि तथा निवेरे॥

जो तुलसी दल शालिग्रामै। पूजित तापर तोषित रामै॥
बिन तुलसी दल पूजन हीना। करै कोटि उपचार प्रवीना॥
गुरुकी करै सदा सेवकाई। गुरु रूठे रूठत यदुराई॥
गुरु प्रसन्न प्रसन्न मुरारी। हरि गुरुमें नहिं भेद विचारी॥
लखि त्रिदंड वैष्णवसंन्यासी। पूजन करैं मानि मुद रासी॥
तेहि पूजत ज्ञानहु विज्ञाना। पावत जन कह वेद पुराना॥
करै न साधुन सों अभिमाना। होय नमित यदि विभव महाना
साधु चरण रज शिरमहँ धारै। तेहि जन पुनि न होत संसारै॥

दोहा—यह साधुन महिमा कह्यो, साधुते अधिक नकोइ॥
जो हरिको मिलिबो चहै, सेवै संतन सोइ॥ ४९॥

ग्रंथ प्रपन्नामृत यह गायो। पूर्वाचार्य प्रबंध सुनायो॥
तामें अहै विपुल विस्तारा। मैं कीन्ह्यो संक्षेप उचारा॥
पै नहिं छूटे कोउ इतिहासा। कियो यथामति सकल प्रकासा॥
ग्रंथ रामरसिकावलि माहीं। सिगरी संत कथा दरशाहीं॥
अहै न कथा प्रपन्नामृत की। है रामानुजके शुभ मतकी॥
अति विचित्र है साधुन गाथा। कहे सुने जन होत सनाथा॥
जाके है नित संत अधारा। सो यदुपति कहँ प्राण पियारा॥
ताते मैंहूं कियो विचारा। संतन कर है मोर उधारा॥
सुनै जो सुमति प्रपन्नामृत को। सानुराग वर्णै शुभ मतिको॥
ते सज्जन यह मोरि ढिठाई। क्षमा करैं विगरी बनिआई॥
संत चरित कहँ अखिल अपारा। कह मैं कुमति लचार अचारा॥
पै जो कछु मोसों बनिआई। सो यह करी संत सेवकाई॥

दोहा—नहिं विद्या नहिं तप सुकृत, नहिं शुभ मति हरि नेह।
पै साधुन सेवन करत, नाहिं उधार संदेह॥ ५०॥

मैं अपनी का दशा बखानौं। निजते लघु मोहूं कहँ जानौं॥

चंचल चित तिय वित नित राचो। अधरम रत भगवत मतकांचो॥
पूरब पुण्य उदय कछु भयऊ। ताते साधु शरण ह्वै गयऊ॥
यही अधार एक है मोरे। और सुकृत नहिं कछु जग जोरे॥
मोहिं साधु शरणागत जानी। कर उद्धार अधम अति मानी॥
श्रोता तुम सब सुमति सुहाये। सुनन रामरसिकावलि आये॥
तिनहिं मोरि बहु बार प्रणामा। क्षमहु चूक बिगरो जो कामा॥
जो यह बाँचै ग्रंथ सदाहीं। मोर प्रणाम अहै तेहि काहीं॥
विनयमोरि सबसों यहि भाँती। देहु यही वर करि दृढ़ छाती॥
संत चरण उपजै नवनेहू। होय न संतन मह संदेहू॥
मानहि संत मोहिं लघु दासा। याते अधिक मोरि नहिं आसा॥
रचत रामरसिकावलि केरे। विद्या गुरु रामानुज मेरे॥

दोहा–तिनके चरण कृपाविवश, सहजहिमें यह ग्रंथ।
रच्यो प्रपन्नामृत विमल, दायक शुभ सतपंथ॥ ९१॥
जय मुकुंद हरि गुरु चरण, जय जय पितुविश्वनाथ॥
जय गुरु रामानुज विमल, मोको कियो सनाथ॥९२॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजबांधवेशविश्वनाथसिंहात्मजसिद्धि श्रीसामराजमहाराजाधिराजश्रीमहाराजाबहादुरश्रीकृष्णचंद्र कृपापात्राधिकारिश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतौरामरसिकावल्यां कलियुगखंडेपूर्वार्धःसमाप्तः॥

श्रीः ।

भक्तमाला.

अथ कलियुगखंड उत्तरार्ध प्रारम्भः ।

सोरठा—जय रघुकुल वन कंज,विदित दिवाकर दिशि दिपत॥
संत कोक मन रंज,सुयश भोर हत दुख निशा ॥१॥
जय यदुकुल उड़इंदु, सत चकोर चायक चतुर ॥
कीरति जोन्ह अनिंदु,कुमुद दीन मुद दायने ॥ २ ॥
दोहा—जय गणपति जय जय गिरा, जय जय संत समाज ॥
रचित रामरसिकावली,उत्तरार्द्ध रघुराज ॥ ३ ॥
ग्रंथ रामरसिकावली,भे समाप्त त्रैखंड ॥
पुनि विरच्यो कलि खंड को,पूर्वार्द्ध उदंड ॥ ४ ॥
सकल प्रपन्नामृत कथा,तामें वचन न कीन ॥
पूर्वाचार्यनकी कथा,औरहु कथा नवीन ॥ ५ ॥
श्रोता सब मन दै सुनहु, उत्तरार्द्ध कलिखंड ॥
यामें कलि भक्तन कथा,वर्णित अहै अखंड ॥ ६ ॥
श्रीमुकुंद हरि गुरु चरण,रज धरि अपनो माथ ॥
तैसहि सुखित नवाइ शिर, महाराज विश्वनाथ ॥७ ॥
श्रोता सुनहु सुशील सब, श्रद्धा सहित सप्रीति ॥
उत्तरार्द्ध कलिखंड को,सुनत भगत कलि भीति ॥८॥

अथ विष्णुस्वामीकी कथा ॥

दोहा—प्रथम विष्णुस्वामी कथा,श्रोता सुनहु सुजान॥
जाहि सुनत जाने परत,अहै जानकी जान ॥ १ ॥

भये विष्णुस्वामी हरि दासा। जिन जग यश शशि सरिस प्रकासा
जग महँ विचरि २ सब ठोरा।हरि विमुखिन किय हरिकीओरा॥
वेद पुराण शास्त्र सब ज्ञाता। बहु देशन उपदेशन दाता॥
एक समय नीलाचल काहीं। कियो पयान शिष्य सँग माहीं॥
जब जगदीशपुरी महँ गयऊ। अरुण खम्भ ढिग ठाढ़ो भयऊ
फूलडोल उत्सव तहँरहेऊ। निकसत कढ़त मनुज दुख सहेऊ॥
देखि विष्णुस्वामी जन भीरा। मन महँ कियो विचार गँभीरा॥
जो हम शिष्य सहित तहँ जैहैं। तौ सँग के जन अति दुख पैहैं॥
ताते मंदिर पाछे जाई। बैठी कछुक काल चितलाई॥
अस विचारि मंदिरके पाछे। बैठे शिष्य सहित प्रभु आछे॥
गुनि जगदीश दास की आशा। तेही ओर किय द्वार प्रकाशा॥
यात्री लखि पश्चिम को द्वारा। धाये दर्शन हेतु हजारा॥

दोहा—निरखि विष्णुस्वामी तहाँ,मनुजन की अति भीर॥
बैठे दक्षिण द्वार चलि,ध्यावत श्रीयदुवीर॥ २॥

प्रगट्यो तब दक्षिणहूं द्वारा। धाये जन तहँ और हज़ारा॥
कसमस पर्‌यो कढ़त तेहि ओरा। स्वामी गे पुनि उत्तर ओरा॥
उत्तरहू निज जनके काजा। प्रगट्यो प्रभु दराज दरवाजा॥
देखि विष्णुस्वामी प्रभुताई। गुणी अचर्ज मनुज समुदाई॥
गिरे विष्णु स्वामी पदआई। धन्य २ मुख गिरा सुनाई॥
विदित विष्णु स्वामीकरकाजा। अबलों तहां चारि दरवाजा॥
यहि विधि और अनेक चरित्रा। विमल विष्णुस्वामीके चित्रा॥
कहँलौं करों विशेष वषाना। जाहिर है सब भांति जहाना॥
तिनके भये शिष्य बहुतेरे। तिनहुनके परभाव घनेरे॥
निज प्रभाव संप्रदा चलाई। जिनहिं सुमिरि भवनिधि तरि जाई॥
ताते मैं कीन्ह्यों संक्षेपा। लघु गुनि कियो न कछु आक्षेपा॥

यह संप्रदा विष्णु स्वामी की। हठि दायिनि गति खग गामीकी॥
दोहा—और कथा सुनिबे हितैं,श्रोता जो मन देहु ॥
विष्णुस्वामि मत बुधन ते,तौ सादर सुनि लेहु ॥ ३॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अथ श्रीमध्वाचार्यकी कथा ॥

दोहा—मध्वाचारजकी कथा, अब वरणौं चित लाय ॥
जासु नाम यश मध्य मत, रह्यो जगतमहँ छाय ॥१॥
मध्वाचार्य्य महा उपकारी। दीन्ह्यो हरि विमुखीन सुधारी॥
हरि रति सूखे मनुज तड़ागा। घन इव भरन भक्ति जल लागा॥
देशन देशन करत पयाना। थापत निज मत विविध विधाना॥
एक समय गवन्यो पंजावा।विमुखिन सुमुख करन मन लावा॥
मारग महँ इकशिला निहारयो। बैठि ताहि महँ ईश सँभारयो ॥
पाछे परे शिष्य सब तिनके। रहे संग महँ सेवक जिनके ॥
बैठि अकेले शिला मँझारी। ध्यायो हरि नहिं आंखि उघारी॥
तेहि मारग ह्वै सहित समाजा। कढ्यो चक्रवर्ती महराजा ॥
संग तुरंग मतंग अनंता। रथ पैदल दल विविध लसंता ॥
मध्वाचार्य मार्ग मधि बैठे। अचल समाधि महोदधि पैठे ॥
गवों भूपति तिनहिं निहारी। मान्यो महापखंडहि धारी ॥
रह्यो राज सिंधुर असवारा। पीलपाल सों वचन उचारा ॥
दोहा—यह पाखंडी मार्ग मधि, बैठो करि पाखंड ॥
तेहि कचरावत काढ़ि चलो, याको है यह दंड ॥ १ ॥
अस कहि करि करीनकी पांती। तिमि तुरंग पैदलहु जमाती ॥
चल्यो माध्व मतनाथहि ओरा।तब अस कौतुक भो तेहि ठोरा॥
रथ पैदल मातंग तुरंगा। तेहि क्षण भे थम्भित सब अंगा॥

सबके उठत न पाँव उठाये। मनहुँ भूमि महँ अहैं जमाये॥
पीलपाल पीलन कहँ पेलै। अश्वपाल अश्वन कहँ रेलै॥
पैदर कूदि गिरे तेहिं ठामा। रथ चाके चापे वसुधामा॥
यह नैनन नरनाह निहारी। महापुरुष तेहिं लियो विचारी॥
तज्यो तुरत नागहि नरनाथा। गिरचो चरण महँ भूधरि माथा॥
त्राहि त्राहि आरत कह वैना। भयो भूप तेहिं क्षण दुख ऐना॥
मध्वस्वामि तेहि समय दयाला। तापर कीन्ह्यो कृपा विशाला॥
सदल नरेश शिष्य करि लीन्ह्यो। भव भय सकल दूरि करि दीन्ह्यो
ऐसे मध्वाचारज केरे। अहैं चरित्र विचित्र घनेरे॥

दोहा—मध्वाचारजके मती, अबलों भक्त प्रधान॥
अबलों दीसत भेद बहु, जाहिर जगत जहान॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेद्वितीयोध्यायः॥ २॥

अथ श्रीनिंबार्कस्वामीकी कथा॥

दोहा—निंबारक स्वामी चरित, अब वर्णौं चितलाय॥
श्रद्धा युत श्रोता सुनहु, मंगल मोद निकाय॥

निंबादित भेभानु समाना। नाम करन निहार अज्ञाना॥
भगवत धर्म कर्म सबकीन्ह्यो। निजमति दृढ थापित करि दीन्ह्यो
एक समय हरि उत्सव माहीं। किय निवतो द्विज संतन काहीं॥
ताही क्षण दंडी इक आयो। ताहूको नेवतो पठवायो॥
सहसन संतन होति रसोई। अस्ताचलहि रहे रवि गोई॥
तेहि दंडी कर प्रण अस रहई। भानु विगत भोजन नहिं गहई॥
जब भोजन हित ताहि बोलायो। तब सो यह संदेश पठायो॥
यतिन राति भोजन नहिं होई। यह प्रसंग जानै बुध जोई॥
सुनि निंबारक यती सँदेशा। मान्यो मन महँ परम कलेशा॥

साधु नेवति भोजन नहिं देई । घोर दंड पावहिं जन तेई ॥
अति आशंकित भे तेहि काला। सुमिरत भये नंदके लाला ॥
रह्यो एक कंकण कर माहीं । फेंक्यो एक नीमतरु पाहीं ॥
दोहा—तासु प्रकाश दिनेश सम, फैल्यो चारिहुँ ओर ॥
यह चरित्र लखिकै सकल, भयो जनन को भोर ॥१॥
तब भोजन हित संतन काहीं । बोलि पठायो निज घर माहीं ॥
निम्ब वृक्ष महँ भानु निहारी । अतिअचरजसब लियोविचारी॥
पुनि तेहिं दंडी काह बोलायो । जो दिन भोजन नेम सुनायो॥
सो आदित्य निंब महँ देखी । भोजन कियो विनोद विशेषी॥
अहो सत्य तुम हरि अवतारा । यह सिगरे परभाव तुम्हारा ॥
तबते सकल जगत महँ आमा । निंबादित्य परचो असनामा ॥
निंबारकको मत संसारा । भयो प्रचार उदार अपारा ॥
निंबारककी कथा अनेकू । विश्व प्रसिद्ध अहै सविवेकू ॥
मैं ताते संक्षेप बनायो । विस्तर ग्रंथ भीति नहिं गायो॥
निंबारक के मत अवलंबी । सकल कथा जानहिं लघुलंबी॥
श्रोतादिक देवहु जनि खोरी । सुनि गुनि मंद मनीषा मोरी ॥
यदपि कथा वर्णत नहिं तोषा । अति विस्तर तद्यपिकविदोषा॥
दोहा—निंबारक मत अति प्रबल,अबलों विश्वमँझार ।
चंद्र चंद्रिकाके सरिस, फैल्यो अधम उधार ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ श्रुतप्रज्ञकी कथा ॥

दोहा—भक्ति भूमि धारक सरिस, दिग्गज चारि महंत ।
रामानुज गुरुभ्रात जग,मंगल करन लसंत ॥ १ ॥

सनकादिकके सरिसते, परे विरक्तहि जोय ॥
तिनको नाम प्रभाव अब,कहौं सुनहु सब कोय ॥२॥
अब श्रुत प्रज्ञज नाम गज,ऋषभ सरिस परधान ।
तासु कथा वर्णन करूं,श्रोता सुनहु सुजान ॥ ३ ॥
जबते भे श्रुतप्रज्ञ सयाने । नारायण तजि और न जाने॥
रटन लगी रसना हरि नामा । लग्यो न रंग तीय धन धामा ॥
देशन देशन विचरन लागे । सिखवत राम जनन अनुरागे॥
गे श्रुतप्रज्ञ जौनही देशा । तहँके जन भे विगत कलेशा ॥
जातिभेद सब वैष्णव माहीं । राख्यो अपने जिय महँ नाहीं॥
रामा भक्ति सब मूल अचारा । सोई कियो जगत परचारा ॥
एक समय नीलाचल काहीं । जात रहे वैष्णव सँग माहीं ॥
जब कछु दूरिधाम रहि गयऊ । तबइकश्वपचमिलतमगभयऊ॥
लौट्यो सो प्रभु दर्शन कीन्ह्यो । महाप्रसाद वेत कर लीन्ह्यो ॥
श्वपच विलोकत संत समाजा । धायो मानि सकल कृत काजा॥
दंड सरिस श्रुतप्रज्ञ चरणमें । गिरत भयो गहि चरण करनमें॥
आंखिन बही अंबुकी धारा । रह्यो न तासु शरीर सँभारा॥
तेहि श्रुतप्रज्ञ लियो उर लाई । प्रेम विवश तनु सुरति भुलाई॥
दोहा-दंड द्वैक महँ जब श्वपच, कीन्ह्यो सुरत शरीर ।
तब धिक् धिक् मुख वचन कहि,बोलत भयो अधीर॥४॥
जाति श्वपच मैं महा अपावन । विप्र जाति तुमहौ अतिपावन॥
मोसों भयो महा अपराधू । क्षमहिं मनुज करअवगुणसाधू॥
नीच जाति मैं प्रभुपद परस्यों । जाति सुरति मैं प्रथमनदरश्यों॥
तब श्रुतप्रज्ञ वसन निज लैकै । पोंछन लगे तासु अँग ह्वैकै ॥
कियो तासु गुरु सम सत्कारा । जोरि पाणि पुनि वचनउचारा॥
अहो अधिक तुम हमते भाई । आवहु महाप्रसादहि पाई ॥

देहु हमहुँको महाप्रसादा । याते नाहिं अचार मरयादा ॥
सो दिय महाप्रसाद तुरंता । धरचो ताहि मुखमें मतिवंता॥
। कि प्रभात विदा तेहिं काहीं
आप गये जगदीशपुरीको । बाँधो जगपति धर्म धुरीको ॥
होत भई तहँ संत समाजा । तिनमें तिनको नाम दराजा ॥
तहँ निवास कीन्ह्यो कछु काला ।तनुतजि गवन्योलोकविशाला॥

दोहा—संत सनेही जगत में,सोश्रुतप्रज्ञ समान ।
होत भयो अबलों न कोउ,ज़ाहिर सुयश जहान ॥८॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ श्रुतदेवकी कथा ॥

दोहा—अब श्रुतदेव कथा कहौं, श्रोता सुनहु सुजान ।
दिग्गज पुष्कर नाम जो, ताको भयो समान ॥ १ ॥

संत जातिमें भेद विसारा । राम नाम वसु याम उचारा ॥
वृत्ति विराग ज्ञान ते पूरी । कृष्ण भजन ते भयो न दूरी॥
सो श्रुतदेव विदित जग माहीं । संगहि संत समाज सदाहीं ॥
साधुसमाज जोरि जग भावन ।विचरचो पुहुमि करत जन पावन
विचरत २ सो इक काला । एक देश महँ गयो कृपाला ॥
तहँको रह्यो अभक्त नरेशा । तासु प्रभाव अभक्तहु देशा ॥
संत समाज समेत तहाँहीं । गयो श्रुतदेव जबै पुर माहीं ॥
मज्जन हित गे संत अनेका । रह्यो न नगर सरित सर एका॥
रहे कूप वापी बहुतेरे । उपवन बाग वाटिका नेरे ॥
भरन लग्यो जल मज्जन हेतू । तब माली कह सुनहु अचेतू॥
यह जल है हित सींचन बागा । काहू मज्जन हेतु न लागा ॥
माली भरन दियो जल नाहीं । चल्यो संत शोकित मन माहीं॥

दोहा–यहिविधि जहँ जहँ साधुगे, वापी कूप समीप।
तहँ तहँ माली रोंकि दे, शासन भाषि महीप ॥ २ ॥

तहँ श्रुतदेव समीप सिधारी। दुखित संत सब गिरा उचारी॥
है पुर सहित शरण ते खाली। वापी कूप न रोंकत माली ॥
कहँ मज्जन हित जाहिं कृपाला। मज्जन हित प्रभु होत विहाला॥
तब श्रुतदेव कह्यो मुसक्याई। अहै ईश ऐसही रजाई ॥
करहु भजन बिन मज्जन कीन्हे। मिली नीर अनते चलि दीन्हे॥
तब सब सज्जन मज्जन हीना। करन लगे तहँ भजन प्रवीना॥
दंड एक महँ तहँ पुर माहीं। रह्यो कूप वापी जल नाहीं ॥
पर्‍यो नगर महँ हाहाकारा। प्रजा पुकार कियो नृप द्वारा॥
भूप सचिव लै कियो विचारा। तब माली चलि वचन उचारा॥
आयो एक साधु नृप बागा। मज्जन हेतु भरन जल लागा ॥
मैं तेहि भरन दियो जल नाहीं।दुखित गयो फिरि आश्रम काहीं
इक श्रुतदेव नाम हरिदासा। रहत संत सो तिनके पासा ॥

दोहा–नृप मंत्री सावंत सब, कारण सकल विचारि।
परे चरण श्रुतदेवके, त्राहि पुकारि पुकारि ॥ ३ ॥
प्रजा सचिव नृप सुभट सब, भे शरणागत तासु।
शरणागतके होतहीं, मिटी जनन सब त्रासु ॥ ४ ॥
पार्थिव प्रजा समेत सो, पावन ह्वै गो देश।
धन्य धन्य हरि भक्त जग, हरहिं कलेश अशेश॥५॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचमोऽध्यायः ॥५॥

अथ श्रुतिउदधिकी कथा ॥

दोहा–शीलउदधि हरि रति उदधि, उदधि ज्ञान विज्ञान।

वरणों श्रीश्रुति उदधिको, अमी उदधि आख्यान १॥
श्रीश्रुति उदधि नाम जिन केरो। वामन दिशि गज सम तेहि हेरो
भगवत भक्ति भूमि शिरधारचो। दिग्गज सरिस सुयश विस्तारचो
दिय निज सर्व ससंतन हेतू। निशिदिन करहिं भावना नेतू॥
रह्यो इकांत शांत अति दांता। शास्त्र प्रात वोधक वेदांता॥
विदित विनोदित विश्व विहारी। अधम अज्ञान उदोत उज्यारी॥
अस श्रुति उदधि करत संचारा। गंगा मज्जन हेतु सिधारा॥
मारग महँ इक नृपपुर रहेऊ। तेहि उपवन निशि निवसत भयऊ
तेहि निशि चोर राज घर जाई। चोरी कियो वित्त समुदाई॥
चोर भागि तेहिं उपवन आये। खबरि पाय भूपति भट धाये॥
बचत न चोर जानि जिय माहीं। माला पहिरायो तेहि काहीं॥
सो श्रुति उदधि मगन हरिध्याना। माला पहिरावत नहिं जाना॥
चोर भागिगे दूरि अदेखे। भूपति भट श्रुति उदधिहिं देखे॥
दोहा—तिनहिं निरखि मणिमालयुत, जानि भूप भट चोर॥
पकरि बाँधि लै चलत भे, तुरत राजवर ओर॥ २॥
भूपति देखि कोप अति कीन्ह्यो। तेहिं बँधवाय कोठरी दीन्ह्यो॥
तामें महाधूप करि दयऊ। तेहिं हरिध्यानभान नहिंभयऊ
बाँधे बीति गई निशि जबहीं। भूपतिशीश पीर भै तबहीं॥
वैद्य अनेकन औषध दीन्हे। मिटी न पीर यतन बहु कीन्हे॥
तब अनुमान सचिव अस साँधे। बीती निशा संत इक बाँधे॥
यहि कारण अब मिटत न पीरा। तजहु संत नतु नशी शरीरा॥
तब खोल्यो कोठरी किंवारा। बैठे जहँ श्रुतिउदधि उदारा॥
कछु नहिं भान भयो तनु माहीं। को पीरा दीन्ह्यो केहिकाहीं॥
तब राजा मुख त्राहि पुकारी। दियो चरणमहँ मस्तकधारी॥
कह्यो क्षमहु अपराध हमारा। तब श्रुतिउदधिहुचखनउचारा॥

कह्यो कौन कीन्ह्यो अपराधा । काह क्षमावहु केहिकीबाधा ॥
मोहिं परचो अबलों नाहिं जानी । बैठि इकांत भावना ठानी ॥
दोहा—तब राजा बोलत भये, देहु हाथ मम माथ ।
अब शरणागत मोहिं करि, कीजै नाथ सनाथ ॥ ३॥
तब भूपति शिर हाथधारि, हरचो सकल शिरपीर ।
ताहि मंत्र उपदेश करि, कियो भक्त रघुवीर ॥ ४ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथ श्रुतिधामकी कथा ॥

दोहा—अब वरणों श्रुतिधाम को, रघुपति भक्त अनन्य ।
नाम पराजित दिशि करी, भयो तासु सम धन्य॥१॥
श्रीहरिभक्त अनन्य उदारा । हरि हरिजन नाहिं भेदविचारा॥
कंठी माला धारण काहीं । किय प्रणाम प्रभु गुनि मन माहीं
हरि यश रहित कथा नहिं सुनेऊ । नहिं अभक्त भाषण चित गुनेऊ
संतन नाम रूप यश धामा । मान्यो हरि समान वसुयामा ॥
जहँ जहँ होय राम गुण गाथा । तहँ तहँ लै सब संतन साथा ॥
करै श्रवण मन मगन प्रेम में । बहत कलिल दृग सहित नेममें॥
यहि विधि विचरत वसुधा माहीं । छायो सुयश विमल चहुँवाहीं॥
एक समय लै संत अनंता । तीरथपति गवने मतिवंता ॥
कियो त्रिवेणी महँ अस्नाना । वर्णन लागे कथा पुराना ॥
संत मंडली जुरी अपारा । तहाँ संत इक वचन उचारा ॥
नाथ बड़ो कौतुक मनलागत । यह संदेह न जियते भागत ॥
वर्ण्यों यहि विधि वेद पुराना । सो हम सुना वार बहु काना ॥
दोहा—गंगा यमुना सरस्वती, संगम वेणी नाम ।
गंगा यमुना लखिपरै, नहिं सरस्वती ललाम ॥ २ ॥

ताको हेतु बतावहु नाथा। विनती करौं नाय पद माथा॥
तब श्रुतिधाम कह्यो अस बयना। देखहु सकल संत निज नयना॥
घटिका द्वै महँ सरस्वति धारा। वेणी मधि निकसति सुखसारा॥
तब सब साधु आचरज मानी। वेनी लगे निहारन ज्ञानी॥
घटी द्वैक महँ जमुना ज्वैकै। पश्चिमसरस्वति कूपहि ह्वैकै॥
बही सरस्वतीकी तहँ धारा। अरुण वर्णते हि तेज अपारा॥
उठि उठि संत विलोकन लागे। श्रीश्रुतिधाम वचन अनुरागे॥
श्रीश्रुतिधाम ध्यान धरि धीरा। बैठिअचल सुमिरत रघुवीरा॥
संत कह्यो मज्जन प्रभु करहू। सरस्वति धार देखि सुख भरहू॥
तब श्रुतिधाम उठे सुख छाई। मज्जन कीन्ह्यो सरस्वति जाई॥
जय ध्वनि रही चहूंदिशि छाई। सबै करी श्रुतिधाम बड़ाई॥
लाखन मनुज मकरके वासी। मज्जन करि भै आनँद रासी॥

दोहा—औरहु श्रीश्रुतिधाम के, अहैं चरित्र अपार।
विस्तरकी भय मानि उर, मैं नाहिं कियो उचार॥३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडे उत्तरार्द्धे सप्तमोऽध्यायः॥७॥

अथ लालाचार्यकी कथा।

दोहा—लालाचारज को कहौं, अब सुंदर इतिहास॥
जाहि सुनत हरि जनन में, दृढ़ उपजत विश्वास॥१॥

लालाचारज यक हरिदासा। प्रगटे द्राविड दक्षिण आसा॥
श्रीरामानुजके जामाता। सकल शास्त्र महँ महि विख्याता॥
एक समय यतिराज समीपा। कीन्ह्यो विनय सुखद कुल दीपा॥
सब संतन महँ हे यतिराऊ। राखहुँ कौन भाँति मैं भाऊ॥
रामानुज बोले मुसक्याई। मानहु सकल संत कहँ भाई॥

तबते लालाचारज ज्ञानी। संतन भ्राता सम लिय मानी॥
एक समय कावेरी माहीं। भोर समय तहँ मज्जन काहीं॥
लालाचारज केरी नारी। जात भई तिय संग सिधारी॥
तहँ इक मृतक तिलक युत माला। बहि आयो सरिता तेहिंकाला॥
तब लालाचारज तियकाहीं। हँसी तिया लखि मृतक तहांहीं॥
तेरो देवर आवत बहतो। देखत सबै कोऊ नहिं गहतो॥
तब लालाचारजकी नारी। चलि घर पतिसों गिरा उचारी॥

दोहा—कावेरी इक मृतक लखि, देवर मोर बनाय॥
किये सकल हाँसी तिया, यह दुख सह्यो न जाय२

लालाचारज सुनि यह बाता। ल्याये पकरि मानि तेहि भ्राता॥
क्रिया कर्म भ्राता सम कीन्ह्यो। विप्रन सकल निमंत्रण दीन्ह्यो॥
कह्यो विप्र यह बंधु न तेरो। नाहिं मानिहै जो नेवता फेरो॥
तब रामानुजके ढिग जाई। लालाचारज कह बिलखाई॥
तब तो संतन मानत कोई। कौन भाँति भोजन प्रभु होई॥
तब यतिपति बोले कछु कोपी। जे तेरे नेवताके लोपी॥
तिनको जानहु परम अभागी। तुव नेवता विकुंठ लगि लागी॥
अस कहि यतिपति किय आकर्षण। भेज्यो निज पार्षद संकर्षण॥
ते सब विप्र स्वरूप सोहाये। लालाचारजके घर आये॥
भोजन करि लहि कै सत्कारा। कियो गगन पथ ह्वै संचारा॥
जात गगन पथ तिनहिं निहारी। सकल विप्र आश्चर्य्य विचारी॥
लालाचारज के घर जाई। जूठन खान लगे पछिताई॥

दोहा—लालाचारज की कथा, यहि विधि अहै अनंत॥
विस्तर भय भाष्यो नहीं, क्षमा कियो सब संत॥३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेअष्टमोध्यायः॥ ८ ॥

अथ गुरु चेलाकी कथा ॥

दोहा–गुरु चेला की अब कहौं, कथा परम कमनीय ॥
सुनहु सकल श्रोता सुमति, कर्म अनिर्वचनीय॥ १ ॥

गुरु चेला गंगा तट दोऊ । रहे वसत आनंदित सोऊ ॥
लगे गुरू बदरीवन जाने । चेला को अस वचन बखाने ॥
जबलौं इत आऊँ मैं नाहीं । तबलगि वस्यो गंग तटमाहीं ॥
कह्यो शिष्य विन दर्श तुम्हारा । होई को इत मोहिं अधारा ॥
गुरु कह जबलों दरशन मोरा । तबलगि है गंगा गुरु तोरा ॥
अस कहि गयो गुरू बदरीवन । शिष्य गुन्यो सुरसरि गुरु ताक्षन
तबते शिष्य देवसरि माहीं । मज्जनहेतु हिल्यो पुनि नाहीं ॥
कियो कूप जल सों सबकाजा । मान्यो नहीं जगतकी लाजा ॥
तब गंगातटके सब वासी । मान्यो ताहि धूत संन्यासी ॥
जब बदरीवन ते गुरु आये । तासु दशा तिनसों सब गाये ॥
महामूढ़ है शिष्य तुम्हारा । गंगा तजि किय कूप अधारा ॥
तब गुरु अचरज गुनि मनमाहीं। चले गंग महँ मज्जन काहीं ॥

दोहा–चले शिष्य सब संग महँ, तेहुको लियो बोलाय ॥
गये गुरुहिलिय सलिल में, और शिष्य समुदाय॥ २॥

सो गुरु मानि देवसरि काहीं । धरचो सलिल महँ निज पदनाहीं
तब गुरु तासु परीक्षा हेतू । बोले वचन बाँधिमन नेतू ॥
धरचो तीर कौपीन हमारा । ल्याउ शिष्य मो ढिग यहि वारा॥
तब शिष्यहि पर गो संदेहा । केहि विधि बचै गंग गुरु नेहा ॥
हे गंगा राखहु मम लाजा । परिगो महाकठिन अब काजा ॥
तब सुरसरि निज भक्त विचारी । प्रगट कियो कौतुक यह भारी ॥
जहँ शिषि तहँ ते गुरु पर्य्यन्ता । प्रगटे पद्मिनि पत्र अनंता ॥
तिन पद्मिनि पत्रन पग दैकै । चल्यो शिष्य गुरु सुमिरण कैकै॥

बूडे पद्मिनि पत्र न जल में। लखि अचरज माने तेहि थल में॥
गुरु निहारि यह शिष्य तमासा। कीन्ह्यो तापर पूर विश्वासा॥
कहत रहे जे ताहि 'पखंडी। हांसी योग भये ते दंडी॥
तब गुरु ताहि अङ्क बैठायो। जय जय शब्द जगत महँछायो॥
दोहा-गुरु ते चेला भो अधिक, नहिं अचरज उर लाव॥
यह सिगरो तुम जानियो,सरसुरि भक्ति प्रभाव॥ ३॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेनवमोऽध्यायः॥ ९॥

अथ देवाचारजकी कथा॥

दोहा-अति विचित्र वर्णन करों, श्रोता सुनहु सुजान॥
देवाचार्यके भक्त को, यह सुंदर आख्यान॥ १॥
देवाचारज तिनको नामा। भयो भक्त इक पूरण कामा॥
साधुन मंडल मोद प्रदाता। ध्यायो नित हरि पद जलजाता॥
जौन देशमहि कियो पयाना। पावन भे तहँके जन नाना॥
एक समय गवने सो काशी। पंथ मिली नगरी छबिराशी॥
विमल बाग महँ कियो निवासा। तहँ इक अर्जुन पादप खासा॥
मज्जन करि ध्यावत जगबंधू। बाँचन लागे दशमस्कंधू॥
यमलाअर्जुन कह्यो प्रसंगा। जुरे बहुत जन साधुन संगा॥
कथा प्रसंग लग्यो अध्याया। तब यह कौतुक तहँ प्रगटाया॥
आकस्मात भयो तरु पाता। कह्यो पुरुष इक अति अवदाता॥
सो देवाचारज पद वंदी। चढ़ि विमान गो लोक अनंदी॥
जातसमय अस बोल्यो बैना। मोरे पुण्यलेश कछु हैना॥
पूरुवजन्म केर हौं पापी। परतियगामी चुगुल सुरापी॥
दोहा-सांसति सो मम मीच भै,नरक गये लै दूत॥
तहाँसहस्रन वर्षलों,भोग्यों दुःख अकूत॥ २॥

फेरि लह्यों तरु जन्म को,लहि तुव कथा प्रभाव ॥
अब अपाप ह्वै जात हौं, उर अति बड़ो उराव ॥ ३ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अथ हरियानंदकी कथा ॥

दोहा—अब सुनिये चित दै सकल,हरियानंद आख्यान ॥
जाहि सुनत सब संतके, उपजत मोद महान ॥ १ ॥
हरियानंद भागवत पूरे । हरि आनंद रहत नहिं झूरे ॥
दिनप्रति करै साधुसेवकाई । माया विभव विलास विहाई ॥
एक समय अषाढ़ जबआयो । श्रीजगदीश दरश चितचायो ॥
रथयात्राके अवसर माहीं ।रथ पर लख्यो जाइ हरि काहीं॥
रुक्यो रह्यो रथ टरयो न टारे । जगन्नाथ जय मनुज उचारे ॥
हरियानंद गयो रथ नेरे । सब मनुजन वाणी अस टेरे ॥
छोड़िदेहु रथ नाथ चलैहैं । लाखन जन अभिलाष पुजैहैं ॥
छोड़ि दिये तब सब रथ काहीं। माने अति कौतुक मन माहीं ॥
निज जन प्रण पूरयो यदुराई । आकस्मात चल्यो रथ धाई ॥
द्वै शत पग रथ बिना चलाये । चलो गयो घर घर रव छाये ॥
हरि आनंद चरणमें आई । गिरी सकल जनकी समुदाई ॥
माचिरह्यो सब थल जयकारा ।अस प्रभाव हरि जन संसारा ॥
दोहा—यहि विधि हरियानंद के, और अमित इतिहास ॥
कहँलों मैं वर्णन करों, ग्रंथ बढ़नकी त्रास ॥ १ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकादशोऽध्यायः ११ ॥

अथ राघवानंदकी कथा ॥

दोहा—हरिजन हरियानंदके, शिष्य राघवानंद ।
तिनको अब इतिहास मैं, वर्णत हौं सानंद ॥ १ ॥
भक्त राघवानंद सुजाना । भये अनूप प्रभाव जहाना ॥

चारिहु आश्रम चारिहु वरणा। कीन्ह्यो सन्मुख यदुपति चरणा॥
जेहि जेहि देशन कियो पयाना। दै उपदेश दियो निर्वाना॥
साधु शिरोमणि सज्जन साँचो। रोज़ २ रघुपति रति राँचो॥
एक समय काशी में आये। वास करत कछु काल बिताये॥
एक दिवस गत दिन इक कामा। मय पंडित समाज तेहि ठामा
तेहि क्षण नृपसुत करन समाश्रय। बोल्यो करन कृष्ण की आश्रय
तेहि क्षण दौरि दूत द्वै आये। आचार्यन आगमन सुनाये॥
आगू लेन जान मन दयऊ। तेहि क्षण कार्य्य तीनि परि गयऊ॥
ध्याय तबै मन अंतर्यामी। तीनि रूप ह्वैगे तहँ स्वामी॥
तीनहु कर्म कियो इक काला। कोऊ नाहिं जान्यो यह ख्याला॥
पाछे भयो जबै निरजोसा। तब सब जानि कियो अपसोसा॥

दोहा—श्रीहरिभक्ति प्रभाव गुणि, अचरज गुन्यो न कोइ।
ब्रह्मरंध्र ते प्राण तजि, गयो ब्रह्मपुर सोइ॥ १॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेद्वादशोऽध्यायः॥ १२॥

अथ रामानंदकी कथा॥

सोरठा—रामानंद महान, भये भक्त यदुनाथके।
तिन अख्यान सहसान, आदि अंतलों को कहै॥१॥
पीपा औ रैदास, नाऊसेन सुजान अति।
अरु कबीर भवनाश धनाजाट इत्यादि बहु॥ २॥

शिष्य चतुर्दश साति यहि भांती। इक इकते महिमा विख्याती॥
तिनके शिष्यनकी जब गाथा। कहिहौं नाय साधु पदमाथा॥
तब रामानंदहि की महिमा। अपने ते प्रगटी यहि महिमा॥
पै कछु कथा कहौं सुखदाई। ताहि सुनो संतौ मन लाई॥
किय अभक्त जनसों नाहिं भाषन। कियो भक्ति वर्षन जन राखन॥

वर्ष सप्तशत लौं तनु राख्यो। परमारथ तजि और नभाख्यो॥
तासु प्रभाव विदित चहुँ घाहीं। भरत खंड जानत को नाहीं॥
बांधवगढ़ इक दुर्ग हमारो। वरुणाचल तेहिं वेद उचारो॥
तहँ बघेल वर वंश विशाला। वास करत अबलों सब काला॥
तहँको सेन नाम कोउ नाऊ। कहिहौं आगे तासु प्रभाऊ॥
सोनापित इक समय सुजाना। पायो अस निदेश भगवाना॥
रामानंद शिष्य तुम होहू। मिटिहै तब माया मद मोहू॥

दोहा—हरि अनुशासन पायकै, काशी कियो पयान।
रामानंद समीपमें, कीन्ह्यों विनय बखान॥ १॥

रामानंद शूद्र तेहि जानी। बैठे पट कवार कहँ ठानी॥
सेन समीप माहँ गे जबहीं। पट कवार टरिगो तहँ तबहीं॥
पुनि बाँध्यो पुनि टरयो तुरंतै। रामानंद गन्यो तेहि संतै॥
दौरि मिले भीतर लै गयऊ। सादर शिष्य करत तेहिं भयऊ॥
शिष्य होन जबगे रैदासा। रामानंद कह्यो सहुलासा॥
चर्मकारकी जाति तिहारी। शिष्य करैं किमि अहैं अचारी॥
जब शासन देहैं हरिमोको। करब शिष्य तबहीं हम तोको॥
अस कहि विदा कियो रैदासै। भोजन हित गे आप अवासै॥
पट कवार बान्धे चहुँ ओरा। देख्यो यह कौतुक तेहि ठोरा॥
लीन्हें सलिल खड़े रैदासा। तब लै जल बैठायो पासा॥
पट कवारको खोलि निहारा। दूरि बैठ रैदास उदारा॥
दौरि मिले हरिशासन जानी। कीन्ह्यो शिष्य सकल विधि ठानी

दोहा—यहि विधि रामानंद के, अहैं चरित्र अनंत।
कहँलौं मैं वर्णनकरों, जेहि अधीन भगवंत॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रयोदशोऽध्यायः॥ १३॥

अथ अनंतानंदकी कथा ॥

दोहा–भक्त अनंतानंद को, अबवर्णौं आख्यान।
संतन दानि अनंद जेहिं,प्रणपाल्यो भगवान ॥ १ ॥

भक्त अनंतानंद सुजाना। भयो निधान ज्ञान विज्ञाना ॥
रामनाम महँ वचन विहारा। राम सनेह पियूष अधारा ॥
जोरचो रघुपति भक्त समाजा। कीन्ह्यो परउपकारहिं काजा ॥
जेहिं जेहिं देशन कियो पयाना। तेहिं तेहिं पापन पुंज पराना॥
संभरदेश गये इक काला। तहँ को रह्यो अभक्त भुवाला॥
रह्यो अपूरव भूपति बागा। तापर रह्यो राव अनुरागा ॥
बड़ बड़ आमरूदफलजाके। माली रह्यो दिवश निशि ताके॥
कोउ वैष्णव तहँ जाय निहारचो।स्वामी सों पुनि आय उचारचो॥
बीहीके फल सुखद महाना। लगे बाग महँ गुरु भगवाना ॥
कोहु कहँ टोरन देत न माली। मांगेहु पर मुरके हम खाली ॥
तबहिं अनंतानंद सुजाना।शिष्यन सों अस वचन बखाना॥
एकहु फल बीहीके बागा। नहिं रहिहैं अस मोहिंसतिलागा॥

दोहा–तेहि क्षण निज जन पूर प्रण, करन सत्य भगवान।
कियो बाग बीही रहित, कौतुक मच्यो महान ॥१ ॥

पहुँचावन हित फलकी डाली। टोरन बीहीगो जब माली ॥
तरुन रहित फल देख्यो जबहीं।भयो दुखी उपज्यो डर तबहीं॥
कह्यो कौन कारण यह भयऊ। बिन फल सकल बागह्वैगयऊ॥
तब कोउ अनुचर कह्यो बुझाई। साधु एक आयो इत धाई ॥
माँग्यो फल दीन्ह्यो हम नाहीं। सो किय कौतुक यहिक्षण माहीं॥
तब माली खोजत चलि आयो। नाथ चरणमें शीश नवायो ॥
भूपतिसों सब कह्यो हवाला। आयो द्रुतहि दौरि महिपाला॥
निरखि अनंतानंद स्वरूपा। तुरतहिं भयो भक्ति युत भूपा॥
आय शिष्य भो यत परिवारा।सकल देश पुनि हुकुम प्रचारा॥

भयो शिष्य तब सिगरो देशू। मिटत भयो भव केर कलेशू ॥
कह्यो अनंतानंद प्रसन्ना। भयो बाग पुनि फल सम्पन्ना ॥
राजा प्रजा भये गतिभागी। भव सम्भवित भूरि भव भागी॥

दोहा—ऐसे अमित चरित्र जग, कियो अनंतानंद।
कहँ लौंमैं वर्णन करौं, अहै मोरि मतिमंद ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेचतुर्दशोऽध्यायः १४

अथ नरहरिदासकी कथा॥

दोहा—शिष्य अनंतानंदके, नरहरिदास सुजान।
तासु कथा वर्णन करौं, अवशि अनंद निधान ॥ १ ॥

नरहरिदास भक्त इक भयऊ। कबहुँ सो जगन्नाथपुर गयऊ ॥
मंदिर भीतर प्रविश्यो जबहीं। करत दंडवत देख्यो सबहीं ॥
तब मन महँ अस कियो विचारा। जब जाई भुवि शीश हमारा ॥
तबह्वैहैं दर्शन अवरोधू। क्षणभर विरह सनेह समोधू ॥
अस गुनि पद करि प्रभुकी ओरा। परे उतान लखत तेहि ठोरा॥
पंडा यह अपचार निहारा। तेहि घसीटि बाहिरे निकारा ॥
तब जेहि दिशि डारचो तेहि काहीं। तहँ द्वार भो मंदिर माहीं॥
पुनि पछीत महँ ताको डारा। तहौं भयो हरि मंदिर द्वारा ॥
यात्री पंडा देखि प्रभाऊ। परे सबै नरहरिके पाऊ ॥
त्राहि २ क्षमिये अपराधा। धोखे महँ दीन्ह्यो हम बाधा ॥
सो नहिं कीन्ह्यो हर्ष विषादा। यह हरिदासनकी मर्य्यादा ॥
ऐसे अहैं अनेक चरित्रा। हरिभक्तन के जगत पवित्रा ॥

दोहा—सोई नरहरिदास प्रभु, जाको सुयश प्रकास।
जासु शिष्य जग विदित भो, स्वामी तुलसीदास॥१॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचदशोऽध्यायः ॥ १५॥

अथ भावानंदकी कथा॥

दोहा—अब मैं भावानंद की,कथा कहौं रसखानि।
जासु सुनत हरिदेत पुर, पकरि पाणिसोंपानि॥ १॥

छंद—गये भावानंद जा,यकसमय तीरथराज।
बसे मकर प्रयंत सँग विलसंत संत समाज॥
न्हाइ पूरणमासिको अधरात कीन्ह पयान॥
तरन हेत सु तरनिजा तद तरनिको चौआन॥
कह्यो केवट हुकुमहाकिम तरनको निशि नाहिं॥
गवन अवशि विचारि सुमिरचो श्रीनिवासहि काहिं॥
सुमिरि हरिकोहिले पैदरयमुनमध्य दहार॥
भयो जल तब जानु लों भे संत सिगरे पार॥
यह निरखि कौतुक सकल साधु अगाध आनँदपाय॥
यश विमल भावानंद को दीन्ह्यो चहूं दिशिछाय॥
यहि भांति भावानंद के हैं चरित विविध प्रकार॥
मैं कियो वर्णन नहिं विशेष विचारि अतिविस्तार॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेषोडशोध्यायः॥ १६॥

अथ रामदास और सारीदासकी कथा॥

दोहा—रामदास अरु दूसरो, सारीदासहि नाम॥
शिष्य अनंतानंद के, भये युगल मतिधाम॥ १॥

हरि प्रेमी नेमी जग क्षेमी। रोजहिं राम रास रुचि नेमी॥
नवधा भक्ति विभेदविज्ञाता। भगवतभक्ति विभेद अज्ञाता॥
हरि चरणोदक नीर न जाना। हरि अवतार न गुन्यो समाना॥
साधु मानप्रद आपु अमानी। उभय भक्त भे परम विज्ञानी॥
एक समय विचरत सब देशा। चित्रकूट गे शुभग प्रदेशा॥

चित्रकूट दिशि पश्चिम ठामा । त्वरा नाम रह्यो इक ग्रामा ॥
तहँ के वासिनकी यह रीती । करैं साधुसों अवशि अनीती ॥
कबहुँ न करैं संत सत्कारा । ठाढ़ो होन न पाव दुवारा ॥
रामदास औ सारीदासा । गये ग्राम तहँ लखन तमासा ॥
देखत दूरि दूरि सब भाषे । ठाढ़हु होत माहँ अति माषे ॥
तब दोउ साधु ग्रामके दूरी । बसे नदी तट लहि दुख भूरी ॥
तेहि निशि ग्रामाधिप सुत काहीं।डस्यो भुजंग मर्यो क्षण माहीं ॥

दोहा–भोर जरावन लै चले, गये जबहिं सरि तीर ॥
तिनहिं देखि दोउ साधु तहँ, बोले वचन गँभीर ॥१॥
जियहि जो सुत तौ देहु का, दीजै सत्यबताय ॥
जौन कहौ सो देहिंहम, बोले सबै हहाय ॥ २ ॥
तब दोउ साधु कह्यो विहँसि, अस मर्य्यादा होय ॥
करहु सबै सत्कार तुम, संत जो आवै कोय ॥ ३ ॥
तब बोले सब ग्राम के, ऐहे जो हरिदास ॥
जो सुत जिये तौ करब हम, युत सत्कार सुपास॥४॥
तब दोउ संत तुरंत उठि, यदुपतिको शिरनाइ ।
अपनो चरण छुवायकै, दीन्ह्यो सुतहिं जिआइ ॥५॥
तबते त्वरा गाँवकी, अब लों ऐसी रीति ।
आवै जो कोउ साधु तहँ, करै ताहि अति प्रीति॥ ६॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेसप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

अथ पयहारीजीकी कथा ॥

दोहा–पयहारीजीको करौं, अब इतिहास प्रकास ।
जाहि सुनत समुझत सकल, हुलसत हैं हरिदास ॥१

जयपुर कछवाहन को ग्रामा। तहँ रह्यो गालव मुनि धामा॥
सो गलता गादी कहवावै। संत समाज तहाँ सुख पावै॥
सो गद्दी महँ अति तपधारी। भयो एक हरि जन पयहारी॥
ताके शिष्य महा परभावा। एक ते एकन महत्व बढ़ावा॥
तिनकी कथा कहौं गो आगे। पयहारी यश सुनहु सुभागे॥
गलता गादी प्रभु पैहारी। भयो सकल संतन सुखकारी॥
सहसन संत करैं तहँ वासा। सबको अतिशय होत सुवासा॥
एक समय पयहारी दासा। कांचीके स्वामी के पासा॥
नेवता हित द्वै संत पठायो। कांचीके स्वामी सुख पायो॥
स्वामी तबै करन व्यवहारा। शुभ मुद्रा शत पंच पवारा॥
वैष्णव मुद्रा लै द्रुत धाये। जब जैपुर बज़ार मधि आये॥
यक गणिका स्वरूप लखि मोहे। धनहु आपने ढिग महँ जोहे॥

दोहा—वारवधू सों कह विहँसि, मुद्रा लै शत पांच॥
चारि दंड बीते निशा, देहु हमैं सुख सांच॥ २॥

वारविलासिनि गुनि धनवाना। कीन्ह्यो तिनको वचन प्रमाना॥
साधु गये जब अपणे डेरा। चारि दंड निशि गइ भइ बेरा॥
मोहित मदन वार तिय गेहू। चले संग धन धरि भरि नेहू॥
पयहारीके मंत्र प्रभाऊ। तिनको धन कुपंथ किमि जाऊ॥
देखि परचो नाहिं गणिका गेहू। फिरे सकल निशि भरि संदेहू॥
उतै वारतिय अवधि व्यतीते। हेरन चली मानि दुख जीते॥
सोऊ चारि पहर निशि वाग्यो। संत खोज कतहूँ नहिं लाग्यो॥
भटकत भोर भये भै भेटा। उपज्यो ज्ञान मदन भय मेटा॥
धिक्धिक्कियो संत निज काहीं। हाय कौन गति भै क्षण माहीं॥
तहँ सत्संग प्रभाव विशेषी। गणिकहु अधम आप कहँ लेषी॥
चलन लगे जब संत दुखारी। गणिका तब अस गिरा उचारी॥

लाखनको धन है मम गेहू। देहौं संतन विन संदेहू॥
दोहा—लै चलिये मोहिं प्रभु निकट, कीजै मम उद्धार॥
विषय विवश मैं विविध विधि, भुगत्यों दुख संसार ३
गणिकाको अति शुद्ध लखि, लीन्ह्यो संत लेवाय॥
कपट छांड़ि निज गुरु निकट, दिय वृत्तांत बताय ४
पयहारी परसन्न ह्वै, गणिकै लियो टिकाय॥
हरि सन्मुख किय नृत्य सो,लिय गति विषय विहाय॥
सुनहु संत दूजो चरित, पयहारी जीकेर॥
वर्णत जाहि न होत है, मन संतोष घनेर॥ ६॥
पयहारी जी उत्तर ओरा। गये करन तप नंदकिशोरा॥
गुहा बैठि यक ध्यान लगाई। यहि विधि दिय कछु काल बिताई
यक अहीरमाहिषी बहुल्यावै। गुहा निकट महँ रोज़ चरावै॥
धरयो कमंडलु जहँ पयहारी। तहँ यक महिषी सपदि सिधारी॥
तेहि परथन करि ठाढ़ी होती। भरत कमंडलु पयकी सोती॥
यहि विधि बीति गयो चौमासा। यक दिन लख्यो अहीर तमासा॥
पयहारी को दर्शन पायो। दौरि तासु चरणन शिरनायो॥
पयहारी जी कह अस बैना। तेरी भैंस दियो मोहिं चैना॥
मांगुमांगु वर जो मन होई। कह्यो अहीर सुनहु प्रभु सोई॥
दूध पूत दिय दैव हमारे। नाहिं आशा अब दया तुम्हारे॥
पै मम भूपति है धनहीना। धनी होत सो तुम्हारो कीना॥
भये प्रसन्न तबहि पयहारी। कह्यो धन्य तैं गिरा उचारी॥
दोहा—स्वारथ वश सिगरो जगत, पर उपकार विहीन॥
पर उपकार प्रवीन जे, तेई मनुज प्रवीन॥ ७॥
मेघ वृक्ष सरि सत्य सपूती। परहित हेतु होति करतूती॥
जिनको तन मन धन पर हेतू। तेई मनुज मनुजकुल केतू॥

परहित होती संत विभूती । निज हित होती खलन कुपूती ॥
अस कहि पयहारी पठवायो । सो अहीर अवनीपति ल्यायो ॥
राजा गह्यो आय युग पादा । पयहारी दिय आशिर्वादा ॥
तबते धरा धान धन पूरी । राज्यभई नहिं संपति झूरी ॥
राजा संतन विविध खवायो । हरिमंदिर अनेक बनवायो ॥
करत कृष्ण कीर्त्तन दिन जाहीं। एकहु क्षण नहिं जात वृथाहीं ॥
कृष्ण निवेदित भोजन करहीं । गाय गाय हरिगुण सुख भरहीं॥
एक दिवस राजा हरिसेवी । मँगवायो हरिहेत जलेवी ॥
नृप बालक ताको कछु खायो । राजा शिर काटनको धायो ॥
बच्यौ भागि हरि मंदिर माहीं । नृप कह मुख देखब हम नाहीं॥

दोहा—संत आय तब विनय करि, क्षमा करायो खोरि ।
राजा दै धन मोल जिय, तबसे बच्यो बहोरि ॥ ८ ॥
कुल्लूनगर मही अमर, जूता बेचन लाग ।
दै सम्पति हटक्यो नृपति, इमि ब्रह्मण्य अदाग ॥ ९॥
संत भोज यक दिन भयो, नृपसुत परुसन लाग ।
गर्भवतिहँ द्वै पातरी, परस्यो भरि अनुराग ॥ १० ॥
पयहारी परभावते, अस नृप भयो प्रवीन ।
नहिं संतन आश्चर्य्य कछु, द्रवत सदा जे दीन ॥११॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेअष्टादशोऽध्यायः॥ १८॥

अथ कीलदासकी कथा ॥

दोहा—श्रोता सुनहु सुजान सब, कीलदास इतिहास ।
जाहि सुनत उर तम हरत, संत प्रभाव प्रकास ॥१॥

अहै देश पश्चिम गुजराता । तहँ यक खत्री मति अवदाता॥
सो कीन्ह्यो हरि महँ अनुरागा । ताते भयो जगत् बड़भागा ॥

शाह समीप लग्यो रोजगारू। तासु कृपा भो विभव अपारू॥
सूबा भयो देश गुजराता। सुमिरत नित हरिपद जलजाता॥
विभव विवश नहिं सुमिरन त्यागा। करै काज हरिमहँ मन लागा
नाम सुमेरु देव जग जाको। धर्म धुरंधर भो बसुधाको॥
तासु पुत्र यक भयो सुजाना। तब विरक्त ह्वै तज्यो मकाना॥
परमहंस ह्वै विचरन लाग्यो। हरि सुमिरत बहु देशन वाग्यो॥
भयो शिष्य पयहारी जीको। किये कृपा तापर पिय सीको॥
एक समय दिल्लीपुर आयो। शिला बैठि हरि ध्यान लगायो॥
कढ्यो शाह तेहि मारग ह्वैकै। कियो सलाम सकल जन ज्वैकै॥
सो ब्रह्मांड निरखि निज प्राना। बादशाहको भयो न भाना॥

दोहा–शाह निरखि तेहि जानि जड़, करिकै कोप प्रचंड।
कह्यो प्रवेशहु शीशमें, यक मम आयसडंड ॥ १ ॥

सेवक सुनत तैसही कीन्ह्यो। ताके शीश कील द्रुत दीन्ह्यो॥
हरिप्रभाव आयस गलि गयऊ। ताको कछू भान नहिं भयऊ॥
बादशाह लखि संत प्रभाऊ। तजि घमंड पकर्‌यो युग पाऊ॥
तबते कीलदास भो नामा। कियो कोप नहिं सुमिरत रामा॥
एक समय जयपुर नृप केतू। आयो मथुरा मज्जन हेतू॥
कीलदासको सुनि अवनीशा। जाय कियो निज पद तिन शीशा
मानसिंह रह जाकर नामा। जाको विप्र हेतु धन धामा॥
लग्यो करन संभाषण राजा। मान्यो अपनेको कृतकाजा॥
कीलदास ताही क्षण माहीं। खड़े भये करि भुज नभ काहीं॥
बार बार कह मुख स्याबासू। कियो सत्य पितु विष्णु विश्वासू॥
सचकित मानसिंह तब बोलो। यह लीलाका कारण खोलो॥

दोहा–कीलदास तब कहत भे, रह्यो पिता गुजरात।
सो तनु तजि हरिधाम को, चढ़ि विमान अब जात२॥

नृप मन गुनि आश्चर्य अपारा। गुर्जर पठयो सुतर सवारा ॥
सो लै खबरि तुरंतहि आयो। कीलदास कह तस सो गायो॥
राजा भयो समासृत तबहीं। मान्यो मोद संत जन सबहीं ॥
कीलदास यक समय तहाँहीं। सुमन लेन गे उपवन माहीं ॥
सुमन लेत काढ्यो अहि हाथा। रह्यो न कोउ तिनके तहँ साथा॥
कीलदास तब कियो विचारा। धौं यह कारो अति विषवारा॥
धौं मम तनु कारो विष छायो। कौन होत यहि क्षण अधिकायो
लेन परीक्षा हाथ पसारा। डस्यो बहुरि अहि बारहिबारा॥
चढ्यो न विष नेकहु तनु ताके। सुमिरत पति वृषभान सुताके
ऐसो कीलदास इतिहासा। मति लघु कहँ लगि करौं प्रकासा॥
कीलदास यमुना तट बैठे। यदुपति प्रेम पयोनिधि पैठे ॥
ब्रह्मरंध्र ह्वै कारि निज प्राना। किय गोलोक तुरंत पयाना ॥

दोहा—कीलदासकी यह कथा, मैं वरण्यों सुख छाय।
और अमित तिनके चरित, को कहि पारै जाय ॥३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेनवदशोऽध्यायः ॥१९॥

अथ अग्रदासकी कथा।

दोहा—श्रोता सुमति सुजान सब, अब अतिशय चित लाय॥
अग्रदासकी अति अमल,सुनहु कथा शिरनाय ॥३॥

छप्पयनाभाकृत—सदाचार ज्यों संत प्रात जैसे करि गाये ॥
सेवा सुमिरण सावधान राघव चित लाये॥
प्रसिधि बाग सों प्रीति हव्यकृतकरतनिरंतर॥
रसना निर्मल नाम मनहुँ वर्षत धाराधर ॥
कृष्णदास कृपा भक्ती मन वच क्रमकियो ॥
श्रीअग्रदास हरिभजन विन काल वृथा नहिंचितदियो

दोहा—नाभाकृत छप्पय यही,लिख्यो यथावत जोय ।
संत कथा आचार्य गुनि, बंदौं मन मुद मोय ॥ १ ॥

अग्रदास गलताके गादी । भयो अधीश धर्म मर्य्यादी ॥
मानसिंह जैपुरको राजा । सो अपनी लै सकल समाजा॥
अग्रदास गुरु आज्ञाकारी । रहै समीप चरण रज धारी ॥
एक समय तीरथके हेतू । अग्र चल्यो बहु संत समेतू ॥
पथ महँ रह्यो वणिक कर बागा। निरखत अग्रदास मन लागा ॥
तहां वास कीन्ह्यो तेहि राती । सुन्यो सो आई संत जमाती ॥
आय कियो संतन सत्कारा । दीन्ह्योभोजनविविधप्रकारा ॥
तापर संत प्रसन्न भये सब । अग्रदास कह जाहु भवन तब॥
वणिक वंदि पदगृह निजआयो। तेहि निशि तेहि सुतसर्पसतायो
डसत भुजंग गयो मरि सूना । तेहि घर भयो दुसह दुखदूना॥
अग्रदास यह सुन्यो हवाला । आये वणिक भवन तेहि काला
संत चरणकी लाल पियाई । दियो वणिक सुत तुरतजियाई

दोहा—जय जय कार भयो नगर, तहँ को सुनि नरनाह ॥
भयो शिष्य परिकर सहित,लै अग्रहि गृहमाह ॥ २॥

पुनि तीरथयात्रा बहु कीन्ह्यो । भवन गवनमोदितचितदीन्ह्यो
अग्रदास अरु कीलदास दोउ । एक समै लीन्हो न संत कोउ॥
मज्जन करि गवने घर माहीं । लख्यो अंध यक बालककाहीं॥
सो शिशु लांगूली द्विजकेरो । कबहूं पर्‍यो अकाल घनेरो ॥
ताकर माता तेहि थल त्यागी । गई पराय अन्न अनुरागी ॥
पूछ्यो अग्रदास शिशु काहीं । को तुम इत अकेल पथमाहीं॥
शिशुकह जननी मोहिं विहाई । गई क्षुधा वश अनत पराई ॥
अग्रदास कह मातु धिकारा । तब बालक यह वचन उचारा॥
नाहिं जननी कर दोष गोसांई । प्रभुहि तजत प्राकृतकी नाई ॥

सुतविरंचि वारिधिपितु जोई। भगनी रमा विष्णु बहनोई ॥
तीन कमल कह हनै तुषारा। करै सहायन अस परिवारा॥
दोहा–ऐंचि कमंडलु ते सलिल,दियो दृगन महँ मारि ॥
अमल कमल दल सम नयन,प्रगटे विमल निहारि॥३
पर्‍यो चरण बालक तब रोई। गयोचित्त करुणा रस मोई ॥
निज आश्रम बालक कहँ लाये। यहि विधि भोजन पान बताये॥
संत चरण जल कीजै पाना। भोजन साधु उछिष्ट प्रमाना॥
सार्ध कोटि त्रय तीरथ जगमें। ते सब हरिदासनके पगमें ॥
कोटिहुँ अंश चरण जल काहीं। वेद वदत तूलत कहुँ नाहीं ॥
कोटि जन्मके पातक भारे। ज्ञात और अज्ञात अपारे ॥
साधु जूठ भोजन मुख डारत। सबै परातन फेरि निहारत ॥
साधु जूठ पग सलिल प्रभावा। हिये विराग ज्ञान प्रगटावा ॥
अग्रदास हरि नाम सुनायो। नाभा नाम गुरू सों पायो ॥
सेवत संत चरण तहँ नाभा। प्रगटी विमल तासु तब आभा॥
रहन लग्यो गलता महँ सोई। मान्यो भक्त प्रबल सब कोई ॥
अग्रदास यक समय सुजाना। लग्यो करन रघुपति कर ध्याना
दोहा–तासु शिष्य यक साहु रह, करन हेतु व्यवहार।
जात जहाज चढ़ो चलो, माधि कहुँ पारावार ॥ ४ ॥
तेहि क्षण बूड़न लागी नाऊ। सो सुमिरयौ गुरुपद परभाऊ॥
सो इत अग्रदास सब जान्यो। तेहि रक्षणको चित हुलसान्यो॥
जब रक्षण को कियो विचारा। वणिक नाव तब लगी किनारा
अग्रदास जब लों किय रक्षण। राम ध्यान छूट्यो तबलों क्षण॥
दूरि बैठि नाभा तहँ रहे। विजन करत डोरी कर गहे ॥
संत चरण सेवन परभाऊ। नाभाको नाहिं भयो दुराऊ ॥
गुरु वृत्तांत जानि अस गायो। नाथ नाव वह भलेबचायो ॥

अब तो सिंधु तीरगइ नाऊ।पुनि ध्यावहु रघुकुलमणिराऊ॥
ऐसे अग्रदास सुनि वैना। बोल्यो चकित खोलि युग नैना
यहि क्षणको यह वचन प्रकासा । नाभा कह्यो नाथ तुव दासा ॥
अग्रदास नाभा कहँ जानी। बारबार कह वचन बखानी ॥
सेवत साधु शक्ति भै तेरी। जानन लाग्यो गति मन केरी॥

दोहा—ताते अब तू संत को, कीजै चरित बखान।
बर्णन संतचरित्र ते, परगति हेतु न आन॥ ५॥

नाभा कह्यो सुनहु गुरुज्ञानी। यह तो कठिन परत मोहिं जानी
संतभाव दुस्तर जग माहीं । यक इतिहास कहौं तुम पाहीं ॥
कहुँ द्वै साधु चले मग जाते। लखे मूर्ति हरि प्रगट शिला ते॥
बनमें तापर रही न छाया। चहुँकित जामी तृणसमुदाया॥
द्वै में एक लग्यो पछिताना। सहत शीत आतप भगवाना॥
दूजो चलेगयो कहुँ दूरी। ठहरि गयो तहँ यक रति भूरी॥
तेहि मूरति पर बहु तृणकारी। रच्यो कुटी बहु पत्रन पारी ॥
करिकै कुटी गयो चलि सोई। दूजो लौट्यो मारग ओई ॥
कुटी निरखि हरि मूरति पाहीं। गारी दीन्ह्यो करता काहीं ॥
दोऊ संतभावके सांचे । दोऊ निज निज हेतुनिरांचे ॥
आतप वात वरष यक वारचो।यक दवारिकी भीत विचारचो॥
उकुसि कुटी तेहिं क्षण तृण काटी। मूरति चहुँ कित पाथर पाटी॥
देइ लगाय दवारि न कोऊ। अस कहि गयो कहूं पुनि सोऊ

दोहा—देखिय दोहुन संत कर, हरिमें भाव अपार।
कौन भांति संतन चरित, वरणि पाइहौं पार॥ ६॥
अग्रदास बोले वचन, सुनु नाभा चितलाय।
भक्ति किये भगवंतकी, दुस्तर सरल देखाय॥ ७॥
तौन भक्तिके रूप मैं, अनुसाधन शुभ रीति।

तुमको देत सुनाय मैं, होति जाहि सुनि प्रीति ॥८॥

कवित्त—भक्ति तरु पौधा ताहि विघ्न डर छेरीहू को वारिदे वि-चारीवारि सींच्यो सतसंग सों॥ लगोई बढ़न गोदा चहुँदिशि कठिनसो चढ़न अकाम यश फैल्यो बहु रंग सों॥संत उर आलवाल शोभित विशाल छाया जिये जीव जाल ताप गये यों प्रसंग सों॥ देखो बडवार जाहि अजाहू की शंका हुती, ताहि पेट बांधे फूलें हाथी जीते जंग सों ॥ १ ॥ श्रद्धाई फुलेल उपटनो श्रवणन कथा मैल अभिमान अंग अंगन छुटाइये ॥ मनन सुनीर अन्हवाय अंगुछाय दया, नवन वसन पन सोधो लै लगाइये॥आभरण नाम हरिसाधु सेवा कर्णफूल, मानसिक नथ अंजन लगाइये ॥भक्ति महरानी को शृँगार चारु वीरी चाह, रहै जो निहारि लहै लाल प्यारी गाइये ॥ २ ॥

ऐसी गुरु आज्ञाको पाई । नाभा तुरत भक्तिरस छाई ॥
ज्ञान विज्ञान विराग विधाना । पाय तुरत त्रैलोक देखाना ॥
कछुक काल महँ अग्र विज्ञानी । गवने विपिन घोर अति जानी॥
तब गादी हित झगरो माचो । सकल संत जुरि किय मतसाचो॥
अग्रदासके शिष्य घनेरे । लिखि २ पत्र नाम सब केरे ॥
प्रभु के आगे सो धरि दीजै । जेहि आज्ञा तेहि मालिक कीजै॥
तैसे कीन्हे संत अपारा । कढ़ि आये करि बंद केवारा ॥
कछुक काल महँ खोल्यो जाई। नाभा नाम सही लिखि पाई ॥
तब नाभाजीको दिय गादी । भये संत सिगरे अहलादी ॥
माचि रह्यो सब थल जयकारा। नाभा सांचो संत अपारा ॥
तासु प्रभाव रह्यो चिरकाला । रच्यो मनोहर भक्तन माला ॥
चारिहु युगके संत गनायो । तिनके सकल चरित्रन गायो ॥

दोहा—पुनि संतन पग पांवरी, धरि अपने उर शीश ॥
तारे सागरसंसार गो,जहँ रघुकुलको ईश ॥ ९ ॥

मानसिंह राजा कछवाहा। जैपुर को अधीश अरिदाहा॥
अग्रदासको शिष्य सुजाना। तासु चरित कछु करौं बखाना॥
मानसिंह यक समय सिधायो। सतसँग हित नाभा ढिग आयो
वचन कह्यो मन माहँ सुखारी। हरिगुरु अग्र कृपानिधि भारी॥
तिनके शिष्य सहस्र सुजाने। पै मोहिं सो मानत नहिं आने॥
नाभा कह्यो सबैको मानै। राजा रंक रीति नहिं जानै॥
मानसिंह तब कह अस बाता। अबै बाग महँ गुरु विख्याता॥
हमहुँ तुमहुँ तहँ चलैं सिधारी। प्रथम दरश लह सोइ प्रिय भारी
अस कहि नाभा अरु नृप माना। कियो वाटिकै तुरत पयाना॥
अग्रदास हरि हित सुम टोरत। कढ्यो बाग बाहेर दल जोरत॥
इतै भूप दल रुक्यो दुवारा। मारग बंद भयो तेहि वारा॥
भूप अकेल वाटिका गयऊ। तहँ गुरुको नहिं देखत भयऊ॥

दोहा—इतै गुरू लखि भीर अति,निकसि बाग ते जाइ॥
बैठि इकांतहि तहँ गयो, नाभा दरशन पाइ॥ १०॥

मानसिंह पुनि गयो तुरंता। वंद्यौ चरण गुरू भगवंता॥
नाभाके पद पुनि शिरनायो। कह्यो तुमहिं गुरु अधिक बनायो॥
एक समय दश सहस सवारा। मानसिंह नृप लै पगु धारा॥
अग्रदास के दरशन हेतू। गुरु दरशन किय मोद निकेतू॥
दश कदलीफल गुरु तेहिं दीन्ह्यो। सादर पद वंदन करि लीन्ह्यो॥
दीन्ह्यो गुरु पुनि दश फल नाभै। करहु सकल दलके फल लाभै
मानसिंह तब अचरज मानी। चल्यो भवन मति विस्मय सानी॥
पूछ्यो कालिह फौज महँ आई। गयो कौन कदली फल पाई॥
सबै रहे दश फलको लीन्हें। कहत भये नाभा यह दीन्हें॥
मानसिंहको पुनि यक काला। मर्‌यो महाप्रिय नाग विशाला॥
अतिशय विमन तबै नरनाहा। नाभा हित गो विगत उछाहा॥

नाभा तासु देखि दुचिताई। तुरत जाय गज दियो जियाई॥
दोहा—नाभाके अरु अग्रके, यहि विधि चरित अपार॥
मान महीपतिके तथा, को कहि पावै पार॥ ११॥

अथ प्रियादास की कथा॥

अब वरणौं प्रियदास चरित्रा। भक्तमाल किय तिलक विचित्रा
प्रियादास यक संत प्रधाना। शिष्य मनोहर दास सुजाना॥
तेहिं किय साधु चरण अति प्रेमा। साधु सेव तजि द्वितिय न नेमा॥
एक समय तीरथको गवने। साधु समाज सहित अघ दवने॥
एक देश महँ रह यक साहू। सो कीन्ह्यो दरशन उतसाहू॥
प्रियादास पद वंद्यो आई। कछु मोहर पुनि दियो चढ़ाई॥
होत रहै तहँ भक्तन माला। सुनत साहु अति भयो निहाला॥
प्रियादासको विनय सुनाई। हरि सन्मुखमोहिं देहु कराई॥
प्रियादास कह सुनहु उपाई। प्रथम जानु संतन सेवकाई॥
दूजो हरि कीर्तन मुख गाना। तीजो चरित सुनै भगवाना॥
यहि ते बढ़ै राम अनुरागा। तब उपजै विज्ञान विरागा॥
तब छूटै जनको संसारा। और यतन नाहिं मोर विचारा॥
दोहा—साधु कह्यो मैं अधम अति, बहुत करों व्यापार॥
सावकाश पाऊं नहीं, गृह महँ एकहुवार॥ १२॥
पै यक मम उद्धार उपाई। सो तुम्हरे कर में दरशाई॥
भक्तमाल मोहिं देहु दिखाई। सो पुस्तक मोहिं देहु धराई॥
मरण समय हमरो जब आई। तब पुस्तक उर लेब धराई॥
तब छूटी यमकी सब भीती। जाहुँ बैकुंठ यही परतीती॥
एक भक्त समरथ गतिदाता। यामें भक्त अनंत विख्याता॥
प्रियादास सुनि साहु गिराको। प्रेमित कियो सजल नयनाको॥
कह्यो प्रशंसि साहु कहँ वानी। भक्तमाल पुस्तक ले ज्ञानी॥

तेरो भक्तन महँ विश्वासा । कबहुँ न होई यमकी त्रासा ॥
अस कहि पुस्तक दियो लिखाई। साहु गयो घर आनँद पाई ॥
मरण काल जब ताकर आयो । यमके दूत भीति दरशायो ॥
तब उर पुस्तक लियो धराई । गे यमदूत तुरंत पराई ॥
तब पुत्रन सों साहु सुखारी । कहत भयो अस गिरा उचारी ॥

दोहा—भक्तमाल परभाव ते, मैं वैकुंठहि जात ॥
यमके दूत पराय गे, हरिके दूत दिखात ॥ १३ ॥

जबहिं मरै कोऊ घर माहीं । तब धरिके उर पुस्तक काहीं ॥
तुमहुँ सबै वैकुंठ सिधारेहु । अब नहिं आन उपाय विचारेहु॥
अस कहि साहु गयो परधामा। पुत्रहु कीन्ह्यो तैसहि कामा ॥
तेऊ किय हरिलोक वसाऊ । देखहु भक्तमाल परभाऊ ॥
एक नगर महँ सो प्रियदासा । आयो संतन सहित हुलासा ॥
तहँ यक मंदिर रह्यो उतंगा । कीन्ह्यो वास सहित सतसंगा ॥
तेहि मंदिर महन्त यक रहेऊ । प्रियादास सों अस सो कहेऊ ॥
भक्तमाल प्रभु देहु सुनाई । फिरि जैयो अनतै चितलाई ॥
प्रियादास तब अति अनुरागे । भक्तमाल तहँ बांचन लागे ॥
भीर भई तहँ साधुन केरी । तीनि दिवस भै कथा घनेरी ॥
तिसरे दिवस चोर निशि आई। ठाकुर पुस्तक लियो चोराई ॥
प्रियादास तब अति दुख भीने। तीनि पहर भोजन नाहिं कीन्हे॥

दोहा—तब हरि को संकठ गयो, चोरन कीन्ह्यो अंध ॥
उरमें दीन्ह्यो ज्ञान कछु, आन दीनके बंध ॥ १४ ॥

सिगरे चोर ज्ञान जब पाये । तब अनेक बाजन बजवाये ॥
ठाकुर अरु पुस्तक करि आगे। चले प्रियादासै पद लागे ॥
मिटी अंधता तब तिन केरी । हरिमें प्रगटी प्रीति घनेरी ॥
ठाकुर पुस्तक दिय चलि आई। संत समाजहि बजी बधाई ॥

पुनि प्रियदास तीर्थहित गवने। कछु दिन महँ आये तेहि भवने॥
कह्यो संत तब सब कर जोरी। भक्तमाल बांचहु सुख बोरी॥
प्रियादास तब विस्मय कीन्ह्यो। कथा प्रबंध राखि कहँ दीन्ह्यो॥
प्रभुमंदिर ते वचन प्रकासा। कथा प्रबंध लग्यो रैदासा॥
प्रियादास कह को यह भाष्यो। उत्तर कोउ न देन अभिलाष्यो॥
सो वाणी हरिकी पहिचानी। जय जयकार कियो सुख मानी॥
करि समाप्त पुनि भक्तन माला। प्रियादास ध्यावत नँदलाला॥
वृंदाविपिन विनोदित आये। तहँ सब संतन शीश नवाये॥
दोहा–तहँ यदुपतिपदकंज महँ, मन करि अमल मिलिंद॥
चढ़ि विमान गोलोकको, भयो तुरत वासिंद॥ १८॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांभक्तमालकलियुगखंडेउत्त०विंशोध्यायः॥

अथ केवलदासकी कथा॥

दोहा–केवलदास कथा कहौं, श्रोता सुनहु सुहाय॥
जासु दया वारिध विशद, पारपाय को जाय॥ १॥
केवलदास संत यक रहेऊ। तीरथ गवन करन चित चहेऊ॥
मारग महँ यक मिल्यो किसाना। वृषभ लिये बहु कियो पयाना॥
सो वृषभै मारयो यक लाठी। कछुदाया नहिं कियो कुपाठी॥
उतै बैलके लग्यो प्रहारा। लखि केवल गयो खाय पछारा॥
देखत दौरि सकल जन आये। पूछन लागे कौन सताये॥
केवल कह्यो हन्यो वृष काहीं। लाठी लगी पीठि मम माहीं॥
केवल पीठि लखे जन जबहीं। लाठी उपटी देखे तबहीं॥
धन्य २ अचरज सब माने। दयारूप तिनको जिय जाने॥
वृषभै लखत दया अधिकाई। सो प्रहार उपट्यो तनुआई॥
वृषभै भई न तनको पीड़ा। दया मानि लखि माने व्रीडा॥
देखि दशा यह उहै किसाना। त्राहित्राहि करि अतिहिं डेराना

केवल चरण गिरचो उत धाई । करहु नाथ अपराध क्षमाई ॥
दोहा—केवलदास किषान कृत, कछु न गन्यो अपराध ।
वसहि जासु हिय असि दया, तेहि यमकी नहिं बाध १
इति श्रीरामरसिकावल्यांभक्तमालकलियुगखंडेएकविंशोऽध्यायः २१ ॥

अथ चरणदासकी कथा ॥

दोहा—अब हुलास भरि कहत हौं, चरणदास इतिहास ।
सुनतहि रमा निवासमें, अचल होत विश्वास ॥ १ ॥
सो अनन्य हरिको जन ठयऊ । संतन भेद भाव नहिं भयऊ ॥
संतनको पूजन नित करहीं । धूप दीप चंदन नित धरहीं॥
संतनको नैवेद्य लगावै । तब आपहु परसादी पावै ॥
पंगु संत यक समय निहारा । घसिलत मम महँ जात सिधारा॥
दौरि ताहि निज आश्रम ल्याये । करि पूजन अति आनँद छाये॥
करत परश भे सुंदर पाऊ । रेंगन लग्यो साधु भरि चाऊ ॥
चलत चरण सो तीरथ गयऊ । चरणदास यश जग महँ छयऊ
श्रोता देखहु संत प्रभाऊ । परशत चरण पंगु चल पाऊ ॥
यहि विधि चरणदास हरि दासा। बहुत काल लगि कियो विलासा
अंत समय जब तज्यो शरीरा । तब पठयो पार्षद रघुवीरा ॥
तिनको प्रगव्यो गमन प्रकासा। जन प्रत्यक्ष यह लखेतमासा॥
निरखि तासु दुख भये दुखारी । लगे चरण चापन सुखकारी॥
दोहा—चरणदास वैकुंठको, गवन कियो यहि भांति ॥
बाल काल ते अंत लगि, सेयो संत जमाति ॥ २ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेद्वाविंशोऽध्यायः॥ २२ ॥

अथ हठीदासकी कथा ॥

दोहा—हठीदासकी कहत हौं, कथा मोदकी धाम ।
जा मुख ते निकस्यो सदा, एक रामको नाम ॥ १ ॥

भोजन पान शयन मग जाता । वागत बैठत सांझ प्रभाता ॥
खेलत हँसत रुदत दुख सुखमें । राम नाम निकसत नित मुखमें
जब जब मुखते वचन बखाना । राम भाषि भाषै पुनि आना॥
यही परचो हठ हठी दासको ।राम विश्वास निराश आशको॥
एक समय कहु रामत माहीं । परचो अकेल रह्यो कोउ नाहीं॥
लागी प्यास महादुख लहेऊ । राम कहनको कोउ नहिं रहेऊ॥
तृषावंत बीतत दिन भयऊ । अपनो नेम न त्यागत भयऊ॥
परचो रामको संकट भारी । आये तहाँ विप्र तनु धारी ॥
तिनहि देखि बोल्यो मुख रामा । सोऊ कह्यो रामको नामा ॥
हठीदास कीन्ह्यो जलपाना । तब ब्राह्मण भो अंतर्द्धाना ॥
यही नेमको नाम कहावै । अस निरवाहै सो गति पावै ॥
नेम निवाहक हैं रघुवीरा । सोई हरैं संतकी पीरा ॥

दोहा—हठीदासके नेम कस, कौन करै जग नेम ॥
हरिको तहँ प्रगटन परचो,जानि दासको प्रेम ॥२॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

अथ नारायणदासकी कथा ॥

दोहा—अब वरणों मैं चरित जो,किय नारायणदास ।
कियो भावना ध्यान में, सो प्रगटचो अयास ॥

छंद—सो कियो संतन प्रीति परम प्रतीति पद रजशिरधरचो
इक समय बदरी वन गयो वन मध्य झूला तहँ परचो
लखि भीर मनुजनकी तहाँ नहिंकढ़नकोअवसरलह्यो
यहि पारमें तब बैठि कीन्ह्यो भावना नहिं कछु कह्यो॥
द्वै दंडमें नयनन उघारचो भये झूला पारहैं ॥
यह देखि अचरज जानि यात्री कियो नति बहु वारहैं॥

पुनि गये वदरीवन विलोक्यो [illegible] नरनारायण ॥
कछु कालवासि करि योग त्याग्यो तनु पढ़तरामायणै॥
दोहा—नारायणमें प्रेम करि,नारायण की आस ।
नारायणके धाम गो, नारायणको दास ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे चतुर्विंशोध्यायः २४ ॥

अथ सूरदासकी कथा ॥

दोहा—वरणों सूरजदास को, अव सुंदर इतिहास ।
रवि मंडलमें राम को, कियो ध्यान सहुलास ॥
सूरजदास अनन्य उपासी । पूजत रविमंडल सुखरासी ॥
विन रवि मंडल दर्शन पाये । कियो न पान अन्न नहिं खाये
यहि विधि बीतिगयो बहु काला। विचरै जग जन करत निहाला
एक समय भादोंके मासा । घेर्‌यो वनमंडल आकासा ॥
भई वृष्टि कछु वरणि न जाई । रविमंडल नहिं पर्‌यो दिखाई॥
तेहि दिन जानेसंत जमाती । आजु करौं भोजन केहिं भांती ॥
सूरजदास उठ्यो तव आसू । लग्यो करन पूजन सहुलासू ॥
ताकर नेम जानि भगवाना । प्रगटायो परभाव महाना ॥
फूटि गयो घनमंडल घोरा । रविप्रकाश प्रगट्यो चहुँ ओरा॥
लखि रविमंडल सूरजदासा । भोजन कीन्ह्यो पूरितआसा॥
अचरज सकल संतजन माने । वंदे वार वार सुखसाने ॥
यहि विधि जवलों रह्यो शरीरा । तवलों नेम निवाह्यो धीरा ॥
दोहा—ऐसे सूरजदास के,चरित विचित्र अनेक ।
कौन भांति वर्णन करौं, दयो दई मुखएक ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांभक्तमालकलियुगखंडेपंचविंशोऽध्यायः २५॥

अथ रंगदासकी कथा ॥

दोहा–रंगदास इतिहास अब, श्रोता सुनहु सुजान ।
वणिक जात के सो रहे, ज्ञान विज्ञान अयान ॥ १ ॥

एक समय गमने इक ग्रामा । व्यापारी देख्यो इक ठामा ॥
बैठि गोनि धृतमोतिन माला । तेहि ढिग इक यमदूत कराला
रंगदास चीन्ह्यो तेहि देखी । यह चाकर है मोर विशेखी ॥
पूछ्यो ताते तुम कहँ आये । सो कह अबहीं देत बताये ॥
बैलसींग सो गयो समाई । बैल हन्यो व्यापारी धाई ॥
पुनि यमदूत कह्यो असि वानी । धन जोर्‍यो यह भयो न दानी
तुमहूं करौ न पर उपकारा । होई यही हेवाल तुम्हारा ॥
तबते रंगदास भय मानी । संपति त्यागि भये विज्ञानी ॥
एक समय तिनके सुत काहीं । लाग्यो प्रेत तज्यो तेहिं नाहीं॥
रंगदास इक समय कुमारा । अपने संग निशा महँ पारा ॥
तेहि दिन मारन प्रेत सिधार्‍यो । रंगदासको लखिहिय हार्‍यो ॥
साधु दरश महिमा प्रगटानी । मांग्यो मुक्तिसो मानि गलानी॥

दोहा–तेहि तनु निज पद जलछिरकि,कानन नाम सुनाय ।
तार्‍यो ताहिं तुरंत हीं, रंगदासहरषाय ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडे उत्तरार्द्धेषड्विंशोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथ षोडशभक्तकी कथा ॥

दोहा–षोडश भक्त चरित्र मैं,वरणों सहित अनंद ॥
जाहि सुनत श्रद्धा सहित, होत सुमति मतिमंद ॥१॥

पुरुषादासजी, पृथुदास, श्रीपद्मनाभ, गोपालदास, टेकदास, टीलादास, गदाधर, देवादास, कल्याणदास, गंगादास, अरु उनकेस्त्री, विष्णुदास, कान्हरदास, रंगदास, चन्दनदास,

तामें प्रमाण नाभाजी की छप्पयको ॥

(पयहारी परसाद ते शिष्य सबै भये पार कर)

षोडश भक्त अनन्य उपासी। पयहारीके शिष्य सुपासी ॥
एक समय बदरीवन काहीं। गये सकल संतन सँग माहीं॥
करि दर्शन लौटे सब संता। मारग श्रमित भये अत्यंता ॥
रहे एक पुर ताके नेरे। इक वट वृक्ष न तहँ बहुतेरे ॥
वट तर निकट कूप इक रहेऊ। तेहिं निवास हित संतन चहेऊ॥
तेहि वट महँ सो रहसै प्रेता। राति वसै निज नारि समेता ॥
तेहि वट तरु तर रज अधिकाई। आधी निशि आँधी अति आई॥
परी संत रज वट तरु माहीं। प्रेतन तनु गै छाइ तहाँहीं ॥
साधु चरण रज प्रगट प्रभाऊ। प्रेतनको भो शुद्ध स्वभाऊ ॥
षोडशशत जे प्रेत महाना। चढ़ि विमान किय हरिपुर जाना
विन श्रद्धा सत पद रज पाई। प्रेत गये हरि लोक सिधाई ॥
श्रद्धायुत संतन पद रेनू। धरै ताहि हरिपुर महँ चेनू ॥

दोहा—एक समय पुनि षोडशौ,ते हरिभक्त सुजान ॥
संभर के मेला गये, भइ तहँ भीर महान ॥ २ ॥

परी नदी इक गहिरी धारै। लैपैसा केवटहु उतारै ॥
नाव चढ़े षोडश हरिदासा। औरहु मनुज पारकी आसा ॥
मध्य धार नौका जब आई। अति गंभीर नीर भैदाई ॥
केवट पैसा यांचन कीने। षोडश भक्त रहे धन हीने ॥
जब पैसा केवट नहिं पायो। तब कोपित अस वचन सुनायो।
मैंलौटाय नाव अब जैहौं। तुम को अब नाहिं पार करैहौं॥
संत कह्यो लोटत श्रम होई। इतहीं उथल लही सब कोई ॥
अस कहि सोरहौ संत उदारा। कूदि परे तहँ मध्य दहारा ॥
तेहि थल प्रगट भयो बड़ रेता। केवट सब ह्वैगये अचेता ॥

गिरचो संतके चरणन जाई। कह्यो नाव कैसे चलि जाई॥
नौका चढ़ौ संत भगवंता। मैं करिदेहौं पार तुरंता॥
चढ़े संत पुनि नावहि माहीं। तब गँभीर जल भये तहाँहीं॥

दोहा-पार गये जब संत सब, छायो जयजयकार॥
तहँको नृप अचरज सुन्यो,आयो तहँ बिन वार॥३॥
संतन को लैजाय धर, कीन्ह्यो अति सतकार॥
साधुनके परभाव ते, गवन्यो राम अगार॥ ४॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेसप्तविंशोऽध्यायः॥ २७॥

अथ नामदेवकी कथा॥

छप्पय-अब वरणौं मैं नामदेव इतिहास मनोहर॥
जासु प्रतिज्ञा सत्य कियो जगमें विश्वंभर॥
जैसे श्रीप्रहलाद प्रतिज्ञा सतयुग राख्यो॥
नामदेवके हाथ नाथ गोरस पुनि चाख्यो॥
पुनि बादशाह ढिग जायकै मृतक गाइको ज्याय दिय
यमुनादहतेबहुरतनमयबहुपर्यंकनिकासिलिय॥ १॥
हरिमंदिर को पूर्व द्वार पश्चिम करि दीन्ह्यो॥
जासु भवन पंढरीनाथ निज हाथन कीन्ह्यो॥
हरिव्रत एकादशी परीक्षा सबन देखाई॥
कियो चतुर्भुज येक प्रेत यश भयो महाई॥
इक साहु दानमानी रह्यो तासु महामद हरि लियो॥
इतिहास सकल विश्वास हित मैं अब वर्णन करि दियो

दोहा-पंढ़रपुर दरजी रह्यो, वामदेव जेहि नाम।
बड़ो भक्त भगवानको, तासु सुता इक आम॥ १॥

मरचो तासु पति कौनेहु काला। वामदेव कह वचन विशाला॥

बेटी भक्ति करै हरि केरी । उभय लोक सुधरै बिन देरी ॥
करन लगी हरि भजन कुमारी । यक दिन तासु परोसिन नारी॥
गोद लिये निज सुत कहँ आई । वामदेव कन्या तब धाई ॥
सो सुत को लीन्ह्यो निज गोदू । सुत वासना भई भरि मोदू ॥
हे हरि होत जो पुत्र हमारे । तौ खेलाय लहत्यूं सुख भारे॥
तासु मनोरथ पूरण हेतू । भयो गर्भ महँ कृपानिकेतू ॥
विधवा गर्भ बढ़्यो अपवादा । पितु पूछ्यो तेहि पाय विषादा॥
सुता शपथ करि कह जस भयऊ । राति मुकुंद स्वप्न तेहिं दयऊ
वामदेव तुव सुता अदोषा । मोहिं जानहु गर्भहि तजि रोषा ॥
तू जनि करु अपयश की संका । पुत्र भये नहिं होय कलंका॥
बामदेव तब शंक विहाई । सेवन लग्यो सुतैं सुख छाई ॥

दोहा—कछुक काल महँ सुत भयो, वामदेव सुत पाय ।
नामदेव तेहि नाम दिय, बहु धन दीन लुटाय ॥१॥

पांच वर्ष जब बालक भयऊ । तबहीं ते हरिपद चित दयऊ॥
खपरा पाथर घर महँ ल्याई । तिनको यदुपति मूर्ति बनाई॥
पूजै तिनको आँशु बहाई । घंट बजावै भोग लगाई ॥
पुनि माता महँ वामदेव सों । कह्यो वचन अस नामदेवसों॥
जो पूजा करियत तुम नाना । सो मोहिं देहु उछाह महाना ॥
नामदेव कह अबै न तोसों । बनिहै पूजन बनै जो मोसों ॥
दूध औटि तेहि सिता मिलाऊं । मैं नारायण भोग लगाऊं ॥
नामदेव कह अधिक बनैगी । करु विश्वास नहिं कछु
बामदेव तब हँसि अस गायो । यक पूजन मैं देत बतायो ॥
मैं हरिको नित दूध खवाऊं । मैंहूं तासु प्रसादी पाऊं ॥
मैं तौ जात अहौं इक ग्रामा । तू खवाइयो प्रथमहि यामा ॥
अस कहि वामदेव गो ग्रामै । नामदेव कीन्ह्यो अस कामै ॥

दोहा—दूध औंटि मिसरी मिलै, हरि आगे धरि दीन।
घंट बजाय लगाय पट, आप बैठ सुख भीन॥ २॥
कछुक काल महँ पुनि पट खोला। वैसहि दूध लख्यो तब बोला
दूध रतीभर कियो न पाना। देहै मोहिं दोष अब नाना॥
अस कहि पुनि २ घंट बजावै। पियो २ पुनि २ अस गावै॥
यहि विधि बीति गयो दिन राती।दूसर दिन बीत्यो यहि भाँती॥
आपहु अन्न दियो मुख नाहीं। दुइ उपास परिगे घर माहीं॥
तिसरे दिन बैठ्यो लै छूरी। कह्यो नाथ सों दुख भरि भूरी॥
नाना आजु आइ घर मोरा। मोहिं कहैगो वचन कठोरा॥
ठाकुर को नहिं दूध पियाये। तैं पूजन केहिं भाँति नशाये॥
तौ मैं ताहि ज्वाब का देहौं। ताते तुम्हरे पर मरि जैहौं॥
अस कहि काटन लाग्यो कंठा। प्रगटे तुरत धनी वैकुंठा॥
तीनिहुँ दिन कर किय पय पाना। नामदेव तब वचन बखाना॥
सिगरो दूध तुम्हीं पी लेहो। की कुछ हमैं पान हित देहो॥
दोहा—अस कहि प्रभुको कर गह्यो, तब यदुपति मुसकाय।
नामदेवको हाथ निज, दीन्ह्यो दूध पियाय॥ ३॥
पुनि जब वामदेव घर आये। नामदेव तब तुरतहिं धाये॥
वामदेव ते वचन बखाने। तुम बिन ठाकुर बहुत उबाने॥
गोरस पियो दिवस दुइ नाहीं। दुइ उपास परिगे हमकाहीं॥
तिसरे दिन कीन्ह्यो पय पाना। मोहूं को दीन्ह्यो भगवाना॥
वामदेव सचकित ह्वै गयऊ। नाती सों भाषत अस भयऊ॥
कोउ है यह बातन कर साखी। नामदेव कह तब मुख भाखी॥
का करिहौ साखी तुम नाना। बैठहु मम ढिग करि स्नाना॥
नामदेव ढिग वामदेव तब। बैठत भो अचरज माने सब॥
नामदेव तब घंट बजाई। कहत भयो पीजै प्रभु आई॥

नहिं प्रगटे नानाके आगे । नामदेव तब कह दुख पागे ॥
मोरि बात तू खोय दई है । अबै न छूरी मोरि गई है ॥
तब प्रभु वामदेव के आगे । प्रगट भये पय पीवन लागे ॥

दोहा—वामदेव चरणन परचो,कीन्ह्यो जयजयकार ॥
सत्य भक्त वत्सल अहैं, श्रीवसुदेव कुमार ॥ ४ ॥

वामदेव कछु कालहि माहीं । तनु तजि गवन्यो गोपुर काहीं॥
नामदेव जग विचरन लागे । यदुपति भक्त जगत यश जागे॥
बादशाह सुनि नामदेव यश । बोलवायो दिल्लीको जस तस ॥
शाह कह्यो अयान की नाई । करामात देखरावै साई ॥
नामदेव कह मैं नहिं जानौं । करामात सब रामहिं मानौं ॥
शाह कह्यो बिन कछुक देखाये। जान न पैहौ कत इत आये ॥
नामदेव कह काह देखावहु । शाह कह्यो यह गाय जियावहु॥
मरी रही सुरभी इक तहवाँ । नामदेव बैठे रह जहवाँ ॥
नेसुक लख्यो धेनु की ओरा । उठि बैठी सुरभी तेहि ठोरा ॥
शाह देखि अजमत पग परेऊ । देन लग्यो धन सो नहिं लयऊ॥
तब इक रत्नजटित पर्य्यंका । नामदेव कहँ दिय अकलंका ॥
नामदेव पर्य्यंकहि पाई । तेहि उठवाय यमुन तट आई॥

दोहा—तापर बैठे कछुक दिन, पुनि यमुना महँ डारि ॥
आप भजन करने लगे, हर्ष विषाद विसारि ॥ ५ ॥

दूत दौरिकै शाह पुकारा । सो साईं पर्य्यंक तुम्हारा ॥
दियो डारि दरियाव दहारै । नेवर नीक न कियो विचारै ॥
शाह कह्यो साईं पै जाई । मम शासन यह देहु सुनाई ॥
तस पर्य्यंक रह्यो मम एका । हैं न हमारे भवन अनेका ॥
इक क्षणको दीजै सो हमहीं । हम बनवाय देब पुनि तुमहीं ॥
सुनत शाह शासन सब चेरे । जाय नामदेवहि तिमि टेरे॥

सुनिकै नामदेव मुसकाई। यमुन ओर जोह्यो शिरनाई॥
तब तैसहि पर्य्यंक हजारा। यमुना तट निकसे इकवारा॥
नामदेव कह दूत बोलाई। अपनी होय सो लेहु उठाई॥
यह अचरज लखि धावन धाये। शाहहि सब वृत्तांत सुनाये॥
सुनिकै शाह तहाँ द्रुत आयो। नामदेव चरणन शिरनायो॥
निज अपराध क्षमावन लाग्यो। दिल्लीमहँ राखन अनुराग्यो॥

दोहा—नामदेव तब शाहको, दियो एक पर्य्यंक॥
और यमुन महँ डारिकै, तुरतहिं चले अशंक॥ ६॥

विचरत विचरत पुनि इक ठाऊं। रहै कृष्ण मंदिर इक गाऊं॥
नामदेव आये तेहिं ग्रामा। दर्शन हेतु गये हरिधामा॥
रहे भजन गावत बहु साधू। संत समाज प्रमोद अगाधू॥
भीर देखि पांवरी उतारी। लियो तुरत फेंटा महँ डारी॥
भीतर मंदिरके जब आये। जूता लखि वैष्णव अनखाये॥
धक्का दै तेहि दियो निकारी। नामदेव तब विहँसि सुखारी॥
लैकर झांझ पछीतहि जाई। गावनलागे झांझ बजाई॥
तब तेहिं दिशि भो मंदिर द्वारा। कोलाहल तहँ मच्यो अपारा॥
संत जाय सिगरे शिरनाये। निज अपराध अगाध क्षमाये॥
नामदेव कछु कालहि माहीं। उठिकै गवने निज घर काहीं॥
कछु दिन आय बसे निज भवने। साधु दरश हित पुनि कहुँ गवने॥
इतै भवन महँ लागी आगी। जरी अनेकन वस्तु अदागी॥

दोहा—आगि लागि सुनिकै तुरत, नामदेव तहँ आय॥
रही बची कछु वस्तु जो, सोउ पावक फेंकवाय॥७॥
आप झांझ लै युग करन, नाचन लगे तुरंत॥
यह पद गावत भे हरषि, सकल सुनावत संत॥ ८॥

भजन—अगिनि रूप प्रभु मेरे आजु आये॥

धन्य मेरी भाग्य अस कौन सुख पाये ॥ १ ॥
मेरी घर वस्तु प्रभु सब लै लीन्ह्यो ।
नामदेव को आज धन्य जग कीन्ह्यो ॥ २ ॥

नामदेव जब किय पद गाना । आपहि ते तब अनल बुताना ॥
तब हरि ह्वैकै तुरत कवारी । क्षण महँ छानी दियो सुधारी ॥
नामदेवकी छानी जैसी । तीन लोक महँ रही न तैसी ॥
तब सब ग्राम निवासी आई । नामदेवसों कह शिर नाई ॥
नामदेव तब कह मुसकाई । असि छानी किमि बनै बनाई ॥
तन मन प्राण समर्पण कीन्हे । अस छानी बनती प्रभु चीन्हे ॥
एकादशी रहै इक काला । नामदेव व्रत कियो विशाला ॥
तब हरि विप्ररूप धरि आये । देहु अन्न अस वचन सुनाये ॥
भोजन बिन निकसत मम प्राना । नामदेव तब वचन बखाना ॥
एकादशी आजु है भाई । भोजन देहौं काल्हि मँगाई ॥
ब्राह्मण कह्यो आजुही लैहौं । नातो तुम्हरे पर जिय दैहौं ॥

दोहा—तबहूं नाहिं भोजन दियो, तब द्विज दिन भर बैठि ॥
रातिं द्वार पर मरिगयो, तासु गयो तनु ऐंठि ॥ ९ ॥

यह सुनि सब जन निंदन लागे । नामदेव तब अति दुख पागे ॥
लै द्विजको तनु चिता बनाये । बैठ ताहि पर अनल लगाये ॥
उठि बैठ्यो ब्राह्मण हँसि तबहीं । मनुजन लाग्यो अचरज सबहीं
ब्राह्मण नामदेव सों गायो । लेन परीक्षा मैं इत आयो ॥
अस कहि भो द्विज अंतर्ध्याना । जयजयमाच्यो शोर महाना ॥
एक समय कौनेहु पुर माहीं । भई सुसंत समाज तहांहीं ॥
एकादशी जागरण रैना । करत रहैं सब साधु सचैना ॥
नामदेवहू तहँ चलि आये । भजन करत निशिअर्द्ध बिताये
जब इक संतहि लगी पियासू । नामदेव तब उठि अति आसू ॥

सलिल भरन वापी महँ आयो। तब इक प्रेत रूप दरशायो ॥
महाभयावन लम्बशरीरा। नभ महँ शिरपदमहि अतिजीरा॥
नामदेव जब प्रेतहि पेख्यो। गायो यह पद ईश्वर लेख्यो ॥
भजन—भले विराजे लम्बक नाथ।
धरणिपायँ स्वर्ग लों माथा योजन भरके हाथ।
शिवसनकादिकपार न पावैं अनगनसखाबिराजतसाथ ॥
नामदेवके आपहि स्वामी कीजै मोहिं सनाथ ॥
दोहा—जब यह पद गावत भये, तब वह प्रेत तुरंत।
पाय चतुर्भुज रूप तहँ, भयो विकुंठ वसंत ॥ १० ॥
नामदेव लखि गुनियदुनाथा। नायो तासु चरण निज माथा ॥
पुनि जल भरि तेहि साधु पियायो। भोर भये निज भवनहि आयो
तहाँ कछुक दिन वसत वितायो। नामदेव पंढरपुर आयो ॥
साहूकार तहाँ यक रहेऊ। कोटिध्वजी ख्याति जन कहेऊ
सो इक समय सुवर्ण तुला में। चढ़तो भयो चौथ बहुला में ॥
कनक बांटि सब विप्रन दीन्ह्यो। नामदेव तहँ गवन न कीन्ह्यो॥
नामदेव को साहु बोलायो। जसतसकै सो तहँलों आयो ॥
हेम देन लाग्यो नाहिं लीन्हें। ताहि दान अभिमानी चीन्हें ॥
नामदेव सब कह अधिकाना। तुलसीदल भरि दीजैसोना ॥
अस कहि इक दल लिख्यो रकारा। धरि दीन्ह्यो तेहि तुलामँझारा
साहु कह्यो कत कीजत हांसी। यामें तो नहिं रतिहु तुलासी ॥
नामदेव कह इतनहि लैहौं। इतनेमें संतोषित जैहौं ॥
दोहा—सो तुलसीदल ओर इक, एक ओर कछु सोन।
धरत भये तौलत भये, भयोवरावरसो न ॥ ११ ॥
घर भरकी संपति मँगवाई। एक ओर दिय साहु धराई ॥
सो तुलसीदलको नहिं तूल्यो। कनक सहस मन ऊपर झूल्यो॥

नामदेव तब कह मुसकाई। जौन किये तैं सुकृति महाई ॥
सो कुश जल लै धरु पलरामें। सो तुलसीदल तौल तुलामें ॥
साहु तबै व्रत तीरथ दाना। धर्‍यो तुला महँ वचन प्रमाना
तबहूं तुल्यो न तुलसीदल को। लाग्यो अचरजमनुजसकलको
साहु त्राहि कहि गिर्‍यो चरणमें। नामदेव पद पकरि करनमें ॥
बोल्यो वचन आजु लों मेरो। रह्यो विश्वास दानही केरो ॥
कनक दानहू ते गोदानौ। होत अधिक यह वेद बखानो
पै अब धेनु दान गोदानौ। नाम ते अधिक नाथनहिंमानौं॥
नामदेव तब करि अति दाया। हरिपद प्रीति प्रतीति सिखाया॥
नामदेव भाष्यो पुनि वैना। सुरभी दान छोड़ जग हैना ॥

दोहा–साहु कह्यो गोदान अब, काहे करौ वृथाहिं।
नामदेव इतिहास तब, कह्यो महाजन पाहिं ॥ १२ ॥

एक वणिक कौन्यो पुर ठयऊ। कबहुँन इक वराटिका दयऊ॥
मरन लग्यो तब ताके भाई। बूढ़ि गाय इक दियो देवाई ॥
मरिकै जब यमपुर महँ गयऊ। तब यम चित्रगुप्त सों कहेऊ॥
याके पाप पुण्य करु लेखा। चित्रगुप्त कह पाप अलेखा ॥
मरत समय दिय बूढी गाई। तौने भरि मोहिं सुकृतिदेखाई
ताते द्वै घटिका पर्य्यन्ता। जो चाहै सो लहै तुरन्ता ॥
फेरि नरक है कोटिन वर्षा। वणिकहि तब यम कह्योसहर्षा
द्वै घटिका भरि जो मन होई। तोको गाय देयगी सोई ॥
वणिक गाय ढिग तुरत सिधारा। कह्यो मनोरथ देय हमारा ॥
गाय कह्यो तोसों कहि पाऊं। सो तुरंत तोको दरशाऊं ॥
वणिक कह्योयम गुद महँशृंगा। मातु डारिये यही उमंगा ॥
धाई धेनु तुरत यम ओरा। भाग्यो यम चितवत चहुँओरा॥

दोहा—लियो रपटि सुरभी तुरत, वणिक पूंछ गहि तासु।
पाछे पाछे चलतभो,माने परम हुलासु ॥ १३ ॥
कहुँ न बचेजब गो विधिअयना। सुरभीको वारयो वसुनयना॥
वणिक कह्यो इनहूको तैसो । करु सुरभी मम मानस ऐसो॥
तबहिं धेनु ब्रह्मौ पहँ धाई। करतारहु तब चले पराई॥
यम विरंचि वैकुंठ सिधारे। पाछे सुरभी वणिक निहारे॥
इतने में घटिका द्वै बीती। धाये दूत देत अति भीती॥
पकरयो वणिक डारि गलफांसी। तेहिं लै चले देत दुखरासी॥
वणिक तबहिं असकियो पुकारा। त्राहि त्राहि वसुदेवकुमारा॥
वेद पुराण भाषि अस दयऊ। तुव पुर आइ कोउ नहिं गयऊ
जो अब यम भट मोहिं लैजैहैं। वेद पुराण मृषा सब ह्वै हैं॥
यह सुनि हरि पार्षद द्रुत धाई। वणिकहि लीन्ह्यो तुरतछुड़ाई॥
तेहि विकुंठ महँ दियो निवासा। मिटिगै सकल वणिककी त्रासा॥
अस प्रभाव जानहु गोदानै। पै नाहिं अधिक नाम ते मानै॥
दोहा—अधिक जानियो नाम जे, नामी ते तुम साहु।
तासु कहौं इतिहास मैं, सुनिये सहित उछाहु ॥१४॥
एक समय नारद ऋषिराई। पारिजातको फूलहि ल्याई॥
दियो रुक्मिणीके धरि शीशा। बैठि रहे जहँ यदुकुल ईशा॥
खबरि सत्यभामा यह पाई। बैठि रही करि मान महाई॥
हरि आये तब कह्यो रिसाई। दियो फूल निवसौ तहँ जाई॥
हरिकह पारिजात तरु पाई। तेरे घर महँ देहुँ लगाई॥
अस कहि जाय स्वर्ग महँ नाथा। जीत्यो सुरन गहे धनु हाथा॥
पारिजात को पादप ल्याई। दिय सतिभामा भवनलगाई॥
पुनि नारद सतिभामा भवनै। कौतुक करन हेतु किय गवनै
करि प्रणाम सतिभामा बोली। यह उपाय दीजै मोहिं खोली

जन्म जन्म मम पति हरि होवैं। हम क्षणभरि विछोहनहिंजोवैं
नारद कह्यो देतहै जोई। पावत जन्म जन्म है सोई॥
ताते करहु कृष्ण को दाने। पैहौ जन्म जन्म भगवाने॥
दोहा-तब सतिभामा कृष्णको, नारदको दिय दान॥
हरिको नारद ले चले, चेरो करत बखान॥ १५॥
जानि विछोह तुरत सतिभामा। नारदसों बोली दुख छामा॥
अबहीं करहु विछोह ऋषीशा। उलटो मोहिं दान फल दीशा॥
नारद कह्यो सत्य तू गावै। कारो दानहि कौन पचावै॥
इनको तोलि रत्न मोहिं देहू। जन्म जन्म अपनो पति लेहू॥
तब पति काहँ तुला बैठाई। एक ओर धरि मणि समुदाई॥
तौलन लगी कृष्ण को जबहीं। रत्न बराबर भे नहिं तबहीं॥
तबहिं सदनकी सम्पति ल्याई। एक ओर दिय तुला चढ़ाई॥
भई बराबर हरिके नाहीं। रुक्मिणि आई तुरत तहांहीं॥
लीन्ह्यो सम्पति सकल उतारी। एक रत्न अपने कर धारी॥
कृष्ण युगल अक्षर लिखितामें। धरि दीन्ह्यो तहँ तुरत तुला में॥
तब हरिको पलरा उठि गयऊ। पलरा नाम केर महि ठयऊ॥
ताते नामी ते गुर नामा। जानहु सत्य साहु मतिधामा॥
दोहा-नामदेव कहि साहु सों, यह अनुपम इतिहास॥
भक्ति रीति सिखवाय कै, मेटि दियो भवत्रास॥१६॥
नामदेवके भांति यह, जानहु चरित अनेक॥
मैं कहँ लगि वर्णन करौं, मुख में रसना एक॥१७॥
इति श्रीरामरसिकावल्यां कलियुगखंडेअष्टाविंशोध्यायः॥ २८ ॥

अथ जयदेवकी कथा॥

दोहा-अब वरणों जय देव को, चरित परम कमनीय॥
जासु काव्य कविकुल कमल, भयो भानु रमणीय॥१॥

तीनि जन्म लगि हरि रति रीती। करत भयो यदुनाथ प्रतीती ॥
गाथा प्रथम जन्म की गाऊं। श्रोता श्रवण सुधार सुनाऊं ॥
देश एक कर्नाटक नामा। तहाँ रह्यो मथुरा इक ग्रामा ॥
तहँ यक वणिक धनिकअति ठयऊ।सो यक गणिकाके वश भयऊ
रोजहि जात तासु घर माहीं। क्षिण भर नहिं वियोग सहिजाहीं॥
एक समय रह भादँव मासा। अंधकार लेपित दश आसा ॥
वर्षत रहे जलद जल धारा। नदी नार तजि दिये करारा ॥
अर्द्ध निशा अस बीती जबहीं। वणिक चल्यो गणिका गृह तबहीं
गणिका भवन रह्यो सरि पारा। पैरत पार भयो सरि धारा ॥
गयो वारातिय जबहिं दुवारे। रहे बंद तहँ भवन केवारे ॥
तब पछीत ह्वै सो चढ़ि गयऊ। झूलत तहँ भुजंग इक रहेऊ ॥
तेहि रज्जू भ्रम निज कर धारी। गवन्यो गणिका ऊंचि अटारी ॥

दोहा—ताहि जगायो नाम कहि, गणिका लखिकै ताहिं ॥
अति अचरज मानत भई, किमि आयो घर माहिं १॥

वणिक कह्यो आपनो हवाला। तब निंदन लागी तेहि काला ॥
जस तुम कियो प्रीति मोहिं माहीं। तस भजत्यो जो हरिपद काहीं॥
दोऊ लोक सुधरि तब जाते। कबहुँ न यमके भट पछियाते॥
वणिक कह्यो को हरि प्रभु भारी। मोहिं बताउ दुराउ न प्यारी ॥
तब तेहिं भवन माहिं इक ठामा। लग्यो चित्र सुंदर घनश्यामा ॥
तेहि बताय गणिका अस गायो। येई प्रभु यदुनाथ सोहायो ॥
वणिक ग्लानि मानी मन भारी। लियो तुरत तसबीर उतारी ॥
सो पट लै गवन्यो सरि तीरा। बैठ्यो धरा ध्यान धरि धीरा ॥
कहै चित्रसों अहै अभीती। प्रगटहु नाथ मानि परतीती ॥
बीते कहत ताहि दिन सातै। बिना अन्न बिन जल बतरातै॥
लगी रटन मुख प्रगटहु नाथा। रह्यो नताके कोउ तहँ साथा॥

तन मन तासु जग्यो हरि माहीं । दूसर सुरति रही तेहि नाहीं ॥
दोहा–सतयें दिवस विकुंठ महँ, संकट गो हरिकाहिं ।
प्रगट भये तसवीर ते, श्रीयदुनाथ तहाँहिं ॥ २ ॥
कह्यो वणिकसों प्रभु यहि रीती । प्रगट्यो मैं लखि तोर प्रतीती ॥
ह्वैहो द्विज तजि वणिक शरीरा । मम प्रसाद ते बुद्धि गँभीरा ॥
करुणामृत रचिहौ जब ग्रंथा । तब पैहौ विकुंठकी पंथा ॥
ह्वैगे शुद्ध बुद्धि हरिदेखे । वणिक कह्यो तब मोद अलेखे ॥
दीजै नाथ मोहिं वरदाना । जब लगि चहौं करौं गुणगाना ॥
हरि कह तीनि जन्म लगि प्यारे । गावहु सुंदर सुयश हमारे ॥
यही जन्म महँ ग्रंथ बनायो । नाम शृंगार समुद्र धरायो ॥
द्वितिय जन्म करुणामृत करहू । ते सुनाय पापिन उद्धरहू ॥
तृतिय जन्म रचि गीतगोविंदा । ह्वैहौ गोपुर केर वसिंदा ॥
अस कहि भे हरि अंतर्ध्याना । वणिक लग्यो विचरन थल नाना ॥
तब शृंगार समुद्र सु ग्रंथा । विरचो जामें हरि रति पंथा ॥
तजो शरीर पाय कछु काला । भयो जन्म द्विज भवन विशाला ॥
दोहा–बाल कालते करत भो, हरिमें अति अनुराग ।
बाल कालसे कालसे, किय जगजालहिं त्याग ॥ ३ ॥
विचरन लाग्यो जगत अभीता । करत अपावन परम पुनीता ॥
रच्यो ग्रंथ करुणामृत नीको । जो साहित्य शास्त्रको टीको ॥
बहुत काल लगि धरचो शरीरा । गायो कृष्ण सुयश मतिधीरा ॥
तज्यो शरीर जन्म जब पायो । तब जयदेव नाम कहवायो ॥
श्रीजयदेव चक्रवर्ती कवि । रचो गीतगोविंद ग्रंथ रवि ॥
जो कोउ अष्टपदी मुख गावै । राधारमण चरण रति पावै ॥
संत कुल भाना । तासु कथा अब करौं बखाना ॥
किंदु बिल्व नामक इक ग्रामा । तामें जन्म लियो मति धामा ॥

बालकाल ते हरि अनुरागी । भयो विरक्त विषय रस त्यागी॥
जेहि तरु तरे नींद निशि गहही । तेहिं तरु तरे बहुरि नहिं रहही
गुदरी वपुष कमंडलु हाथा । भजन करै कोउ रहै न साथा॥
काशीमें कोउ इक द्विज भयऊ । जगन्नाथ दर्शन हित गयऊ॥
दोहा—विनय कियो जगदीश सों, देहु नाथ संतान ।
सो मैं तुमहीं अर्पिहौं, ग्रहण कियो भगवान ॥ ४ ॥
अस कहि जबै बहुरि घर आयो । कन्या जन्म नारि महँ पायो॥
भई वर्ष दश जबै कुमारी । सुता सहित द्विज पुरी सिधारी॥
प्रभु सों विनय कियो करजोरी । लेहु समर्पित दुहिता मोरी ॥
अस कहि द्विज डेरा महँ आयो । प्रभु मंडन कहँ निशि सपनायो।
कह्यो जाय द्विज काहँ बुझाई । कन्याको तुरंत लैजाई ॥
किंदुबिल्व नामक इक ग्रामा । तहँ जयदेव बसै मतिधामा ॥
मोर रूप तेहिं देय कुमारी । अनुचित उचित न नेकु विचारी॥
द्विज दुहिता ले तुरतहिं गयऊ । किंदुबिल्व महँ आवत भयऊ
लख्यो वृक्ष तर श्रीजयदेवै । गाय सुयश करते हरि सेवै ॥
द्विज कह लीजै मोरि कुमारी । जगन्नाथ शासन शिरधारी ॥
बोले तब जयदेव प्रवीन । तू बावरो अहै मतिहीना ॥
नहिं गृह नहिं धन नहिं तनु जोरा । नाहिं विवाह मनोरथ मोरा॥
दोहा—जगदीशैको जायकै, देहु सुता सविचार ।
नारि लालसा उनहिं के, तिय युग अष्ट हजार ॥५॥
द्विज जयदेव वचन नहिं मान्यो ।कन्यासों पुनि वचन बखान्यो॥
हम दै चुके तोरि पति येई । जन्म बितावहु इन कहँ सेई ॥
अस कहि द्विज गवन्यो घर काहीं । बोले तब जयदेव तहाँहीं ॥
को सुख लहि इत रहहु कुमारी । मैं तो जन्महि केर भिखारी ॥
कन्या कह्यो होय जो चाहै । या तनुके तुमहीं हो नाहै ॥

तहँ वसि कुटी एक रचि लीन्ह्यो। पद्मावती नाम तेहि दीन्ह्यो ॥
तहँ यदुपतिकी मूर्ति पधारी । सेवा पूजा करै सुखारी ॥
गीतगोविंद बनावन लागे । यदुपति चरण चारु अनुरागे ॥
रचत रचत जब यह पद आयो (स्मरगरलखंडनं मम शिरसि-
मंडनं धेहिपदपल्लवमुदारं) । तब जैदेव सोच अधिकायो ॥
श्रीवृषभानु सुत पद काहीं । अनुचित कहव कृष्ण शिरमाहीं॥
पै आवे सोइ पद नाहिं आना । तब उठि गये करन स्नाना ॥
तब जयदेव स्वरूपहि धारी । आये हरि लै पुस्तक प्यारी ॥

दोहा—पुस्तकमें लिखि पद सोई, जात भये यदुराय ।
खोल्यो पुस्तक आयकै, श्रीजयदेवनहाय ॥ ६ ॥

हरिकर अक्षर लिखित विलोकी। तियसों कहत भये अति शोकी
को खोल्यो मम पुस्तक आई । बोली वाम वचन मुसकाई ॥
तुमहीं खोल्यो पुस्तक आई । मज्जन हित पुनि गये सिधाई॥
तब जयदेव जानि प्रभु काहीं । कियो तियहि दंडवत तहाँहीं॥
जन्म प्रयंत सेव हम कीन्ह्यो । नाथ आय दर्शन तोहिं दीन्ह्यो॥
गीतगोविंद समग्र बनायो । हरि प्रभाव जगमाहँ चलायो ॥
प्रचरयो जगत गीतगोविंदा । गावैं उभय सुमति मतिमंदा ॥
श्रीजगदीश पुरी चहूँ ओरा । गावहिं नारि पुरुष सब ठोरा ॥
रहै पुरी को राजा जोऊ । गीतगोविंद रच्यो इक सोऊ॥
कह्यो पंडितन याहि चलाओ । नहिं जयदेव भणित मुख गाओ
पंडित कह्यो चली यह नाहीं । हरिदाया जयदेवहि माहीं ॥
राजा और पंडितन केरो । भयो पुरीमहँ वाद घनेरो ॥

दोहा—यह सिद्धांत परयो तहाँ, दोउ पुस्तक हरि पास ।
धरि दीजै हरि उर सोई, मिलै सो होय प्रकास ॥७॥

दोउ पुस्तक धरि नाथ अगारा । काढ़ि आये करि बंद किवाँरा ॥

दंड द्वैक महँ खोलि कपाटा। लखे जाय सब अनुपम ठाटा ॥
कृत जयदेव गीतगोविंदा। धरयो आपने उरहि मुकुंदा ॥
गीतगोविंद रचित नृप केरो। दूरी परो रहै सब हेरो ॥
तब राजा मन मानि गलानी। बूड़न चल्यो सिंधु दुख मानी॥
भइ अकाश वाणी नृप काहीं। मति बूड़ै संशय कछु नाहीं ॥
द्वादश सर्गन प्रति श्लोका। इक इक रचहु तजहु मनशोका॥
ते द्वादश श्लोक तिहारे। चलिहैं तीनिउँ लोक उदारे ॥
तब राजा अति आनँद पायो। शुभद्वादश श्लोक बनायो ॥
सर्ग सर्ग प्रति यक श्लोकू। राजा के जानहु माते ओकू ॥
एक समय सो पुरी मँझारी। मालिन की यक रही कुमारी॥
सो टोरत कहुँ भाटन काहीं। गावै यह पद निज सुख माहीं॥

पद—धीरसमीरे यमुनातीरे वसति वने वनमाली।

दोहा—तेहि निशिके परभातमें, पंडा खोलि किवाँर।
लखत भये जगदीशके, फारे वसन अपार ॥ ८ ॥

तब राजा को जाय जनायो। राजहु द्रुतहिं धाय तहँ आयो॥
अचरज मानि भूप अरु पंडा। धरन कियो दुख जानि अखंडा
स्वप्न माहँ तब कह हरिदेवा। गीतगोविंद जो किय जयदेवा॥
सो मोहिं प्राणनते अति प्यारा। जो गावै घर पंथ बगारा ॥
ताके पीछे पीछे वागौं। ताहि सुनन को अति अनुरागौं॥
है एक मालिनि केरि कुमारी। भाटन तोरत गावत प्यारी ॥
धीर समीरे यह पद गायो। ताहि सुनन हित मैं तहँ धायो॥
भाटन कांटन सब पटफाटे। कोउ वारण हित ताहि न डाटे॥
निशि पर्य्यन्त तासु सँगवाग्यो। गीतगोविंद सुनत अनुराग्यो ॥
यह हरिको शासन सुनि धाई। पंडा कह्यो भूप सों जाई ॥
भूपति सुनि माली कन्याको। बोल्यो तुरत पठै शिविका को॥

तेहि पद परशि धन्य मुख गाई । पुरी मध्य डौंडी पिटवाई ॥

दोहा—गावै गीतगोविंद जो, सो सुंदर थल माहिं ।
गीतगोविंदहि सुनन को,यदुपति हठि तहँ जाहिं॥९॥

यह हवाल एक मुगुल सुन्यो जब। गीतगोविंद पढ़नलाग्यो तब॥
पढ़िकै गीतगोविंद मलेच्छा । वागन लाग्यो पुरी यथेच्छा ॥
चढ़ो तुरंग यही पद गावै । बहुरि बहुरि पाछे टक लावै ॥

(पद) संचरदधरसुधामधुरध्वनिमुखरितमोहनवंशम् ॥

हरि आगे आगे तेहि केरे । वागत फिरै न सो दृग हेरे ॥
पीछे लखै लखै हरि नाहीं । तब उपजी संशय उर माहीं ॥
भ्रम्यो तीनि दिन सो पद गायो । नहिं हरिको दर्शन सो पायो॥
चौथे दिवस बंद किय गाना । तब आरत हित भे भगवाना ॥
अंतर्ध्यान भये हरि जबहीं । मर्यो तुरंत तुरंगहि तबहीं ॥
मुगुल महामन मानि गलानी । पीछे ओर नयन टक तानी ॥
मुर्च्छितह्वै महि में गिरिपरेऊ । तब हरि दौरि पकरि कर लयऊ
हरिकह विह्वल कत मुगुलेशा । हरिको जोहि कह्यो यमनेशा॥
मैं अस सुन्यों आपने काना । करै जो गीतगोविंदहि गाना ॥

दोहा—पीछे पीछे तासु हरि, वागत हैं दिन रैन ।
पीठि ओर ताते कियो, तीनि दिवस भरि नैन॥१०॥

तुमको लखत टूटि गइ ग्रीवा । देख्यों मैं नहिं आनँद सीवा ॥
हरि कह मैं आगे तुव रहेऊ । ताते मोर दरश नहिं लहेऊ ॥
मांगु माँगु जो अब मन आवै । तोहिं न कछु दुर्लभ मोहिं भावै
तब मलेच्छ माँग्यो कर जोरी । तुरँग समेत होय गति मोरी॥
एवमस्तु कहि यदुकुल राया । तहँते अपनो रूप छिपाया ॥
यमन जरूर तुरंग समेता । गवन्यो कृपानिकेत निकेता ॥
पै औरहु कौतुक कछु सुनिये ।हरि प्रभाव अचरज नहिं गुनिये

चाम ऊन लोहादिक केते । बाजी साजु रचे जन जेते ॥
ते तुरंत हरिलोक सिधारे । जो तुरंग भूषणहुँ सवाँरे ॥
तामें प्रियादास हरिदासा । यहि कवित्त को कियो प्रकासा॥

कवित्त—और सुनौ महिमा हरिकी, अति अद्भुतता कहि जात न भारी । चाम लगाम औ जीनमें ऊन, लग्यो जेहिं जीव को अश्व ममझारी ॥ औरहु भूषण वस्त्र तुरंग सजे जिन अंगन अंग सवाँरी । ते मुगुलेश शरीरको पाँशि गये हरिलोक भौ बंधन टारी ॥१॥ ऐसो गीतगोविंद प्रभाऊ। श्रोता जानहु भेद न काऊ॥गीतगोविंद प्रभाव महाना।कहँ लगि करिये वदन बखाना

दोहा—सुकवि चक्रवर्ती महा, श्रीजयदेव उदार ।
तासु कथा अब कहतहौं, सहित कछुक विस्तार॥११॥

एक समय जयदेव सुजाना । तीर्थ करनको कियो पयाना ॥
चोर मिले मारग महँ चारी । ते जयदेवहिं गिरा उचारी ॥
जैहौ कहाँ पथिक बतराऊ । कह जयदेव तीर्थ हित जाऊ॥
चोर कह्यो सँग भो पथ माहीं । जहाँ जाहु हमहू तहँ जाहीं ॥
अस कहि चले संग पथ चोरे । रह जयदेव पथिक के भोरे ॥
संत खवावन हित अति चोरी । मोहर लिये रहे सँग थोरी ॥
चारि चोर चामीकर हेतू । किय मारन जयदेवहिं नेतू ॥
जानि गये जयदेव हवाला । चोरन दियो कनक तत्काला ॥
चोरन संग चले पथ जाहीं । चोर सबै शंकित मन माहीं ॥
आपसमें संमत अस कीन्ह्यो । माँगे बिना कनक यह दीन्ह्यो॥
ताते परी जहाँ पुर भारी । पकरैहै हाठि मारि गोहारी ॥
ताते मारग महँ यहि मारी । कनक लिहे पुनि चलौ सुखारी ॥

दोहा—कोउ कहि दीन्ह्यो कनक यह, जिय मारब बड़ दोष।
कोउ कह कर पद काटिकै, चलहिं मानि परितोष ॥

अस कहि चोर सुशील सरूपा। चले पंथ मिलिगो इक कूपा॥
तब तुरंत जयदेवहिं डाटी। डार्यो कूप पाणि पद काटी॥
कूप माहँ जयदेव सुजाना। बीति गई निशि भयो विहाना॥
तौन देशको तब नरनाहा। गवन्यो मृगया हित नरवाहा॥
निकस्यो तौन कूप के तीरा। निरख्यो जयदेवहि युतपीरा॥
मचिया डारि तुरंत निकासी। जान्यो संत देखि दुति रासी॥
राजा निज पालकी चलाई। मुरक्यो भौन महा सुख पाई॥
भिषक बोलाय कराय उपाई। तुरत अंग के घाव मिटाई॥
पूछ्यो यह कस भयो गोसांई। तब जयदेव कह्यो मुसक्याई॥
रह्यो ऐसही मोर शरीरा। नहिं वृत्तांत कह्यो मतिधीरा॥
यहि विधि रहन लगे जयदेवा। नृपहिं बतायो साधुन सेवा॥
राजा जैदेवहिं सँग पाई। लाग्यो करन साधु सेवकाई॥

दोहा–आवन लागे साधु बहु, भूपति करि सत्कार॥
यथायोग्य धन दै तिन्हैं, करतो विदा उदार॥ १३॥

यह यश फैलि गयो जग माहीं। विदित भयो तेउ चोरन काहीं॥
चारिहु चोर साधु वपुधारी। आये भूप भवन पगुधारी॥
लोगन सों पूछ्यो कहँ जाहीं। लोगन कह स्वामी ढिग माहीं॥
तब जयदेव निकट गे चोरे। चीन्हि भये सिगरे भय भोरे॥
चीन्हि तिन्हैं उठिकै जयदेवा। मिलत भये मानहुँ हरिदेवा॥
एकहि आसन में बैठायो। राजाको पुनि खबरि पठायो॥
आये जेठे बंधु हमारे। भूपति सुनत तुरत पगु धारे॥
गुरु को जेठो बंधु विचार्यो। करि प्रणाम अतिशय सत्कार्यो॥
दियो भवन के भीतर डेरा। दिय भोजन पकवान घनेरा॥
महँ अस चोर विचारे। वध हित हमहिं भीतरहिं डारे॥
वैर विशेषहि अपने। जयदेवहिं सो बात न सपने॥

करने लगे गवन अतुराई। गुरु को भूपति खबरि जनाई॥
दोहा-बड़े भ्रात गुरु रावरे, रहत न अब यहि भौन॥
बहुत भांति रोंक्यों तिन्हैं, करहिं यतन अब कौन १४
तब जयदेव कह्यो अस वानी। विदा करे धन दै सन्मानी॥
तब भूपति दै धन समुदाई। कीन्ह्यो संतन केहि विदाई॥
चारि भृत्य दीन्ह्यो सँग माहीं। जामें कहूँ लूटि नहिं जाहीं॥
बहुत दूरि लगि गे जब चारे। भूप भृत्य तब वचन उचारे॥
जस तुमको नरपति सन्माना। तस सत्कार लह्यो नहिं आना॥
जेठे बंधु अहौ गुरु केरे। यही हेत परतो मन मेरे॥
चारिहु चोर तबै अस भाषा। कहहिं कथा जनि मानहु माषा॥
स्वामी स्वामी जे कहवामैं। ते अरु हम इक समय सकामैं॥
गये एक भूपति भट भारे। राख्यो सो चाकर सत्कारे॥
तब यह कियो कुकर्म महाना। कोप रूप भो भूप सुजाना॥
हमैं कियो शासन अस घोरा। याको शिर काटहु यहि ठोरा॥
तब हम अपनो हितू विचारी। काटि चरण कर गये सिधारी॥
दोहा-इतना चोरन के कहत, सही मही नहिं पाप॥
फाटि गई प्रगट्यो विवर, लहे चोर अति ताप॥१५॥
सोई विवर चारिहू चोरा। गिरि कै गये रसातल घोरा॥
तहँ कवित्त कीन्ह्यो प्रियदासा। करौं अंत तुक ताहि प्रकासा॥
कवित्त-फाटि गई भूमि सब ठग वे समाय गये,
भये ये चकित दौरि स्वामी जूपै आये है॥ १॥
राजदूत स्वामी ढिग आये। चोरन को वृत्तांत जनाये॥
श्रीजयदेव सुनत सो हाला। मींजत कर अति भये विहाला॥
मींजत कर कर पद ह्वै आये। दौरि दूत भूपतिहि जनाये॥
राजहु आय देखि ठगि रहेऊ। पूंछत भो जयदेव न कहेऊ॥

पुनि हठ परयो भूप गुरु पाहीं। तब जयदेव दुखित मन माहीं ॥
सिगरो निज हवाल कहि गयऊ।सुनि राजा अति विस्मित भयऊ॥
पुनि जयदेव नाम अस गायो। सुनि नरनाह मोद अति पायो ॥
देखहु श्रोता संत सुभाऊ। ऐसेहु पर अपकार न भाऊ ॥
यदपि चोर शठता असि कीन्ह्यो।श्रीजयदेव न चित कछु दीन्ह्यो॥
रक्षत संतन को भगवाना। मरै पाप ते पापि निदाना ॥

दोहा—जो जासों करतो बदी, बदी ताहि धरि खाय ॥
कन्या सोवै कुँवर घर, बाबहि भालु चबाय ॥ १६ ॥

याको सुनहु यथा इतिहासा। श्रोता देखहु बड़ो तमासा ॥
यक पाखंडी बाबा आयो। राजद्वार में स्वाल सुनायो ॥
भूपति सुता उतंग अटारी। खड़ी रही भूषण पट धारी ॥
बाबा ताहि विलोकत मोह्यो। बार बार ताको तन जोह्यो ॥
बाबहिं भूपति के भट आई। दीन्ह्यो भीख अन्न समुदाई ॥
बाबा कह्यो भीख नहिं लैहौं। राजाको मिलिकै पुनि जैहौं ॥
कछु मंगल कहि हौं नरपति को। देहौं मेटि अमंगल गतिको॥
भूपति भृत्य भूप ढिग जाई। बाबा की कहनूति सुनाई ॥
भूपति बाबै निकट बोलायो। साधुहि जानि भूप शिरनायो ॥
बाबा कह्यो और सब नीको। एक बात ते सिगरो फीको ॥
सुता रावरी दोषित जोई। याते अधिक अधिक दुख होई ॥
याको परित्यागन करि देहू। तो जगमें सुख सम्पति लेहू ॥

दोहा—राजा बाबा के वचन, मन में सांचो जानि।
सुता त्यागि करिबो चह्यो, महादोष तेहि मानि॥१७॥

विशद दारु मंजूष बनाई। तामें निज दुहिता बैठाई ॥
दीन्ह्यो गंगा धार बहाई। बाबा तुरत खबरि यह पाई ॥
सो मंजूषा पाय प्रवाहा। लाग्यो एक नगर नर नाहा ॥

राजकुमार नहात रह्यो सो। लखि मंजूषा पैरि गह्यो सो ॥
भवन लाय मंजूष उघारी। देख्यो अनुपम राजकुमारी ॥
ताहि भवन महँ सो बैठायो। बड़ो भालु मंजूष धरायो ॥
पुनि गंगा महँ दियो बहाई। पीछे बाबहु पहुँच्यो जाई ॥
पूछ्यो पुरवासिन सों बाता। मंजूषा बहतो इत जाता ॥
पुरवासिन कह दूरि गयो सो। बाबा अति द्रुत चलत भयो सो॥
पकरे मंजूषै चलि दूरी। बाबा आनँद मान्यो भूरी ॥
मोर मनोरथ पूरण भयऊ। अनुपम लाभ विधाता दयऊ॥
अस कहि मंजूषा जब खोला। रोषित निकसि भालु तब ठोला

दोहा—बाबा को लपट्यो लपकि, डारयो वदन विदारि।
भालु भागि वनको गयो, बाबा मरयो पुकारि॥१८॥

भई दशा तस्करन तैसही। ऐसेन चाही अवशि ऐसही ॥
पुनि भूपति सुपकाल पठायो। पद्मावती तुरंत बोलायो ॥
पद्मावती और जयदेवा वसे। तहाँ विरचित हरि सेवा ॥
एक समय राजा की रानी। पद्मावति अंतहपुर आनी ॥
कीन्ह्यो विविध भांति सत्कारा। बैठी निकट भूप की दारा ॥
नृपतिय नैहर ते खत आयो। तासु बंधु सुरलोक सिधायो ॥
रानी की सिगरी भौजाई। जरीं कंत सँग चिता बनाई ॥
यह सुनि रानी कियो विलापा। फेरि प्रशंसा कियो अमापा ॥
पद्मावती कह्यो मुसकाई। यहू न सत्य पतिव्रतताई ॥
जो पति मरन सुनै तिय काना। तजै तुरंत नहीं निज प्राना ॥
सो तिय है नाहिं सत्य सुकीया। तब रानी बोली रमणीया ॥
तुम्हैं छोड़ि अस को जग करई। पै जो कहै सो नाहिं परिहरई॥

दोहा—आई गृह पद्मावती, रानी रच्यो उपाय।
गे महीप मृगया जबै, तब इक पुरुष बनाय ॥१९॥

कह्यो जाय पद्मावति पाहीं । आयो यह नृप भृत्य इहांहीं ॥
सो अस भाषत सत्य हवाला । स्वामी भये आजु वश काला॥
पद्मावती कह्यो मुसकाई । अछत अहै मन पति सुखदाई ॥
रानी भई चकित सुनि वानी । भूपतिसों अस दशा बखानी ॥
भूपति वारण किय बहु बारा । गुरू परीक्षा करु न अवारा ॥
रानी परी महा हठ माहीं । किहे परीक्षा बिन कछु नाहीं ॥
राखिय यदपि वारि उर माहीं । युवती शास्त्र नृपति वश नाहीं॥
राजा इक दिन गयो शिकारे। तब रानी पुनि वचन उचारे ॥
आजु सत्य स्वामी गति पायो । भाषत राजदूत यक आयो ॥
पद्माती कह्यो पुनि इच्छा । चहो लेन तुम मोरि परीच्छा ॥
अस कहि तुरत त्यागिदिय प्राना। माच्यो हाहाकार महाना ॥
लगे करन नृप आय विलापा । रानी दुसह लह्यो परितापा ॥

दोहा–तब जयदेव तुरंत तहँ, आय गह्यो कर वीन।
गावन लागे पद यही,राग विहाग प्रवीन ॥ २० ॥

पद–ललित लवंग लतापरिशीलन कोमल मलय समीरे ।
मधुकर निकर करंबित कोकिल कूंजित कुंजकुटीरे१॥

जब यह पद गायो जयदेवा । तब कौतुक कीन्ह्यो यदुदेवा ॥
पद्मावती तुरत उठिबैठी । लखि पति मोदसिंधु महँपैठी
मच्यौ नगर महँ जय जयकारा । धन्य धन्य जयदेव कुमारा ॥
राजा मान्यो बहुत गलानी । समझायो गुरु कहि शुभ वानी
पुनि गंगा मज्जन के हेतू । गवने उत्तर संत समेतू ॥
कीन्ह्यो जाय एक थल वासा । गंगा मज्जन हित सहुलासा ॥
तहँ ते हरनिहार सब दोसा । गंगा रहै अठारह कोसा ॥
जब कछु वृद्ध भये जयदेऊ । तब श्रम होन लग्यो बहुतेऊ॥
सुरसरि तब सपने महँ भाष्यो । वृथा आप आवन अभिलाष्यो

हमहीं तुव समीप महँ ऐहैं । ताको अनुभव तुमहिं देखैहैं॥
जब सर महँ फूलै जलजाता । मम आगम जान्यो सति ताता
जब जयदेव जगे परभाता । लखे तड़ाग विपुल जलजाता॥

दोहा—तबते तेहि सर महँ नितै,लागे प्रात नहान ।
गंगा तेहि सर में बसी, यह आश्चर्य्य महान ॥ २१ ॥
सकल देशवासी जिते, जे जे मज्जन कीन ।
ते गंगा मज्जन फलै, पाय भये दुख क्षीन ॥ २२ ॥
ऐसे श्रीजयदेव के, जानहु चरित अपार ।
ताते कछु संक्षेप ते,भाष्यों मति अनुसार ॥ २३ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकोनात्रिंशोऽध्यायः २९

अथ श्रीधरस्वामीकी कथा ॥

दोहा—श्रीधर स्वामी को कहौं, यह अद्भुत इतिहास ।
जो श्रीमत्भागवत, कीन्ह्यो तिलक प्रकास ॥ १ ॥

श्रीधर ब्राह्मण कुल महँ जाये । पंडित यदुपति भक्त कहाये ॥
नाम कीर्त्तन में अति प्रीती । तैसेहि संत समाज प्रतीती ॥
एक समय करने रोजगारा । दूर देशलौं करि व्यापारा ॥
लै बहु द्रव्य चले घर काहीं । मिले तिनहिं ठग मारग माहीं
श्रीधर सों पूछ्यो सब चोरा । को हौ भवन अहै केहि ठोरा ॥
श्रीधर ग्राम नाम कहि दीन्ह्यो । बहुरि प्रश्न चोरन सों कीन्ह्यो॥
तुमहु कहहु कोहौ कहँ जाहू । ग्राम आपनो नाम बताहू ॥
चोरनहू भाष्यो सोइ ग्रामा । जहां रहै श्रीधर को धामा ॥
श्रीधर कह्यो साथ भल भयऊ । ठग कह तुव साथी कहँ गयऊ
श्रीधर कह्यो राम है साथी । हम कहँ पावैं दल हय हाथी॥

चोरन द्रव्यवंत तेहिं जानी । मारन हित उपाय निरमानी॥
पै श्रीधर जब नित पथ गहहीं । यह अश्लोक सदा मुख कहहीं॥
श्लोक—सन्नद्धः कवचीखड्गीचापबाणधरो युवा ।
गच्छन्मनोरथोस्माकंरामःपातुसलक्ष्मणः ।
आतसज्जनधनुषाविषुस्पृशावक्षयाशुगनिषंगसङ्गिनौ ।
रक्षणायममरामलक्ष्मणावग्रतःपथिसदैवगच्छताम् ॥
दोहा—जब जब श्रीधर को हतन,चोर समीपहि जायँ ।
तब तब राम लषण दोउ,धनु धरि तिनहिं देखायँ ॥
यहि विधि चलत घर आये । मारग ठग नहिं मारन पाये ॥
तब श्रीधर ढिग चोर सिधारे । साम रीति सों वचन उचारे ॥
द्वै बालक जे तुव सँग रहहीं । धनुष बाण रोजहि कर गहहीं॥
तिन को बोलि देहु देखराई । असि छबि अबलौं दृग नहिं आई
तब श्रीधर जान्यो सब हाला । वे दोऊ हैं दशरथ लाला ॥
चोरन सों कह ढारत आंशू । बालक कहै अवध महँ वाशू ॥
धंन्य भागहै चोर तुम्हारी । दोउ बालक देखे धनुधारी ॥
अस कहि पकरचो चोरन चरणा। श्रीधर हर्ष जाय नहिं वरणा ॥
चोरनहू ह्वै गयो बिरागा । संत भये कीन्ह्यो जग त्यागा ॥
श्रीधर तजि संपति परिवारा । काशी वासी भयो उदारा ॥
यती भयो धारचो कर दंडा । रच्यो भागवत तिलक उदंडा॥
सकल शास्त्र संमत जेहि माहीं। वाद विवाद कल्पना नाहीं ॥
दोहा—काशिराज के भौन में, एक समय सविचार ॥
भइ समाज पंडितन की, जुरिगे टीकाकार ॥ २ ॥
काशिराज पूछचो यह ठीका । कोको रच्यो भागवत टीका ॥
जे भागवत तिलक निरमाने । निज निज तिलक तुरंतहि आने
वामन तिलक जुरे तेहि काला । तब कोउ बोल्यो बुद्धि विशाला॥

श्रीधर तिलकतिलकतिलकनको। कठिनकठिनकोमलकोमलको
पंडित सबै भाषि मन माहीं। कहत भये अब भूपति पाहीं॥
नृपति बिंदुमाधव के मंदिर। तिलक धरौ सिगरे अति सुंदर॥
जापै नाथ सही लिखि देहीं। तौन तिलक आदर करि लेहीं॥
यही भयो संमत सब केरो। भूपति हुकुम नगर महँ फेरो॥
निज निज तिलक सबै ले आये। माधव मंदिर माहँ धराये॥
श्रीधरहू को भूप बोलायो। हर्ष विषाद रहित सो आयो॥
तिलक जौन श्रीधर प्रभु कीन्ह्यो। सब तिलकन नीचे धरि दीन्ह्यो
जुरे सकल काशी के वासी। तिलक तमासो देखन आसी॥

दोहा—भूपति बंद केवार करि, लग्यो बजावन बाज॥
रमा रमण धौं कौनकी, आज राखिहैं लाज॥ ३॥

तब अकाश महँ बजे नगारे। परी सही अस सबै उचारे॥
खोलि किवार लख्यो जब जाई। तब यह कौतुक पर्यो देखाई॥
सकल तिलक ऊपर अति नीका। धरो रहै श्रीधरको टीका॥
आदि पत्र कनकाक्षर दोई। सही लिखी देखो सब कोई॥
तब भूपति श्रीधर कृत टीका। लियो लगाय दृगन अरु टीका॥
सब पंडित कीन्ह्यो अस टीको। श्रीधर टीको टीकन टीको॥
काशी में माच्यो जयकारा। राजा अर्प्यो कनक हजारा॥
श्रीधर तुरत बाँटि सब दीन्हे। आप एक मोहर नहिं लीन्हे॥
तबतें श्रीधर तिलक सुहावन। भयो सकल तिलकन ते पावन॥
बुधजन ताहि अवशि आदरहीं। और तिलक तेहि समनहिं करहीं
जगमें श्रीधर तिलक प्रचारा। अबलौं चलित सकल संसारा॥

दोहा—यहि विधि श्रीधरकी कथा, जानहिं विविधि प्रकार॥
मैं कहँलौं वर्णन करों, मानि भीति विस्तार॥ ४॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रिंशोध्यायः ३०॥

अथ श्रीसूरदासकी कथा ॥

सोरठा–अब वंदौं श्रीसूर,भक्त शिरोमणि रसिक वर ॥
जासु काव्य रस पूर, विश्व भयो भावुक सकल॥१॥

कवित्त–प्रथम गृहस्थ गृह त्यागिकै विरक्त भयो, कृष्ण-कृपापात्र ग्रंथ रच्यौ करुणामृतै ॥ ताको संत कीन्ह्यो हार फेरि निज नैन फोरि, हरि हाथ गहि आये बृंदावन सुमतै ॥ चिंताम-णि नाम गणिकाको उपदेश पाय, गोपिका की गति पायो सब संत संमतै ॥ सूर सों भयोहै नाहिं ह्वै हैं नाहिं दीसै अजौं ताके पदकंज रघुराज नित न मतै ॥ १ ॥

दोहा–कृष्णावेना तीर में, नगर सोहावन एक ॥
विप्र बिल्व मंगल तहाँ, वसत भयो सविवेक ॥ १ ॥

कोऊ द्विजगृह उत्सव भयऊ । विप्र बिल्व मंगल तहँ गयऊ ॥
तहँ चिंतामणि गणिका आई । ताहि देखि मन गयो लोभाई ॥
गै गृह गान नृत्य करि आछे । चले बिल्वमंगल तेहिं पाछे ॥
धन दै कीन्ह्यो तासु चिन्हारी । वसै रोज तेहिं भवन सुखारी ॥
भूल्यो विद्या धर्म अचारा । तज्यो कुटुम्ब लोक परिवारा ॥
आयो पितृपक्ष इक काला । श्राद्ध करनको कारज हाला ॥
तासों विदा मांगि घर आये । करी श्राद्ध बहु विप्र खवाये ॥
एक पहर बीती निशि जबहीं । भयो मनोज उदीपन तबहीं ॥
एकहि गणिका भवन सिधारा । तेहि घर रहै तरंगिनि पारा ॥
बाढी रहै नदी अति जोरा । पैरत भे करि जोर अथोरा ॥
मुरदा बह्यो जात इक रहेऊ । ताहि पकरि द्विज पारहि लहेऊ॥

दोहा–काम विवश तेहिं मृतक को, जान्यो नाव सुजान ॥
ताहि विटप अरुझाय कै, तेहि घर कियो पयान॥२॥

तेहि घर लागि दुवार केवारे । गोहरायो नहिं खुले उघारे ॥

तब गृहके पछीत महँ आये। झुलत रह्यो अहि भोग लगाये॥
ताहि रज्जु गुनि गहि चढ़ि गयऊ। तेहि आँगन महँ कूदत भयऊ॥
फँसे तासु नरदा के पंका। तहँके मानि चोरकी शंका॥
उठे सकल देखे द्रुतधाई। फँस्यो बिल्वमंगल दुख छाई॥
तब तेहि ऐंचि पंक सब धोई। पूछ्यो गणिका युत सब कोई॥
केहि मारग ह्वै तुम इत आये। तिन कहतै तो नाव पठाये॥
पुनि राखे इक रज्जु लगाई। तोहिसम मीत न मोहिं लखाई॥
गणिका कह्यो नाव अरु डोरी। देहु देखाय मोरि मति भोरी॥
तब द्विज डोरी नाव देखायो। अहि अरु मृतक मानि भय पायो॥
विप्र बिल्वमंगल बैठाई। चिंतामणि बोली अनखाई॥
तोहिं धिक् तोहिं धिक् तोहिं धिक् कामी। तोहिसम कौन विषम पथगामी॥

दोहा—जस यह मेरे चाममें, तुम दिय चित्त चुभाय॥
तस जो लागत कृष्णमें, तो सिगरो बनिजाय॥ २॥

कवित्त—जैसो मन मेरे हाड़ चाममें चुभायो मूढ़, तैसो यदि श्याम सों लगावतो सनेह सों। लोक परलोक जग ख्याति औ बड़ाई यश, तेरो बनिजातो रे तुरंत यही देह सों॥ मैं तौ अहौं बारवधू उद्यय यहीहै नित, तदपि भजों मैं हरि चातक ज्यों मेह सों॥ तूतो कुलवंतविप्र क्योंना भगवंत भजै वृथाही बिकानो पापी पातुरीके गेह सों॥

दोहा—चिंतामणि गणिका वचन, लगे विप्र के बान।
खुलिगे हिय पाटल पटल, उदित भानु भो ज्ञान ३॥
भक्तमालहू में कह्यो, यह कवित्त प्रियदास।
औसर तासु विचारि कै, मैं इत करहुँ प्रकास॥ ४॥

कवित्त—खुलि गईं आँखैं अभिलाषैं रूप माधुरीको, चाखै रसरंग औ उमंग रस भारिये॥ बीणलै बजाय गाय विपनि निकु-

हाय २ तब सो द्विज गायो। नाथ प्रथम नहिं कस बतरायो
मम धन नारि भवन परिवारू। संत हेत नहिं और विचारू ॥
अस कहि बिल्वमंगलहि आनी। धोयो चरण आपने पानी ॥
सींच्यो सकल भवन सो नीरा। पुनि भोजन कराय दिय बीरा॥
पुनि परयंक माहँ पौढ़ाई। अपनी तियको कह्यो बोलाई ॥
भूषण वसन पहिरि सब भांती। इनको सेवन कीजै राती ॥
अतिथि होत भगवंत सरूपा। इनहिं भजे न परै भवकूपा ॥

दोहा—पतिको शासन पाय तिय, भूषण वसन सवारि।
द्विज आगे कर जोरिकै, ठाढ़ी भई सुखारि ॥ ७ ॥

विप्र निरखि तिय सुंदरताई। पुनि विचारि द्विज सज्जनताई॥
अपनेको धिक् धिक् बहु कीन्ह्यो। पुनि सुंदरि सों अस कहिदीन्ह्यो
सूजी द्वै दीजै मन भाई। सो तुरंत सूजी दिय लाई ॥
गाड्यो दोउ सूजी दोउ आंखी। तिय लखि हाय २ मुख भाखी॥
यह प्रसंग प्रियदासहु भाष्यो। यक कवित्तके युग तुक राख्यो

कवित्त—कही युग सुई लाओ लाय दई लियो हाथे, फोरि-डारी आंखी कह्यो बड़ी ये अभागीहैं। गई पतिपास श्वास भरत न बोलि आवे, बोली दुख पाये आये पाय परे रागीहैं ॥ ८ ॥

दशा बिल्वमंगल की देखी। नारि गई पति पै दुख लेखी ॥
सुनत विप्र आयो द्रुत धाई। बोल्यो तिनसों आंशु बहाई ॥
कहा कियो यह तन की बाधा। हम सों भयो महा अपराधा ॥
साधुहि ल्याय भवन दुख दीन्ह्यो। तबै बिल्वमंगल कहि दीन्ह्यो॥
तुमहौ साधु अहै हम नाहीं। औगुण रहित साधु कहवाहीं ॥
तहँ कवित्त यह कह प्रियदासा। समय विचारि करौं परकासा॥

कवित्त—काम नहीं क्रोध नहीं लोभ अहंकार नहीं, माया नहीं मोह नहीं मिथ्या नहीं वादहै। आशा नहीं तृष्णा नहीं ईरषा न

दम्भ कछु, कपट कठोर नहीं इंद्रिनको स्वाद है ॥ निंदा नहीं झूठ नहीं वासना न भोग की है, हिंसा मद मान नहीं पाप ना प्रमाद है ॥ साधु साधु सबही कहत हरिदास कहा, येते गुण जामें नहीं ताको नाम साधहै ।

दोहा—अहैं विकारी नैन मम, नारी नेह करंत ।
सुखी भये दृग विगत हम, जगत बीच विचरंत ॥८॥
विप्र अवशि जानौ तुमहुँ, जौन मनोरथ मोर ।
सो चलि पूरण करहिंगे, नागर नंदकिशोर ॥ ९ ॥
जे नयना तियमें लगे, हाड़ चाम रस पाय ।
ते नयनको फोरिये, जन्म २ दुख जाय ॥ १० ॥
नयनन सों संतन दरश, नहिं देख्यो मतिमंद ।
मोरपक्षसम अक्ष ते, नहिं दायक आनंद ॥ ११ ॥
धिक्धिक धिक् पुनि धिक् तिन्हैं, सफल विलोचन नाहिं
येकहि बार निहारि जे, युवति ओर लगि जाहिं ॥१२॥
धिक्धिक धिक् उन कविनको, जे कवि वरणैं नारि ।
सब औगुनकी खानिहै, ज्ञान भक्तिकी हारि ॥ १३॥

कवित्त—मासुही की ग्रंथि कुच कंचन कलश कहै, मुख कहै चंदसों जो कफहीको घरु है ॥ वैभुज कमलनाल नाभि कूप कहै ताहि हाड़ही को खम्भ ताहि कहै रम्भ तरुहै ॥ हाड़के दशन ताहि कुंदके कलीसों कहै, चामके अधर ताहिं कहै बिंबाफरु है ॥ ऐसी झूठी युगुति बनावै औ कहावै कवि, तापर कहत हमैं शारदा को वरुहै ॥ ९ ॥

दोहा—यहि विधि कहि बहु विधि वचन, मांगि विदा द्विजपास
सूरदास देखन चले, बृंदाविपिनि विलास ॥ १४ ॥

टोहत गये सूर कछु दूरी। यक थल बैठि गये श्रम भूरी॥
तेहि क्षणमें गजको उधरैया। द्रुपदसुताको चीर बढ़ैया॥
भरुहीके अंडन बचवैया। निज दासनको रक्ष करैया॥
ऐसो श्रीदेवकी दुलारो। सूरदासके निकट सिधारो॥
पूछत भये सूर कहँ जाहू। सूर कह्यो वृज लखन उछाहू॥
हरि कह नयन हीन बिन साथी। किमि पहुंचौगे विषय प्रमाथी॥
सूर कह्यो जसुधाको प्यारा। सोइ साथी है एक हमारा॥
तब हरि हाथ पकरि कह बानी। होत सांझ लीजै अस जानी॥
आगे चलौ बसौ यक बागा। भोर भये व्रज जाहु सुभागा॥
अस कहि यदुपति हाथ धराये। सूरदासको बागहि लाये॥
निज हाथन जलपान कराये। तब गहि हाथ सूर अस गाये॥
ये करकंज कृष्ण कस लागे। अस सुनि हरि छोड़ाय कर भागे
सूर कह्यो तब ऊंच पुकारी। सुनहु वचन मम कुंजविहारी॥

दोहा—हाथ छोड़ाये जातहौ, निबल जानिकै मोहिं॥
जब हिरदै ते छूटिहौ, मर्द बदौं गो तोहिं॥ १५॥
अस कहि राति प्रयंत तहँ, सूरदास वसि बाग॥
जागतही पहुँचे तुरत, वृंदावन बड़भाग॥ १६॥
सेवा कुंज सिधारि कै, बैठे तरु तर जाय॥
कीन्ह्यो मनसंकल्प अस, बिन देखे यदुराय॥ १७॥
नहिं उठिहौं नहिं डोलिहौं, नाहिं करिहौं जलपान॥
भजन करन लागे तहां, सूरदास मतिवान॥ १८॥

कवित्त—भई उतकंठा भारी आये श्रीविहारीलाल, मुरली बजायकै सो कीन्ह्यो पुर आसहै। खुलिगये नैन ज्यौं कमल रवि उदै भये, देखि रूप रासिबाढ़ी कोटि गुनी प्यासहै॥ मुरली मधुर सुर राख्यो मुदभरि मानो टरि आये आननतें काननमें

भासहै ॥ कमला निवासको यों वदन विलाश देखि, आश निज पूरमान्यो धन्य सूरदासहै ॥ १ ॥

दोहा–सूरदास सों पुनि कह्यो, नागर नंदकिशोर ॥
दूध भात भोजन करहु, तुम परसादी मोर ॥ १९ ॥

रोजहिं हम पठवै हैं दोना । ब्रजमें दोन पत्र बहु होना ॥
अस कहि भे हरि अंतर्ध्याना । सूरदास भे भक्त प्रधाना ॥
सूर सरिस कोउ दूसर नाहीं । जो पकरयो हरि निजकर माहीं
ब्रजमंडल महँ विचरन लागे । गावत कृष्ण चरित अति रागे॥
एक दिवस यक मंदिर आये । रामरूप तेहि अतिहि सोहाये ॥
सूरदास जब वंदन किन्ह्यो । तब कोउ साधु तर्क कहि दीन्ह्यो॥
तुमतो कृष्ण उपासक अहहू । राम दरश काहेको करहू ॥
सूर कह्यो तब वचन प्रमानैं । रामकृष्ण एकहि हम जानैं ॥
साधु कह्यो एकहि है नाहीं । ऐसो कहौ न तुम मुख माहीं ॥
हैं कृष्ण कबहुँ नाहिं रामा । राम होयँगे नहिं क्षण श्यामा ॥
वैतो दशरथ भूप किशोरा । ये तो नंदमहरके छोरा ॥
सूर कह्यो कछु अचरज नाहीं । राम होयँगे कृष्ण सदाहीं ॥

दोहा–अस कहिकै कर जोरि कै, सन्मुख ठाढ़े सूर ॥
यह कवित्त भाषत भये, आनँद रस महँ पूर॥ २० ॥

कवित्त–राखौ धनु बाण गहि मुरली बजाओ तान, राखो पटपीत चखचपल निहारिये ॥ राखो वनमाल उर अंगही त्रिभंग करौ, शीश मोरमुकुट कर लकुटी विचारिये॥ राखौ जानकी कि शोरराधिका देखाओ ओर राखौ राज पाट गावँ चोरीको सिधारियेऔधचंद होहु नंदनंदन अब हेतु मेरे साधुको हमारो या विवाद निरवारिये ॥

सोरठा—सूर विनय सुनि राम, मोर मुकुट लकुटी गह्यो।
सँग राधावर वाम, अधर मुरलि धारण कियो॥२१॥
यह कौतुक लखि साधु समाजा। सूरहि मानि साधु शिरताजा॥
धरे सूर पदरेणु माथमें। जय जय कीन्ह्यो एक साथमें॥
चिंतामणि गणिका रहि जोई। ब्रजको आय गई पुनि सोई॥
सुन्यो सूरके चरित अपारा। दरशन हेतु तहां पगुधारा॥
सूरदास ताको पहिचानी। आगे ते चलिकै सनमानी॥
ताहि वंदि आसन बैठाई। बोले वचन ताहि शिरनाई॥
तव उपदेश मोद मैं पायो। तैं तौ सर्वस मोर बनायो॥
सूर आपनी कथा सुनाई। जेहिं विधि दरश दियो यदुराई॥
कथा कहत मैं आयो दोना। दूध भातको अतिशय सोना॥
कह्यो सूर तब सहित सनेहू। आजु प्रसादी तुमहीं लेहू॥
चिंतामणि बोली तब बाता। यह दोना काकरहै ताता॥
सूर सकल वृत्तांत सुनायो। चिंतामणि तब अस मुख गायो॥
दोहा—कहा तुमहि भर भक्त हो, मोहिं न जानत नाथ।
दोना दूसर लेहुँगी, जब देहैं यदुनाथ॥ २२॥
अस कहि वीन बजायकै, गावन लगी पुकारि।
तदाकार हरिमें भई, तुरत द्वारकी नारि॥ २३॥
ताकी प्रीति परेखिकै, प्रगटे ताही ठोर।
दोऊ कर दोना लिये, नागर नंदकिशोर॥ २४॥
चिंतामणिको एक दै, दूसर सूरहिं दीन।
चिंतामणिको सूरको, हरि अपनो करि लीन॥२५॥
कवित्त—कविकुल कोककंज पायकै किरिनि काव्य, विकसे विनोदित ह्वै नेर और दूरके॥ सूखिगो अज्ञान पंक मंद भो मयंक मोह, विषय विकार अंधकार मिटे कूरके॥ हरिकी

विमुखताई रजनी पराय गई मूक भये कुकवि उलूक रस झूरके॥
छायो तेज प्रेम पुहुमीमें रघुराज नूर, हरिजन जीव मूर उदै
सूर सूरके ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकत्रिंशोऽध्यायः ३१ ॥

अथ ज्ञानदेवकी कथा ॥

दोहा—ज्ञानदेव आख्यान अब, करहुँ प्रमाण बखान ।
ज्ञान दीप दीपत सुनत, श्रोता सुनहु सुजान ॥ १ ॥

कोउ ब्राह्मण यक भक्त सुजाना । गृह तजि काशी कियो पयाना
मिले जाय संन्यासी काही । कह्यो कुटुंब हमारे नाहीं ॥
संन्यासी कीन्ह्यो संन्यासी । बसे कछुक दिन मोदित कासी ॥
तेहि तिय सों कोउ अस कहि दयऊ। तेरो पति संन्यासी भयऊ॥
नारि सुनत काशीको आई । कियो पुकार राजघर जाई ॥
राजा कह्यो जो तुव पति होई । लैजा घर बरजै नहिं कोई ॥
तिय निजपति लै निजघर आई । तेहि सँग पुत्र तीनि जनमाई॥
जाति पांतिके सब तेहिं त्यागे । बसत भयो निजघर दुख पागे॥
तिनमें जेठ पुत्र जो जायो । ज्ञानदेव सो नामहिं पायो ॥
भयो अनन्य भक्त हरि केरो । सकल विश्व भगवतमय हेरो ॥
जो अनन्य जग हरिमय देखत । उत्तम भक्त ताहि बुध लेखत ॥
तुलसी कृत रामायण माहीं । लिख्यो गोसांई दोहा काहीं ॥

दोहा—सो अनन्य असि जाहिकै, मति न टरै हनुमंत ।
मैं सेवक सचराचर, रूप राशि भगवंत॥ १ ॥

ऐसे ज्ञानदेव जब भयऊ । हरिते भिन्न न कछु लखि लयऊ ॥
यक दिन गे यक पंडित भवनै । कीन्हीं विनय ध्याय श्रीरमनै॥
देहु हमहुँको वेद पढ़ाई । तब पंडित बोल्यो मुसकाई ॥
तेरो नहीं वेद अधिकारा । छांड़ि दियो तोको परिवारा ॥

ज्ञानदेव तब मन बिलखाई। दूसर पंडित निकट सिधाई॥
वेद पढ़नको विनती कीन्हा। सोऊ उत्तर तेहिं विधि दीन्हा॥
तब आये घर मानि विषादा। कैसी वेद पढ़न मरयादा॥
एक समय नृपभवन मँझारा। लाग रहै पंडित दरबारा॥
ज्ञानदेवहूं तहां सिधाई। राजासों असि विनय सुनाई॥
सब वैदिकन विनय हम कीन्हो। वेद पढ़नको अति मन दीन्हो॥
पै पंडित नहिं वेद पढ़ाये। भूप तुम्है फिरि याचन आये॥
राजा कह्यो वैदिकन पाहीं। काहे वेद पढ़ावत नाहीं॥

दोहा—तब वैदिक बोले सकल, यहिं त्याग्यो परिवार॥
वेद पढ़नको अब नहीं, याको है अधिकार॥ २॥

तब यक महिष बँध्यो तेहि ठोरा। ज्ञानदेव कह लखि तेहि ओरा॥
सुनहु सकल यहि भैंसाकाहीं। श्रुति अधिकार अहै की नाहीं॥
पंडित कह्यो न है अधिकारा। जस भैंसा कर तथा तुम्हारा॥
ज्ञानदेव कह होवै कैसा। वेद पढ़ै जो निज मुख भैंसा॥
साभिमान पंडित तब गायो। जो यह भैंसा वेद सुनायो॥
तो तुमको हम वेद पढ़ैहैं। फेरि न कछु संदेह सुनैहैं॥
तब उठि ज्ञानदेव हरषाई। भैंसा निकट ठाढ़भे जाई॥
बोले वचन सुमिरि भगवंता। जो हरि पंडित हृदय बसंता॥
भैंसा महँ होवै हरि सोई। पढ़ै वेद संशय नहिं कोई॥
पढ़न लग्यो भैंसा तब वेदा। पदक्रम जटाक्रमहु विन खेदा॥
सकल सभा अचरज ह्वैगयऊ। वैदिकवृंद मानहत भयऊ॥
भूपति अरु पंडित समुदाई। ज्ञानदेव पद पकरे जाई॥

दोहा—जयजयकार कियो सबै, ज्ञानदेव गुरु मानि॥
सकल वेद पुस्तक दियो, गृहते द्रुत तेहिं आनि॥ ३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेद्वात्रिंशोध्यायः॥ ३२॥

अथ वल्लभाचार्यकी कथा ॥

दोहा—कहौं वल्लभाचार्य्यको, अब सुंदर इतिहास ॥
जाहि सुनत यदुनाथमें,होत अवशि विश्वास ॥ १ ॥

भये वल्लभाचार्य्य विरागी। वृंदाविपिन गये अनुरागी ॥
गोकुलगावँ बसे सुखरासी। राधा माधव चरण उपासी ॥
एक समय गोवर्द्धन आये । राधाकुंड बसे सुखछाये ॥
एक विप्र कन्या लै आयो। सुता लेहु वल्लभसों गायो ॥
वल्लभ बहुत भांति तेहि वार्‌यो।सो हठ पर्‌यो न नेकु विचार्‌यो॥
कह्यो सपन महँ तब प्रभु आई। लेहु सुता शासन मम पाई ॥
वल्लभ कियो त्यागि जो आयो। पुनि तामें तू चहत फँसायो ॥
जो याके तुमही सुत होऊ। तौ स्वीकार करब हम सोऊ ॥
हरि कह ह्वैहैं सुत हम आई। कन्या ग्रहण करौ मन भाई ॥
वल्लभ जागि भोर दुहिताको। ग्रहण कियो विवाहविधि ताको॥
कछुक काल महँ विप्रकुमारी। गर्भवती भै अतिछवि वारी ॥
तबै वल्लभाचार्य्य सुजाना। तीर्थाटन हित कियो पयाना ॥

दोहा—तियहु चली सँगमें तुरत,मान्यो वारण नाहिं ॥
पति आगे पाछे तिया, मौन चले पथ जाहिं ॥ १ ॥

कछुक दूरि महँ बालकभयऊ ।वल्लभ तेहि तनु कछुक न लखेऊ॥
नहिं टेर्‌यो तिय मन यह भीती।तिय शासन पतिको नहिं रीती॥
तब यक वृक्ष तरे धरि बालक। आप चली सुमिरत यदुपालक॥
तीर्थ करत बीते युत हर्षा। दम्पतिको तहँ द्वादशवर्षा ॥
बहुरि वल्लभाचार्य्य सनारी। आये तेहि पथ ब्रजहिं सिधारी॥
सोइ बालक तेहि तरु तर माहीं। पर्‌यो रहै कौतुक दरशाहीं ॥
किये सर्प तेहि ऊपर छाया। चहुँ दिशि रक्षत मृग समुदाया॥
पूछ्यो वल्लभ तब तेहिं काहीं। बालक काको परा यहांहीं ॥

तिय कह बालक आपहि केरो। याको करो विशेष निवेरो ॥
वल्लभ कह्यो जाहु ढिग प्यारी। श्रवै पयोधर जो पय भारी ॥
तौ बालक सांचोहिं तेरा। ऐसो याको करौ निबेरा ॥
तुरत बाल ढिग नारि सिधारी। श्रयो पयोधर ते पय भारी ॥

दोहा—गे मृगवृंद विलाय सब, गो अहि भूमि समाय।
तब तुरंत शिशुको तिया,लीन्ह्यो कंठ लगाय ॥ २॥

विठ्ठलदास धरयो तेहि नामा। तासु सुयश पूरित सबधामा ॥
चरित वल्लभाचार्यअपारा। कहै को जेहि हरि भये कुमारा॥
यह प्रसंग जानहु श्रोता धुर। सुनहु चरित्र और तिनकेफुर॥
एक दिवस वल्लभाचार्य्य गृह। आयो एक साधु दर्शन कह॥
एक वृक्षकी शाखा माहीं। ठाकुर बटुवा बांधि तहाँहीं ॥
करिकै दर्श बहुरि जबदेख्यो। ठाकुर रहै न तहँ दुख लेख्यो ॥
कह्यो वल्लभाचार्यहिं आई। ठाकुर मम कोउ लियो चोराई॥
कह्यो वल्लभाचार्य विशेखी। ठाकुर तहैं लेहु निज देखी ॥
जाय लख्यो पुनि पादप शाखा। बटुवा बहुत बांधि कोउ राखा॥
तब भ्रम भयो बहुरि पुनि आयो। वृत्तवल्लभाचार्यहि गायो ॥
कह्यो वल्लभाचार्य बहोरी। चीन्हि लेहु बटुवा निज छोरी॥
पुनि शाखा समीप द्विज गयऊ। निज बटुवै भारि देखत भयऊ॥

दोहा—लै ठाकुर अति मुदित ह्वै, वल्लभ निकट सिधारि ॥
चरण परशि परणाम किय, जैजै वचन उचारि ॥ ३॥
चरित वल्लभाचार्यके, यहि विधि जानहु भूरि ॥
रसिक जनन संतन चरित, जगमेंजीवन मूरि ॥ ४॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ३३॥

अथ शंकराचार्यकी कथा ॥

दोहा–कथाशंकराचार्यकी,कथत अहौं यहि काल ॥
सुनिये श्रोता चित्तदै,हरत सकल भ्रमजाल ॥ १ ॥

शंकर सत्य शम्भु अवतारा । कियो जगतमें धर्म प्रचारा ॥
बढ़े जैन धर्मी जग माहीं । लोपे शास्त्र पुराणन काहीं ॥
दियो भागवत अम्बुडुबाई । भै अवनी अधर्म अधिकाई ॥
श्रीभागवत सकल असकंधा । वोप देवके कंठ प्रबंधा ॥
अमरसिंह सेवरा अयाना । सो जैनन में रह्यो प्रधाना ॥
विदित विश्व इत शंकर भयऊ। पूर्व धर्म थापन हित गयऊ ॥
अमरसिंहसों भयो विवादा । करैं हजारन जैन कुवादा ॥
कहँलगि शंकर सुवन बुझावैं । हारैं बहुत बहुत पुनि आवैं ॥
शिष्यन शंकर तुरत बोलाई । दीन्ह्यो अस इकांत समुझाई ॥
यहि पुरको नृप जब मरि जैहैं । तब मम जीव तासु तनु जैहै॥
धरचो मोर तनु जतन कराई । जो पुनि होय विलंब महाही ॥
तौ सुनाइये यह श्लोका । तब मिट जैहै सिगरो शोका ॥

दोहा–अस कहि तहँ निवसत भये,कछु दिन महँ महिपाल॥
मरत भयो तब तनु प्रविशि,उठि बैठे तत्काल ॥ २ ॥

ग्रंथ मोहमुदगल इकनामा । रानी पढ़े रहै छविधामा ॥
तासों पढ़िकै सिगरो ग्रंथा । तौन देश प्रगटचो सदपंथा ॥
दीन्ह्यो जैनिन देशनिकारी । प्रगटायो वरभक्ति खरारी ॥
शिष्यन जानि विलम्ब महाई । नृपहि जाय श्लोक सुनाई ॥
तब पुनि निज शरीर महँ आये। काशी गवन कियो सुख छाये॥
रह्यो काशि पति जैनिन चेला । एक समय परिगो तेहि मेला ॥
उपर अटा पर बैठचो राजा । सहित जैन दश सहस समाजा॥
कीन्ह्यो शंकर स्वामी माया । गंगाजल तुरंत अधिकाया ॥

अँटाप्रयंत पहुँचि जल गयऊ । जाने सकल मरन अब भयऊ॥
प्रगटी तबै दराज जहाजा । तापर चढ़न लग्यो जब राजा॥
तब शंकर बोले असिवानी । प्रथम चढ़ावहु निज गुरुज्ञानी॥
बचाय बचावहु जीवा । नातो नरक होय दुख सीवा ॥
भूपति अस दियो निदेशा । चढ़ें गुरू सब विगत कलेशा ॥
दोहा—दश हजार तब जैन जन, नौका चढ़े तुरंत ।
बूड़िगई तब नाव जल, भयो सबनको अंत ॥ ३ ॥
तब राजहि शंकर शिष्य कीन्ह्यो।कारि उपदेश भक्त करि दीन्ह्यो॥
वेद पुराण शास्त्र जगमाहीं । जसकेतस थापे सबकाहीं ॥
प्रगटी हरिकी भक्ति महाई । यमके पुरको जन नहिं जाई ॥
तब यम जाय नाथ फिरियादा । किय शंकर सतयुग मरयादा॥
तब शंकरहि कियो प्रभु शासन । विमुख करो जीवनके व्रातन ॥
नातो नरक झूंठ ह्वै जाई । तब शंकर दीन्ह्यो अस गाई ॥
मानहु ब्रह्मजीव कहएका । अहै न माया जीव अनेका ॥
मानन लगे ब्रह्म जिय काहीं । सोहं रटन मची चहुँ घाहीं ॥
भे हरिविमुख मिट्यो अनुरागा । तर्कपंथ पुनिकै बहु जागा ॥
शंकर चलि बदरीवन माहीं । ब्रह्मरंध्र त्याग्यो तनु काहीं ॥
कीन्ह्यो हरिनिवास महँ वासा । ऐसी शंकर कथा प्रकासा ॥
कहँलौं करौं तासु गुणगाना । विस्तर भीति ग्रंथ मन जाना॥
दोहा—पुनि जब रामानुज भये, तबपाखंडिन खंडि ।
श्रीसंप्रदाचलायकै, दियो भक्तिरस मंडि ॥ ४ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडे उत्तरार्द्धेचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ३४ ॥

अथ कोईएकभक्तकी कथा॥

दोहा—अब बरणौं इक भक्तको, नाम न जानहुँ तास ।
सुन्यो पिता मुखते कथा, सो अब करहुँ प्रकास ॥१॥

रह्यो कोउ ब्रजमें हरिदासा । हरि अनुरागी जगत निरासा ॥
परमहंस विचरत ब्रज माहीं । सीला बीनि बीनि सुख खाहीं ॥
लागी सुरति रहति हरिचरणा । देखत जगत श्याममई वरणा ॥
ताहि देखि नारद इक काला । जाय कह्यो सुनि दीनदयाला ॥
तोर भक्त जगमहँ अति रंका । ताकी होति तोहिं नहिं शंका ॥
प्रभु कह यदपि देहुँतिन काहीं । काह करौं लेते कछु नाहीं ॥
नारद कह्यो देहु तुम जोई ।कस नहिं ग्रहण करहिं हठि सोई॥
प्रभु कह चलहु संग ममलागी । देहौं सोइ जौन वह मांगी ॥
अस कहि प्रभु नारद दोउआये। सोइ भक्तके निकट सोहाये ॥
हरि पीतांबर दियो ओढ़ाई । कह्यो मांगु जो तुव मनभाई ॥
तब वह यदुपति भक्त सुजाना ।प्रभुहिं विलोकि नेकु मुसकाना॥
अंबक बहति अम्बुकी धारा । मंद मंद अस वचन उचारा ॥
लाला हमको तुम नहिं देहौ । मांगब मोर सुनत नटिजैहौ ॥

दोहा–प्रभुकह भुवन विभूतिहूं, जो माँगै यहिवार ।
सो देहौं संशय नहीं,मृषा न वचन हमार ॥ १ ॥

कह्यो भक्त तब मंजुल वाणी । होति न मोहिं प्रतीति प्रमाणा॥
लाला तीनिवार कहि देहू । मोरमनोरथ तौ सुनिलेहू ॥
तब हरि विहँसत वचन उचारे । माँगहु माँगहु माँगहु प्यारे ॥
तब हरिभक्त कह्यो मुसकाई । सुनहु नंदनंदन सुखदाई ॥
ऐसे झगरेमें मति परिये । सुखी आपने मंदिर रहिये ॥
यही देहु मोको वरदाना । हैनाहिं हिये मनोरथ आना ॥
कोमल पद कंटक महिमाहीं । बारबार विचरहु तुम नाहीं ॥
सींके कांटन चिरकुट भूरी । करैं शीत आतप हम दूरी ॥
बीनि शिला भरि उदर अघाई । तुमको नित देखब यदुराई ॥
याते अधिक कौन सुख होई । मम सम इंद्र विरंचि न कोई ॥

तब हरि विहँसि कह्यो ऋषि पाहीं। देखहु दिहेहु लेत कछु नाहीं ॥
नारद करि परदक्षिण ताको । प्रेमानंद मगन सुख छाको ॥
दोहा–ताहि प्रशंसत बार बहु, पुनि पुनि करि परणाम ॥
गवन कियो हरि संग में, गावत हरिगुण ग्राम ॥ २ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचात्रिंशोध्यायः ॥ ३५ ॥

अथ सिंहकिशोरकी कथा ॥

दोहा–मिथिला को राजा रह्यो, सिंहकिशोर सुनाम ॥
ताके गर्व महा रह्यो, मोर जमाई राम ॥ १ ॥
बैठे सभा मध्य जब राजा । ताहि कहैं पंडितन समाजा ॥
चलहु अवधपुर प्रभु इक बारा। पावहिं सबै अनंद अपारा ॥
तब राजा भाषै सब पाहीं । विना बोलाये जात न जाहीं ॥
जब रघुवंशी हमहिं बोलै हैं । तब कोशलपुर हमहुँ सिधैहैं ॥
यहि विधि बीतिगयो बहु काला। कोउ पंडित कह बुद्धि विशाला॥
चलहु विदेह अवधपुर काहीं । तुम्हरे संग हमहुँ सब जाहीं॥
तबहिं किशोरसिंह नरनाहा । अवध गवन करि कियो उछाहा॥
साजि समाज राज परिवारा । चल्यो दुंदुभी देत धुकारा ॥
रहिगो अवध कोश जब पांचा। डेरा कियो भावको सांचा ॥
कहैं सबै जब चलिय भुवाला । तब ऐसो भाषत तेहि काला ॥
जात बोलाये विना न जाहीं । आयो कोऊ लेन मोहिं नाहीं ॥
एक समय भूपतिके डेरा । सभा सदन सबको अस टेरा ॥
दोहा–महाराज कोशल अधिप, मंत्री तासु सुमंत ॥
मोहिं आनन आवत भयो, ताको तनय तुरंत ॥ १ ॥
अस कहि दै मिथिलेश नगारा। चल्यो अवधपुर शहरमँझारा ॥
मंदिर एक उतंग अनूपा । किय निवास मिथिलापतिभूपा ॥

दरशन हेतु कहूं नाहिं जाहीं। बैठरहैं निज मंदिर माहीं ॥
चलहु दरश हित अस सब कहहीं। तब मैथिल गुमान मन गहहीं
कहैं सबैसो केहि विधि जाहीं। कोउ रघुवंशी आये नाहीं ॥
भूप चक्रवर्ती महराजा। अथवा तिन सुत सहित समाजा॥
ऐहैं प्रथम हमारे डेरा। करिहैं जब सत्कार घनेरा ॥
तब हम चलब तासु घर माहीं। बिन सत्कार नात गृह जाहीं ॥
कबते भे रघुवंश बड़ाई। जाते रहे महामद छाई ॥
रघुवंशिनते छोट न अहहीं। मांगन हेतु इतै नहिं रहहीं ॥
जो हमरो करि हैं सन्माना। तौ हम इनके जाब मकाना ॥
सत्वभाव कीन्हे मिथिलेशा। बिते पांच दिन बैठि निदेशा ॥

दोहा—पंचम दिन मिथिलेशकी, भई भावना सत्य ॥
बोलि उठ्यो निजते तहाँ, सुनहु सबै मम भृत्य ॥ २ ॥

दशरथ नृपके चारि कुमारे। आवत डेरा आजु हमारे ॥
करहु तयारी विलम न आनी। सब विधि नातनको सन्मानी ॥
अस कहि लंब फरश बिछवायो। चारु चांदनी तहाँ तनायो ॥
गद्दी चारु चारि लगवायो। पचई तेहि ढिग निज धरवायो॥
अतर गुलाबहु पान मसाला। धरयो हेम भाजन ततकाला ॥
बैठि सभासद सकल समाना। ठाढ़े भये नकीब सुजाना ॥
कछुक काल महँ कह्यो भुवाला। आवत चारिहु दशरथ लाला
राजा उठि ड्योढ़ीतक आयो। रामरूप तेहि प्रगट दिखायो ॥
चारिहु बंधु उतारि यान ते। पूंछि कुशल आनँद महानते ॥
ल्यायो भीतर शिबिर तुरंता। बैठायो आसन सिय कंता ॥
बैठ यथावत चारिहु भ्राता। तैसहि सब रघुवंश जमाता ॥
आप तुरत उठि अतर लगायो। चारिहु बंधुन पान खवायो ॥

दोहा–सुरभि सलिल सींच्यो सबन, कीन्ह्यो अति सत्कार॥
कुशल प्रश्न पूंछत भयो, बहनो इन बहु बार ॥ ३ ॥
चारि बंधु हित सबन अनूपा। ल्यायो जो मिथिलाते भूपा ॥
सो चारिउ भ्रातन को दीन्ह्यो। बहु सत्कार सबनको कीन्ह्यो॥
कछुक काल लगि भै दरबारा॥द्वितिय न कोउ यह चारित निहारा
बंधुन सहित उठे तब रामा। गये शयन युत अपनेधामा ॥
कछुक दूरि लगि नृप पहुँचायो। लौटि फेरि डेरै निज आयो ॥
दुसरे दिवस साजि निज सैना। कनक भवन गवन्यो भरिनैना॥
कोहूको नहिं कछू देखाये। ताहिलेन रघुपति कढ़ि आये ॥
गहि रघुनाथ हाथ गृह लाये। निजसमान आसन बैठाये ॥
बैठे तहँ दशरथ महराजा। भाइन भृत्यन सहित समाजा ॥
अतर पान निज करप्रभुदीन्ह्यो।पुनिसत्कारविवि विधि कीन्ह्यो ॥
कुशल प्रश्न कीन्ह्यो महराजा। आप कृपा कह मैथिल राजा ॥
राज्यो बहुत बार दरबारा। चलत हासरस विविध प्रकारा॥
दोहा–सबते अति सत्कार लहि,उठि तिरहुतको भूप ॥
भगिनि भेट हित गवन किय, अंतहपुरहि अनूप ॥४॥
गयो पवारि जब मैथिल राई।तीनिहुभगिनिसहितासियआई॥
परि पद रुदनकरत तेहिं भेटचो॥ कहि मृदुवचनभ्रातदुखमेटचो
मणि मंदिर सिय गई लेवाई। पूछी नैहरकी कुशलाई ॥
भगिनि दैन हित जो लैगयऊ। यथा योग्य मिथिलाधिपदयऊ
कौशल्यादिक जे सब रानी। मिथिलाधिपहि बहुतसन्मानी॥
पुनि उठि भूपति बाहेर आयो। चढ़ि वाहन निज सदनसिधायो
रहेजे मिथिलाधिप सँगमाही। ते चरित्र देखे कोउ नाहीं ॥
जबलों रह्यो अवधपुर राजा। मुद्रादिय जल पीवन काजा ॥
कूच कौशलपुर तेरे। मिथिला गयो डरावत डेरे॥

जबलों रह्यो विदेह शरीरा। तबलगि तस देख्यो मतिधीरा॥
सज्जन और जे राम मिलापी। ते जाने तेहि परम प्रतापी॥
ते ताके सँग किये पयाना। तिनको तैसहि सत्य देखाना॥
दोहा-यह चरित्र यहि कालते, शतसंवतके बीच।
रामकृपा जापर भई, कौन ऊंच को नीच॥ ५॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेषट्त्रिंशोऽध्यायः॥ ३६॥

अथ पुरुषोत्तमक्षेत्रके राजाकी कथा॥

दोहा-श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्रको,राजा भक्त प्रधान।
तासु चरित वर्णन करौं, सुनहु सबै दैकान॥
जगन्नाथ नगरीको राजा। बसै पुरी महँ सहित समाजा॥
अबलों प्रगट तासु सब रीती। यात्री दर्शन करहिं सप्रीती॥
एक समय आपने अवासा। खेलत रह्यो भूमिपति पासा॥
जगन्नाथ पंडा तेहि काला। लाये नाथ प्रसाद उताला॥
दक्षिण कर पांसा इत रहेऊ। बाँयेहाथ प्रसाद गहेऊ॥
तब पंडा नहिं दियो प्रसादा। लैप्रसाद फिरिगे सविषादा॥
मन महँ सबै विचारन लागे। राजा नाहिं प्रसाद अनुरागे॥
चौपरि खेलि उठ्यो नरनाहा। अति गलानि कीन्ही मनमाहा॥
आयो हाथ नाथ परसादा। लीन्ह्यो मैं न सहित मर्य्यादा॥
वाम पाणितेहि गहन पसार्‌यो। पासा क्षुद्र दहिन कर धार्‌यो॥
तादिन भूपति अशन न कीना। मानिगलानि महादुख भीना॥
भोर भये पंडितन बोलायो। तिनते ऐसो वचन सुनायो॥
दोहा-श्रीजगदीश प्रसादको,करै जो कोउ अपमान।
तासु कौन उपचारहै, साँचो करहु बखान॥ १॥
सब पंडित संमत करि भाखे। वेद पुराण रीति अस राखे॥

जोन अंगते हो आपमाना । ताको छेदन करै सुजाना ॥
तब नृप गुन्यो भूप परि पाटी । को अस जो हमार कर काटी॥
ताते अस मैं करहुँ उपाऊ । जाते मैं अधर्म फल पाऊं ॥
दिवस द्वैक महँ सो नृप राई । परचो पर्यंकहि नकल बनाई ॥
पूछ्यो आय सचिव प्रभु कैसो। नृप कह इक डर होत अनैसो॥
शयन करहुँ जब मैं अधराता । आवत एक प्रेत भयदाता ॥
डारि झरोषाते कर कूरा । मोको देत महाभय पूरा ॥
कह्यो सचिव नृप सोच न कीजै । अपने पास मोहिं निशि लीजै ॥
जबहिं झरोषा ते कर डारी । डरिहौं मारि काटि तरवारी ॥
अस कहि सचिव भूपके पासा । निवस्यो निशा करन भय नासा॥
सचिव नींदवश कछु जब भयऊ। राजा तब तुरंत उठिगयऊ ॥

दोहा–सोइ झरोखाते नृपति, डारचो निज करवाम ॥
प्रेत सरिसरव करतभो, जग्यो सचिव तेहिं याम ॥२॥

काढ़ि कृपाण हन्यो कर माहीं । भये खंड द्वै हाथ तहाँहीं ॥
मोदित सचिव दौरि तहँ आयो । राजाको लखि अति दुख पायो
कह्यो कहा कीन्ह्यो प्रभु कर्मा । उभयलोक नाश्यो मम धर्मा ॥
राजा कह्यो रह्यो कर प्रेता । ताहि छोंडायो तैं शुभचेता ॥
भगवत अपराधी कर मोरा । यामें दोष कछू नाहिं तोरा ॥
अस कहि भूपति आनँद मानी । निवस्यो सुमिरत सारँग पानी॥
पंडन उतै नाथ सपनायो । लैप्रसाद पंडा द्रुत धायो ॥
लखि जगदीश प्रसाद भुवाला । युग पसारि कर उठ्यो उताला ॥
गहत प्रसाद हाथ जमि आयो । सकल पुरी जय जय रव छायो॥
सपनायो पंडन जगनाथा । देहु गाड़ि भूमहँ नृप हाथा ॥
सो करलै पंडा क्षिति गाड़े । उपज्यो द्रुत तरु एक तेहिं डाड़े
ताकर नाम भयो करदोना । तासु सुमन सुमिरत सुठि सोना

दोहा–सो जगदीशहि चढ़त नित, अबलों प्रगट प्रभाव ॥
ऐसे चरित अनेकहैं, कहलों करौं बढ़ाव ॥ ३ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेसप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अथ कर्माबाईकी कथा ॥

दोहा–कर्माबाई की कथा, अब वरणौं चितलाय ॥
अबलौं जासु प्रभाव जग, सुनहु संत समुदाय ॥ १ ॥
रही जाति की तेलिनि कोई। पूर्व जन्म सेयो सत सोई ॥
सेवन संत प्रगट परभाऊ। बढ्यो तासु हरिपद महँ भाऊ॥
सो जगदीश पुरी कहँ आई। रहै वित्तते हीन महाई ॥
मज्जन पूजन कछु नहिं करही। भोरहि ते उठि अस अनुसरही॥
यक दोहनि खीचरी बनावै। सो जगदीशै भोग लगावै ॥
सांचो प्रेम करै प्रभु माहीं। राति दिवस विसरै सुधि नाहीं ॥
सांचो भाव देखि तहँ ताको। प्रगटि तुरत कंत कमलाको ॥
सो खिचरी प्रत्यक्ष प्रभु पावै। बचो जौन प्रभु ताहि खवावै ॥
कर्माको मन निशिदिन लागा। होय प्रात कब अति सुखपागा ॥
कब मैं रचि खीचरी बनाऊं। कब प्रभुको मैं भोग लगाऊं ॥
राति दिवस यदुनाथ देखाहीं। और ताहि सूझे कछु नाहीं ॥
यहि विधि बीति गयो तेहि काला।खिचरी खाय तासु जगपाला॥
दोहा–यहिमारग ह्वै एक दिन, आचारी कोउ आय ॥
कढ़त भये देख्यो रचत, खिचरी विनानहाय ॥ १ ॥
बैठि गये तहँ कोपहि छाई। बोलत भे सुनु कर्माबाई ॥
क्या करती दोहनी चढ़ाई। कर्माबाई कह शिरनाई ॥
हरिके हित खीचरी बनाऊं। रोजहि प्रभुको भोग लगाऊं ॥
कोपित तब बोले आचारी। अनाचार करती तैं भारी ॥

बिन मज्जन बिन भाजन धोये। खिचरी रचै उचै जब सोये॥
कर्मा कह्यो नाथ का करऊं। प्रभु आज्ञा अरुगुन अनुसरऊं॥
रहत रोज स्वामी अति भूखो। आवत इतै रोज मुख सूखो॥
तब मम विसरि जाति सुधि सिगरी। लगो रहत खिचरी नाहिं बिगरी
मानि मृषा बोले आचारी। त्वहिं यम दंड होयगो भारी॥
प्रथम धर्म जानहु आचारा। बिन आचार नरक अधिकारा॥
कर्मा कह्यो मानि मन भीती। जस तुम कह्यो करों तस रीती॥
तब आचारी वचन बखाना। नाथ निवेदन वेद विधाना॥

दोहा–दुती दोहनी साजिकै, करि मज्जन उठि भोर।
दै चौका खिचरी रचै, पोति भवन चहुँ ओर॥ २॥

अस बताय गे भवन अचारी। करमा किय तैसही तयारी॥
पोतत भवन करत अस्नाना। भई विलम खिचरी निरमाना॥
जगन्नाथ पुनि २ तहँ आवैं। झांकि २ मुरि २ पुनि जावैं॥
डेढ़ पहर बेला जब आई। तब करमा खीचरी बनाई॥
तैसे प्रभुको भोग लगायो। जगन्नाथ प्रत्यक्षहि पायो॥
आधी खिचरी जब प्रभु खाये। मंदिर पंडा भोग लगाये॥
करिकै त्वरा बिना मुख धोये। चले गये मंदिर दुख मोये॥
उत पंडा मंदिरहि पखारी। भोग लगावन करी तयारी॥
तब देखे प्रभु मुख छबि खानी। एक ओर खिचरी लपटानी॥
पंडा सब अचरज मनमाने। बारबार बहु विनय बखाने॥
दै केंवार बैठो तेहि द्वारे। मेटहु प्रभु संदेह हमारे॥
तब मंदिर ते भै अस बानी। यक दासी मम भक्ति प्रधानी॥

दोहा–कर्मा बाई नाम जेहि, प्राणहु ते प्रिय मोहिं।
रचति रही खिचरी नितै, वेद विधान न जोहि॥ ३॥

देखिं प्रीति मैं तासु अपारा। रोजहि खिचरी करहुँ अहारा॥

इक आचारी तेहिं डरवायो। वेद विधान ताहि सिखवायो ॥
करत वेद विधि भै अति बेरा। कैयक बार कियो मैं फेरा ॥
भोजन करन जबैं हौं लाग्यो। कर्मा प्रीति रीति अनुराग्यो ॥
तब मंदिर महँ महा प्रसादा। लाये तुमहुँ सहित मरयादा ॥
त्वरा विवश मैं मुख न धोवायो।अध भोजन करते उठि आयो॥
ताते खिचरी मुख में लागी। याकी भीति देहु तुम त्यागी॥
समुझावहु आचारिहि जाई। अबनहिं करमाको डेरवाई ॥
करत रही रोजहि जसरीती। तस खिचरी अरपै युत प्रीती॥
यह सुनि पंडा द्रुत उठि धाये। आचारी को बहु समुझाये ॥
आचारी करमा ढिग आयो। चरणन परि अस विनय सुनायो॥
वही रीति करु मातु सदाहीं। मेरो कह्यो मान कछु नाहीं ॥

दोहा—अमल विवश मैं त्वहिं कह्यो, क्षमा करहु अपराध।
तेरे प्रीति फँसे हरी, करुणासिंधु अगाध ॥ ४ ॥

अस कहि आचारी घर आयो। कर्मा वही रीति मनलायो ॥
कछुक काल महँ करमा बाई। तजि शरीर वैकुंठ सिधाई ॥
जादिन कर्मा तज्यो शरीरा। तादिन लंघन किय यदुवीरा ॥
रजनीमें राजै सपनायो। मैं करमैं निज लोक पठायो ॥
अब खिचरी मोहिं कौन खवैहै। प्रीति रीति अस कौन देखैहै ॥
राजा कियो विनय कर जोरी। पावहु नाथ खीचरी मोरी ॥
राजा उठि तुरंत परभाता। रचि खिचरी अतिशय अवदाता॥
रोजहि भोग लगावन लागा। कर्मा नाम अबै लग जागा ॥
खिचरी करमा बाई केरी। चलै पुरीमहँ अबलग ढेरी ॥
श्रोता देखहु हरि करुणाई। प्रीति रीति जानहिं यदुराई ॥
नहिं विद्या कुल जाति अचारा।नहिं धनराज्य ज्ञान तप भारा॥
केवल प्रीति रीति महँ रीझैं। बारत ताहि नाथ अतिखीझैं ॥

दोहा—स्मृति शास्त्रहु संहिता, वेद पुराण प्रमान ॥
विप्र तेई जे हरि भजैं, शूद्र भजैं जे आन ॥ ५ ॥
द्वादश गुणयुत विप्रहू, हरि विमुखी है जोय।
ताते उत्तम श्वपच है, भक्त जो हरिको होय ॥ ६ ॥
रामभक्त गो स्वामि वर, कह्यो जो तुलसीदास।
सोऊ मैं यहि ग्रंथ में, किंचित करों प्रकास ॥ ७ ॥
(भारे परै सु चातुरी, चूल्हे परै अचार ॥
तुलसी हरिको ना भजै,चारों वर्ण चमार ॥ ८ ॥)

तुलसीकृत रामायण केरी। चौपाई मैं कह्यों निवेरी ॥
रघुनंदन अपने मुख गायो। श्रोता मैं सो देत सुनायो ॥
सब ममप्रिय सब मम उपजाये। सबते अधिक मनुज म्वहिं भाये
तिनमहँ द्विज द्विजमहँ श्रुतिधारी।तिनमहँ बहुरि निगम अनुसारी
तिनमहँ पुनि विरक्त मुनि ज्ञानी। ज्ञानिहुते अति प्रिय विज्ञानी ॥
तिनमहँपुनिमोहिंप्रियनिजदासा।जेहि गति मोरि न दूसरि आसा॥
भक्तिवंत अति नीचहु प्राणी। मोहिं प्राणसम अस मम वाणी॥
सन्मुख जीव होय मोहिं जबहीं। जन्म कोटि अघ नाशौं तबहीं॥
जाति पांति पूछै नहिं कोई। हरिको भजै सो हरिको होई ॥
ऐसहि जानहु करमाबाई। गै विकुंठ खीचरी खवाई ॥
हरिहि भजत कछु है न प्रयासा। केवल करै तासु विश्वासा ॥
प्रभुकी करै भावना जैसी। मिलैं जाय प्रभु रीतिहिं तैसी ॥

दोहा—श्रोतादेखहु कृष्ण अस, को ठाकुर जग आन ॥
इक सेवकाई करत में, सौ गुण करत बखान ॥ ९ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडे उत्तरार्द्धे अष्टत्रिंशोध्यायः॥ ७॥

अथ मामा भैनेकी कथा ॥

दोहा—मामा भैनेकी कथा,भनौं भाग्य भुवि भूरि ॥
श्रोता सुनहु सुजान सब,होत पाप सब दूरि ॥ १ ॥
पश्चिम दिशिके देशमें,कियो वास बहुकाल ॥
निकसि चले दोउ भवनते,तीरथ करन उताल ॥२॥
रंगनाथ आवत भये,गे मंदिर जब दोय ॥
विन मूरति मंदिर निरखि,गये महादुख मोय ॥ ३ ॥
मामा भैनेकी कथा,प्रियादास मतिमान ॥
आधे यही कवित्तमें, सूचन कियो महान ॥ ४ ॥

कवित्त—घरते निकसि चले वनको विवेक रूप, मूरति अनूप बिन मंदिर निहारिये॥दक्षिणमें रंगनाथ नाम अभिराम जाको,ताको लै बनावै धाम काम सब टारिये॥ इति प्रियादास कवित्त को प्रमाण ॥

मामा भैने उभय सिधारी। बिन मंदिर हरिरूप निहारी ॥
तब दोउ लागे करन विचारा। बनै कौन विधि नाथ अगारा ॥
जो धन अमित यतन करि पावैं। तो प्रभुको मंदिर बनवावैं ॥
इष्टदेव रघुवंशिन केरे। रंगनाथ अस नाथ निवेरे ॥
रघुपति जबै अवधपुर आये। कपिन विभीषण संग लेवाये ॥
विदा भये जब राक्षस राजा। तब वरदान दियो रघुराजा ॥
येक कलपलगि राज्यहि करहू। पुनि साकेत लोक संचरहू ॥
कह्यो विभीषण तब कर जोरी। राज्य करनकी आश न मोरी॥
देहुनाथ मोहिं कछुक अधारा। जामे होइ कल्प भरि पारा ॥
तब प्रभु रंगनाथ कहँ दीना। निशिचरपति लैचल्यो प्रवीना॥
कछुक दूरि जब तेहिं लैगयऊ। रंगनाथ तब भाषत भयऊ ॥
छोड़ै गो मोहिं जौने देशा। तहँ करिहौं आपनो निवेशा ॥

दोहा—यहि विधि कहत चले गये,रंगनाथ भगवान ॥
कावेरीके मध्यमें कीन्ह्यो जबै पयान ॥ ५ ॥

कावेरी की लखि युग धारा। दीप रह्यो मधि में बड़वारा ॥
गरुआने तहँ श्रीरँगनाथा। सक्यो न लै चलि निशिचरनाथा॥
धरि दीन्ह्यो भूपहँ तेहि ठोरा। तहँते गये न दक्षिण ओरा ॥
करि बहु विनय निशाचर राई। लंकै गयो अमित पछिताई ॥
आवत रोजहि दर्शन हेतू। अबलों तहँ निशिचर कुलकेतू ॥
मामा भैने तहँ दोउ जाई। मंदिर रचन यतन चित लाई॥
करन विचार लगे मन माहीं। केहि विधि मिलै द्रव्य हम काहीं
देशन देशन धन हित वागे । एकहु यतन कहूं नहिं लागे ॥
जैननको इक शहर महाना। तहाँ किये जब दोउ पयाना ॥
जैनिनको यक मंदिर भारी। तहँ इक मूरति जाय निहारी ॥
तामें द्युति चमकै आरशकी। पारशनाथ मूर्त्ति पारशकी ॥
बहुत जैनधर्मी तहँ रहहीं। कोटिनको धन यक यकलहहीं

दोहा—मामा भैने निरखि तेहि, कियो जतन चितलाय ॥
इनकी करिकै चाकरी, मूरति लेयँ चोराय ॥ ६ ॥

तब मिलिहै हमको धन भारी। बनी रंगमंदिर मनहारी ॥
पहिले शिष्य होयँ इनकेरे। सेवन करैं बहुत विधिकेरे ॥
तब भैने अस उत्तर दीन्ह्यो। काहे वृथा नरक मन कीन्ह्यो॥
जैन चाकरी मंत्रहु लीन्हे। नहिं उद्धार यतनबहुकीन्हे ॥
तब मामा अस वचन बखाना। सुनहु शास्त्रको यही प्रमाना॥

कवित्त—पावैं प्रभु सुख हम नर्कही गये तो कहा,धरकन आई जाय कान लै फुकायोहै ॥ ऐसी करी सेवा जामें हरीमतिकेवरा ज्यों सेवरा समाज सब नीकेकै रिझायोहै ॥ इति ॥

श्लोक—नवदेद्यावनींभाषां प्राणैःकंठगतैरपि।
हस्तिनापीडयमानोपि नगच्छेज्जैनमंदिरम् ॥
असप्रमाणकहिपुनिअसभाख्यो। धन्य सो धन जो हरिहितराख्यो
कौनिहुँ विधिते हरि सेवकाई। भैने विफल कबहुँ नहिं जाई ॥
अस सुनि भैनेहु अतिसुख पाई। लागे करन जैन सेवकाई ॥
ऐसी सेवा कीन्ही दोऊ। तापर भाषण कियो नहकोऊ ॥
भे प्रसन्न दोहुन पर जैना। रह्यो कोहुते भेदहु भैना ॥
जैन सबै सम्मत जुरि कीन्हो। मंदिर सौंपि दुहुन को दीन्ह्यो॥
रहन लगे मंदिर महँ दोऊ। तिनको मर्म न जान्यो कोऊ ॥
दोहा—चौकी मंदिरमें रहै,रहै न दुती दुवार।
पूछ्यो कारीगरन सों, करिओढ़रइकवार ॥ ७ ॥
कारीगर तब वचन बखाने। जितने मंदिर हम निरमाने ॥
अतिशय जबर कबहुं नहिंगिरई। का समरथ जो चोरी करई ॥
कलशा निकट छिद्र यक कोता। कलशा गिरे प्रगटसो होता ॥
यह सुनि आनँद दोऊ पाये। जबर जबर संसाव नवाये ॥
अति उतंग राचि सूत निसेनी। मंदिर उपर चढ़े लै छेनी ॥
काट्यो भवँरकली तहँ जाई। कलशादियो तुरंत ढहाई ॥
भयो छिद्र लघु भैने गयऊ। मूरति द्रुत उखारि सो लयऊ॥
पुनि मामहुप्रविश्यो तेहिंमाहीं। बांध्यो रजु महँ मूरति काहीं॥
भैने प्रथम उपर कढ़ि आयो। मूरति मामा तुरत उठायो ॥
निकसी मूरतिसहिअति पीरा। मामा कढ़्यो न थूल शरीरा ॥
तब मामा भीतर ते बोलो। अब नहिं आनबात मन तोलो॥
मेरो शीश काटि ले प्यारे। मूरति लै भागहु जब धारे ॥
दोहा—हरिमंदिरके हेतुजो, लागहि मोर शरीर।
तौ यामें कछु सोच नहिं, कछु न मानियेपीर ॥८॥

अब यामें नहिं द्वितिय विचारा। भागहु द्रुतै होत भिनसारा॥
तब भैने मातुल शिर काटी। लै मूरति भाग्यो भरि माटी॥
बहुत दूरिमें भो भिनसारा। तब भैने दुख लह्यो अपारा॥
भैने रंग नगर नियराना। तहँते कौतुक ताहि देखाना॥
बड़े बड़े तहँ परे पषाना। कारीगर लागे विधि नाना॥
लाखन लागे तहाँ मजूरा। मंदिर नेव करैं तहँ पूरा॥
यह लखि भैने अति पछिताना। हाय हमारो दोउ नशाना॥
उत मातुल को हम हतिआये। इत मंदिर आनै बनवाये॥
सोचत यहि विधि गो जब नेरो। तहँ अपने मातुल को हेरो॥
अचरज मानिकह्योअसबाता। तू कहँते आयो इत ताता॥
मामा कह्यो नमैं कछु जानो। भोरहि यह थल मोहिं देखानो॥
यक मूरति मैंहू ले आयो। लोह परशि बहु सोन बनायो॥

दोहा—बनवावन लाग्यो तुरत, कनक बेंचि बहु सोन॥
कोउ नहिं पूछ्यो आज लौं, कहा करै तू कोन॥८॥

भैने परमानंदित भयऊ। दोउ मिलि मंदिर रचना कियऊ॥
बन्यो सात सम्वत महँभारी। हरिमंदिर त्रिभुवन मनहारी॥
भरंतखंडमहँ अस नहिं दूजो। जासु निपुणता सुरगण पूजो॥
मामा भैने पुनि बहुकाला। जियत भये सेवत जगपाला॥
संत हजारन भोजन करहीं। रंग भवन वसि आनँद भरहीं॥
सो मंदिर अबलों जग जाहिर। कारीगर विरचे जगमाहिर॥
कछुक काल महँ दोउ तनु त्यागे। हरिपुर गवन करन जब लागे॥
कढ़े नरकपति चढ़े विमाना। दृग पथ परे नारकी नाना॥
जेजे परे नैन पथ तिनके। गे विकुंठ उद्धार न जिनके॥
कावेरी तट रंग विमाना। श्रीवैष्णवन मुख्य स्थाना॥
ताकी कथा प्रथम मैं गाई। ग्रंथ प्रपन्ना में सुखदाई॥

रंगविमान प्रभाव अपारा। ताते मैं न कियो विस्तारा ॥
दोहा-धनि धनि भैने जगत् में, धनि धनि मातुल सोय ॥
हरिसेवनके हेतु दोउ, दीन्ह्यो तनु निज खोय ॥१०॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धेएकोनचत्वारिंशोध्यायः।

अथ हंस हंसिनीकी कथा ॥

दोहा-एक हंस इक हंसिनी, कथा अपूरब तासु।
श्रोता सुनहु हुलास भरि,मैं अब करहुँ प्रकासु ॥ १ ॥
कोइ यक रहै देशको राजा। रहै सजी सब राज समाजा॥
कुष्ठरोग ताके तनु भयऊ। यतन अनेकन ते नहिं गयऊ॥
कर पद गलन लगे नृपकेरे। भूप आनि सब वैद्यन टेरे॥
भूमि वित्त खायो सब मोरा। मेटे मिटै रोग नहिं थोरा॥
मेरो रोग मिटी जो नाहीं। देहौं सबनगाड़ि महि माहीं॥
मीचु निवारण बल न तुम्हारा। रुज हर वैद्य होत संसारा॥
सुनत वैद्य राजाकी वानी। गये भवन संशय उर आनी॥
समिटि लगे सब करन विचारा। यह उपाधि किमि होय निवारा॥
भिषक एक तिनमें अतिबूढो। सबसों कहा मंत्र अस गूढो॥
सुनहु चिकित्सक सबै सुजाना। करब कालिह हम नृप सन्माना।
भोर भये राजा ढिग आये। वृद्ध वैद्य तब वचन सुनाये॥
अचरज नहिं प्रभु रोग विनाशा। पै औषधि जो शास्त्र प्रकाशा॥
दोहा-सो प्रभु देहु मँगाय द्रुत, तौ औषधी बनाय ॥
करहिं चिकित्सा रावरी, आमय आसु नशाय ॥ २ ॥
राजा बोल्यो वेगि बतावहु। वैद्य कह्यो युग हंस मँगावहु॥
भूपति कह्यो मिलै केहि ठोरा। वैद्य कह्यो जानो नहिं मोरा॥
रहत हंस जेहि थल महँ ह्वैहैं। व्याधा जानि अवशि हति लैहैं॥

अस कहि वैद्य निवास सिधारयो।यह चातुरी न कोउ विचारयो॥
एक ओर पढ़िवो सब होई । एक ओर सिगरो गुण जोई ॥
पै न चातुरी को दोउ तूलै । सो जानहु विद्यागुण मूलै ॥
राजा तुरतहि वधिक बोलाई ल्याउ हंस कहँ आँखि देखाई ॥
जो युगहंस इतै नाहिं लैहो । तौ कुल सहित गड़ाये जैहो ॥
चारि वधिक जे रहे नगीची । लै धन दौरे दिशा उदीची ॥
पर्वत पर्वत वन वन माहीं । फिरे मराल मिले कहुँ नाहीं ॥
क्षुधित दुखित दुख लहे अपारा। मिल्यो सिद्ध यक तेज अगारा॥
धावत कत व्याधन सों गायो । व्याधा सब वृत्तांत सुनायो ॥

दोहा–सिद्धहि दाया लागि अति, वधिकन व्यथित निहारि॥
दियो एक गुटिका तिनहिं, ऐसे वचन उचारि ॥ ३ ॥

यह गुटिका जो मुख धरिलैहौं। जहँ मनहोय पहुँचि तहँ जैहौ ॥
वधिक तुरत गुटिका मुख धारे । मानसरोवर तुरत सिधारे ॥
मान सरोवर बसैं मराला । मिलैं विलोकि तिलक अरु माला ॥
तहँके वासिनके ढिग आवैं । इनहिं देखि दूरी भजि जावैं ॥
वधिक सबन ते पूंछन लागे । हंस हमहिं लखि केहि हित भागे॥
तहँके वासी वचन बखाने । तिलक माल विन तुमहिं डेराने॥
वधिकहुँ दिये तिलक तब भाला । पहिरे नव तुलसीके माला ॥
मानसरोवरमें गे जबहीं । हंस विलोकि तुरंतहि तबहीं ॥
हंस हंसिनी सन्मुख धाये । वधिक समीप साधु गुणि आये ॥
कही हंसिनी तब पतिकाहीं । इनके नयन साधुसे नाहीं ॥
कंत तुरंत समीप न जाहू । तब बोल्यो हंसिनि कर नाहू ॥
माला तिलक देखि हम आये । अब बहुरैं विश्वास गमाये ॥

दोहा–कंत सहित सो हंसिनी, संतन धोखे जाय ।
परी तुरंतहि पींजरा, लीन्हे वधिक फँसाय ॥ ४ ॥

वधिक हंस हंसिनि लै धाये। भूपति पास हुलासित लाये॥
राजा तिनको दियो इनामा। हंसन धरचो औषधी कामा॥
तब हरिको उपज्यो संदेहू। हंस कियो संतन पर नेहू॥
वधे वधिक कर संतन भोरे। है उद्धार हंस कर मोरे॥
अस कहि हरि धरि वैद्य स्वरूपा। आये तुरत नगर जहँ भूपा॥
जाय बजारहि कियो पुकारा। कुष्ठरोग हर काम हमारा॥
लोगन सुनि भूपतिपहँ लाये। जाय तहां प्रभु वचन सुनाये॥
ये विहंग केहि हेतु मँगायो। तब राजा वृत्तांत सुनायो॥
इनको तेल देहिं लगवाई। देहैं रोग विशेष मिटाई॥
वैद्य कह्यो छोड़िये विहंगा। अबहिं अरोग करैं सब अंगा॥
भूप कह्यो करु प्रथम अरोगा। तब करु हंसन छोड़न योगा॥
तब साधुन चरणोदक पायो। भूपति अँगते कुष्ठ नशायो॥

दोहा—भूपति अंग अरोग्य करि, हंसन दियो छोड़ाय।
कौन दीनकी लेय सुधि, बिन श्रीयादवराय॥ ९॥

राजाको यह कर्म बतायो। साधु चरणसेवन मन लायो॥
राजा चरणन परचो सुखारी। कियो भूमि धन देन तयारी॥
प्रभु कह देहु संतहित काहीं। हमको अब आशा कछु नाहीं
पै अब ऐसी रीति न गहियो। नहिं धृतराष्ट्र दशाको लहियो॥
राजा कह्यो कथा यह कैसी। तब प्रभु कहन लगे सब जैसी॥
रहे एक नृप धर्म प्रधाना। निरत निरंतर पग भगवाना॥
एक वर्ष वरष्यो नहिं सोती। भयो न मान सरोवर मोती॥
तब द्वै हंस भूप ढिग आये। राजा अपने बाग बसाये॥
बसे हंस भे सुखी अखंडा। कछु दिन माहँ धरे सौ अंडा॥
यक दिन नृपति नयन भइ पीरा। जुरी तहां वैद्यनकी भीरा॥
नृप दृगहित औषधी बनाये। हंस अंड विधि तासु बताये॥

एक समय वृंदावन आयो। श्रीहरिवंश दरश मन लायो ॥
श्रीहरिवंश सुमति तेहिं चीन्ह्यो। प्रेम समेत शिष्य करि लीन्ह्यो॥
भयो सु परमारथी प्रधाना। कृष्ण चरण रतिमें मतिसाना॥
तब मनमें अस कियो विचारा। यक थल बैठि न होय गुजारा॥
बिन धन परमारथ नाहिं होई। राखै हमको भूपति कोई ॥
यह विचारि गृहते चलि दीन्ह्यो। सँगमें निज कुटुंब लै लीन्ह्यो॥
गयो उदयपुर उदित प्रभाऊ। बसत जहां राना नृपराऊ ॥
राना जानि ताहि बड़भागी। राख्यो चाकर वार न लागी ॥
पट्टा दियो लाख रुपयाको। कियो अधिप नेसुक वसुधाको ॥
राना रोज बोलि दरबारा। करै भुवनकर अति सत्कारा ॥
भुवनसिंह आह्निक अस बांध्यो। आठहु याम कृष्ण अवराध्यो॥

दोहा—प्रथम याम सेवा करै, कृष्णचरण चित लाय।
द्वितिय याम नृप सदन चलि, कारज करै बनाय॥२॥
परमारथ तिसरे करै, चौथे नृप दरबार।
भुवन भाव किमि वरणिये, महिमा बढ़ी अपार॥३॥
भक्तमालमें लिखत हैं, नाभा छप्पय जौन।
इत प्रमाण हित मैं लिखौं, छप्पय कौतुक तौन॥४॥

(दारुमयी तरवार सारुमय रची भुवनकी)

भुवन उदैपुर बस्यो सुखारी। महरानाको अति हितकारी ॥
यक दिन राना तुरँग सँवारा। खेलन निकस्यो विपिन शिकारा॥
सहसन सादी संग सिधारे। शूकर मृगा शशन बहु मारे ॥
गर्भवती यक मृगी परानी। जाय सवारन मध्य समानी ॥
चहुँ दिशि भाग्यो पंथ न पायो। तब राना अस हुकुम सुनायो॥
हरिणी कढ़ै जासु ढिग जाई। सोइ मारै तरवार चलाई ॥
मृगी भुवन ढिग निकसन लागी।भवन हन्यो असि सो कटि लागी

अनुचर दौरि बागते लाये । सो औषधि नृप नयन लगाये ॥
दोहा—औषधि लेपत पीर गइ, उठि बैठ्यो नरनाहँ ।
सुन्यो हंस अंडानि लै, डारयो औषधि माहँ ॥ ६ ॥
यह सुनि नृपति बहुत पछितायो।सब अनुचरन दंड करवायो॥
सो जब मरयो भूप लहि काला । भयो सोई धृतराष्ट्र भुवाला ॥
रानी नृपकी मीचुहि पाई। गांधारी भै सो महि आई ॥
सौ अंडा हंसनके जेते । पुत्र सुयोधनादि शत भे ते ॥
सो अंडन वध पाप प्रभाऊ । देख्यो शत सुत वध कुरुराऊ ॥
रह्यो भूप धर्म्मज्ञ अपारा । मिल्यो ताहिते नन्दकुमारा ॥
राजा को अपराध अज्ञाता । ताते मिल्यो विदुर सम भ्राता॥
शरणागत नृप हंसन पाला । ताते महि भोग्यो बहु काला ॥
वैद्यरूप हरि अस कहि वैना । पुनि कह तोहिं यमकी अब भैना॥
गे विकुंठ वैकुंठ विहारी । राजा सकुल लह्यो सुख भारी ॥
महाभागवत भूपति भयऊ । साधु चरणसेवन मन दयऊ ॥
दियो राज डौंड़ी पिटवाई । सेवहु संत चरण मन लाई ॥
दोहा—बहुत काल लगि राज्य करि, छोंड़यो भूप शरीर ॥
डंका दै यमराजपुर, गयो जहां यदुवीर ॥ ७ ॥
हंस मिले जेहिं वेषते, सोइ वेष निज धारि ॥
वधिक भागवत ह्वैगये, भव भय दियो निवारि॥८॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्त०चत्वारिंशोध्यायः॥ ४० ॥

अथ भुवनसिंहकी कथा ॥

दोहा—अब अख्यान बखानहूं,भुवनसिंह चौहान ॥
भुवन चारि छायो सुयश, भुवन प्रताप महान॥ १ ॥
भुवनसिंह यक रहो चौहाना । बालहिंते ध्यायो भगवाना ॥

श्रावक सहित भई युग खंडा। लगे सराहन वीर उदंडा॥
राना मुरुकि महल महँ आयो। भुवन महा ग्लानी मन छायो॥
हाय कहावहुँ मैं हरिदासा। मृगी मारि किय सुकृत विनासा॥
जो न होति कर में तरवारी। मृगी सगर्भ जाति नहिं मारी॥
खड्ग आजुते कर नहिं धरिहौं। भूप देखावन मिसि कछु करिहौं॥

दोहा—सोइ म्यानमें काठ की, राखि भुवन तरवार।
सांझ जाय रोजै करै, रानाको दरबार॥ ५॥

यहि विधि बीति गयो कछु काला। भुवन वस्यो ध्यावत नँदलाला॥
भुवन चाकरी लखि अति भारी। लगै काहुको नाहिं पियारी॥
करन चहैं चुगुली तेहि केरी। कहन व्याज पावैं नहिं हेरी॥
यक दिन भुवन खड्ग कोउ भाई। देखि काठकर हँस्यो ठठाई॥
सो उपाय चुगुली की जानी। राना सों चलि कह्यो बखानी॥
जाको लाख चाकरी देहू। ताकी दशा देखि यह लेहू॥
राखत काठ केरि तरवारी। कहवावतहै समर जुझारी॥
राना अचरज मन महँ मान्यो। तासों पुनि अस वचन वखान्यो॥
मृषा होय तो का पुनि होई। सो कह दंड होय मोहिं सोई॥
भुवन केरि देखहु तरवारी। ह्वैहै तबहिं प्रतीति तुम्हारी॥
चारण बोलि कह्यो तब राना। बोलहु शूरन होत विहाना॥
सब सरदार आय दरबारा। सादर मोजरो करैं हमारा॥

दोहा—सरदारनको दूत चलि, लाये तुरत बोलाय।
भुवनसिंहहू आयकै, बैठे शीशनवाय॥ ६॥

भक्त तेजवश सन्मुख राना। भुवनसिंह सों नाहिं बखाना॥
तब राना यह कियो उपाई। देहिं सबै तरवारि देखाई॥
असकहि अपनीकाढ़ि कृपाणी। म्यान्यो ताहि विशेखि बखानी॥
पुनि जे निकट बैठ सरदारा। तिनके खड्ग निकारि निहारा॥

देखत देखत सब लखि लयऊ। भुवनसिंह बाकी रहगयऊ ॥
भुवनसिंह सों भूपति भाख्यो।कस तरवारि म्यान महँराख्यो।
भुवन चह्यो अस करन उचारू। मम तरवारि अहै प्रभु दारू ॥
दारु कहत निकस्यो मुख सारा। अचरज सब दरबार विचारा ॥
भुवनसिंह सुमिरयो यदुनाथै। अब मम लाज रावरे हाथै ॥
दियो खड्ग राना कर माहीं। सुमिरत यदुकुल भूषण काहीं॥
राना द्रुत तरवारि निकासी।चमकि उठी चहुँ दिशि चपलासी॥
सबके चखचौंधा परि गयऊ। महराना मन विस्मित भयऊ॥
तासु तेज सहि सक्यो न राना। खड्ग तुरंत म्यान महँ म्याना॥

दोहा—बोल्यो राना भुवन सों,अस कहुँ सुन्यो न दीख ॥
जैसो खड्ग तुम्हार है, जाहु भवन है शीख ॥ ७ ॥

फेरि कह्यो चुगुली जे कीन्हे। तुम कस मृषा भाषि मुखदीन्हे।
हैं तुमहिं दंड अति घोरा। चहौं विनाशकरन जन मोरा॥
भाषत भटन कह्यो पुनि राना। दै शूरी लीजै इन प्राना ॥
भुवन ठाढ़ ह्वै कह कर जोरी। नाथ न इनकी है कछु खोरी॥
सत्य दारुकी मम तरवारी। राख्यो लाज आज गिरिधारी॥
तब राना पूछयो सब हाला।केहिं हित धरयो दारु करवाला।
भुवन मृगी की कथा सुनाई। राना अति अचरज मन लाई॥
भुवनसिंह को गुनि हरिदासा। करि वंदन बैठाये पासा ॥
आठ लाख पट्टा तेहिं कीन्ह्यो। मत दरबार आव कहि दीन्हो॥
हमहीं तुव दरशन हित ऐहैं। तुव सतसंग पाय तरिजैहैं ॥
हमहूं धन्य अहैं संसारा। जिनके तुम समान सरदारा ॥
असकहि बिदाभुवनकी दीन्ही। राज समाजसकल नतिकीन्ही॥

दोहा–राखत लाज अनन्य निज, सेवक की यदुराज।
भुवनसिंह चौहान की, जैसी राखी लाज ॥ ८ ॥

इति श्रीभक्तमाल रामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकच
त्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

अथ देवापंडाकी कथा ॥

दोहा–देवा पंडा की कथा, कहौं उदंडा सोय।
झंडा जाके सुकृतको,नव खंडा में जोय ॥ १ ॥
देश एक मेवारहै,राना जासु अधीश।
तहां चतुर्भुज रूपते, निवसत हैं जगदीश ॥

बन्यो चतुर्भुज मंदिर भारी। रहति भोग की बड़ी तयारी ॥
रहै नेम कीन्हे अस राना। दरशनहित नित करै पयाना॥
जब दरशन लै लौटन लागे। देवा पंडा अति अनुरागे ॥
देहि फूल माला परसादी। लै राना गवनै अहलादी ॥
एक दिवश भै विलम महाना। राना कियो न दरशपयाना ॥
देवापंडा तब अस जाना। दरशन हित ऐहैं नहिं राना ॥
प्रभुहि सोवाय सुमाल उतारी। लियो आपने गल महँ धारी ॥
कढ़न लग्यो मंदिर ते जबहीं। देखिपरे महराना तबहीं ॥
तब द्रुत गल ते माल उतारी। धरिदीन्ह्यो जसको तस थारी॥
देवा बूढ़ रहे सचेता। तनुके बार रहैं सब श्वेता ॥
गेद्रै चारि बार रहि माला। इतने में आयो महिपाला ॥
लौटन लग्यो दरश जब कीन्हो। देवा माल भूप कहँ दीन्ह्यो ॥

दोहा–राना पहिरि कढ़्यो जबै, सूंघ्यो माल उतारि।
बूढ़े बार विलोकिकै, पंडै कह्यो हँकारि ॥ २ ॥

बूढ़े बार माल लपटाने। ताको भेद न हम कछु जाने ॥

देवापंडा कह्यो डेराई। नाथ गये यदुनाथ बुढ़ाई॥
तब राना बोल्यो अनखाई। भोरलखोंगो मैं इत आई॥
देवा पंडा भय अति माना। कुशल होय किति होत विहाना॥
निशिप्रयंत श्रीकंतहि ध्यायो। यह प्रमाण प्रियदासहु गायो॥
कवित्त—कहत तो कही गई सही नहिं जात अब, महीपति डारै मारि हरि पद ध्याये हैं। अहो हृषीकेश करौ मेरे लिये श्वेत केश, लेसहू न भक्ति कहि कियो देखो छायेहैं॥ इति॥
बार बार पंडा पद परई। धड़कत हियो धीर नहिं धरई॥
जस तस कै तहँ भयो प्रभाता। पंडामन महँ अति बिलखाता॥
हे करुणानिधि राखहु लाजू। तुमतौ अहौ गरीबनेवाजू॥
इतने में आयो महराना। पंडा देखत वदन सुखाना॥
गयो दरश हित मंदिर माहीं। पंडहु लीन्ह्यो बोलि तहांहीं॥
कह्यो देखाव बूढ़ कहँ नाथा। पंडा कह्यो जोरि युग हाथा॥
देखहु जाय समीप सिधारी। मृषा गिरा मैं नाहिं उचारी॥

दोहा—राजा जाय समीप हरि, देख्यो निज दृग माहिं।
डाढ़ी में अरु वदनमें, श्वेत बार दरशाहिं॥ ३॥

राना जान्यो मोम लगायो। पंडा श्वेत बार लपटायो॥
तब यक बार पाणिमें धारी। राना लीन्ह्यो तुरत उखारी॥
उखरत बार सकिलिगइ नासा। भयो तहांते रुधिर प्रकासा॥
छिटका परे भूपके आई। मही महीप गिरयो मुरछाई॥
चारि दंडमें मूर्छा जागी। राना उठ्यो बिचारि अभागी॥
बहुत प्रार्थना प्रभु सों कीन्ह्यो। व्रत करि भूमिशयन करिलीन्ह्यो॥
स्वप्ने में प्रभु शासन दयऊ। तोहिं दंड ऐसो अब भयऊ॥
राना जबते गद्दी बैठे। तबतै मेरे भवन न पैठे॥
तब राना करि पूजन भारी। गयो उदैपुर महा दुखारी॥

चली जाति अबलों यह रीती । जात न राना गुनि प्रभु भीती॥
जबलौं गद्दी बैठै नाहीं । तबलौं दरश परश हित जाहीं॥
यहि विधि देवा पंडा हेतू । बूढ़े ह्वैगे कृपानिकेतू ॥

दोहा—सो वरण्यो प्रिय दासहू, नाभा कियो बखान ।
सो मैं इत लिखि देतहौं, श्रोता गुनहु प्रमान ॥ ४ ॥

कवित्त—आयो भोर राना श्वेत बार सो निहारि रह्यो, कह्यो श्वेत केश काहू पंडाने लगायो है । ऐंचिलियो एक तामें खैंचत चढ़ाई नाक, रुधिर की धारा नृप अंग छिरकायो है ॥ गिरयो भूमि मूर्छाह्वै तनुकी न सुधि कहूं जाग्यो याम बीते अपराध कोटि गायो है । यही अब दंड राज बैठै सो न आवै यहां, अबलोंहूं आन मानि करै जो सिखायो है ॥ १ ॥

इति श्री भक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
द्विचत्वारिंशोध्यायः ॥ ४२ ॥

अथ कमधुजकी कथा ॥

दोहा—कमधुज की वरणौं कथा, धर्मध्वजा फहरात ।
भक्तमाल में जो कह्यो, सो विस्तर विख्यात ॥ १ ॥

कमधुज विप्रचारिहू भाई । भये उदैपुर चाकर जाई ॥
राना सादर तिन कहँराख्यो । चूके तिन पर कबहुँ न माख्यो
कमधुज तिनमें लहुरे भाई । सो अपनी अस रीति दृढ़ाई ॥
भोरहि निकसि विपिन महँ जाई।कराहिं यकांत भजन यदुराई ॥
भोजन हेतु घरिक घर आवै । भजन करत दिन रैनि बितावै॥
एक दिवस तहँ तीनिहु भाई ।कमधुज कहँ अति आँखिदेखाई
कह्यो कहां तैं कानन जाई । देत तहां दिन रैन बिताई ॥
क्षण भर तू हुजूर ह्वै आवै । पुनि रहु जहां तोरि मन भावै॥

नहिं तो तोरि चाकरी छूटी। भूप गैरहाज़िर कहि खूंटी ॥
तब कमधुज बोल्यो तिनकाहीं। हमतो रहैं हजूरहि माहीं ॥
हमरो तो पट्टा लिखि गयऊ। यक जन द्वै ठाकुर नहिं कयऊ॥
कहँ पट्टा भाई कहि माषे। तब कमधुज सानंदित भाषे ॥

दोहा—चाकर दशरथ लालके, खड़े रहैं दरबार।
पटौ लिखायो अवध में, यह तनु डारयो वार ॥ २ ॥

तब भाई बोले अनखाई। देखैं वनमें कौन जराई ॥
रात दिवस बसतो वन माहीं। मरिजैहै कोउ तुव सँग नाहीं ॥
कमधुज कह्यो जरैहैं सोई। जौन हमारो ठाकुर होई ॥
अस कहि कमधुज विपिन सिधारी। धरयो ध्यान कोशलाविहारी।
भजन करत तनु छूटत भयऊ। तब रघुनाथहु शंकट गयऊ ॥
उठि तुरंत सियकंत सनेही। चल्यो जरावन कमधुज देही ॥
पवनसुवन पूछयो हरषाई। कहँ प्रभुकी अब होति जवाई ॥
प्रभु कह एक भक्त मरिगयऊ। तेहि तनु दाहन मैं चित दयऊ॥
मारुत कह मोहिं शासन देहू। आऊं तुरत दाहि तेहि देहू ॥
रघुपति कह्यो करहु यह काजा। सत्य कृपालु गरीब निवाजा ॥
अनिल तनय मलयाचल जाई। लाये चंदन काठ उठाई ॥
पीपर वृक्ष तरे तनु राखी। दाहन कियो राम मुख भाषी ॥

दोहा—दहन दहत कमधुज सुतनु, निकस्यो धूम तुरंत।
चलदल तरु वासी सकल, तरिगे प्रेत अनंत ॥ ३ ॥

तहँ कह यह प्रियदास प्रमाना। श्रोता सुनिये सकल सुजाना ॥
(छूटयो वन तन राम आज्ञा हनुमान आय कियो दाह धुवां लगे प्रेत पार भये हैं ॥) इति
जो श्रोता करिये कछु शंका। किमि प्रगट्यो वन महँ कपि बंका॥
अनगन तरे प्रेत केहि भांती। जान्यो कैसे जनन जमाती ॥

रह्यो विपिन नहिं जन संचारा। तौ सुनिये मैं करहुँ उचारा॥
तेहि पीपर में प्रेत हजारा। निशि दिन करहिं सबै संचारा॥
एक प्रेत कोउ नगर सिधायो। तब सो तनु हनुमान जरायो॥
प्रेत तरे सब सो रहिगयऊ। जाय तहां लखि रोवत भयऊ॥
हाय कहां गइ मोरि समाजा। अस कहि कीन्ह्यो शोर दराजा॥
लकरी ईंधन लेन जे आये। प्रेत सोर सुनि तुरत पराये॥
हल्ला कियो शहरमहँ जाई। रोवत एक प्रेत रव छाई॥
रानाजी सुनि देखन धाये। तरु तर जनन जमाति लगाये॥
पूंछे प्रेत प्रत्यक्ष बताना। मम समाज कित कीन पयाना॥

दोहा—तासु वचन सब जनन को, समुझि परै कछु नाहिं।
तब यक साधु स्वरूप धरि, आये हरी तहांहिं॥ ४॥

कह्यो प्रेत वाणी हमबूझी। अबलों तुमको कछू न सूझी॥
यक जन भक्त रह्यो भगवाना। ताको दाह कियो हनुमाना॥
साखीहै सब चंदन दारू। तरे धूम लहि प्रेत हजारू॥
तब वह प्रेत प्रचंड पुकारा। हा नहिं मोर भयो उद्धारा॥
तब पत्तन बहु साधु बटोरी। डारयो पावक भरि भरि झोरी॥
प्रेतहि कह्यो ठाढ़ हो सोहै। अनमिष रूप हमारो जोहै॥
प्रेत भयो सन्मुख तहँ ठाढ़ो। लाग्यो धूम तासु तनु बाढ़ो॥
धूम प्रभाव प्रेत तनु त्यागा। चढ्यो विमान दिव्य बड़भागा॥
गयो विकुंठ निशान बजाई। धन्य धन्य संतन प्रभुताई॥
कमधुज चिता केरि सब राखा। चुटकी २ सब शिर राखा॥
जे जे जन विभूति शिर धारे। ते ते जन वैकुंठ सिधारे॥
रतिहु मात्र तहँ रही न राषा। रहिगे भ्रात किये अभिलाषा॥

दोहा—रामदास कमधुज भयो, देखहु तासु प्रभाव।
चिता भस्म तारण तरण, प्रगट्यो प्रबल उपाव ॥ ६ ॥
इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रिच-
त्वारिंशोध्यायः ॥ ४३ ॥

अथ जैमिलराजाकी कथा ॥

दोहा—जैमिल जगतीपाल के, सुनहु चरित्र विचित्र ॥
हरिभक्तन गाथा सुनत, होते कर्ण पवित्र ॥ १ ॥
मेरु देशको जैमिल राजा। कृष्ण उपासक रह्यो दराजा ॥
श्रीहरिवंश स्वामि शिषि रहेऊ। साधु सेव धर्महि दृढ़ लहेऊ ॥
मीरा तिनहीं की दुहिता है। जाको यश बहु कवि वक्ता है ॥
रह्यो नेम नृपको दृढ ऐसो। करै न दश घाटि कारज कैसो ॥
घरी दशक हरिपूजन करई। बंद राज कारज सब रहई ॥
दश घटिका अंतर जो आवै। विनती करै सो दंडहि पावै ॥
एकसमय कोउ भूपति भाई। शत्रुन मिलिकै कियो चढ़ाई ॥
दश घटिका अंतर महँ आयो। लूटन लग्यो शहर चितचायो ॥
सचिव मुसाहिब अरु सरदारा। जाहिर करन गये नृप द्वारा ॥
राजा हरिपूजा महँ बैठो। त्राश विवश तहँ कोउ नहिं पैठो ॥
तब नृप जननी सों कह वायो। जननी आय नृपहि गोहरायो ॥
कहा बैठ पूजामहँ बेटा। शत्रुन शहर लूटि सब मेटा ॥
दोहा—तब जैमिल हरि दास नृप, इतनो कह्यो निशंक ॥
हरि आछो करिहैं सकल, काहे कीजत शंक ॥ २ ॥
कवित्त—जानि निज सेवक निरत निज पूजनमें, चढ़िकै तुरंग
श्याम रंगको सवार है। कर करवाल धारि कालहू को काल-
मानो पहुँच्यो उताल जहां सैन्य बेशुमार है। चपला सों चमकि

चहूंकित चलाय बाजी भटन की राजी काटि करत प्रहार है। रघुराज भक्तराज लाज राखिबेके काज, समर विराज्यो वसुदेव कोकुमार है ॥ १ ॥

दोहा—शत्रु समाज संहारि प्रभु, तुरँग तबेले राखि ॥
आप गये तेहि भवन जहँ,नृप बैठो अभिलाखि ॥३॥

दश घटिका बीते तब राजा। निकसि बोलायो वीर समाजा ॥
आयो तुरंग चढ़न के हेतू। सचिव कह्यो कीजय का नेतू॥
आपहिह्वै के तुरंग सवारा। कीन्ह्यो सकल सैन्य संहारा ॥
वह तुरंग तनु स्वेदहि धारा। तुम सम कौनवीर बलवारा ॥
तब राजा मन अचरज आयो। समरभूमि देखन कहँ धायो ॥
दल चढ़ाय जो लायो भाई। घायल परो विलोक्यो जाई ॥
सो जैमिल कहँ देखत भाष्यो। नृप कबते यह चाकर राख्यो॥
चढ़ि तुरंग यक श्याम सवारा। कीन्ह्यो सकल सैन्यसंहारा ॥
राजा गुनि हरिकी प्रभुताई। दौरि गह्यो भाई पद जाई ॥
कह्यो दरश पायो तैं भाई। हौं ललकतही उमिर गँवाई ॥
पुनि उठाय भाई घर लायो। अच्छो करि उपदेश सुनायो ॥
सोऊ भयो भागवत रूपा। विषय वासना सब भै लोपा ॥

दोहा—अब राजा को भाव जस, यदुपति में सब काल ॥
रह्यो तौन वर्णन करौं, सुनहु सबै सुखजाल ॥ ४ ॥

सब महलन ते उपर उतंगा। राधा मोहन मंदिर शृंगा ॥
कनकासन आसित वर जोरी। कनकसाजु सब ओर न थोरी ॥
करैं सकल उत्सव हरिकेरे। कोउ नजान पावै प्रभु नेरे ॥
चढ़ै निसेनी राखि नेरशा। दूसर कोउ नहिं करै प्रवेशा ॥
उतरि जबै मंदिरते आवै। तबै निसेनी अनत धरावै ॥
रानिहुँ भरि तहँ जान न पावै। एक दिवस रजनी के यामै ॥

चोरिन रानी दियो निसेनी। चढ़ि खोल्यो कपाट की वेनी॥
तहँ देखै तो तेहि पर्यंका। मोहन बैठि राधिका अंका॥
रानी चकित भाजि तब आई। समय पाय निज पतिहि सुनाई॥
राजा धन्य कह्यो निज रानी। लेहिं तबहिंते रानिहु आनी॥
जैमिलराज राजऋषि भयऊ। यहि विधि भाव कृष्णमहँ कयऊ॥
एक दिवस यक संत सिधार्‍यो। राजा ताहि बहुत सतकार्‍यो॥

दोहा—रह्यो संत नृप भवनमें, बहुत काल लगि सोय॥ ॥
काम विवश तिय एक लै, रह्यो ऊपर वर सोय॥५॥
भूपति कीन्यो काज वश, ऊपर जाय निहारि।
कछु न कह्यो आयो उतरि, उपर पिछौरी डारि॥६॥
जागि संत नृपको वसन, चीन्हि सबै तहँ आय।
कछु न कह्यो तब भूप तेहिं, ले यकांत में जाय॥७॥
कह्यो वचन अस सुनहु प्रभु, इत बहु विधिके लोग।
करैं घात जो आप को, होय तो मोहिं दुख भोग॥८
ताते धन लै अनत कहुँ, भजन करहु तपठानि।
लै धन संत तुरंत तब, गमन्यो मानि गलानि॥ ९॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्त०
चतुःचत्वारिंशोध्यायः॥ ४४॥

अथ साखी गोपालकी कथा॥

दोहा—अब साखी गोपाल की, वरणौं कथा रसाल।
हरणहार कलिकालको, अति कराल भ्रमजाल॥१॥

गोडवान नामक यक देशा। तहँको वासी द्विजवर वेशा॥
लै यक बालक अपने संगा। तीरथ करन चल्यो सउमंगा॥
तीरथ करत करत सुख छाये। वृद्ध बाल वृंदावन आये॥

वृद्ध विप्र रोगित ह्वै गयऊ। बालक बड़ि सेवा तेहिं भयऊ॥
वृद्ध विप्र जब भयो अरोगा। तब बालक को कियो नियोगा॥
कियो मोरि तैं अति सेवकाई। मेरे नाहिं सम्पति समुदाई॥
काह देहुँ मैं अहौं उछाही। दिहौं तोहिं कन्या निज व्याही॥
बालक कह्यो न करौं विवाहा। वृद्ध परचो तब अति हठमाहा॥
तब बालक बोल्यो द्विज पाहीं। साखी देहु गोपालहि काहीं॥
कह्यो वृद्ध तब तुम दृढ़ रहहू। हे गोपालजी साखी अहहू॥
बालक कियो मोरि सेवकाई। कन्या देहौं मैं घर जाई॥
अस कहि वृद्ध बालकहु दोऊ। आये घर जान्यो नाहिं कोऊ॥
दोहा–वृद्ध कह्यो निज सुतन सों, मैं दीन्ह्यों अस हारि।
कन्या तोहिं विवाहिहौं, अनुचित उचित विसारि॥ २॥
पुत्रन कह्यो न योग विवाहा। करिहैं नहीं कहे भो काहा॥
बीतन लगे लगन दिन जबहीं। बालक कह्यो वृद्ध सों तबहीं॥
सुता देनको जो तुम भाषे। दीजै जात लगन कतनाषे॥
वृद्ध कह्यो हम कह्यो न देना। काके आगे हारे वैना॥
बालकह्यो साखी गोपाला। उव्यो न्याउ को कलह कराला॥
लरत लरत दोउ भूप समीपा। जात भये तब कह्यो महीपा॥
चार पांच जो न्याव पटावै। सो वादी दोउ करै करावै॥
पांच बैठि पूछचो दोउ काहीं। यह नियाव महँ साखी नाहीं॥
बालक कहचो कहौ केहिं भाषी। यामें अहैं गोपालहि साषी॥
पंच कह्यो पटि गयो नियाऊ। जो साखी बालक लै आऊ॥
पंच सभामें साखी बोलै। तौ पुनि वृद्ध वचन नहिं डोलै॥
यह प्रमाण भाष्यो प्रियदासा। सो मैं दुइ तुक करौं प्रकासा॥
(कवित्त–भई सभा भारी पूछचो साक्षी नर नारी श्रीगोपाल बनवारी और कौन तुच्छ लोगहै॥लेवो जू लिखाय जो पै साक्षी

भरै आय तोपै व्याहि बेटी दीजै लीजै बड़ो सुख भोगहै) इति ॥

दोहा—तब बालक बोलत भयो, ह्वैहैं साखी सांच ।
तौ गोपाल इत आयकै, कहि देहैं मधि पांच ॥ ३ ॥

तब द्विज बालक तुरत सिधायो । चलत चलत वृंदावन आयो॥
जाय गोपाल समीप पुकारा । वृद्ध व्याह नहिं करत हमारा ॥
साखी रहे गोपालहि भलिकै । कहौ गोपाल साखि तहँ चलिकै॥
नातो लेहु हमारो प्राना । हम काके ढिग करैं पयाना ॥
अस कहि धरन कियो द्विज बालक।द्वै दिन बिते कह्यो जगपालक
चलिहैं हम बोलब तहँ साखी । तब बालक बोल्यो अभिलाषी॥
प्रतिमा बोलति कबहूं नाहीं । तुम बोले हमरे हित काहीं ॥
बोले तौ बोलहु चलि साखी । अब काहेको बांधी राखी ॥
तब प्रत्यक्ष हँसि कह्यो गोपाला । चलु हम चलैं संग द्विजवाला॥
मगमहँ आछो भोग लगैये । पीछे को नहिं बहुरि चितैये ॥
हमको लौटि चितैहै जहँई । रहिहैं अवशि विप्रसुत तहँई ॥
द्विज बालक बोल्यो तब बानी । चितये बिना परी कब जानी ॥
प्रभु कह मेरो नूपुर शोरा । सुनत चलौ जैहै द्विज छोरा ॥

दोहा—कहि अस द्विजसुत चलिदियो, सुनत सो नूपुर शोर।
देत भोग द्वैसेरको, चितयो नहिं तेहि ओर ॥ ४ ॥

जब द्वैकोश रह्यो सो ग्रामा । मान्यो बालक पहुँच्यो धामा ॥
मनमहँ द्विजसुत लियो विचारी। होत महा नूपुर झनकारी ॥
शोरहिमात्र करै करि माया । धौं आवत सँग में यदुराया ॥
अस विचारि ताक्यो तब पाछे। लख्यो गोपालहि आवत आछे ॥
कह गोपाल यह रह्यो करारा । लावै इत लेवाय परिवारा ॥
आगे हम इतते नहिं जैहैं । याही थल निज भवन बनैहैं ॥
बालक जाय महीप पुकारा । आयो साखी कहन हमारा ॥

यह सुनि भूपति प्रजा समेतू । वृद्ध बाल दरशनके हेतू ॥
आये सकल तहां द्रुत धाई । छके विलोकि मनोहरताई ॥
शङ्ख झालरी बजे नगारे । अरपे चंदन फूल अपारे ॥
करि पूजन नृप विनय सुनायो । तब सबके आगू हरिगायो॥
सत्य वृद्ध व्याहन दिय भाषी । हमहें यहि बालक के साषी ॥

दोहा–तब सो द्विज व्याह्यो सुता, बालक विप्र बोलाय ।
रहेनाथ तेहि देश में, साखि गोपाल कहाय ॥ ५ ॥
भक्तमालमें है सही, यह प्रियदास प्रमान ।
सो मैं इत लिखिदेतहौं, श्रोता सुनहु सुजान ॥ ६ ॥

कवित्त–खोलिकै सुनाई साख पूजी हिय अभिलाष लाख लाख भांति रंग भरयो उर भायकै । आयो ना स्वरूप फेरि विनय करि राख्योघेरि भूपै सुख ढेरि दियो अबलों बजायकै ॥ मोती एक रह्यो नृप कह्यो राति रानीसन छिद्र होतो तौ बुलाक देते पहिरायकै॥प्रात जाय छिद्र देखि मोती पहिराय दीन्ह्यो ऐसी कला गोविंदकी तरै जन गायकै ॥ १ ॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचचत्वारिंशोध्यायः ॥ ४५ ॥

अथ वारमुखीकी कथा ॥

दोहा–वारमुखीकी यह कथा, बार बार हरषाय ।
बार बार वर्णन करौं, बार बार मुख गाय ॥ १ ॥

जुरी एकथल संत समाजा । तीरथ करन चले कृत काजा॥
निकसे एक ग्राम ह्वै जाई । परे मस्खरा चारि देखाई ।
साधुन कह्यो कहां है पानी । ढूँढ चारि दुष्टता बखानी ॥
रहै एक वेश्याकर भोना । अति सुंदर चमकत चहुँ कोना॥

ताको दियो निवासबताई। यह जल थल सुंदर सुखदाई॥
अहै साधुके निवसन योगू। यामें कछू नहीं दुख भोगू॥
साधु जाय उज्ज्वल थल देखी। बसे तहाँ अतिशय सुख लेखी॥
वेश्या भवन साधु नहिं जान्यो। सविधि कृष्ण पूजन निर्मान्यो॥
शंख बजाय कियो जब सोरा। तब गणिकाको भो अति भोरा
लख्यो द्वार ते भय उर आने। हंस वर्ण सब संत देखाने॥
लगी करन मनमाहिं विचारा। पूर्व पुण्य कछुकियो पसारा॥
आये संत आजु घर मोरे। प्रगटे पुंज पुण्य नहिं थोरे॥

दोहा—करि सोरह शृंगार तनु, भरि वहु मोहर थार।
काढ़ि आई निज भवनते, वंदत वारहिं बार॥ २॥

धरिदीन्ह्यो महंतके आगे। बोली वचन अतिहिं अनुरागे
नाथ आप धोखे महँ आये। वेश्या गृह कोऊ नबताये॥
तब महंत पूंछ्यो अस बाता। को तुम अहहु करहुविख्याता
गणिका कह्यो अहौं गणिका मैं। बहु बसुधामै मम वसु धामैं॥
दरश प्रभाव कुमति भै दूरी। अब मम आश करहु प्रभु पूरी॥
बही तासु नयननजलधारा। लखि महंत अस कियो विचारा॥
वेश्यासम्पति लेब न योगू। अति उत्तम यहि करौ नियोगू॥
तब महंत बोल्यो अस बैना। वेश्या अहै तदपि करु भैना॥
जितनी तेरे सम्पतिहोई। कारज करै और नहिं कोई॥
मुकुट मनोहर जटित मणीना। रंगनाथ को रचै प्रवीना॥
वारवधू बोली बिलखाई। नाथ बात यह कठिन देखाई॥
मेरो वित्त भक्त नहिं लेहीं। रंगनाथ को केहिविधि देहीं॥

सोरठा—कह महंत हरषाय, तू अरपै निज हाथ ते।
मुकुट मंजु बनवाय, जामिन हम यहि बातके॥३॥

वेश्या सुनि अति आनँद पायो। लाखन जड़ियनको बोलवायो॥

कोटि प्रयंत रही घर सम्पति । विरच्यो मुकुट मनोहर दम्पति॥
संत रहे तबलगि तेहि भोना ।जबलगि मुकुट बन्यो अतिसोना॥
बन्यो मुकुट तेहि संत निहारी । करी प्रशंसा ताकारि भारी ॥
दुष्टलोग निंदन तेहि लागे । भे बावरि नंगा सँग लागे ॥
सुमति सराहन लगे विचारी । वारमुखी किय कीर्ति उज्यारी॥
रंगनाथ हित मुकुट बनायो । संतन चरण चित्त निज लायो॥
तब महंत अतिशय सुख पाई । वारमुखी निज निकट बोलाई॥
कह्यो वचन बहुबार सराही । अहै पाप तेरे तनु नाहीं ॥
अब काहूको कहो न मानै । रंग मंदिरै करै पयानै ॥
अपने कर यह मुकुट धराई । रंगनाथ को देहि चढ़ाई ॥
प्रेम अधीन होत भगवाना । ऐसो भाषत वेद पुराना ॥

दोहा—वारमुखी सुनु चित्त दै, यह उपदेश हमार ।
जो यहि विधि चलिहै अवशि, छूटी तुव संसार ॥ ४॥

कवित्त—धनहीते नरकवास होत सुनु वारमुखी धनहीते सुख-
युत हरिहि मिलाइये । नाना भाँति मन दै जो विषय लगावै
चित्त तेई जगजीव दुख दाह बहु पाइये ॥संपतिको पाय हरिमंदिर
बनावे नीक साधुनखवाय शीश पदरज लाइये । ऐसे जन मो-
दितह्वै स्वर्गमें नगारे देत देवन प्रशंस पाय धाम प्रभु जाइये १
मनुजको जन्म लहै उत्तम कुलमाहँ रहै वंशको विभव दीर्घ आ-
युष अरोगई । भूप सन्मान पुत्र परमसुजान नारि गौरीके समान
भक्ति वेलि उर मेवई ॥ विद्यावान शीलवान इंद्रीजय में प्रधान
तैसे सतपात्र दान दया हगवोनई । रघुराजविना पूर्व पुण्य ऐसे
दश चारि गुण संसारिनको होत दुरलभई ॥ २ ॥

दोहा—वारवधू सुनु जगतमें, जेते मूर्ख महान ।
तिनको हौं संक्षेपते, तोसों करौं बखान ॥ ५ ॥

छप्पय–ज्ञानवान हठ गहै रंक परिवार बढ़ावै।
विधवा करै शृँगार धनी सेवा को धावै॥
निर्धनचहै महत्व नारि भर्ता अपमानै।
पंडित कृपा विहीन राज दुर्बल करि जानै॥
कुलवंतपुरुषकुलविधितजत नहिंमानतउपकारकृत
संन्यास धारि धन संग्रहै ये जगमें मूरुख विदित १॥
दोहा–ऐसे संतन वचन सुनि, वारवधू सुखपाय।
हरिमेंअरु हरिजननमें, दीन्ह्यो चित्त लगाय॥ ६॥
मुकुट मँगाय तुरंतही, संतनके ढिग माहिं।
धरि बोली मंजुल वचन, काह हुकुम हमकाहिं॥ ७॥
कहे संत सब मंगल वानी। चलै रंगमंदिर छवि खानी॥
जोरि सकल आपनी समाजा। गावत चलै बजावत बाजा॥
संतन शासन सो शिरधारी। धर्‌यो मुकुट कंचन की थारी॥
दोउ कर लीन्हे वित्त लुटावत। चली रंगमंदिर सुख छावत॥
संत समाज तासु सँग लागी। चहुँदिशि महँ जयजय ध्वनि जागी
वारवधू कर लखि अनुरागा। माने सकल संत बड़भागा॥
गई रंगमंदिर महँ जबहीं। वारण कियो कोउ नहिं तबहीं॥
निज ठकुराइनि रमाविचारी। एक मुकुट दिय तेहिं शिर धारी॥
रंगनाथ पहिरावन हेतू। दूसर मुकुट केर किय नेतू॥
ह्वैगै रजस्वला तेहिं काला। वारवधू अति भई बिहाला॥
कैसे अशुचि मुकुट पहिराऊं। बिन पहिराये किमि घर जाऊं॥
ठाढ़ीरही करत संदेहा। बाढ़ो रंगनाथ पद नेहा॥
दोहा–वारवधूको प्रेम लखि,सब अवगुण बिसराय।
रंगनाथ निज माथको,दीन्ह्यो तुरत नवाय॥ ८॥
यह अचरज लखिसतसमाजा। जय जय कहि बजवायो बाजा॥

वारवधू तब मुकुट सुधारी । दीन्ह्यो रंगनाथ शिरधारी ॥
कहन लगे सब संत सुजाना । भक्त अधीन होत भगवाना ॥
क्षणमें सकल चूक बिसरावत । तुलसी दासहुँ ऐसहि गावत ॥
लखत न प्रभु चित चूककिये की। करत सुरति सौ वार हियेकी॥
मिलहिंनरघुपति विन अनुरागा । कीन्हे कोटि योग जप यागा॥
वारमुखी पुनि औरहु तेती । अरपी संपति घरमहँ जेती ॥
निवसी रंग भवनके द्वारा । मागि मधुकरी करै अहारा ॥
कछु दिनमहँपुनितज्यो शरीरा । गैविमान चढ़ि जहँ यदुवीरा ॥
अबलों मुकुट वारतिय केरो । रंगनाथ शिर सजत घनेरो ॥
देखहु संतन संग प्रभाऊ । वारवधू भै शुद्ध स्वभाऊ ॥
देखहु बहुरि प्रेम प्रभुताई । लियो वारतिय हरि अपनाई ॥

दोहा—पापिन सकल शिरोमणी,गणिकाको अवतार ।
रंगनाथ मनना धरचो, केवल प्रेम विचार ॥ ९ ॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्धेषट्च
त्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

अथ रैदासकी कथा ॥

दोहा—अब प्रकाश रैदासको,यह इतिहास अखंड ।
सब श्रोता चितदे सुनहु, नाशत पाप उदंड ॥ १ ॥

रामानंद भक्त परधाना । तासु शिष्यइक विप्र सुजाना॥
सात भवनते भिक्षा लेई । रामानंद गुरूकहँ देई ॥
ताते कृपापात्र गुरु केरो । होत भयो सो विप्र घनेरो ॥
एक दिवस भिक्षा हित गयऊ । जलप्रपात अतिशयतहँभयऊ॥
खड़ो भयो यक वनिक दुवारे । वनिकताहि अस वचन उचारे॥
हमहीते भिक्षा ले सटको । द्वार द्वार काहेको भटको ॥

लै भिक्षा द्विजगुर ढिग आयो । रामानंदहु पाक बनायो ॥
पुनि श्रीहरिको भोग लगायो । भोजन करन आप मन लायो॥
तब द्विजसों बोले अस बानी । यह भिक्षा कहँते तुम आनी ॥
शिष्यकह्यो सबवणिक हवाला । वणिक बोलायो गुरुतत्काला ॥
कहो पिसान कहाँ तुम पायो । वणिक नारिनिज नाम बतायो॥
तब पूछ्यो नारीसूं जाई । नारी कही चमारिनि ल्याई ॥

दोहा—रामानंद प्रकोप करि,शिष्यहि दीन्हो शाप ।
चर्मकार कुल जन्म तुव, होय कियो बड़पाप ॥ २ ॥

मर्‌यो ब्रह्मचारी लहि काला । सोइ चमार घर जन्यो उताला ॥
पै गुरुसेवन प्रगट प्रभाऊ । भयो न पूरब सुरति दुराऊ ॥
बालक भयो वर्ष जब तीना । तबते दूध पान नहिं कीना ॥
मातु पिता तब भये दुखारी । बैठे रहे अचर्ज विचारी ॥
रामानंदहि इतै खरारी । कह्यो स्वप्नमहँ वचन उचारी ॥
चर्मकार कुल तवशिष जायो । पयको पान करन विसरायो ॥
दै आवहु तुम ताहि रजाई । करै पान पय शोकविहाई ॥
रामानंद तुरत उठि धाये । बालक कानहिं वचन सुनाये ॥
बच्चा करहु मातु पयपाना । तेरो दोष हर्‌यो भगवाना ॥
तबते पान करन पय लाग्यो । बालहिते रामहिं अनुराग्यो ॥
भो रैदास नाम अस ताको । करै कर्म रचिवौजू ताको ॥
रचि पाँवरी संत कहँ देवै । संतचरणजल शिर धरि लेवै ॥

दोहा—जो कछुअहै चोरायकै संतन देइ चोराय ।
मातु पिता अस जानिकै, दियो ताहि अलगाय ॥३॥

बाहिर ग्राम कुटी रचि लीन्ही । तहँ आपनी रीति अस कीन्ही॥
विरचि उपानत वेचन करई । आधो धन संतनको भरई ॥
आधेमें घरकाज निबाही । पूजै शालिग्राम सदाही ॥

करै रोज संतन सेवकाई। संत दीननहिं लेय टिकाई॥
शुद्ध द्रव्य देतो जो कोई। पावत राम द्रव्य है सोई॥
जो अशुद्ध धन करतो दाना। ताको कहुँ नाहिं लगत ठिकाना॥
है नहिं दीन दान सम दाना। राम नाम सम नाम न आना॥
दया धर्म सब धर्मन कोई। व्रत सम और धाम नहिं होई॥
रैदासै विचारि निज दासा। साधु रूप धरि रमा निवासा॥
आवत भे रैदासै धामा। रैदासहु किय दंड प्रणामा॥
साधु कह्यो तोहिं खर्च सकेतू। ताते मैं बांध्यो यह नेतू॥
पारस देहुँ हर्ष संदोहा। सुबरन होत छुआये लोहा॥

दोहा—अस कहि रापी ताहिकी, तामें दियो छुआइ।
तुरतै कंचनकी भई, तेहि गुण दियो देखाइ॥ ४॥

कह रैदास न पारस लेहौं। याको कौन काम करि देहौं॥
मेरी रापी कियो खुआरा। चाम कटै नहिं गोठिल धारा॥
तब हरि पारस तेहि घर खोसी। कह्यो राखियो है अति होसी॥
अस कहिकै हरि अनत सिधारे। नहिं तापर रैदास निहारे॥
हरि बहुरे यक संवत माहीं। पूछ्यो पुनि निज पारस काहीं॥
कह रैदास छुयो मैं नाहीं। लै पारस हरिगे कहुँ वाहीं॥
भोरहि जब रैदास नहाई। पूजे शालिग्राम सोहाई॥
मिलीं पांच मोहर तेहिं नेरे। फेंकि दियो नहिं तापर हेरे॥
दुसरे दिन दश मोहर देख्यो। महा उपद्रव निज कहँ लेख्यो॥
अब करिहों पूजन नहिं कोई। साधु रूप प्रगटे हरि सोई॥
कह्यो छांडु अड अबहुँ पियारे। लै धन विरचहु मोर अगारे॥
जिनको पूजहु तेहैं हमहीं। मानो कहो बुझावैं तुमहीं॥

दोहा—तब रैदास कह्यो वचन, करतो भजन चोराइ।
यामें ह्वैहै विघ्न बहु, जो देहौ प्रगटाइ॥ ५॥

तब हरि कह्यो निवारन करिहैं। तेरोधन संतन महँ डरिहैं ॥
तब रैदास लियो मनमानी। रोजहि मोहर दश प्रगटानी ॥
हरि मंदिर बनवावन लाग्यो। संतहु सहस खवावन राग्यो ॥
वाराणसी बात प्रगटानी। अशकुन गुणि पंडित अभिमानी ॥
जाय भूपसूं चुगुली खाई। भूपति होत अधर्म महाई ॥
शालिग्रामहि येक चमारा। पूजत है नहाय हरबारा ॥
ताहि देशते देहु निकारी। नातो लगी अधर्महि भारी ॥
वेद विरुद्ध जासु नृपराजू। होत अनेकन कर्म दराजू ॥
सो दूषण लागत नृपकाहीं। करौ विलंब नाथ अब नाहीं ॥
राजा तब रैदास बोलाई। बारबार तेहिं आँखि देखाई ॥
कह्यो वचन करि कोप अपारा। पूजब शालिग्राम तुम्हारा ॥
वेद विरुद्ध धर्म यह हेरो। शालिग्राम अहै द्विज केरो ॥

दोहा–तब रैदास कह्यो वचन, नृपति न्याउरत होय।
न्याउ सहित दीजै हुकुम, यामें दोष न कोय ॥ ६ ॥

हम पूजैं जे शालिग्रामा। लै आवैं चलिकै निज धामा ॥
फेंकि दियो गंगा महँ जाई। जाके होयँ सो लेय बुलाई ॥
आवैं नहिं पंडितन बुलाये। तौ हम अपने लेत मँगाये ॥
जो निषाद शबरी गृहमाहीं। गये होंयगे संशय नाहीं ॥
जो पै पतितपावन कहवै हैं। मेरे टेरे कस नहिं ऐहैं ॥
भूप मुदित संमत सुनि कीन्हो। सकलपंडितनसों कहि दीन्हो॥
साभिमान पंडित वतराने। ऐहैं कस न हमारे आने ॥
चर्मकारकी ओर सिधैहैं। पंडित विप्र और नहिं ऐहैं ॥
यह अनरथ करिहैं कस ईशा। शासन दीजै तुरत महीशा ॥
तब राजा पयान उठि कीन्हें। सकल मंत्र शास्त्री सँग लीन्हें ॥
वैदिक अरु षटशास्त्री जेते। साभिमान गवनत भे तेते ॥

नृप सँग चलि गंगाके तीरा । बैठे यत्न करहिं मतिधीरा ॥

दोहा—नीच नीच सब तरिगये, रामचरण लवलीन ॥
जातिहिके अभिमान ते, बूड़े सकल कुलीन ॥ ७ ॥

कोउ कुशासन बैठि बिछाई । होम करै कोउ कुंड बनाई ॥
कोउ सूर्य्य सन्मुख भे ठाढ़े । कोउ गंगा पूजैं मन गाढ़े ॥
इष्ट देव निज निजै मनावैं । स्तुति पाठ बहुत विधि गावैं ॥
भई दंड दशकी मरयादा । प्रथम दुहूं सों होत विवादा ॥
द्विजन बोलावत द्वादश दंडा । बीतिगये भो सोच अखंडा ॥
तब भूपति बोल्यो असि बानी । द्विजन सयानप सकल सिरानी॥
बोले शालिग्राम न आये । जप तप होम पाठ सब गाये ॥
अब तुमहूं रैदास बोलाओ । आवत होय तौन मुख गाओ ॥
सब पंडित मुख भये मलाने । देखन हित बहु मनुज जुहाने ॥
कह्यो पंडितन सों पुनि राजा । कहै जो सब पंडितन समाजा ॥
तौ रैदासौ नाथ बोलावै । आवैं चाहिं इतै नहिं आवै ॥
पंडित कह्यो बोलावै सोऊ । लखैं तमाशा यह सबकोऊ ॥

दोहा—तब रैदास हुलास भरि, करिकै दृढ़ विश्वास ॥
यह पद कियो प्रकाश तहँ, ध्यावत रमानिवास ॥८॥

पद—हे हरि आवहु वेगि हमारे ॥
जैसे आये द्रुपदसुताके, गजके काज सिधारे ॥
ज्यों प्रहलाद हेतु नरहरि है, प्रगटे वज्रखम्भको फारे ॥
पति राखौ रैदास पतितकी,दशरथ कोशलनाथ दुलारे॥

सोरठा—सहित सिंहासन राम, अंक लगे रैदासके ॥
द्विज सब करत प्रणाम, चरण गहे तजि मानको ॥

दोहा—निज जन प्रणको राखही, चारौं युग रघुवीर ॥
शबरी पदके परशते, शुद्ध भयो सरिनीर ॥ ९ ॥

यह आश्चर्य विलोकि सु राजा। परयो चरणमहँ सहित समाजा॥
वित्त लुटावत सकल शहर में। पहुँचायो रैदासहि घर में॥
तजि तजि मान वर्ण तहँ चारी। भे रैदास शिष्य नर नारी॥
एक दिवस बैठे निज द्वारा। एक विप्रसों वचन उचारा॥
जो तुम प्रागै भूसुर जैयो। एक सुपारी मोरि चढ़ैयो॥
आयो पिप्र तुरंत प्रयागा। दीन्ह्यो दान कियो यक जागा॥
चलत सबै गंगातट जाई। कह्यो वचन करि बहुत हँसाई॥
चर्मकार की लीजै भेंटा। दीन्ह्यो मोहिं चलत भैभेंटा॥
अस कहि दीन्ह्यो फेंकि सुपारी। निकस्यो कर मणि कंकणधारी॥
तबै विप्र मनमें पछिताना। मैं किय याग योग जप दाना॥
सो मैं कबहुँ न दरशन पायो। चर्मकार हित कर काढ़ि आयो॥
गंगातट कीन्ह्यो सो धरना। स्वप्न माहँ अस सुरसरि वरना॥

दोहा—जाहु तुरत रैदास घर, परी भेद तहँ जानि।
विप्र तुरत रैदास पै, चल्यो अचर्यहि मानि॥ १०॥

भई भेंट तब मारग माहीं। कह रैदास जाहु घर पाहीं॥
कह्योजाय अस मम तिय काहीं। धरे चारि घृत घट घर माहीं॥
दूरे फेंकहु तिनहिं तुरंता। ऐसो कह्यो तुम्हारो कंता॥
विप्र जाय रैदास तिया को। कह्यो सकल वृत्तांत पिया को॥
तुरतहिं घृतघट डारयो फोरी। कीन्ही नारि शंक नहिं थोरी॥
तब अचरज गुणि द्विज घर आयो। अपनी तिय को वचन सुनायो
सजल एक घट फेंकहु प्यारी। सो सुनि दीन्ह्यो पतिको गारी॥
मिलत कुँभारनके घर नाहीं। कहत बावरो फेंकन काहीं॥
तब द्विज निज शिर कूटनलागो। धनि रैदास विश्व बड़भागो॥
ऐसी जाकी तिय घर विलसै। तेहि हित कस न गंग कर निकसै॥
यक झालीनामक की रानी। आई शिष्य होन हुलसानी॥

नहिं रैदास मंत्र तेहि दीन्ह्यो । तब कबीर संबोधन कीन्ह्यो ॥
दोहा–रानीको रैदास तब,कियो शिष्य दै मंत्र ॥
तब तेहि सँग पंडित सकल,कीन्हें बैर स्वतंत्र ॥११॥
चर्मकारको गुरु कियो,दीन्ह्यो धर्म बहाय ॥
रानी कह्यो न नीचहै,सांचौ ईश्वर आय ॥ १२ ॥
भई परीक्षा गंग में, जाहिर सकल जहान ॥
पंडित कह्यो जो होय अब,तौ हम करैं प्रमान ॥१३॥
तब तैसे पुनि गंगमें, शालिग्राम डुबाय ॥
द्रुत रैदास बोलाय लिय,गिरे विप्र सबपाय ॥ १४ ॥
रानी पुनि अस विनय सुनाई । ह्वैहै कब मम भवन अवाई ॥
बोले वचन तबै रैदासा । एकबार ऐहैं तुव वासा ॥
रानी गई देश कहँ जबहीं । गे रैदास भवन तेहि तबहीं ॥
संत पंचशत सहित समाजा । छावत हरि रव सकल दराजा ॥
पहुँचे रानी देशहि जाई । रानी चलि कीन्हीं अगुवाई ॥
तहँ संतन भोजन करवायो । निज घर में पंगति बैठायो ॥
विप्र कह्यो नीचन सँग माहीं । अशुचि होब बैठब हम नाहीं ॥
तब द्वै पांती दिय बैठाई । खानलगे जब सब द्विजराई ॥
देखिपर्‌यो अस तहां तमासा । द्वैद्वै विप्र बीच रैदासा ॥
सिगरे विप्र गुमान विहाई । रैदासै प्रसाद लिय खाई ॥
परे चरण भे शिष्य अनंता । जय जय कार कियो सब संता ॥
पुनि रैदास सभा महँ आये । चीरि त्वचा उपवीत देखाये ॥
दोहा–कनक जनेऊ सब लखे,त्वच के भीतर आसु ॥
ऐसे चरित अनेक हैं, जेकीन्हें रैदासु ॥ १५ ॥
इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेसप्तचत्वारिंशो
ध्यायः ॥ ४७ ॥

अथ कबीरजी की कथा ॥

दोहा–अब कबीर जी की कथा,श्रोता सुनहु विशाल ॥
जो हिंदू अरु तुर्क को,उपदेश्यो सब काल ॥ १ ॥
हरि विमुखी सब धर्मिन काहीं। कह्यो अधर्म अखंड सदाहीं ॥
योग यज्ञ तप दान अचारा। राम भजन बिन कह्यो असारा॥
कह्यो रमैणी साखी जेती। अटपट अर्थ शास्त्रमय तेती ॥
जो वीजकको ग्रंथ बनायो। तासु तिलक मो पितु निरमायो॥
आगे कहिहौं मति अनुसारा। पूरुव पुरुष वंश विस्तारा ॥
श्री कबीरजी को इतिहासू। पूर्व पुरुष मम वर्णनतासू ॥
निज कुल वर्णत लागति लाजू। जनि हैं अस सब सुमति समाजू॥
निजकुलको महत्व प्रगटायो। गाथा सकल मृषा मुख गायो॥
पैश्रोता सब यदुपति दासा। ताते लागति कछु नहिं त्रासा ॥
सहि लैहैं सब मोरि ढिठाई। मैं न मृषा प्रभुता कछु गाई ॥
जस कबीर वर्ण्यो निजग्रंथा। वर्णौं निजकुल सोई पंथा ॥
और कबीर कथा सुखदाई। प्रियादास नाभा जस गाई ॥
दोहा–सोई मैं वर्णन करौं,संक्षेपहु विस्तार
प्रथमहि जन्म कबीर को,श्रोता सुनहु उदार ॥ २ ॥
रामनंद रहे जगस्वामी। ध्यावत निशि दिन अंतर्यामी ॥
तिनके ढिग विधवा इक नारी। सेवा करै बड़ो श्रमधारी ॥
प्रभु यक दिन रह ध्यान लगाई। विधवा तिय तिनके ढिग आई॥
प्रभुहिं कियो वंदन बिन दोषा। प्रभु कह पुत्रवती भरि धोषा ॥
तब तिय अपनो नाम वखाना। यह विपरीत दियो बरदाना ॥
स्वामी कह्यो निकसि मुख आयो। पुत्रवती हरि तोहिं बनायो ॥
ह्वैहै पुत्र कलंक न लागी। तव सुतह्वै हैं हरि अनुरागी ॥
तबतिय कर फुलका परि आयो। कछु दिनमें ताते सुत जायो ॥

जनत पुत्र नभ बजे नगारा। तदपि जननि उर सोच अपारा॥
सो सुतलै तिय फेंक्यो दूरी। कढ़ी जोलाहिन तहँ यकरूरी॥
सो बालकहि अनाथ निहारी। गोद राखि निज भवन सिधारी॥
लालन पालन किय बहुभाँती। सेयो सुतहि नारि दिन राती॥

दोहा—कछुक सयान कबीर जब, भये भई नभवानि।
सो प्रियदास कवित्तको, इक तुक कह्यो बखानि॥ ३॥
(भई नभवानी देह तिलकर मानी करो
करो गुरु रामानंद गरे माला धारिये)

पुनि कबीर बोल्यो अस वानी। मोहिं मलेच्छ लियो गुरु जानी॥
रामानंद मंत्र नहिं दैहैं। पै उपाय हम कछु रचि लैहैं॥
अस कहि गंगा तीरे आयो। सीढी तर निज वेष छुपायो॥
मज्जनहित रामानँद आये। तेहि अँगुरी निज चरण चपाये॥
रोय उठ्यो तहँ तुरत कबीरा। रामानंद कह्यो मतिधीरा॥
राम राम कहु रोवै नाहीं। गुन्यो कबीर मंत्र सोइ काहीं॥
रामानंदी तिलकहि धारचो। माल पहिरि मुख राम उचारचो॥
मातपिता मान्यो बौराना। रामानंदहि वचन बखाना॥
याको प्रभु किमि वैकलवायो। राम कहत सब काज भुलायो॥
रामानंद कबीर बोलायो। ताके बिच परदा बँधवायो॥
कहौ मंत्र तोको कब दीन्हो। कह्यो कबीर जौन विधि कीन्हो॥
रामनाम सब शास्त्रन सारा। वार तीनि मोहिं कियो उचारा॥

दोहा—रामानंद कबीरको। गुनि अनन्य हरिदासु।
परदा टारिसु मिलत भे, दृगन बहावत आँसु॥ ४॥

सुरति राम नामहि महँ लागी। कछु गृहकाज करहिं बड़भागी॥
लै विकनन पट जाहि बजारै। जो माँगै ताही दैडारै॥
परखे रहैं मातु पितु ताके। गनैं न कछु दुख क्षुधा तृषाके॥

घर आवते कबीर लजाहीं। छूंछे हाथ कौन विधि जाहीं॥
परचो सोच तब हरिको भारी। मम जनके पितु मातु दुखारी॥
धरि व्यापारी रूप मुरारी। भरि बैलन बहु चाउर चारी॥
आय कबीर भवन महँडारे। कह्यो पठायो पूत तिहारे॥
माता कह्यो कहां सुत मोरा। कोहुकी वस्तु लेत नहिं छोरा॥
तब कबीर घरमें व्यापारी। डारि अन्न गे अनत सिधारी॥
जब कबीर गे भवन सिधारी। देखि अन्न हरि कृपा विचारी॥
साधु तुरंत बोलाय लुटायो। यक दिनको घर नाहिं धरायो॥
तुरत टोरि निज तानो बानो। राम भरोसा को उर आनो॥

दोहा—तब काशीके विप्र सब, बैठ कबीरहि घेरि॥
मुडिअनको रोटी दियो, हमहिं बैठ मुख फेरि॥ ५॥

कह्यो कबीर न करौ सँदेहू। मोहिं बजार भर गवननदेहू॥
भागि गये कबीर मिसि येही। प्रभु कबीर हित भे संदेही॥
आये धरि कबीरको रूपा। सबको भोजन दियो अनूपा॥
यथा योग दै सबन बिदाई। पुनि लिय अपनो वेष छिपाई॥
तब कबीरको बढ्यो प्रभाऊ। मानै रंकहु राजा राऊ॥
श्रोता सुनहु पुरान प्रमाना। रामभक्ति है धर्म प्रधाना॥
राम विमुख जो कोउ जग होई। मूल सकल पापनको सोई॥
लखि कबीर अति निज प्रभुताई। गुन्यौ उपद्रव ताहि महाई॥
मेटन हेतु महा प्रभुताई। गणिका द्वार गये प्रगटाई॥
दैधन गणिकाको . गहि हाथा। चले बजार बजारहि साथा॥
यह लखि भये संत जन शोकी। लहे अनंद असंत अशोकी॥
इक दिन गये भूप दरबारा। उठ्यो न राजा तुच्छविचारा॥

दोहा—तब कबीर मनमें गुन्यो, भयो अनादर मोर।
आदर और अनादरौ, सहि जातौ है थोर॥ ६॥

रहे भरे जल घट बहुतेरे । ढरकायो तिनको कर फेरे ॥
राजा पूछ्यो का यह कीजै । तब कबीर बोल्यो सुनि लीजै॥
श्रीजगदीश पुरी यहि काला । गई आगिलगि पाकहि शाला॥
पुरी पठायो तुरत सवारा । पुरी लोग सब कियो उचारा॥
जो कबीर वह दिन न बुझावत । तौ सिगरी नगरी जरि जावत॥
यह सुनि भूपति बहुत डेराना । रानी सों अस वचन बखाना॥
है कबीर मूरति भगवाना । याको हम कीन्हो अपमाना ॥
ताते अब अस करहु विधाना ।पैदल तेहिं ढिग करहिं पयाना॥
त्राहि त्राहि कहि चरणन गिरहीं । जो वह कहै तबै घर फिरहीं॥
अस विचारि राजा अरु रानी । राज विभव तहँ तजि डर मानी॥
पैदर चले सुलाज विहाई । सचिव प्रजा सब लिय पाछि आई ॥

दोहा–राजा रानीकी विनय, सुनि कबीर मतिधीर ।
बहत नीर दृग पीर विन, कियो धीर युत भीर ॥ ७ ॥
तहँ कवित्त प्रियदास यह, कीन्हो सुभग बखान ।
सो मैं इत लिखि देतहौं, श्रोता सुनहु सुजान ॥ ८ ॥

कवित्त–कही राजा रानी सो जो बात यह सांच भई आंच लागी हिये अब कहो कहा कीजिये। चलेही बनत चले शीश तृण बोझ भारी गरे सो कुल्हारी बांधि तिया संग भीजिये ॥ निकसे बजार ह्वैके डारि दई लोक लाज कियो मैं अकाज छिन छिन तन छीजिये। दूरि ते कबीर देखि ह्वै गये अधीर महा आये उठि आगे कह्यो डारि मति रीझिये ॥ १ ॥

रह्यो सिकंदर साह सुजाना । सुनेहु कबीर प्रभाव महाना ॥
तब लिखि पठयो येक खलीता । सुनियत तुम्हैं कबीर पुनीता॥
न्याय व्याकरण शास्त्र अनंता । करै एक जेहि संमत संता ॥
हिंदू मुसलमान दोउ दीना । निज निज मत देखो सुख भीना॥

ऐसो शास्त्र देहु पठवाई। तो हम जानै अजमत भाई ॥
तब कबीर लिखि उतर पठायो। सहस शकट कागज पठवायो॥
ऐसो सुनि कबीर खत साहा। अति विस्मित ह्वैकै मनमाहा ॥
सहस शकट भरि कागज़ कोरा। पठयो दूत कबिरकी वोरा ॥
सहस शकट कागज़ जब आयो। तब कबीर अति आनँद पायो॥
सबके उपर शकट यक माहीं। लिख्यो राम अक्षर द्वै काहीं॥
सहसहु शकट साहढिग भेजा। प्रगट्यो राम नाम कर तेजा ॥
सकल शास्त्र सब कागज़ माहीं। लिखिगे आपहि ते श्रम नाहीं॥

दोहा–हिंदू और मलेच्छहू, चहैं जो मतके ग्रंथ।
सो तेहि ते निकसन लगे, और सकल सतपंथ ॥९॥

जानि प्रभाव सिकंदर साहा। काशिको आयो सउछाहा ॥
तब सह पंडित चलि फिरियादा। छूटी दोउ दीन मर्यादा ॥
यक जोलहा चेटक पढ़ि आयो। करि जादू विश्वास बढ़ायो॥
तब कबीरको साह बोलायो। जब कबीर दरबारहि आयो ॥
काजी कह करु साह सलामा। तब कबीर बोल्यो सुखधामा॥
जानहिं राम सलाम न जानै। सुनत साह किय कोप महानै॥
दियो हुकुम करियो नहिं देरी। गंगा बोरहु भरि पग बेरी ॥
सुनि अनुचर पग पाइ जँजीरै। बोरयो गंगा माहँ कबीरै ॥
रहिगै बेरी नीर गँभीरा। गंग तीर भो ठाढ़ कबीरा॥
पुनि लकरी पट अंगणि बांधी। आगि लगायो कोठारि धांधी ॥
भयो भस्म तनुको सब मैला। निकस्यो कंचनरूप उतैला ॥
पुनि इक मत्त मतंग बोलायो। कचरावन हित सौहँधवायो ॥

दोहा–गजको सिंह स्वरूपसो, देखो परो कबीर।
भग्यो चिकारत नाग तब, भरयो महा भय भीर॥१०॥

बादशाह अस देखि प्रभाऊ। पकरयो आय कबीरहि पाऊ॥

देख्यों करामात मैं तेरी। अब रक्षा करु जगते मेरी ॥
मोसे भयो बडो अपराधा। दीन्हो रामदासको बाधा ॥
देशगाउँ धन जो कहि दीजै। सो याही क्षण प्रभु लैलीजै ॥
कह्यो कबीर रामको चाहैं। ग्राम दामसों काम कहा हैं ॥
तबै विरोधी पंडित जेते। विरचे यह उपाइ तहँ तेते ॥
श्रीवैष्णव दश पांच बनाई। दियो सकल देशन गोहराई ॥
यह कबीरको नेवतो जानो। सबकबीर घर करो पयानो ॥
यह सुनि साधु विप्र समुदाई। लियो कबीरहि को समुहाई ॥
लाखन विप्र साधु जुरि आए। तब कबीर मन माहँ डेराए ॥
अपनो भवनत्यागि द्रुत भाग्यो। रघुपतिको यह नीक नलाग्यो
धारि कबीरको रूप तुरंतै। शत शत मुद्रा दिय प्रति संतै॥

दोहा—साधुनको सत्कार करि,विदा कियो रघुनाथ।
उदर पूर पूजन दियो,सबको गहि गहिहाथ ॥ ११ ॥

सब देशन विख्यात भो नामा। कह कबीर अनुकंपारामा ॥
येहू विधि पंडित जब हारे। तब गोरखको तुरत हँकारे ॥
गोरख आय गयो जब कासी। लखि कबीरको भयो हुलासी॥
कूप उपर रचि पांचहि सूता। बैठ्यो ताहि प्रभाव अकूता ॥
तुरत कबीरहि लियो बोलाई। मोसों करहु विवाद बनाई ॥
अंतरिक्ष तब बैठ कबीरा। देखत गोरख भयो अधीरा ॥
तेहि दिन गवन्यो गोरख हारी। आयो भोरहि सिंह सवारी ॥
कह्यो कबीरहिसों गोहराई। आवै वाद करै मन जाई ॥
तब मृगको रचि सिंह कबीरा। आयो चलो चलावत धीरा ॥
तब गोरख कह सुनहुँ कबीरा। गंगामेंडूबैं दोउ वीरा ॥
को काको हेरै यहि काला। कूदे गोरख प्रथम उताला ॥
तब गोरख गूलर है गयऊ।जानि कबीर पकरि तेहिलयऊ॥

दोहा—गोरख सुनहुँ कबीर कह,प्रगटोअबहुँ तुरंत ।
नातो कर मालि डारि हौं, दोषदेहिंगेसंत ॥ १२ ॥
तब प्रसन्न गोरख प्रगटाना ।तेहि कबीर अस वचन बखाना॥
मैं अब छिपहुँ हेरि तुम लेहू । कह गोरख छिपु बिनु संदेहू ॥
तब डूब्यो माधि गंग कबीरा । ह्वै गो तुरत गंगको नीरा ॥
तब गोरख करि योग प्रभाऊ । जान्यो सकल कबीर दुराऊ ॥
दोऊ सिद्ध फेरि प्रगटाने । गोरख वंदन किय हुलसाने ॥
कह्यो सत्य साहब तुम रूपा । संत शिरोमणि शुद्ध अनूपा ॥
एक समय कबीर लै माता । चले जात कोउ देश विख्याता॥
तहँ इक मारग मोहर थैली । परी रही अतिशय तहँ मैली ॥
माता थैली दौरि उठाई । तब वार्‌यो कबीर तहँ जाई ॥
परधन ले न मातु दे डारी । परधन दुइ मुहँकी तरवारी ॥
बैठ वृक्षतर देखु तमासा । यह करि है केतेनको नासा ॥
माता पूत बैठ तरु छांहीं । चारि सिपाही कढ़े तहाँहीं ॥
दोहा—थैली चारि निहारिकै हर्षित लियो उठाइ ॥
चलत भये तेहि पंथको,लिय कबीर पछिआइ ॥१३॥
जाय सिपाही इक पुरमाहीं । डेरा किये वणिक घर माहीं ॥
सोहैं कियो कबीरहु डेरा । एक सिपाही यक कहँ टेरा ॥
डेरामें तुम दोउ रहि जाहू । द्वै जन जाहिं करन निरवाहू ॥
अस कहि द्वै जन गये सिधाई । लियो हाटमहँ कछुक मिठाई॥
बैठि कुवाँ लागे जब खाने । तब आपुसमहँ संमत ठाने ॥
माहुर भरैं मिठाई माँहीं । जामें द्वै खातै मरिजाँहीं ॥
नातो हीसा ह्वैहैं चारी । हम तुम होहिं उभय हिसदारी॥
अस विचारि भरि माहुर दीन्हे । उत विचारि डेरा दोउ कीन्हे॥
जब वे आइ खाइ इत सोवैं । तिनके तुरत प्राण हमखोवैं ॥

इतनेमें दोउ लियो मिठाई । आय गए डेरै श्रमछाई ॥
कह्यो दुहुँनसों खाहु मिठाई । इन कह थके अहैं हम भाई ॥
अस कहि दोउ सिपाही सोये । श्वास बजत तिनको तहँ जोये॥

दोहा—तबै मिठाई खायकै, दोहुनके गलमाहिं ।
मारि कटारी पार किय, दोऊ मरे तहाँहिं ॥ १४ ॥

कछुक कालमहँ विष तहँ लाग्यो । ते दोऊ तुरतै तनु ताग्यो ॥
भोर वणिकलखि शोणितधारा। कोतवालके जाय पुकारा ॥
कोतवाल तेहिं दोष लगायो । ताकी संपति सकल लुटायो ॥
मोहर और वणिक धन जेतो । गयो भूप भंडारहि तेतो ॥
कह कबीर लखु मातु तमासा । ये मोहर दोउ ओर विनासा ॥
माता कह्यो सुवन चलु अनतै । कह कबीर लखु और हगनतै॥
थैली परी रही जेहिं ठौरा । सो थल रहै भूपको औरा ॥
सो पठयो तुरंत असवारा । कह्यो देउ धन अहै हमारा ॥
जेहिं वह नगर कह्यो सो राजा । हम न देब विनसमर दराजा ॥
यह सुनि भूप तुरत चढ़ि आयो। उभय भूप अति युद्ध मचायो॥
दोऊ लरि मरिगये तहांही । तब कबीर कह माता काहीं ॥
जो चाहै आपन कल्याना । तौ परधन नहिं लेय सुजाना ॥

दोहा—जो परधन लेतो जननि, तासु हाल यह होय ।
लगति न हाथ वराटिका, नाहक कलह उदोय ॥ १५ ॥
येक अप्सरा आयकै, मोहन चह्यो कबीर ॥
ताहि मातु कहि किय विदा, करी न मनसिज पीर। १६॥

कवित्त—येक समै जाय जगदीश पुरी वास कीन्हो भयो तहँ संतन समागम सोहावनो । कोई संत बोल्यो कियो काशीमें चरित्र केते इते कीन्हौ काहे नहिं महिमा देखावनो ॥ ताही समय कौतुक कबीर कीन्हो रघुराज देखि सब संतनको

मंडल भो पावनो । येक रूप हाथ चौर हांकते जगतनाथै
येक रूप साधुन समाज प्रगटावनो ॥ १ ॥
पुनि जगदीश पुरी ते सोई । चल्यो कंबीर महामुद मोई ॥
बांधव गढ मम दुर्ग महाना । शिवसंहिता जासु परमाना ॥
सतयुग वरुणाचल कहवायो । कलि बांधवगढ नाम कहायो ॥
पूरुव पुरुष रहे जे मोरा । रहे ते सब गुजरातहिं ठोरा ॥
तेऊपाइ कबीर निदेशा । विंध्यपृष्ठ आये यहि देशा ।
तब ते बांधवगढै भुवाले । कीन्हो नृप वघेल निज आले ॥
आगे तासु कथा मैं गैहौं । सब श्रोतनको सविधि सुनैहौं ॥
विरसिंहदेव वघेल भुवाला । सुनि कबीर आवनको हाला ॥
चहुँकित दूत दियो बैठाई । दियो कबीरहि खबरि जनाई ॥
और पंथ ह्वै नहिं कढि जाई । सावधान रहियो सब भाई ॥
गुणि विरसिंहदेव अभिलाषा । ताको शिष्य करन चित राखा ॥
बांधवगढै कबीर सिधारे । राजा आगू लेन पधारे ॥

दोहा—सादर ल्याइ कबीर को, करि उत्सव हर्षाइ ।
शिष्य भये परिवारयुत, भवभय दियो मिटाइ ॥१७॥
भक्तमालकी यह कथा, किय संक्षेप वखान ।
अब कबीर इतिहासको, विस्तर सुनहु सुजान ॥१८॥

देश गहोरा युत परिवारा । भयो शिष्य विरसिंह भुवारा ॥
कछुक काल लगि नृप ढिग माहीं। वस्यो कबीर सुमिरि हरि काहीं
येक समय विरसिंह नरेशै । दियो बोलाइ कबीर निदेशै ॥
देहैं तोहिं कछू हम ज्ञाना । ताते कर अस भूप विधाना ॥
यक ब्राह्मणी रचै यक धोती । वरष दिवसमहँ अतिहि उदोती॥
लेइ पाणिमहँ टोरि कपासू । सूत भूमि परशैनहिं तासू ॥
सो धोतीलै आवहु राजा । तब ह्वै हौ तुरंत कृतकाजा ॥

सुनि विरसिंह तुरंत सुखारी। गो ब्राह्मणीसमीप सिधारी॥
धोती मांग्यो तब द्विज नारी। सुनु महीप सो गिरा उचारी॥
धोती वर्ष प्रयंत बनाऊं। जगन्नाथको जाय चढ़ाऊं॥
लेहु महीश शीश बरु मोरा। धोती लेब उचित नहिं तोरा॥
राजा फिरि कबीर ढिग आयो। सकल ब्राह्मणी वचन सुनायो॥

दोहा—कह कबीर जगन्नाथको, धोती देइ चढ़ाइ।
प्रतीहार करि साथ नृप, तियको दियो पठाइ॥१९॥

जाय ब्राह्मणी वसन चढायो। प्रभु ढिग ते तुरंत फिरि आयो॥
कियो ब्राह्मणी धरन तहांहीं। स्वप्ने कह्यो नाथ तेहिं काहीं॥
मांग्यो हम बांधवगढ़ काहीं। काहे दिह्यो मोहिं लै नाहीं॥
जाय कबीरै देइ चढ़ाई। तब जैहै पूरण फल पाई॥
द्विज तिय फिरि बांधवगढ़ आई। दियो कबीरहि वसन चढ़ाई॥
वसन पहिरि जब बैठि कबीरा। तब आयो विरसिंह प्रबीरा॥
महिते यक कर ऊंच निहारा। तब कीन्हो अस वचन उचारा॥
जो हरिको हरि लोकहु काहीं। दीजै म्वहिं देखाइ सुखमाहीं॥
तौ प्रतीति मोरे परि जाई। ये तो सत्य कबीरै आई॥
तब राजहि कबीर बैठायो। ध्यानावस्थित ताहि करायो॥
योग मार्ग ते तेहि लै गयऊ। हरि हरि लोक देखावत भयऊ॥
तब विरसिंह भूप विश्वासे। लहन विज्ञानहि हिये हुलासे॥

दोहा—श्रीकबीरजी तहँ कियो, सुभग ज्ञान उपदेश।
मिटे सकल संसारके, ताके काय कलेश॥२०॥

कह कबीर लै चलहु शिकारा। भूप कियो तेहिं नाग सवारा॥
गजके ऊपर हाथ सवाऊ। बैठ कबीर लखे सब काऊ॥
बांधवगढ़के पूरुब ओरा। सदल तृषित भो नृप तेहि ठोरा॥
कह्यो कबीरै गुरु भगवाना। जल बिन जात सबैके प्राना॥

तब कबीर परभाव देखायो । तुरत सकल तरु सफल बनायो॥
प्रगटी वापी निर्मल नीरा । तहँ अंतर्हित भयो कबीरा ॥
अब बघेल वंशावलि जोई । श्रीकबीरं विरचित है सोई ॥
अरु आगम निदेशहू ग्रंथा । तामें है बघेल सतपंथा ॥
उक्ति कबीरहि की लै नीकी । बर्णों मोरि उक्ति नहिं ठीकी ॥
यदपि वंश महिमा निजवरणत।उपजति लाज तदपिअतिसुखरत।
तेहि अनुसर वरणों कर जोरी । श्रोता दियो मोहिं नहिं खोरी॥
करि दरशन जगदीश कबीरा । उत्तर दिशा चल्यो मतिधीरा॥

दोहा—बांधवदुर्ग बघेलको, ताढिग जबहिं कबीर ।
आए तब नृप रामसिंह, आनँद युत मतिधीर ॥२१॥
लै आगे ल्याए तुरत, बांधवदुर्ग लेवाइ ।
अति सत्कार कियो तहाँ, मानि रूप यदुराइ ॥२२॥
पुनि कबीर स्थानमें, भूपति गये अकेल ।
तब कबीर नृपसों कह्यो, मोहिं गुरु कियो बघेल॥२३॥
तेरे पूरुबके पुरुष, कियो गुरू जस मोहिं ।
मैं लै आयो हंस द्वै, सकल सुनाऊं तोहिं ॥२४॥

वाराणसी जन्म मैं लीन्हो । जगन्नाथ दरशन मन दीन्हो ॥
तहँ समुद्रको करि मर्यादा । गमन्यो गुजरातै अविषादा ॥
तहँ को भूप पुत्र ते हीना । विनती कियो मोहिं अति दीना ॥
मैं वरदान दियो नृप काहीं । द्वै सुत ह्वैहैं तुव तिय माहीं ॥
मोर अंश ते जो यक होई । वदन बाघ देखी सब कोई ॥
तब सुलंक नृप आनँद पायो । द्वै सुत निज तिय महँ जनमायो॥
व्याघ्रदेव भो जेठ व्याघ्रमुख । अनुज तासु भो सुंदर हरदुख॥
व्याघ्रवदन लखि पंडित आये।जानि अशुभ वनमहँ फिकवाये॥
तब कबीर धरि पंडित वेशा । जाइ भूपको दियो निदेशा ॥

ल्यावहु व्याघ्रवदन सुत काहीं। ताते चलिहै वंश सदाहीं॥
भूप सुलंकदेव विन संका। ल्यायो तुरत सुतहि अकलंका॥
व्याघ्रदेव तेहि नाम सुहंसा। तिनते चल्यो वघेलहि वंसा॥

दोहा–तब कबीर अस वर दियो, जगमें सहित प्रसंश।
अचल राज बांधौ रही, चली बयालिस वंश॥ २५॥

व्याघ्रदेवके सुत नाहिं रहेऊ। सो कबीरसों निज दुख कहेऊ॥
तब कबीर किय मनमहँ ध्याना। कियो तुरत गिरिनार पयाना॥
चंद्र विजय नृप रह्यो तहाँहीं। रानी इंदुमती रति छांहीं॥
तेहि पूरुब कबीर उपदेशा। दंपति किय हरिपुरहि प्रवेशा॥
सो कबीर हरिलोक सिधारी। दंपति काहिं योग मति धारी॥
ल्यायो द्रुत गुजरातहि देशा। कीन्हो व्याघ्रदेव सुतवेशा॥
दियो नाम जैसिद्ध प्रसिद्धा। पूरित वृद्ध ऋद्धि अरु सिद्धा॥
युवा वैस जैसिद्धहि आई। निशिमहँ चिंता भई महाई॥
केहि विधि नाम चलै चहुँओरा। क्षत्रीधर्म विजय वरजोरा॥
व्याघ्रदेवसों कह्यो प्रभाता। सो कह पितामहै कहु बाता॥
तबै सुलंक देव ढिग जाई। निज मनकी शंका सब गाई॥
सो सादर शासन तेहि दीन्हौ। लै कछु सैन्य पयानो कीन्हौ॥

दोहा–गढा देशमहँ सो वस्यौ, भूप नर्मदा तीर।
कर्णदेवताके भयो, तासु सरिस रणधीर॥ २६॥

गगापार डौंडिया खेरा। बैसनको तहँ रहै बसेरा॥
तहँ कीन्हो विवाह सुत केरा। डारयो चित्रकूट पुनि डेरा॥
बीती तहाँ बहुत दिन राती। व्याघ्रदेवके भयो पनाती॥
बहुत काल जब बीतत भयऊ। तब जयसिंह छोंडि तनु दयऊ॥
कर्ण देव तब भयो नरेशा। तासु पुत्र केशरी सुवेसा॥
भयो केशरीसिंह जुमाना। तब कालिंजरकियो पयाना॥

कालिंजर भूपति चंदेला । तासों कियो केशरी मेला ॥
लै चँदल चतुरंग महाना । कीन्हो देश गहोरा थाना ॥
बहुत काल लगि वसे गहोरा । चल्यो केशरी उत्तर ओरा ॥
रह नवाब राजा तहँ भारी । कीन्हौं अमल केशरी सारी ॥
सुनि नवाब दल लै चढि आयो । सुनि केशरी निसानबजायो ॥
माच्यौ तहाँ महा संग्रामा । विजय लह्यो केशरी ललामा ॥

दोहा—पुनि नवाब तहँ आइकै, कियो केसरी मेल ।
अर्ध राज्य देवे लग्यो, सो न लयो गुणिखेल ॥ २७॥

पुनि नवाब केशरी बघेला । गोरखपुर पर कीन्हो हेला ॥
तब नवाब अति प्रीति देखायो । गोरखपुर महँ तेहि बैठायो ॥
कहत भयो रक्षहु अब मोही । मम दल कोश लाज है तोही॥
गोरखपुर वस केशरि भूपा । प्रगटायो यक पुत्र अनूपा ॥
इत नृप कर्ण देव मतिधीरा । चित्रकूटमहँ तज्यो शरीरा ॥
पुत्र केशरी को जो भयऊ । तेहिमल्लार नाम अस भयऊ ॥
सुत मलारके शारँग देवा । शारँगके भीमल हरि सेवा ॥
भीमल देव प्रचंड प्रतापी । अतिसुंदर हरि नामहि जापी ॥
भीमलदेव पुत्र जो भयऊ । ब्रह्मदेव तेहिं नामहि ठयऊ ॥
सोमगहरमहँ कीन्हो थाना । तहाँ वसत बहुकाल बिताना ॥
ब्रह्मदेव लै कटक महाई । मिले गहरवाननसों आई ॥
पुनि सिरनेतनदेश सिधारा । कीन्हो व्याह उछाह अपारा ॥

दोहा—तहँ कोउ भूपति बंधु इक, कीन्हे रहै विरोध ।
ताहि पकरि ल्यायो सदल, करि चहुँ दिशिअवरोध२८

ब्रह्मदेवके भो सिध देवा । नरहरि देव तासु सुत भेवा ॥
नरहरिके भइ भेदसुधन्या । व्याहीसो शिरनेतन कन्या ॥
नरहरि वस्यो कछुक दिनकासी। भेदचल्यो लै दल अरि नासी॥

भयो शालिवाहन सुभेद सुत । विरसिंहदेव तासु सुत नृप नुत
भो विरसिंह महान भुवाला ।वस्यो प्रयाग आइ तेहिं काला॥
लियो अमलि सब देशन काहीं । लाखसवार रहैं सँगमाहीं ॥
वीरभानु सुत भो पुनि ताके । राजाराम भये तुम जाके ॥
जबै प्रयाग देश चहुँओरा । अमल्यो विरसिंह निजभुज जोरा
तबै प्रजा किय जाय पुकारा । दिल्ली शाहहिंमाऊद्वारा ॥
आयो कोउ कबीर बघेला । लाखसवार चलै बगमेला ॥
अमल कियो सो मुलुक तुम्हारा। सो सुनि साह तुरंतसिधारा ॥
चित्रकूट आयो जब साहा । चलन लग्यो विरसिंह नरनाहा॥

दोहा—वीरभानु तब आयकै, वारन कियो बुझाइ ।
तुम न जाहु म्लेच्छहि मिलै, ऐहै सो इतधाय ॥२९॥

तब पुत्रहि विरसिंह बुझाई । चल्यो तुरंत निसान बजाई ॥
चित्रकूट विरसिंह सिधारा । सुनत साह आगू पगधारा ॥
दोउदल भये बरोबर जबहीं । सादर साह बोलायो तबहीं ॥
जब भूपति गो साह समीपा । बिहँसि साह कह सुनहु महीपा॥
कवन हेतु परजन दुखदीन्हो । काहे मुलुक हमारो लीन्हो ॥
तब विरसिंह बोल्यो मुसकाई । कोहूसों किय नहीं लराई ॥
जे हमहीं मारे तेहि मारे । अमल्यो तिनके देश अपारे ॥
कह्यो साह कहँ सुवन तुम्हारा । वीरभानु कहँ भूप हँकारा ॥
वीरभानु तब वाजि उड़ाई । परचोसाह हौदामहँ जाई ॥
साह उतर हाथीते आयो । वीरभानु गोदहि बैठायो ॥
बैठो तख्त माँह जब साहा । वीरभानु कहँ बहुत सराहा ॥
पुनि विरसिंहहि कह दिल्लीशा । अब हम तुमको देत अशीशा॥

दोहा—बारहिं राजा करि स्ववश, करहु राज्य चहुँवोर ।
बांधवगढ़ निज वसनको, लीजै नृपशिरमोर ॥३०॥

असकहिलिखित दियोदिल्लीशा । चल्यो तबै विरसिंहमहीशा ॥
दिल्लीपति प्रयागलै आयो । करि मेहमानी भवन पठायो ॥
लै दल पुनि विरसिंह भुवारा । दक्षिण चल्यो सहित परिवारा॥
आयो तमस नदीके तीरा । तब लाडिल परिहार सुवीरा ॥
नरो शैल महँ दुर्ग बनाई । बसतरहै सो बली महाई ॥
सो मारग महँ कियो लड़ाई । तासु नरो गढ़ लियो छँड़ाई ॥
नरो जीति विरसिंह भुवाला । बाँधा नगर रह्यो तेहि काला॥
तहाँ कछुक दिन कियोनिवासा ।पुनि गवनतमो दक्षिण आसा ॥
रहेरतपुर करचुलिराजा ।तुव पितुकेर कियो तहँ काजा॥
सोदायज महँ बाँधव दीन्ह्यो । तहँ विरसिंह वास चलि कीन्हो॥
वीरभानको दै पुनिराजू । आय प्रयाग बस्यो कृतकाजू॥
कह्यो तोरि वंशावलि ऐसी । जानी रही मोरि यह जैसी ॥

दोहा—सुनि अपनी वंशावली,बहुरि कह्यो शिरनाइ ।
अब भविष्य यहि वंशकी, दीजै कथा सुनाइ ॥३१॥

बांधव दुर्ग वसीकी नाहीं । राज्य चली यहि भाँति सदाहीं॥
आगे कैसो ह्वैहै वंशा । यह सिगरो अब करहु प्रशंशा॥
तब कबीर बोले मुसुकाई । राजाराम सुनहु चित लाई ॥
तुम्हरे दरये वंशहि माहीं । लेहौ तुमही जन्म तहाँहीं ॥
सुत समेत बांधवगढ ऐहौ । बीजक ग्रंथ मोर तहँ पैहौ ॥
ताको अर्थ समर्थन करिहौ । संत समाजनको सुखभरिहौ ॥
वीरभद्र तुम्हरो सुत होई । करिहौ राज्य सदा सुख मोई ॥
संवत अष्टादश नवषटमें । ऐहौ बांधव गढ़ अटपटमें ॥
तबते ताहि विशेष बसैहौ । अपनो विमल महलरचवैहौ ॥
और भविष्य कबीर जो गायो । वर्ण तेहि मैं पार न पायो ॥
यक कबीर आगम निर्देशा । मम शासितवर्णित युगलेशा ॥

तामें सकल अहैं विस्तारा। जानिलेहु सब संत उदारा॥
दोहा—और कबीर कथा अमित,वरणि लहौं किमिपार।
संक्षेपैते इत लिख्यो, कीन्ह्यो नाहिं विस्तार॥ ३२॥
यथा बघेलवंशकी गाथा। वर्ण्यौ भूत भविष्यहु नाथा॥
तैसेहि अबलौं प्रगट देखाती। पलहू बढै न पल घटि जाती॥
मगहर गे यकसमय कबीरा। लीला कीन्ही तजन शरीरा॥
अतिशय पुष्प तुरंत मँगाई। तामे निजतनु दियो दुराई॥
सबके देखत तज्यो शरीरा। हिंदू यमनहुकी भै भीरा॥
हिंदू यमन शिष्य रहे दोउ। आपु समय भाषे सब कोउ॥
यमन कह्यो माटी हम देहैं। हिंदू कहैं अनलमें लैहैं॥
तबदोउ जाय पुष्पकहँटारयो। नाहिं कबीर शरीर निहारयो॥
आधे आधे लै दोउ सुमना। दाह्यो हिंदू गाड़्यो यमना॥
भये कबीर प्रगट मथुरामें। विचरन लगे सकल वसुधामें॥
यहि विधि अहैं अनेकनगाथा। सति कबीर है वपु जगनाथा॥
यह लीला करि सकल कबीरा। आयो बांधव पुनि मतिधीरा॥
दोहा—अबलों गुहा कबीरकी, बांधवदुर्ग मँझार।
जगन्नाथको पंथ सो, पावत नहिं कोउ पार॥ ३३॥
इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडे उत्तरार्द्धेअष्टच
त्वारिंशोऽध्यायः॥ ४८॥

अथ सेना नापितकी कथा॥

सोरठा—अब वरणों सुखधाम, चरित एक अद्भुत सुनहु।
सेन जासु है नाम, नापित यक पूरुव भयो॥ १॥
नाभाकी छप्पय—प्रभूदासके काज रूप नापितको कीन्हो॥
छिप्र छुरहरी गही पाणि दर्पण तहँ दीन्हो॥

ताहश ह्वै निःकाम भूपको तेल लगायो ॥
उलटि राव भयो शिष्य प्रगट परचो जब पायो ॥
श्याम रहत सन्मुख सदा ज्योंवत्साहित धेनके ॥
प्रगट बात जग जानियो हरि भये सहायक सेनके ॥ १॥

बांधवगढ पूरुब जो गायो। सेन नाम नापित तहँ जायो ॥
ताकी रहै सदा यह रीती। करत रहै साधुनसूं प्रीती ॥
चारि दंड बांकी निशि जागै। हरि स्मरण करन सो लागै ॥
चारि दंड दिन चढ़त प्रयंता। ध्यावै रोज रमाको कंता ॥
तहँको राजाराम बघेला। वर्ण्यो जेहिं कबीरको चेला ॥
करै रोज तिनकी सेवकाई। मुकुर देखावै तेल लगाई ॥
डेढ़ पहर दिनमें घर आवै। साधुनको भोजन करवावै ॥
यही रीति निवही बहु काला। येक दिनाको सुनहु हवाला ॥
आवत रहे सेन घर तेरे। बीचहिं साधु मिले बहुतेरे ॥
पूछत सेन भवन पुर माहीं। सेन गह्यो तिन चरणन काहीं ॥
गयो आपने भवन लेवाई। किय षोडश पूजन सुख छाई ॥
सविधि साधु भोजन करवायो। यतनेमें द्वै पहर वितायो ॥

दोहा—साधु सेव जब करि चुक्यो, तब नृप सुधि भै ताहि ॥
गयो न आजु हुजूरमें, मान्यो भय उरमाहि ॥ २ ॥

उतै कृष्ण गुणि निज सेवकाई। सेन रूप धरिकै अतुराई ॥
आये राजाराम समीपै। लगे लगावन तेल महीपै ॥
परसत कर तनुके सब रोगू। मिटे तुरंत मिल्यो सुख भोगू ॥
डेढ़ पहर लगि करि सेवकाई। गवने भूपहिं माथ नवाई ॥
उतै सेन मनमाँह डराई। गयो महीप समीप तुराई ॥
कह्यो जोरि कर हे महराजू। बड़ी चूक मोसे भै आजू ॥

साधु भोर मोरे घर आये । बड़ी वेर तनु तेल लगाये ॥
आज गई सिगरी मम पीरा । रहिगे रोगन येक शरीरा ॥
सेन कह्यो मैं तौ नहिं आयो।भूपति तब अतिशय भ्रम छायो॥
जान्यो साधु हेतु यदुराई । दियो आइ तनु तेल लगाई ॥
अस गुणि सेनहि मिले महीपा । सिंहासन बैठाइ समीपा ॥

दोहा–गुरू सरिस पूजन कियो अतिशय आनँद दाइ ।
साधुन सब सेवै नगर, दिइ डौंडी पिटवाइ ॥ ३ ॥

राजाराम साधु सेवकाई । करन लगे रोजै चित लाई ॥
संतसेव प्रगस्यो परभाऊ । लह्यो कबीरहि गुरु नृप राऊ ॥
पूरुब सकल कथा मैं गाई । सुनहु येक दिनकी सब भाई ॥
राजा रोजहि साधु जेवावै । परसै आप और परसावै ॥
परुसत येकदिवसश्रम जूट्यो । धौत वसनको छोरहि छूट्यो॥
तब द्वै कर परुसन महँ रागे । द्वै कर वसन सँभारनलागे ॥
चारि भुजा देखे सब कोई । गुणे सकल लीन्हे हरि जोई ॥
यह सब गुणहु कबीर प्रभाऊ । नहिं मानहु मन अचरज काऊ॥
सकल बघेल वंशके साँचे । गुणहूं गुरु कबीर हरि राचे ॥
बांधवदुर्ग बघेलन मूला । ताके सरिस और नहिं तूला ॥
मम पितु राजारामहिं सोई । दशयें पुरुष प्रगट भो जोई ॥
बीजक अर्थ कियो विस्तारा । पूरव यथा कबीर उचारा ॥

दोहा–रामसिंहको सुवनजो,वीरभद्र अस नाम ॥
सो मोहिं कह्यो कबीरजी,आगम ग्रंथहि ठाम ॥ ४ ॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकोनपंचाशोध्यायः ॥ ४९ ॥

अथ धनाजाट की कथा॥

दोहा—धना जाट को अब कहौं, यह चरित्र रचि ठाट॥
जाहि सुनत हरि भक्ति की, देखिपरै दृग बाट॥ १॥

छंद—दिशि वरुणदेशहि में रह्यो कोउ जाट जाति सुवृद्ध है॥
ताके भयो यक सुवन ताको धना नाम प्रसिद्ध है॥
इक जाय पंडित तासु घर किय बास लहि सतकारहै।
उठि करै शालिग्राम पूजन रोज विविध प्रकार है॥१॥
तेहि निकट धना सिधारि पूजन हेतु मांग्यो ठाकुरै॥
सो जाय मज्जन हेतु सरिता गुण्यो मज्जन करिउरै॥
लै गोल यक पाषाण मेटहु बाल हठ दै ताहि कै॥
अस ठानि मन पाषाण लै यक धऱ्यो प्रभु सँग चाहिकै२॥
जब धना मांग्यो जाय तब कहि दियो ठाकुर नामहै॥
यहि पूजियो तुम रोज तुम्हरो पूजिहै यह काम है॥
अस भाषि पंडित गमन किय तबते धनापाषाण को॥
पूजन करै भरि प्रेम रोजहि करत अति सन्मान को३॥
हरि होत प्रेमहि ते प्रगट यह सकल श्रुति सिद्धांत है॥
नैवेद्य धरि बोले धना अब खाहु कमलाकांत है॥
कस खात नहिं बतरात नहिं ऊबे किधौं पंडित बिना॥
अस कहत कहत विषादभरि रोवनलग्योव्याकुलधना ४॥
तहँ जानि शुद्ध स्वभाव शिशु प्रगटे पषाणहिंते हरी॥
बतराय तेहि नैवेद्य खायो धना सँग संगति करी॥
रोटी लगावे भोग निज खावै भुवनपति आयकै॥
यक रोज हरि कह सूखि रोटी धँसति कंठ न जायकै॥५॥
तब छांछ परघर मांगि रोजहिरोज भोग लगावही॥
पुनि धना अपने धेनु बछरा रोज विपिन चरावही॥

हरि कह्यो रोजहि खात तुम्हरो देहु मोहिं कछु काम है
तब धना कह मम धेनु फेरहु जाहुले मम धाम है ॥६॥
तबते नितहिं प्रभु धना धेनु चरायफेरहिं भवन को॥
बहुकाल बीत्यो भांतियहिपंडितसोकियआगवन को ॥
पूंछ्यो धना ते विप्र सो पूजन करो कैधों नहीं ॥
तब आदिते वृत्तांत सिगरो धना वर्णनाकिय सही ॥७॥
पंडित सुनत,जकिरह्यो कह्यो विशेषि मोहिं देखाइये॥
तब धना लै तेहि विपिन चारत धेनु ताहि बताइये॥
पंडितहि पेषि नपरे प्रभु बैठ्यो गलानिहिं मानिकै ॥
तब धना कह्यो चपेटिदीन्ह्यो दरश तब वन आनिकै ॥८॥

दोहा—धनै पषाणहिं ते मिले,मिले न द्विजहि पुजाय ॥
प्रेम अधीन विशेषि कै,जानहु यादवराय ॥ २ ॥

(तामें प्रमाण)

नदेवोविद्यतेकाष्ठे नपाषाणेनमृण्मये ॥
सर्वत्र विद्यतेदेवो तत्रभावोहिकारणम् ॥

दोहा—धनै निदेश दियो हरी,होहु शिष्य तुम जाय ॥
काको रामानंद है,धारहु ज्ञान निकाय ॥ ३ ॥

छंद—यक समय गोहूं बवन हित गे धना विपिन बगार में ॥
तहँ संत आये दूरिते तिन लियो अति सतकारमें ॥
कह संत भूखे सकल हम सुनि धना गोहुँन बेंचिकै ॥
तेहि ठाम व्यंजन विरचि संत खवाय दिय सुख सेंचिकै९॥
पितु मातु भै भरि भूरि धूरिहि पूरि दिय सब खेतमें ॥
गोधूम जाम्यो सरस सबते बढ़्यो संतन हेत में ॥
सबकृषिक निरखिसिहातआपुसमाँहिसकलसिराहहीं ॥
जस धना को गोधूम जाम्यो लख्यो हम तस कहुँ नहीं१०।

दोहा—धनि धनि संत प्रभाव जग,यह कछु अचरज नाहिं ॥
संत वदन बोयो धना, जाम्यो खेतन माहिं ॥ ४ ॥
छप्पय—घर आये हरिदास तिनहिं गोधूम खवाये ॥
तात मात डर थोथ खेत लांगूल बहाये ॥
आस पास कृषिकार खेतकी करत बड़ाई ॥
भक्त भजै की रीति प्रगट परतीति जो पाई ॥
अचरज मानत जगतमें कहुँ निपज्यो कहुँवैबयो ।
धन्य धनाके भजन को बिनहिं बीज अंकुर भयो १

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचाशोध्यायः।

अथ पीपा की कथा ॥

दोहा—श्रीपीपाको पाप तम, हरदीपा इतिहास ।
रह्यो महीपा पूर्व जो, ताको करौं प्रकाश ॥ १ ॥

गागरौन यक नगर महाना। पीपा तहँको भूप प्रधाना ॥
रचै चंडिका भक्त भुवारा। यक दिन आये साधु अपारा॥
चालिस मन को भोग बनावै । प्रतिदिन देवी चरण चढ़ावै ॥
साधुनहूं को भोजन दीन्ह्यों । साधु रसोई तहँ सब कीन्हों ॥
बनै जहां देवी को भोगा। साधु कियो तहँ पंगति योगा ॥
भोग लगावन जब जल फेरयो। देवी भोगहि तेहि बिच गेरयो॥
साधु कियो भोजन तहँ सिगरे। आनँद सहित अनत कहुँ डगरे॥
पंडा सबै भोग धरि सोई। देवीको अरप्यो मुदमोई ॥
लग्यो भोग देवी को नाहीं । प्रथमहिं सो लाग्यो हरिकाहीं ॥
देवी राति भूप ढिग जाई । दियो पलँग ते ताहि गिराई ॥
बोलत भई क्षुधित मैं बैठी । ताते तुव समीप मैं पैठी ॥
भूप कह्यो हम भोग पठायो । देवी कह्यो राम सो खायो ॥

दोहा—भूप कह्यो तुमते अधिक, राम अहै जगमाहिं ।
देवी कह्यो सो जगतपति, हम ताके सम नाहिं ॥ २ ॥
भूप कह्यो मैं त्वहिं भज्यो, मुक्ति हेतु जगमातु ।
काली कह्यो सुमुक्तिहै, रघुपति कर जलजातु ॥ ३ ॥

भूप कह्यो भजिहैं हम तेहिको । मुक्ति देन को है बल जेहिको॥
तुम्हरी करी बहुत सेवकाई । दे बताय हरिभजन उपाई ॥
देवी कह्यो जाहु तुम कासी । होहु तहाँ यदुनाथ उपासी ॥
मिटन चहौ जो माया मोहू । रामानंद शिष्य तहँ होहू ॥
अस कहि देवी रूप दुरायो । सोचत नरपति निशा वितायो॥
भोर उठ्यो राजा ठगि गयऊ । लोगन कह नृप वैकल भयऊ ॥
पीपा दलयुत काशी आयो । रामानंद चरण शिरनायो ॥
रामानंद कही तब बानी । दे लुटाय सम्पति जो आनी ॥
तब पीपा सब दियो लुटाई । रत्न वसन हय गज समुदाई ॥
रामानंद कही पुनि बाता । गिरै कूप नहिं मोहिं सोहाता ॥
पीपा कूप गिरन कहँ धाये । साधू पकरि समीपहिं लाये ॥
भे प्रसन्न तब रामानंदा । मंत्र दियो काटन भवफंदा ॥

दोहा—जो विरक्त तेहिं लागतो, साधुनको उपदेश ।
तामें श्रोता सुनहु सब, यह इतिहास प्रदेश ॥ ४ ॥
सुन्यो भागवत भूप यक, बारह वर्ष प्रयंत ।
तब पौराणिक ते करी, शंका यह मतिवंत ॥ ५ ॥

सुन्यो भागवत संवत बारा । छूट्यो नाहिं मोहिं संसारा ॥
जौन परीक्षित सुनि दिन साता। पायो यदुपति पद जलजाता ॥
सुन्यो धुंधकारी भागवतै । सात दिनामें छूट्यौ भवतै ॥
तुम भागवत सुनायो सोई । मेरे दोष मिटे नहिं कोई ॥
सोइ भागवत अहै धौं आना । धौ बांचत नहिं बन्यो पुराना ॥

धौं न बन्यो मोहिं श्रवण विधाना। यह संदेह हरहु मतिवाना ॥
पंडित सुनि नाहिं उत्तर दयऊ।कालिह कहौंगो अस कहि गयऊ॥
निशि यक साधु समीपहि जाई। अपने नृपकी शंक सुनाई ॥
साधु कह्यो लावहु नृपकाहीं। समाधान हम करब इहांहीं ॥
साधु समीप गये पुनि राजा। कह्यो सकल संदेह दराजा ॥
साधु कह्यो धौं प्रगट देखावै। शास्त्र रीति धौं त्वहिं समुझावै॥
कह्यो भूप मोहिं प्रगट देखावहु।साधु कह्यो जनि दुख उर लावहु॥

दोहा–शिष्यनको बोलवायकै, भूप पुराणिक काहिं।
बांधि वृक्षमें टांगिदिय, कह पौराणिकपाहिं ॥ ६ ॥

बारह वर्ष भूपको खायो। सन्मुखबँधो नाहिं छोड़वायो ॥
साधु ऐसही नृप सों गायो। बांधे दोउ अस दोउ सुनायो ॥
साधु तबै दोहुँन कहँ छोरी। दोउन सों कह गिरा कठोरी ॥
दोऊ बँधे मोहकी फांसी। सुनब सुनाउब दोउ कर हांसी॥
जो दोउ महँ विरक्त कोउ होते। धँसति भागवत सुरसरि सोते ॥
श्रीशुक परिक्षित भूप प्रधाना। श्रोता वक्ता तुमहिं नशाना ॥
ऐसहि पीपा रामानंदा। गुरू शिष्य जानिये अमंदा ॥
सुनि दोहुन कहँ साधु छोड़ायो। नृपहु पुराणिक ज्ञानहि पायो॥
तौन साधुको लहि उपदेशा। नृपहि पुराणिक तज्यो कलेशा॥
यामें है दूसर दृष्टांता। श्रोता सुनहु सकल तुमदाता॥

दोहा–यक साधू ढिग तिय गई, लै शिशुगुड़हि खवाय।
कह्यो साधु सों गुड़ भषन, दीजै सुतहि छोड़ाय॥७॥
साधु कह्यो लै आइयो, देहौं कालिह छोड़ाय।
भोर भये लैगै तिया, कह्यो साधु अनखाय ॥ ८ ॥
रे शिशु भोजन करत गुड़, उर उपजत गुड़रोग।

सुनत भीति वश शिशु तज्यौ, गुड़भोजन संयोग ९॥
नारि कह्यो प्रभु कालिह यह, कही वृत्त कस नाहिं।
गुरु बोल्यो गुड़ खात मैं, कालिह रह्यों यहि ठाहिं १०
सोरठा—आप गिरै जलकूप, वारण करै जो और कोउ।
सोउ बड़ो बेकूफ, मृषा तासु उपदेश सब ॥ १ ॥
रामानंद और नृप पीपा। भे दोउ सकल भक्त कुलदीपा॥
रामानंद कह्यो सुनु पीपा। चलि परसैं बहु साधु महीपा॥
हम द्वारका होत तहँ ऐहैं। तेरे भवन निवसि सुखपैहैं॥
पीपा चल्यो चरण शिरनाई। पहुँच्यो जबै राज्य निज आई॥
सकल राज्य डौंडी पिटवाई। सब कोउ करै साधु सेवकाई॥
आपहु साधुन रोज खवावै। मान सहित पुनि विदा करावै॥
पीपा यश छायो जगमाहीं। साधु सेव पीपासम नाहीं॥
रामानंद सुनत सुख पाई। चले द्वारकै शिष्य लेवाई॥
धना कवीर सेन रैदासा। चालिस भक्त रहे तिन पासा॥
गागरौन गे रामानंदा। पीपा सुनि पायो आनंदा॥
वित्त लुटावत किय अगुवाई। अमल सुथल महँ वास कराई॥
पृथक् पृथक् किय संत प्रणामा। पृथक् पृथक् दीन्ह्यो तिन ठामा॥
दोहा—व्यंजनमेवा विविधविधि, सहित सकल सत्कार।
जस पीपा कीन्ह्यों हुलसि, वरणि लहैको पार॥ ११॥
गागरौन वसि गुरु कछुकाला। चलन लगे द्वारका उताला॥
पीपा संग चलनको चाहा। रानिहुँ तेहिं सँग कियो उमाहा॥
रानी रहैं बीस तेहि केरी। पीपा वरज्यो आँखि तरेरी॥
नहिं मान्यौ तब बोलि कबीरै। कह्यो हवाल नयन भरि नीरै॥
कह कबीर रानिन पहँ जाई। का करिहौ भूपति सँग आई॥
वरवस चलहु तौ अस करिलेहू। धन तन वसन संत कहँ देहू॥

तुंबा कर कोपीन शरीरा। चलहु भूप सँग संतन भीरा॥
सुनत कबीर वचन नृप नारी। रही मौन नहिं संग सिधारी॥
सीता नाम रही यक रानी। पहिरि कोपीन संग हुलसानी॥
रामानंद कह्यो सुनु पीपा। सीतै लैचलु सँग कुलदीपा॥
पीपा कह्यो देहु कोउसंतै। गुरु कह तजै कौनविधि कंतै॥
यह सुनि उनइस नृपकी रानी। उपरोहितै बहुत सनमानी॥

दोहा—सहस सहस मुद्रा दियो, नृप वारणके हेतु।
पीपै बरज्यौ बहुत द्विज, नहिं मान्यो नृपकेतु॥१२॥

मरिगो विप्र तबै विष खाई। पीपा गुरुसों कह्यो डेराई॥
गुरु उपरोहित तुरत जिआयो। उपरोहित रानिन ढिग आयो॥
रानिनसों भाष्यो द्विजराई। अब हमारि कछु नाहिं बसाई॥
पीपा लै सँग सीता रानी। गुरु सँग गयो द्वारका ज्ञानी॥
कछुदिन कशस्थलीकरि वासा। गुरु युत पायो परम हुलासा॥
रामानंद गये पुनि कासी। आप द्वारका वस्यो हुलासी॥
सुन्यो सविधि भागवत पुराना। संतनसों पूंछ्यो मतिवाना॥
तहँ द्वै यदुपति मंदिर भाई। संत सकल मोहिं देहु बताई॥
संत कह्यो अबलों नहिं बिगरी। सागरके अंतर है सिगरी॥
तब पीपा सीता सँग लैकै। कूद्यो सागर मधि सुखम्वैकै॥
सागर मधी पंथ इक पायो। सोइ पथह्वै द्वारका सिधायो॥
यदुपति महल लख्यो सो जाई। भयो चकित प्रगटी पुलकाई॥

दोहा—आगे चलि पीपै लियो, श्रीरुक्मिणिको कंत।
सात दिना राख्यो भवन, दियो अनंद अनंत॥१३॥

रुक्मिणि दिय सीतै निज सारी। यदुपति दियो छाप कर धारी॥
पीपै कह वसुदेव कुमारा। जाय उधारहु तुम संसारा॥
जाके जाके देहौं छापू। ताके रही न पुनि यमदापू॥

हरि पीपै बाहिर पहुँचायो । बूड़न भक्त कलंक मिटायो ॥
पीपा सूखे अम्बर धारी । आयो संत समाज मँझारी ॥
अचरज मानि संत शिरनायो । पीपा हरिकी छाप चलायो ॥
अबलों प्रगट द्वारका माहीं । छाप लगे सब जातिन काहीं ॥
पीपा तहँ ते सतिय सिधारी ।मिल्यो यमन इक विपिन मझारी॥
सीतै गहि सो तुरत पराना । पीपा कहँ जंजाल विलाना ॥
तब इक बाघ पठानहिं खायो । लै सीतै पीपा पुर आयो ॥
पीपा कह्यो सुनेरी सीता । जाहि भवन निज तैं अति भीता ॥
सीता कह्यो अबै लगि तोरा । मिट्यो न भेद पुरुष तिय भोरा॥

दोहा—पीपाजी तब हँसि कह्यो, लेहुँ परीक्षा तोरि ।
तैंतो रुक्मिणिकी सखी, तोहिं तजब बड़ि खोरि॥१४

सीता सहित चल्यो पुनि पीपा । मिल्यो पंथ इक शेर समीपा॥
पीपा ताके निकट सिधारयो । दे तेहिं मंत्र माल गल डारयो॥
वनपति अनशन व्रत किय तबते।तज्यो शरीर सुचित भो सबते॥
सो गुजरात देश महँ जायो । नरसीजी अस नामहि पायो ॥
तासु कथा वर्णहुँ गो आगे । पीपा चरित सुनहु अनुरागे ॥
गये शेषशाई पुनि पीपा । कीन्ह्यो दर्शन यदुकुल भूपा ॥
तहँ इक भक्त अकिंचन रहेऊ । चीधर नाम नारि युत ठयऊ ॥
सो दम्पति पीपा सत्कारयो । करि पूजन पुनि पाँय पखारयो॥
पुनि तियसों बोल्यो असि बानी । आये महाभागवत ज्ञानी ॥
देह वित्त कछु भोजन हेतू । तब तिय कह्यो आज नहिं नेतू ॥
रह्यो जौन कछु घरमें मोरे । खायो काल्हि जे आये तोरे ॥
अबतो रह्यो घाँघरो बांकी । साधु हेतु मोहिं प्रीति न ताकी ॥

दोहा—चीधर बेंच्यो घांघरो, पीपै भोजन दीन ।
पीपा भोजन विरचि कै, बोल्यो वचन प्रवीन ॥१५॥

आपहु खाहु बैठि युत नारी। तब चौंधर निज तिया हँकारी॥
विना वसन किमि जाय सिधारी। तब पीपा पठयो निज नारी॥
लखी वसन विन चौधर घरनी। सीता कह्यो तौनकी करनी॥
चौधर नारि कही मुसकाई। लग्यो सकल साधुन सेवकाई॥
तब सीता आधो पट फारी। चौंधर तिय को दै पगुधारी॥
भोजन करि सीता जब सोई। तब पीपा सों कह अति रोई॥
पीपा अचरज मान्यो प्रणको। तिय कह वेंचि देहौं धन तनको॥
उठे भोर चलिकै द्वै कोसा। मिल्यो नगर जनपूरित कोसा॥
मिले गैल महँ छैल छतीसे। ते सीता कहँ सुंदर दीसे॥
पूंछे छैल कौन तुम प्यारी। तिय कह गाति पातुरी हमारी॥
अंध एक चाकर सँग माहीं। रमैं पुरुष पावैं धन काहीं॥
वेश्या बाज सुनत बहु धाये। धन अरु धान्य विपुल तहँ लाये॥

दोहा—सीता चौधर भवन महँ,भेजिदियो धन धानि।
आये तेहि दिन तेहि घरै, साधू पंचशतानि॥ ६॥

चौधर तुरतहिं सबनि खवायो। इक दिनको नहिं नेकु बचायो॥
जिन जिन वेश्या बाजिन केरो। धन भोजन किय संत घनेरो॥
तिनकी तिनकी भै मति अमला। सीतै गुने न द्वारकि अबला॥
पूंछतभे को अहहु सयानी। तब सीता निज कथा बखानी॥
पीपाको सुनि सब जन आये। लीन्हे मंत्र चरण शिरनाये॥
भये शुद्ध सब वेश्याबाजू। पीपा चल्यो मानि कृत काजू॥
ग्राम एक तोडो जेहिं नामा। तहँ नृप शूरमल्ल मतिधामा॥
ताके नगर निकट किय वासा। कहुँ भोजन कहुँ करै उपासा॥
यक दिन मज्जन गये तड़ागे। यक थल माटी खोदन लागे॥
मोहर भरो पात्र मिलिगयऊ। तेहिं लखितहँते भागत भयऊ॥
नारी सों वरण्यो विरतंता। सो कह तहाँ न जैयो कंता॥

सुने चोर यह दम्पति वादा । गये लेन तेहिं भरि अहलादा ॥
दोहा—गहत पात्र इक अहि कढ्यो, भगे चोर भयभीर ।
डसवायो तैं भुजँगते, यह शठ साधु अपीर ॥ १७ ॥
ताते यहि घर डारि भुजंगा । हमहिं डसावै यहिकर अंगा ॥
अस कहि पात्र उपर पट डारी । फेंक्यो पीपा भवन मँझारी ॥
घर घर शोर सुनत उठि पीपा । मोहर लख्यो बारि निशि दीपा॥
मिलीं सातसै मोहर मोटी । शत शत मासाकी नहिं खोटी॥
पीपा तबते अन वेसाही । संत असंत खवाय उछाही ॥
दश दिनमें मोहरचुकवायो । सूरजमल्ल खबरि यह पायो ॥
आय दरशहित पद शिर नायो ।शिष्य होन हित विनय सुनायो॥
पीपा कह्यो जो शिष्यहि होवहु । तो अबहीं घरको धन खोवहु॥
सूरजमल्ल सुनत हर्षान्यो । तहँ तुरंत घर संपति आन्यो॥
पीपा ह्वै प्रसन्न कहवानी । धन लैजाहु भवन नृप ज्ञानी ॥
हम यह करी परीक्षा तेरी । अब भै शिष्य करन मति मेरी॥
करिकै शिष्य कह्यो नृप काहीं। राखेहु संतन परदा नाहीं ॥
दोहा—रच्यो धर्मशाला बृहत, मंदिर बहु बनवाय ।
नर नारी सब शिष्य करि, दिय ब्रजभूमि बनाय॥ १८॥
इक दिन नृप कह अश्वहि लीजे । पै नहिं इह काहूकहँ दीजै ॥
जबसेयो नृप संतनकाहीं । तबते बंधु सिहात सदाहीं ॥
यक दिन आयो यक व्यापारी । मर्‍यो वृषभ तेहि पंथ मँझारी॥
पूंछ्यो वृषभ विकत यहि गाऊं । कोउ कह मिलिहै पीपा ठाऊं॥
पीपासों चलि कहव्यापारी । देहु बैल सुनियतबड़वारी ॥
पीपा कह्यो चरत वनमाहीं । ऐहैं जब देहैं तुमकाहीं ॥
दियो पंचशत धन व्यापारी । सो किय भोजन केर तयारी ॥
तेहि दिन सहसन साधु जेवायो । पंचशतहुँ इक दिवस उड़ायो॥

सांझ समय मांग्यो व्यापारी। पीपा तब तेहिं गिरा उचारी॥
अपने बैल देखिले आंखी। भोजन करहिं नगर जन साखी॥
व्यापारी तब पायो ज्ञाना। ऊन वसन दीन्ह्यो तेहि नाना॥
भयो शिष्य तजिकै संसारा। लहि विराग हरिलोक सिधारा॥

दोहा—यक दिन पीपा तुरंग चढ़ि, गयो करन स्नान।
चोर चोरायो घोड़ कोउ, लाये तेइ पुनि थान॥१९॥

इक दिन अपर गाँव पगु धारे। तासु कुटी बहु संत सिधारे॥
लखिकै सीता संत समाजा। गई वणिक घर भोजनकाजा॥
कह्यो वणिक मन भावत लेहू। पै रजनीमहँ मोहिं सुख देहू॥
करि सीता स्वीकार तुरंतै। लाय अन्न भोजन दिय संतै॥
आयो पति निशि कह्यो हवाला। पीपा सुनिकै भयो निहाला॥
कह्यो शृँगार सहित तहँ जाहू। संत हेतु नहिं मन पछिताहू॥
सीता करि षोडश शृंगारा। वणिक निवास तुरत पगु धारा॥
वर्षाऋतु कर्दम पथमाहीं। पीपा धरचो कंध तिय काहीं॥
तियको वणिक धाम पहुँचाई। आप द्वारमहँ बैठ्यो आई॥
सीतै लखत वणिक उरमाहीं। भयो विवेक रह्यो भ्रम नाहीं॥
सीता सूखे चरण निहारी। कह्यो मातु केहि मार्ग सिधारी॥
सीता कह्यो कंत मोहिं लायो। सुनत वणिक तुरतहिं उठि धायो

दोहा—पीपा पाँयनमें परचो, क्षमवायो अपराध।
सोउ बणिकहिं करि शिष्य निज,हन्यो सकल भवबाध॥२०॥

यह सुधि सकल भूप जबपाई। अनुचित गुण्यो संत सेवकाई॥
घटन लग्यो भूपति अनुरागा। जान्यो पीपा भयो अभागा॥
यहि क्षण अंकुर कुमति उखारै। नृपहि कुसंगति चहति बिगारै॥
अस गुणि नृप घर तेहि क्षण आये। चोपदारसों खबरि जनाये॥
मोजा बनवावत नृप रहेऊ। करि पूजन ऐहौं अस कहेऊ॥

पीपा कह्यो बनावत मोजा। पूजन नाम लेत भरि मोजा॥
लावहु तुरत नरेश लेवाई। सो सुनि आयो भूप डेराई॥
पीपा कह लहुरी तुव रानी। अबहि देहु मोहिं नतु तुव हानी॥
भूप भीति वस रानिन लायो। तव पीपा वपु सिंह देखायो॥
रहे बाँझ लहुरी नृप रानी। गयो लेन नृप भय उर आनी॥
सुतहिं खेलावत ताकहँ देख्यो। पीपाकी महिमा मन लेख्यो॥
परचो पुहुमिपति पीपा पायन। लायो रानीको युत चायन॥
दोहा—पीपाके दृग देखतै, बालक गयो विलाय॥
भूप कह्यो तेरी कला, मोसों जानि न जाय॥ २१॥
पीपा पुहुमीपति परमोध्यो। संतभेद महिमाकरि सोध्यो॥
पीपा कह्यो सुनहु नरराई। करुसंतत संतन सेवकाई॥
तन मन संत सेव जे करहीं। तिन सँग पाय अधम उद्धरहीं॥
छुटत न जग विन संतन सेये। चलति न सिंधु नाव विन खेये॥
अस परमोधि नृपहि घर आये। प्रतिदिन भूपहिं प्रेम बढ़ाये॥
विषयी साधु एक दिन आयो। मांग्यो सीतै लखि ललचायो॥
पीपा कह्यो अबहिं लैजाहू। लै भाग्यो डेरात नरनाहू॥
कह्यो साधुसों तब अस सीता। रहिहैं तहँ जहँ निशा व्यतीता॥
सीतहि लिहे भूप भयपाग्यो। चारिपहर निशि सो शठभाग्यो॥
भयो भोर देख्यो चहुँओरा। रह्यो नगरके निकटहि ठोरा॥
तब सीता कह रह्यो करारा। अब नहिं करिहैं संग तुम्हारा॥
सीता संग ज्ञान प्रगटायो। मातुमातु कहि सो शिरनायो॥
दोहा—सीतै पीपा भवन में, पहुँचायो परि पायँ॥
भयो शिष्य छूटीविषय, लीन्ह्यो मुक्ति बजाय॥२२॥
कछु दिनमाहँ चारि पुनि आये। विषयी साधुन वेष बनाये॥
पीपासों सीताकहँ मांगे। पीपा कह्यो लेहु सुखपागे॥

सीतै कह्यो करहु शृंगारा। बैठि कोठरी करु सत्कारा ॥
सीता बैठि कोठरी जबहीं। साधुनसों पीपा कह तबहीं ॥
बैठी तिय गमनहु तुम चारी। करहु यथामन आश तिहारी ॥
विषयी गये कोठरी द्वारे। तहँ इक बाघिनि बैठि निहारे ॥
गिरे भागि पीपाके पाये। पीपाचलि सीतै दरशाये ॥
लहे ज्ञान पीपा परभाऊ। भजन लगे यादव कुल राऊ ॥
कथा अमित पीपाकी ऐसी। कहँलों कहौं यथारथ जैसी ॥
किय संक्षेप इतै प्रियदासा। ताते कह्यो न सब इतिहासा ॥
द्वै कवित्त प्रियदास बनाये। संक्षेपहि गाथा सब गाये ॥
लिखौं कवित्त तौन मैं दोई। श्रोता सुनहु हुलसि सब कोई॥

दोहा—अष्टादश इतिहास जे, पीपाके प्रियदास ॥
किय संक्षेप कवित्तमें, आगू तासु प्रकास ॥ २३ ॥

कवित्त— गुजरीको धन दियो पियो दही संतनमें ब्राह्मण को भक्त कियो देवी दै निकारिकै ॥ तेलीकोजिआयो भैसिचौरन पै फेरि लायो गाड़ीभर आयो तन पांच ठोर जारि कै ॥ कागज लै कोरो करयो बनियाको शोक हरयो भरयो घर त्यागि डारी हत्याहू उतारि कै॥राजाको अवसेरभई संतको जब विभव दई चीठी मानि गयो श्रीरंगजी उदारि कै॥१॥श्रीरंगके चेतधरयो तियहिय भाव भरयो ब्राह्मणको शोक हरयो राजा पै पुजाइकै॥ चँदौवा वोझाय लियो तेलीको लै बेल दियो पुनिघरमाँझआयो भयो सुख आइकै ॥ बड़ोई अकाल परयो जीवदुख दूरिकरयो परयो भूमि गर्भ धन पायो दै लुटायकै ॥ अति वि-स्तार लियो किये है विचार यह सुनै एक बार पुनि भूलै न हींगायकै ॥

दोहा—अष्टादश इतिहासये, पीपाके सुखदान ।
तिनको मैं संक्षेपते, सिगरे करौं बखान ॥ २४ ॥

छप्पय—यकदिन पीपा भवन संतमडली सोहाई ।
बेंचनहित तहँ सुखद गूजरी दधि लै आई ॥
मांग्यौदधि सो दियो सकल भो मोल पांचपन ॥
पीपा कह जो मिलै आजु सो लेहि मोल धन ॥
तब सांझ शिष्य इक साहु गो दियो भेंट मोहर शतै॥
सो दियो गूजरीको तुरत पीपा पूरब प्रणचितै ॥ १ ॥
देवीको यक रह्यो भक्त द्विज नेवाति बोलायो ॥
पीपा प्रथमहि राम भोग मंजूर करायो ॥
तहँ पीपा चलि राम भोग अरघा जलफेरयो ॥
रामहिंको सो भोग लग्यो बांदर बहु घेरयो ॥
सब देवि भोग कीसन भषे यह कौतुक देखें सबै ॥
अधरात विप्र छाती चढ़ी देवी कहि भूंखी तबै ॥ २ ॥

सोरठा—तब द्विज कह्यो प्रकोपि,देवी तैं निर्मल भई ॥
मैं ध्यायों यहि चोपि,तै रक्षण करिहै अवशि ॥ १ ॥
रक्षण कियो न भोग,मोहिं कौन विधि रक्षिहै ॥
मम तव अब न सँयोग,भजिहौं तेहिजो तोहि परै॥२॥
अस कहि विप्र प्रभात,पीपाके पाँयन परयो ॥
कही सकल निशिबात,राम नाम सुनिलेत भो॥३॥
देवी मंदिर माहिं,पधरायो रघुवंशमणि ॥
भज्यौ संतपदकाहिं,कछुदिनमें भवनिधितरयो॥४॥

यक दिन पीपा नगर बजारा । कौनहु हेतु कहूं पगुधारा ॥
इक सुंदरि तेलिनिकी नारी । आवाते चली तेल शिर धारी ॥
बेंचन हेतु तहां बहु वारै । तेल लेहु अस ऊंच पुकारै ॥

ताहि देखि पीपा छबिवारी । निकट बोलि अस गिरा उचारी॥
रामभजन लायक तनु माहीं । तेल तेल कृत करति वृथाहीं ॥
राम राम कहु तेलिनिप्यारी । कह्यो कोपि तब तेली नारी ॥
राम राम सत्ती मुख भाषै । जियै मोरपति वर्षन लाखै ॥
पीपा कह्यो मरी पति जबहीं । राम राम भाषैगी तबहीं ॥
अस कहि पीपा गे निज कामा । ताकर पति आयो निज धामा॥
प्रविशत भवन देहरी लागी । फूटो शिर गिरिगो तनु त्यागी॥
सती होन कहँ ताकरि नारी । लै नरियर कर करी तयारी ॥
राम राम मुख करत बखाना । तेलीकी तिय गई मशाना ॥

दोहा–शोर भयो सब नगर में, धाये देखन लोग ।
पीपाजी तहँ जातभे, जानि राम संयोग ॥ २५ ॥

देखत तेलिनि हँसे ठठाई । अबतो राम नाम रट लाई ॥
तेलिनि गिरी चरण महँ धाई । कह्यो नाथ पति देहु जियाई ॥
जबलौं दंपति हम जग जीहैं । राम राम रटिहैं हम जीहैं ॥
पीपा कह्यो न तजै करारा । तौ अबहीं पति जियैतिहारा ॥
तेलिनि कह्यो शपथ पद तेरी । रटिहै राम जीह नितमेरी ॥
तब पीपा निज पद शिव शीशा।धरि ज्यायो कहि जय जगदीशा॥
तेलिनि तेली शिष भये दोऊ । अचरज मान देखि सब कोऊ ॥
यक दिन भैंस चोरायो चोरा । पीपा जानि कियो नहिं शोरा ॥
बूढ़ी भैंसि चोर लैजाते । आपहु चले तिन्हे गोहराते ॥
युवा भैंसि औरौ सब लेहू । करहु कछू नहिं मन संदेहू ॥
चित यो चोर लौटिकै जबहीं । सकल भैंसि आइ ढिग तबहीं ॥
पीपा दरशनपावत चोरा । उरमें रह्यो अज्ञान न थोरा ॥

दोहा–तासु चरण परि शिष्य भे,किहे संत सेवकाय ॥
कछु दिनमें संसार तजि, लीन्हीं मुक्ति बजाय॥ २६ ॥

कवित्त—पीपा कहुँ राम तको एक दिन जाते पंथ,कोऊ भक्त आय कारि भाव घर लैगयो । दिन दिन दून दून प्रेम बाढ़ी गाढ़ी अति,चलत निहारि प्रभु शोक अति सों छयो । रघुराज अरप्यो अनेक विधि द्रव्य भूरि शकट भरि सादर सु नाज स्वामीको दयो ।सोइ अन्न टोडो भेजि लाखन जेवांये संत,सौंरि भगवंत नहिं अंतताको ह्वै गयो ॥१॥ एक समै पांचग्रामहीते संग न्योतो आ-यो,पीपा उर संशैकारि इक ग्रामको गये । पीपा पीर जानि रघु-वीर धरि पीपा वेष,न्योता कियो चारौ नहिं कोऊ जानते भये । आई एक बाई रघुराज शिष्य होन हेतु,देख्यो है प्रथम गाँव त-नु तजिको दये । दूजो दाह तीजे राखे चौथे दशगात पांचै, तेरहीं प्रत्यक्ष देख्यो जाय छठयें ठये ॥ २ ॥

दोहा—एक वणिक पीपा निकट,कियो विनय कर जोरि॥
पुरवहु प्रभु दाया सहित,यह अभिलाषा मोरि ॥२७॥

जो उठान साधुन के हेतू । उठै रोज रावरे निकेतू ॥
सो मोहीं सो लेहु कृपाला । दिये दाम बीते कछु काला ॥
पीपा कह्यो भलो कह साहू । कीजै तुहीं मोर निरवाहू ॥
वणिक लग्यो तब देन अनाजू । खानलगी नित संत समाजू ॥
ताके खोट पांचसै पैसा । वणिक होतिहै जाति अनैसा॥
खोटे पैसा सकल चढ़ाई । जोरयो वणिक खर्च बहुताई ॥
बीते जब षट्मास अवादा । तबबनियांचलि कियो तकादा ॥
पीपा कह्यो पत्र लै आवहु । लेखा करि निज दाम चुकावहु॥
झूठो कागज़ वणिक बनाई । पीपै लग्यो सुनावन जाई ॥
कागज़ झूठ बंद रह जेते । कोरे कागज़ भे सब तेते ॥
तबबनियांभ्रमकरि घर गयऊ। लिये बंद सब देखत भयऊ ॥
पुनि पीपा ढिग कागज़ आने । कोरे कागज़ पुनि दरशाने ॥

दोहा—सांच दाम जेतनो रह्यो,तेतनो लिख्यो देखान ॥
पीपा कह तू बावरो, वणिक चित्त चौआन ॥ २८ ॥
ज्ञान भयो पुनि साहु हिय,गयो दूरि भ्रम भूरि ॥
क्षमा करायो आपसे,धरयो चरण शिर धूरि ॥ २९ ॥
जगकी तुच्छ विभूति गुणि,लै सीता सँगमाहिं ॥
संत समाजन में मिले,पीपा शंकित नाहिं ॥ ३० ॥

कहै सुनै हरि कथा सदाहीं । उपदेशै देशन जनकाहीं ॥
जहाँ बसै प्रभु वर्ष द्वि वर्षा । तहाँ संत जन आवहिं हर्षा ॥
एकसमय इक विप्र सिधारयो । सुता व्याह हित वयन उचारयो॥
ताहि दई सम्पति निज भूरी । रही कुटी पीपाकी झूरी ॥
द्विज लै धन भरि महा उछाहू । कीन्ह्यो जाय सुताकर व्याहू ॥
पीपा सूनि कुटी महँ बैठे । सुमिरत हरि सुखसागर पैठे ॥
हत्या लगीं विप्र यक काहीं ।ग्रहण न किय कुलके तेहिंकाहीं ॥
सो द्विज रोवत रोवत आयो । स्वामीके चरणन शिरनायो ॥
स्वामी पूंछयो कत दुखछायो । सो अपनो वृत्तांत सुनायो ॥
पीपा कह्यो जपो हरिनामा । मिटी ब्रह्महत्या दुखधामा ॥
जपन सो रामनाम द्विज लाग्यो। तनुते तुरत पाप सब भाग्यो ॥
पीपा कह्यो शुद्ध तैं भयऊ ।अब कुल मिलन योग्य ह्वैगयऊ॥

दोहा—विप्र कह्यो मोहिं देखतै,कुलके मारत धाय ॥
कौन भांति ते अब मिलौं,जाति पांतिमहँ जाय॥३१॥

तब पीपा द्विज कर कर करिकै ।कह्योविप्र कुल चलि सुख भरिकै
यह द्विज जप्यो रामको नामा ।यहि तनु अब न दुरित कर ठामा
तब ताके कुलके अस गाये । कौन भांति यहि शुद्ध बताये ॥
जो हनुमत मूरति प्रगटाई । यहि कर कृत नैवेद्यहि खाई ॥
तौ हमरे उपजै विश्वासा । भयो विप्र हत्या कर नासा ॥

तब द्विज तुरतहिं भोग बनायो। पीपा हनुमत भोग लगायो॥
पीपा पट किंवार दै दीन्ह्यो। हनुमत प्रगट सो भोजन कीन्ह्यो॥
खोल्यो पट किंवार मतिवाना। पेरा मारुत वदन देखाना॥
तब कुलके मान्यो विश्वासा। कीन्ह्यो जय जय शोर प्रकासा॥
लियो जाति महँ द्विजै मिलाई। पीपा चरण गहे शिरनाई॥
यहि विधि द्विजको पाप छोंड़ाई। पीपा रहे दूरि कहुँ जाई॥
टोंरेको नृप सूरजमल्ला। बिन गुरु कीन्ह्यो सोच प्रबल्ला॥

दोहा—पीपाके खोजन हितै, भेज्यो विपुल सवार।
बीसमँजल महँ गुरु मिले, कियो विनय बहुबार॥३२॥
सादिन सों पीपा कह्यो, चलहु प्रथम तुम तत्र।
हौं आगेही पहुँचिहौं, बैठोहै नृप यत्र॥ ३३॥
विनागये मेरे तहाँ, जल पीवे नृप नाहिं।
ताते टोडो नगरमैं, जैहौं यहि क्षण माहिं॥ ३४॥
अस कहि टोडो नगरमें, पीपा पहुँचे आय॥
राजा सुनत सहर्ष चलि, लायो भवन लेवाय॥३५॥

एक दिवस सीता कहँ बोली। पीपा कह निज आशय खोली॥
रंगदास इक वैष्णव चोखा। मोहिं बोलायो है नहिं दोषा॥
मैं आऊं नेवतो करिभारी। तबलगि रहे कुटी महँ प्यारी॥
अस कहि रंगदास घर गयऊ। ध्यान करत सो बैठो रहेऊ॥
कियो मानसी पूजन फूलो। कुसुम चढ़ावत तहँ सो भूलो॥
पीपा जाय कही तब बानी। कुसुम चढ़ावहु मति रति सानी॥
रंगदास तब तजिकै ध्याना। कुसुम चढ़ायो विविध विधाना॥
पीपा चरण गह्यो शिरनाई। जान्यो सत्य अहैं रघुराई॥
पुनि पीपै भोजन करवायो। करन लग्यो सत्संग सोहायो॥
यक दिन रंगदास अरु पीपा। बैठे ज्ञान कथत जगदीपा॥

तहँ आई द्वै श्वपच कुमारी। करसी बिनन लगीं छबिवारी॥
तब पीपा दोहुन गोहरायो। रंगदास तब अति अनखायो॥
दोहा—श्वपच सुतन केहि हेतुते, आनहु अपने पास।
परदारन भाषण करत, होत धर्मकर नाश॥ ३६॥
तब पीपा बोल्यो मुसकाई। रामभिन्न कोउ मोहिंन देखाई॥
इन दोहुनको दै उपदेशा। अबहीं हरिहौं जगत कलेशा॥
जब आईं दोउ श्वपच कुमारी। जगत वृथा सब कह्यो उचारी॥
राम भक्ति फल पुनि दरशायो। तिनके हिये ज्ञान प्रगटायो॥
सीताराम कहत दोउ गवनी। कंठी बाँधिलई दोउ रवनी॥
गई भवन देखत तिन माता। मारन चलीं कहत कटुबाता॥
जब तिहरे ऐहैं घर केरे। कटिहैं मूड मिली नहिं हेरे॥
भागीं दोऊ भवनते भीता। मिलीं संतगण कहि जय सीता॥
भईं अनंत अनन्य उपासी। पावत भई बहुत सुखरासी॥
पुनि पीपा अतिशय सुखछाई। रंगदासते माँगि बिदाई॥
चले भवन सुमिरत रघुराई। मज्जन करन लगीं सरि आई॥
रहे एक द्विज रोवत तहँमां। पूंछ्यो कौन शोक तुव तनमां॥
दोहा—विप्र कह्यो धन लावतो, करन सुताको व्याह।
यहि थल चोर चोराय लिय, भयो भोर दुखदाह॥३७॥
पीपा कह्यो मानि मम वानी। तव मिटि जाय विवाह गलानी॥
महिसुर कह्यो मानिहौं वयना। तुमहिं छोंड़ि लखि परै न नयना॥
संतवेष तब द्विजहिं बनाये। भूपति निकट तुरत लै आये॥
राजा जाय चरण शिरनायो। ये कोहैं अस वचन सुनायो॥
पीपा कह गुरु अहैं हमारे। कृपा करन तुव निकट पधारे॥
शत मोहर तब भूप चढ़ायो। द्विजहिं दुशाला अमल वोढ़ायो
यहि विधि नृपसों द्विजहिं पुजाई। पीपा किय पुनि विप्र बिदाई॥

संतवेष द्विज धरयो सदाहीं। प्रगट्यो ज्ञान विमल उरमाहीं॥
कछु दिन बसे टोरपुर पीपा। सूर्यमल्ल नित रहे समीपा॥
यक दिन पीपाके अस्थाना। होत रह्यो हरिकीर्तन गाना॥
तब पीपा करमीजन लागे। बोले सब अचरज अस पागे॥
कौन हेतु कर मींजहु दोई। कारण जानि परे नहिं कोई॥
दोहा—तब पीपा बोले वचन, आजु द्वारका माहिं।
हरिउत्सव हित चांदनी, लागी रही तहाँहिं॥ ३८॥
लगी पवनवश तामहँ आगी। मैं बुझाय आयों इत भागी॥
हाथ जरे मींजहुँ हित येहू। मानहु मृषा खबरि लैलेहू॥
तब भूपति चारण पठवाये। दूत देखि सब सत्य बताये॥
राजा पीपा पद शिरनायो। कछुक काल निज नगर बसायो॥
यक दिन मज्जन हित सर आते। तेली वृषभ कहूंते आते॥
ताही समय विप्र इक आयो। पीपाको अस वचन सुनायो॥
वृषभ सकल मरिगे प्रभु मेरे। कृषी हेतु कछु परत न हेरे॥
पीपा कह्यो वृषभ जे जाहीं। तिनको लै गमनहु घर काहीं॥
तेली वृषभ विप्र लै गयऊ। रक्षक रोवत घर चलि दयऊ॥
तेली रहै भवन महँ नाहीं। गयो अनत कहुँ कारजकाहीं॥
आयो सांझ जबै घर तेली। कह्यो नारि तब रोय अकेली॥
पीपा वृषभ द्विजहिं दैडारा। कियो सकल घरको संहारा॥
दोहा—तेली रोवत भूपपहँ, वरण्यो जाय हवाल।
तेलीको पीपा निकट, पठवायो महिपाल॥ ३९॥
पीपा कह्यो वृषभ तुवसारे। जाय भवन महँ आंखि निहारे॥
तेली पीपा वचन विचारी। गयो भवनमहँ अतिहि सुखारी
बँधे बैल देख्यो तिज सारै। तासु भवन सुख भयो अपारै॥
तेई वृषभते किये रोजगारा। दशगुन बढ्यौ पल्यो परिवारा॥

तेली न्यौतौ सब परिवारा। दियो यथा सुख सबन अहारा ॥
पीपाके शरणागत भयऊ। सहित कुटुम्ब संत ह्वैगयऊ ॥
एक समय पुनि परचो अकाला। भये रंक तेहिके महिपाला ॥
हाहाकार परचो चहुँ घाहीं। सुतहिं मातु पितु छोड़ि पराहीं॥
दै कपाट घर घुसे सुदानी। प्रजा क्षुधावश अति बिलखानी॥
तब पीपा लखि प्रजन कलेशा। खन्यो एक थल करि अंदेशा॥
मिली द्रव्य तहँ तीन करोरा। लीन्ह्यो अन्न वितारि चहुँ ओरा॥
पीपा प्रजन बोलाय खवायो। दुराधर्ष दुर्भिक्ष मिटायो ॥

दोहा—यहि विधि पीपाके चरित,श्रोता जानहु भूरि।
मैं कहलों वर्णन करौं, रह्यो जगत यश पूरि ॥ ४० ॥
बहुत काल लगि जगतमें, पीपा तनुको राखि।
तारचो अधम अनेक जग, रामतत्व मुखभाखि॥४१॥
जा दिन पीपा बैठि महि, सहजहिं तज्यो शरीर ॥
ता दिन प्रगट विमान नव, पठवायोरघुवीर ॥ ४२ ॥
अर्द्ध निशा दिनकर सरिस, प्रगट्यो विमल प्रकास।
राम धाम पीपा गयो, पायो परम हुलास ॥ ४३ ॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएक पंचाशोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

अथ सुखानंदकी कथा ॥

दोहा—सुखानंदकी कथा अब, श्रोता सुनहु सुजान।
जासु कथा वर्णत वदन, उपजत प्रेम महान ॥ १ ॥

छप्पय—सुखानंद हरिभक्त शिरोमणि भये जगतमें।
जिनको परशत अधम होत हरिभक्त सुमतमें ॥

पद रचनामें अति प्रवीण गुरुमंत्र विश्वासू ।
बहत नैन दिन रैन प्रेमजल सहित हुलासू ॥
हरिगुणगण श्रवण सचेत अति भक्त कमल दिनकरउयो॥
तनु तजत जासु नभमें लख्यो हरि विमान आवत भयो १

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
द्विपंचाशोध्यायः ॥ ५२ ॥

अथ केशवभट्टकी कथा ॥

सोरठा–अब वरणौं इतिहास, केशवभट्ट सुजानको ।
जाको सुयश प्रकाश, भरतखंडमें भरि रह्यो ॥१॥

केशवभट्ट सुपंडित ज्ञानी । रही प्रगट सरस्वती भवानी ॥
बैठे वाद करत रसनामें । कीन्ह्यों विजय सकल वसुधामें॥
संग चलैं गज वाजि पालकी । विप्र भीर विद्या विशालकी ॥
केशवभट्ट सोइ इक काला । नदिया गमने बुद्धि विशाला ॥
शास्त्रारथ करिबेके हेतू । नगर बाहिरो कियो निकेतू ॥
सुनिकै केशवभट्ट अवाई । नदिया पंडित उठे डेराई ॥
रहे कृष्ण चैतन्य तहांहीं । पांच वर्षकी वयस सोहांहीं ॥
जानि पंडितनकी अति भीती । लैहैं केशवभट्टन जीती ॥
केशव पंडित जहां नहाँहीं । आप गये खेलते तहाँहीं ॥
केशवभट्टहि कह्यो सुनाई । गंगाको वर्णहु वपु भाई ॥
केशवभट्ट कहन तब लागे । रचि गंगा अष्टक अनुरागे ॥
कह्यो कृष्णचैतन्य सुवैना । यहतो कछू शुद्ध दरशैना ॥

दोहा- केशवभट्ट प्रकोपि कह, मम कृत कहहु अशुद्ध ।
होय जो तोहिं समर्थ कछु, तौ बालक करु शुद्ध॥२॥

कह्यो कृष्णचैतन्य बुझाई । यह अशुद्ध तुवकृत कविताई ॥

सत्य अशुद्ध जानि द्विजराजा। मौन रह्यो कछु कियो न काजा॥
बहुरि कह्यो ऐयो तुम काली। अस कहि उठ्यो सुमिरि द्विजकाली
कियो आपने अयन पयाना। राति सरस्वति किय अहवाना॥
गिरा प्रगटि तेहिं गिरा बखानी। करहु न वाद बुद्धि भ्रम आनी॥
अहैं कृष्णचैतन्य मुरारी। श्रीपति कुरुपति अहैं हमारी॥
केशवभट्ट तबै शिरनायो। बहुरि मुदित सरिता तट आयो॥
गये कृष्णचैतन्य जबै तहँ। केशवभट्ट तबै पद परि कहँ॥
आयसु होय करौं प्रभु सोई। तुम भगवंत शंक नहिं होई॥
कह्यो कृष्णचैतन्य सुहाये। कापैहौ कोउ द्विजै हराये॥
भक्ति करहु तजिकै यहि भीरा। यही पढ़ेको फल मतिधीरा॥
केशवभट्ट धारि शिर शासन। तज्यो भीर तहँ जियजयआसन॥
दोहा–सुन्यो खबरि कछु दिवस महँ, मथुरा म्लेच्छन आय।
मुसल्मान विप्रनकियो, अपनो पंथ चलाय॥ ३॥
लैकरि दश हज़ार भटभंगा। मथुरा गमने विजय उमंगा॥
तहँ विश्रांतघाट महँ जाई। यह कौतुक देख्यो द्विजराई॥
बँध्यो यंत्र पथ मध्य तहाँहीं। तेहितर जात यमन ह्वै जाहीं॥
कटै सुनत शिर रहै नवारा। मथुरा माच्यो हाहाकारा॥
केशवभट्ट सुमिरि यदुराई। सबके शिर पट दियो बँधाई॥
बँधे वसन निकसैं तहँ जेते। तबते म्लेच्छ होंय नहिं तेते॥
जानि यमन रोपे बहु वादा। केशवभट्ट थप्यो मरयादा॥
यमन जुरे मारन कहँ धाये। तब केशव हुंकार सुनाये॥
यमनी भये यमन सब जेते। केशव चरण परे डरि तेते॥
पठै भटन दिय यंत्र तुराई। तुरकनको डारचो पिटवाई॥
पुनि विप्रन यमुना नहवाई। कियो विप्र व्रतबंध कराई॥
मथुराते दिय यमन निकासी। जे न कढ़े दीन्ह्यो तिन्ह फाँसी॥

दोहा—ऐसो थापित धर्मकरि, केशव मथुरा माहिं।
करिकै भजन विहाय जग, गवने गोपुर काहिं ॥ ४ ॥
इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांक०उ०पंचत्रिंशोऽध्यायः॥३५॥

अथ श्रीव्यासकी कथा ॥

दोहा—करौं व्यास इतिहासको, सहित हुलास प्रकाश।
अनायास भवपाश को, सुनत होतहै नाश ॥ १ ॥

चटथावल नामक इक ग्रामा। तहँ बाग इक अति अभिरामा ॥
संत समाज जोरिकै व्यासा। जाय कियो तेहिं बाग निवासा॥
रहै देवि तहँ अति भयावनी। छागवंश विध्वंसकामिनी ॥
तहँ कोउ छाग कियो बलिदाना।व्यास दयावश अति बिलखाना
शिष्य सहित तेहिं दिवस न खायो।हाय कहत यदुपति कहँध्यायो
व्यासहि देवि भागवत जानी। बोली कत बैठे व्रत ठानी ॥
व्यास कह्यो पीहैं नहिं पानी। यह देवी हत्याकी खानी ॥
देवी कह्यो जो हौ हरिदासा। तौ मोहिं शिष्य करौ हरि त्रासा॥
तब देवीको निकट बोलाई। दीन्ह्यो कृष्ण मंत्र सुखदाई ॥
देवी हिंसा दई विहाई। ताही निशा नगरमहँ जाई ॥
नगर भूपको गहि पर्य्यंका। पटकि दियो भूमहँ विन शंका ॥
बोली व्यास शिष्य ह्वै जाहू। नातो यहि क्षण यमपुर जाहू ॥

दोहा—तब भूपति पुरजन सहित, आय व्यासके पास।
भये शिष्य हरि मंत्र लै, छूटि गई भव त्रास ॥ २ ॥
एक दिवस इक श्वपचहूं, श्रद्धा सहित सिधारि।
श्रीहरिव्यास निदेश लहि, भयो भक्त सुखकारि॥३॥
ऐसे हैं श्रीव्यासके, चरित अनेकन भांति।
तासु कटै यमयातना, जो वरणै दिन राति ॥ ४ ॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
चतुःपंचाशोऽध्यायः ॥ ५४ ॥

अथ माधवदासकी कथा ॥

दोहा–अब मैं माधवदासको, वरणों शुभ इतिहास ।
संत सेवको जासु यश, जगमें कियो प्रकाश ॥१॥

माधवदास विप्र इक रहेऊ। संत सेव सो धर्महिं गहेऊ॥
भयो गृहस्थी चित्त उदासा। भो तेहिं समय नारिको नासा॥
भवन काज धरि सुतके शीशे। आप गये दर्शन जगदीशे॥
बसे समुद्र तीरमहँ जाई। भोजन पानहु दियो विहाई॥
विन भोजन बीते दिन तीना। तव जगदीश खबरि तेहिं लीना॥
लक्ष्मी हाथ थार पठवायो। माधव निकट रमा पहुँचायो॥
माधवदास प्रसादी जान्यो। भोजन कियो धन्य निज मान्यो॥
लियो थार निज कुटी धराई। भजन करन लागे सुख छाई॥
पंडा खोले जबै किंवारा। मंदिरमें देखे नहिं थारा॥
खोजत खोजत अति दुख छाये। माधवदास आश्रमहि आये॥
देखि थारते कहि कहि चोरा। माधवकोपकरे बरजोरा॥
हने पचीस बेंत तेहि कांधे। बांधे अंध कोठरी धांधे॥

दोहा–मंदिर महँ पूजन हितै, पंडागे भरि चाव ।
तब जगदीश शरीरमें, लखे बेंतके घाव ॥ २ ॥

त्राहि त्राहि तब सकल पुकारे। धरन किये मंदिरके द्वारे॥
स्वप्न माहँ कह रमा निवासा। मोर दास जो माधवदासा॥
ताको जौन बेंत तुम मारा। मैं अपने तनु लियो प्रहारा॥
थार रमा कर मैं पठवायों। तिसरे लंघन ताहि खवायों॥
सकल जाय ताके पद परहू। निज अपराध क्षमापन करहू॥
पंडा दौरि सकल तब आये। माधवदास चरण शिरनाये॥
करन लगे तिनकी सेवकाई। जगत मध्य भइ तासु बड़ाई॥
माघ मास यक दिन सुख बाढ़े। माधवदास द्वार पर ठाढ़े॥

निशा बितायो वदन उचारे । स्वप्ने प्रभु पूजकन हँकारे ॥
यहि क्षण माधवदासहि जाई । देहु वोढ़ाय हमारि रजाई ॥
पंडा तुरतहिं दियो रजाई । शीत भीत तब गई पराई ॥
यहि विधि वसे सुखित सुरमाहीं । रेचक रोग भयो तेहिं काहीं॥

दोहा—बारबार रेचक भये, विकल सिंधुके तीर ।
करन लगे सेवा तहाँ, साधु वेष यदुवीर ॥ ३ ॥

माधवदासहि गहि लैजाहीं । धोवहिं प्रभु तिनके पटकाहीं ॥
माधवदास कछू दिन बीते । भे चैतन्य रोग कछु रीते ॥
जानि लियो प्रभु साधु स्वरूपा । बोल्यो सुनु विकुंठकर भूपा ॥
काहे हानि करहु प्रभुताई । क्यों नहिं दीजै रोग मिटाई ॥
प्रभु कह भाग भोगहै बांकी । ह्वैहौ सुखी भोगि गति ताकी॥
नहिं प्रारब्ध भोग मिटिजाई । जानहु मम संकल्प सदाई ॥
माधवदास भये पुनि नीके । बात परी यह श्रुति सबहीके ॥
माधवदास जोरि कर कर में । मांगनलगे भीख घर घरमें ॥
कृपिणि रहै इक पुरमहँ बाई । मांग्यो भीख द्वार तेहिं जाई ॥
सो पोतना लै ताकहँ मार्‌यो । माधव पोतना निज शिर धार्‌यो
पोतना सिंधु सलिल महँ धोई । रचि बाती ताकरि बहुतोई ॥
दियो दीप मंदिरमहँ जाई । तासु प्रभाव शुद्ध भई बाई ॥

दोहा—माधवदास प्रभात चलि, माँग्यो बाई पास ।
दौरि गह्यो बाई चरण,मानि मानसी त्रास ॥ ४ ॥

माधवदास दियो उपदेशा । संतन सेवन लगी हमेशा ॥
एक समय पंडित इक आयो । विद्याको घमंड अति छायो ॥
विद्याबल जीत्यो सो काशी । गयो पुरीको विजय हुलासी ॥
तहाँ सकल पंडितन बोलायो । शास्त्रार्थ रोप्यो चित चायो ॥
तब सब पंडित गिरा उचारी । माधवदास जाय जोहारी ॥

तब सब सहजहि महँ हम हारे। पंडित माधवदास हँकारे॥
माधवदास न कियो विवादा। लिख्यो हारि अपनी अविषादा
तीन पत्र पंडितन देखायो।माधव विजय तहाँ कढ़ि आयो॥
पंडित कहे कहहु कस वानी। हार आपनी नहिं पहिचानी॥
सो पंडित जब पत्र निहारयो।लिख्यो विप्रमाधवसो हारयो॥
तब पंडित गो माधव नेरे। कहत भयो अक्षर करफेरे॥
लिखौ विजय नतु करौ विवादा। माधव हारिलिख्यो अविषादा॥

दोहा—पुनि पंडितसों आयकै, दरशायो सो पत्र।
लिखी रहै माधव विजय, हारि लिखी रह जत्र॥ ५॥

सकल पुरीके पंडित गाये। लाज न लागति हारि लिखाये॥
पुनि प्रकोपि पंडित तहँ धायो। माधवदासहि वचन सुनायो॥
चेटक करै चेटकी पूरो। तुव चेटक देहौं करि धूरो॥
करहु आजु मम संग विवादा। ताकी होय यही मरयादा॥
जो हारै तेहिं खरे चढ़ाई। जूती बाँधि देहु निकराई॥
माधव कह्यो रहहु यहि ठाऊं। वादहोय मज्जन करि आऊं॥
अस कहि भागे माधवदासा। तहँ तेहिवपुधरि रमानिवासा॥
कियो वाद पंडितसों आई। क्षणमहँ दीन्ह्यो ताहि हराई॥
खर चढ़ाय बांधे श्रुति जूती। कढ़ी सकल विद्याकरतूती॥
दियो पुरीते ताहि निकासी। भे अदृश्य नीलाद्रि निवासी॥
माधव आय सुन्यो यह हाला। विप्रहि दुख गुणि भयेविहाला॥
वसत पुरी बीत्यो कछु काला।उरमहँ भइ अभिलाष विशाला॥

दोहा—वृंदावन महँ आयकै, देखे यदुपति रास।
माँगि विदा जगदीशते, गमने माधवदास॥ ६॥

रहै ग्राम इक मारगमाहीं। कृष्णभक्त तिय वसै तहाँहीं॥
सो माधवको अति सत्कारा। विविध भाँतिको दियो अहारा॥

भोग लगायो माधवदासा। राम लषण वपु तहाँ प्रकासा॥
तब बाई बोली अनखाई। लाये काके पुत्र भोराई॥
अस सुकुमार चरण जलजाता। इनबिन किमि जीहै इन माता॥
माधव दृग तब बह्यो प्रवाहू। धनि तू लखे अवध नरनाहू॥
प्रभु तहँते पुनि चले सुखारी। रहै वणिक इक गाउँ मँझारी॥
सो प्रथमही माँगि अस राखा। आवहु मम घर यह अभिलाखा
तासु भवन गे माधवदासा। सो दिय अपने भवन निवासा॥
वणिक कियो अतिशय सत्कारा। प्रेम पुलक प्रगटी जलधारा॥
प्रथमहि कोउ महंत तहँ आये। तिन्हैं अटारी मध्य टिकाये॥
सो महंत अति गर्वहिं छायो। दर्शन हित तहँ उतरि न आयो॥

दोहा—यदपि महंतहि वणिक तिय, कह्यो देहु इत वास।
तदपि महंत घमंडवश, दियो न थल निज पास॥७॥

माधव जब हरिभोग लगाई। वृंदावनहिं चले हर्षाई॥
तब महंत आँधर ह्वै गयऊ। माधवदास शिष्य सो भयऊ॥
वणिकहुँको दीन्ह्यो पुनि ज्ञाना। किये दोउ वैकुंठ पयाना॥
जब वृंदावन माधव आये। करि यात्रा सब तीर्थ नहाये॥
वृंदावन इक रहै गोसांई। क्षेम नाम करते कृपिणाई॥
आपहिं सब भोजन करिलेहीं। भिक्षुक नाम केंवारहिं देहीं॥
तासु द्वारगे माधवदासा। पौढ़ि रहे सहि भूंख पियासा॥
जब घर क्षेम गोसांई आये। तुरत ओसारीते निकराये॥
माधव कह्यो राति भर रैहौं। भोर अनत उठिकै चलि जैहौं॥
कह्यो गोसांई तबै रिसाई। पीछे महामकर फैलाई॥
ताते अबहीं देहु निकारी। यह माँगिहै अन्न अरु वारी॥
माधव कह्यो माँगिहों नाहीं। सूधे करिहौं शयन इहाँहीं॥

दोहा–जाय गोसांइ भवनमें, दूध पुवाको खाय।
माधवदासहि देतभो, बासी भात पठाय ॥ ८ ॥
माधव कह्यो मँगाव उज्यारी। लखिकै कृमि तब होहुँ अहारी॥
लायो तुरतहिं दीप गोसाईं। भात लख्यो कीराकी नाईं ॥
तब जकि पूंछेहु नामहुँ धामा। माधवदास कह्यो निज नामा ॥
त्राहि त्राहिकै चरण परयो तब। निज अपराध क्षमा कराय सब॥
लै चरणोदक किय सत्कारा। भयो शिष्य भो ज्ञान अपारा॥
माधवदास अनंदहि पाये। श्रीजगदीश पुरी कहँ आये ॥
रहैं मातु सुत गांव मँझारी। मातु दरश लालस भइ भारी ॥
लुके पछीत भवनमहँ जाईं। कोउ जन कह्यो मातुपहँ आईं॥
तेरो नंदन माधवदासा। आवत अब आपने अवासा ॥
मातुकह्यो तापर अनखाई। हैन कपूत पूत मम भाई ॥
त्यागि भवन किमि भवन सिधैहै। बवन कियो जो सो किमि खैहै॥
माधव सुनत मातुकी बाता। तुरत चले गुणि लाज अघाता॥
दोहा–फेरि पुरीमहँ आयकै, तजि जिय मारग शीश।
भये रूप जगदीशके, बसे संग जगदीश ॥ ९ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडे उत्तरार्द्धे
पंचपंचाशोध्यायः ॥ ५५ ॥

अथ व्यासदासकी कथा ॥

दोहा–प्रथम कह्यो हरि व्यासको, अति सुंदर इतिहास।
व्यासदासको अब कहौं, चरित विचित्र विलास ॥१॥
व्यास अवास कुटुम्ब विहाई। वृंदावन आये हरषाई ॥
जो कोउ कहै जान व्रत छोडी। ताहि कहै मति तोरि निगोडी॥
भये रासमंडल अधिकारी। ह्वैगे युगलकिशोर पुजारी ॥

पन्नामें जे युगल किशोरा । पूजै तिन्हैं व्यास उठि भोरा ॥
लगे पाग बांधन इक बारा । बनै न पाग खसै बहुबारा ॥
कह्यो खीझि तब बांधौ तुमहीं । अस कहि गवने आप अनतहीं॥
बहुरि लखे बांधे प्रभु पागा । परे चरणमहँ भरि अनुरागा ॥
यक दिन कियो निमंत्रण संतन। आपहु बैठे पंगति सुख मन ॥
परस्यो गोरस तिनकी नारी । साढ़ी परस्यो पतिहिं निकारी॥
संतन भेद करत गुणि व्यासा ।तिय त्याग्यो तजि शोक हुलासा॥
तिय हित विनय संत सब कीन्हें। ऐसो तब करारकरि दीन्हें ॥
भूषण बेंचि जो संत खवावै । तौ मेरे घर आवन पावै ॥

दोहा–तब निज भूषण बेंचिकै, नारी अति हरषाय ।
संत समाज बोलायकै, सादर दियो खवाय ॥ २ ॥

एक समय निज सुता विवाहू । पुत्र कियो घर महा उछाहू ॥
धरि विवाहकी साजु अपारा । दियो बंदकरि भवन केंवारा ॥
गये पुत्र कहुँ कारज हेतू । दियो खोलि तब बंद निकेतू ॥
साजु ऐंचि सब साधु खवायो । फेरि कोठरी बंद करायो ॥
समय विवाह जानि सुत आये । बंद कोठरी जाय खुलाये ॥
मिली साजु जैसीकी तैसी । पुत्रन कह्यो बात भइ कैसी ॥
एक समय रचि सुवरण वंशी । युगलकिशोरहिं दिय दुख ध्वंशी॥
रहै न करमें छटि छटि परई । व्यास कह्यो कत कर नहिं धरई॥
वंशी पटकि चरण महँ व्यासा। कढ़ि आये करि कोप प्रकासा ॥
बहुरि लखे मुरली करमाहीं । परे चरण तल सजल तहाँहीं ॥
यक दिन एक जातिको आयो। तेहिं भोजन हित घर बैठायो ॥
चर्मपात्र सो तुरत निकासा ।मांग्यो जल अतिशयभरि प्यासा॥

दोहा–जल दै पुनि तेहिं पातरी,दिय पावँरी फेंकाय ॥
सोखीझ्यो जब तब कह्यो,चामनका यह आय ॥ ३ ॥

व्यास संगते प्रगट्यो ज्ञाना । सो द्विज भो भागवत प्रधाना ॥
यक दिन साधु बहुत घर आये। सादर तिनको व्यासटिकाये ॥
जानलगे तब बोले व्यासा ।ब्रजतजि करंहु अनत कत वासा॥
साधु कहे रहिहैं हम नाहीं । हमरे राम अनत अब जाहीं ॥
रमे राम ब्रजमहँ कह व्यासा । तदपि साधु नहिं टिके अवासा॥
तब तिनके ठाकुर लैलीन्ह्यो । सम्पुट महँ विहंग धरिदीन्ह्यो ॥
बहुरि व्यास कह साधुन काहीं। उड़ि ऐहैं ठाकुर ब्रजमाहीं ॥
साधु जाय कछु दूरि नहायो ।खोलत सम्पुट खग उड़ि आयो॥
मुरके साधु मानि विश्वासा । अचल कियो तुलसीवन वासा॥
इक दिन व्यास करत रह ध्याना।रच्यो भावना रास महाना ॥
नृत्य करत वृषभानु कुमारी ।लिय गति क्षण क्षण प्रभापसारी॥
नूपुर घुँघुरू टूटिगयो जब । व्यास जनेउ तूरि बांध्यो तब ॥

दोहा—सोइ प्रत्यक्ष राधाचरण,बँध्यो जनेऊ ताग ॥
देखतभे ब्रजलोग सब,गुणे व्यास बड़भाग ॥ ४ ॥

साधू लेन परीक्षाआयो । भोजन हेतु द्वार गोहरायो ॥
व्यास कह्यो विन भोग लगाई । कौन भांति तोहिं देहिं खवाई॥
साधू देन लग्यो तब गारी । तबहिं व्यास दिय भोजन थारी॥
साधु खाय कछु व्यासहि शीशा। फेंक्यो जूंठ कह्यो तुव हींसा ॥
सो जूंठन लै व्यासहु पायो । बार बार संतन शिरनायो ॥
साधु कह्यो तब भरे हुलासा । सत्य व्यास तैं संतन दासा ॥
गयो साधु सुमिरत जगदीशा । व्यास करन लागे सुत हींसा ॥
एक ओर धरि हरि सेवकाई । एक ओर छापा पधराई॥
एक ओर धरि धन अरु वासा । कह्यो लेइ जो जाकरि आसा ॥
यक धन लियो द्वितिय हरि सेवा। तीजो लिय छापा गुणि देवा ॥
युगलकिशोर लियो सेवकाई । सो हरिदास शिष्य है आई ॥

विचऱ्यो ब्रजमंडल बड़भागी । नाम किशोर नाम अनुरागी ॥
दोहा-द्वैसुतनिर्द्धन देखिके, मातु कह्यो अनखाय ॥
भये पुत्र द्वै रंक मम,कीन्ह्यो कंत अजाय ॥ ५ ॥
नारीकी लखि विषम गति, व्यास कोप अति छाय ॥
गायो संत समाजमें,ये पद तीनि बनाय ॥ ६ ॥
भजन-तिरिया जो न होय हरिदासी ॥
तौ दासी गणिका सम जानो दुष्ट रांड़ मसवासी ॥
निशिदिन अँखनो अंजन मंजन करतविषयकी रासी॥
परमारथ कबहूंनहिं जानत आन बँधी जन फांसी ॥
साकत नारि जो घरमें राखत निश्चय नरक निवासी ॥
रामभक्त कबहूं नहिं आवत गुरुगोविंद न मिलासी॥
कहाभयो जो रूपवती पै नाहिन श्याम उपासी ॥
व्यासदास यह संगति तजियो मिटै जगतकी हांसी १॥
ऐसो हरि कब करिहौ मन मेरो ॥
करकरवा हरवा गुंजनके,कुंजन मांझ बसेरो ॥
भूख लगै तब मांगि खाउँगो, गनौं न सांझ सवेरो ॥
व्यास विवेकी श्रीवृंदावन,हरिभक्तनको चेरो ॥ २ ॥
हम कब होहिंगे ब्रजवासी ॥
ठाकुर नंदकिशोर हमारे,ठकुरायनि राधासी ॥
सखी सहेली नीकी मिलिहैं हरिवंशी हरिदासी ॥
इतनी आश व्यासकी पुजवो,वृंदाविपिन विलासी ॥
दोहा-यहि विधि विचरत प्रेम भरि, व्यासलखत हरिदास॥
प्राकृत तनु तजिलहतगो, वृंदाविपिन विलास ॥
इति श्रीभक्तमाला रामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेषट्पंचाशोऽध्यायः ॥ ५६ ॥

अथ मुरारिदासकी कथा

दोहा—वरणौंदास मुरारिको, अति विचित्र इतिहास ।
किया साधु सेवन सकुल, तन मन धन अनयास॥१॥

हरितेअधिक संत कहँ मान्यो । कृष्ण प्रेमरस मति गतिसान्यो॥
कीन्ह्यो यक गजको उपदेशा । सो तरिगयो न रह्यो कलेशा॥
मटका भरे संत पदवारी । पूजन होय ताहिको भारी ॥
जुरे जौन दिन संत समाजा । सो दैदै करते कृतकाजा ॥
एक समय गुरु उत्सव रहेऊ । दासमुरारि शिष्य सों कहेऊ ॥
सब संतन चरणोदक लावहु । संत मंडलीमें परुसावहु ॥
तौन शिष्य चरणोदक लायो । सब साधुनको बांटि पियायो ॥
साधु कह्यो जस पूरुव स्वादू । आजु न तस यह हरै विषादू ॥
सोइ साधुको कह्यो बोलाई । कैसो चरणोदक दिय लाई ॥
कह्यो साधु सबको मैं लायों । खता चरण लखि एक बचायों॥
कह्यो मुरारिदास सोउ लावहु । सो लै आय कह्यो यह पावहु॥
सो जल पाय स्वाद सब भाखे । ऐसो भाव संतमहँ राखे ॥

दोहा—साधु खवावत साधु यक, कह सुनुदास मुरारि ॥
मम सोंटाको पातरी,दे बड़ साधु विचारि ॥ २ ॥

कह्यो मुरारिदास यह कैसो । सोंटा भोजनकारी ऐसो ॥
यह सुनि साधु दियो बहुगारी । निज पतरी मुरारि शिर डारी॥
कह्यो मुरारि प्रसादी पायो । मोपै तुम अति कृपा जनायो॥
साधु परयो मुरारि पद आई । निज अपराधहि लियो क्षमाई॥
आई यक दिन साधु समाजा । बसे बागमहँ भोजन काजा ॥
पठयो खबरिहेतु यक संता । दौरे दासमुरारि तुरंता ॥
हुक्का लेत रहैं सब साधू । धरयो चोराय विभीत अगाधू॥
दासमुरारि खबरि यह पाई । मम डर हुक्का धरयो चोराई ॥

तब जन साधु समीप पठायो। हुक्का दासमुरारि मँगायो॥
हुक्का लेब मुरारिहि सुनिकै। लागे लेन साधु भय धुनिकै॥
संतनके विश्वासक हेतू। कछुकलियोआपहुँमति सेतू॥
दास मुरारि शिष्य यक राजा। गावँ चढ़ायो संतन काजा॥
दोहा–छूट्यो जब नरनाह तनु, तासु पुत्र मतिहीन।
लीन्ह्यो गावँ छोड़ाइ सो, संत हेतु जो दीन॥
श्यामानंद शिष्य अस नाऊं। लिये बोलाय रहै जो गाऊं॥
आयसु सुनत मुरारिदास को। गयो शिष्य द्रुत गुरू पासको॥
चले भूप ढिग दासमुरारी। मिल्यो सिचिवपथ गिराउचारी॥
प्रभु मति जाहु भूप मति हीना। करिहैं अनरथ विषय अधीना॥
दासमुरारि कही तब वानी। साचिव तजहु उर भीतिमहानी॥
आजु महीप समीप सिधैहैं। कुमति खंडि ताको सुधरैहैं॥
अस कहि भूप समीप सिधारे। नृपति सुन्यो गुरु आवत द्वारे॥
तब यक मत्त मतंग छोड़ायो। दास मुरारि ओर सो धायो॥
तजि पालकी परान कहारे। भगे शिष्य सब गज भय भारे॥
तजि सिविका तब दासमुरारी। गज सन्मुख चलि गिराउचारी॥
तजि दुर्बुद्धि शुद्ध तनु कीजै। अब अपनो सुधारि सब लीजै॥
सुनत गयंद बैठि सो गयऊ। दास गोपाल नाम तेहिं दयऊ॥
दोहा–दियो मालपहिराय गल, दियो तिलक पुनि भाल।
गजको संग लेवायकै, आये भवन भुवाल॥ ४॥
भूप चरण परि गाउँ सो, अरु द्वै तीनि मिलाय।
दीन्ह्यो दास मुरारिको, निज अपराध क्षमाय॥ ५॥
शिष्य कुटुंब समेत ह्वै, कियो संत सेवकाय।
प्रियादासको कवित यह, तामें सुनहु सोहाय॥ ६॥
प्रियादासको कवित्त–कानमें सुनायो नाम नाम दै गोपाल

दास, माल पहिराय गल्यो प्रगट्यो प्रभाव है ॥ दुष्ट शिरमौर भूप लखि उठि ठौर आयो, पावँ लपटायो भयो हिये अति चाव है ॥ निपट अधीन गावँ केतक नवीन दये, लिये कर जोर मेरो फरचो भागदाव है ॥ भयो गजराज भक्तराज साधु सेवा साजि, संतन समाज देखि करत प्रणाम है ॥ १ ॥

दोहा—तबते नाग सदा रहै, संगहि दास मुरार।
भोजन हित सब साधुके, लावै अन्न बजार ॥ ७ ॥
जौन गावँ डेरो करै, चलिकै दास मुरारि।
लावै साजु न देय जो, देतो गावँ उजारि ॥ ८ ॥
बादशाह सुनि खबरि यह, करत उजारि गयंद।
पकरन हित पठयो जनन, परचो गजनसों फंद ॥९॥
कोउ कह माला तिलक लखि, नाहिं भागत गजराज।
तिलक भाल उरमाल धरि, गे जन पकरन काज॥१०॥
खड़ो रह्यो गज नाहिं भग्यो, पकरयो बेड़ी डारि।
खायोनाहिं हरिभोग बिन, परिगे लंघन चारि ॥११॥
जल प्यावन हित सुरसरी, लैगे जब गजपाल।
तब गंगा हिलि तनु तज्यो, गयो जहां नँदलाल१२॥
ऐसे दास मुरारिके, जानहु चरित अनेक।
मैं वरणों केहि भांति ते, मुखमें रसना एक ॥ १३ ॥

इति भक्तमालश्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे सप्तपंचाशोध्यायः ॥ ५७ ॥

अथ हरिवंशकी कथा ॥

दोहा—सकल संत अवतंश जो, हित हरिवंश सुहंस।
अब विध्वंश चरित्र तेहिं, मैं अब करौं प्रशंस ॥ १ ॥

प्रमाण ॥

वंदे श्रीहरिवंशाख्यं हित पूर्वसतांहितम् ॥
वक्ष्येसुरूपिणंसाक्षात्परमानन्दरूपिणम् ॥
संप्रदायमहादिव्ये राधावल्लभसंज्ञिके ॥
प्रकाशयतियोलोकान्सूर्यवृत्तमहंभजे ॥
एतानिपुराणप्रमाणानिज्ञेयानि इति ॥ १ ॥

तुलसी वनके भये निवासी । सेवा कुंजहि करी खवासी ॥
सर्वस मान्यो महाप्रसादा । गही भक्तभावक मरयादा ॥
हित हरिवंश रहनिकी रीती । सो जानै जेहि प्रेम प्रतीती ॥
वृंदावनमें बढ़्यो प्रभाऊ । प्रेम करत नाहिं भयो अघाऊ ॥
रह्यो एक द्विज कौनेहुँ देशा । स्वप्न माहिं तेहिं कह्यो रमेशा ॥
द्वै दुहिता तेरी छविवारी । व्याहहु हित हरिवंश सुखारी ॥
सुनि सो द्विज कन्या लै आयो । हित हरिवंशहि वचन सुनायो
स्वप्नेहरि शासन मोहिं कीन्हो। कन्या तुमहिं चहौं अब दीन्हो॥
हित हरिवंश मानि हरिदासा । कन्या ग्रहण कियो न हुलासा ॥
मत अपनो हरिवंश चलायो । वृंदावनके तीर्थ बतायो ॥
ह्वैगे आप रास अधिकारी । विलसे सेवा कुंज मँझारी ॥
सखी रूप दरशन नित पावैं । अबलौं तासु सुयश कवि गावैं ॥

दोहा—हित हरिवंश चरित्र बहु, लिखे अनेकन ग्रंथ ।
तातें मैं इत लघु लिख्यो, चलत आज लौं पंथ ॥२॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
अष्टपंचाशोऽध्यायः ॥ ५८ ॥

अथ हरिदासकी कथा ॥

दोहा—अब भाषों हरिदासको, यह पावन इतिहास ।
हिय हुलास बाढ़त सुनत, प्रगटत पाप प्रनाश ॥ १ ॥

श्रीहरिनाम दास हरिदासा । बालहिंते त्याग्यो जग आसा ॥
गान तान तिमि वाद विधाना । करि कीन्ह्यो निज वश भगवाना॥
राधा कृष्ण नामको नेमा । वृंदावन विलसै भरि प्रेमा ॥
मर्कट मूस मयूर मराला । दै भोजन तोष्यो सब काला ॥
राजा लोग दरशको आवैं । खड़ेद्वार नहिं तिनहिं बोलावैं॥
करै न सरि गंधर्व गानमें । सुर सप्तक त्रय लेत तानमें ॥
रसिक शिरोमणि जगत विख्याती। भावक निरत रास दिन राती॥
तजो विषय जग मीठी खट्टी । वृंदावन स्थान सुटट्टी ॥
अतर अमल बहु मोल बनायो । कोउ हरिदास निकट लै आयो॥
करत रहैं मंदिरमहँ पूजन । अतर लेहु कह आय कोऊ जन॥
हरिपूजन तजि कढ़े न स्वामी । गोहरायो बहु बेचन कामी ॥
तब दहिनो कर दियो निकारी। लै सीसी धूरे महँ डारी ॥

दोहा–गंधी गिर रोवन लग्यो, मैं लायों हरिहेत ।
आप फेंकि दीन्ह्यो अनत, दाम कौन अब देत॥ २ ॥

तब हरिदास कहे पुनि वानी । अतर जो तुम हरिहित दियआनी
सो हम हरिको दियो चढ़ाई । अस कहि दीन्ह्यो दाम देवाई ॥
गंधीगिर हिय भ्रम नहिं गयऊ । पुनि मंदिर महँ आवत भयऊ॥
सोई अतर सुगंध झकोरा । निकसै मंदिरते चहुँ ओरा ॥
गंधीगिर तब जानि प्रभाऊ । गहत भयो हरिदासहि पाऊ ॥
कछु दिनमें साधू गिरनाली । लै आयो पारस दुखशाली ॥
लियो मंत्र पारसहिं चढ़ायो । तब हरिदास ताहि अस गायो॥
प्रियायोग पारसहि विचारी । दे यमुनादहार मधि डारी ॥
सो फेंक्यो पारस यमुनामें । विस्मय हर्ष कियो नहिं तामें॥
यक दिन करत तहां हरिदासा । करी भावना भरे हुलासा ॥
रास करत पीतम अरु प्यारी । करहिं आपहू गान सुखारी ॥

प्यारी नृत्य करत सुख लूट्यो। चरण कमलको नूपुर टूट्यो ॥
दोहा—तब हरिदास हुलास भरि, तुरत जनेऊ टोरि ॥
निज कर बांध्यो नूपुरनि,दिय पहिराय बहोरि ॥ ३ ॥
इत तनुमें टुटिगयो जनेऊ। जके लोग लखि गुने न भेऊ ॥
उत मंदिर राधिका पगनमें। नूपुर बँध्यो जनेउ तगनमें ॥
अस हरिदास चरित्र प्रभाऊ। प्रगट्यो जग थल बच्यो नकाऊ॥
दिल्लीपति जो अकबर शाहा। तानसेन गायक नरनाहा ॥
शाह सभा महँ भयो विवादा। गायक कहे गान मरयादा ॥
बड़ेबड़े गायक सब गाये। तानसेन सों विजय न पाये ॥
यक बैजूबावरा सु गायक। गान शास्त्र गंधर्वहि नायक ॥
गानग्रंथ शत शकट भराई। विजयहेतु दिल्लीकहँ आई ॥
सब गायकनिज निकट हँकारचो। तानसेन सों द्रोह पसारचो॥
तानसेनसों जे सब हारे। ते गायक अस वचन उचारे ॥
जो बैजूबावरै हरावै। तानसेन तौ जग यश पावै ॥
शाह सभा गायकन बोलायो। तहँ बैजूबावरा सिधायो ॥
दोहा—सुनियै बैजूबावरा, शाह कह्यो अस वैन।
तानसेनको जीतिये, करिकै गान सचैन ॥ ४ ॥
तब बैजूबावरा हुलासा। करिकै अंगन्यास कर न्यासा॥
करि आवाहन रागन केरो। मूर्ति मान करि राग निवेरो ॥
कियो अरंभ राग शारंगा। आये मोहि विपिन शारंगा ॥
तानसेन तब वचन वखाना। हमरो इनको यही प्रमाना ॥
दोहिं मजीरामोर उखारी। सदा पराजय होय हमारी ॥
अस कहि तानसेन कियगाना। भयो द्रवित जेहिं बैठ पषाना ॥
छोंड़िदियो अपनो मंजीरा । बूड़िगये मनु जल गम्भीरा ॥
तानसेन पुनि लियो न ताना। तब जबको तस भयो पषाना ॥

पुनि बैजूबावर बहु गायो। पै न पषाण द्रवित ह्वै आयो ॥
तानसेनकी विजय भई जब। अकबरशाह सराहि कह्यो तब॥
तानसेन तुव सम को होई । परै मोहिं गायक नहिं जोई ॥
तानसेन बोल्यो कर जोरी। शाह सुनौ विनती सति मोरी॥

दोहा—गानशास्त्र मर्याद विद, मम स्वामी हरिदास।
तिनसों मैं कणिका लही, सो इत करों प्रकाश ॥ ८ ॥

शाह कह्यो किमि दरशन पैहैं। तानसेन कह इत नहिं ऐहैं ॥
मेरे संग चलौ जो शाहा। तौ पूजै तुव दरश उछाहा ॥
तानसेन सँग अकबर शाहा। चल्यो दरश हरिदास उमाहा॥
गे हरिदास पास जब दोई। शाह तमूरा लिय शिर ढोई ॥
बैठ्यो तानसेन करि वंदन। भाष्यो तब हरिदास अनंदन॥
गावहु तानसेन शुभ गाना। गायो तानसेन लै ताना ॥
दियो जानिकै कछू बिगारी। खूटि हियो हरिदास विचारी॥
तानसेन कह मोहिं न आवै। नाथ कृपाकरि सकल बतावै ॥
तब लैकर हरिदास तमूरा। गान करन लागे सुर पूरा ॥
श्रीहरिदास गान सुनि शाहू। लौटि गयो मढ़ि महा उछाहू॥
ये कोहैं पूंछ्यो हरिदासा। तानसेन तब सकल प्रकाशा ॥
शाह कह्यो प्रभुसों कर जोरी। सेवाकी अभिलाषा मोरी ॥

दोहा—बिहँसि कह्यो हरिदास तब, चीरघाट कछु फूट।
ताको तू बनवाय दे, जो संपति कछु जूट ॥ ९ ॥

सहजहिं मानि शाह मुसुकाई। कह्यो नाथ मोहिं देहु बताई ॥
तब हरिदास चले लै संगा। चीरघाट आये रति रंगा ॥
नेसुक खोदि धरणि बतरायो। मणिको सिगरो घाट देखायो॥
ताको एक कोन कछु फूटो। शक्र धनद धन अजहुँ न जूटो॥
शाह चकित लखि परचो चरणमें।कह्यो शक्ति नहिं घाट करनमें

मम सम्पतिहै केतिक बाता । त्रिभुवन धन नहिं रचन देखाता॥
मम लायक कछु शासन दीजे । दिल्ली गवनहुँ कृपा करीजे ॥
तब हरिदास कह्यो मुसुकाई । दे मर्कटन चना लगवाई ॥
चालिस मन दिय चना लगाई । पुनि हरिदास कह्यो हरषाई ॥
चलि हैं दिल्ली यक दिन काहीं । शुद्ध बुद्ध तैं शाह सदाहीं ॥
अबलों चना लगे ब्रज माहीं । होत शाह ते देते जाहीं ॥
काढ्यो यक साहेब यहि काला ।तापर किय कपि कोप कराला॥

दोहा—मारगमें गजमें चढ़ो, जात चलो अँगरेज ।
काली‌दह बोरचो सगज, लिय कपि चना अवेज॥७॥

दिल्लीको गवने हरिदासा । कियो शाह सत्कारहुँ खासा॥
सभा मध्य बैठे जब जाई । यक पातुरी मानि हित आई ॥
अति सुंदरि कोमल सब अंगा । मनहुँ रही रतिके नित संगा॥
तासु गान अरु रूप निहारी । स्वामि शाह सों गिरा उचारी॥
शाह प्रसन्न जो हम पर होहू । यह पातुरी देहु करि छोहू ॥
शाह पातुरी सँग करि दीन्ह्यो ।पदरज धारि विदा पुनि कीन्ह्यो॥
लै पातुरी चले हरिदासा । जब आये आपने अवासा ॥
मंदिरमें चलि कह्यो हवाला । लाये कछु तेरे हित लाला ॥
सांझ समय पातुरी बोलायो । हरि सन्मुख तेहिं नाच करायो॥
लखि गणिका नँदनंदन रूपा । उपज्यो हिय अनुराग अनूपा॥
चकि तनु चितवति सों चहुँ ओरा।यह ब्रज छैल छली चित चोरा
हरि सन्मुख सो भाव बतावै । प्रभु मूरति तजि कछु न देखावै॥

दोहा—भाव बतावत वारतिय, गवनी मंदिर द्वार ।
चौकठमें सो पाणि धरि, खरी अचल बहुवार॥ ८ ॥
बीत्यो पहर प्रयंत जब, टरयो न चौकठ पाणि ।
तबै पुजेरी आयकै, कही प्रकोपित वाणि ॥ ९ ॥

रे यमनी टरु द्वारते, भवन अशुच करिदीन ॥
अस कहि गहि गणिका करन, चह्यौ बाहिरे कीन १०
कर्षत कर महिपर गिरी, गयो सुखाय शरीर।
मनहुँ मरी यक वर्षकी, भयो तासु तनु जीर ॥११॥
पूजक अचरज मानि मन, गो हरिदासहिं पास।
मंदिरको वृत्तांत तब, कीन्ह्यो सकल प्रकाश ॥१२॥
(दिल्लीते यक पातुरी, लै आये प्रभु जोय।
निरखत नव नँदलाल छवि, दीन्ह्यो तनु तजि सोय॥)
पूजकके ऐसे वचन, सुनि विहँसत हरिदास।
मंदिरमें चलिकै कह्यो, कुंजविहारी पास ॥ १३ ॥

कवित्त—मांगि अकब्बर शाह सों सुंदरि, तेरिय योग मैं ताहि विचारी। ल्यायो लला ललनाको इतै,लखिकै तू क्षणोंभर धीर न धारी॥ श्रीरघुराज बोलाय लई, रुचि सों कियो रासनकी अधिकारी। नंदबबाको चलांको सदाको, बड़ोईटवाको तु बांकोविहारी ॥ १ ॥

दोहा—ऐसे श्रीहरिदासके, चरित अनेकन भांति।
जो सिगरो वर्णन करै, तौ बीतै बहु राति ॥ १४ ॥

यक दिन कोउ यक साहु पतोहू। आई गवन सासुकर छोहू ॥
हरिदरशन करवावन हेतू। आई सासु पतोहु समेतू ॥
दरशायो प्रथमैं हरिदासै। पुनि लैगई गोविंदहि पासै ॥
करि दर्शन परदक्षिण देती। पुत्रवधू अपने सँग लेती ॥
साहु पतोहु फिरी जस जैसी। हरिमूरति फिरिगै तस तैसी ॥
अबलौं सो वृंदावन माहीं। फिरी मूर्ति लखिपरै सदाहीं ॥
सो हरिदास दरश परभाऊ। और हेतु जानहु नाहिं काऊ ॥
यह चरित्र तहँ देखि पुजारी। ल्यायो द्रुत हरिदास हँकारी ॥

लखि हरिदास नाथ चपलाई। कछु नहिं कह्यो मंद मुसकाई॥
पूजक सासुहिं कह करि कोहू। कस ल्याई आपनी पतोहू॥
लखिकै पुत्रवधू यह तेरी। तक्यो नाथ निज नयनन फेरी॥
लैजा पुत्रवधू घर अपने। लैयो नाहिं मंदिरमहँ सपने॥

दोहा—पूजकको परबोधिकै, पुत्रवधू उर लाय।
सासु सकोपित वचन अस, बोली ताहि सुनाय॥१८॥

कवित्त—भोरहिं मैं इतै आई हुती, उठि भोरई ऐसी प्रतीति भईना। वासर बीते कितेक इतै, पै कछू यहिकी यह रीति नईना॥ श्रीरघुराज जो जानती यों, तोहिं ल्यावती केहू कलेश बईना। भौनको भाजि चलैरी भटू, अबलौं दइमारेकी बानि गईना॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेनवपंचाशोध्यायः॥ ५९॥

अथ तुलसीदासजीकी कथा॥

सोरठा—वंदौं सीताराम, विमल चारु पद कमल युग।
जेहिं प्रभाव त्रयधाम, पूरित तुलसीके चरित॥१॥
जगत भयो नहिं कोय, गोस्वामी तुलसी सरिस।
दियो अधर्महि खोय, रामायण रचि सुरसरी॥२॥
आदि अंत लगि तासु, तुलसीदास चरित्रको।
रसना करन विकासु, मेरे शक्तिकछूनहीं॥३॥
पै विंशति इतिहास, प्रियादास नाभा कथित।
शतमुख कछुक प्रकाश, तौन रीति वर्णन करौं॥४॥

राजापुर यमुनाके तीरा। तुलसी तहां बसै मतिधीरा॥
पंडित सकल शास्त्र विज्ञाता। विद्यामें विश्वास अघाता॥
भो विवाह आई जब नारी। तासों अतिशय नेह पसारी॥

आयो तियहिं लेवावन भाई । करी न तुलसी तियहिं बिदाई॥
नैहर हित तिरिया बिरझानी । तदपि न कह्यो तासु कछु मानी ॥
आप गये कछु काज बाजरा । तब भाई लै भगिनि सिधारा ॥
आये पुनि तुलसी जब गेहू । विकल भये तिय बिन वश नेहू॥
वर्षन लगो मेह अधराता । बाढ़्यो यमुन प्रवाह अघाता ॥
भै विभावरी भूरि अँधेरी । करहु पसारे परत न हेरी ॥
अर्द्धरात्रि तेहिं काम सतायो । चल्यो ससुर गृह तिय मन लायो
बढ़्यो यमुन कर बड़ो प्रवाहा । पैरि पर्यो नहिं भय उरमाहा॥
अर्द्ध निशा गो ससुर दुवारा । लगेरहैं चहुँओर किंवारा ॥

दोहा—गयो पछीती चढ़न हित, झूलत रहै भुजंग ।
ताहि पकरि ऊपर गयो, रँग्यो कामके रंग ॥ ५ ॥

जाय नारि ढिग दियो जगाई । प्रथमैं रही नारि चौआई ॥
चीन्हि बहुरिशंका अति कीन्ही । गिराबाण सम सो हनि दीन्ही॥
धिक् धिक् धिक् तोहिं प्राणपियारे।चाम हाड़ अति निरत हमारे॥
ऐसो मन जो लागत रामै । तौ सुधरत तिहरे सब कामै ॥
नारि वयन शर सम उर लागे । पूरव सकल पुण्य फल जागे ॥
तुलसिदास कह मानि गलानी । है सति है सति तिय तुव बानी॥
वहुरे तुरत मूककी नांई । गे काशीतजि भवन गोसांई ॥
विनती किय विश्वेश्वर पाहीं । रामभक्ति दीजै मोहिंकाहीं ॥
शूकर क्षेत्र गयो पुनि सोई । गुरू कियो तहँ अति मुद मोई॥
गुरुको अति सेवन तहँ ठायो । रामायण अध्यात्महि पायो ॥
तुलसीदास आय पुनि काशी । भे अनन्य रघुनाथ उपासी ॥
भजन करत बीत्यो बहुकाला । भे प्रसन्न तापर शशिभाला ॥

दोहा—रामायण जहँहोय तहँ, सुनन हेतु नित जाय ।
कथा समापत ह्वैगये, तहां न पुनि ठहराय ॥ ६ ॥

बहिर भूमिहित दूरिहि जाहीं। लिये कमंडलु यक कर माहीं॥
शौच क्रिया कर बचै जो नीरा। वदरीतरु डारै मतिधीरा॥
रहै एक तेहि प्रेत पुराने। अशुचि नीर लहि सो सुख मानै॥
यहिविधि बीतिगयो कछु काला। यक दिन बोल्यो प्रेत कराला॥
तोपर अहौं प्रसन्न गोसाँई। माँगै सब अपनी मनभाई॥
अस सुनि तुलसिदास कह बानी। अहौ कौन तुम परै न जानी॥
सो भाष्यो जानहु मोहिं प्रेता। यहि वदरीतरु मोरनिकेता॥
याहिपर जौन सलिल तुम डारयो। मैं निज सेवा ताहि विचारयो॥
तुलसिदास कह हौ तुम प्रेता। प्रेत कहा मनुजनकहँ देता॥
जानन चहौ जो मम मनकेरी। सौ सुनिये मैं कहौं निवेरी॥
जो रघुवीर दरश मैं पाऊं। जियत प्रयंत तोर यश गाऊं॥
और कछू मेरे नहिं आसा। कह्यो प्रेत तब भरो हुलासा॥

दोहा—रामदरश करवाइबो, मोर जोर कछु नाहिं।
पै सहाय हित कछु कहौं, यह उपाय तुम काहिं॥७॥

जहँ रामायण सुनन सिधारौ। सबके पाछे जाहि निहारौ॥
अति निर्द्धनी दुखी अति दीना। पूरित रोग नयन ते हीना॥
उठे सकल श्रोतनके पाछे। मंद चलत चिरकुट कटिकाछे॥
सो है साँचो पवनकुमारा। तेहिं रामायण सुनब अहारा॥
नेम पवनसुत अस नित धरहीं। श्रवण सदा रामायण करहीं॥
मिलैं तुम्हैं कौनहू उपाई। रामदरशकी करैं सहाई॥
प्रेत वचन सुनि तुलसीदासा। उरमे उमग्यो अमित हुलासा॥
ताहि गुरु गुणि भवन सिधारे। कथा सुनन हित तुरत पधारे॥
कथा सुनत तहँ लख्योप्रवीना। अति कुरूप तनु छाम मलीना॥
दूरी बैठो आंधर ऐसो। तैसो लख्यो प्रेत कह जैसो॥
ह्वैगै कथा समापत जबहीं। श्रोता चले भवन कहँ तबहीं॥

रहे बार कछु बैठ गोसाईं । चल्यो पवनसुत जड़की नाईं॥

दोहा—तुलसिदास एकांत लहि, दौरि गह्यो पद जाय ।
छोडु छोडु मोहिं मति छुवै, सो अस कह्यो सुनाय८॥

तुलसी कह्यो न छूटनपैहौ । लेहौप्राण दरश की देहौ ॥
कियो छोड़ावन विविध उपाई । चपरि गह्यो तुलसी बरियाई ॥
भे प्रसन्न तब पवनकुमारा । माँगु माँगु अस वचन उचारा ॥
तुलसिदास कह रूप देखावहु । मेरे शीश पाणि निज लावहु॥
मेरे और कछू नहिं आशा । होन चहौं रघुपति कर दासा॥
रामदरश मोहिं देहु कराई । तुम समर्थ सब विधि कपिराई॥
तब मारुत निज रूप देखायो । तुलसि दासकहँ वचन सुनायो॥
चित्रकूट कहँ चलहु प्रवीना । पैहौ रामदरश सुख भीना ॥
अस कहि कपि निजरूपदुरायो।तुलसिदास निज आश्रमआयो॥
कछु दिनमें मन महँ असभयऊ। अबै न शिवदरशन ह्वैगयऊ ॥
गयो विश्वेश्वरनाथ मंदिरै । लखन रूप चह चूडचंदिरै ॥
पै नहिं दरशन दियो पुरारी ।तुलसिदास तजि आश सिधारी॥

दोहा—चित्रकूट कहँ चढ़ चल्यो, पुरके बाहर आय ।
मिल्यो एक महिसुर तहाँ,बोल्यो वचन बोलाय॥९॥

काशी छोड़ि अनत मति जाहू । इतते गये न तोर निबाहू ॥
तुलसिदास कह किय सेवकाई । भे प्रसन्न नहिं शम्भु गोसाँई ॥
सो कह सत्य शम्भु मैं अहहूं । काशी छोड़ि अनत नहिं रहहूं॥
अस कहि हर निज रूपदेखायो। तुलसिदास चरणन शिरनायो॥
बहुरि वचन बोल्यो कृति वासा । चित्रकूट चलु तुलसी दासा ॥
कह्यो पवनसुत है सति सोई । रामदरश पैहै मुदमोई ॥
रचिहै रामायण सुख श्रेणी । अधम उधारण यथा त्रिवेणी ॥
तुलसिदास तब भयो निहाला । चल्यो चित्रकूटहिं तेहिं काला॥

शंकर अपनो रूप छिपायो । तुलसी चित्रकूट कहँ आयो ॥
फटिकशिलापर बैठे जाई । राम लखन लालसा बढ़ाई ॥
ताही समय तुरंग सवारे । कढ़े शिकारी द्वै धनु डारे ॥
रपटत मृगन शरन कहँ मारे । हरितवसन सुंदर तनु धारे ॥

दोहा–जानि शिकारी भूप सुत,रामराम कहि वैन ।
तुलसिदास पछितायकै मूंदिलियो दोउ नैन ॥ १० ॥

निकसि गये जब युगलसवारा । आय कह्यो तव पवनकुमारा ॥
प्रभु दरशन पायो कीनाहीं । दोऊ राम लषण ते आहीं ॥
तुलसिदास कह जानि शिकारी । हाय नयन मैं लियो नेवारी ॥
अबै न पूर भई अभिलाषा । जैसी पवनतनय तुम भाषा ॥
तब हनुमान कह्यो असिवानी ।राम घाट चलु कालिह विज्ञानी॥
भोर भये तब तुलसीदासा । रामघाट गो भरो हुलासा ॥
गारन लग्यो न्हाय तहँ चंदन । आयगये दोउ दशरथ नंदन ॥
कहे देहु चंदन मोहिं बाबा । तुलसिदास तब सहजहिगावा ॥
चंदन देहु सरुचि अँग माहीं । राम लषण तुमहौ की नाहीं ॥
बालक कहे साधु जग जेते । राम लषण की मूरति तेते ॥
दै चंदन दोउ बाल सिधारे । पाछे पवनकुमार पधारे ॥
बोले वचन दरश तुम पाये । तुलसिदास यह दोहा गाये ॥

दोहा–चित्रकूटके घाटमें, भइ साधुनकी भीर ।
तुलसिदास प्रभु चंदन गारैं,तिलक करैं रघुवीर॥११॥
बहुरि कह्यो कर जोरिकै, सुनिये पवनकुमार ।
देखौं चारौं बंधुको,सहित राज संभार ॥१२॥

पवनतनयकह कलियुग माहीं । अस दरशन होते कहुँ नाहीं ॥
तुलसिदास कह कृपा तिहारी । मोहिं न अचरज परतनिहारी॥
कह कपीश कामता सिधारी । बैठहु कालिह राम उर धारी ॥

अस काहे कपिअंतर्हित भयऊ। भोर होत तुलसी तहँ गयऊ ॥
बैठ्यो युगल पहर पर्यंता। आयो दरशदेन सिय कंता ॥
धनद दिशा रहि धूँधरि पूरी। भो प्रकाश दश आसहु भूरी ॥
अगणित मत्त मतंग तुरंगा। सोहत विविध भांति रथसंगा॥
बोलत बहु नकीब गण शोरा। आयो कोशल कंतकिशोरा ॥
रथ सवार सँग चारिहु भाई। करत पवनसुत पद सेवकाई ॥
तुलसि दास तब आरति साजा।लख्यो नयन भरि रघुकुल राजा॥
दै परदक्षिण विह्वल भयऊ। रघुपति कर पंकज शिरदयऊ॥
यहिविधिप्रगटदरश तबपायो। औरनको नहिं भेदलखायो ॥

दोहा—यहि विधि तुलसीदास प्रभु,श्रीहनुमान सहाय ॥
रामदरश पायो प्रगट,रह्यो सुयश जग छाय ॥१३॥
राम उपासक अति अमल,नाशक जग जन त्रास ॥
हिये हुलासी वासकिय काशी तुलसीदास ॥ १४ ॥
प्रगट्यो महा महत्व तहँ,जुरै रोज जन भीर ॥
पर्‍यो रहै चरणन नृपति,आवैं बुध मतिधीर ॥ १५ ॥

कछु दिन किय काशी महँ वासा। गये अवधपुर तुलसीदासा ॥
तहँ अनेक कीन्ह्यो सत्संगा। निशिदिन रँगे राम रति रंगा ॥
सुखद रामनौमी जब आई। चैत मास अति आनँदपाई ॥
संवतसोरहसै यकतीशा। सादर सुमिरि भानुकुल ईशा ॥
वासर भौम सुचित चित चायन। किय अरंभ तुलसी रामायन ॥
बालकांड तहँ पूरण करिकै। आये पुनि काशी सुख भरिकै॥
विनय आदि गीतावलि ग्रंथा। रचे रुचिर सूचक सतपंथा ॥
वाराणसी बस्यो सुख छायो। एक प्रबल पंडित तब आयो ॥
काशी जीतनको मन कीये। बजवावत दुंदुभी प्रवीने ॥
काशिराज नित सभा बोलायो। सब पंडितन समाज करायो ॥

तब जो काशी जीतन आयो । सो पंडित अस वचन सुनायो ॥
एक मुख्य सबमें करि दीजै । हार जीत ताके शिर कीजै ॥
दोहा–पंडितको अस वैन सुनि,काशी वासी विप्र ॥
मानि महाभ्रम चित्तमें, कहे वचन अति छिप्र ॥१६॥
उत्तर देब काल्हि यहि केरो । अस कहिगे द्विज निज निज डेरो॥
कियो धरन विश्वेश्वर अयना। मर्यादा तुव हाथ त्रिनयना ॥
राति स्वप्न शंकर अस भाषो । तुलसी शीश अजय जयरापो ॥
पंडित मुदित भूप गृह आये। सो पंडित सों वचन सुनाये ॥
तुलसिदास सबमाहिं प्रधानो । जयहु पराजय तेहिं शिर जानो॥
भूप कह्यो किमि सकै बोलाई। तुलसिदास गृह चलो सिधाई॥
यह सुनि लै पंडितन समाजा । आयो तुलसिदास गृह काजा॥
सबन कियो सत्कार गोसाँई । एक शिष्यको कह्यो बोलाई ॥
ये तांबूल पांच लै जाहू । देहु मुदित पंडित सबकाहू ॥
शिष्य तुरत तांबूलहि बांटा । बचे पांच कोहु पऱ्यो न घाटा॥
यह प्रभुता लखि पंडित सोई । वाद करनकी आश्रय खोई ॥
तुलसिदास पंडितहि बोलाई । दै रामायण कह्यो बुझाई ॥
दोहा–खंडन मंडन पक्ष जो,सो देखहु यहि माहिं ॥
जो न होय तौ आइ इत,वाद करहु हम पाहिं ॥ १७॥
पंडित रामायण लैलीन्ह्यो । डेरा चलि अवलोकन कीन्ह्यो॥
संमत शास्त्र पुराणनकेरो । रामायणमहँ पंडित हेरो ॥
जौन पक्ष पंडित मन भयऊ । समाधान तेहि महँ मिलिगयऊ॥
जा श्लोक वंदना माहीं । ताकी हानि भई कछु नाहीं ॥
श्लोक–नानापुराणनिगमागमसंमतंयद्रामायणेनिगदितंक्वचिद-न्यतोपि । स्वांतःसुखाय तुलसीरघुनाथगाथा भाषानिबद्धमतिमंजुलमातनोति ॥

पंडित गृहते द्रुतचलिदयऊ। तुलसिदास पद रज शिर धयऊ॥
निज अपराधहिं क्षमा करायो। सभामध्य . श्लोक सुनायो ॥

श्लोक—आनंदकाननेकोपि तुलसीजंगमस्तरुः ॥
यत्काव्यमंजरीभावाद्रामभ्रमरभूषितः ॥ २ ॥ इति ॥

तुलसी शिष्य भयो पुनि सोई। अरप्यो सकल वस्तु बहुतोई ॥
रामभक्तिको करि उपदेशा। गयो गर्व तजि कौशलदेशा ॥
पुनि चेटकी एक तहँ आयो। यक यक्षिणी सिद्धि करि लायो॥
तेहि बल सब थल नगर पुजायो। महामहत्व जननसों पायो ॥
यक वैष्णवकोउगयो सकामा। राख्यो सिद्ध ताहि निज धामा॥
सिद्ध नारि सों भई मिताई। साधु गयो लै ताहि पराई ॥

दोहा—जग्यो चेटकी भोर जब, लख्यो नारि नहिं धाम।
बोलि यक्षिणीको तुरित, कीन्ह्यो कोप अछाम ॥१८॥

यहि क्षण नगर भूप गहि लावै। साधु नारिलै जान न पावै ॥
सुनि यक्षिणी तुरंतहि धाई। युत पर्य्यंक भूप गहि लाई ॥
कह्यो यक्षिणी भूपहि बैना। काशी महँ कोउ साधु रहैना ॥
तिलक धोवाय माल सब टोरी। धरि दीजै मम कुंड बटोरी ॥
जो अस करिहौ नरपति नाहीं। तौ जानौ घर यमपुर माहीं ॥
नरपति कह्यो भवन पहुँचावहु।कालिहहिते निज हुकुम करावहु॥
तुरत भवन भूपहि पठवायो। भोर भूप शासन प्रगटायो॥
साधुन गल कंठी सब टोरी। धोय तिलक करिकै बरजोरी॥
सिद्ध कुंड दीजै पहुँचाई। द्वितिय बात नहिं बनै बनाई॥
यह सुनि नृप दल कियो तयारी। धोवन लगे तिलक लै वारी॥
टोरि टोरि कंठी बहुतेरी। भरयो सिद्धके कुंडहि ढेरी॥
हाहाकार मच्यो सब काशी। भये संत सब जीव निराशी॥

दोहा—कह्यो धूर्त्त कोउ जायकै, तुरत चेटकी काहि ।
तुलसिदास माला तिलक, तुम टोरौ कत नाहिं॥१९॥
सुनि चेटकी सैन्य सब साजे। चल्यो कोपि बजवावत बाजे॥
नगर लोग सब देखन धाये। कोउ वैष्णव तुलसी ढिग गाये॥
माला कंठी टोरन हेतू। आवत किये चेटकी नेतू॥
तुलसिदास तब गिरा बखानी। जाकर माल तिलक सो जानी॥
जब चेटकी कुटी नियरायो। तब यक घोरबडेरर आयो॥
परी फौज उड़ि सुरसरि माहीं। रही चेटकी तनु सुधि नाहीं॥
रुधिर वमत बूड़त मधि धारा। जस तसकै सो लग्यो किनारा॥
त्राहि कहत तुलसी पद गिरेऊ। मैं अयान संतन सों भिरेऊ॥
क्षमा करहु अपराध हमारा। तुलसी करुणा पारावारा॥
वचन कह्यो मुसकाय गोसाईं। संतसेउ लघु जनकी नाईं॥
खाहु वर्षभरि साधुन जूंठो। तब ह्वैहो शुचि है नहिं झूंठो॥
कियो चेटकी तैसहि आई। तरी यक्षिणी संगति पाई॥

दोहा—संत चरण जलपान करि, साधु जूंठ नित खाय ।
भयो चेटकी रामको, दास सुवास विहाय॥ २० ॥
भई रामनौमी यक काला। जुरी कुटी महँ संतन माला॥
उत्सव कियो महासुख छायो। सिगरी राज्य विभूति बोलायो॥
भई भीर भारी तेहि ठामा। छाय रह्यो यक रामहि नामा॥
तहँ यक डोम अवधपुर केरो। आयो तुरत उछाह घनेरो॥
महाभीर वश दरश न पायो। जन्म मनोरथ बोलि सुनायो॥
तुलसिदास पहँ कोउ कह आई। तुरत गयो प्रभु काज विहाई॥
पूंछ्यो है तू कहँको वासी। सो कह कोशलनगर निवासी॥
अवध निवासी सुनत कृपाला। भरि आये दोउ नयन विशाला॥
उर लगाय कूटी लै आई। बार बार तेहिं कह्यो बुझाई॥

यह विभूतिके प्रभु रघुराई। जनि भाषियो अवधपुर जाई॥
मैं चेरो रघुपति पद केरो। वाराणसी बसौं करि डेरो॥
ऐसे तुलसीके परभाऊ। कहत मोहिं नाहिं होत अघाऊ॥

दोहा–एक समय श्रीअवधको, लै सँग संत समाज।
नावहि नावहि चलतभे, नाव भराये साज॥ २१॥

सरयू गंगा संगम जहँई। पहुँचे जबै गोसाईं तहँई॥
भूपघाट घाटी अनुग्रामा। पूंछ्यो तुलसी चारिहुँ नामा॥
कहे लोग चलिकै शिर नावत। रामसिंह इत नृपति कहावत॥
रामदास घाटीकर नाऊं। तथा रामपुर बाजत गाऊं॥
रामघाट यह गुन्यो गोसाईं। लगत जगात इतै वरिआईं॥
बिन कर दिय कोउ जान न पावै।तुमहुँ को देव उचित इत भावै॥
राममये गुणि नाम सबनके। सजल कोर भे प्रभु नयननके॥
तुलसिदास बोले मुसकाई। दै जगात है मोर जवाई॥
सुन्यो गोसाईं आगम राजा। आयो तुरतहिं सहित समाजा॥
वंद्यो तुलसिदास पद कंजन।लिय उपदेश कुमति दृग अंजन॥
विनय कियो भरि आनँद भारा। होय नाथ इतहीं भंडारा॥
मेरे कंठ देहु प्रभु कंठी। कीजे मोहिं वसिंद विकुंठी॥

दोहा–तुलसिदास करिकै कृपा, भंडारा तहँ दीन।
भूपहु द्रव्य लगायकै, अति उत्सव तहँ कीन॥२२॥
तुलसिदास उपदेश ते, भूप सहित सब देश।
रघुपति भक्त अनन्य भो, सेयो संत हमेश॥ २३॥
तुलसिदासकी पादुका, धरयो भूप गृह माहिं।
इष्टदेव सम पूजिकै, पायो मोद सदाहिं॥ २४॥

एक समय निवसत तहिं काशी। एक चरित्र भयो सुखराशी॥
भैरवनाथ प्रभाव अपारा। सो मनमें अस कियो विचारा॥

मोहिं गोसांई पूजत नाहीं । दरशाऊं प्रभाव यहिं काहीं ॥
अस गुनि तुलसिदासके बाहू । दुसह पीर प्रगट्यो प्रददाहू ॥
होतभई अति पीर तहांहीं । छूटत जान्यो निज तनुकाहीं ॥
यतन कोटि कीन्ह्यो मतिधीरा। तबहुँ न मिटी बाहुकी पीरा ॥
तब बाहुकको रच्यो गोसांई । मिटिगै पीर स्वप्नकी नांई ॥
भैरव पर कोप्यो हनुमाना । भैरवसों शिव वचन वखाना ॥
देहु रामदासन दुख नाहीं । ते मोहिं प्रिय प्राणहुँते आहीं ॥
स्वप्ने तुलसी सों शिव भाष्यो। मैं भैरवहि मुख्य गण राष्यो ॥
इनहूंको वंदन तुम कीजै । मोरि प्रीति अतिशय गनिलीजै ॥
तुलसिदास तब आनँद पाई । भैरवकी वंदना बनाई ॥

दोहा—रच्यो कवित्त उदग्र अति, बाहुक चौआलीस ॥
तासु प्रभाव प्रत्यक्ष अति,अबलों आंखिन दीस॥२५॥
जो चौआलिस दिवस लगि, हनुमत मंदिर जाय ।
पाठ करै बाहुक शुचित, बैठि सनेम सोहाय ॥ २६ ॥
तासु प्रेतबाधा सकल, तनकी मनकी पीर ।
मेटिदेत मारुतसुवन, यह भाषैं मतिधीर ॥ २७ ॥

एक समय तुलसी भंडारे । जुरी भेंट जन दिये अपारे ॥
चोर चोरावनके हित आये । अर्द्ध निशा निज घात लगाये॥
जबहीं चोर चोरावन आवैं । द्वै बालक धनु शर लै धावैं ॥
यहि विधि सिगरी निशा सिरानी। चोरन उरते कुमति परानी ॥
दौर चोर तुलसीके पायन । परे आय चितमें अति चायन॥
पूछ्यो को बालक प्रभु दोऊ । इतै न आवन पावत कोऊ ॥
तुलसिदास पूंछ्यो वृत्तांता । चोर कहे सिगरे ह्वै शांता ॥
धन्य धन्य कहि पुलकि गोसांई। गहे चोर पाँयन वरिआई ॥
ह्वैगे शिष्य तुरंतहिं चोरा । तुलसिदास उर भो दुख भोरा॥

सम्पति धरब उचित इत नाहीं। राम लषण ताकैं धनकाहीं ॥
धिक् तेहिं जेहिं प्रभु परिश्रम भयऊ। अबलौं मोर कपट नहिं गयऊ
अस गुणि सम्पति दियो लुटाई। कर करवा कौपीन विहाई ॥

दोहा—काशीमें पुनि यक समय, मरचो विप्र कोउ एक।
सती होन हित तासु तिय, बांध्यो यतन अनेक॥२८

न्हाय पहिरि पट नरियर लैकै। चली देव दरशन सुख छैकै ॥
तुलसिदास आश्रमहू गवनी। वंद्यो चरण विप्रकी रवनी ॥
ध्यान करत तहँ रहे गोसांई। बोले वचन सहजकी नांई ॥
हो सौभाग्यवती तैं नारी। सुनि सहगामिनि गिरा उचारी॥

साषी—तुलसी आवतदेखकरि,सतीनवायो शीश।
जबतुलसीऐसेकह्यो,अमरचूड़ आशीश ॥ १ ॥
पतीहमारेचलिगये,हमहीचलनेहार ॥
तुलसीतुमरेवचनको,होसीकवनहवाल ॥ २ ॥

सत्य करो अपनी प्रभु वानी। सती होन हित अहौं पयानी ॥
लख्यो गोसाईं नयन उघारी। कि हे हती तिय सती तयारी ॥
अपने वचन सत्यके हेतू। गये जहां मृत दाहन नेतू ॥
नयन मूंदि दोउ भुजा पसारहु। जय जय सीताराम उचारहु ॥
मृतक ओर चितई जो कोई। आंधर सो विशेषिकै होई ॥
जन समाज तैसहि सब कीन्हे। सीताराम मुदित कहि दीन्हे ॥
जब सब बोले राम दोहाई। मृतकहु बोल्यो हाथ उठाई ॥

दोहा—तुलसीमराबोलाइकै, मस्तकधारचोहाथ ॥
हमतौकछुजानैनहीं, तुमजानौरघुनाथ ॥२९॥
दौरि गह्यो तुलसी चरण, माच्योजयजयशोर ॥
कोउ यक मूँद्यो नयन नहिं, भयो अंध तेहिंठोर॥३०॥

गह्यो आय पद ताकी नारी। हरहु नाथ यक आँखि हमारी॥

एक आंखि पतिकी प्रभुदीजै। अपनो वचन सत्य करिलीजे॥
एवमस्तु कहिदियो गोसांई। तैसहि भयो तुरत तेहिं ठांई॥
पुनि काशी महँ कौनेहु काला। गोहत्या केहुँ लगी कराला॥
दियो कुटुम्ब तासु तब त्यागी। आयो सो तुलसी पद लागी॥
कह्यो जोरि कर सुनहु उदारा। लखैं लोग नहिं वदन हमारा॥
तुलसिदास बोले तब वैना। राम कहे तनु पाप रहैना॥
हम कुटुम्ब सब देब मिलाई। राम राम तैं कहु रट लाई॥
तेहिं मुख राम राम रट लागी। तनुते गोहत्या द्रुत भागी॥
तुलसी तातु कुटुम्बन बोल्यो। मंजुल वचन सबनसों खोल्यो॥
राम कहत गोवध अघ भाग्यो। याको वृथा सबै तुम त्याग्यो॥
जेहिं प्रतीति अब होय तिहारी। सो करिलेहु परीक्षा भारी॥

दोहा—कह्यो कुटुम्बी तासु सब, जो नंदी शिव भौन॥
याके करको खाय कछु, तौ संदेहहै कौन॥ ३१॥

तब विश्वेश्वर मंदिर माहीं। गये गोसांई लै तेहिंकाहीं॥
नंदीश्वरसों विनय सुनायो। नाम प्रभाव तुम्हीं सब गायो॥
राम नामको यथा प्रभाऊ। तुम समान को जानन काऊ॥
राम कहत जो अघ रहिजावै। तौ यहिकर प्रभु कछू न खावै॥
असकहिकेद्विज करकृत पेरा। धरिदीन्ह्यो नंदीश्वर नेरा॥
दै केवार बहिर प्रभु बैठे। कौतुक लखन जुरे जन तैठे॥
लखे केवार खोलि जब जाई। लीन्ह्यों नंदी पेरा खाई॥
यक मुखमहँ प्रतीतिहितराख्यो। काशी वासी जयजय भाख्यो॥
लिय कुटुम्ब सब ताहि मिलाई। तुलसिदास महिमा मुख गाई॥
एक समय पुनि तुलसीदासा। कछु दिन कियो अवधपुरवासा॥
एक विप्रबालक तहँ मरेऊ। तुलसी चरण आयसो गिरेऊ॥
लोक रीति तुलसी समुझायो। ताके मनमें कछू न आयो॥

दोहा—लोथि डारिकै सो गयो, तुलसिदासके द्वार ।
खान पान संध्या न किय,तुलसी कियो खँभार॥३२॥
सुमिरन कीन्ह्यो पवनकुमारा । अहो नाथ तुम मोहिं अधारा ॥
हनूमान कह स्वप्ने आई । याहि पर जम कीन्हे जबराई ॥
पै याको हम अवशि जियैहैं । रामभक्तको शोक मिटैहैं ॥
अस कहि यमपुर गयो कपीशा। यम बोल्यो पदनावत शीशा॥
यमपुर विप्र बाल जिय नाहीं । खोजिलेहु सिगरे पुरमाहीं ॥
खोज्यो कपि पायो नहिं जीवा । तब यम पर करि कोपअतीवा॥
सुमिरि राम पद महिमासिगरी। लियो लपेटि लँगूरसों नगरी॥
बोल्यो यमसों पवनकुमारा । देहु जियाय विप्रको बारा ॥
नातो तेहि सँग यमपुर जैहै । मम प्रभु तुव सम और बनैहै॥
तब यम भभरि कह्यो कर जोरी ।भाग्य मिटावन शक्ति न मोरी॥
श्लोक—लिखिताचित्रगुप्तेन ललाटाक्षरमालिका ।
तन्नचालयितुंशक्यमसुरैस्त्रिदशैरपि ॥ १ ॥
इतिपुराणांतरे ॥
वायुसुवन तब कह मुसकाई ।यह सति रघुपति भक्तिविहाई॥
तामें सुनु यमराज प्रमाना । कियो सनातन वेद बखाना ॥
श्लोक—यद्धात्रालिखितंभाले तन्मृषानैवजायते ।
ऋते श्रीरामदासानां प्रेमनिर्भरचेतसाम् ॥
दोहा—तब यमराज डेरायकै, लै द्विज बालक प्रान ।
अर्प्यो आय कपीशको, राख्यो अपनो थान ॥३३॥
दिय कपीश द्विजपुत्र जियाई । सकल अवधपुर बजी बधाई ॥
तुलसिदास अति आनँद पायो। तहां वसत कछु काल बितायो॥
आयो एक वणिक पुनि कोऊ। रामदरश लालस किय सोऊ ॥
तुलसिदास सों विनय सुनायो। श्रीरघुवीर दरश चितचायो ॥

तुलसिदास तब कह मुसकाई। यह तो बात महा कठिनाई ॥
सहजहि रामदरश नहिं होई। कोटिन जन्म जातहै खोई ॥
वणिक कह्यो है कौन उपाई। तुलसिदास तब कह्यो बुझाई ॥
वरछी गाड़ि भूमिमहँ देहू। तापर कूदहु तजि तनु नेहू ॥
यहि विधि दरश होय तौ होई। और यतन कछु परै न जोई ॥
वणिक कह्यो यह तौ न असति है।तुलसिदास कह सति सति सतिहै
वणिक गाड़ि वरछी महि माहीं। चढ़यो जाय तरु कूदन काहीं॥
मरन भीति कूद्यो नहिं जाई। बनिया बारबार पछिताई।

दोहा—कोउ क्षत्री तेहि पंथ ह्वै, लख्यो तमाशो जाय।
कह्यो वणिकसों काह यह, वैश्य गयो सब गाय॥३४॥

क्षत्री कह्यो उतरि तुम आवहु। कौन हेतु तनु वृथा गवांवहु ॥
मोसों लेहु कछुक धन भाई। करहु जाय रोजगार बनाई ॥
वणिक मानि क्षत्रीके वयना। लै धन तुरत गयो निज अयना॥
क्षत्री लियो मनहिं अनुमानी। मृषा न तुलसि दासकी वानी ॥
तरुपर चढ़ि कूद्यो बरछीपर।उपरहि रोकि लियो तेहिं रघुवर ॥
बजे नगर दुंदुभी अपारा। भयो सुयश सिगरे संसारा ॥
तामें प्रमाण गोसांईजीकी। मैं लिखि देहौं सोई नीकी ॥
कौनिहुँ सिद्धि कि विन विश्वासा।विन हरिभजन न भव भयनासा
यक दिन सरयू गये नहाने। मज्जन हित जब नीर समाने ॥
तब यक तिय विन वसन नहाती।कह्यो लाजभरि सो बिलखाती॥
करि मम ओर पीठि यहि ठाई। ठाढ़ो रहु तोहिं रामदोहाई ॥
तिय मज्जन करिकै घर आई। तुलसिदास सुनि रामदोहाई ॥
रहे ठाढ़ तेहिं दिन तेहिं ठाई। शपथ बहोर वतिय विसराई ॥
भयो शोर सिगरे पुरमाहीं। आई सो तिय बहुरि तहाहीं ॥

दोहा–तुलसिदास सो वचन कहि, राम शपथ तुमकाहिं ।
जाहु आपने भवनको, इतै कार्य्य कछु नाहिं ॥३५॥
तुलसिदास जलते निकसि, तब आयो निज भौन ।
जलचर पग पल नोचि लिय, कियो न इक पद गौन ३६
राम शपथ यहि भांतिकी, ताहि मंदमति लोग ।
रामद्रोहि भाषत रहैं, करिकै मृषा प्रयोग ॥ ३७ ॥

तुलसिदासकर बढ़्यो प्रभाऊ। भयो विदित पुहुमी सब ठाऊ॥
बादशाह दिल्लीको वासी। सुनि कीरति अति आनँदरासी॥
निज नायकको कह्यो बोलाई। तुलसीको लाइये लेवाई॥
नायब चल्यो बनारस आयो। तुलसिदासके पद शिरनायो॥
हजरत तुम्हें बोलायो सांई। चलो मेहर करिकै तेहिं ठांई॥
तुलसिदास तब कियो विचारा। कौन शाहते हेतु हमारा॥
पै जो हम दिल्ली नहिं जैहैं। शाह अवशि दरशन हित ऐहैं॥
तौ जीवनको अति दुख होई। उचित परै चलिबो मोहिं जोई॥
तुलसिदास लै साधु समाजा। दिल्ली गये सुमिरि रघुराजा॥
शाह कियो सादर सत्कारा। पुनि बोल्यो अपने दरबारा॥
तुमहिं सुन्योसाहेबहिं मिलापी। अजमत देहु देखाय प्रतापी॥
तुलसी कह्यो राम हम जानैं। दूसर साहेब और न मानैं॥

दोहा–अजमत देखन हेतु तहँ, कीन्ह्यो हठ शठ शाह ।
तुलसिदास अजमत करन, कियो न मनमें चाह ३८॥

शाह सकोप कह्यो तब वानी। तू खिलाफ अजमत अभिमानी॥
कारागार कैद यहिकीजै। राम करत का सो लखिलीजै॥
सुनत शाह शासन मजबूता। कारागार गये लै दूता॥
तुलसिदास तब कियो विचारा। मोर सहायक पवनकुमारा॥
सुमिर्‌यो पद रचिकै हनुमाना। सो पद श्रोता सुनहु सुजाना॥

पद–ऐसो तोहिं न बूझिये हनुमान हठीले ।
हांक सुनत दशकंधके भये बंधन ढीले ॥
तुलसिदास यह पद रचि गायो । तब हनुमत उर अमरप आयो॥
होत भोर दिल्लीपुर माहीं । कोटिन मर्कट बिकट देखाहीं॥
कोट कँगूरन और हवेली । कलसा दियो अनेकन ठेली ॥
शाखामृग यक यक घर माहीं । प्रविशत लाखन तुरत देखाहीं॥
लाल किला मधि शाह मकाना। तहँ बांदर प्रविशे सहसाना ॥
तोपन तुपकन यद्यपि मारा । तदपि कीश नहिं हटे हजारा॥
घुसे कीश बहु शाह जनाने । पकरि बेगमनको अनखाने ॥
दोहा–फारि वसन पटहीन किय, चीथि चीथि सब अंग ।
हाहाकार मचायदिय, रँगे कोपके रंग ॥ ३९ ॥
रहैं जौन दिल्लीके वासी । भये सकल ते जीव निरासी ॥
लखि दुर्दशा शाह ववराना । सकल वजीरनको द्रुत आना ॥
शासन दीन्ह्यो करहु विचारा । केहि हित माच्यो जुलुमअपारा॥
हाफिज वृद्ध रह्यो तहँ एका । सो कह कीन्ह्यो अति अविवेका॥
यक फकीरको कैद करायो । सो अपनी अजमत दरशायो ॥
करत शाहके यही विचारा । दिल्लीमाच्यो हाहाकारा ॥
यक यक पुरुष नारि पर कीशा। लाखन लपटिगये गहि शीशा॥
भागीं बेगम बिना सुथनिया । कहत खोदाय न पग पैंजनिया॥
नोचहिं नारिन केशन कीशा । भागत गिरीं फूटिगे शीशा ॥
मातु सुता पितु सुत तजि भागे।कोहु कोहु संग न लिय भय पागे॥
दिल्ली प्रलय होति सों दीसै । हल्ला कियो महल्ला कीसै ॥
कारागार जाय द्रुत शाहा । गिरयो तुरत तुलसी पद माहा॥
दोहा–विनय कियो करजोरिकै, अजमत लीन्ह्यो देखि ।
अब वानरन समेटिये, प्रलय होति सी लेखि ॥ ४० ॥

तुलसिदास कह अजमत देखौ। रामचरित्र सकल जिय लेखौ॥
जो चाहौ आपनी भलाई। तौ फेरहु पुर रामदोहाई॥
यह दिल्ली भो हनुमत थाना। वसहु जाय रचि द्वितिय मकाना
शाह मानि शासन शिरनाई। दिल्ली फेरयो रामदोहाई॥
वंदर वंद भये जेहिं काले। तुलसीको लायो निज आले॥
कियो गोसांईको सत्कारा। दिल्ली दूसरि रच्यो भुवारा॥
रामघाट रचि यमुना माहीं। दिल्ली अरपि सु तुलसी काहीं॥
वस्यो शुचित चित बादशाह तहँ। तुलसीको राख्यो तेहि पुर महँ।
सुन्यो सूर कीरति तेहिं भांती। दरशन अभिलाषा अधिकाती॥
पठै बुद्धिमानन ब्रजकाहीं। आन्यो सूरदास पुर माहीं॥
तुलसी सूरसमागम भयऊ। राम कृष्ण मय पुर ह्वैगयऊ॥
दोऊ गये शाह दरबारा। बादशाह किय अति सतकारा॥

दोहा—शाह कह्यो तब सूरसों, दीजै चारित देखाय।
सूर कह्यो तुलसी चरित, लखि नहिं गये अघाय॥४१॥

बेटी तुव जो वसै जनाने। तासु चरित सुनिये दोउ काने॥
कृष्ण रासकी सखी सुहाई। कौनेहु पाप भवन तुव आई॥
ताहि पठावहु ब्रजै तुरंता। रासकरत जहँ राधाकंता॥
जो परतीति होय नहिं तेरे। तौ मानिये बैन अस मेरे॥
तासु वाम जंघा तिल होई। मूरति श्याम कपोलहि जोई॥
शाह सुनत उठि गयो जनाने। बेटीको सो वचन वखाने॥
सुनतहि सुता सूर ढिग आई। दै तलमुख तनु दियो विहाई॥
तासु जंघ तिल लख्यो अमोला। श्याम स्वरूपहु लख्यो कपोला॥
अचरज गुणि पूंछ्यो तब सूरै। हेतु बखानि हरहु भ्रम पूरै॥
सूर कह्यो यह सखी रासकी। मान कियो पिय मिलन आसकी॥
मैंही गयो मनावन याको। मान्यो नहिं मनायकै थाको॥

तब मैं कह्यो वियोगिनि ह्वैहै । सोउ कह तहूं वियोगहि पैहै ॥
दोहा—आयगये तहँ मिलन हित, तुरतहि मदन गोपाल ।
कर गहि जंघा धरि छरी, चूमि कपोल विशाल॥४२॥
लियो लेवाय मनाय पियाको । जान्यो सब वृत्तांत तहांको ॥
मोहिं कह्यो तैं प्रगट जगतमें । तारै जनन विराजि भगतमें ॥
सखी होयगी शाह कुमारी । तोहिं मिलिहै तब तनु तजिडारी॥
सोय अमरषवशमोहिंतलमारचो।तनुतजियदुपतिरास सिधारचो
छरी चिह्न जंघा तिल सोई । चुम्बन चिह्न कपोलहि जोई ॥
शाह सत्य गुणि अचरज त्यागा । बारहिंबार सूर पग लागा ॥
रहे बहुत दिन सूर गोसांई । करि सत्संग न मोद अघाई ॥
यक दिन दोउ बजार महँ बैठे । करि सत्संग मोदरस पैठे ॥
शाह मत्त मातंग महाना । आवत चलो दुहुँन दरशाना ॥
लोगन कह्यो पराव तुरंता । नातो करन चहत गज अंता ॥
सूर कह्यो मैं जाहुँ गोसांई । मैं रहिसकों न अब यहि ठांई ॥
मेरो नंदलाल अतिबालक । किमि ह्वैहै दुरधर गज घालक ॥
तू बैठे तौ बैठ भलाई । धनुधर तेरो नाथ गोसांई ॥
दोहा—भगे सूर अस कहि तहां, लीन्हें अंक गोपाल ।
तुलसिदास मुसकायकै, बैठ सुमिरि रघुलाल ॥४३॥
धायो तुलसी सन्मुख नागा । आकस्मात शीश शर लागा ॥
मरचो हस्थि करि घोर चिकारा । भो वृत्तांत विदित संसारा ॥
तुलसी सूर समागम करिकै । काशी आवतभे मुद भरिकै ॥
एक समय नाभाजू ज्ञानी । जिन यह भक्तमाल निरमानी॥
ते सब संतन नेउता दीन्ह्यो । सिगरे संत पयानो कीन्ह्यो ॥
तुलसिदास को न्योतो आयो । तब मनमें विचार अस लायो॥
पंगतिमें कच्चो पकवाना । द्विजको खैबो उचित न जाना॥

यह विचारि कर तहां न गयऊ। पवनसुवन तासों कहि दयऊ ॥
भक्तराज नाभाको जानो। तुरतहिं तहँको करो पयानो ॥
हनुमत शासन सुनत गोसांई। चले तुरत भिक्षुककी नाईं ॥
नगर ओडछे ढिग तब गयऊ। कौतुक तहाँ माचि यह रहेऊ ॥
तहँको इंद्रजीत जो राजा। सो जोरयो बहु कविन समाजा॥

दोहा—कवि समाज शिरताज किय, श्रीकवि केशवदास।
रामचंद्रिका जो विमल, कीन्ह्यो जगत प्रकास ॥४४॥

कवि मंडली विलोकि नरेशा। दीन्ह्यो विप्रन नवल निदेशा ॥
यह सब कविमंडली सदाहीं। रहै कौन विधि मम ढिगमाहीं॥
मंत्रशास्त्रवित कह असि वानी। प्रेतयज्ञ कीजै विधि ठानी ॥
यहि विधिते यह कविन समाजा। रहै सहस वर्षहु लगि राजा ॥
इंद्रजीत तब अति सुख पायो। प्रेतयज्ञ विधिसहित करायो ॥
सो कवि मंडल युत नरनाथा। भये प्रेत तनु तजियक साथा ॥
रामचंद्रिका केशव कीन्ह्यो। पूरण भई न तनु तजि दीन्ह्यो॥
यह वृत्तांत सकल कोउ पाई। तुलसिदासको दियो सुनाई ॥
सोइ कवि केशव वट तरु माहीं। अबलों करत पुकार सदाहीं ॥
रामचंद्रिकाको ले जाई। ल्यावै तुलसी सों शोधवाई ॥
यह सुनि तुलसिदास तहँ गयऊ। केशव कहत पुकारत भयऊ ॥
केशव तरुते उतारि तुरंता। तुलसी पद पकरयो हरषंता ॥

दोहा—नाथ उधारो मोहिं अब, ग्रंथ सुधारो सोय ॥
नहिंवांच्यो ममकोउकुमति,हाऱ्योबहुविधिरोय ॥४५॥

तुलसी कह्यो विहँसि असि वानी। रामचंद्रिका पढु सुखखानी ॥
केशव रामचंद्रिका पढ़ेऊ। तुलसी सुनि शोधत मुद बढ़ेऊ॥
रामचंद्रिका पूरी जवहीं। केशव तऱ्यो जयति कहि तवहीं॥
नाभा निकट गोसांई गवने। पंगति समय पहुंचि दुख शमने॥

लखि नाभा कछु कह्यो न बानी। लखन रीति तेहि सुमति लोभानी
तुलसी बैठे पंगति छोरा । परी पातरी नीचे ठोरा ॥
साधु उपानत पातरि नीचे । धरि कीन्ह्यो सम आंते सुख सांचे॥
नाभा निरखि भाव अस ताको। मिल्यो जाय कर गहि सुख छाको॥
ताहि मध्य पंगति बैठायो । बार बार चरणन शिरनायो ॥
कछु दिन कीन्ह्यो तहां निवासा । करिसत्संगहि लह्यो हुलासा ॥
नाभातासु विमल मति हेरा । भक्तमालमहँ कियो सुमेरा ॥
पुनिब्रजमंडल यात्राकरने । तुलसिदास गवन्यो सुखभरने ॥

दोहा—नाभाजू छप्प लिख्यो भक्तमालमें जौन ॥
मैं सो इत लिखिदेत हौं, श्रोता समुझो तौन ॥ ४६ ॥

छप्पय—त्रेता काव्य निबंध कियो शत कोटि रमायण ॥
यक अक्षर उद्धरे ब्रह्महत्यादि परायण ॥
अब भक्तन सुखदेन बहुरि लीला विस्तारी ॥
रामचरण रसमत्त रहत अहनिशि व्रतधारी ॥
संसार अपारके पारको सुगम रूपनौका लयो ॥
कलिकुटिलजीवनिस्ताराहितवाल्मीकितुलसी भयो १

दोहा—तुलसिदास यात्रा करी, ब्रज चौरासी कोश ॥
राम कृष्ण वपु भेद बिन, भरिआनँद उर कोश ॥ ४७॥

बहुरि जबै वृंदावन आये । घाट घाट मज्जन करि भाये ॥
सब मंदिरन दरश करि लीन्ह्यो । ज्ञान गूदरी डेरा कीन्ह्यो ॥
परशुराम तहँ रह्यो महंता । कृष्ण उपासक भाव करंता ॥
लख्यो गोसाँई की सब रीती । बढ़ी करन सत्संगहि प्रीती ॥
तुलसिदासको करि सत्संगा । नव नव बढ़त प्रेमरसरंगा ॥
परशुरामके मंदिर माहीं । कृष्णरूप श्रीनाथ सोहाहीं ॥
वंशी लकुट काछनी काछे । मुकुट माथ माला उर आछे ॥

सोहति मूरति ललित त्रिभंगी । हरणहार हिय राधा संगी ॥
यक दिन तहँ सब दिनकी नाईं। दरशहेतु चलिगये गोसांईं ॥
परशुराम तहँ रह्यो महंता । तासु परीक्षा चह्यो करंता ॥
तुलसी करन दंडवत लागे । तब महंत बोल्यो अनुरागे ॥
मेरे वचन कछुक सुनिलेहू । फेरि द्वार दंडवत करेहू ॥

दोहा—अपने अपने इष्टको,नवनकरैं सबकोय ॥
इष्टविहीनपरशुरामजी, नवै सो मूरख होय ॥ ४८ ॥
परशुरामके वचन सुनि, मानत हिये हुलास ॥
सीतारमण सँभारिकै,बोल्यो तुलसीदास ॥ ४९ ॥
कहा कहौं छवि आजुकी,भले बनेहो नाथ ॥
तुलसी मस्तक तब नवै,धरो धनुष शर हाथ ॥५०॥
मुरली लकुट दुरायकै,धऱ्यो धनुष शर हाथ ॥
तुलसी लखि रुचि दासकी,नाथ भये रघुनाथ॥५१॥

यह प्रत्यक्ष देख्यो संसारा । वृंदावन माच्यो जयकारा ॥
परशुराम तुलसी पद गहेऊ । धन्य धन्य कहि आनँद लहेऊ॥
यकदिन ज्ञानगूदरी माहीं । होती हरिकी कथा सदाहीं ॥
गये गोसांई श्रवण उमाहा । निरखे संत महंतन काहा ॥
कोउ गद्दीमहँ बैठ महंता । कोउ उच्चासन महँ विलसंता ॥
गद्दी महँ बैठावन लागे । भूमहँ बैठिगये अनुरागे ॥
कह्यो गोसांई सबन सुनाई । कथाश्रवणके दोष गनाई ॥
कथा सुनत बीरा जे खाहीं । ते मल भक्षत नरकन माहीं ॥
कथा सुनत बैठै उच्चासन । ते अर्जुन तरु होत पाप सन ॥
कथा सुनहिं जे विना प्रणामा । ते विष वृक्ष होत अघ धामा ॥
कथा सुनत जे सोवत जानी । ते अजगर होते अभिमानी ॥
जे वाचक सम आसन बैठैं । ते गुरतल्प पाप फल पैठैं ॥

दोहा–जे निंदैं यदुपति कथा,अघहरनी मनहारि ।
बे शत जन्म प्रयंत लगि, श्वान होत दुखकारि॥८२॥
कथा होत जे करैं विवादा । ते खर सरठहोत मरयादा ॥
जे हरिकथा सुनत शठ नाहीं । होत नरक लहि कोलव नाहीं॥
कथा विघ्न करते जे द्रोही । नरक भोगि पुर शूकर होहीं ॥
ये दश दोष तुरंत विहाई । श्रीहरि कथा सुनहु सब भाई॥
सुनिकै तुलसिदासके वयना । भरि आये जल प्रेमिन नयना॥
तुंगासन सब दियो विहाई । बैठे भूमि कथा शिरनाई ॥
ह्वैगे कथा समापत जबहीं । बोल्यो संत एक अस तबहीं ॥
षोडशकला कृष्ण सुखसारा । द्वादश कला राम अवतारा ॥
षोडशतजि द्वादश कसभजहू । समाधान करु नाहिं घरब्रजहू ॥
यहसुनि तुलसिदाससुख छाके । भये मिलनहारे वसुधाके ॥
रही दंड द्वैलगि सुधि नाहीं । सींचे संत सलिल तिन काहीं॥
भई खबरि जब उठे गोसांई । पूछे संतभेद वरिआई ॥
दोहा–तुलसिदास बोल्यो वचन,यदपि कहब नाहिं योग ।
तद्यपि कहहुँ प्रसंग वश, सुनहु भेद सब लोग॥८३॥
रामहि जान्यो मैंलगि आजू । अति कृपालु कोशलमहराजू॥
तुम तौ बारहि कला बताये । ईश्वरको अति भाव दृढ़ाये ॥
महाराज पुनि ईश्वर रामा । अब किमि तजौं तासु मैं नामा॥
यह सुनि जानि अनन्य उपासी। गहे चरण सब संत हुलासी ॥
यहि विधि करत विविध सत्संगा।तुलसी विपिन बसे रतिरंगा ॥
पुनि कछु काल माहँ चलिकाशी ।तुलसिदासआये सुखराशी ॥
विनयपत्रिका जौन बनायो । ताको मंदिर मध्यधरायो ॥
विनय कियो सन्मुख करजोरी । सत्य होय विनती जो मोरी ॥
तौ यहि माहिं सही परिजावे । मोर दुसह दुख द्रुत मिटिजावे॥

अस कहि कीन्ह्यो बंद केंवारा । गयो बहुरि जब भो भिनसारा॥
तुलसी पुस्तक गहि जब हेरी । मिली सही रघुपति कर केरी॥
विनय माहँ तब यह पद कीन्ह्यो । सो मैं इत ने तकलिखि दीन्ह्यो॥
पद–तुलसी अनाथकी परी रघुनाथ हाथ सही है ॥ १ ॥
दोहा–पुनि अति दुस्तर काल लखि,रामधामको जान ।
तुलसीदास विचार किय, बोल्यो सबन सुजान ॥५४॥
सहि न जात रघुपति विरह,जान चहौं हरिधाम ॥
यह सुनिकै अति व्यथितभे,सकल संत मति धाम५५॥
तिनहिं दियो उपदेशमम,ग्रंथ वेद मरयादि ॥
रामायण गीतावली, विनयपत्रिका आदि ॥ ५६ ॥
तिनहि सुनहु समुझहु सुरुचि,चलहु ग्रंथ अनुसार॥
अंत समय हठि मिलहिंगे, दशरथराजकुमार ॥५७॥
अस कहि सहजहि आयगे, असी वरुणके तीर ॥
नयन मूँदि तनु अचल किय,भइ संतनकी भीर॥५८॥
बजे नगारे गगनमें,देखो परो विभाश ॥
दामिनि सों चहुँओरमें,चमक्यो चपल प्रकाश ॥५९॥
संवत सोरहसै असी,असी वरुणके तीर ॥
सावन शुक्ला सतमी, तुलसी तज्यो शरीर ॥ ६० ॥
भवसागरमें नाव सम,विरचि ग्रंथ मतिधीर ॥
चढ़ि विमान गवनत भयो,जहँ निवसत रघुवीर ॥६१॥
इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेषष्टितमोऽध्यायः६० ॥

अथ रामदासकी कथा ॥

दोहा–रामदासको यह सुनहु, अति विचित्र इतिहास ।
हीराकोरक ग्राम यक, रह्यो द्वारका पास ॥ १ ॥

सात कोश नगरी ते रहेऊ। रामदास तहँ वासहि गहेऊ ॥
व्रत एकादशि जागन हेतू। जाय द्वारका कृष्ण निकेतू ॥
विधि बहु काल बीति बहु गयऊ। रामदास बूढ़ो अस भयऊ ॥
स्वप्ने हरि भाख्यो करि नेहू। बैठे करहु जागरण गेहू ॥
तबहूं रामदास नहिं मान्यो। स्वप्नेमें पुनि नाथ बखान्यो ॥
अब हम रहिहैं भवन तुम्हारे। लाय शकट लेचलहु उदारे ॥
रामदास हरिवासर काहीं। शकट सहित गो मंदिर माहीं ॥
अर्द्ध निशा खिरकी खुलि गयऊ। लै मूरति शकटहि धरि दयऊ॥
लै प्रभु रामदास द्रुत भागे। भोर भये पंडा सब जागे ॥
जान्यो रामदास किय चोरी। चढ़े तुरंग चले सब दोरी ॥
धावत आवत देखि सवारा। रामदास ह्वैगे भय भारा ॥
वापी माहिं फेंकि प्रभुकाहीं। भाग्यो भवन और सुधि नाहीं॥

दोहा—रामदासको चोर गुणि, नेजा हने सवार।
अपने तनुमें घाव लिय, श्रीवसुदेवकुमार ॥२॥

पंडा बहुरि बावली आये। रुधिर भरी लखिकै भय पाये ॥
मूरति ऐंचि धरन तहँ कीन्ह्यो। स्वप्ने महँ प्रभु तेहि कहिं दीन्ह्यो॥
हम अब रामदास गृह रहिहैं। अबते तुम्हरो अन्न न खाहिहैं ॥
विजय मूर्ति लीजै पधराई। चलिहै पूजा भोग सदाई ॥
मम मूरति भरि तौलि सु हेमा। लेहु जाहु घर चहहु जो क्षेमा ॥
पंडा मान्यो नाथ रजाई। कह्यो सोन प्रभु देहु मँगाई ॥
रामदास सों कह प्रभु वानी। धरि दीजै तियकी नथ आनी ॥
रामदास नथ लै धरि दीन्ह्यो। पंडा मूरति तोलन कीन्ह्यो ॥
मूरति पलरा ऊरध भयऊ। नथको पलरा महि धरि गयऊ॥
रोवत पंडा निज घर आये। रामदास घर प्रभु पधराये ॥
अबलों सो प्रत्यक्ष जगमाहीं। श्रीरणछोड़ विराजतहाँहीं ॥

विजय मूर्ति पंडा पधराये। अबलों तहँ सो नाथ सोहाये॥

दोहा–रामदासकी यह कथा, मैं वरण्यो संक्षेप।
यामें कछू न जानिये, हरिजन चरित प्रलेप॥ ३॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
एकषष्ठितमोऽध्यायः॥ ६१॥

अथ आशकर्णकी कथा॥

दोहा–आशकर्णनरनाहको, अब सुनिये आख्यान।
बड़ो संतसेवी रह्यो, बड़ो भूप मतिवान॥ १॥

नेम रहै भूपतिको ऐसो। करै संत दरशन रह जैसो॥
लीन्हे विना संत पद नीरा। करै प्रमाण भूप मतिधीरा॥
एक समय कहुँ रहे विदेशू। वर्षा भई भूरि तेहिं देशू॥
जहँ तहँ गई सैन्य वश वर्षा। रह्यो अकेल भूप हत हर्षा॥
लगी प्यास भूपति कहँ भारी। लह्यो तहां न संत पद वारी॥
तृषा विवश भूपति गिरि गयऊ। विन चरणोदक जल नाहिं लयऊ॥
तब हरि साधुरूप धरि आये। दै चरणोदक जलहि पियाये॥
भूप उठ्यो जब कियो सँभारा। तौन साधुको कहुँ न निहारा॥
तब भूपति जान्यो प्रभु काहीं। आयो करि गलानि घर माहीं॥
भूपति सकल विभूति विहाई। लियो विराग सुमिरि यदुराई॥
वस्यो विपिन तजि संसृति संगा। रोज रँग्यो रामहिंके रंगा॥
तजि शरीर कछु दिन महँ भूपा। राम धामको गयो अनूपा॥

दोहा–आशकर्ण इतिहास बहु, मैं नहिं कियो बखान।
यहि विधि औरहु चरित सब, लीजै करि अनुमान॥ २॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
द्विषष्ठितमोऽध्यायः॥ ६२॥

अथ नरवाहन राजाकी कथा ॥

दोहा—नरवाहन राजा चरित, सुनहु सुमति चितलाय ।
हित हरिवंश सुशिष्य सो, रह्यो प्रेम रस छाय ॥ १ ॥

रह्यो संत सेवी नरवाहा । आनै निज घर संत उछाहा ॥
जस तसके धन जोरि अनंता । भोजन करवावै बहु संता ॥
यक दिन लूटि लियो यक शाहू।पाय अमित धन सहित उछाहू॥
बहुत संत भोजन करवायो । तौन साहुको कैद करायो ॥
भयो साहु अति दुखी तहाँहीं । बहुत दिवश बीते तेहि काहीं॥
यक दिन यक भूपतिकी चेरी । लागी दया साहु जब हेरी ॥
पूंछ्यो साहुहि सो सब गायो । तब चेरी भोजन करवायो ॥
साहुहि दियो उपाय बताई । भोर कह्यो तुम अस गोहराई ॥
मैं हरिवंश शिष्य हौं राजा । राधावल्लभ दास दराजा ॥
अस कहि गई भवन सो चेरी । साहु जगत गइ निशावनेरी ॥
भोर भये ऊंचे गोहरायो । हित हरिवंशहि नाम सुनायो॥
राधारमण उपासक भाष्यो । भूपति सुनतमिलनअभिलाष्यो॥

दोहा—चेरी दियो कटाय द्रुत, दियो लूट मँगवाय ।
धन दै अति सत्कार करि, दीन्ह्यो घरहि पठाय॥२॥
साहु आय वृंदावनै, हित हरिवंश समीप ।
शिष्य भयो वर्णन कियो, नरवाहनै महीप ॥ ३ ॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रिषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६३ ॥

अथचतुर्भुजदासकी कथा ॥

दोहा—कहूं चतुर्भुज दासको, यह अनुपम परबंध ।
श्रोता सुनहु सुजान सब, जानि कृष्ण सम्बंध ॥ १ ॥

रह्यो शिष्य हरिवंशको, भजन करै दिन राति ।
राधारमण उपासना, प्रेम मग्न सब भांति ॥ २ ॥
भक्त चरण रज शिर धरै, करै सदा सत्संग ।
रहैं भक्त येते सदा,दास चतुर्भुज संग ॥ ३ ॥

कवित्त—वर्द्धमान गंगलजी नारायण भट्ट सीवा त्यो अधारजी आशाधर देवराजहै॥कढि हरियादास सोभूराम ऊदाराम रामदास विमलानंदजी रामराजहै ॥ श्यामदास सीहादास दलूदास पद्म-दास मनोरथ जा रणदास चाचाराम भ्राजहै॥ तैसहीं गुरू सवाई चांदनदास नापादास लक्ष्मण नफरदास सूर्य्यदास छाजहै॥१॥ कुंभदास खेमदास वैरागी भावनदास विरही भरत हरकेशजी नफरदास ॥ लुटेरादास हरि अयोध्यादास चक्रपाणि त्यों त्रि-लोकदास पुषरदीराम विजुलीदास ॥ उद्धवदास सोमदासभीम-दास सोमनाथ विकोदास विशाखाजी गणेश त्यों मुकुंददास ॥ त्रिविक्रमजी रघुदास वाल्मीकि जगादास झांझूराम हरिभूराम हरिदास वृद्ध व्यास ॥ २ ॥ लाखाराम छीतदास कपूरदास दे-वानंद नरहरिजी मुकुंददास हरिदास संतराम ॥ नंददास वि-ष्णुदास छीतमदास द्वारकादास माधोदास माडदास रूपादास अभिराम॥दामोदरदास नरहरि भगवानदास बालदास कान्हदास केशवदास हतकाम॥ प्रागत्यो गोपालदास लोहँगत्यो केशवजी हरिनाथ भीमदास बालकृष्ण मतिधाम ॥ ३ ॥

दोहा—ब्रह्मदास विद्यापतिहुँ,तैसहि भरत मुकुंद ।
दास बहोरन चतुरपुनि, दास गोविंद गोविंद ॥ ४ ॥
तथा विहारीदास पुनि, गंगादास दयाल ।
लालदास भीषमपरम, येते भक्त विशाल ॥ ५ ॥

हरि पद प्रेम मगन सब संता । दास चतुर्भुज संग वसंता ॥

संत मंडली संग सोहाये। कबहुँ गोडवाने प्रभु आये ॥
तहँ जन मनुज मारि बलि देहीं। वाम उपासक प्रेत सनेही ॥
इनको परचो जाय जब डेरा। बलि हित लैगे सुत द्विजकेरा॥
तासु मातु रोवत अति धाई। गिरी चतुर्भुज पद बिलखाई॥
बलिहित मोर पुत्र लेजाहीं। त्राहि त्राहि बरजौ इनकाहीं ॥
ते शठ सकल बजावत बाजे। लै गवने द्विजसुत बलि काजे॥
देखि चतुर्भुज दाया आई। कह्यो सोच मति करु तैं माई॥
चले आप लै संत समाजा। गे मंदिरमहँ वारण काजा ॥
कह्यो मोहिं बलि तुम दैदेहू। भूसुर सुवन पठावहु गेहू ॥
ते खल संत वचन नहिं माने। बालक को बलिदेन तुराने ॥
तबहिं संतमंडल लै साथा। गह्यो आय देवीको हाथा ॥

दोहा—दास चतुर्भुज तेजको, सहि न सकी सो देवि।
उचटि शिला बाहिर परी, मनहुँ पषानरकेवि ॥ ६ ॥

जे बलि देन हेतु शिशु लाये। ते सब गिरे मूर्च्छि भय पाये ॥
देवी कन्या वपु धरि आई। दास चतुर्भुज पद शिरनाई ॥
दास चतुर्भुज दिय गलमाला। ऊर्ध्वपुंड्र दै भाल विशाला ॥
देवीको दीन्ह्यो उपदेशा। रहैं दुष्ट अब नहिं यहि देशा ॥
जो खलभूप भाजि घर आयो। ताको देवी स्वप्न देखायो ॥
शिष्य चतुर्भुजके सब होहू। नातो मैं हनिहौं करि कोहू ॥
राजा प्रजा भोर उठि आये। दास चतुर्भुज पद शिरनाये॥
कीन्ह्यो शिष्य चतुर्भुजदासा। भयो राज्य भर भक्ति प्रकाशा॥
हरी कथा यक दिन कहुँ होती। श्रोता सुनहिं भक्ति रस सोती ॥
एक साहु धन चोर चोराये। दौरे भट तब चोर पराये ॥
बचत न जानि चोर भय पाई। कथा समाजहि रह्यो लुकाई ॥
कथा कढ़ी यह तहां पुराना। मंत्रहि लेत जन्म भो आना ॥

दोहा–यह सुनि चोर तुरंतही, मुद्रा दियो पचास।
भयो शिष्य कंठी लियो, तिलकहु दिय सहुलास॥७॥
पाछे साहु सिपाही आये। चोर चोर कहि ताहि बताये॥
चोर कह्यो मैं अहौं न चोरा। ह्वैगो तुम्हें सबनको भोरा॥
कह्यो सिपाही अबहिं चोराई। इतै भागि अब कह शिरनाई॥
चोर कह्यो तब करि बरजोरी। जो यहि जन्म कियों मैं चोरी॥
तो गोला दै मैं जरिजाऊं। तब यह परचो भूप घर न्याऊं॥
राजा लियो चोरसों गोला। गोला देत चोर अस बोला॥
जो यहि जन्म कियों मैं चोरी। दहै दहन तौ मोरि गदोरी॥
अस कहि सो गोला दै सूझ्यो। साहुसिपाही सों द्रुत बूझ्यो॥
वृथा साहुको चोर बनायो। अस कहि तिनको कैद करायो॥
यह देखहु सत्संग प्रभाऊ। तुरत चोरको साहु बनाऊ॥
फलीभूत होतो विश्वासा तहँ अस तुलसीदास प्रकाशा॥
कौनिहुँ सिद्धि कि विन विश्वासा। विन हरिभजनकि भवभय नाशा
दोहा–अपने हाथन दै हथा, तिय पूजहिं लखि भीति।
सफल फलै मन कामना, तुलसी प्रेम प्रतीति॥ ८॥
नृपति सिपाहिन पै अनखाई। कह्यो अहै यह मम गुरुभाई॥
ताको चाह्यो चोर बनावन। ताते लायक सूरी पावन॥
तब सो चोर कह्यो अस रोई। शूरी नाथ इन्हैं नहिं होई॥
सही साहु सम्पति मैं चोरयो। अस कहि सिगरी द्रव्य बहोरयो॥
यह जानहु सब संत प्रभाऊ। रह्यो न मोर बचब जग काऊ॥
संत प्रभाव देखि सो राजा। तजि जग मिलिगो संत समाजा॥
कछु दिन तहां चतुर्भुज दासा। संत सहित किय सुखित निवासा
गवने तहँते माँगि विदाई। कछुक दूरि आये हरिध्याई॥
अधपक चना रहे यक खेतू। संत उखारयो भोजन हेतू॥

दौरि रक्षकन लियो छोड़ाई । गारी दीन्हें भीति देखाई ॥
बहुरि खेत निज पेखत भयऊ । ढेला भरि खेतहि रहिगयऊ ॥
गहे चतुर्भुज दासहि चरणा । तब प्रसन्नह्वै प्रभु अस वरणा ॥

दोहा—करहु संत सेवन सदा, होई नहिं कछु हानि ।
लखे जाय खेती निजै, प्रथमहुँते अधिकानि ॥ ९ ॥
आयचतुर्भुजदास ढिग, भये शिष्य लै मंत्र ।
किये संत सेवन सकल, रहे न जग परतंत्र ॥ १० ॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेचतुः षष्टितमोऽध्यायः ॥ ६४ ॥

अथ अंगदसिंहकी कथा ॥

दोहा—कहौं विचित्र चरित्र मैं, सुनिये संत उदार ।
कीन्ह्यो अंगद सिंह ज्यों, जगमे राजकुमार ॥ १ ॥

नाभाकीछप्पय—नगअमोल यक आहि ताहिको भूपतियाँचै॥
साम दाम बहु करै दासनाहिन मनकाँचै ॥
एक समय शंकट में परि पानी महँ डारयो॥
प्रभू तिहारीवस्तु वदनते नाम उचारयो ॥
पांच दोह शतकोशते,हरि हीरालै उर धरयौ
अभिलाषभक्तअंगदकोपुरुषोत्तमपूरणकरयो१॥

दोहा—रह्यो सैनगढ़ एक कहुँ,तहँको अंगद वासि ।
दीन सलाह सुनाम जेहि, तहँको भूप हुलासि ॥ २ ॥

अंगदसिंह रहे नृप काका । रही दुहुँनकी प्रीति पताका॥
अंगद रह्यो विषय आधीना । तासु नारि हरिभक्त प्रवीना ॥
यक दिन तियके गुरु घर आये। सोसत्कारयो अतिचितचाये॥
गुरु चेली यक दिन एकांता । बैठ रहे वर्णत वेदांता ॥

अंगद आय गयो तेहिं काला। लखियकांत किय कोपकराला॥
गुरुविमनस ह्वै भवनहिं गयऊ। तिय कीन्ह्यो व्रत अंबु नलयऊ॥
अंगद निशिमहँ जाय मनायो। तब तियपतिकहँशपथकरायो॥
पद परि जो गुरु ल्याउ मनाई। करहु साधु सेवनहु सदाई॥
तब राखिहैं कंत हम प्राना। नहिं पैहौ मम अयश निदाना॥
अंगदसिंह शपथ करिदीन्ह्यो। संतचरण सेवन सुख भीन्यो॥
सेवत संत भई मति विमला। छूटी विषय वासना सकला॥
बढ़ी कृष्ण दरशन अभिलाषा। यथा तृषित जल चहै वैशाषा॥

दोहा—भूप सलाह सुदीन पुर, चढ़्यो शाह यक काल।
भेज्यो सूबै सैन्य युत,तब बोल्यो महिपाल॥ ३॥

अंगद तुही जाहु रण काहीं। अंगद चल्यो शंक कछु नाहीं॥
कीन्ह्यो समर वीर परिपाटी। लीन्ह्यो सूबा की शिर काटी॥
तेहि टोपी महँ द्विति गंभीरा। लागे रहैं एक शत हीरा॥
बड़ो जवाहिर एक अमोला। अंगद ताहि तुरंतहि खोला॥
कह्यो मनहिमन हेजगदीशा। यह हीरा योगहि तुव शीशा॥
अस कहि सो हीरा घर राख्यो। और सबहिं भूपहिं देराख्यो॥
कछु दिनमें भूपति सुधि पाई। मांगन लग्यो पदिक बरियाई॥
सो हीरा अंगद नहिं दीन्ह्यो। तब भूपतिअमरषअतिकीन्ह्यो॥
अंगद प्रिय भगिनी कहँ बोली। कह्यो सकल आशयनिजखोली॥
जो अंगदहि गरल तैं दैहै। चारि ग्राम हमसों तै पैहै॥
ग्राम लोभवश भगिनि विकारी। अंगदको विष देन विचारी॥
गरल वलित रचि सकल रसोई। अंगद ढिग लैगै छल मोई॥

दोहा—तब अंगद भगवानको, दीन्ह्यो भोग लगाय॥
सँग भोजन हित भगिनिके,तनय लियो बोलवाय॥४॥

भगिनि कह्यो सो आजु न ऐहै। काज विवश घरही महँ खैहै॥

तब अंगद भनेजके नेहा। अश्रुपात सींच्यो सब देहा॥
तब भगिनी लखि अंगद प्रीती। धिकधिककहनिजमानिअनीती
चली भगिनि लै थार उठाई। अंगद कह कत चली पराई॥
तब भगिनी सब कह्यो हवाला। जौन प्रबंधरच्यो महिपाला॥
तब अंगद भगिनी पर कोपी। हरिप्रसाद गुणि भोजन चोपी॥
प्रथमहि तू कत म्वहिं न बुझायो। विषयुत मैं हरि भोग लगायो॥
अबतौ तजौं न हरि परसादा। जात महाप्रसाद मर्यादा॥
अस कहि दै कोठरी केंवारा। विषयुत भोजनकियो अहारा॥
हरिप्रताप विष ताहि न लाग्यो। तनुते और रोगगण भाग्यो॥
भूपतिहूं यह सुन्यो हवाला। तदपितज्योनहिंकुमतिकराला॥
अंगद हरि विमुखी नृप जानी। पुरी गमनहित मतिहुलसानी॥

दोहा–जगन्नाथ अर्पण हितै,लै हीरा निज पास।
अंगद कियो पयान द्रुत,सुमिरत रमानिवास॥ ८॥

कोस द्वैक पुरते कढ़ि गयऊ। यह सुधि भूपति पावत भयऊ॥
तब अंगद पर फौज पठाई। लावहु हीरा तुरत छड़ाई॥
अंगद करत रहैं हरि पूजा। घेर्‌यो फ़ौज रह्यो नहिं दूजा॥
करे पुकारि सबै दलवारे। प्राण जात अब तुरत तिहारे॥
नातो हीरा देहु नरेशै। शिर काटन नृप दियोनिदेशै॥
तब अंगद हीरा लैहाथा। बोले वचन सुनहु जगनाथा॥
यह हीरा हम तुमहिं चढ़ावैं। तुम्हरे निकट न आवन पावैं॥
अस कहि जय जगदीश उचारी। दियो फेंकि गंभीरहि वारी॥
सैनिक हीरा फेंकत देखे। अति अचरज मनमहँ सब लेखे॥
नृपहि जाय वृत्तांत सुनाये। राजहु तुरत दौरि तहँ आये॥
सर कटाय तहँ जाल फेंकाई। कंकर कंकर प्रति हेरवाई॥
हारि गयो हीरा नहिं पायो। तब अंगदको हरि स्वप्नायो॥

जो अरप्यो मेरे हित प्यारे । सो हीरा हिय हार हमारे ॥
दोहा—आवहु नीलाचल तुरत,मोर दरश करि लेहु ॥
संत समाज विराजिकै, करहु अपूरुव नेहु ॥ ६ ॥
अंगद सुखित पुरी कहँ गयऊ । हरि हिय हीरा हेरत भयऊ ॥
मानि महामुद संतन जोरी । पूज्यो हुलसि बहोरि बहोरी ॥
भूप सलाह दीन सुनि सिगरो । मान्योसकल मोहिं सों विगरो॥
पठै पुरीमहँ विप्र समाजा । बोल्यो अंगद मानि स्वकाजा ॥
आगूचलि अंगद कहँ ल्यायो । निज अपराधहि क्षमा करायो॥
आपहुलिय अंगद की रीती । कीन्ह्यो संत चरणमहँ प्रीती ॥
डौंडो पिटवायो निज देशा । सेवहि संत मनुष्य हमेशा ॥
राममयी भै सिगरी राजू । भजन लगे सादर यदुराजू ॥
अंगदको निज भवन टिकायो । निज घर तासु अधीन करायो॥
भूप विपुल मंदिर बनवायो । सदावर्त्त सब ठौर चलायो ॥
यह अंगद सत्संग प्रभाऊ । भयो अनन्य भक्त नृपराऊ ॥
नित प्रति संतन सेवन करहीं । संत चरण रज शीशहि धरहीं ॥
दोहा—पेखहु श्रोता सकल तुम,यह सत्संग प्रभाव ॥
अघी नृपति हरिजन भयो,लखि अंगदहि प्रभाव॥७॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचषष्टितमोध्यायः ॥ ६५ ॥

अथ चतुर्भुजकी कथा ॥

दोहा—भूप करौलीको रह्यो,नाम चतुर्भुज दास ॥
श्रोता सुनहु सप्रेम अब,तासु विमल इतिहास ॥ १ ॥
तामें नाभाकी छप्पय ॥
भक्त आगमन सुनत जाय सन्मुख सो धाई ॥

सदन आनि सत्कारि सदृश गोविंद बड़ाई ॥
पादप्रक्षालन स्वहथ राय रानी मन सांचे ॥
धूप दीप नैवेद्य बहुरि तिन आगे नाचे ॥
यह रीति करौलीधीशकी,तन मन धन आगे धरै ॥
चतुर्भुज नृपके भक्तकी कौन भूप सरवरि करै॥ १ ॥

दोहा—अपने पुरके चारि दिशि,योजन यक प्रयंत ॥
बैठ रहैं जनजात पथ,बोलि लैआवैं संत ॥२॥

राजा निज करसों पगधोई। करै संत सत्कार बड़ोई ॥
संत जौन मांगै सो पावै। लहि सत्कार और थल जावै॥
दास चतुर्भुज सुयश महाई। रह्यो सकल भूमंडल छाई ॥
सो यश सुनि जैपुरको राजा। कह्यो एक दिन मध्य समाजा॥
दासचतुर्भुज भक्त बड़ोई। देत अपात्र पात्र नहिं जोई ॥
तब यक पंडित कह्यो बखानी। अबै न तेहि आशय तुम जानी॥
तब भांड़हि पठयो नृपकेतू। रीति चतुर्भुज जानन हेतू ॥
संतवेष धरि भांड़ सिधारे। सुनत चतुर्भुज वेगि हँकारे ॥
पूछ्यो भूप जानि तिन संता। भांड़ वेष खुलिगयो तुरंता ॥
लगे बजावन करि निज गाने। तिनको भांड़ चतुर्भुज जाने ॥
संत वेष वश अति सन्मान्यो। दीन्ह्यो विपुल वित्त सन्मान्यो ॥
रत्न जड़ित डब्बा यक दीन्ह्यो।तेहिं अंतर कौड़ी यक कीन्ह्यो॥

दोहा—लै डब्बा कर भांड़ तब, जैपुर गये सिधारि।
डब्बा नृप आगे धर्‌यो, भरम्यो भूप निहारि ॥ ३ ॥

डब्बा युत रतन मुक्ताके। भीतर धरी काकनी ताके ॥
सोइ पंडित बोल्यो अस बानी। आशय लेहु तासु अस जानी॥
रत्न जड़ित डब्बा जो दीन्ह्यो। संत वेष सत्कारहि कीन्ह्यो ॥
जो वराटिका भीतर राख्यो। भांडन केरि पात्रता भाष्यो ॥

दास चतुर्भुजके मन आयो। सोउ परीक्षा हेत पठायो ॥
जैपुर नृप सुनि पंडित वानी। कह्यो सत्य तुम कह्यो बखानी ॥
आप करौलीको अब जाहू। सब वृत्तांत बूझि इत आहू ॥
सुनि पंडित अति आनँद माना। कियो चतुर्भुज निकट पयाना ॥
द्वार खड़ो जाहिर करवायो। राजा सादर ताहि बोलायो ॥
पंडित तहां लखी यह रीती। बँधीरहै द्वै घटिका नीती ॥
घटी बँधी यक रहै रामकी। तामें सुधि कोउ करन कामकी ॥
घटी कामकी जब पुनि आवै। तामें सब निज काम चलावै ॥

दोहा—सुवा सारिका द्वै रहैं, ते बोलैं अस वानि।
सो दोऊ दोहा इतै, मैं अब करहुँ बखानि ॥ २ ॥
राम कहे सबको भलो, और कहे दुख होय।
दुर्लभ मानुष जन्मको, डारु वृथा कत खोय ॥ ३ ॥
सभा चतुर्भुज भूपकी, उठन लगै जेहिं काल।
तब दोऊ शुक सारिका, बोलैं वचन रसाल ॥ ४ ॥
जपौ रामको नाम नृप, वृथा जन्म नहिं जाय।
नारि नयन शर लागतै, ज्ञान विराग नशाय ॥ ५ ॥

यह चरित्र पंडित जब देख्यो। अचरज तासु रीति मन लेख्यो
विदा होन लाग्यो द्विजराई। मांग्यो नृप सों सुवा विदाई ॥
राजा सादर शुक दैडारयो। लै पंडित जैपुरहि सिधारयो ॥
दास चतुर्भुज की सब रीती। कीर कहै गो संयुत प्रीती ॥
सकल सभासद तौन सभामा। कहत रहे कोऊ नहिं रामा ॥
कहैं परस्पर विषयी बाता। कोहुको नहिं परलोक देखाता ॥
पंडित कह्यो सुनहु महराजा। दास चतुर्भुज सुयश दराजा ॥
एक जीहसों कहि न सकतहों। धन्य धन्य तेहि जन्म भणतहों ॥
तब राजा अस वचन सुनायो। वरणो यथा देखि तुम आयो ॥

कह्यो विप्र पूंछ्यो शुक याहीं । राजा पूंछ्यो तेहिं क्षण माहीं ॥
वर्णहु कीर चतुर्भुज रीती । तब शुक बोल्यो जानि अनीती ॥
दोहा–धिक् धिक् है तेरी सभा, धिक धिक् भूपति तोहिं ।
राम सुन्यो नाहिं काहु मुख,अचरज लाग्यो मोहिं॥६॥
पुनि पंडित ते शुक कह्यो, मोहिं सभा ते टारु ।
तहां न मैं यक क्षण रहौं, जहां न राम उचारु ॥७॥
दरबारी यमदूत सब, राज सत्य यमराज ।
ऐसी पातकिनी सभा, कहा मोर इतकाज ॥ ८॥
ऐसे सुनिकै शुक वचन, खुलि गे हिये केंवार ।
भूप करन लाग्यो भजन, कीन्ह्यो भक्ति प्रचार ॥९॥
सहित समाज दराज सब, जैपुरको महराज ।
गयो करौलीको तुरत, मिलन चतुर्भुज काज॥१०॥
मिल्यो चतुर्भुजको हुलसि, लहि उपदेश अखंड ।
सोइ रीति वर्तत भयो, छूटि गयो यमदंड ॥ ११ ॥
सकल चतुर्भुजकी कथा, जो इत करों प्रचार ।
ग्रंथ रामरसिकावली, होय अमित विस्तार ॥ १२ ॥
इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांक०उ०षट्षष्टितमोऽध्यायः॥६६॥

अथ पृथ्वीराजकी कथा॥

दोहा–वरणों सहित उछाह मैं, पृथ्वीराज कछवाह ।
कीन्ह्यो विमल चरित्र जो, जैपुरको नरनाह ॥१॥
पयहारीको शिष्य सुजाना । भयो महाभागवत प्रधाना ॥
करै साधु सेवन प्रति रोजू । आनै भवन साधु करि खोजू ॥
करै प्रीति युत गुरुसेवकाई । यहि विधि वीत्यो काल महाई ॥
इक दिन कह्यो नृपति पयहारी । जानि द्वारका सुमति हमारी ॥

राजा कह्यो चलहु लै मोहीं । जो प्रभु होहु मोहिं पर छोहीं ॥
गुरु कह भली बात नृप भाषा।तोहिं लै चलन मोर अभिलाषा॥
भई खबरि सब नगर मझारी । भूप जात द्वारका सिधारी ॥
तब मंत्री अतिशय दुख पायो । सपदि गुरूके निकट सिधायो॥
विनती किय प्रभु भूपति काहीं। नहिं लेवाय जैये सँगमाहीं ॥
जो राजा प्रभु तुव सँग जैहै । साधुनको सेवन नहिं ह्वैहै ॥
अधम देश यह राक्षस केरो । संतसेव तुव रचित घनेरो ॥
ऐसी सुनि मंत्रीकी वानी । गुरु स्वीकार कियो विज्ञानी ॥

दोहा—पृथ्वीराजको बोलिकै, भाष्यो गुरू बुझाय ।
इतै द्वारिका सकल फल, पैहौ वसौ बनाय ॥ २ ॥

विमनस ह्वै गुरु शासन मानी । रह्यो भूप निज पुरी विज्ञानी ॥
एकसमय निज रानी संगा । सोवत रह्यो भूप रति रंगा ॥
देख्यो स्वप्न प्रत्यक्ष तहांहीं । गयो द्वारका नगरी मांहीं ॥
करि मज्जन गोमतिके कूला । लियो छाप नृप युगभुज मूला॥
करि द्वारिकाधीशको दर्शन । आयो बहुरि पुरी नृप हर्षन ॥
जाग्यो नृप देख्यो सुख भूला । तनु मज्जित अंकितभुजमूला ॥
स्वप्न यथारथ भयो नरेशै । गुरु गमनत जस दियो निदेशै॥
संत महंत सबै जुरि आये । नृप चरित्र लखि अचरज गाये॥
यहि विधि भयो प्रथै कछवाहा। गढ़ आमेर धनी नरनाहा ॥
वैद्यनाथको यक द्विज गयऊ । पूरुब कबहुं अंध सो भयऊ ॥
धरन कियो द्वारे व्रत साता । कह्यो स्वप्नमहँ हर यह वाता ॥
भाग्य विवशते नेत्र विहीना । मैं नहिं सकों चक्षु तोहिं दीना॥

दोहा—शिव शासन सुनि विप्रसो, विलखान्यो नहिं मानि ।
नेत्र हेत शिव द्वारमें, पुनि बैठ्यो व्रत ठानि ॥ ३ ॥
सतयें व्रत शिव स्वप्नमें, भाष्यो द्विजहि बुझाय ।

तू आमेर धनी नृपति, पृथीराज पहँ जाय ॥ ४ ॥
पोंछित तासुशरीरको पटलै द्दगन लगाउ ॥
यदपि लिख्यो नहिं भागमें,तदपि नेत्र तैं पाउ ॥ ५ ॥
शिव शासन सुनि विप्र सो,गढ़ आमेर सिधारि ॥
पृथीराज तनुको सुपट,लियो आंखिनिज धारि ॥६॥
रह्यो जन्मको अंध द्विज,अंबक लह्यो विशाल ॥
और चरित्र विचित्रहै,पृथ्वीराज भूपाल ॥७॥
जब आमेर धनी नृपति,पृथ्वीराज कछवाह ॥
त्याग्यो तब तनु भासअति, देख परचो नभ माह॥८॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडे उत्तरार्द्धसप्तषष्टितमोऽध्यायः ॥ ६७ ॥

अथ मधुकरशाहकी कथा॥

दोहा–मधुकर शाह महीप यक,नगर ओडछेमाहिं ।
भयो संत सेवी विमल,कहौं चरित सब पाहिं ॥ १ ॥

तासु नेम अस रह्यो विशेखै। संत जाति महँ भेद न देखै ॥
माला तिलक देखि सत्कारै। करि पूजन षोडशोपचारै ॥
भवन मध्य भोजन करवाई। निज शिरमहँ चरणोदक नाई ॥
भूपति मधुकरकी अस रीती। चलि आई बहुकाल सप्रीती ॥
प्रगट्यो यश नृपको नवखंडा। भूप भागवत महाउदंडा ॥
समय एक मिलि धूर्तन चारी। लेन परीक्षा करी तयारी ॥
एक रोज बहु रजक बोलाई। साधु वेष तनु दियो बनाई ॥
खरगर करि तुलसीकर माला। ऊर्ध्व पुंड्र दियो भाल रसाला॥
यहि विधि रजकन स्वांग बनाई। दियो भूप दरबार पठाई ॥
देखत भूप साधु मनमानी। आगे चलि अतिशय सन्मानी ॥

करि पूजन षोडशोपचारौ । धोयो निज कर खरपद चारौ ॥
दोहा-पुनि भोजन करवाय बहु, करि अतिशय सत्कार ।
जोरि पाणि बोल्यो वचन,धिक् धिक् भाग हमार॥२॥
भूतलमैं अबलौं मिले, द्वैपदके बहु संत ।
चारि चरणके आजुहीं, देख्यों संत लसंत ॥ ३ ॥
धरणीपतिकी मति विमल, देखि पाय सत्संग ।
तजे रजोगुण रजक सब, रँगे रामके रंग ॥ ४ ॥
परि पुहुमीपतिके चरण, भवन भूति सब त्यागि ॥
गही अनन्य उपासना, ज्ञाननिशामहँ जागि ॥ ५ ॥
त्यागन लग्यो शरीर जब, मधुकर अति मतिधीर ।
लखि संतनकी भीरसब, गगन प्रकाश गँभीर ॥ ६ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेअष्टषाष्टितमोऽध्यायः६८।

अथ रामराजाकी कथा ॥

दोहा-दक्षिण दिशिके देशमें, रसिक शिरोमणि भूप ।
भये रामराजा कहूं, तासु चारित्र अनूप ॥ १ ॥
कवित्त-रसिक समाज जोरि रोजही विरचि रास,राम रसरंग रँगि राजा लखै रासको ॥ एक दिन रासहीमें राजा लख्यो राम-रूप, पर साकेतमें जो सोहै दिव्य भासको ॥ अर्पण विचारि अर्प्यौ आपनी सुकन्या काहिं, मान्यो नहिं प्रेम छाकि लोकलाज नाशको ॥ रघुराज संतन समाज जुरि राजसुता, दीन्ह्योवास संपतिदै ताहीके अवासको ॥ १ ॥
इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
एकोनसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ६९ ॥

अथ रामराजाकेराणीकी कथा ॥

दोहा—जासु रामराजा चरित, वरण्यो विराचि कवित्त ॥
कहौं तासु रानी चरित,संत चरण रत चित्त ॥ १ ॥

कवित्त—सोई रामराजा एक समय मथुराकोआय,संतन समाज जोरि कीन्ह्यो सत्कारहै।जौन द्रव्य लायो सो लगायो संतविप्रनमें,जैहै कैसे भौन अब कीन्ह्यो सो विचारहै । पंचशत मोहरके चूड़ा खोलि रानी दियो ताही समै आये नाभा परम उदार है ॥ चूड़ा तासु कर पहिरायकै निहारचो छबि, भूपजाय भौन भेज्यो धनं जो उदारहै ॥ १ ॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७० ॥

अथ कूवाजीकी कथा ॥

दोहा—अब कूवाजी को कहौं, अति सुंदर इतिहास ।
जाहि सुनत सब संतजन, मानत हिये हुलास ॥ १ ॥

छंद—यक रह्यो कूवा नाम हरिजन जाति तासु कुम्हारकी ।
सो भयो भक्त प्रधान ह्वैमति संतके सतकारकी ॥
जो होय रूखो सूखघर सो संतजनन खवायकै ।
पुनि करै भोजन आप संतन चरण जल शिर नायकै १
यक दिवस घर कछु रह्यो नहिं तब गयो लेन उधारहै॥
यक वणिक बोल्यो कूप खनतौ पाउ वित्त अपारहै ॥
सो मानि लाग्यो खनन कूपहि पाय धन घर लायकै ॥
सब साधुजनन खवाय मान्यो वृत्ति भली बनायकै ॥
कूप भयो गंभीर यक दिन, सकल मांटी धसिगई ॥
सब लोक जान्यो मरचो कूवा वणिककी निंदा भई॥२॥

षड् मास बीते जाय कोउ तहँ राम धुनि सुनि जकिरह्यो
पुनि आय पुरजन सो सकल जो सुन्यो कौतुक सोकह्यो
जन जाय सब खानि मृत्तिका कूवैं लख्यो बैठो तहां।
तेहिं ऐंचिकै बाहरकियो माच्यो कोलाहल पुर महा३॥
मुख राम धुनि लागी रही पूजाचढ़ी धन भूरिहै।
सो सकल धन दै घर गयो मुनि संत सेवा पूरिहै।
बहु भांति संत खवाय करि सतकार वस्यो निवासमें॥
यक समैं आये संत कोउ राख्यो सप्रेम अवासमें॥४॥
यक संतके ढिग निरखि बालमुकुंद मूर्ति मनोहरी।
जो होत हमरेहु पूजते अभिलाष अस कूवा करी॥
जब संत लागे चलन बालकुकुंद लगे उठावने।
तब उठे बालमुकुंद नाहिं संतहु लगे पछितावने॥५॥
कूवा कह्यो ये चहत मेरे घर रहन भगवानहैं।
जो कहौ महीं उठाय निज घर जाहुँतो परमानहै।
तब संतकह्यो उठायलीजै लियो कूवा दौरिकै॥
निज भवनमें पधराय पूज्यो साविधि चंदनखौरिकै॥६॥
तब संत अमरष भरे वरवश लगे जाय उठावने॥
तिल भरि तज्यो नाहिं भूमि बालमुकुंदपतितनपावने॥
तब संत कूवै दियो ठाकुर आप मारगको लिये॥
कूवा हिये हर्षत द्दगन वर्षत सलिल पूजन किये॥७॥
प्रभु नाम राख्योजान राम सु वारितन मन को दिये॥
यकसमैं चाह्यो द्वारकाको गमन अंकन मन किये॥
प्रभु कह्यो सपने सुनहु कूवा छाप शंखहु चक्रकी॥
इतहीं लहैगो अवशि कत सहु विथा मारगवक्रकी॥८॥
पुनि गयो सपने द्वारका अंकित भयो हरि छापते॥

सो प्रगट तन देखेपरे निरभै भयो यम तापते ॥
पुनि एक दिन देख्यो सपन गोमतीसागर संगमै ॥
कोऊ कृतघ्नी हाड़ डाऱ्यो टूटिगै धारा समै ॥ ९ ॥
अपनी सुमिरनी डारिदीन्ह्यो तुरतही धारा बढ़ी ॥
लै अस्थि सकल कृतघ्नके तारत सुजलनिधि ह्वैकढ़ी॥
इत भोर मुद्रित अंग लखि आये सुसंत अपारहै ॥
चारो वर्णभे शिष्य अगणित त्यागि दर्प विकारहै॥१०॥
इक दिवस कूवानारि भ्राता भवनमें आवत भयो ॥
ताही दिवस द्वै संत आये तिय हिये अति सुख छयो॥
तिय भ्रात हित पायस रची दिय सूख संतन भोजनै॥
कूवा निहारि विचारि अनुचित किययतन असतेहिछिनै
तियको पठायो भरन जल संतन खवायो खीरहै ॥
तिय आयलखि विपिरीत दियनिजनाकअँगुलिसचरिहै
कूवा गरेमेंराखि अँगुरी वचन कह्यो पुकारिहै ॥
यमराज जब गल काटिहै नहिं भ्रात तोर निवारिहै१२॥
पुनि जानि तियको संत विमुखी कियो त्याग तुरंतही॥
सो क्षुधावश चहुँदिशि फिरी तेहि दियो भोजन संतही॥
यहि भांति कूवाके चरित्र विचित्रकहँलों गाइये ॥
तजिकै कलेवर जाय कूवा कृष्णधाम सोहाइये ॥१३॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७१ ॥

अथ करमैतीकी कथा ॥

दोहा—करमैती बाई सुमति, तासु कथा विस्तार ॥
मैं वरणौं सुनिये सकल, श्रोता संत उदार ॥ १ ॥

शेखावत राजा रह्यो, रह्यो पुरोहित तास ॥
करमैती दुहिता रही,ताहीकी छविरास ॥ २ ॥
जैपुरके सो राज्यमें,नाम खडैला ग्राम ॥
उपरोहित दुहिता सहित,वस्यो तहां मतिधाम ॥ ३॥
तासु पिता व्याही सुतै,आयो जब पति लैन ॥
करमैती सोच्यो अतिहि,मिल्यो सकल चित चैन॥४॥
हाड़ चामको पति तजौं, होय मोर पति श्याम ॥
उतरौं भवनीरधि सहज,पूर होय मन काम ॥ ५ ॥

अस विचारि दुहिता अधराते । त्यागि भवन भागी बिलखाते ॥
नगर बाहिरे जाय विचारा । जन खोजिहैं होत भिनसारा ॥
केहि विधि बचों लोग नहिं पामें।भजौं अनन्य कंत गुनि श्यामैं॥
मृतक ऊंट यक परो निहारी । तासु उदर महँ छपी कुमारी ॥
मृतक ऊंट दुरगंध न मान्यो । जग दुर्गंध अधिक तेहिं जान्यो॥
भोर भये जन खोजन धाये । कतहुं न लखेदुखी फिरिआये ॥
कढ़ी ऊंट तनते दिन तीजे । चली प्रयाग श्यामरँग भीजे ॥
मज्जन करि तीरथपति माहीं । कछु दिन महँ पुनि गै व्रजकाहीं
वृंदावन वंशीवट ठामा । भजनलगी निजपति गुनिश्यामा॥
पिता तबै दुहिता सुधि पाई । आयो वृंदावन हरषाई ॥
कह्यो सुतापदमहँ शिर धारी । चलौ भवनकहँ आशु कुमारी ॥
कटति नाक होतो अपवादा । राखु सकल कुलकी मरयादा ॥

दोहा—उत्तर दियो कुमारिका,सो कवित्त प्रियदास ॥
विरच्यो सो यहि ग्रंथमें,मैं इत करौं प्रकास ॥ ६ ॥

कवित्त—कही तुम कटी नाक कटै जोपै होय कहूं,नाकएक भक्त नाक लोक मैं न पाइये ॥ वरष पचासकलों विषैहीमें वास कियो तऊना उदास भये चबेको चबाइये ॥ देखै सब भोग मैंन

देखे एक देखे श्याम ताते तजि काम तन सेवामें लगाइये॥ रातते ज्यों प्रात होत ऐसे तम जात भयो दयो लै सरूप प्रभु गयो हिय आइये॥ १॥

दोहा—काल सरिस जानहु पिता, अति कराल जगजाल।
व्याल सरिस हालहि तजो, भजिये लाल गोपाल॥७॥

अस भाख्यो करमैती बाई। पिता सुनत जकि रह्यो बनाई॥
लागे वचन बाण सम हीमें। मान्यो अति गलानि निज जीमें॥
त्यागि भवन तजि जगकी आसा।कियोअचलतुलसी वनवासा॥
शेखावत नृप यह सुधि पाई। मान्यो विप्र गयो बौराई॥
व्रज यात्रा करिवेके हेतू। आयो व्रजहिं बांधि घरनेतू॥
करमैतीके निकट सिधारयो।विविधि जतन करि वचन उचारयो
जस पितुको दीन्ह्यो उपदेशा। तैसहि दीन्ह्यो नृपहिं निदेशा॥
नृपहु तासु सत्संगति पाई। खुलिगे हिये कपाट बनाई॥
लौटि आपने सदन सिधारा। ध्यावन लाग्यो नंदकुमारा॥
फेरयो सिगरी राज्य निदेशा। करै भजन सब सरति रमेशा॥
भजनानंद मँगन भूपाला। छूटि गई यमभीति कराला॥
भे हरि भक्त प्रजा तेहि केरे। रहे न लेश कलेश घनेरे॥

दोहा—करमैती बाई चरित, यहि विधि गुनहु अनंत।
लिख्यो न इत विस्तार वश, क्षमिये आगस संत॥८॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
द्वासप्ततितमोऽध्यायः॥ ७२॥

अथ उभय कुमारिनकी कथा॥

दोहा—एक भूपकी कन्यका, जमींदारकी एक।
उभै कुमारिनको चरित, वरणौं सहित विवेक॥ १॥

जमींदारकी एक कुमारी। भूपतिकी तिमि एक दुलारी ॥
रहैं एक गुरुके शिषि दोई। वसैं भवनमें अति मुदमोई ॥
जवहरिको गुरु पूजन करहीं। तब आपहु लखि अस उच्चरहीं॥
शालग्राम ह॰ कहँ देहू। हम पूजहिंगी सहित सनेहू ॥
गुरु न देय तब दोउ अति रोवैं।ह्वै अति दीन गुरू मुख जोवैं॥
यक दिन पूजन हेत कुमारी। गुरुसों कियो उपद्रव भारी ॥
तब गुरु लै द्वै पंथ पषाना। धरचो मध्य पूजन अविधाना ॥
पूजि पषाणहि प्रभुके संगा। सुता न जान्यो यह परसंगा ॥
जब मांग्यो पुनि आय कुमारी। दुहुँन दियो अस वचन उचारी॥
ये ठाकुर शिलपिल्ले नामा। पूजहु तुम पूजी मन कामा ॥
दोई दुहिता ठाकुर मानी। लै पषाण गमनीं रतिसानी ॥
निज निज घर लै पूजन करहीं। भोग लगाय अन्न मुख धरहीं॥

दोहा—जिमींदारकी कन्यका, तासु रहे द्वै भाय।
आपुसमें झगरो कियो, परचो डाकघर आय॥ २ ॥

लूटि लई संपति घर केरी। धरचो जाय निज भवन घनेरी ॥
शिलपिल्लेहु गे साजुहि संगा। तब कुमारिका करि सुख भंगा ॥
कीन्ह्यो व्रत भाई समझायो। तदपि न याके मन कछु आयो॥
जब वोई ठाकुर हम पैहैं। भोजन पान तबै मुख दैहैं ॥
भाई कह्यो जाहि लै आवै। तेरो ठाकुर कौन चोरावै ॥
तब कन्या चलि हेरन लागी। मिले न ठाकुर अति दुख पागी॥
तब गोहरायो हे शिलपिल्ले। गये कहां तुम मोहिं न मिल्ले ॥
आरत वचन सुनत भगवाना। शुद्धभाव कन्या कर जाना ॥
भे पषाण ते प्रगट मुरारी। कूदिपरे तेहिं गोद कुमारी ॥
शिलपिल्ले पषाण ते नाथा। प्रगटे मुरलि लकुट धरि हाथा ॥
तुलसीदास कह्यो चौपाई। सो मैं कहत प्रसंगहि पाई ॥

हरिव्यापक सर्वत्र समाना । प्रेम ते प्रगट होत भगवाना ॥
दोहा—प्रगट पाय यदुनाथको, कन्या तजि संसार ।
रानी षोडश सह में, मिली जाय तेहिं वार ॥३॥
भूपसुता शिलपिछे लक । पूजन लगी प्रेम अति कैके ॥
बीत्यो कछुक काल सउछाहा । भूप सुताकर भयो विवाहा ॥
भूपसुता करभई विदाई । राजपुत्र लै चल्यो लेवाई ॥
पंथमाहँ इक कूप निहारा । तहँ पालकी धराय कुमारा ॥
राजसुता सो प्रेमहिं सानी । राजपुत्र कह कोमल वानी ॥
मैं तुववश मिलिये मोंहिं प्यारी । राजसुता तब गिरा उचारी ॥
हरि विमुखी तुम कंत हमारे । ताते छुओं न अंग तिहारे ॥
जो हरिदास होहु मम प्यारे । तौ हरिपूजहु सरिस हमारे ॥
अस कहि झपलैया देखरायो । शिलपिछेको दरश करायो ॥
सो जादू विचारि सुत भूपा । फेंक्यो झपलैयाको कूपा ॥
तेहि क्षणते सो राजकुमारी । छोंड़िदियो भोजन अरु वारी ॥
गई ससुरगृह लंघन कीन्हें । सासु ताहि बोधन बहु दीन्हे ॥
दोहा—तदपि न भोजन वारि मुख, दीन्ह्यो राजकुमारि ॥
अति सोचत परिवार सब, गे तेहिं कूप सिधारि ॥४॥
राजसुता लखि दूरिते, तौन कूप दुख धारि ।
गोहरायो आरत वचन, शिलपिछे गिरिधारि ॥ ५ ॥
मिलहु मोंहिं अब दौरिकै, दयासिंधु भगवान ।
तुव दरशन विन दासिका, तजन चहाति अब प्रान ॥
राजसुता आरत वचन, सुनताहि हरि अतुराय ।
निकसि कूपते गोदतेहिं, बैठिगये प्रभु आय ॥ ७ ॥
शिलपिछे पाषाणते, प्रगट्यो कमलाकंत ।
राजसुताके कंतभे, प्रेम विवश भगवंत ॥ ८ ॥

राजसुता श्रीरुक्मिणी, रमण पाय रमणीय।
तजि संसार अपार दुख, लई मुक्ति कमनीय॥ ९॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउ०त्रयः
सप्ततितमोऽध्यायः॥ ७३॥

अथ एक राजकन्याकी कथा॥

दोहा—एक राजकन्या चरित, अब वरणौं हरषाय।
जो संतन विश्वासते, लीन्ह्यो पुत्र जिआय॥ १॥

रही राजदुहिता जहँ व्याही। रहैं ते हरिविमुखी जन दाही॥
केहि विधि निबहै धर्म हमारा। राजसुता किय महाखँभारा॥
रहै पुत्र इक राजसुताके। दीन्ह्यो तेहि विष अति सुख छाके॥
जब मरिगयो नरेश कुमारा। पुरमहँ माच्यो हाहाकारा॥
दासीको तब तुरत पठाई। संत समाज खोजि सो आई॥
बंधुन कह्यो संतजन आनै। ते सब कहे संत नहिं जानै॥
धौं औषधि धौं मंत्रहु संता। धौं अकाश धौं धरणि वसंता॥
तब दासी सँग बंधु पठाई। लीन्ह्यो संत समाज बोलाई॥
वंद्यो शिर भरि राजकुमारी। जोरि पाणि अस गिरा उचारी॥
जो मम सत्य संत विश्वासा। तौ यह पुत्र जिये अनयासा॥
अस कहि संतनको पग धोई। डारयो पुत्र वदन हरि जोई॥
सोवत इव सुत उठ्यो तुरंता। जयजयकार कियो सब संता॥

दोहा—संतन पर विश्वास लखि, पुरजन युत सब देश।
साधुनको पूजन लगे, कीन्ह्यो भक्ति रमेश॥ २॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेचतुः
सप्ततितमोऽध्यायः॥ ७४॥

अथ दयाबाईकी कथा॥

दोहा—रही दयाबाई कोई, कृष्ण सनेही सत्य।
तासु कथा वर्णन करौं, रँगे प्रेम चित नित्य॥ १॥

पति गमन्यो कहुँ तीरथ हेतू। नारि अकेले रही निकेतू॥
तीरथ करत करत पतिताको। आयो बहु दिनमें मथुराको॥
पुनि बलदेव दरशहित आयो। जेहिंनिशि शयनकियो सुखछायो॥
तेहि दिन ताके गृह अस भयऊ। ताके सदन संत कोउ गयऊ॥
माघ मास अति शीत दुखारी। कांपत तन सो परचो ओसारी॥
देखि दया बाई करि दाया। रज्जु डारि तेहिं उपर चढ़ाया॥
अग्नि तपाय वोढ़ाय रजाई। ऊपरते पुनि लियो दबाई॥
गई अटारी तब कोउ नारी। दशा देखि सो कह्यो पुकारी॥
मनुज दयाबाई सँग लीन्हें। सोवतिहै कुरीति अति कीन्हें॥
दौरि सबै दोहुन गहिलीन्हें। फेरि एक कोठरी महँ कीन्हें॥
वृद्ध कहे तब सबै विचारी। जब ऐहै यहिं कंत सिधारी॥
यथायोग्य देहै तब दंडा। हम न लेब यह अयश अखंडा॥

दोहा—अस कहि राख्यो दुहँनको,एक कोठरी डारि॥
असमंजस मान्यो महा, टोलाके नर नारि॥ २॥
जा निशि भयो हेवाल यह, ता निशि हलधर राय॥
दियो स्वप्न तेहि कंतको, तू अब घरको जाय॥ ३॥
संत वेष धरि हम गये, तुव गृहनीके गेह॥
सो कीन्ह्यो सत्कार अति, नहीं हमारे नेह॥ ४॥
असमंजसमाने महा, तोर सकल परिवार॥
मोहिं और तुव नारिको, राख्यो धांधि अगार॥ ५॥
भोर जानि सो भवनको, चल्यो तुरत अकुलाय॥
भवन आय देखी दशा, सांचो सपन गनाय॥ ६॥

पूजि दयाबाई चरण, सहित सकल परिवार ॥
संतहुको कीन्हों बिदा, करि अतिशय सत्कार ॥ ७ ॥
इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
पंचसप्ततितमोध्यायः ॥ ७५ ॥

अथ गंगाबाईकी कथा ॥

दोहा—गंगाबाईकी कथा, अब वर्णौं चितलाय ॥
जाहि सुनत गुरुवचनमें, अति विश्वास दृढ़ाय ॥१॥
गंगाबाई भै हरिदासी । हरिकी कथा माहँ विश्वासी ॥
गुरुको परमेश्वर करि जानै । गुरुके वचन मृषा नहिं मानै ॥
एकसमय पति गयो लेवावन । सो गवनी समीप गुरुपावन ॥
विदा होत गुरु दियो अशीशा । जिये कंत तुव असी वरीशा ॥
चल्यो कंत लै गंगाबाई । मारग मध्य विपिन अधिकाई ॥
तहँ ठग आइ लूटि धनलीन्ह्यो।ता पतिको विन प्राणहिं कीन्ह्यो॥
तब अति बिलखित गंगाबाई । रोवनलागी वचन सुनाई ॥
पतिको मरण सोच नहिं मोरे । जिये मरे जग मनुज करोरे ॥
गुरु कह असी वरस पति जीहै। होत मृषा सो सोच अतीहै ॥
नारायण तुम हौ केहिं ठोरा । करहु सत्य गुरु कह्यो जो मोरा॥
जो गुरुवचन मोर विश्वासू । तौ जीहै पति यहि क्षण आसू ॥
अबलौं नहिं यदुनाथ लुकाना। करिहै मृषा न वेद प्रमाना ॥
दोहा—गंगाकी आरत गिरा, गुरुके वचन निहोर ॥
गज रक्षक रक्षक जनन, प्रगट्यो नंदकिशोर ॥ २ ॥
गंगाबाई कंतको,दियो जियाइ तुरंत ॥
अंतरहित ह्वैजातभे, कमलाकर भगवंत ॥ ३ ॥
इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
षट्सप्ततितमोध्यायः ॥ ७६ ॥

अथ एकरानीकी कथा ॥

दोहा–इक रानीको चरित अब, सुनिये श्रोता संत ॥
संतन हित जो सुत हन्यो, पुनि ज्यायो भगवंत॥१॥

एक भूप अति संतन सेवी । जानै और देव नहिं देवी ॥
आई इक दिन संत समाजा । राजा किय सत्कार दराजा ॥
कियो महंत संत सत्संगा । विचरत नित नव भक्ति प्रसंगा ॥
चलन चहै महंत जेहिं काला । तबहीं वारण करै भुवाला ॥
यहि विधि त्रिशत साठि दिन बीते । राजा नहिं सत्संगहि रीते ॥
तब महंत अतिशय अकुलाई । जान चह्यो तहँ ते बरिआई ॥
चलत महंत निरखि नरनाहा । अति विमनस इतभयो उछाहा॥
निशा जाय अंतःपुर माहीं । सो वृत्तांत कह्यो तियपाहीं ॥
जो महंत रहिहैं इत नाहीं । तौ नहिं प्राण रहै तन माहीं ॥
सुनि पति वचन मानि दुख रानी। अस उपाइ संतन हित ठानी ॥
संत पयानहि काल विचारी । दै विष डारयो सुतकहँ मारी ॥
हाहाकार मच्यो चहुँ ओरा । भयो भोर संतन कह भोरा ॥

दोहा–लेन खबरि इक संतको,पठयो राज निवेश ॥
पुत्र मरण सुनि संत सब, आय गये तेहिं देश ॥ २ ॥
मरयो राजसुत गरलवश, जानि महंत तुरंत ।
पूंछयो रानीसों सपदि, शपथ धरावत कंत ॥ ३ ॥
रानी कह तब गवन सुनि, जानि भूपको नाश ।
मैं मारयो सुत दै गरल, करै संत जेहिं वाश ॥ ४ ॥
सुनि महंतअचरज गुनत, जानि अलौकिक प्रीति ।
सुमिरयो श्रीयदुवंशमणि, वर्णत प्रभुकी रीति ॥५॥

सवैया–जोप्रभुभारतयुद्धमहा तेहिकेमधि टिट्टिभअंडबचायो

जो प्रभु देवकी सोचहि जानि मरे षटबाल तहाँ दरशायो ॥ जो गुरुको मृतपुत्र दियो हरि संत विनय सुनिकै सुख पायो॥ सो विधिको अपमान विचारिकै संतही हस्तते बालक ज्यायो ॥ १ ॥

दोहा—यही कवित्त बनायकै, पढ्यो महंत पुकारि।
अंतहपुरहि तुरंतही, बालक उठ्यो खँखारि ॥ ६ ॥
पुनि सब संतन बोलिकै, बोल्यो वचन महंत।
हमतो इत रहिहैं सदा, जाहु चहो जहँ संत ॥ ७ ॥
नृपति भवन वसि संतपति, करि हरि भजन अपार॥
पुरजन भूपति तिय सहित, किय वैकुंठ अगार ॥ ८ ॥

इति भक्तमालाश्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
सप्तसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७७ ॥

अथ हरिपालकी कथा ॥

दोहा—एक भक्त गाथा कहौं, नाम जासु हरिपाल।
संत सेव लखि प्रगटभे, जाको श्रीनँदलाल ॥ १ ॥

इक हरिपाल विप्र कोउ रहेऊ। साधुन सेव धर्म हठि गहेऊ ॥
जो कछु होय भवन सो लेवै। साधुनको खवाय नित देवै ॥
घरके तासु देखि अनरीती।कियो निनार त्यागि तेहिं प्रीती॥
सो विभागमें जो धन पायो। कछु दिनमें सब संत खवायो ॥
रहि नहिं गयो भवनधन जबहीं। चोरी करनलग्यो पुनि तबहीं॥
चोरी करिकै जो धन पावै। भवन बोलिकै संत खवावै ॥
भई बात जाहिर पुरमाहीं। चोरिहु किये मिलै धन नाहीं॥
एक दिवस हरिपाल दुवारा। उतरी संत समाज हजारा ॥
तिनहिं राखि चोरीहित धायो। मिल्यो न धन बहु घात लगायो
तासु रहै इक वाणि कठोरी। माल तिलक लखि करै न चोरी॥

मिल्यो न वित्त लौटि घर आयो।बाहिर भीतर बहुविधि धायो॥
मींजत हाथ बहुत पछिताता । छुट्यो नेम मम हाय विधाता ॥
दोहा—तब प्रभुको शंकटभयो, हँसे विकुंठ ठठाय ।
रमा मानि अचरज मनहिं, पूंछ्यो कछु मुसकाय॥२॥
नाथ कह्यो मम दासको, संत खवावन हेत ।
चोरिहु कीन्हे आजु तेहिं, लग्यो न संपति नेत॥
चलन परयो हमको तहां, भूषण पहिरि अमोल ।
हमहुँ चलब प्रभु संतके, रमा कह्यो अस बोल ॥ ३ ॥
धरिके साह स्वरूप प्रभु, भूषण पहिरि अनंत ।
दरवाजे हरिपालके, गये रमा भगवंत ॥ ४ ॥
बोले वचन पुकारिके, विपिन जो देइ नघाय ।
द्वैसै मुद्रा ताहि हम, देहैं तुरत गहाय ॥ ५ ॥
जेवर पहिरे वणिक लखि,मानि मोद हरिपाल ।
कह्यो वचन पहुँचाइहैं, कानन महाकराल ॥ ६ ॥
अस कहि दम्पति वणिक लै, गवन्यो वनकी ओर ।
मध्य विपिन बोलतभयो, लैकर दंड कठोर ॥ ७ ॥

कवित्त—भूषण उतारिदीजै कह्यो हरि जानदीजै, जानतुम्हें बिना भूषण उतारेना ॥ भूषणहूं लीजै नहिं जीव मोरलीजै कछू, दयारस भीजै चित्त दयातो हमारेना ॥ भूषण उतारिलेहु मुद्रिकाको छांड़ि देहु,बनिहै वणिक बिन मुद्रिका उतारेना॥प्रीति को निहारे नाहिं धीर उरधारे मिले, देवकी दुलारे तासु कर्मका विचारेना ॥ १ ॥

सोरठा—प्रगट भये भगवान,बहु बखानि हरिपालको ।
दीन्ह्यो ज्ञान विज्ञान, अंत समय मिलिहौ हमैं॥१॥

इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
अष्टसप्ततितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

अथ नंददासकी कथा ॥

दोहा—अब भाषहुँ श्रोता सुनहु, नंददास इतिहास ।
जाके हेतु जियाय दिय, वाछी रमानिवास ॥१॥

नंददास इक भक्त अनूपा । भयो जासु यश जगमहँ जूपा ॥
हरिको भयो अनन्य उपासी । रह्यो जगत कर तनक न आसी॥
रह्यो बरैली पुर तेहिं गेहा । नित नव नंद नँदनसों नेहा ॥
फैली सकल नगर प्रभुताई । पूजा देहिं मनुज सब आई ॥
रहेजे उपरोहित पुर माहीं । तिनको नीक लग्यो यह नाहीं ॥
सकल दुष्ट जुरि करी सलाहा । लगै कलंक ताहि जेहिं माहा ॥
यक निशि मृतक राखि यक वाछी। नंददास घरके कछु पाछी॥
डारि सबै खल भवन सिधारे । लगे पुकारन जगि भिनसारे॥
वाछी मिलै न आजु हमारी । कोउ कह नंद लकुटलै टारी ॥
अस कहि नंददास घर नेरे । आय सबै वाछी मृत हेरे ॥
लागे कहन पुकारि पुकारी । नंददास वाछी निशि मारी ॥
नंददास लखि मृषा कलंका । यदुपति बल मानी नहिं शंका ॥

दोहा—वाछीके ढिग जायकै, बोल्यो वचन पुकारि ।
दयासिंधु यदुवीर प्रभु, राखहु लाज हमारि ॥ २ ॥

कवित्त—दुष्टन दुष्टता जानि लई, तब वच्छ समीपहि आतुर आये॥ ध्याय रमापति को उर अंतर,हाथ दै वाछरी वेगि जिआये। देखो महामहिमा जनकी, विधि अंक ललाटके धोय बहाये। दासन रीति विचारि विरंचिहु मानहि खोइ तिन्हैं शिरनाये॥१॥

दोहा—नंददासको चरित लखि, परे चरण शठ आय ।
नंददासकी रीति सब, सीखत भे हरिध्याय ॥ ३ ॥
गिरि गिरि माणिक होत नहिं, गज गज मुकुत न होय।
वन वनमें चंदन नहीं, विरला साधू कोय ॥ ४ ॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धेएकोनाशीतितमोऽध्यायः ॥ ७९ ॥

अथ जगत्सिंहकी कथा ॥

दोहा—भूप करौलीको रह्यो, जगत्सिंह अस नाम।
भयो संतसेवी विमल, कहौं चरित अभिराम ॥ १ ॥

छप्पय—श्रीयुत नृपमणिजगत्सिंह दृढ़भक्ति परायण।
परम प्रीति किय सुवश शीश लक्ष्मीनारायण।
रमा गोविंद स्वरूप भूप नालकी चढ़ावै॥
नौबति नवल निसान सदल आगू चलवावै।
भरि कनककलश निज शीशमें प्रेम नेम पूजन करै॥
तन मन धन करि अर्पण हरिहि,आप विषय सुख नहिं भरै॥१॥

दोहा—जगत्सिंह यदुकुल नृपति, यदुकुल मणिको दास।
ताकी कीरति चारि दिशि, कीन्ह्यो परम प्रकाश॥२॥

जगत्सिंह तस सुनि सुखदाई। जैपुरको जैसिंह सवाई ॥
बोल्यो जैपुर दरशन हेतू। आयो जगत्सिंह मति सेतू ॥
सादर चलि करिकै अगुवाई। किय प्रणाम जैसिंह सवाई ॥
लायो अपने भवन मँझारा। कीन्ह्यो विविध भांति सत्कारा॥
कह्यो तुमहिं कुलकमल दिनेशू। हम सब वृथा धर्म नहिं लेशू॥
जगत्सिंह तब कह मुसकाई। तुव भगिनी जैसिंह सवाई ॥
दीप कुवँरिहै जाकर नामा। अहै अनन्य उपासिक रामा ॥
भक्ति प्रबल सद्गुण है मोसों। गुप्त भेद भाष्यो भल तोसों ॥
भक्तिमती भगिनी पहिचानी। धन्य भाग्य जैसिंह निज मानी॥
परे भगिनि चरणन महँ जाई। दियो हुकुम जैसिंहसवाई ॥
सर्वकरै साधुनमहँ जेतो। सचिव कोऊ वरजै नहिं तेतो॥
जगत्सिंह पुनि माँगि बिदाई। जैसिंहहि भल भक्ति बताई ॥

दोहा—आयो अपनेभवनमें, भक्ति अनोखी ठानि।
तनु परिहरि रघुवर भवन, वसत भयो शुभखानि३॥
इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
अशीतितमोऽध्यायः ॥ ८० ॥

अथ सदाव्रतीकी कथा।

दोहा—सदाव्रती यक हरिभगत, कहौं तासु इतिहास।
श्रोता सुनहु सप्रीतिसों, दायक परमहुलास ॥ १ ॥
सदाव्रती नामक यक साहू। रह्यो अनन्य भक्त यदुनाहू॥
विना हेतु अति संत सनेही। आतम सम मानत सब देही॥
रही नारि यक पुत्र सयानो। नित संतन सत्कारहि ठानो॥
यक दिन कुटिल साधु यक आयो। अतिशय सादर सदन वसायो
साहु पुत्र अरु साधु सनेहू। भयो एक मन जिय द्वै देहू॥
यक दिन साहुसुवन कहँ साधू। लै आयो जहँ नदी अगाधू॥
करि छल साहुसुवन कहँ मारी। भूषण छीनि दियो दह डारी॥
आयो भवन पिता जब पूछ्यो। कह्यो आजु गवन्यो तेहिं छूछ्यो
सदाव्रती भूपति पहँ जाई। नृपसों कहि डौंडी पिटवाई॥
तिसरे दिवश लोथि उतरानी। यक संन्यासी लखि पहिंचानी॥
सदाव्रतीके निकट सिधारी। कह्यो कानमें वचन उचारी॥
रहत जौन साधू तुव धामैं। सोई सुवन हत्यो सरितामैं॥
दोहा—सदाव्रती तब चित्तमें, कीन्ह्यो विमल विचार।
मर्‍यो सुवन जीहै नहीं,होई साधु सँहार ॥ २ ॥
जो भूपति यह सुधि सुनि पैहै। अवशि साधुको जिय हतह्वैहै॥
अस विचारि कह सुनु संन्यासी। तैहीं है मेरो सुतनासी॥
लै शतमुद्रा जाहु पराई। जो अपनो जिय चाहो भाई॥
संन्यासी शतमुद्रा लैकै। भाग्यो नगर छोड़ि भय भैकै॥

साहु जारि सुत सरित नगीचू। कह्यो नृपहि मरिगो सुतमीचू॥
जान्यो साहु साधु सब जाना। दिन दिन लग्योशरीरसुखाना॥
साधु शरीर सुखात विलोकी। सदाव्रती तियसों कह शोकी॥
केहिविधिसाधु भीतिअतिभागै। पुत्र वधेको दोष न लागै॥
बोली सदाव्रतीकी नारी। देहु साधुको व्याहि कुमारी॥
साधु सुनत परदक्षिण दीन्ह्यो।तियशासन शिरमें धरिलीन्ह्यो॥
तियको बारहिं बार सराही। दीन्ह्यो सुता साधुको व्याही॥
कृष्णचरणमें अति रति जागी। यह दोहा रसना रट लागी॥

दोहा—अवगुण ऊपर गुण करै, ऐसो भक्त जो कोय।
ताकी पनहीं शिर धरों, जबभर जीवन होय॥ ३॥

देखि साहुको अस उपकारा। रीझिगयो वसुदेव कुमारा॥
साहु गुरूको स्वप्न देखायो। जीहै साहु सुवन तुव ज्यायो॥
गुरू कह्यो जीहै सो नाहीं। तौं दे हैं हत्या तोहि काहीं॥
प्रभु कह साहु सुवन हठि जीहै। करहु न संशय वचन सहीहै॥
गुरु उठि भोर साहु घर आयो। सदाव्रती चलिकै शिरनायो॥
गुरु पूंछ्यो सुत कहां तिहारा। साहु कह्यो अनित्य संसारा॥
मरिगो बीति गये षट मासा। जारचों ताहि नदीके पासा॥
गुरू कह्यो हम देबजियाई। दहन भूमि मोहिं देहु बताई॥
चिता भूमि चलि साहु बतायो। तहँ गुरु जाय कनात लगायो॥
फैली खबरि सकल पुरमाहीं। धाये मनुज विलोकन काहीं॥
अचरज लखन नरेशहु आयो। लाखन मनुज वृंद तहँ ठायो॥
तब कनात भीतर गुरु जाई। चिता भूमि पट पीत ओढ़ाई॥

दोहा—सुमिरचो श्रीयदुवंशमणि, जो शासन सति होय॥
सदाव्रतीको सुत जिये, लखैं मनुज सबकोय॥ ४॥
जियैं सुवन अबहीं इतै, नहिं देहौं जिय तोहिं॥

लखन जन आगे कढ़त,लज्ज्या लागति मोहिं ॥५॥
इतना गुरुके कहतहीं, भयो विवर भूमाहिं ॥
कह्यो समंगल साहु सुत,बैठिगयो गुरुपाहिं ॥ ६ ॥
साहुसुवन गुरु गोदले, दियो साहु कहँ जाय ॥
भूपतियुत पुरजन सकल,अचरज गुने बनाय ॥ ७ ॥
सदाव्रती सोइ साधुको, सौंप्यो सुतको जाय ॥
कह्यो रावरेकी दया,पुत्र मिल्यो मोहिं आय ॥ ८ ॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकाशी तितमोऽध्यायः ॥ ८१ ॥

अथ प्रेमनिधिवणिककी कथा ॥

दोहा–कथा प्रेमनिधि वणिककी,श्रोता सुनहु सुजान ॥
जाके करसों कृष्णप्रभु,करत भये जलपान ॥ १ ॥

नगर महा आगरा मँझारी । रह्यो प्रेमनिधि वणिक सुखारी॥
तहां यमन वस्ती बहुतेरी । बचै न परस उपाय घनेरी ॥
वणिक प्रेमनिधि मनहिंविचारी। लावै निशि भरि यमुना वारी॥
द्वारबैठि हरिगाथा गावै । जे आवैं तिन श्रवण करावै ॥
यदुपति छोंड़ि और नहिं जानै । यांचन हित नहिं करै पयानै ॥
एक निशा वर्षाऋतुमाहीं । गये यमुनजल भरिबे काहीं ॥
रह्यो पंथमहँ पंक महाना । यमुना मारग तिनहिं भुलाना॥
गिरहिं कीच महँ पुनि उठि गवनै।बनै न यमुन जात नहिं भवनै॥
निज सेवक अति दुखी निहारी। आये हरि मशाल कर धारी ॥
तहँ ते यमुन दियो पहुँचाई । पुनि घरलों आये यदुराई ॥
गुन्यो प्रेमनिधि कोउ सरदारा । लै मशाल गमनत दरबारा ॥
यक दिन म्लेच्छ शाह पहँ जाई । साधु वणिककी चुगली खाई॥

दोहा-यक बनिया बदमाश अति, औरत देखन हेत ॥
करत बखान पुराण बहु, जन दौलत ठगि लेत ॥२॥

बादशाह करि कोप कराला। पठयो तुरत द्वारके पाला ॥
गहिकै वणिक कैद करि दीजै। नातिक हुकुम शंक नहिं कीजै॥
इतै प्रेमनिधि भोग लगाई। पान करायो नहिं यदुराई ॥
इतनेमाहँ शाहके दूता। आये गहि गवने मजबूता ॥
शाह समीप दियो पहुँचाई। बादशाह कहँ आंखिदेखाई ॥
क्या बनियां तैं करत बयाना। औरत देखत ठानहि ठाना ॥
अस कहि हजरत कैद करायो। तब प्रभुको संकट अति आयो॥
धरि खोदायको वपु यदुनाहा। जात भये सोवत जहँ शाहा ॥
कियो शाहको चरण प्रहारा। कह्यो देहि मोहिं सलिल अहारा॥
शाह चौंकि उठि बोल्यो बानी। हजरत तुम्हैं देइको पानी ॥
अस कहि शाह गयो पुनि सोई। प्रभु प्रहार किय अमरप मोई ॥
कह्यो जासु कर मैं जल पाऊं। कीन्ह्यो कैद प्रेमनिधि नाऊं ॥

दोहा-यहि क्षण छोंड़ै प्रेमनिधि, तेहिं कर करिहौं पान ॥
नतौ बादशाही सकल, होई तुव हैरान ॥ ३ ॥

शाह तुरत उठि शीश उघारे। आयो आपहि कारागारे ॥
तुरत प्रेमनिधि वणिक छोंड़ाई। सादर सपदि सदन पहुँचाई ॥
बार बार चरणन शिरनाई। दीन्ह्यो संपति भवन भराई ॥
जाय प्रेमनिधि निज प्रभुकाहीं। पान कराये जल सुखमाहीं ॥
भई आगरा नगर विख्याती। पूजै ताहि सजाति विजाती ॥
करहिं प्रेमनिधि साधुन सेवा। राखहिं नाहिं जातिकर भेवा ॥
लागै खर्च संत सत्कारा। देत साह सो खोलि भँडारा ॥
यहि विधि बहुत काल लगि सोई। कियो संत सेवा बहुतोई ॥
अंतकाल महँ त्यागि शरीरा। वस्यो जहाँ निवसत यदुवीरा॥

सिखे जे वणिक प्रेमनिधि रीती। तिनहूं के भइ हरिपद प्रीती ॥
तेऊ संतसेव मन लाये। अंतकाल यदुपति पुर पाये॥
पाय प्रेमनिधिको सत्संगा। शाहौ रँग्यो रामके रंगा ॥
दोहा-बादशाह सब देशमें,दीन्ह्यो हुकुम फिराय ॥
जो न करी हरि भक्ति जन,पैहै तौन सजाय ॥ ४ ॥
इति श्रीभक्तमालारामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेद्व्य शीतितमोऽध्यायः ॥ ८२ ॥

अथ रत्नावतीकी कथा।

दोहा-रानी इक रत्नावती, सुनहु कथा यह तासु ॥
छप्पय नाभाकी प्रथम, तामें करहुँ प्रकासु ॥१॥
छप्पय-कथा कीर्तन प्रीति भीर भक्तनकी भावै ॥
महामहोछौ मुदित नित्य नँदलाल लड़ावै ॥
मुकुंद चरण चिंतवन भक्ति महिमा धुजधारी ॥
पतिपर लोभ न कियो टेक अपनी नहिं टारी ॥
भलपन सबै विशेषहीं आमेर सदन सुनषाजिती ॥
पृथ्वीराज नृप कुलवधू भक्त भूप रत्नावती ॥ १ ॥
दोहा-जैपुरको नृप जैकरन, मानसिंह महराज ॥
भ्राता माधौसिंह तेहिं, सब सुजान शिरताज ॥ २ ॥
ताकी रानी नामकी, रत्नावती प्रसिद्ध ॥
पासमान ताकी रही, गही भक्ति तजि सिद्ध ॥ ३ ॥
श्वास श्वास हरिनामको, निशिदिन करै उचार ॥
कृष्ण नाम मुख लेतही, बहै नयन जलधार ॥ ४ ॥
एक दिवश रत्नावती, बोली ताहि बोलाय ॥
भक्ति भेद कछु मोहुँको, दीजै सखी बताय ॥ ५ ॥
पासमान बोली वचन, करहु रजायसु भोग।

मिलति बात यह कठिनते, होय जो साधु सँयोग॥६॥
तामें लिख्यो कवित्त यह, प्रियादास मतिवान॥
सो मैं इत लिखिदेतहौं, श्रोता सुनहु सुजान॥७॥

कवित्त—मानसिंह राजा ताको छोटो भाई माधवसिंह, ताकी जानौं तिया जाकी बात लै बखानिये॥ ढिग जो खवासिनि सो श्वासनि भरत नाम, रटित जटित प्रेम रानी उर आनिये॥ नवलकिशोर कबौं नंदको किशोर कभूँ वृंदावन चंद कहि आंखें भरि पानिये॥ सुनत विकल भई सुनिवेकी चाह भई, रीति यह नई कछु प्रीति पहिंचानिये॥१॥

दोहा—तब रानी अति हठ परी, मोको भक्ति बताव॥
तब चेरी चित चाहिकै, वरण्यो संत प्रभाव॥८॥

कवित्त—जबते बताय दीन्ही चेरी कृष्ण रस रीति, तबते हियेकी गई फूटि विषय गागरी॥नटनागर गुननको आगरमें प्रीति बाढ़ी, गाढ़ी भै प्रतीति जगी रीति भई कागरी॥ बसन डसन भये हँसन रसन होत, श्वासनते जागी है वियोग आगि आगरी॥ धाम तो उजार सोहै छार सोहै काम काज, आलिनके यूथ जाल ऐसे हाल नागरी॥२॥

दोहा—रत्नावती सुभाव को, पासमान हरषाय॥
यदुपति भक्ति रहस्य सब, दीन्ह्यो आसु बताय॥९॥
तब चेरीको मानि गुरु, सिंहासन बैठाय॥
रत्नावति पूजन लगी, प्रीति प्रतीति बढ़ाय॥१०॥
सादर साथ जेवांवती, धरै कृष्णको ध्यान॥
कबहुँ कबहुँ सो ध्यानमें, लखै रूप भगवान॥११॥
तब जो चेरी गुरु कियो, ताको निकट बोलाय॥
कह्यो कौन विधि मैं लखौं, परगट यादवराय॥१२॥

कवित्त–सुनि रतनावतीके वैन अति चैनहीं सों बोली रघु-राज वैन चेरी खरेखरेहैं ॥ शिव सनकादि ब्रह्मादिक न पावैं पार योगिहूं अनेकन यतन करि जरे हैं ॥ दरशन दूरि राज छोड़ैं लोटैं धूरिपै नपावैं छवि पूरि एक प्रेम वश करेहैं ॥ करौ हरि साधु सेवा भाव भरि मेवा धरि नाना रस खानि बहु भांति स्वाद भरे हैं ॥ ३ ॥

दोहा–ऐसो सुनि चेरी वचन, रत्नावती अपार ॥
प्रेम भरी निज हाथ हरि, करन लगी शृंगार ॥ १३॥
कछु दिन परदा राखिकै, साधुन देय खवाय ॥
पुनि निज कर संतन चरण, धोवै लाज विहाय॥१४॥

कवित्त–प्रेमहीमें नेम हेम थारलै उमँगि चली, चली दृगधार सो परोसके जेवांये हैं ॥ भींजिगई साधु नेह सागर अगाध देखि नैनन निमेष तजी भये मन भाये हैं ॥ चंदन लगाय आन बीरी हूं खवाय श्याम चरचा चलाय चख रूप सरसाये हैं ॥ धूमपरी गाउँ झूमि आजे सब देखिवेको, देखि नृप पास लखि मानस पठाये हैं ॥ ४ ॥

दोहा–रत्नावती चरित्र सब, सचिवन मंत्र लखाय ॥
मानसिंह महराजको, जाहिर कीन्ह्यो जाय ॥ १५ ॥

कवित्त–ह्वैकरि निशंक रानी वंक गति लई नई दई तजि लाज बैठी मुडियन भीरमें॥लिख्यो लै देमान नर आये सो वखान कियो बांचि सुनि आंच लागी नृपके शरीरमें ॥ प्रेमसिंह सुत ताही कालसों रसाल आयो, भालपै तिलक माल कंठी कंठ तीरमें । भूपको सलाम कियो नरन जताय दियो, बोल्यो आउ-मोडीकेर परचो मन पीरमें ॥ ५ ॥

दोहा–रत्नावतिको सुवन जो, प्रेमसिंह अस नाम ॥

तेहिं राजा मुडिया सुवन, भाष्यो करत सलाम ॥१६॥
जब राजा उठिगे तबै, प्रेमसिंह सब पाहिं ॥
पूछ्यो भूपतिका कह्यो, मोको वचन अजाहिं ॥१७॥
प्रेमसिंह सों सब कह्यो, जननी जौन तुम्हारि ॥
लाज तजी सब संत पै, नृप कह सोइ विचारि ॥१८॥
प्रेमसिंह सुनि मातुपै, दीन्ह्यो पत्र पठाय ॥
भूप संतसुत म्वहिं कह्यो, सत्य करहु सो माय॥१९॥
पत्र सुनत रत्नावती, मुंडन कीन्ह्यो केश ॥
सुनत माखि मारन चह्यो, रत्नावतिहिं नरेश ॥२०॥
रत्नावती समीप में, दीन्ह्यो बाघ पठाय ॥
हरिपूजा करती हती, चेरी दियो बताय ॥ २१ ॥
हरिहि उतारी आरती, रत्नावती तुरंत ॥
बाघहुको सोइ आरती, कीन्ह्यो ध्यावत संत ॥ २२ ॥

कवित्त–प्रियादासको ॥ करै हरिसेवा भरि रंग अनुराग हग, सुनी यह वाल नेकु नैन उत ढारे हैं। भावहीसों जाने उठि अति सनमाने अहो, आज मेरे भाग श्रीनृसिंहजी पधारे हैं॥ भावना सचाई वोही शोभा लै देखाई फूलमाल पहिराई रचि टीको लागे प्यारे हैं। भौनते निकासि धाये मानौ खम्भ फारि आये, विमुख समूह तत्काल मारडारे हैं ॥ ६ ॥

दोहा–सो नाहरमें कृष्णजी, भयो तुरत आवेश ॥
हरि विमुखिनिको निकासि द्रुत,भख्यो रख्यो नहिं लेश
रत्नावती प्रभाव अस, देखि मान नरनाह ॥
रत्नावती समीपके, क्षमा करावन काह ॥ २४ ॥
माधवसिंहहु मानसिंह, परे चरणमहँ जाय ॥
कह्यो क्षमहु अपराध मम, यह विभूति तव आहि२५॥

बादशाहको रुक्का आयो। दिल्ली माधव मान सिधायो ॥
लागे तरन नदी जब राजा। लागोडूबन तहँ जहाजा ॥
माधवसिंह कही तब बानी। हरिजन सुमिरि होय दुखहानी ॥
मानसिंह रत्नावति ध्यायो। तब प्रभु नौका पार लगायो ॥
आये फिरि जैपुर महिपाला। पुनि जबगे दिल्ली कछु काला ॥
बादशाह कह किमि फिरि गयऊ।तब नृप सब हवाल कहि दयऊ॥
रत्नावती चरित सुनि शाहा। तासुदरश कीन्ह्यो उत्साहा ॥
मानसिंहसों कह्यो बुझाई। देहु तासु तस्वीर मँगाई ॥
सुमिरत सरित कियो तोहिंपारा। मोहिं पार करिहैं संसारा ॥
रत्नावतिकी मांगि सबीहा।शाह दरश करि किय शुभ ईहा॥
मानसिंह माधवसिंह काहीं। कह्यो बोलाय इकांतहि माहीं ॥
सम्पति देहु जो संत खवावै। कौनेहुँ विधिसों नहिं दुख पावै॥

दोहा–रत्नावती चरित्र यह, वर्ण्यो मति अनुसार ।
प्रियादासके कवित कछु, लिख्यों भीति विस्तार२६॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
त्र्यशीतितमोऽध्यायः ॥ ८३ ॥

अथ त्रिपुरदासकी कथा ॥

दोहा–त्रिपुरदास इतिहासको, अब मैं करौं प्रकाश ॥
श्रोता सुनहु हुलास भरि, सो कायथ हरिदास ॥ १ ॥

त्रिपुरदास इक भूपति नेरे। रहहिं जाहि ढिग सांझ सबेरे ॥
तहँ इक पंडित कोउ चलि आयो। नृप पंडितसों बाद बढ़ायो॥
शिथिल परयो नृप पंडित जबहीं।त्रिपुर सहाय कियो अति तबहीं
डग्यो न नृप पंडित कर पक्षा। कोप्यो तब सो विबुध ततक्षा॥
त्रिपुर कह्यो हम करैं जो वादा। तो तुम्हरी नशाय मर्यादा॥

पंडित कह्यो अधम तैं वरना । मोसों शास्त्र विवाद न करना ॥
त्रिपुर कह्यो मैं अधम कौन विधि।मोरि अधमताकरहु आप सिधि
पंडित कह्यो समर्थन नाहीं । त्रिपुर समर्थन कियो तहाँहीं ॥
पुनि पंडितके पद गहि दोऊ । कियो प्रणाम कह्यो तब सोऊ॥
धन्य धन्य तुम अहौ भुवाला । जासु सभा असि बुद्धि विशाला
दशहजार मुद्रादै राजा । पंडितको करि विदा समाजा॥
त्रिपुरहि तब अति भई गलानी। मनमें कियो विचार विज्ञानी॥

दोहा—विद्या पाय विवाद किय, कीन्ह्यो मद धन पाय ॥
ह्वै समर्थ परदुख दयो, नरकमूल त्रै आय ॥ २ ॥
विद्या पाय जो ज्ञान लिय, धन लहि कीन्ह्यो दान ॥
समरथ ह्वै उपकार किय, त्रैपद स्वर्ग निदान ॥ ३ ॥

त्रिपुरदास मन माहँ विचारी । वृंदावनको गयो सिधारी ॥
श्रीविल्लभाचार्य्य शिषि भयऊ । वाद विवाद त्यागि सब दयऊ॥
कछु दिन बस गुरुशासन पाई । बसि घर कियो साधुसेवकाई॥
शीत निवारण वसन सोहावन । नेम कियो श्रीनाथ पठावन ॥
यहि विधि वीतिगयो कछुकालै । कोउ चुगली कीन्ह्यो महिपालै॥
त्रिपुरदास तुव वित्त चोराई । करत पखंड साधु सेवकाई ॥
भूपति त्रिपुरदासकहँ लूट्यो । त्रिपुरदास मान्यो दुखछूट्यो॥
जौन मिलै तेहि करै निवाहू । आठहु याम भजै सियनाहू ॥
शीतकाल आयो पुनि जबहीं । त्रिपुरदास पछिताने तबहीं ॥
रह्यो विभव जो मोर विशाला । श्रीनाथहि समीप प्रतिशाला॥
भेजत रह्यो बसन तब भारी । कहा करौं अब भयो भिखारी॥
अस विचार किय हाट पयाना । लायो मोल अमौवा थाना ॥

दोहा—तौन अमौवा थान इक, कोउ वैष्णवके हाथ ॥
पठयो कहि वृत्तांत निज, जहाँ रहे श्रीनाथ ॥ ४ ॥

जानि पुजारी अधम पट, कोनेराख्योडारि ॥
ताहि निशा श्रीनाथ तनु, कांप्यो लगत बयारि॥५॥
प्रभुको लाग्यो जाड़ अति, पूजक सिगरे जानि ॥
वसन अमोल अमोल सब,लगे ओढ़ावन आनि ॥६ ॥
प्रभुको मिट्यो न जाड़ कछु,तब कोउ कह्यो सुजान॥
भेज्यो त्रिपुर ओढ़ाइये,सोइ अमौवा थान ॥ ७ ॥
जबै अमौवा नाथको, पूजक दियो ओढ़ाय ॥
मिट्यो कम्प तनु शीतकृत, पूजक रहे चकाय ॥ ८ ॥
त्रिपुरदास की जय कहे,दीन्हे खबरि पठाय ॥
त्रिपुरदास सुनि अति पुलकि, वृंदावनको जाय॥९ ॥
लोटि लोटि ब्रजभूमि रज,करि साधुन सेवकाय ॥
तजि शरीर मतिधीर सो, जहँ यदुवीर सोहाय ॥१०॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
चतुरशीतितमोऽध्यायः ॥ ८४ ॥

अथ सदनकसाईकी कथा ॥

दोहा–सदन कसाईकी कहौं, सुखदायी यह गाथ ॥
द्विजताई तजि रीझिगे, यदुराई जेहि साथ ॥ १ ॥

रह्यो एक कहुँ सदन कसाई। आमिष बेंचि रोज सो खाई ॥
रहै साधु हरिनाम उचारै। निज करसों नहिं जीवन मारै॥
शालिग्राम शिला इक लाई। ताहीभर आमिष तौलाई ॥
वेंचै सो चलि रोज बजारा। करत रह्यो यहिभांति गुजारा॥
शालिग्राम शिला नहिं जानै। तौन शिला पषाणकरि मानै ॥
घटै बढ़ै सो शिला सदाही। उपराजै धन दिन प्रति ताही॥
एक दिवश इक साधु सिधायो। शालिग्राम देखि अनखायो ॥

सुनहि दुष्ट रे सदन कसाई। शालिग्राम शिला कहँ पाई॥
तोलै आमिष सम प्रभु मोरा। सहि न जात अपचार कठोरा॥
सदन कह्यो अबलौं नहिं जान्यो। ताते यह अपचारहि ठान्यो॥
कौन यतनते यह अघ जाई। देउ कृपाकर मोहिं बताई॥
साधु कह्यो मोको प्रभु दीजै। यामें और यतन नहिं कीजै॥

दोहा–सदन साधु कहँ दिय शिला, सो निज घरमें ल्याय।
पूज्यो वेदविधान ते, पंचामृत अन्हवाय॥ १॥
दियो साधुको स्वप्न प्रभु, तैं अनुचित यह कीन॥
सदनकसाई सदन ते, मोहिं बाहिर करिदीन॥ २॥
सुनत वचन प्रभुके कह्यो,साधु सकोपित बानि॥
प्रियादासको कवितसो, मैं इत कहौं बखानि॥

कवित्त–वह पद भाषा ठेक जैसे तैसे गावतहैं,हम तुम्हें गावत हैं सदा वेदवानी सों॥ मांस भरे हाथ वह आय तुम्हें छीवत है, कैयो मास बीते हमें तुम्हरी कहानी सों॥ लक्ष्मी नारायण जू बड़े रिझवार तुम,रीझ निकसत है तुम्हारी रजधानी सों॥ हम निर्मल गंगाजलसे अन्हवावैं तुम्हैं, तुम रीझे सदनाके बधनाके पानी सों॥१॥

दोहा–साधु वचन सुनिकै हरी, कह्यो वचन मुसकाय॥
सो कवित्त प्रियदासको, मैं इत दियो लिखाय॥

कवित्त–कहा भयो तोपै बड़ो कुलहू में जन्म भयो,जप तप नेम व्रत साधन अपारहै॥ कहा भयो तीरथ अनेकन गवन किये,गयो नहीं जौलौं निज मनको विकारहै॥ जौलौं मेरे संतनमें राखे जातिभेद सदा,तौलौं कहौ कैसे वह पावै सुख सारहै॥ मेरो साधु नीच पद पंकज न धोयो जौलौं, तौलौं सब शास्त्रनको पढ़िबोई भारहै॥ १॥

सोरठा-सुनि प्रभु ऐसी वाणि,साधु सदनके सदन चलि ॥
सब वृत्तांत बखानि,शालिग्राम शिला दयो ॥ २ ॥
सदन सुनत अति आनँदमानी। आमिष बेंचब त्यागि विज्ञानी॥
जगन्नाथ नगरीमें धायो। चल्यो साधुयक संग सोहायो॥
दोउ मिलि चले पंथ महँ संगा। क्षण क्षण रँगे रामके रंगा ॥
मिल्यो पंथ महँ पुर यक भारी। कह्यो सदनसों साधु उचारी ॥
मैं भिक्षा मांगनहित जाऊं। तुम रहियो इत जबलगि आऊं॥
अस कहि साधु तुरंत सिधारा। सदन रहे इक सदन दुवारा ॥
तीन भवनकी भामिनि कोई। सदनहि जोहि मोहिगै सोई ॥
कह्यो सदनसों इत तुम रहहू। मम सत्कार सकल अवगहहू ॥
सदन साधुसेवी तेहि जानी। रहे भवन ताके सुखमानी ॥
तिय बहु विधि पकवान बनाई। सादर सदनै दियो खवाई ॥
भीतर अयन शयन करवायो। निशि अपनो शृंगार बनायो ॥
अर्द्ध निशागे सदन समीपा। बोली वचन बुझावत दीपा ॥
मोहि गयो तोपर मन मोरा। करहु जौन भावै चित तोरा ॥
दोहा-सदन कह्यो परदारको,परश करौं मैं नाहिं।
मेरो चित मेरेवसै, काटै जो गरकाहिं ॥ ६ ॥
तिय जान्यो पति मारनकहतो। पतिकी भीति संग नाहिं चहतो॥
तब तुरंत गइ कंत मकाना।काढ्यो पिय शिर काढ़िकृपाना॥
सदन समीप आय पुनि गाई। तुमहितमैं पतिको हति आई ॥
सदन कह्यो तब तापर कोपी। दूरहोय पापिनि पति लोपी ॥
तिय निराश ह्वै जाय दुवारा। करि विलाप अति दियो गोहारा॥
आये सकल परोसी धाई। तिनसों कह्यो नारि बिलखाई ॥
साधु जानि मैं भवन टिकायो।बहुविध व्यञ्जन विरचि खवायों॥
अर्द्धनिशा सो पापी संता। मारयो खड्ग काढ़ि मम कंता॥

पुरजन शीश कटे तेहि देखे। सब अपराध साधुके लेखे॥
भूपति सदन सदन कहँ बाँधी। लैराख्यो कोठरी महँ धांधी॥
भोर भये पूछ्यो नृप बाता। तैंकत किय तियके पतिघाता॥
सुनत सदन मनमाहँ विचारा। जो मैं कहौं नारि अपकारा॥
दोहा—तौ तियको वध होय हठि,ताते शिर धरि लेहुँ॥
जस हरि इच्छ होयगी,सो टरिहै नहिं केहुँ॥ ७॥
अस विचारि तब सदन बखान्यो। मैंहीं निशि तियको पिय भान्यो॥
अति अपराध जानि नरनाथा। लियो कटाय सदनको हाथा॥
नेकहुँ सोच सदन नहिं लायो। जगन्नाथको तुरत सिधायो॥
सदन पुरी पहुँच्यो जब जाई। स्वप्न दियो पंडन यदुराई॥
मोर भक्त वर सदन कसाई। ल्यावहु तेहिं पालकी चढ़ाई॥
पंडा सकल प्रभातहिं धाये। सदन निकट शिबिका लैआये॥
सदन चढ़्यो शिबिका में नाहीं। आय गयो इक साधु तहांहीं॥
सदनै लै यकांत महँ भाख्यो।तुम कस मोर हुकुम नहिं राख्यो॥
मैं हौं जगन्नाथ प्रभु तोरा। सदन कह्यो तब वचन कठोरा॥
मैं परदार ग्रहण किय नाहीं। काटि गये मम हाथ वृथाहीं॥
जो तिय कीन्ह्यो निज पिय घाता।भयो न ताहि दंड कस बाता॥
साधु स्वरूप नाथ मुसकाई। पूरवकी सब कथा सुनाई॥
दोहा—पूर्व जन्मके विप्र तुम, काशीमें रह धाम।
पढ़न पढ़ावन किय सकल, धर्मधुरंधर आम॥ ८॥
एक धेनु इक दिवश कसाई। गह्यो हतन सो चली पराई॥
जब पावत ताको नहिं हेरचो। तबै कसाई तुमको टेरचो॥
तुम अपने दोउ कर पसराई। रोंक्यो धेनु गह्यो सो आई॥
ल घर सुरभी हत्यो कसाई। गोहत्या तोहिं लगी महाई॥
धेनु सोइ तिय कंत कसाई। कटे हाथ सोइ अघ फल भाई॥

जानहु मोरि रीति असि प्यारे। जे अनन्य हैं भक्त हमारे॥
तिनको पूर्व भोग नहिं राखौं। सदा भक्त शत्रुन पै माखौं॥
अब प्रसाद कर धरत हमारे। ह्वैहैं हाथ तुरंत तिहारे॥
चढ़ो पालकी मंदिर जाहू। सादर महाप्रसादहि खाहू॥
अस कहि हरिभे अंतर्द्धाना। सदन सत्य शासन प्रभु माना॥
चढ़े पालकी मंदिर आये। पंडा प्रभु प्रसाद लै धाये॥
लेन प्रसादहि भुज पसराये। तुरतै उभय हाथ ह्वै आये॥

दोहा—सदन चरित्र निहारिकै, पुरी लोग हरषान।
सदन कसाईको नमें, गुणि भागवत प्रधान॥९॥
सदन कछुक दिन करि सदन, नंदनँदन कहँ ध्याय।
कदन करत यमफँदनको, गे हरिसदन सिधाय॥१०॥

इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
पंचाशीतितमोऽध्यायः॥ ८५ ॥

अथ नरसीमेहताकी कथा॥

दोहा—हिय हरसी वरसी हरष, हरसी विशद विचित्र॥
सुरसरसी सरसी कहौं, नरसी कथा पवित्र॥ १ ॥
जूनागढ़ गुजरातमें, तहँको निवसनहार॥
नरसी उत्तम जाति द्विज, रह्यो दरिद्र अगार॥ २ ॥

अतिशय मूढ़ देश गुजराता। कोउ नहिं कृष्ण भजनको ज्ञाता॥
घरमें रहै भ्रात भौजाई। करै न उद्यम कोउ कहुँ जाई॥
नरसीको नहिं भयो विवाहू। भ्रात मिले महँ कर निर्वाहू॥
नरसी इक दिन कहुँ ते आई। माँग्यो सलिल देहिं भौजाई॥
कह्यो भ्रात तिय वचन रिसाई। देहुँ सलिलका देहि कमाई॥
लै भाजन भरि पीवहु नीरा। तुमहिं देखि हिय उपजति पीरा॥

लगे बाण सम वचन कठोरा । नरसी निकसि चल्यो दुखबोरा॥
बाहिर नगर शिवालय रहेऊ । लंघन सात बैठि तहँ किहेऊ ॥
द्रव्यो उमा चित करुण अपारा ।विहँसि शम्भुसों वचन उचारा॥
तुव गृह द्विज किय सात उपासा । जो मांगै दीजै कृतिवासा ॥
तबै प्रगटि कह वयन त्रिनैना । मांगु मांगु वर तोहिं कछु भयना॥
नरसी कह्यो न मांगन जाना । जो प्रिय होय सो देहु इशाना ॥

दोहा—शम्भु विचारचो मनहिं तब, मोहिं प्रिय यदुकुल चंद॥
तासु रास दरशाइ हौं, वृंदावन सखिवृंद ॥३॥

दिव्य रूप करि लै निज साथा । गे जहँ रास करत यदुनाथा ॥
सखी रूप करिकै जिय काहीं । प्रविशे रास विलास जहांहीं ॥
तेहि कर दियो धराय मशाला । गहत बन्यो नाहिं नौसिख हाला॥
कह्यो शम्भुसों हरि मुसकाई । ल्याये तुम इत कौन लेवाई ॥
जाय भवन मम रासहि ध्यावै । अंत समय मम रासहि आवै ॥
हरिशासन सुनि शम्भु तुराई। दियो तहैं नरसी पहुँचाई ॥
नरसीको स्वप्नो सो भयऊ । उठ्यो चौंकि चकृत ह्वै गयऊ ॥
शम्भुकृपा पुनि मनहिं विचारी। जूनागढ़ गवन्यो अविकारी ॥
बाहिर नगर निवास बनायो । गाय रास पद यदुपति ध्यायो॥
भई कछुक सम्पति तब धामें । करै रासलीला पद गामें ॥
नाचै हरि पहँ भाव बतावैं । दशा देखि कुलके जरि जावैं ॥
करै सदा संतन सेवकाई ।कछुक काल यहि भाँतिबिताई॥

दोहा—संतमंडली द्वारका, जातरही हरषाय ॥
पूछ्यो साहूकारको,जूनागढ़मेंआय ॥४॥

साहूकार नगर जो होई । हुंडी देय सातसै सोई ॥
नरसीके द्रोहीजन जेते । नरसीको बतायदिय तेते ॥
साधु सबै नरसीघर आये । हुंडी हित रुपया पहुँचाये ॥

नरसी गुण्यो वित्त घर नाहीं । संत विमुख दीन्हे बिन जाहीं॥
यह संकेत निवारणहारो । ब्रजको माखन चाखनवारो ॥
कृष्ण ध्याय मुद्रा लैलीन्ह्यो । हुंडी साधुनको लखिदीन्ह्यो ॥
पूछ्यो संत साहुको नामा । तब बोल्यो नरसी मति धामा॥
बसै द्वारका सहित उछाहू । जानहु संत सँवलिया साहू ॥
देखत हुंडी तुरत पठाई । यामें संशय नाहिं जनाई ॥
लै हुंडी द्रुत साधु सिधाये । कुशस्थली षट दिनमहँ आये॥
हेरनलगे सँवलियो साहू । नाम लेत पूंछै सब काहू ॥
कहुँ नहिं मिल्यो द्वारकामाहीं । नाम सवलिया साह तहाँहीं ॥

दोहा—नरसी पै जब संत सब,कहे सकोपित बैन ।
ठग ठगिलीन्ह्यो मुद्रिका, चलो मारि तेहि लैन ॥५॥

निकसि नगर बाहर जबआये । मिले सँवलिया साहु सोहाये ॥
पूछ्यो संत सबै तेहिकाहीं ।कह्यो सो साहु सवँलियाआहीं॥
साधु कह्यो खोजत हम थाके । अबलों रहे धाम तुम काके ॥
कह्यो सँवलिया साहु सुवानी । चलहु भवन हमरे सुखखानी ॥
संतन लाय सँवलिया साधू । भवन देखायो सुछविअगाधू ॥
मंदिर सुंदर अतिहिं उतंगा ।मनहु रच्यो निजपाणिअनंगा ॥
सम्पति सकल पूर सब ठामा । बैठे जन मनु मूरति कामा ॥
गद्दी छवि हद्दी अति ऊंची । रद्दी कर शशि प्रभा समूची ॥
तामें बैठि सँवलिया साहू । दिय आसन संतन सबकाहू ॥
पूंछि कुशल मुद्रा मँगवाई । दियो सातसै तुरत गनाई ॥
कह्यो सँवलिया साहु बहोरी । नरसी सों भाष्यो असि मोरी ॥
लघु हुंडी पठवावहिं नाहीं । उनको यह अनुचित दरशाहीं॥

दोहा—सहसलक्ष अरु कोटिकी, हुंडी देहिं पठाय ॥
उनकी पाती पावते, तुरतै देब पठाय ॥ ६ ॥

कबहुँ शंक करिहैं कछु नाहीं । हुंडी पठवाइहै सदाहीं ॥
गमने विस्मित साधु तुराई । जूनागढ़ आये सुखछाई ॥
मिले संत नरसी कहँ जाई । दियो सकल वृत्तांत सुनाई ॥
सुनत सँवलिया साहु चरित्रा । नरसी अति मुदमानि विचित्रा ॥
संतन मिल्यो बहोरि बहोरी । भाषत भयो भाग्य धनि तोरी॥
लखे सँवलिया साहु सिधारी । हम नहिं लखे अभाग्य हमारी॥
पुनि संतन भोजन करवाई । सादर नरसी दियो विदाई ॥
यहि विधि नरसीको बहु काला। बीतिगयो ध्यावत नँदलाला ॥
भयो पुत्र इक युगल कुमारी । नरसीको नहिं दुख सुखकारी॥
देखहु संत सेव प्रभुताई । हुंडी आपहि कृष्ण पठाई ॥
जो धरते रुपिया घरमाहीं । तोहरि सुरति करत कहुँ नाहीं॥
तामें सुनहु एक इतिहासा । श्रोता सिगरे सहित हुलासा ॥

दोहा–रह्यो एक द्विज नगर कहुँ,सो असि मानी वानि ॥
देहु जो मोहिं जगदीश सुत,तो तुमकहँ सुखमानि ॥६॥

अटका द्विशत रुपैया केरो । तुमहि चढ़ैहौं अस प्रणमेरो ॥
कछुदिन में द्विजके सुत भयऊ।यक कर द्विज मुद्रासो दयऊ॥
कह्यो जाय जगदीश चढ़ावहु । एकहु मुद्रा नाहिं घटावहु ॥
विपिन पंथ है विप्र सिधारयो । मारग महँ तेहिं संत पुकारयो॥
सहस मूर्ति वैष्णव व्रत कीने । परे इतै अतिशय दुख भीने ॥
सज्जन होहु तु भोजहि देहू । सुनत विप्र मान्यो संदेहू ॥
हरि स्वरूप सब संत गनाई । सोइ मुद्राको अन्न मँगाई ॥
दिय संतन भोजन करवाई । द्वै मुद्रा बचिरहे तहांई ॥
द्वै मुद्राले पुरी सिधारा । अरप्यो प्रभुहिं मानि सुखसारा॥
जेहि दिन भवनलौटि द्विजआयो।हरितेहि दिनद्विज स्वप्न देखायो
तुव प्रेषित द्वैशत जे मुद्रा । द्वै कम अरप्यो मोहिं द्विज छुद्रा॥

ऐसो स्वप्न देखि द्विजराई । उठि प्रभात द्विज तुरत बोलाई॥
दोहा—बोल्यो आँखि देखायकै, द्वै कस लियो चोराय ।
एक सवैअट्ठान्नबे, मुद्रा दियो चढ़ाय ॥ ८ ॥
कह्यो पुरोहित तब असि वानी । मैं हरिरूप संत सब जानी ॥
दीन्ह्यों संतन द्रव्य खवाई । बचे द्वैक ते दियो चढ़ाई ॥
ऐसी सुनत पुरोहित वानी । सो द्विज हरिवपु संतन मानी ॥
करन लग्यो संतन सेवकाई । हरिपुर गो संसार विहाई ॥
देखहु नरसीको विश्वासा । दिय हुंडी भरि रमा निवासा ॥
नरसी बसे सुखित घर माहीं । कियो काज पुनि कन्या काहीं॥
प्रथम गर्भ दुहिताके भयऊ । तासु सासु कोपित कहि दयऊ॥
तेरो पिता महाकंगाला ।पठयो कछु पट नाहिं यहि काला॥
कन्या नरसीपहँ दुख छाई । सासु कथित कहवाय पठाई ॥
जो यहि समय पिता नहिं ऐहौ। अतिशय अयश जगत महँ पैहौ॥
सुतापत्र नरसी जब पायो । समधी भवन तुरत चलि आयो॥
पिता मिलन हित सुता सिधाई।मिलि बहु विधि पूछ्यो शिरनाई॥
दोहा—मोहिं देनके हेतु पितु, का लाये सो भाषु ।
जो नहिं देहौ तौ अवशि, सासु करी अतिमाषु ॥९॥
नरसी कह्यो कछुक नहिं लाये। भवन माहिं ढूंढ़े नहिं पाये ॥
सुता कह्यो छूंछे कत आये । मोहिं दुसह दुख पिता कमाये ॥
नरसी कह्यो कहै का साशू । सुता पूंछि मोहिं करै प्रकाशू ॥
सुता सासु ढिग तुरत सिधारी । देखत सासु प्रकोपि उचारी ॥
का लायो पितु तोहिं सधौरी । सुता कह्यो तेरी मति बौरी ॥
पूंछ्यो पिता जो समधिनि भाषै। मम मन सकल देन अभिलाषै॥
सासु सहस्रन नाउँ लिखाई । दीन्ह्यो नरसी ढिग पठवाई ॥
नरसी कह्यो भूलि रह जेई । सकल लिखाय पत्रमहँ देई ॥

सासु सुनत अमरष अति छाई। द्वै पषाण पुनि दियो लिखाई ॥
नरसी पत्र पाय सुखमानी। बैठि कोठरी ध्यानहि ठानी ॥
नरसीको औ यदुपति केरो। रह्यो प्रथम संकेत निवेरो ॥
जब तुम गैहौ राग केदारा। होई मिलन हमार तुम्हारा ॥

दोहा—सो नरसी अनुराग भरि, राग्यो राग केदार।
भक्त प्रेमवश प्रगटभो, श्रीवसुदेव कुमार ॥ १० ॥

पत्र लिखित सब वसन हजारन। कोठरी ते द्रुत लग्यो निकारन॥
वसन शैल लगि गयो दुवारा। कनक रजत युग उपल पवारा॥
भये कृष्ण पुनि अंतर्द्धाना। नरसी पट पठयो तब नाना ॥
ग्राम मात्रजन सब पट पाये। औरहु पाये जे तहँ आये ॥
पठयो कनक रजत पाषाने। समधिनि समधी अचरज माने॥
छाय रही कीरति संसारा। नरसी गमन कियो आगारा ॥
नरसीसुता संग चलि दीनी। यदुपति प्रेम भक्ति रस भीनी॥
सहित सुता सुत नरसी प्रेमी। निवसे भवन भक्तिके नेमी ॥
निशि दिन करहिं कृष्णपद गाना।छोंड़ि लाज मानहुँ अभिमाना॥
कुलके सकल वैर अतिमानैं। भूपति सों चुगली नित ठानैं ॥
यक दिन नृप नरसी बोलवायो। गान करत सो सभा सिधायो ॥
सहित सुता सुत हरिरँग राते। गावत नाचत आंशु बहाते ॥

दोहा—जब नरसी आयो सभा, दरश करत महिपाल ॥
शुद्धभयो अंतःहकरण, जानिपरचो नँदलाल ॥११॥

तब कोउ विप्र तौन पुरवासी। वरण्यो नरसी चरित हुलासी॥
जससमधी घर किय सतकारा। मिल्यो यथा वसुदेव कुमारा॥
भूपति सुनत परचो पदमाहीं। सतकारचो बहु नरसीकाहीं ॥
पुनि कोउ हरिविमुखी तहँ आई। नरसीकी चुगली अस गाई ॥
काचे सूत विरचि सुममालै। पहिरावतहै नित नँदलालै ॥

सन्मुख बैठि आप जब गावै। माल टूटि नरसी गल आवै ॥
भूपति लेन परीक्षा हेतू। सभा करायो संत समेतू ॥
भूपति रेसममें गुहि माला। पहिरायो हालै नँदलाला ॥
नरसी गान करन पुनि लाग्यो। राग केदारा नहिं तहँ राग्यो ॥
रह्यो साहुके गहन केदारा। नहिं गायो सो सभा मँझारा ॥
तब प्रभु धरि नरसी कर रूपा। कह्यो साहुसों वचन अनूपा ॥
लै रुपया अब देहु केदारा। समुझिलेहु जो होय तुम्हारा॥

दोहा—साहु तुरत मुद्रा दियो, दियो केदारा राग ॥
साहु पत्र नरसिहि दियो, हरि चलि विलम न लाग१२

गिरचो गगनते पत्र अंकमें। गायो नरसी तब निशंकमें ॥
गावत तहां सुराग केदारा। माला टूटत सबै निहारा ॥
परी माल नरसी गल आई। भूप परचो नरसी पद जाई ॥
मच्यो सभा महँ जयजय कारा। हरि विमुखी चितभे जारि छारा॥
भयो शिष्य नरसीको राजा। भायनभृत्यन सहित समाजा॥
सुनहु सबै अब हरि जेहिं भांती। नरसी सुतके भये बराती ॥
जूनागढ़ संनिधि इक ग्रामा। तामें बसै विप्र मतिधामा ॥
रहै धनाढ्य सुपात्र सुजाना। तासु कुटुम्बहु तासु समाना ॥
सुंदरि ताके रही कुमारी। षोडश वर्ष वयस जब धारी ॥
तब ताको पितु कियो विचारा। करौं विवाहकेर संभारा ॥
पठयोंद्विज अस तेहिकहिदीन्ह्यो।सकुलधनाढ्य खोजि जबलीन्ह्यो
तब दीन्ह्यो तुम तिलक चढ़ाई। जामें सुता कलेश न पाई ॥

दोहा—चल्यो विप्र लै तिलक तब, जूनागढ़को आय ॥
पूछ्यो सगरे नगरमें, केहि घर धन बहुताय ॥ १३॥

विप्र सकल जे रहे कुलीना। नरसीके संबंधी दीना ॥
ते सब नरसी वैर विचारी। कही बात तेहिं द्विजहि उचारी॥

जो कुल सम्पति चहौ बड़ाई। तौ नरसी घर करौ सगाई॥
नरसी सरिस आज नहिं कोऊ। सम्पतिमांह बड़ोहै सोऊ॥
सो सुनि नरसी घर महिदेवा। जात भयो बोल्यो करि सेवा॥
विप्र एक अतिशयधनवाना। जातिहुँ महँ सो अहै प्रधाना॥
सो निज सुता विवाह विचारा। तुम्हरे पुत्र संग सुखसारा॥
नरसी ठानिलियौ सो व्याहू। लियो तिलक सुमिरत यदुनाहू॥
बहुरि विप्र अपने घर गयऊ। कन्या पितहि कहत सो भयऊ॥
नरसी नाम पूर्व सुनिराखा। ताते द्विजपर अतिशयमाखा॥
नरसी जन्मकेर कंगाला। क्षुधा विवश नित लहत कशाला॥
नरसी सुत सँग सुता विवाहू। मैं करि किमि लेहौं दुखदाहू॥

दोहा—कह्यो विप्रसों माषि अति,आयो तिलक चढ़ाय॥
जेहिकर मैं दीन्ह्यो तिलक, सो कर लेहु कटाय॥१४॥

तबतौ जाय तिलक लै आऊं। नातो लेउ प्राण यहि ठाऊं॥
जुरे पंच सब सुनत विवादा। कहत भये नहिं करहु विषादा॥
सुता भाल जस लिख्यो विधाता। सोई होत न दूसरि बाता॥
यहि विधि कहि दुहिता पितु काहीं।समुझाये सब आय तहांहीं॥
कन्यापिता मानि तब लीन्ह्यो। काज करनको सम्मत कीन्ह्यो॥
लग्न लिखाय विचारि शोधाई। दीन्ह्यो नरसी भवन पठाई॥
नरसी जबते तिलकहि लीन्ह्यो। तबते व्याह सुरति नहिं कीन्ह्यो॥
रँगे कृष्णके प्रेमहि रंगा। गावत पद करते सतसंगा॥
जो पूंछै कोउ कबै विवाहू। तौ भाषै जानै यदुनाहू॥
लग्न चारि दिन जब रहिगयऊ। पुरमहँ अति उपहासहि भयऊ॥
तब करुणानिधि मनहि विचारा। नरसी मोपर राख्यो भारा॥
ताते आज काज सब करिहौं।कलिमहँ प्रगट होब नहिं डरिहौं॥

दोहा—अस विचारि करुणायतन, भीष्मकसुता समेत ॥
प्रगट भये नरसी भवन, कियो विवाहहि नेत ॥१५॥
निज करसों रुक्मिणि महरानी। कियो विवाह चार विधि ठानी॥
जाति कुटुम्बहि सकल बुलायो। विविध भांति भोजन करवायो॥
सो द्विज घर पठयो यक चारा। करै विवाहकेर संभारा ॥
सुनत विप्र सो हँस्यो ठठाई। ऐहैं किमि बरात सजवाई ॥
इत नरसीसों कह यदुराई। लावहु व्याहि पुत्र उत जाई ॥
नरसी कह्यो नमैं कछु जानौं। जस चाहौ तुमहीं तस ठानौं ॥
हरि कह तू गमनै महि माहीं। मैं अकाश ह्वै चलौं तहांहीं ॥
नरसी चल्यो पुत्रलै साथा। धरि यदुनायक शासन माथा ॥
जबै गयो सो ग्राम नेराई। प्रगटी तबै बरात महाई ॥
मणिन जटित यक दिव्य पालकी। भूषित वाहक मुक्तजालकी॥
प्रगटे तहां तुरंग हज़ारन। सिंधुर सहस मेरु मदमारन ॥
सुवरण साजित स्यंदन सोहैं। ललकत जिन्हैं विबुधगण जोहैं॥
दोहा—नखशिख रतनते जटित, प्रगटे सुभट अपार ॥
बजेहजारनदुंदभी, माच्यो शोर अपार ॥ १६ ॥
कवित्त—एक ओर गैयर गरद्दनके ठद्द ठाटे, एक ओर हैवर हजारन विराजहीं। स्यंदन अमंद मानो मारके समारे सर्व, प्यादे अर्व खर्व सुर गर्वको पराजहीं ॥ प्रगटे अकुंठित विकुंठही के बाजे तहां, कुंठित करैं जे देवराजहूके बाजहीं। भनै रघुराज यदुराज लै समाज आयो विलसी बरात ऐसी नरसीके काजहीं॥
दोहा—परचो परावन देशमें, कोउ चढ़ि आयो भूप ॥
को पूंछै कहँ जात दल,कोउनाहिं यहि अनुरूप॥१७॥
कहैं बराती तब यह बाता। नरसीसुतकी जात बराता ॥
सो द्विजके हितुवा कोउ धाई।आति विलखित यह खबरि जनाई॥

आवत नरसी लिहे बराता । कछु नहिं तासु प्रमाण जनाता॥
जितनो धन तुम्हरे घरमाहीं । चारहु भरि पूजी तेहि नाहीं ॥
धायो द्विज तब शीश उघारी । सिंधु समान बरात निहारी ॥
गिरोजाय नरसी पदमाहीं । राखहु अब मर्यादा काहीं ॥
नरसी तापर करि अति दाया । विनय कियो सुनियो यदुराया॥
राखहु विप्रहुकी अब लाजू । तुमतौ नाथ गरीबनिवाजू ॥
तब यदुनाथ रमा पठवाई । ऋद्धि सिद्धि युत द्विज घर आई॥
क्षणमहँ दियो साजु सब साजी । खाय बराती भे सब राजी ॥
ग्राम देशके जे जन आये । पृथक् पृथक् सम्पति सब पाये॥
सो द्विजभवन कुबेर भवन भो।कौतुक किमि जहँ रमा रवन भो॥

दोहा–कोउ नहिं देख्यो नहिं सुन्यो,भयो यथाविधि व्याह॥
सो विभूति को कहिसकै, जहँ प्रगटे यदुनाह ॥१८॥
चारि दिवश तहँ रहतभे, नरसीसुवन बरात॥
खान पान सन्मान बहु, भयो वरणि नहिं जात॥ १९ ॥
पुनि सोई सामान सों, कियो बरात पयान ॥
आई नरसीके भवन, तहौं विभूति अमान ॥ २० ॥
यहि विधि नरसीसुवनको, हरिकिय प्रगट विवाह ॥
फेरि बरात समेतभे, अंतर्हित यदुनाह ॥ २१ ॥
फैलि रह्यो सब देश महँ, नरसी सुयश विशाल ॥
नंदलालसों दूसरो, कोहै दीनदयाल ॥ २२ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
षडशीतितमोऽध्यायः ॥ ८६ ॥

अथ मीराबाईकी कथा ॥

दोहा–अब मीरा मंजुल चरित,श्रोता सुनहु सुजान ॥
नाभाकीछप्पय प्रथम, तामें करहुँबखान ॥ १ ॥

छप्पय–सदृश गोपिकन प्रेम प्रगट कलियुगहि देखायो ॥
निरअंकुश अतिनिडर रसिक यश रसना गायो॥
दुष्टन दोष विचारि मृत्युको उद्यम कीयो ॥
बार न बांको भयो गरल अमृत ज्यों पीयो ॥
भक्ति निसान बजायकै, काहूते नाहिंन लजी ॥
लोकलाज कुल शृङ्खला तजि मीरा गिरिधर भजी॥

दोहा–मारवाड यक देश जो, जैमिल तहँको भूप ॥
तासु सुता मीरा भई, यदुपति भक्त अनूप ॥

बालापनते हरि अनुरागा।अति उज्ज्वल मीरा उर जागा॥
खेलहि हरि चरित्रके खेला। हरिमूरति विरचै मृदुढेला॥
राधा माधव करै विवाहू। करैं सहचरिन सहित उछाहू॥
यहि विधि वैस वर्ष दशबीती। दिन दिन दून दून हरि प्रीती॥
यक दिन कोउ साधूतहँ आयो। जैमिल भूप भवन बोलवायो॥
सुनत शङ्ख ध्वनि मीरा आई। साधुनके चरणन शिरनाई॥
संतनमहँ जो रह्यो महंता। सो मूरति पूजै श्रीकंता॥
मीरा तिनहिं देखि ललचाई। पूछ्यो येको देहु बताई॥
कह महंत सुन मीराबाई। या हरिकी मूरति मन भाई॥
गिरिधरलाल नाम इन केरो। तू अस मनमें करै निवेरो॥
मीरा कह्यो देहु मोहिं काहीं।इनहिं छोड़ि सूझत कछु नाहीं॥
भाषि महंत गये स्थाना। तासु देव अनुचित अतिमाना॥
तेहिं क्षणसे मीरा सब काला। रटन लगी हा गिरिधर लाला॥

दोहा–बैठी जाय निकेत तजि,खान पान स्नान ॥
गावै यह पद सूरको,सो मैं करौं बखान ॥ ३ ॥

पद–जो विधिना निज वश करि पाऊं ॥
तौ सब कहो होय सखि मेरो,अपनी साध पुराऊं ॥

लोचन रोम रोम प्रति माँगौं,पुनि पुनि त्रास देखाऊं ॥
यकटक रहै पलक नहिं लागै, पद्धति नई चलाऊं ॥
कहा करौं छबिराशि श्यामघन लोचन द्वै न अघाऊं ॥
येते पर ये निमिष सूर सुनु,यह दुख काहि सुनाऊं ॥

दोहा—यह गावत मीरहि भये,जल बिन सात उपास ॥
भूप बोलाय महंतको,किय वृत्तांत प्रकाश ॥ ४ ॥

ताको मरन निहारि महंता। जैमिलसों तब कह्यो हसंता ॥
मूरति चहै जो सुता तुम्हारी। करै विनय यदुनाथ पुकारी ॥
स्वप्न देहिं जो गिरिधर लाला। तौ मैंदेहुँ मूर्ति यहि काला ॥
अस कहि गयो महंतहु डेरा। सोवत में गिरिधर तेहिं टेरा ॥
चहौ जो भल तुम बिन संदेहू। तौ हमको मीरा कहँ देहू ॥
अर्द्धरात्रि उठि डरचो महंता। आयो भूपति भवन तुरंता ॥
मूरति मीराके घर दीन्ह्यो। आप गवन वृंदावनकीन्ह्यो ॥
गिरिधरलाल प्राण सम पाई। मीरा पूजन लगी सदाई ॥
गिरिधरलाल विना क्षण नाहीं। मीरा रहै भवन निज माहीं ॥
खान पान खेलन दिन राती। गिरिधर सँग करती सब भांती
मारवाड़ जो देश अमाना। नगर जोधपुर तहां महाना ॥
जैमिल भूप जाति राठौरा। करत राज्य शासन चहुँ ओरा॥

दोहा—दुहिता द्वादश वर्षकी, व्याहन योग्य निहारि ॥
पठै पुरोहित उदयपुर, विरच्यो व्याह विचारि॥ ५ ॥

क्षत्रिय जाति शिरोमणि राना। जाको जाहिर सुयश जहाना ॥
राना साजि बरात अपारा। व्याहन चल्यो मानि सुखसारा॥
जैमिल भूप किये व्यवहारा। ह्वैगो जबै द्वारको चारा ॥
आयो जबै भावँरी काला। तब मीरा कह वचन रसाला॥
गिरिधरलाल जाय जब आगे। बैठें मंडप तरे सवागे ॥

तब हम मंडप तरे सिधारब। गिरिधरलाल भावँरी पारब॥
भये चकित यह सुनिपितुमाता। कियो प्रथित मीराकी बाता॥
गिरिधर लाल तहां लै आई। मंडप तरे दियो बैठाई॥
मीरा आय कियो तब चारा। गिरिधरलाल भावँरी पारा॥
राना भवन गयो उठि जबहीं। मीरासों माता कह तबहीं॥
चरित कौन यह कियो कुमारी। प्रगट कहै सब हेतु उचारी॥
तब मीरा नेसुक मुसकाई। मंद मंद सुंदर यह गाई॥

पद—माई म्हाको स्वप्नमें बरनी गोपाल।
राती पीती चूनरि पहिरी मेहँदी पाणि रसाल॥
कांई औरकी भरौं भांवरै, म्हाको जग जंजाल॥
मीरा प्रभु गिरिधरन लालसों करी सगाई हाल॥ १॥

दोहा—यह सुनिकै माता पिता, मीरासों कह बानि॥
जो चाहै सो मांगिले, धन माणिक मनमानि॥ ६॥
तब मीरा पितु मातुसों, बोली यह पद गाय॥
कृष्ण विवाह उछाह भरि, नयन प्रवाह बहाय॥ ७॥

पद—देरी अब माई म्हाको गिरिधर लाल॥
प्यारे चरणकी आनि करतिहौं, और न दे मणि माल॥
नात सगो परिवारो सारो, मने लगै मनो काल॥
मीराप्रभुगिरिधरनलालकी छवि लखि भई निहाल॥२॥

दोहा—सुनि मीराके वचन तब, जननी जनक तुराय॥
प्रथमहि गिरिधरलालको, दिय पालकी चढ़ाय॥८॥

राना लै बरात घर आयो। मीरै वधू प्रवेश करायो॥
दुलहिनि दूलह लै तहँ सासू। गे कोहवर कुलदेव निवासू॥
तहँ कुलदेव मूर्त्ति अति पावन। मीरहि पूजा लगीं करावन॥
वृद्ध वृद्ध आईं जुरि नारी। लगीं सिखावन रीति उचारी॥

तब मीरा बोली मुसक्याई । पूजा रीति मोहिं नहिं भाई ॥
यदुकुलदेव देवकहँ त्यागी । द्वितिय देवकर सेवन रागी ॥
कही सासु तब मंजुल वानी । मम कुल रीति बहू नहिं जानी ॥
ये कुलदेव सदाके म्हारे । पूजे रही सोहाग तिहारे ॥
यह सुनि चितै चहूंकित मीरा । बोली विधवन लखि मतिधीरा ॥
इनके पूजत बढ़ै सोहागा । यह जो कह्यो मृषा मोहिं लागा ॥
ये सब तिय जे तुव घर आईं । पूजे ह्वैहैं देव सदाईं ॥
भईं कहौ विधवा केहि हेतू । मोहिं दीसैं द्वै चारि निकेतू ॥

दोहा—सासु बहूके वचन सुनि, कह्यो वचन अति कोपि ।
दुलहिनि देहरी देत पग, दई लाज सब लोपि ॥ ९ ॥

और सबै रानाकी रानी । राना सों चलि वचन बखानी ॥
भयो कुमार विवाह उछाहू । पै यह अति दारुण दुखदाहू ॥
बहू ढीठि वैकलि बिन लाजू । करै यथोचित नहिं कुलकाजू ॥
राना सुनि मन मानि गलानी । रानी सों अस गिरा बखानी ॥
भूतमहलमहँ देहु अवासू । आपहि ते ह्वै जैहै नासू ॥
तब दुलहिनि मीराको लाई । भूतमहलमहँ दियो टिकाई ॥
कियो कुवँरकर द्वितिय विवाहू । मीरा मान्यो महा उछाहू ॥
जो नैहरते सम्पति लाई । तामें इक मंदिर बनवाई ॥
गिरिधरलालहि तहां पधारी । पूजहि रोज मानि सुख भारी ॥
बजैं झांझरी शङ्ख नगारे । गये प्रेत सब देव अगारे ॥
मीरा नाम जग्यो जगमाहीं । आवैं संत अनंत तहांहीं ॥
करैं भजन गिरिधरके मंदिर । प्रगटत रोजहि आनँद चंदिर ॥

दोहा—रोजहिं संत जेवांयकै, रोजहिं चरण पषारि ।
सलिल शीश मीरा धरहि, नयन प्रेम जल ढारि ॥ १० ॥

गिरिधर ढिग लै आप तमूरा । गावै सुंदर पद रचि पूरा ॥

दशा देखि राजाकी रानी । आई सब अति अमरष सानी ॥
लगीं बुझावन वहुविधि मीरै । क्यों उपजावति कुलकहँ पीरै ॥
मुडियनको बहु संग नकीजै । निज कुलरीति सदा गहि लीजै॥
सुनिहै तुव गति जो महराना । तौ किमि बची तोरि पुनि जाना॥
तब मीरा बोली हँसि वानी । का समुझावहु मोहिं अज्ञानी ॥
तुमहिं न समुझि परै संसारू । देखिपरै मोहिं नंदकुमारू ॥
कही सासु तब अमरष सानी । तैं अज्ञानि मोहिं कह अज्ञानी॥
मम कुलदेव अहैं यक लिंगा । करै तासु तैं भजन अभंगा ॥
तब मीरा अस गिरा उचारी । सोउ सेवैं मेरे गिरिधारी ॥
जाहु सबै घर जनि बतराहू । मेरे मरे न अछु दुख दाहू ॥
मोहिंतो संत संग सुख होई । और बात बोलौ जनि कोई ॥

दोहा—अस सुनि मीराके वचन,सासु ननद अनखाय ॥
रानाके ढिग जायकै,दीन्हीं दशा सुनाय ॥ ११ ॥

मीरा चरित सुनत तब राना । कुलकलंक मीराकृत माना ॥
मनमहँ लीन्ह्यो तुरत विचारी । मीरा जाय कौन विधि मारी ॥
तब रानी अस कह्यो उपाई। यहि विधि सों नहिं बची बचाई ॥
जहर घोरि कंचनके प्याला।कहि चरणामृत गिरिधरलाला ॥
तेहि ढिग भेजिदेहु महराना । पावतही करिहै सो पाना ॥
राना जहर घोरि यक प्यालै । सासु हाथ पठयो तेहि आलै ॥
सासु कह्यो मीरा तू जाई । तोरि चूक दिय माफ कराई ॥
है प्रसन्न तोपर महराना । चरणामृत पठयो भगवाना ॥
तब मीरा अस वचन वखाना । गिरिधरलाल सत्य भगवाना ॥
ताकर तुम चरणामृत लाई । मेरो सब विधि दियो बनाई ॥
अस कहि लियो जहरकर प्याला।कियो पान कहि गिरिधरलाला॥
गिरिधरलाल समीप सिधाई । सासु ननद कहँ गई लेवाई ॥

दोहा—तहँ अस पद कहँ विमल रचि,गावनलगी सप्रेम ॥
सो मैं इत लिखिदेतहौं, श्रोता सुनहु सनेम ॥ १२ ॥
पद—रानाजी जहरदियो सो जानी ॥
जिन हरि मेरो नाम निबेऱ्यो,छऱ्यो दूध अरु पानी ॥
जबलगि कंचन कसियत नाहीं, होत न बाहिर बानी ॥
अपने कुलको परदा करिदो,हम अबला बौरानी ॥
श्वपच भक्त वारौं तन मन जे,हौं हरि हाथ विकानी ॥
मीरा प्रभु गिरिधर भजिवेको,संत चरण लपटानी॥१॥
हमारे मन राधा श्याम बसी ॥
कोई कहै मीरा भई बावरि, कोई कहै कुल नसी ॥
खोलिकै घुंघुट पारिकै गाती,हरि ढिग नाचत गसी ॥
वृंदावनकी कुंजगलिनमें, भाल तिलक उर लसी ॥
विषको प्याला रानाजी भेज्यो, पीवत मीरा हँसी ॥
मीराके प्रभु गिरिधर नागर,भक्तिमार्ग में फँसी ॥
सोरठा—मीरा यह पदगाय, विषप्याला पीवनकियो ॥
गयो सो गरल विहाय,नशा न कीन्ह्यो नेकहू ॥११॥
तदपिनकछुमनसमझ्योराना। सुनन लग्यो पुनि चुगुल बखाना।
एक समय मीरा हरि दासी । अर्द्धरात्रि हरि प्रेम हुलासी ॥
करि पट बंद मंदिरहि जाई । नाचति गावति भाव बताई ॥
गिरिधरलाल प्रत्यक्ष बताने । मीराके रस वश में ठाने ॥
पुरुष वचन सुनि दासी दौरी । रानासों कह मतिकी बौरी ॥
कोउ यक पुरुष भवन महँ आयो। मीरासों प्रत्यक्ष बतरायो ॥
सुनि राना सकोपि उठि धायो । कर करिकै करवालहि आयो॥
खोल्यो पट पूँछ्यो कस मीरा । कौन पुरुष इत रह्यो सधीरा ॥
मीरा कह्यो न नयनन देखों।गिरिधर छोड़ि द्वितिय कस लेखों॥

इतै न द्वितिय पुरुष संचारा । छोंड़ि छैल यक नंदकुमारा ॥
मीरा वचन सुनत तब राना । लज्जित भयो न वचन वखाना॥
तब मीरा तुरतहिं पद ठानै । गावनलगी सुनावत रानै ॥
दोहा—सो पद इत लिखि देतहौं,श्रोता सुनहु सचाय ॥
श्रीमीराके पद विमल, मोको अधिक सोहाय ॥१३॥
पद—रानाजी मैं साँवरे रँग रांची ॥
सजि शृँगार पद बांधि घूंघुरू,लोक लाज तजि नाची॥
गई कुमति लहि साधुकी संगति, भक्तिरूप भई सांची॥
गाय गाय हरिके गुण निशि दिन,काल व्याल सों बांची॥
उन बिन सब जग खारो लागत, और बात सब कांची॥
मीरा श्रीगिरिधरनलाल सों, भक्ति रसीली यांची ॥५॥
दोहा—सुनि मीराकी वाणि प्रभु, मनमें मानि गलानि ॥
गवन कियो निज भवनको, रवण रमापति जानि१४॥
पुनि मीरा सब संत समाजा । बैठनलगी छोंड़ि कुल लाजा ॥
एक समय इक साधु सिधायो । मीराको अस वचन सुनायो ॥
मीरा तुम गिरिधरकी दासी । मैं गिरिधरको दास हुलासी ॥
मोहिं दियो गिरिधर यह शासन। जाय करो मीरा दुख नाशन॥
ताते अंग संग मोहिं दीजै । गिरिधरको शासन गुणिलीजै॥
मीरा कही भली यह बाता । भोजन करहु अबहिं तुम ताता॥
अस कहि सादर संत जेवाई । साधु समाजहिं सेज बिछाई ॥
कह्यो साधुसों मनकी कीजै ।सकल दुचित चितकीतजिदीजे॥
साधु कह्यो कहुँ जनके यूहा । होती केलि कला करि कूहा ॥
मीरा कह्यो न कहूं यकंता । कहो ठोर जहँ नाहिं श्रीकंता ॥
वसहिं ततुहि महँ देव अपारा । रवि आदिक अश्वनीकुमारा ॥
ते सब पाप पुण्य कहि देते । यम जस उचित दंड तेहिं देते॥

दोहा–मीराके अस वचन सुनि, हिय पट खुले तुरंत ॥
गह्यो चरण कहि करु क्षमा, देहि भक्ति भगवंत॥१५॥
तब मीरा यह गाय पद, दियो मंद मुसक्याय ॥
संत मंडली चरित लखि, रहे सबै शिरनाय ॥ १६ ॥
पद–येरी मैंतो दरददिवानी मेरा दरद नजानै कोय ।
घायलकी गति घायल जानै और नजानै सोय ॥
छूरी ऊपर सेज हमारी पौढ़न केहि विधि होय ।
मीराको दुख तबहिं मिटै जब वैद सँवलिया होय ॥१॥
दोहा–यहि विधि मीराको सुयश, प्रगट्योसकल जहान ।
बादशाह अकबर सुन्यो, दरश हेतु हुलसान ॥ १७ ॥
तानसेनको संगले, अपनो वेष छिपाय ।
आयो मीराजी निकट, बैठतभो शिरनाय ॥ १८ ॥
तानसेन पूंछतभयो, गानभेद बहु नेत ।
सो मैं भाषा इत लिखौं, सबके समुझन हेत ॥ १९ ॥

तानभेद,रागभेद, वाद्य वादक लक्षण तालनके भेद इत्यादि॥
तब श्रीमीराजी विस्तारते पूर्ण तानभेद, अपूर्ण तानभेद, पुनरुक्त तानभेद, तीनिग्राम सप्तस्वर छप्पन मूर्छना ते सब करिकै फेरि ताल एकसै बीस तिनके नाम भेद फेरिदुइसै चौंसठि राग जे संगीत रत्नाकरादि ग्रंथोंमें तिनके नामभेद कह्यो पुनि रागनके आलापके वर्ण ते कह्यो फेरि जौन राग जौन ऋतु में जौन पहरमें गाइबे योग्यहै और जौन रागको जौन देवताहै सो कह्यो फेरि भाषांग क्रूपांग उपांग और इनके नाम भेद कह्यो फेरि वीणा लक्षण फेरि मृदंगकी उत्पत्ति कह्यो फेरि वादक चरित प्रकार वादक १ मुखरी २ प्रतिमुखरी ३ गीतानुग ४ तिनके सब

लक्षण कह्यो अरु त्राटनजोबाव ताके वर्ण कह्यो फेरि उतनिग्रह समअतीत अनागत तिनके लक्षण कह्यो फेरि बाद्य प्रबंधमें तीनि प्रकारके लय द्रुत मध्य विलंबित इनके लक्षण अरु जौन गृहमें जौन लय रहैहै सो कह्यो फेरि चंचत्पुट चाचपुट जे ताल और जे वर्ण बोल बजावतमें निकसैं ते कह्यो फेरि गीतमाहात्म कह्यो तब बादशाह अकबर औगानवेत्ता तानसेन ते मग्न ह्वैगये बार बार मीराको सराहिकै प्रणाम कियो अरु अपने मनमें जानिलियो कि जो मीराजीको श्रीगिरिधरलालजी प्रत्यक्षहैं सो बात सत्यहै फेरि तानसेन ओर ताकि मीराजीसों अपनो उबार पूछ्यो तब मीराजी राजनीति कहिकै फेरि साधुनके दरश परशते सबहीको उद्धार होयहै यह कह्यो ॥ ३ ॥

दोहा–पुनि मीरा बोली वचन, सुनहु अकब्बरशाह ।
कहौं एक इतिहासमैं, ज्ञान विमल जेहिंमांह ॥२०॥

कोऊ भूप रह्यो इक पापी । सब जीवनको अति संतापी ॥
इक दिन खेलन गयो शिकारा । मग आवत इक साधु निहारा ॥
साधू रहै लगाये छाता । ताहि देखि नृप अमरष माता ॥
कह्यो उतारहु छत्र तुरंता । नातो होत अबहिं तुव अंता ॥
साधु घामवश छत्र न टारयो । तब राजा तेहि नेजा मारयो ॥
भूपति आयुध हन्यो कितेकौ । हरि रक्षित लागी नहिं येकौ ॥
छत्र उतारयो साधु डेराना । भूपतिके उपज्यो कछु ज्ञाना ॥
छत्र उठाय साधुको दीन्ह्यो । सो अपने आश्रम मग लीन्ह्यो ॥
मरयो भूप लैगे यमदूता । देन लगे यमदंड अकूता ॥
चित्रगुप्त कह कछु किय धर्मा । साधुहि दियो छत्र अतिघर्मा ॥
यम कह ल्याउ विकुंठ देखाई । लैगे दूत ताहि दौराई ॥
लखत विकुंठ लखे हरिदासा । ताहि देखायो अपने पासा ॥

दोहा—यमदूतनते कर फटक, गयो भूप हरिधाम ॥
साधुहि छत्र प्रदानते, भयो भूप कृतकाम ॥ २१ ॥
ऐसो साधु प्रभाव तुम, गनहु अकब्बर शाहि ॥
सकलसुकृतको मूल किय,संत प्रशंसत जाहि ॥२२॥
पुनि अकबरके सन्मुखै, तकि गिरिधरके ओर ॥
मीरा गायो विमल पद, सकल संत चित चोर॥२३॥
पद—माईरी मैं सँवलिया जानो नाथ।
लेन परचो अकबर आयो तानसेन लै साथ ॥
राग तान इतिहास श्रवण करि, नाय नाय महिमाथ ॥
मीराके प्रभु गिरिधर नागर, कीन्ह्यो मोहिं सनाथ ॥१॥
दोहा—जादिन मीरा दरश करि, अकबर आयो धाम ॥
तादिन कोउ अकबर उपर,करिकैमारन काम ॥२४॥
पुरश्चरण अति घोर किय, हनूमानको ध्याय ॥
पवनपूत कोपित महा,तुरत आगरे आय ॥ २५ ॥
अकबरको मारन गयो, धारे गदा कराल ॥
तहँ ठाढ़े देखत भयो, दोऊ दशरथलाल ॥ २६॥
तब प्रभुपद शिरनायकै, आयो लौटि तुरंत।
करताके शिर देत भो, गरू गदा हनुमंत ॥ २७ ॥
यह मीराके दरशको, जानहु सकल प्रभाव ॥
मरत भयो अकबर अमर,राखि लियोरघुराव॥२८॥
येतेहु पै राना कुमति, मीरहि जान्यो नाहिं ॥
मीरासों करि वैर अति, भूलि रह्यो जगमाहिं ॥२९॥
यक डब्बामें अहि अति कारो। मीरा पूजन समय विचारो ॥
यक दूती कर भेज्यो धामा। लहिये यामें शालिग्रामा ॥
दूती कह मीरासों जाई। शालिग्राम लेहु सुखदाई ॥

मीरा महालाभ मन मानी । दूतीको किय दारिद हानी ॥
गिरिधर पूज्यो गिरिधर प्यारी । पुनि डब्बाको लियो उघारी ॥
शालिग्राम शिला तेहि माँहीं । निरखत में सब संत तहांहीं ॥
शालिग्राम शिला कहँ पाई । मीरा बार बार बलिजाई ॥
पूज्यो नयनन हृदय लगायो । यह अचरज सबके मन आयो॥
रानासुनि अतिविस्मित भयऊ । तबहुँ न राग रोष मन गयऊ ॥
पुनि मीरा गिरिधर ढिग आई । प्रेम मगन दृग आंशु बहाई ॥
गावन लगी विमल पद रचिकै । भाव बतावति सन्मुख नचिकै॥
ते पद मैं इत लिखौं बनाई । सुनहु सकल श्रोता मन लाई ॥

दोहा—मीराजीके विमल पद, तिनमें अतिशय भाव ।
सुनत गुनतगावत जपत, अतिशय होत उराव ३०

पद—डब्बाके शालिकराम बोलत कायनाहियां ।
हम बोलत तुम बोलत नाहीं, काहेको मौन धरे पहियां ॥
यह भवसागर अगमबड़ोहै,काढ़िलेहु गहिकै बहियां ।
मीराके प्रभु गिरिधर नागर,तुमहींहो मोर सहहियां॥१॥
राना म्हारों कांई करिहै मीरा छोड़िदई कुल लाज ।
विषको प्याला रानाजीने भेज्यो मीरा मारन काज ॥
हँसिकै मीरा पायगईहै, प्रभु प्रसाद पर राग ।
डब्बा इक रानाजी भेज्यो, उसमें कारा नाग ॥
डब्बा खोलि मीरा जब देख्यो, ह्वैगयौ शालिग्राम ।
जय जय ध्वनि सब संत सभा भइ,कृपा करी घनश्याम॥
संजि शृंगार पग बांधि घूंघुरू, दोउ कर देती ताल ।
ठाकुर आगे नृत्यकरत रही, गावत श्रीगोपाल ॥
साधु हमारे हम साधुनके, साधु हमारे जीव ।
साधुन मीरा मिलि जो रहीहै,जिमि माखन मे घीव॥२॥

दोहा–एक समय मीरा तनुहि भई व्यथा अतिघोर ।
तब यह पद गावनलगी, सकल सुखद शिरमोर ३१
पद–बड़िबड़ि अँखियन वारो सांवरो मोतन हेरो हँसिकैरी।
हौं यमुनाजल भरन जातही, शिर पर गागरि लसि कैरी॥
सुंदरश्याम सलोनी मूरति, मो हियरे में वसिकैरी ।
जंतरलिखिल्यावोमंतरलिखिल्यावो,औपधिलावोवसिकैरी
जो कोउ लावै श्याम वैदको, तो उठिबैठों हँसिकैरी ॥
भ्रुकुटिकमानवाणवाकेलोचन,मारत भरिभरि कसिकैरी
मीराके प्रभु गिरिधर नागर, कैसे रहौं घर वसिकैरी॥१॥
दोहा–एतेहुपै राना कुमति, तज्यो न हट शठ जोर ।
भजन करत मीरै लग्यो, करन उपद्रव घोर ॥ ३२ ॥
तब मीरा यह पत्रिका, विनती प्रेम प्रकाश ।
पठै दियो यक संतकर, तुलसिदासके पास ॥ ३३ ॥
भजन–स्वस्तिश्री तुलसी गुण दूपण हरण गोसाई । बारहिंबार प्रणाम करहुँ अब, हरहु शोक समुदाई ॥ घरके स्वजन हमारे जेते, सबन उपाधि बढ़ाई । साधु संग और भजन करत मोहिं, देत कलेश महाई ॥ बालपनेते मीरा कीन्हीं, गिरिधरलाल मिताई ॥ सोतो अब छूटत नहिं क्योंहूं,लगी लगन बरियाई ॥ मेरे मात पिताके सम हौ, हरि भक्तन सुख दाई ॥ हमको कहा उचित करिबोहै,सो लिखियो समुझाई ॥१॥
दोहा–मीराकी लहि पत्रिका,तुलसी भरि आनंद ।
तासु उतर यह लिखत भो,सुमिरत दशरथ नंद॥३४॥
पद–जिनके प्रिय न राम वैदेही॥
तिन त्यागिये कोटि वैरी सम,यद्यपि परम सनेही ॥
पिता तज्यो प्रहलाद विभीषण, बंधु भरत महतारी ।

वलि गुरुतज्यो कंत व्रजवनितन, भे जग मंगलकारी ॥
नातो नेह रामसों सांचो, सुकृती संत जहांलों ।
अंजन कहा आंखिजो फूटै, बहुतक कहौं कहांलों ॥
तुलसीदास पूज्य सोइ पीतम, पुत्र प्राण तेप्यारो ।
जाको लग्यो सनेह रामसों, सोइ जगहितू हमारो ॥

सवैया—सो जननी सो पिता सोइ, भाई सो भामिनि सो सुत सो हित मेरो। सोई सगो सो सखा सुत सेवक, गुरु सो सुरसाहब चेरो ॥ सो तुलसी प्रिय प्राण समान, कहां लों बनाय कहौं बहु तेरो। जो तजि देहको गेहको नेह, सनेहसों रामको होय सवेरो२॥

दोहा—यह तुलसीकी पत्रिका, मीरा सादर लीन ।
वृंदावनको चलि दियो, कुल नातो तजिदीन ॥३५॥
रच्यो विमल ये युगल पद, नागर नवल संभारि ।
श्रोता सुनहु सप्रेम सब, मैं इत लिखों विचारि॥३६॥

भजन—मेरो मन लग्यो सखी सँवलियासों, काहूकी वरजी नाहिं रहौंगी॥जो कोउ मोंको एक कहैगी, एक की लाख कहौंगी॥ सासु बुरीहै ननँद हठीली, यह दुख काहिं बहोंगी । मीरा प्रभु गिरिधरके कारण, जग उपहास सहोंगी ॥ मेरे गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई । जाके शिर मोरमुकुट मेरो पति सोई ॥ शंख चक्र गदा पद्म कंठ माल जोई । संतन ढिग बैठि बैठि लोक लाज खोई ॥ अबतो बात फैलिगई जानै सब कोई। मैंतो परम भक्ति जानि जक्त देखि मोई ॥ मात पिता पुत्र बंधु संग नाहिं कोई । मैं पियाको देखि हँसी लोग जान रोई ॥ अँसुवन जल सींचिरप्रेम बेलि बोई । लोक त्रास छोंड़िदियो कहा करै कोई ॥ मीराकी लगन लगी होनि हो सोहोई ॥ २ ॥

दोहा–मीराजी राना निकट, ये द्वै पद पठवाय।
आप बसी तुलसी विपिन, संत समाजहि जाय ॥३७॥

कवित्त– देव मुनि पूजत अतीव प्रिय माधवको, जीव जहां जात मुक्ति पावै रजधारते॥ धन्य धरणीको धरि कलिको कुकाम करि, पापी परगति भरि दरश करारते॥ रघुराज जाको यदुराज नाहिं छोंड़ै क्षण, बारा वन बारा उपवनके विहारते। सस्ती अति सौदा बिकै गृहिन विरक्तनको वृंदावन वीथिनमें मुक्तिके बजारते ॥ १ ॥

दोहा–ऐसी तुलसी विपिनमें, मीरा कियो प्रवेश।
बारावन उपवन सकल, विचरत भई हमेश ॥ ३८ ॥
सखीरूप तहँ ह्वै गई, टेरत गिरिधर नाम।
एक दिवश कहुँ कुंजमें, आय मिले तेहिं श्याम॥३९॥
तब यह पद गावत भई,कुंजन कुंजन टेरि॥
सादर सब श्रोता सुनहु, लिखत अहों इत हेरि॥४०॥

पद–लावनी॥आजुहौं देख्यों गिरिधारी॥
सुंदर वदन मदनकी सोभा चितवनि अनियारी।
बजावै वंशी कुंजनमें ॥
गावत ताल तरंग रंग ध्वनि नचत ग्वाल गनमें॥
माधुरी मूरतिहै प्यारी॥
बसी रहै निशि दिन हिरदै में टरे नहीं टारी॥
ताहि पर तन मन वारी॥
वह मूरति मोहनी निहारत लोक लाज डारी॥
तुलसीवन कुंजन संचारी॥
गिरिधर लाल नवल नटनागर मीराबलिहारी॥

पद–जबते मोहिं नंदनँदन दृष्टि पर्यो माई॥

तबते परलोक लोक कछूना सोहाई ॥
मोर मुकुट चंद्रिकासु शीश मध्य सोहै ॥
केसरि को तिलक उपर तीनि लोक मोहै ॥
साँवरो त्रिभंग अंग चितवनिमें टोना ॥
खंजन औ मधुप मीन भूलै मृग छोना॥
अधर बिम्ब अरुण नयन मधुर मंदहांसी ॥
दशन दमक दाड़िम द्युति दमकै चपलासी ॥
क्षुद्र घंटिका अनूप नूपुर ध्वनि सोहै ॥
गिरिधरके चरण कमल मीरा मन मोहै ॥

दोहा—उद्धव कुंड सिधारिकै, पुनि गोपी सम्वाद ॥
मीरा गायो विमल पद, भरि उरविरह विषाद ॥४१॥

पद—सांवरेकी दृष्टि मानौं प्रेमकी कटारीहै ॥ लागत विहाल भई गोरसकी सुरति गई,तनहूं में व्याप्यो काम मद मतवारीहै॥ चंद्रतो चकोरनीके दीपक पतंग दाहै, जल बिन मीन जैसे अधिक पियारीहै ॥ सखी मिलि दोई चारि वावरी भई निहारि, मैं तो याको नीके जानो कुंजको विहारी है ॥१॥ तिहारे कुबिजाही मन मानी हमसे न बोलना हो राज ॥ हमसों कहै सोहाग उतारो दृग अंजन सबहीं धोय डारो,माथे तिलक चढ़ाओ पहिरि चोलना हो राज ॥ हमरी कही विषै सम लागै घर घर जाय भँवर रस जागे उनहींकेसँग रहना सहना बोलना होराज ॥ वृंदावनमें धेनु चरावै वंशीमें कछु अचरज गावै, बांकी तान सुनावै बोलियां बोलना होराज ॥ हमरी प्रीति तुम्हैं सँग लागी लोकलाज सब कुलकी त्यागी मीराके गिरिधारी वन वन डोलना होराज ॥ २ ॥

दोहा-बंशीवट तटके निकट, येक समय रट लाय ॥
मीरा गायो युगलपद, परम प्रीति रस छाय ॥ ४२ ॥

पद-रस भरिआं महराज मोको आय सुनाई बांसुरी ॥
सुनत बांसुरी भई बावरी निकसन लागी सांसुरी ॥
रकत रतीभर ना रह्यो न मासा मांसुरी ॥
तनुतोलाभर ना रह्यो रही निगोड़ी सांसुरी ॥
मैं यमुनाजल भरन जाति थी सासु ननँदकी त्रासुरी ॥
मीराके प्रभु गिरिधर मिलिगे पूजी मनकी आसुरी ॥
बाजनदे गिरिधरलाल मुरली बाजनदे ॥
सप्त सुरन मुरली बजी कहुँ कालिंदीके तीर ॥
शोर सुनत सुधि ना रही मेरी कित गागारि कितनीर॥
बैठि कदमके चौतरा सब ग्वालन लिये बोलाय ॥
खेलत रोकत ग्वालिनी मुरली शब्द सुनाय ॥
पांसा डारे प्रेमके मेरो सब धन लैगे लूटि ॥
मीराके प्रभु साँवरे तुम अब कहँ जैहौ छूटि ॥ २ ॥

दोहा-गोकुलमें पुनि आयकै, गोकुल नंद सँभारि ॥
मीरा गायो एक पद, सो मैं कहौं उचारि ॥

पद-सखि मोहिं लाज बैरिन भई ॥
चलत लाल गोपाल पियके संग क्योंना गई ॥
चलन चाहत गोकुलहिंते रथ सजायो नई ॥
रुक्मिणी सँग जाइबेको हाथ मींजत रई ॥
कठिन छाती श्याम बिछुरत बिहरि क्योंना गई ॥
तुरतलिखि संदेश पियको काहि पठऊं दई ॥
कूबरी सँग प्रीति कीनी मोहिं माला दई ॥
दास मीरा लालगिरिधर प्राण दक्षिनादई ॥ १॥

दोहा—जीव गोसांई कोउ रहे, हरि रति रसिक सुजान ॥
कबहुँ तासु पद दरश हित,मीरा मन हुलसान॥४४॥
जीवगोसांई पाय सुधि,कहिपठयो तेहि पास ॥
मैं नारी मुख लखहुं नहिं,नेम कियो तजि आस॥४५॥
कहि पठयो मीरा तबै, परदो बीच लगाय ॥
संभाषण कीजै प्रभू, उभै अर्थ साधि जाय ॥ ४६ ॥
जीवगोसांई मानि तब, भेज्यो ताहि बोलाय ।
पटकेंवार के ओटमें,बैठी सो शिरनाय ॥ ४७ ॥
मीरा तब कर जोरिकै, बोली वचन सप्रेम ।
प्रीति रीति मिसि त्यागि रिसि,तजै गोसांई नेम॥४८॥

कवित्त—आजलौं कानन में तुलसीवन कानन मैं न सुनी कहुँ ठाईं ॥ वेद पुराणनहूंके वखान सुजानन आननमें नहिं पाई ॥ श्रीरघुराज विना ब्रजराज दुती नहिं पूरुष पूरुषनांई॥तू- द्रिती पूरुष ह्वै कस बैठे अहौ ब्रजमें अब जीवगोसांई ॥ १ ॥

तामें प्रमाण—वासुदेवःपुमानेकःस्त्रीप्रायमितरज्जगत् ।

दोहा—सुनि मीराके वचन वर, कृष्ण मिलापी जानि ।
जीव गोसांई छोड़ि पट,मिले ढारि अँसुवानि॥ ४९ ॥
यहि विधि ब्रजमंडल सकल, मीरा वसि बहु काल ॥
गईं उदैपुरको कबहुँ, जानन राना हाल ॥ ५० ॥
रानाकी लखि विषम मति, किय द्वारका पयान ।
क्षण क्षण हरिगुण गावती, संत संग सहसान ॥ ५१ ॥

भजन—द्वारकाको वास हो मोहिं द्वारकाको वास ।
शंख चक्रहुं गदा पद्महुं ते मिटै यमत्रास ॥
सकल तीरथ गोमतीमें करत नित्य निवास ।
शंख झालरि झांझ बाजै सदा सुखकी रास ॥

तज्यो देशौ वेष पतिगृह तज्यो संपति राजि।
दासि मीरा शरण आई तुम्हें अब सब लाजि॥ १॥

दोहा—दरशन करि रणछोड़के, ह्वै प्रसन्न पद गाय॥
नृत्य करै आनँद भरै, दशावर्णि नहिंजाय॥ ५२॥
इतै उदैपुरमें भयो, रानाको उत्पात।
बोलि कही उपरोहितन,दुखित भये अति गात॥५३॥
लावहु मीराको इतै, तबतो जीवन मोर।
कहा कहौं कहिजात नहिं, भयो मोहिं अति भोर ५४
उपरोहित चलि द्वारका, बैठि धरन करि दीन।
कह्यो चलहु मीरा भवन, नातो जिय अबलीन॥५५॥
तब मीरा रणछोडपै,बिदाहोन हित जाय।
ये त्रय पद रचिकै कियो, विनती आंसु बहाय॥५६॥

भजन—आई छूंजी राजा रणछोड शरणै थांथै आई छूंजी राजारणछोड॥ हितसूं ब्राह्मण भेजदियाहै लावोनीमिडतणीवहोड धरम संकट दीयोब्राह्मणा बैठी मांदिरमैंदोड ॥ आपणी ढिग राखिसांवरा विनती करूं करजोड ॥ कैमं पाछी जाऊं जगतमैं लागै ह्मांनै मोटीखोड॥ भयो प्रकाश मंदिरमैं भारी ऊगा सूरजाकिरोड ॥ ऐसो रूप देख कृष्णको आई मंदिरमें दोड॥ नीर खीर ज्यों मिलग्या सजनी परमानंदकीओड ॥ जनालिछमणसाजोजमुगतमैं धनि मीरा राठोर॥

भजन—यहपदप्रस्ताऊ॥ हरि तुम हरो जननकी भीर।
द्रौपदीकी लाज राखी तुम बढ़ायो चीर॥
भक्त कारण रूप नरहरि धरयो आप शरीर।
हिरण्यकश्यपु मारिलीन्ह्यो धरयो नाहिन धीर॥
बूड़तहीं गज ग्राह मारो कियो बाहेर नीर।

दासि मीरा लालगिरिधर दुष्ट जहँ तहँ पीर ॥ १ ॥
ज्यों जानो त्यों लिये सजन सुधि ज्यों जानौ त्यों लीजै।
तुम विन मेरे और न कोऊ कृपा रावरे कीजै ॥
वासर भूख न रैन न निद्रा यह तनु पल पल छीजै॥
मीरा प्रभु गिरिधर नागर अब मिलि विछुरननहिंजीजै।

दोहा–नृत्यत नूपुर बांधिकै, गावत लै करतार।
देखतही हरिमें मिली, तृण सम गनि संसार ॥ ८७ ॥
मीराको निज लीन किय, नागर नंदकिशोर।
जग प्रतीत हित नाथ मुख, रह्यो चूनरी छोर ॥ ८८ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
सप्ताशीतितमोऽध्यायः ॥ ८७ ॥

अथ गोस्वामिकी कथा ॥

दोहा–विष्णुपुरी गोस्वामिकी, कथा कहौं अभिराम ॥
कलि जीवन उद्धार हित, प्रगट्यो जो जग ठाम ॥१॥
श्रीभागवत पुराण जो, शोभित सिंधु समान॥
खैंचि भक्त रत्नावली, विरच्यो ग्रंथ महान ॥ २ ॥

तामें भगवत धर्म बखाना। और धर्मको किय न प्रमाना॥
कृष्ण कृपा फल लगिवोकांहीं। दरशायो सत्संगहि माहीं॥
खैंचि भागवत किय यह ग्रंथा। वरणों तासु हेतुको पंथा॥
नाम कृष्ण चैतन्य सुसंता। एक समय में अति मुदवंता॥
जगन्नाथ क्षेत्रहिमें जाई। भक्त समाज लिये सुखदाई॥
बैठो रहो शिष्य तिनकेरो। विष्णुपुरी जो रहै निवेरो॥
ताको करत काशिमें वासा। बीति गये बहु दिन सहुलासा॥
कहे वचन सब संत सुनाई। विष्णुपुरी जो काशी जाई॥

बहु दिन वस्यो सो अस हम जाने ।श्रीपति भक्ति निरादर ठाने
कीन्ह्यो अहै मोक्षकी चाहा । सुनिये वचन स्वामि सउछाहा॥
संतनकी आशय उर जानी । लेन परीक्षा तेहि गुणखानी ॥
विष्णुपुरीको पत्र लिखायो । यक अमोल मणिमाल सुहायो ॥
दोहा—हमको देहु पठाय उत, मेरे मन अति चाह ।
पठवायो तेहि बांचिकै, विष्णुपुरी सउछाह ॥३॥
अपने मनमें कियो विचारा । जो गुरु करिकै कृपा अपारा ॥
मांगि पठायो है मणिमाला । देहुँ पठाय सोई अब हाला ॥
अस विचारि भागवतहिको तब ।भक्त परत्व रत्नको अति नव॥
दास लिखाय दियो पठवाई । दियो मुक्तिको खोदि बहाई ॥
तामें प्रियादासको भाखा । एक कवित्त मुदित लिखि राखा॥
कवित्त—जगन्नाथ क्षेत्र माँझ बैठे महाप्रभुजू वै, चहूं ओर भक्त भूप भीर अति छाई है ॥ बोले शिष्य विष्णु पुरी काशी मध्य रहैं याते, जानि पुनि मोक्ष चाह नीकी मन आई है ॥ लिखि प्रभु चीठी आप मणिगण माला एक, दीजिये पठाय मोहिं लागत सुहाई है ॥ जानि लई बात निधि भागवत रत्नदाम, दई पठै आदि मुक्ति खोदिकै बहाई है ॥ १ ॥
दोहा—स्वामी कृष्ण चैतन्यके, रहे संग जे संत ।
ते वह माल निहारिकै, पाये मोद अनंत ॥ ४ ॥
सबके भई प्रतीति यह, विष्णुपुरी सति भक्त ।
वृथा कियो हम भ्रम सबै,परि अनित्य यहि जक्त॥५॥
भक्त भीर तेहि ठाम जो, रही कहौं तिन नाम ।
लालदास गोविंद अरु, रघुनाथहु अभिराम ॥ ६ ॥
रामभद्र यदुनंदनौ, गोपिनाथ रघुनाथ ।
गोविंद रामानंदजी, प्रेमी अति रघुनाथ॥ ७ ॥

मुरलीधर हरिदास अरु, है मुकुंद भगवान ॥
केशवदास चरित्र अरु, वेणीदास महान ॥ ८ ॥
संत जयंत गँभीरहु दासू । गोविंद जीत अर्जुनहु दासू ॥
और जनार्दन दामोदर है । संत गदाजी औ ईश्वर है ॥
हेम मयानँद और गुठीले । तुलसी गौरीदास रँगीले ॥
वनिया राम गणेश प्रसिद्धा । दाऊजी जगदीशहु सिद्धा ॥
लक्ष्मणदास श्याम ले जानो । लाखा और गोपाल बखानो ॥
नरसी देवदास नँददासा । और किशोर गोपालहु दासा ॥
संत चतुर्भुज औ हरिदासा । विमलानंद बालकहु दासा ॥
संतदास औ दास मुरारी । मानदास गिरिधर सुखकारी ॥
गोकुलनाथ और वनमाली । नारायण रावो अघ घाली ॥
माधवदास और हरिदासा । जीवानँद परमानँद खासा ॥
स्वामि कृष्णचैतन्य महाना । निकट लसत ये संत अमाना ॥
मुक्तिहुकाहि निरादर कीन्हें । भक्तिहि प्रतिपादन मन दीन्हें ॥

दोहा—विष्णुपुरी कृत भक्तकी, रत्नावलि जो ग्रंथ ॥
जीवनको उपदेश करि, करिदीन्ह्यो हरिपंथ ॥ ९ ॥
विष्णुपुरी होते भये, ऐसे संत महान ॥
तिनके चरित अनंत हैं, मैं कछु कियो बखान॥१०॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेअष्टाशी-
तितमोध्यायः ॥ ८८ ॥

अथ तिलोचनदासकी कथा ॥

दोहा—वणिक तिलोचनदासकी, कथा कहौं सुखधाम ॥
ज्ञानदेवके शिष्यवर, संतनमें सरनाम ॥ १ ॥
तिनकी कथा सुनै जो कोई । तेहि उर राम भक्ति दृढ़ होई ॥

करनलगे साधुनकी सेवा। प्रीति सहित सम गुणि हरिदेवा॥
रहहिं गेह में नितयुत नारी। करैं यही अनुमान सुखारी॥
ऐसो कोउ चाकर जो मिलतो। संतसेव जो नितप्रति करतो॥
संतनके अनुकूल सदाहीं। चलै मिलब दुर्लभ जगमाहीं॥
करत एक दिन यहि हित ध्याना। भक्त मनोरथ कर भगवाना॥
रूप एक नरको वपुधारी। आये ताके निकट सिधारी॥
टूटी पनहीं पायन माहीं। ओढ़े फटी कमरिया काहीं॥
पूंछ्यो निरखि तिलोचनदासा। कहँते आये कहां निवासा॥
कहां मातु पितु अहै तुम्हारो। नहीं गुरू सँग परै निहारो॥
तब बोले हरि वचन सुखारी। अहौं भृत्य नाहिं पितु महतारी॥
जो कोउ अपने गृह महँराखै। तौ रहिजाउँ यही अभिलाखै॥
दोहा—कह्यो तिलोचन वचन तब, मेरे ढिग रहिजाहु॥
कह्यो सो अनमिल बात यह, उर अति भरो उछाहु॥२॥
सात सेर भोजन नित चहहूं। नित सेवामें हाजिर रहहूं॥
यामें मन बिगारिहै कोई। तौ मेरो क्षण रहन न होई॥
कह्यो तिलोचन तब हरपाई। करहु यथेच्छित अशन सदाई॥
संतन सेवन करहु निशंका। यही काम मेरे अति बंका॥
तामें बीच परै नहिं नेको। और काम मेरे नहिं एको॥
प्रियादास तामें जो भाखा। इक कवित्त सो इत लिखिराखा
कवित्त—चारिहू वरणकी जो रीति सब मेरे हाथ, साथहूं न चाहौ करौ नीके मन लायकै। भक्तनकी सेवा सोतो करतहीं जन्म गयो, नयो कछू नाहिं डारे वरस वितायकै॥ अंतर्य्यामी नाम मेरो चेरो भयो तेरे हौंतौ, बोले भक्तभाव खावो अतिहीं अघायकै। कामरी पन्हैया सब नई करि दई और, नीके नहवायो तनु मैलको छोंडायकै॥ १॥

बोल्यो फेरि तिलोचनदासा । निज नारीसों सहित हुलासा ॥
जो ये भोजन करैं सदाहीं। सो भोजन दीजै इनकाहीं ॥
कुवचन कबहुँ न किहेहु उचारा। यह सेवीहै संत अपारा ॥
अस कहि संतन सेवामाहीं। सादर दिय लगाय तेहिकाहीं ॥
भृत्य रूप तनु श्रीभगवाना । आवहिं नित जे संत महाना ॥
तिनके प्रथमहि तेल लगाई । सुंदर जल स्नान कराई ॥

दोहा—बहुविधि अशन करायकै, पलँगा महँ पौढ़ाय ॥
चरणचापि दोउ चोपयुत, सुखसों देहि सोवाय ॥३॥

आवहिं जहां संतजन जितने । धरि हरिरूप भृत्य तनु तितने॥
करनलग्यो इमि संतन सेवन । जानतभयो कोऊ यह भेवन ॥
साधु तिलोचनदासहिकेरो । जाहिं प्रशंसत सुयश घनेरो ॥
संत तिलोचनकी यहि भांती। साधुनकी सेवाभै ख्याती ॥
ऐसेहिं बीते तेरह मासा। इक दिन तीय तिलोचनदासा॥
गई परोसिनिके ढिगमाहीं। सा पूँछ्यो सादर तेहिकाहीं ॥
दुर्बल काहे परति लखाई। सो यह वाणी दई सुनाई ॥
एक टहलुवा अहै हमारा। सात सेर सो करत अहारा ॥
पीसत ताके हेत पिसाना। दूबरि मैं है गई महाना ॥
जानि तुरंत नाथ भगवाना। ताके घरते कियो पयाना ॥
महादुखी तब भयो तिलोचन।पूँछ्यो तियसों करि अति सोचन॥
तेहि तिय यह वृत्तांत बतायो। सुनि रोवन लाग्यो रिस छायो॥

दोहा—हाय कहां अस भृत्यमैं, पाऊं किय अस शोर ॥
बिन जल तीनि उपास पुनि,करत भयो तेहिं ठोर॥४॥
तब अकाशते प्रगट है, बोले श्रीभगवान ॥
तेरे प्रेम अधीन हौं,मैं हे साधु सुजान ॥ ५ ॥
जो तेरे मनमें यही, तौ धरि सोई रूप ॥

आय भुवन तुव संतको, करिहौं सेव अनूप ॥ ६ ॥
रह्यों टहलुवा रूपते, मैं ही तेरे ऐन ॥
सुनत वणिक व्याकुल भयो, जान्यो हरिको शैन॥७॥
हरि बिन कौन दयालु अस, गुण्यो तिलोचनदास ॥
अस उनहीं सों बनि परै,मोहिं तिनहिंकी आश॥ ८ ॥
मैं कौनहुँ लायक नहीं, कैस्यहु पाऊं नाथ ॥
चरण रहौं लपटायतौ, कबहुँ न छोडों साथ ॥ ९ ॥
संत तिलोचनदासके, ऐसे चरित विचित्र ॥
मैं वर्णन कीन्ह्यों कछुक,सुनतहि करणपवित्र ॥१०॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धएकोननवतितमो ऽध्यायः ॥ ८९ ॥

अथ अनुकरणकी लीला ॥

दोहा–अब लीला अनुकरणकी, लीला करों बखान ॥
नीलाचल जो धाम तहँ,शुभशीला तेहि थान ॥ १ ॥

एक समय तहँके सब लोगा । किय नृसिंहलीला विन शोग॥
तहँ लीला अनुकरणहि काहीं । कियो नृसिंहरूप सुखमाहीं ॥
हिरण्यकशिपु कोहु काहँ बनायो।तेहिवध करन समय जब आयो
तब लीला अनुकरण स्वरूपा । भो नृसिंह आवेश अनूपा ॥
हिरण्यकशिपु जेहि काहँ बनायो। ताहि तुरत ते मारि गिरायो ॥
तब कोउ कह इरषाते मार्‍यो ।कोउअवेसते वचन उचार्‍यो ॥
आपुसमें यह विग्रह माच्यो । जुरि बहु संत कियो यह सांच्यो॥
तुम नहिं करो अवशि कछु रारी। अर्चनमें हम अति सुखकारी॥
शुभग रामलीला अनुसरिहैं । तब याहीको दशरथ करिहैं ॥
जो वन समय काय यह त्यागी । तो याको वध करब न लागी ॥

नाहि इरषाते लेहैं जानी।यहिको वध यह किय रिस सानी॥
तब सब कोउ यह कियो प्रमाना। जब लीलाको कियो विधाना॥
दोहा-तब लीला अनुकरणको,किय दशरथ निर्माण॥
राम गवन वन समय में,त्यागिदियो तिन प्राण॥ २॥
दशरथकी गतिको लह्यो,कियो संत जय शोर॥
तिनके चरित अथोरहैं, मैं वरण्यों इत थोर॥ ३॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
नवतितमोऽध्यायः॥ ९०॥

अथ रतिवंती बाईकी कथा॥

छंद-यक रही रतिवंती सुबाई करी बाल उपासना॥
हरिकी कथामें बड़ी रुचि जेहिं आश और न वासना॥
यक दिवश छाकी प्रेम यदुपति कछु दुखी तनुते रही॥
निज पुत्रको सुनिवेकथाहित पठैदीनीसुखचही॥ १॥
जब पुत्र सुनिकै कथा आयो तब मुदित पूंछत भई॥
कहु आज कैसी कथा भै इत सो सुनावै मुदमई॥
तब कह्यो ताको तनय यशुदा कृष्ण बांधी दामहै॥
यह कथा अनुपम भई सुनि कहतभै तेहि ठामहै॥
सुकुमार छोटो बाल मेरे लालको लै जेवरी॥
तेहि मातु बांधी भाषिमुख असत्यागितनुदियतोहिं वरी
निज प्रेम सत्य देखाय दिय बाइ सुरतिवंती तहां॥
तेहि चारु चरित अपारमति अनुरूपमैं इत कछु कहां२
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकनवतितमो
ऽध्यायः॥ ९१॥

अथ जसूस्वामीकी कथा ॥

दोहा—जसूस्वामिवर भक्तको,कहौं शुभग इतिहास ॥
करै साधुसेवा रहै,अंतरवेद निवास ॥ १ ॥

जपै निरंतर हरिको नामा । जाय न अनत त्यागि निजठामा
संतन सेवन हेतु कृपाला । खेती करवावै सब काला ॥
एक दिवश कोउ चोर सिधाई । बँधे बैल लैगये चोराई ॥
जसूस्वामि जब उठे प्रभाता । बैलन बँधे लखे सुखदाता ॥
खेता हित लैगये ढिलाई । भेद न जान्यो गये चोराई ॥
वोई चोर कछुक दिनमाहीं ।आय बैल लखि किय भ्रमकाहीं ॥
इनके हम लैगये निकेता । ये इत आये कौने नेता ॥
लौटिगये ते अपने धामा । बैलन दिख्यो तहां अभिरामा॥
यही भांति द्वै चारक बारा । आये औ निज गये अगारा ॥
स्वामीको प्रभाव लिय जानी । बैल लाय सब हाल बखानी ॥
शिष्य भये हिय चोरी त्यागी । संतनकी सेवामें लागी ॥
जसूस्वामिकी कृपा प्रतापा । मुक्त भये ह्वैके निःपापा ॥

दोहा—जसूस्वामिको जानवो, चारु चरित्र अपार ॥
मैं समास वर्णन कियो,संतन परम अधार ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेद्विनवति
तमोऽध्यायः ॥ ९२ ॥

अथ अल्हभक्तकी कथा ॥

दोहा—अल्हभक्तकी अब कहौं,कथा भक्त सुखधाम ॥
एक समय रामतहितै, कीन्ह्यो कहूं पयान ॥ १ ॥

तेहि मगते कोउ संत सिधारी । बरजतभो यह वचन उचारी ॥
आप न जाहिं देश यहि माहीं । दुष्ट लोग लखि संतन काहीं ॥

तिलक बिंदुको मानि निशाना । गूरा हनत गुलेल महाना ॥
बहु संतनके गे दृग फूटी । ऐसे विमुख लेहिं मग लूटी ॥
सुनत अह्लजी कह यह देशा ।चलि अवश्य करिहैं शुचि वेशा॥
ऐसो कहि यक शहर मँझारी । बाहेर रहै बाग नृप भारी ॥
तहँ लीन्हें बहु संतसमाजा । उतरतभे लहि मोद दराजा ॥
ज्येष्ठ मास इक आंब वृक्ष तर । थापित कियो मूर्त्ति मुरलीधर॥
करि मज्जन हरि पूजि सरागा । हित नैवेद्य पके फल मांगा ॥
तब माली अस वचन बखाना । वृक्ष तरे तो हैं भगवाना ॥
जो चहिहैं आपहि लैलेहैं । तुव मुखसों फल नाहिं मँगैहैं ॥
सुनत अह्लजी ताके वयना । कियो निवेदन तरु फल चैना ॥

दोहा—तब तुरंत तेहिं वृक्षकी, झुकिझुकि कै सब डार ॥
फलन सहित हरिके उपर, शोभितभई अपार ॥ २ ॥
लखि माली गुणि आचरज, भूपति ढिग द्रुत जाय ॥
कह हवाल नृप आय सो, चरणन परचो सचाय॥३॥
युत समाज ह्वै शिष्यनृप,तिन्हैं राखि निज देश ॥
संतनकी सेवा करन, लागेउ वेस हमेश ॥ ४ ॥
ऐसे चरित अनेक हैं,संत अल्हके ख्यात ॥
मैं वरण्यों संक्षेपते,सुनत करै अघ घात ॥ ५ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रिनवतित-
मोऽध्यायः ॥ ९३ ॥

अथ हरिभक्त ब्राह्मणकी कथा ॥

दोहा—यक ब्राह्मण हरिभक्तकी,नाम जासु हरि भक्त ॥
हरि अनुरक्त कहौं कथा,तासु मुक्ति प्रद जक्त ॥ १ ॥
बीते बहु दिन भयो विवाहा । गवन लेनहितकियोउछाहा ॥

बहुरयो जब ससुरारिहि तेरे । तेहि मग महँ ठग मिले घनेरे॥
पूंछत भये चोर तेहि काहीं ।तुम को तिय लीन्हे सँग माहीं॥
कहँ जैहौ निज कहहु हवाला । द्विज हवाल सब कह्यो उताला॥
तिनसों जब पूछत भो विप्रा । तबते चोर कह्यो अस छिप्रा ॥
जहां जात तुम अहौ सुजाना । तहँ अहै ममहूं को जाना ॥
तब ब्राह्मण यह वचन उचारा । भल सँग भयो हमार तुम्हारा ॥
चले चलैंगे तुम्हरे साथा ।अस कह तिययुत सो द्विजनाथा॥
ठगन संगमें कियो पयाना । जब मग परयो अरण्य महाना॥
तब चोरन पहारकी राहा । द्विजाहिं बतायो सहित उछाहा॥
कह्यो विप्र यह मगन जनाई । यही राह पुनि चोर सुनाई ॥
जो हम पंथ अन्यथा कहहीं ।तुम हम बीच रामसौ अहहीं ॥

दोहा—चलो यही मग चोर कह, चलि द्विज तबहुँ सकै न ॥
तिय बोली यह राम बिच, तहां शंक कछु हैन ॥२॥

जहँ ये कहत अहैं मग ताहीं । निर्भय चलहु कछू भय नाहीं ॥
चल्यो विप्र भाषे अस नारी । जब आये वन विकट मँझारी ॥
तब चोरन द्विजको शिर काटी। आगे चलि तियसों कह डाटी॥
रोवत चलतभई तब नारी ।तेहि पीछे ठग चले सुखारी ॥
चलि कछु दूरि नारि द्विजकेरी । पीछे बार बार जब हेरी ॥
तब चोरन यह वचन उचारा । केहि हेरौ तुव पति हम मारा॥
कही नारि ताकहँ मैं ताकों । दीन्ह्यो अहै बीच तुम जाकों॥
का बाहूको तुम हति डारा । वह सब थल अस सुन्यौ हमारा॥
असि बाणी जब नारि पुकारी । तब है प्रगट राम धनुधारी ॥
ताहि शोकसागरते तारी । हति दुष्टनको लियो उबारी ॥
तेहि पतिको दिय तुरत जियाई।प्रमुदित भयो नारि निज पाई ॥
तामें यक छप्पय नाभाकृत । लिखेदेतहौं अति सुख लहि इत॥

छप्पय–बीच दिये रघुनाथ भक्त सँग ठगिया लागे ।
निर्जन वनमें जाय दुष्ट किय कर्म अभागे ॥
बीचि दियो सो कहां राम कहि नारि पुकारी ।
आये सारँगपाणि शोकसागर ते तारी ॥
दुष्टन किय निर्जीव सब दास प्राण संज्ञा धरी ।
और युगनते कमलनयन कलियुग अधिक कृपा करी ॥ १ ॥
दोहा–यहि प्रकार कलिकालमें, निज भक्तन पर राम ॥
दुष्टनको संहारि करि, कृपा करी अभिराम ॥ ३ ॥
द्विज नारीको दरश दै, जात भये निजधाम ॥
कथा अमित हरिभक्तके, मैं कछु कह्यो ललाम ॥४॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेचतुर्नव
तितमोध्यायः ॥ ९४ ॥

अथ एक नृपतिकी कथा ॥

दोहा–एक नृपति गाथा कहौं, सुनत दानि सुख गाथ ॥
जासु कथा श्रवणन किये, होति प्रीति रघुनाथ ॥१॥
आवत तिलक माल जो धारै । ताको नयननि माहँ निहारै ॥
हरि औ गुरुको मानि समाना । पूजन करै रोज मतिमाना ॥
किये अभक्तन माहँ अप्रीती । निर्भय सदा मानि यम भीती ॥
ऐसो परम भागवत भूपा । ताके ढिग धरि भक्तन रूपा ॥
भांड लोग आये बहुतेरे । किये लोभ अति द्रव्य घनेरे ॥
तिन्हैं देखि भूपति सुख धारी । लै चरणामृत चरण पखारी ॥
धूप दीप करि प्रथम सुजाना । दै निवेद पूंछ्यो सविधाना ॥
भांड़ सभा मधि ते नृप आगे । तारी दै दै नाचन लागे ॥
पुनि भोजन बहुभांति कराई ।सतकारचो अति नगर टिकाई॥

संतवेष इमि लहि सतकारा । भांड़ वेषको करि धिक्कारा ॥
विदाहोन जब नृप ढिग आये । तब बहु धन दै भूप सुहाये ॥
बोले वचन भांड़ते भूरी । यहसब द्रव्य कीजिये दूरी ॥

दोहा—यामें अति दुर्गंधिहै, ग्रहण करन नहिं योग ॥
कहि नृप दरशन परशको, लहि प्रभाव तजि सोग॥२॥
भांड़ वेष तजिकै भये, भक्त राज विख्यात ॥
कह्यो कथा यह भूपकी, संक्षेपहि अवदात ॥ ३ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धेपंचनवतितमोऽध्यायः९५

अथ अंतर्निष्ठभूपकी कथा ॥

दोहा—भूपति अंतर्निष्ठ इक, रहै भक्त अभिराम ॥
बाहेर ओठनके कबहुँ, लेय नहीं हरिनाम ॥ १ ॥

उर अंतर हरिनाम निरंतर । जपैं न कोउ जानै बाहिर नर ॥
रानी तासु जपै हरिनामा । करै साधु सेवा वसु यामा ॥
सोचति रहै सदा मनमाहीं । मम पति कृष्ण भक्त भो नाहीं ॥
भगवत नाम लेत नहिं आनन। सुन्यो न मैं कबहूँ निज कानन॥
जागत रहै एक दिन राती । सोवत रह्यो भूप सुख माती ॥
नाम विहारीलाल उचारा । सोवत ही भें तौन भुआरा ॥
नृप मुख ते निकस्यो हरि नामा।सुनि रानी अति भै सुखधामा ॥
उठि भोरहि तोपन दगवायो । दीननको बहु द्रव्य लुटायो ॥
बजवायो नौबतिहु निसाना । यह उत्सव लखि अति हरषाना ॥
पूंछत भयो रानि सों भूपा । यह उत्सव कस कियो अनूपा ॥
रानी तब यह वचन सुनाई । जबते नाथ व्याहि मैं आई ॥
तबते आजु आपके मुखते । सुन्यों नाम मैं निज श्रुति सुखते॥

दोहा—तब राजा यह कहत भो, जो हरिनाम सुभाय ॥
राख्यो अंतर यतनमें, आजु गयो कढ़ि आय ॥ २ ॥
अस कहि दियो शरीर तजि, भूपति हरि मन लाय ।
लखि रानी असि नृप दशा, दिय यह कवित बनाय॥३॥

कवित्त—भाव नरेशको को वरणै कहि ऐसो सनेहको गाथ बढ़ायो ॥ मीन ज्यों वारिविहीन मरै मणिहीन फणीश न झेल लगायो । ताहुते वेगि कियो सुनो संत, पिता रघुनंदनके सम भायो ॥ राम वियोग वै प्राण तज्यो इन नाम वियोगहि प्राण पठायो ॥ १ ॥

दोहा—अंतर्निष्ठ महीपके, ऐसे चरित अनेक ॥
मैं वरण्यों संक्षेप ते, सुनैं संत सविवेक ॥ ४ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धेषण्णवतितमोध्यायः ९६

अथ गुरुभक्तकी कथा ॥

दोहा—संत एक गुरु भक्तकी, कहौं कथा रमणीय ॥
रहैं गुरूके भक्त अति, गुरुको हरिगुणि जीय ॥ १ ॥

सेवै संतत मोद महानै । संत जननको कम कछु मानै ॥
गुरु अपने मनमें यह लावैं । याको अब हम अवशि सिखावैं॥
संतनको हमते बड़ मानै । हमते कम संतन नहिं जानै ॥
चेलाको सकोच बड़ मानी । भूलिजाय कहिबो नित जानी॥
चेलाको लाग्यो कछु कामा । ताको हेतु जान यक ग्रामा ॥
गुरु ते मांगत भयो विदाई । जाहु गुरू बोल्यो हरषाई ॥
कहिबेको परंतु इक बाता । तुमसों रह्यो हमहि अवदाता ॥
ह्वै आवो तब करब उचारा । सुनि चेला तुरंत पगु धारा ॥
गुरू राति मरिगयो सबेरे । चेला और आय तिन नेरे ॥
दाह करनको सरितट माहीं । जात भये लै द्रुत गुरु काहीं॥

तौलौं सोइ कारज करि आयो। मृतक गुरू लखि वचन सुनायो
गुरुको वेगि चलौ लै घरे। इनको नहिं जानो तुम मरे॥
वरजन लगे सबै तहँ लोगा। मान्यो नहिं येकहू नियोगा॥
दोहा—श्मशानकी भूमिते, गुरुको घर लै आय॥
गिरदामें बोढ़कायकै, देतभये बैठाय॥ २॥
चेला कह्यो जोरिकै हाथा। हरि गुरु वचन सदा सति नाथा॥
यह है शास्त्र वेद मर्यादा। मोहिं निदेश दिय युत अह्लादा॥
जब कारज करि ऐहैं प्राता। तब तोसों कहिहैं यक बाता॥
सो वह बात मोहिं कहि दीजै। तब अपनो तनु त्यागन कीजै॥
तब चेलाको शुणि सतभावा। गुरुको प्राण कायमें आवा॥
चेलासों गुरु कियो उचारा। हमहिं कहन यह रह्यो विचारा॥
संतन हमते कम नहिं मानौ। परम गुरू संतनको जानौ॥
तब चेला बोल्यो सुखमानी। स्वामि परै अटपट यह जानी॥
जलदी मोसों बनिहै नाहीं। वरस रोज न तजै तनु काहीं॥
मोहिं संतनको सेव सिखाई। रामधामको नाथ सिधाई॥
सुनि चेलाके वचन रसाला। जिये वर्षदिन गुरू विशाला॥
चेलहि संतन सेव सिखाई। गये धाम हरि अति सुखदाई॥
दोहा—प्रियादास तामें कह्यो, कहों एक तुक तासु।
चरित बहुत संक्षेपते, मैं कछु कियो प्रकाशु॥ १॥
(सांचौ भाव जानि प्राण आइबो बखान कियो करो
भक्त सेवा करी वर्षलौं देखाइये॥)
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेसप्तनवतितमोऽध्यायः९७

अथ सुरसुरानंदकी कथा॥

दोहा—कथा सुरसुरानंदकी, सादर करौं बखान॥
महिमा महाप्रसादकी, कीन्ह्यो सत्य जहान॥१॥

रहै राजगुरु संतन सेवन। करै निरंतर अति प्रसन्न मन ॥
महाप्रसाद परम अधिकारी। जो कोहुके कर लेहिं निहारी ॥
तौ वरवस लै भोजन करहीं। निज थलते कवहूं नहि टरहीं॥
यक दिन यक भंगिनि करमाहीं। लीन्हें वरा भातही काहीं ॥
लिहेजाति लखि कोउ दुष्टजन। कह्यो दुष्टता करि अपनेमन ॥
ढिग सुरसुरानंदते जाई। जव पूछै तव तेहि वताई ॥
मैं लीन्हें हौं महाप्रसादा।भंगिनि सोइ किय युत अह्लादा॥
सुनि सुरसुरानंद द्रुत धाये। लै जवरई वदन में नाये ॥
पीछे पीछे चेलहु धाई। लेत भये विनात तहँ जाई ॥
तव स्वामी ताकिकै तिन ओरा। कहतभये करि कोप अथोरा॥
कस तुम महाप्रसाद न पायो।अस कहि करि उवांत दरशायो॥
यक यक चाउर तुलसीदल युत।सहित सुगंध कढ़तभो तवद्रुत॥

दोहा—चेलहु कियो उवांतु जव, उठतभई दुर्गंध ॥
नहिं प्रभाव जाने गुरू, ते चेला मति अंध ॥ २ ॥
महिमा महाप्रसादकी, प्रगट सुरसुरानंद ॥
देखरायो सव जननको, तेउ लखि लेह अनंद ॥ ३ ॥
यह विश्वास प्रधानता, जामें होय सो संत ॥
मैं वरण्यों संक्षेपते, तिनके चरित अनंत ॥ ४ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
अष्टनवतितमोऽध्यायः ॥ ७८ ॥

अथ सुरसुरीकी कथा॥

दोहा—तिया सुरसुरानंदकी, जासु सुरसुरी नाम ॥
तासु कथा अभिराम अति, कहौं श्रवण सुखधाम॥१॥

छंद—यक समय पति युत त्यागि गृह हरिभजन हित वनको

गई॥ तहँ बसि यकंतहि भजन लागे करन दोऊ सुख छई॥
बहु दिवश बीते योंहि यक दिन म्लेच्छ यक कामी महा॥ गु-
णि रूपवती विशेष यहि तिय करि यतन भोगन चहा॥ १॥
पति तासु लेबे फूल समिधिहिहेतु जब कहुँ काढ़े गयो॥तब दुष्ट
वह ढिग नारिके अति प्रीतिसों गवनत भयो॥ तकि ताहि आ-
वत सुमिरि हरिको करत भई पुकार है॥क्षणताहि सिंह स्वरूप
हरि लैगये म्लेच्छ गवाँर है॥ २॥

दोहा—यहि प्रकार सुरसुरीकी, सत्य राखि लिय राम।
कह्यो कथा संक्षेपते, अहैं विपुल जग ठाम॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
नवनवतितमोऽध्यायः॥ ९९॥

अथ नरहरियानंदकी कथा॥

दोहा—यह नरहरियानंदकी, करों कथा परकास॥
जासु श्रवण अनयासही, होत नाश भवत्रास॥ १॥

श्री नरहरियानंद विख्याता। रहै साधुसेवी अवदाता॥
यक दिन संत बहुत घर आये।तिनको लखि मन मुदित टिकाये
सीधा सरंजाम घर माहीं। रहै रहै लकरी घर नाहीं॥
बरसत रहै मेह बहु वारी। मांगन गये ठौर दुइ चारी॥
मिली न लकरी तिय सों आई। कह्यो वचन यह अति हरषाई॥
मेरो टांगादेह निकासी। ले आऊं कहुँते द्रुत खासी॥
नारि दियो टांगा चलि आपू। बाहिर गावँ गये निहपापू॥
वरसत जल यकदेवीके घर। जाय खड़ेभे तेहि देहरी पर॥
गुण्यों मनहिं वर्षाहै भारी। लकरी को कहँ जाउँ सिधारी॥
क्षुधित संत बहु बसे अगारा। बने तौ देवीकेर केंवारा॥

परे जबर झूरे अति जोई। इनते संतन होय रसोई ॥
अस गुणि टांगा लै केंवार पर। हनत भयो तब देवी करि डर॥

दोहा–तेहि आगे ठाढ़ी भई, धरि इक कन्या रूप ॥
क्यों कपाट झारत अहै, कही सो वचन अनूप॥ २ ॥

तब इन कह्यो वचन कछु रूखे। लकरी चही संतहैं भूखे ॥
देवी कह केंवार मति फारै। यक बोझा मैं बड़े सकारै ॥
नित तुव घर देहौं पहुँचाई। करु तदबीर और घर जाई ॥
तब ये उर अति आनँद छाये। अपने घर तुरंत चलि आये॥
पाछे तासु कबारिनि वेषा। लिहे देवि लकरी सब देषा ॥
एक बोझ तेहिं डारि दुवारे। निज मंदिर गवनी सुखधारे ॥
ये सब संतन अशन कराई। सेवा करि दैदियो विदाई ॥
देवी एक बोझ लकरी नित। डारि जाय नित द्वार संतहित॥
जाहिर भई गावँ यह बाता। यक द्विज रहै परो विख्याता॥
तेहि तिय लकरी देखि बठानी। अपने पतिसों बोली बानी ॥
लै आवहु लकरीहैं नाहीं। मिलैं न जाहुँ कहां तेहिं काहीं॥
नारि कियो तब वचन उचारा। एक परोसी आय तुम्हारा ॥

दोहा–देवी मंदिर जायकै,फारन लग्यो केंवार ॥
डरि देवी डारै नितै,लकरी बोझ दुवार ॥ ३ ॥

यक तुम अहौ नाहिं ऐ आनन। कढतअहै कढतो कछु आनन
कह द्विज टांगा दे मोहिं लाई। जैहौं मैंहूं उतहि सिधाई ॥
मोहिं देवी देहैं कस नाहीं। लकरी लै ऐहौं घरमाहीं ॥
तहँ तिय कह ज़रूर तुम जाहू। करहु परोसी सम सउछाहू ॥
जाय विप्र लै हाथ कुल्हारी। देवीके केंवार पर मारी ॥
तब देवी करि कोप अपारा। तेहि उठाय पटक्यो बहु बारा॥

गिरचो सो दशै हाथ पर जाई । दोउ आंखी बाहेर काढ़ि आई ॥
भै बाड़ि वार न पति घर आयो। तब तेहिं तिय कछु शोच बढ़ायो॥
खबरि लेन [illegible] केरी। गै तिय तहां दशा सो हेरी ॥
देवि द्वार कूटन शिरलागी । देवी प्रगटि कही सुख पागी ॥
भक्तराजकी कारि समताई । ताही सम तू करी ढिठाई ॥
तेरे घरमें जो कोउ होई । मों कर आजुहि नशिहै सोई ॥

दोहा—तब द्विज तिय बहु विनय किय, रक्षा करु मम मात॥
जिये मोर पति करहु मैं, कहो देवि जो बात ॥ ४ ॥

कवित्त—देवी कह्यो जौन एक बोझा नित लकरी मैं नरहरिया नंदके दुवार पहुँचावती ॥ सोई तुम लैकै मेरी बदि पहुँचाओ तहँ तब पति तेरो बचै यहै बात भावती ॥ नाहि तो न बचै केहूं सुनि तब कही नारि दैहैं लकरी मैं सुनि देवि सुख छावती॥ताके पतिको जिआय दन्ह्यिो उठ्यो हरषाय देवीकी बेगारि सोईधारि दुख पावती ॥ १ ॥

दोहा—ताते समता काहुकी, करत विवेकी नाहिं ॥
करत जे तिनकी होति है, दशा यही जगमाहिं ॥५॥
तामें नाभाको कह्यो, छप्पय यह लिखि देहुँ ॥
बांचि सबै संतहु दिये, मानहु मूंढ़न केहुँ ॥ ६ ॥

छप्पय—घर झर लकरी नाहिं शक्तिको सदन उदारै ॥
शक्ति भक्तिसों बोलि दिनहि प्रति बरही डारै ॥
लगी परोसिनि हौंसि भवानी लै सो मारचो ॥
बदलेकी बेगारि मूढ़ वाके पर डारचो ॥
रत प्रसंग कलिकाल देखितनुमें तई ॥
श्रीनरहरियानंदकोकरदाता दुर्गा भई ॥ १ ॥

दोहा-श्रीनरहरियानंदके, ऐसे चरित अनंत ॥
मैं वरण्यों संक्षेपते कृपा करैं सबसंत ॥ ७ ॥
इति श्रीभक्तमालरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेशत तमोऽध्यायः ॥१००॥

अथ पद्मनाभजीकी कथा ॥

दोहा-पद्मनाभजीकीकथा, कहौं परम सुखदानि ॥
राम नाम महिमा लियो, कृपा कबीरहि जानि ॥ १ ॥
एक समय सुरसरि स्नाना । करि डेराको कियो पयाना ॥
तहँ यक साहु धनाढ्य महाना । काशी रह्यो जासु स्थाना ॥
बिगरि जातभो तासु शरीरा । भै दुर्गंध गये परि कीरा ॥
साहु मानि तब मनहिं गलानी । बूड़न हेतु गंग दुख मानी ॥
आवत चलो रहै मग माहीं । तेहिं परिवारहु लोग तहाहीं ॥
ताके पाछे आवत रोवत । पद्मनाभजी भे तेहि जोवत ॥
पूछ्यो लोगन पाहिं हवाला । कहे ते सब वृत्तांत उताला ॥
पद्मनाभ उर दया महानी । तब उपजी अस बोले वानी ॥
सहित कुटुंब संतको सेवन । करै कबूल सत्य अपने मन ॥
धन निज रघुपति हेतु लगावै । राम भक्ति हिय में उपजावै ॥
तौ तुरंत याको तनु सिगरो । शुद्ध होयगो जो है बिगरो ॥
तब कुटुंबके सुनि यह बानी । कियो कबूल साहु युत मानी ॥
दोहा-जिनकी नाम उपासना, नामहि जिनको मंत्र ।
नामहिकी सेवा जिन्हैं, नामहि पूजा यंत्र ॥ २ ॥
जप तप तीरथ नामहि मानै । जपत निरंतर नामहि ठानै ॥
ऐसे पद्मनाभ जे संता । शिष्य कबीर भक्त सिय कंता॥
लै तेहिं साहु साथ सुख छाई । गंगाजी समीप द्रुत आई ॥

तोहि हिलाय जल कंठ प्रयंता । करिकै ठाढ़ कह्यो मतिवंता ॥
तीनि बार करि राम उचारा । बुड़की देहु न करहु अवारा ॥
सुनिकै साहु तैसही कीन्ह्यो । कृमि दुर्गंधि दूरि करिदीन्ह्यो ॥
सकल शरीर दिव्य ह्वै गयऊ । निज नयनन निरखत सबभयऊ॥
जन समूह लखि काशीवासी । जयजय शोर कियो सुखरासी ॥
साहु कुटुम्ब सहित घर जाई । दान कियो बहु द्विजन बोलाई॥
पद्मनाभ शिषि ह्वै पुनि सोई । भववासना सकल दिय खोई ॥
श्रीकबीर ढिग जाय उताला । पद्मनाभ सब कह्यो हवाला ॥

दोहा–राम नाम परभाव सति, स्वामि लख्यो हम आज ॥
तीनबार उच्चार करि, साहु भयो कृत काज ॥ ३ ॥
सिगरी व्यथा शरीरकी, दूरि ह्वैगई आशु ॥
सुनि कबीर कह नामको, बड़ो प्रभाव प्रकाशु ॥४॥
तुम प्रभाव जान्यो कहा, राम नामको जौन ।
जानत तौ त्रयबार कस, नाम लेवावत तौन ॥ ५ ॥
नाम कहनके भासहीं, तौ रुज होत विनाश ॥
तामें द्वै तुक कहतहौं, वरण्यो जो प्रियदास ॥ ६ ॥

कवित्त–राम नाम कहे वेर तीनिमें विनाश होत, भयोई नवीन कियो भक्ति मति धीरहै। गये गुरु पास तुम महिमा न जानी अहो, नाम भास काम करै कही यों कबीरहै ॥

दोहा–पद्मनाभको चरित यह, वर्णन कियो समास ॥
सुनत संतजन लहतहैं, हियमें परमहुलास ॥ ७ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
एकाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०१ ॥

अथ तत्वा जीवाकी कथा ॥

दोहा-तत्वा जीवाकी कथा, कहों रहैं द्वै भाय ॥
वासी दक्षिण देशके, भक्ति सुधारी राय ॥ १ ॥

दयावान अति धीर उदारा। सदा धर्म में प्रीति अपारा ॥
द्विजसेवी साधुनको प्यारे। एक समय अस मनहि विचारे॥
अवशि गुरू अब कीन्ह्यो चाही। दोउ भाई ह्वै अति उत्साही ॥
सौंपि सुतनको सब गृह काजा। यह उपाय किय ढिग दरवाजा॥
झूर दारु गाड़तभे आनी। आशय यह निज मन अनुमानी॥
जासु चरण जल सींचन पाई। पीका फूटि हरित ह्वै जाई ॥
ताही संतकाहँ गुरु करिहैं। यह अपार भवसागर तरिहैं ॥
अस विचारि दोउ बड़े प्रभाता। जाय गांव बाहर हरषाता ॥
बैठहिं मगु जो साधु सुखारी। निकसै माला कंठी धारी ॥
ताको विनती करि लै आई। चरण धोयकै उर सुख छाई ॥
वही काठ पर डारहिं जाई। विदा करें तेहिं अशन कराई ॥
वर्ष रोज भर किय यह रीती। यक दिन वही राह युतप्रीती ॥

दोहा-श्रीकबीर निकसे तिनहिं, करि दंडवत प्रणाम ॥
घरहिं लाय पग धोय जल, डारयो दारु ललाम॥२॥

तब वह दारु चहूं दिशि तेरे। आये पीका फूट घनेरे ॥
हरित विलोकि पूर्व निज हाला। कहि है ह्वै गये शिष्य तत्काला॥
खात भये पुनि सीत प्रसादी। जब गुरु जात भये अहलादी ॥
गये दूरि पहुँचावन हेतू। चलत कह्यो गुरु कृपानिकेतू॥
कबहुँ सँदेह परै तुम काहीं। तो अइयो जरूर हम पाहीं ॥
तामें प्रियादासको भाषा। एक कवित्त यहो लिखि राखा ॥
कवित्त-तत्वाजीवा भाई उभय विप्र साधु सेवापन मन धरी-

बात ताते शिष्य नहिं भयेहैं ॥ गाड़्यो एक ठूंठ द्वार होय अहो हरी डार संत चरणामृतको लेकै डारि नयेहैं । जबहीं हरित - देखो ताको गुरु करि लेखो आय श्रीकबीर पूजी आश पावल- येहैं । नीठ नीठ नाम दियो दियो परिचाय धाम काम कोउ हो- य जोपै आयो कहिगयेहैं ॥ १ ॥

श्रीकबीर जब कियो पयाना । तब तत्वा जीवा अस थाना ॥
चल्यो फिसाद कबीर जुलाहा । खायो ये तेहिं जूठ उछाहा ॥
ताते इनके साथ न खैहैं । खातहिं छोंड़ि जातिके देहैं ॥
द्वै सुत रहे एक जो भाई । एकके द्वै कन्या छबिछाई ॥
तिनके काज करै नहिं कोई । ये उपाय कीन्हे बहुतोई ॥
एकौ तिन उपाय नहिं लागे । भे सुत सुता स्यान सुख पागे॥

दोहा—तब दोउ बंधु विचार किय, कहिगे स्वामिअवास ॥
शंकट परै जो तुमहिं कछु,अइयो हमरे पास ॥ ३ ॥

अस विचारि काशी में जाई । सब हवाल निज गये जनाई ॥
सुनि कबीर यह वचन उचारा । करहु विवाह निजहि आगारा॥
दुइ कन्या दुइ पुत्र तिहारे । बात नघटी कबहुँ तव प्यारे ॥
तब गृह आय दोउ सुखधारी । काज करनकी करी तयारी ॥
टोला और परोसीवारे । कहां सगाई कियो उचारे ॥
तब इन कह्यो भगिनि औ भाई। घरहीमें खोजें कहँ जाई ॥
ह्याहीं हम करि लेहिं विवाहा । सुनि सब कीन्ह्यो सोच अथाहा॥
जो यह व्याह कियो घरमाहीं । तो हमरो उपहास सदाहीं ॥
कहिहैं सकल जातिके येहीं । तुम्हरे घर विवाह करि लेहीं ॥
यह गुणि सबै ज्ञातिके आई ।पग पारि कह अस करहु न भाई॥
जब ये तिनको कहा न माने । फेरि ज्ञाति जन वचन बखाने ॥
जोन खर्च लगिहै तुव काजे । सो हम तुमहिं देहिंगे आजे ॥

दोहा—नहिं परंतु ऐसो करो,है कबीर भगवान ॥
सीत प्रसादी लेहिंगे तिनको हमहुँ सुजान ॥ ४ ॥
ऐसो पक्का इत करि लीने। सकल ज्ञानवारे भय भीने ॥
प्रियादास जो किय निर्माना। सो कवित्त इत करों बखाना ॥
सकल ज्ञातिके जब यहि भांती। नम्र होतभे सहित जमाती ॥

कवित्त—कानाकानी भई द्विज जानी जाति गई पांति न्यारी-करिदई कोऊ बेटी नाहिं लेतुहै। चल्यो एक काशी जहँ बसत-कबीर धीर जाय कही पीर जब पूछ्यो कौन हेतुहै। दोऊ तुम भाई करौ आपमें सगाई होई भक्ति सरसाई न घटाई चितु चेतु है। आय वही करी परी ज्ञाति खरभरी कहै कहा डर धरी कछु मतिहूं अचेतुहै ॥ १ ॥

तब प्रसन्न ह्वै अति यक भाई। काशी श्रीकबीर ढिग जाई ॥
सादर सब कहिगयो हवाला।स्वामि कह्यो सुनि वचन विशाला॥
सपदि जाय अब करो विवाहा। लीन्ह्यो यह कबुलाय उछाहा ॥
की हरि भक्ति आजुते करिहैं। कबहुँ कुमारग पावँ न धरिहैं ॥
हम नहिं सुता अभक्तहि काहीं।देहिं वचन सुनि अस गुरु पाहीं॥
तुरत आपने सदन सिधाई। भगवत भक्ति करन कबुलाई ॥
व्याह सुतासुतको करिदीन्ह्यो। परम उछाह गेह निज कीन्ह्यो॥
सब विमुखनको काशि पठाई। श्रीकबीरके शिष्य कराई ॥
सकल देश हरिभक्त बनायो। तत्वा जीवा अति सुख छायो ॥

दोहा—ऐसे दक्षिण देश में,तत्वा जीवा दोउ ॥
भये कह्यो तिनकी कथा,है संक्षेपहु सोउ ॥ ५ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धेद्व्यधकशततमो ऽध्यायः ॥ १०२ ॥

अथ श्रीरघुनाथ गोसांईकी कथा ॥

दोहा–श्रीरघुनाथ गोसांइकी,कहौं कथा अभिराम ॥
पूरब रहे गृहस्थ अरु,बड़े धनाढ्य ललाम ॥ १ ॥

सब परिवार छोंड़ि धन काहीं। जात भये नीलाचल माहीं ॥
स्वामि सामुहे ठाढ़े भये। बीति दिवश निशि कैओगये ॥
पंडन जगपति दियो रजाई। देहु वोढ़ाय हमारि रजाई ॥
कीरति बड़ी पुरी असि छाई। भो संग्रहणी रोग महाई ॥
तब जस माधोदासहि केरो। सेवा किय जगनाथ घनेरो ॥
तैसहि स्वामि आपने हाथा। सेवा कियो दास रघुनाथा ॥
पुरी महा प्रभु यक अभिरामा। रहे कृष्णचैतन्यहि नामा ॥
बहुत दिवश निवसे तिन पासा। लहि निदेश तिन पुनि सहुलासा॥
सादर श्रीवृंदावन आई। राधाकुंड बसे सुखछाई ॥
तहँ बहु परिचै सबको दीन्ह्यों। नहिं वर्णन विस्तर भय कीन्ह्यो।
यक परिचै मैं देहुँ सुनाई। जानिलेहु ऐसहि सुखदाई ॥
एक समय रघुनाथ गोसांई। ह्वै विराम किय व्रत तेहि ठांई ॥

दोहा–मंदिरकेर महंत तहँ, वैद्यहिं लियो बोलाय ॥
सो लखि नाड़ी कह कियो, इन निशि अशन बनाय २॥

सुनि महंत कह झूठ न कहहू। तुम सतवैद्य विदित जग अहहू॥
इनको भोजन कोउ न दीन्ह्यो। ये असक्त भोजन कस कीन्ह्यो॥
वैद्य कह्यो न वैद्य हम ऐसे। वचन हमार अन्यथा कैसे ॥
देहिं बताय खीर इन खायो। चिनी डारिकै राति बनायो ॥
पूंछिलेहु सो शपथ धराई। यहि रोगीसों अबहीं जाई ॥
सुनि महंत चलि तिनके पासा। कह्यो सत्य तुम करहु प्रकाशा॥
वैद्यराज मिथ्या यह कहहीं। तुमहिं उपास सत्रहै अहहीं ॥
देहै कौन खीर तुम काहीं। कह्यो गोसांई वचन तहांहीं ॥

वैद्य सत्य कहतेहैं बाता । भूख लगी तुमसों अधराता ॥
मांगत भये न जब तुम दीन्ह्यों।हमसों अस उचार मुख कीन्ह्यों॥
भोर वैद्यको हाथ देखाई । देहैं भोजन तुमहिं देवाई ॥
शौचिक्रिया मानस तब ठानी । चाउर दूध कतहुँते आनी ॥

दोहा—अग्नि बारिकै खीर करि, सुंदरि चिनी मिलाय ॥
थार परसि श्रीकृष्णको, दीन्ह्यो भोग लगाय ॥ ३ ॥
खायगये सो खीर सब, आवति अबहुँ डकार ॥
सुनत मानि अचरज गहे, संत चरण सुखसार ॥ ४ ॥
वैद्यराज को देतभे, तुरत मँगाय इनाम ॥
बहु रघुनाथ गुसांइके, चरित कह्यों कछु आम ॥ ५ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
त्र्यधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०३ ॥

अथ नित्यानंदकी कथा ॥

दोहा—नित्यानंद सुसंतको, वरणों बर इतिहास ॥
रहैं बंधु द्वै जेठभे, नित्यानंद प्रकाश ॥ १ ॥

अनुज कृष्णचैतन्याहि नामा । गौड़ देश प्रगटे अभिरामा ॥
श्रीबलदेव केर अवतारा । नित्यानंद भक्ति आगारा ॥
जगमें करिकै भक्ति प्रचारा । मत पाखंड खोय सब डारा ॥
आगे मत्त वारुणी माहीं । रहे विदित बलदेव सदाहीं ॥
तिनको अंतर प्रेम अपारा । तब नहिं प्रगट रह्यो संसारा ॥
ताते नित्यानंद स्वरूपा । धरि प्रगटतभे प्रेम अनूपा ॥
नयननिते आँसुनकी धारा । बहे निरंतर सबै निहारा ॥
जान्यो उर समात सो नाहीं । तब चलि ठौर ठौर चहुँघाहीं ॥
बहु शिष्यनको करि उपदेशा । दिय विरताय प्रेमसो वेशा ॥

पूरण प्रेम लक्षणा तेरे। ह्वैगे तिनके शिष्य घनेरे ॥
इनके अहैं बहुत इतिहासा।विस्तर भीति न कियों प्रकाशा॥
लेहिं प्रभाव सकल तिन जानी। इतनेहीमें संत विज्ञानी ॥
दोहा–नित्यानंद सुसंतकी, कही कथा सुखदानि ॥
सुनि सुनि संत सुजान सब, लहिहैं आनँद खानि॥२॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
चतुरधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०४ ॥

अथ कृष्णचैतन्यकी कथा ॥

कवित्त–महाप्रभु कृष्णचैतन्य भये गौड़ देश, नदिया शहर कथा करौं मैं उचारहै ॥ पार करिवेको या अपार भव पारावार संत सुखसार जासु कृष्ण अवतारहै ॥ अनुराग गोपिनके हारि गये द्वापर मे, गौर अंग गोपी उर कियो जो विहार है ॥ श्याम रंग ताकि मनु श्याम भये गोर अंग शचीपुत्र भक्ति कीन्ह्यो कलि परचारहै ॥ १ ॥

दोहा–गोपिन लाल शरीरमें, मनु श्यामता गमाय ॥
इतै कृष्णचैतन्य प्रभु, गोर रहे छविछाय ॥ १ ॥
सोरठा- तिनके चरित अनंत, विस्तर भय वरण्यों न इत ॥
सति जानैं सब संत, लिखों कवित प्रियादास कृत१॥

कवित्त–आवै कभूं प्रेम हेम पिंडवत तनु होत, कभूं संधि संधि छूटि अंग बढ़ि जात है ॥ और एक न्यारी तिमि आसु पिचकारी मानो, उभय लाल प्यारी भाव सागर समात है॥ईशता बखान कहा करौं यों प्रमाण याको, जगन्नाथ क्षेत्र नेत्र लखि साक्षात हैं॥चतुर्भुज षटभुज रूपलै दिखाय दियो दियोजू अनूप हित ख्यात पात पात हैं ॥ १ ॥ कृष्णचैतन्य नाम जगतमें

प्रगट भयो अति अभिराम लै महंत देही करी है ॥ जितो गोड़ देश भक्ति लेशहू न जानै कोऊ सोऊ प्रेमसागरमें बोर्‌यो कहि हरी है ॥ भये शिरमोर जग एक एक तारिबेको धारिबेको कौन साखि पोथिनमें धरी है ॥ कोटि कोटि अजामेल वारि डारे दुष्टतापै, ऐसेहू मगन कियो भक्ति भूमि भरी है ॥ २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचाधिक शततमोऽध्यायः ॥ १०५॥

अथ सूरदासकी कथा ॥

दोहा—सूरदासजी जग विदित, श्रीउद्धव अवतार ।
कथा पुराणांतर कथित, वर्णन करों उदार ॥ १ ॥

जब मथुरामें श्रीनँदलाला । गोपिनको विज्ञान विशाला ॥
सादर करन हेतु उपदेशू । पठयो उद्धव गोकुल देशू ॥
तहँ गोपिन पर प्रेम परेषी । उद्धव बोले ज्ञान विशेषी ॥
धारि भक्ति हरिनिजउरमाहीं । आवत भे पुर मथुराकाहीं ॥
राखि भाव उर गोपिन केरो । लख्यो संग हरिचरित घनेरो ॥
तब उद्धवको श्रीयदुराया । बदरीनाथ काहँ पठवाया ॥
यह सुवासना उद्धवके तब । रही आय ब्रज एक बार कब ॥
गोपिनको अनूप अनुरागा । हरि लीला जो ब्रज सब जागा ॥
सो रसनाते वर्णन करहूं । वरसंतोष हिये पर धरहूं ॥
कीन्हें यही वासना काहीं । उद्धव प्रगट भये कलिमाहीं ॥
सूरदासते संत शिरोमणि । विचैं सवालाख पदको गुणि ॥
करि संकल्प मुदित मनशामें । हरिलीला विभूतिहूतामें ॥

दोहा—वरण्यों तिमि गोपीनको, जो यथार्थ अनुराग ।
विरचि कृष्णपद सूरवदि, सहस पचीस अदाग ॥२॥

पूरण कीन्ह्यो सूर प्रण, सूरश्याम जहँ होय।
सो पद विरच्यो कृष्णही, जानि लेहु सब कोय ॥३॥
महाघोर कलिकाल महँ, जन्म लेव दुखदूर।
दृग विकार गुणि याहिते, सूरदासभे सूर ॥ ४ ॥

जन्महि ते हैं नयन विहीना। दिव्यदृष्टि देखहिं सुखभीना ॥
लीनि परीक्षा सो तेहिं नारी। एक समय अस वचन उचारी ॥
पिय मोहिं सकल ग्रामकी वामा।मोसों कहहिं वचन असि वामा॥
तू केहि देखन करहि शृँगारा। तेरो पति तो अंध अपारा ॥
सुनिकै सूर कही यह वानी। आजु शृँगार भली विधि ठानी ॥
बहु स्त्रिनको लै निज संगा। बैठहु आय इहां सउमंगा ॥
भूषण तुव विगरो जो होई। देहैं हम बताय सत सोई ॥
सुनि यह सूरदासकी नारी। सब भूषण निज अंग सँवारी ॥
बेंदी देत भई नहिं भाला। सूर बोलायो ढिग तब बाला ॥
तिय भूषण सब अंग निहारी। सूरदास बोल्यो सुखधारी ॥
बेंदी भाल दियो क्यों नाहीं। लखि प्रभाव यह सूर तहांहीं ॥
कीन्हे सकल लोग जय शोरा।ख्यात बात भइ जग सब ठोरा।

दोहा—ह्वै विरक्त संसारते,दिव्यदृष्टि हरि ध्यान ॥
सूरदास करते, रहे, निशिदित विदिन जहान ॥ ५ ॥
सूरदास इतिहास बहु,परचै अहै अनेक ॥
जानिलेहु सब संतजन,कहौं नेक सविवेक ॥ ६ ॥

कवित्त—कविकुल कोक कंज पाइकै किरिणि काव्य विकसे विनोदित ह्वै नेरे और दूरके॥सूखिगो अज्ञान पंक मंद भोमयंक मोह विषय विकार अंधकार मिटे कूरके॥हरिकी विमुखताई रजनी पराय गई,मूक भये कुकवि उलूक रस झूकके ॥ छायोते-रघुराज रूर हरि जन जीव मूर सूर उदै होत सूरके१

मतिराम भूषण विहारी नीलकंठ गंगवेणी शम्भु तोष चिंतामणी कालीदासकी ॥ ठाकुर नेवाज सैनापति शुकदेव देव,पजन घन आनँद अरु घन श्यामदासकी ॥ सुंदर मुरारि बोधा श्रीपतिहूं दयानिधि युगल कविंद त्यों गोविंद केशव दासकी॥भनै रघुराज और कविन अनूठी उक्ति मोहिंलगी जूंठीजानि जूंठी सूरदास-की॥२॥अखिल अनूठी उक्ति युक्ति नाहिं झूठीनेकु, सुधाहूंते सरस सरस को सुनावतो॥उद्धृत विराग भागसहित अनेक राग,हरिको अदाग अनुरागको सिखावतो ॥ जगत उजागर अमल पदआ-गर सु नटनागर ध्याय सूरसागर को गावतो ॥ भाषै रघुराज रा-धा माधवको रासरस कौन प्रगटावतो जो सूर नाहिं आवतो॥३॥ शाह सुन्यो सुरनसे वेगही बुलायो दिल्ली पूंछ्यो कौनहो तू सूर कह्यो पूंछो बेटीसों ॥ शाह कह्यो जानौ कैसे सूर कह्यो जंघति-ल शाह पुँछवायो सो तुरत यक चेटीसों॥कन्या कह्यो कहततु-रंतही शरीर छूटी हठ परे कहि तनु तजि हरि भेंटीसो ॥ भनै रघुराज शाह सूर पद शिरनाय पूंछि हरि रास रीति भव भीति मेटीसों॥गोकुलमें रास होत राधाजूने मानकीन्ह्यो हरिमानमोरिबे को उद्धवै पठायो है॥जानि गुरुमान कह्यो नेसुक कटुक बैन दीनी बृषभानुसुता शाप कोपछायोहै ॥ धारिये मनुज तनु तारिये जगतजाय सकल सुनाइये जो राम रस भायो है ॥ भनै रघुराज सोई ऊधो अवनीमें आय रसिक शिरोमणि सो सूर क-हवायोहै ॥ ५ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे

षडुत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १०६ ॥

अथ परमानंदकी कथा ॥

दोहा–परमानंद भये पुहुमि, परमसंत विख्यात ॥
पावै परमअनंद उर, देखि साधु अवदात ॥ १ ॥

भगवत धर्म विहायकै, कियो धर्म नहिं और ॥
रह्यो निरंतर नाम हरि, रसना बसि यक ठौर ॥ २ ॥
श्रवण करत भगवत कथा, बहै आंसुकी धार।
भक्ति जे नवधा भक्तिहैं, तिनके रसिक अपार ॥ ३ ॥
तनु त्यागनके समय में, श्रीवृंदावन जाय ॥
कालिंदी ध्रुव घाटमें, दीन्ह्यो काय विहाय ॥ ४ ॥
इनकी बहु परचै कथा, जानें जन सहुलास ॥
विस्तर भयते नहिं कियो, तिनको यहां प्रकाश॥५॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
सप्ताधिकशततमोऽध्यायः ॥ १०७ ॥

अथ श्रीभट्टकी कथा ॥

दोहा–कहों कथा श्रीभट्टकी,वृंदावन करि वास ॥
राधा कृष्ण उपासना,कीन्ही परमहुलास ॥ १ ॥

मधुरभावअति लखिहरिलीला। रहै प्रसन्न सदा शुभ शीला ॥
जिनके दृगते आँसुन धारा। बहै प्रेम परिपूर्ण अपारा ॥
भवसागर उतरन कहँ सोई।सरिस जहाज भक्ति हरि सोई॥
करहिं सदा सबको उपदेशा। सदावर्त्त सम मानि हमेशा ॥
रविशशि जेहिंउपदेशप्रकाशा। भ्रम तम तुरत हरै अनयासा ॥
कृष्ण राधिका भजनहिं माहीं। जाहिं रैन दिन जिन्हैं सदाहीं ॥
एक समय श्रीभट्ट सुसन्ता। ब्रज कुंजनगे कहि मुदवन्ता ॥
आज दरशकरि लाला केरो। और प्रियाको मोद घनेरो ॥
दरशन करि विशेष गृह ऐहौं। तब सबको निज वदन देखैहौं॥
हेरत हेरत थाकि गये तहँ। श्रीहरिदास निवास कियो जहँ ॥
ऐसे निधि वनमें जब आये। कृष्ण राधिका को तहँ पाये ॥

तहँ कवित्त इक शुभग बनायो। परम प्रमोद हिये महँ छायो॥
दोहा–सो कवित्त इत लिखतहौं, सुनहिं संत मतिवान॥
जानिलेहिं श्रीभट्टमें, ऐसो भाव अमान॥२॥

कवित्त–ब्रह्ममें ढूंढ़ि पुराणन वेदमें वेदऋचा पढ़ि चौगुने चायन॥ जान्यो नहीं न कहा कबहूँ यह कौन स्वरूपहै कौन सुभायन॥ हेरत हेरत हारि परचोहौं बतायो नहीं कोउ लोग लोगायन॥ देखो कहां दुरचो कुंजकुटीरमें बैठो पलोटत राधिकापायन॥१॥

दोहा–श्रीवृंदावन कुंजमे, युगल चरणरस मग्न॥
श्रीभट महिमा वरणि कवि, होत मोद संलग्न॥३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
अष्टाधिकशततमोऽध्यायः॥१०८॥

अथ विट्ठलदास और इनके सात पुत्रोंकी कथा॥

दोहा–पुत्र वल्लभाचार्य्यके, प्रगटे वीठलदास॥
तासु सात सुत भे करों, तिनको नाम प्रकाश॥१॥

गिरिधर अरु गोविंदजू दूजे। तीजे बालकृष्ण जन पूजे॥
चौथ रहे जस वीर नाम जेहि। पंचम गोकुलनाथ नाम तेहि॥
छठौ नाम रघुनाथहि जानौ। सातों श्रीघनश्याम बखानौ॥
सातहु करि हरि भक्ति अपारा। दै उपदेश जनन संसारा॥
दिय पठाय श्रीपतिके धामा। ब्रज माधूर्य्यभाव अभिरामा॥
सातों भये तासु अधिकारी। कवि ह्वै वरणैं हरियश भारी॥
रसनाते नर कविता काहीं। कैसेहु कबहूं भाषै नाहीं॥
एक समय यक भूप महाना। कह्यो करहु मम सुयशबखाना॥
जो मम यश नहिं वर्णन करिहौ। तौ विशेषि यमलोक सिधरिहौ।

सुनि कबूल करिकै गृह आई। निज रसना काढ्यो अतुराई॥
सो हवाल नृप सुन्यो सबेरे। चरणन आय परयो तिनकेरे॥
निज अपराध क्षमा करवाई। अपने अयन गयो नरराई॥

दोहा–पुनि वृंदावन आयकै, करिकै अचल निवास॥
अंत समय गोलोक गे, सातहु सहित हुलास॥ २॥
इनके चरित अनेक हैं, जानत संत सुजान॥
विस्तर भय संक्षेपते, इतमैं कियो बखान॥ ३॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
नवोत्तरशततमोऽध्यायः॥ १०९॥

अथ कृष्णदासकी कथा॥

दोहा–शिष्य वल्लभाचार्य्यके, कृष्णदास अवदात॥
अधिकारी भे भजनके, गुरुकी कृपा विख्यात॥ १॥

तिनकी कथा करौं मैं गाना। धारि हिये में प्रीति महाना॥
करैं नाथजी की सेवकाई। भये प्रसिद्ध जगत कविराई॥
जामे दूषण परै न हेरी। ऐसी कविता करैं निवेरी॥
सर्वस मानै ब्रजरज काहीं। नाथ कृपाके पात्र सदाहीं॥
इक दिन दिल्ली चले बजारा। तहां जलेबी शुभग निहारा॥
योग्य नाथजीके तेहि जानी। खरे बजारहिमें सुख मानी॥
दियो नाथकहँ भोग लगाई। लह्यो तहैंते श्रीयदुराई॥
वृंदावनमें होत प्रभाता। भोग धरयो पंडा अवदाता॥
भोग न लग्यो नाथको जबहीं। पंडा विनय करतभो तबहीं॥
भई प्रगट हरिकी तब बानी। पंडा लेहु सत्य यह जानी॥
कृष्णदासने बीचबजारा। अरप्यो मोहिं जलेबि अपारा॥
भयो अजीरण मोको सोई। ऐसो जानिलेहु सब कोई॥

दोहा-ख्यात भई यह बात पुनि, बड़ी प्रीति लखि गान ॥
द्वै गणिका अति सुंदरी, कहुँ गावैं रतिवान ॥ २ ॥

तिनको ऐसे वचन सुनाई। मेरे लालाके ढिग जाई ॥
गान आपनी देहु सुनाई। अस कहि जगकी लाज विहाई॥
लाये गृह लेवाय निज साथा। मज्जन करवायो सुख गाथा ॥
पट नवीन सादर पहिराई। अतर आपने पाणि लगाई ॥
पुनि मंदिर श्रीनाथहिं केरे। लै आये भरि मोद घनेरे॥
तहँते गणिका नृत्यहु गाना। कियो अपूरव छकित महाना॥
तदाकार ह्वै हरि छवि करि मन।त्यागिदियो अपनो अपनो तन॥
कियो नाथ जो अंगीकारा। लिखेदेत प्रियदास उचारा ॥

कवित्त-नीके अन्हवाय पट आभरण पहिराय,सोंधोहू लगाय हरिमंदिरमें लाये हैं ॥ देखि भई मतवारी कीन्ही लै अलाप चारी,कह्यो लाल देखे बोली देखे मही भायेहैं॥नृत्यगान तानभाव भरि मुसकानि दृग, रूप लपटान नाथ निपट रिझाये हैं॥ह्वैकै तदाकार तनु छूट्यो अंगीकार करि, धरि उर प्रीति मन सबके भिजाये हैं ॥ १ ॥

इक दिन सूरदास जब आये। कृष्णदास निज भजन सुनाये॥
सूरदास तब वचन बखाना। ऐसो करहु अनूपम गाना ॥
जामें मेरे पदकी छाया। परै न ऐसो करहु उपाया ॥
कृष्णदास जोइ भजन बनाई। गावैंते खूटैं नित जाई ॥

दोहा-मेरी पद छाया परै, याहूमें सुनु संत ॥
बचे न कौनहु हरि चरित,विरच्यो सूर अनंत ॥

सूरदास जब फेरि सिधाये। तबते नयो भजन यक गाये ॥
सूरदास तब कह्यो तहांहीं। यामें मम पद छाया नाहीं ॥

परंतु नहिं आप बनायो। कृष्णदास तब वचन सुनायो॥
यह पद मेरे कागज़ माहीं। लिख्योकृष्णनिर्मितममनाहीं॥
सूरदास तब धन्य धन्य कहि। कियो दंडवत परम मोदलहि॥
नाथ कृपा कीन्ही यहि भांती। सो कविसों नहिं वरणि सिराती॥
इक दिन हरिभक्तनको प्यासा। लगी लेन जल गये हुलासा॥
पावँ छुट्यो गिरिपरे कूप पर। छूटिजातिभो तब तिनकोघर॥
बड़ी शंकभै संत समाजा। संत लह्यो अपमृत्यु दराजा॥
शंका तौन निवारण हेतू। करिकै कृपा नाथ सुखसेतू॥
जादिन कृष्णदास तनु त्यागा। तादिन नाथ सहित अनुरागा॥
परिक्रमा गोवर्द्धन पाहीं। चले जात तिनके सँग माहीं॥

दोहा–गाय चरावत जो रह्यो,मंदिरकी नित ग्वाल॥
भेंट भई तिनकी तहां, पूँछ्यो सो तत्काल॥

महाराज कहँ आजु सिधारो। कृष्णदास तब वचन उचारो॥
श्रीबलदेव जातहैं आगे। तिनके साथ जाहु सुख पागे॥
तुम मंदिरहि नाथके जाई। निवसत तहां हमेश गोसाँई॥
तिनसों मम दंडवत प्रणामा। कहियो और हवाल ललामा॥
द्रव्य गड़ी मंदिर यक जागा। देहुँ बताय तोहिं युत रागा॥
सो गोसाँइसो तू कहिदीजो। कृष्णदास अस कहिसुखभीजो
पर विभूतिको कियो पयाना। करत कृष्णगुण यशमुखगाना॥
मंदिर माहिं आयसो ग्वाला। सादर सब कहि गयो हवाला॥
जहाँ द्रव्य तहँ चलि सब संता। द्रव्य देखि अतिभे मुदवंता॥
कीन्ह्यो निज मन माहँ प्रतीती। तिन्हैं न मृत्यु अकालहिभीती॥
यहि विधि नाथ सबहिंदरशायो। कृष्णदास कहँ निकट बसायो॥
ऐसे श्रीवृंदावन माहीं। कृष्णदास भे विदित सदाहीं॥

दोहा–तिनके चरित अनंत हैं, कहि न लह्यो कोउ पार ॥
मैं वरण्यो संक्षेपते,सुनत गुणत सुखसार ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेदशो
त्तरशततमोऽध्यायः ॥ ११० ॥

अथ माथुर विट्ठलदासकी कथा ॥

दोहा–रह्यो मथुरिया एक द्विज, विट्ठलदासहि नाम ॥
आप आपनी मानप्रद, सब संतन सुखधाम ॥ १ ॥
तासु कथा वरणों जेहिं रीती ।तिलकदास सों किय अति प्रीती॥
भगवत सम्बन्धी गुण धारण । कियो जन्मभरि नाम उचारण॥
भगवत भक्तनकी बड़वारी । कहि प्रसिद्धभे पर उपकारी ॥
हरि उत्सवमें किय सुत दाना । भाई उभय पुरोहित राना ॥
आपुसमें लरि दूनों भाई । देतभये निज देह विहाई ॥
तासु तनय भो विट्ठलदासा । नृत्य गान में सुघर प्रकाशा ॥
प्रेमाभक्ति प्रधान अनूपा । ताके निकट एक वरभूपा ॥
अस कहि यक जनको पठवायो। बीठलदास संत जो भायो ॥
मेरे ढिग लेआवहु ताको । प्रेम विलोकहुँ मैंहूँ वाको ॥
कोउ कह नृत्य करत हरि आगे । प्रेमते गिरन लगत सुखपागे ॥
जो कोऊ पकरतहै नाहीं । तो महिमें गिरि परत तहांहीं ॥
राना सुनि यह त्रयछत ऊपर । बैठत भयो आय कह यक नर॥
दोहा–आयो वीठलदास पुनि, नृप लिय तिनहिं बोलाय ॥
नृत्य गान करने लगे, ते तहँ हरि बैठाय ॥ २ ॥
कृष्णदासके प्रेम बढ़्यो जब । गिरन लग्यो विमुखीन धर्‌यो तब॥
गिरिकै ऊपरते महि माहीं । परत भये रहिगे सुधि नाहीं ॥
राना वदन श्वेत ह्वै गयऊ । दुष्टनको गारी बहु दयऊ ॥

कृष्णदास बीते दिन तीनी । तनक तनक तनुमें सुधि कीनी॥
राजा तिनके सेवा हेतू । पठवत भयो मनुष्य सचेतू ॥
बहु धन पूजा हेतु पठायो । निज अघ गुणि बहुविधि दुख पायो॥
जननी मुख यह सकल हवाला।कृष्णदास सुनि अतिहिं उताला॥
तजि वह गावँ छटिकरा नामा ।रह्यो ग्राम तहँ चलि किय धामा॥
मातु तियहु तेहिं सो सुधि पाई। तहां निवास करत भे जाई ॥
सेवा भजन करै हरिकेरी । पीड़ा लहै शरीर घनेरी ॥
दिय भगवान स्वप्न त्रय बारा । जाहु मधुपुरी बिनहिं बिचारा॥
तब मथुरा चलि तजि सब जाती।बसे गेह बढ़ई सुखमाती ॥

दोहा—गर्भवती अति पतिव्रता, रही तासु जो नारि ।
यक दिन माटी खोदते, भांडा नयन निहारि ॥ ३ ॥

बढई सों सो वचन बखानी । तेरी द्रव्य लेहि सुखमानी ॥
सुनि बढ़ई कह है मम नाहीं । लेहु तुमहिं दिय हरि तुमकाहीं॥
तब प्रसन्न अति वीठलदासा । सकल द्रव्य लै आय अवासा॥
करनलगे संतनको सेवन । हरिके राग भोगमें बहु धन ॥
खर्चि नृत्य अरु गान सुहायो । हरिके आगे बहु करवायो ॥
भक्ति रीति बहु जग फैलाई । भये शिष्य ते जन समुदाई ॥
यक दिन गान तान परवीनी । एक नटी उत्सव सुख भीनी ॥
ऐसो करत भई सो गाना । वीठलदास परमसुख माना ॥
देत देत सब द्रव्यहि दीन्ह्यो । विविध भांति सन्मानहि कीन्ह्यो॥
रंगीराय नाम सुतकाहीं । रीझि नटीको दियो तहांहीं ॥
रंगीराय शिष्य यक रहई । राना सुता सुनत भै तहँई ॥
दीन्ह्यो नटी हमारे गुरु कहँ ।भयो कुनाम बड़ो यह जगमहँ॥

दोहा—अस विचारि रानासुता, कहि पठयो नटि पाहिं ॥
द्रव्य कहै सो देहुँ मैं, देहि गुरू मोहिंकाहिं ॥ ४ ॥

नटी कह्यो मैं द्रव्य न चाहौं ।जस रिझाय लिय तुव गुरुकाहौं॥
ऐसहि नृत्य गानमें कोई । लेहि रिझाय मोहिं जन जोई ॥
ताको तुव गुरु देहुँ विशाला । भूपसुता यह सुन्यो हवाला ॥
अमित गायकन नृत्यक जोरी। पठै नटीपै प्रीति अथोरी ॥
नृत्य गान बहुविधि करवायो । नटी काहँ बहु भांति रिझायो ॥
रीझि नटी पालकी चढ़ाई । रंगीराय काहँ लै आई ॥
रानासुता काहँ दै दीनो । रंगीराय कह्यो सुख भीनो ॥
सुनहि वयन मम राजकुमारी । मम पितु रीझिगयो है भारी ॥
तबमोहिं मोहरन वदि न्यवछावरि।कीन्ह्यो ताते मोहिंन लेहिं अरि
गुरुको वचन लेहि यह मानी । ऐसो रंगीराय बखानी ॥
गमनत भये नटीके संगै । गुरु वियोग तब जानि अभंगै ॥
रानासुता शरीर विहाई । हरिके लोक गई सुख छाई ॥

दोहा—ऐसे चरित विचित्र हैं, भगवत रसिक अपार ॥
वीठलदासहु रामके, करि उत्सव संसार ॥ ५ ॥
देत देत धन तोष कछु, लह्यो न निज मन माह ॥
तब अपनो सुत प्यारहूं, दै राख्यो सउछाह ॥ ६ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकादशाधिक शततमोऽध्यायः ॥ १११ ॥

अथ संतहरिनामकी कथा ॥

दोहा—कथा संत हरिनामकी, कहत अहौं अभिराम ॥
गन्यो न रानहु को जो कछु, भजन प्रभाव सुदाम ॥१॥

यक संन्यासीके सँग माहीं । राजा खेलै चौपरिकाहीं ॥
सो आपनो सकोच जनाई । एक साधु जीविका मिटाई ॥
तब वह संत महादुख छायो ।रानाको फिरि आय सुनायो ॥

सुनि राना दीन्ह्यो झिझिकारी। ताकी बात कान नहिं धारी॥
ह्वैकरि तब वह संत उदासा। जाय कह्यो हरि रामहिं पासा॥
महाराज मम गावँ जो रहेऊ। कह संन्यासी राना लयऊ॥
करों संत सेवा कस नाथा। सुनतै चले संतके साथा॥
सपदि सभा रानाके जाई। खड़े भये राना सुखपाई॥
हरिरामहि सादर बैठायो। तबते बहु उपदेश सुनायो॥
पै राना कबूल किय नाहीं। गावँ देन तेहि संतहि काहीं॥
तब हरिराम कह्यो इतिहासा। हिरण्यकशिपु प्रह्लादको खासा॥

दोहा—तबहुँ न समुझ्यो मूढ़ सो, तब अति रोषहि छाय॥
देह कँपत फरकत अधर, बोलन चह्यो तुराय॥२॥
ताही क्षण राजा महल, सिगरे डोलन लाग॥
तरे महल रानहु तहां, लाग्यो गिरन अभाग॥३॥
तासु कृपा बाचि उठि सपदि, विनय कियो गहि पाय॥
करि बहाल दीन्ह्यो तुरत, संत गावँ हरषाय॥४॥
प्रेम पुंज अति तेज युत, ऐसे श्रीहरिराम॥
दास भये तिनकी कथा, कह्यों समास ललाम॥५॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेद्वादशाधिक
शततमोऽध्यायः॥ ११२॥

अथ कमलाकरभट्टकी कथा॥

सोरठा—कमलाकरभे भट्ट, पंडित पुहुमि अखंडितै॥
आचारी उदभट्ट, आय जिन्हैं आदर कियो॥१॥
संप्रदाय निज छत्र, मध्वाचारज द्वितिय मनु॥
हरि अवतार चरित्र, गान कियो निज वदन सों॥२॥
श्रीभागवतहि रीति, चले धारिकै भुजनपै॥

मुद्रा तप्त सप्रीति, लियो निरंतर नाम हरि ॥ ३ ॥
अंत समय हरिधाम, तनु विहाय गमनत भयो ॥
कह्यो कथा अभिराम, संक्षेपहु जग विदित बहु॥४॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रयोदशाधिक
शततमोऽध्यायः ॥ ११३ ॥

अथ नारायणदासकी कथा ॥

कवित्त—नारायणदास भये भागवत वक्ता अति, प्रेम पूरे शास्त्रनको सार नीके जान्यो है॥ सुरगुरु शुक्र व्यास नारद औ सनकादि रीतिको ग्रहण करि भूरि यश तान्यो है ॥ मथुरा पुरी में बसि हरिद्वार गये फेरि, आज्ञा हरि बद्रिकाश्रमैमें मोद मान्यो है ॥ तहां शुकदेवको दरश पाय काशी आय, छोंड़ि तनु श्री पतिके धाम वास ठान्यो है ॥ १ ॥

सोरठा—तिनकी कथा अपार, पुहुमीमें संतन विदित ॥
मैं कछु कियो उचार, विस्तर भय यहि ग्रंथमें॥१॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेचतुर्दशो
त्तरशततमोऽध्यायः ॥ ११४ ॥

अथ रूपसनातनकी कथा॥

दोहा—गौड़देशबासी अहै,बंगाली सरनाम ॥
रूप सनातननाम तिन,कहौं कथा अभिराम ॥ १ ॥
रहे शाहके बड़ अधिकारी। रह्यो ऐश्वरज तिनको भारी॥
सो सुखसरिस उवांतहिं मानी। तज्यो लिखौं नाभाकृतवानी ॥
उक्तंच नाभायां॥
गौड़देश बंगालहु ते सबहीं अधिकारी ॥
हय गय भवन भँडार विभव भूपति अनुहारी ॥

यह सुख अनित विचारि बास वृंदावन कीन्ह्यो ॥
यथा लाभ संतोष कुंज करवा मन दीन्ह्यो ॥ इति ॥
संत कृष्णचैतन्यहि केरो । लहि उपदेश मानि मुद ठेरो ॥
रूप सनातन दोनो भाई । गृह तजि श्रीवृंदावन जाई ॥
जीवगोसांई साधु महाना । तिनसों तहँ किय संग सुजाना॥
गोप्य तीर्थ वृंदावनके पुनि । प्रगट किये भाषे जिमि शुक मुनि
षट्संदर्भ भागवत माहीं । करतभये बुध वदत सदाहीं ॥
प्रेम लक्षणाके रस रूपा । रहे परम भागवत अनूपा ॥
कथा श्रवण दृग आंसुन धारा। बहै निरंतर परै निहारा ॥
कियो सनातन यक दिन मन अस।आजु खीरको भोग लगै कस॥
तब निज दासकेरि रुचि जानी । श्रीराधिका मोद उर मानी ॥
धरिकै एक ग्वालनी रूपा । पय तंदुल कर लिये अनूपा ॥
दोहा—आय सनातनको दियो,तेनब खीर बनाय ॥
परसादी पावत भये,हरिको भोग लगाय ॥ २ ॥
कह्यो रूप तब सुनिये भाई । खीर साजु कहँवां तुम पाई ॥
सुनि सब कह्यो हवाल सनातन। चले रूप नयन न अँसुवा घन॥
रूप वचन पुनि कह्यो सराही । ऐसो स्वाद लियो नाहिं चाही ॥
जामें प्रियाकाहँ श्रम परई । आपुहि निकट भक्त पगु धरई॥
यक दिन श्रीभागवत पुराना । होत रहै किय रूप पयाना ॥
निरखि साधु यक तिनको धाई। लीन्ह्यो निज समीप बैठाई ॥
भँवरगीत गोपिन की नीकी । विरह कथा होती प्रिय जीकी ॥
सुनिसुनि सब दृग आँसुन धारा। बहत रही तेहिं सभा मँझारा ॥
तहां रूप दृग आंसुन देखी । कहे सबै अचरज मन लेखी ॥
प्रेमिनमें ये मुख्य सुहाये । कहा भयो नाहिं आंसु बहाये ॥
करणपूर तहँ एक गोसांई । उठिकै तिनके मुखके ठांई ॥

नासामें निज हाथ लगायो। आग जरो सो फोरा पायो॥

दोहा–कर्णपूर तब सभामें,देखरायो निज पानि॥
जरे गात इन सुनि विरह, गोपिन लीजै जानि॥३॥

विरह अगिन इन प्रगट देखायो। ताहीते फोरा ह्वै आयो॥
श्रीगोविंद चंद्र भगवाना। स्वप्न माहिं यक दिवश बखाना॥
मैं गाइनके खरकन माहीं। रहत अहौं महि गड़ो सदाहीं॥
भोग लगाय पय धारहि तेरे। पूजहु म्बहिं निकासि चलि नेरे॥
तहँ चलि भूमि खनाय निकासी। पूजन लगे मूर्ति सो खासी॥
एक साहुकी नाव विशाला। यमुनामें अटकायो हाला॥
हरि मंदिर बनवावन काहीं। किय कबूल तब छुटी तहाहीं॥
साहु तुरत मंदिर बनवायो। तहँ गोबिंद चंद पधरायो॥
राग भोग हित सों धन भूरी। दियो लगाय मोद सों पूरी॥
यक दिन यक पद रच्यो सनातन। कियो राधिका वेणी वर्णन॥
उपमा तासु नागनी केरी। दियो कह्यो सुनि रूप निवेरी॥
भाई प्रिया पीठि पर नागिन। कहिबो नहीं बनतहै यहि छिन॥

दोहा–ऐसो कहि कुंजन गये,तहँ कदंबकी डार॥
झूला झूलत प्रियाकी,निरख्यो सुछबि अपार॥४॥
नागिनसी वेणी छुटी,लख्यो राधिका पीठि॥
पद परि कह पद भल रच्यो,अग्रजसो द्रुत हीठि॥५॥
रूप सनातनके अहैं,ऐसे चरित अनंत॥
मैंवर्ण्यों संक्षेपते,श्रवणकरैं सब संत॥६॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचदशाधिकशततमोऽध्यायः॥११५॥

अथ जीवगोसांईकी कथा ॥

दोहा–रूप सनातन शिष्यभे, जीव गोसांई संत ॥
परम उपासक प्रथित जग, राधा राधाकंत ॥ १ ॥

तिनकी कथा कहौं सहुलासा। वृंदावन ढिग कीन्ह्योवासा ॥
आलस रहित कथा हरिकेरी। सुन्यो भजन महँ प्रीति घनेरी ॥
ग्रहण कियो सदग्रंथनि सारा। लिखनेमें परवीन अपारा ॥
सिगरे शास्त्र पुराणनकाहीं। लिख्यो अपूर्व आप करमाहीं ॥
जन संदेह गांठि वर जोरी। दरशनमात्रहि ते दिय छोरी ॥
रास उपासन में दृढ वेशा। कियो भक्ति बहु ग्रंथ हमेशा ॥
जहँ तहँते जो धन ढिग आवै। सोयमुनामें डारि सोहावै ॥
प्रीति साधुसेवामें थोरी। लखि सब कहैं जुरे यकठोरी ॥
जो धन कालिंदीमें डारै। सो साधुन खिवाय सुख धारै ॥
जीवगुसांई सुनि तिन वानी। कहै यही सबसों हठ ठानी ॥
संतपात्र मिलतो है नाहीं। कैसे करिये सेवाकाहीं ॥
सुनि हवाल यह गुरु ढिग आई। देत भये बहु विधि समुझाई ॥

दोहा–बहु साधुनको बोलि तब, जीवगोसांई गेह ॥
दिय भंडारा एकसों, कह कठोर वचतेह ॥ २ ॥

सवैया–रूप सनातनसो सुनिकै कह्यो जीवगोसांई सों साद-रवानी ॥ संतन सों अस भाव करो नहिं सेवहु संतवरै हरि मा-नी ॥ सोसुनि जीवह्वै नम्र महा करैं संतन सेवा सदा सुखसानी ॥ नारिको आनन देखिहैंना कबहूं प्रण ऐसो लियो मन ठानी ॥ १ ॥

दोहा–मीराजी ब्रजमें गई, ते निज भक्ति लखाय ॥
सो प्रण दियो छोड़ाय सो, मीरा कथा सोहाय ॥ ३ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
षोडशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११६ ॥

अथ अलिभगवानकी कथा ॥

कवित्त घनाक्षरी—अलिभगवान नाम भये संत कथा तासु क-
हों रामचंद्रजूकी कीन्ही है उपासना ॥ और देवको न सेव कीन्हो
गुरु परंपरा यही रह्यो भाव एक समै मोदकै घना ॥ वृंदावन
आय रास कृष्णको निहारि नय तामें छकि राम मूर्तिहूमें कि-
यो योजना ॥ रासहिंविहारीयेऊ सुन्यो या हवाल गुरु वृंदावन
आये तिन्हें शीशनाय या भना ॥ १ ॥

सवैया—रासविहारी स्वरूप सदा हियरे मम रामको रूप सो
हावै ॥ सोई रह्यो उरमें वसिहै नहिं औरको रूप दृगै दरशावै ॥
दीन अशीश गुरू सुनि वैन या ध्यावहु राधिकारौन जो भावै॥
श्रीगुरुदेवके पायन धै शिर कृष्णहीं ध्यानमें नैन छकावै ॥ १ ॥

दोहा—देखि गुरू अलि यह दशा, कह सब एकै रूप॥
मग्न रहो यहि परमसुख, धनि तुम संत अनूप ॥ १ ॥
तबते अलि भगवान किय, वृंदावनै निवास ॥
कथा अमित मैं इत कियो,तिनको कछुक प्रकास २ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
सप्तदशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११७ ॥

अथ गोपालभट्टकी कथा ॥

दोहा—श्रीगोपाल भटकी कथा, कहौं सुनत सुख छाव ॥
राख्यो शालग्राममें, राधा रमणहिं भाव ॥ १ ॥

प्रेम लक्षणा भक्ति दृढ़ाई । राग भोग बहु करैं बड़ाई ॥
वृंदावन माधुर्य अगाधा । ताको स्वाद अपूरव साधा ॥
रहे जे सत्संगहि में जेऊ । वाही रीति गयेहै तेऊ ॥
सब जीवनके गुणके ग्राही । ग्रहण करैं अवगुणकोहु नाहीं ॥
यक दिन कहूं लेनगे झांकी । तहां अपूर्व शृंगारहि ताकी ॥

रुदन करनलागे अस भाषी। निज मनमें अस है अभिलाषी॥
ऐसे पग मुख नयननहुँ हाथा। सहित होत जो मेरेहु नाथा॥
तौ मैंहूं शृंगार अस करतो। गहना अरु पोशाक पहिरवतो॥
ऐसो मनमें करि सब रैना। रोवत दियो विताय अचैना॥
मज्जन करि जो होत सबेरे। मंदिर जाय खोलि पट हेरे॥
शालग्राम शिलाके रूपा। सब अंगन युत लख्यो अनूपा॥
शिला पृष्ठके देशहि माहीं। पूरबही सो रह्यो तहांहीं॥

दोहा—पट भूषण पहिरायकै, कीन्ह्यो तब शृंगार॥
वृंदावनमें अजहुँसो, मूरति लसति अपार॥ २॥

श्लोक—तामें भगवत वाक्य जो, कहौं अर्द्ध श्लोक॥
कह्यो कथा संक्षेप ते,अहै अमित मुद थोक॥

भगवद्वाक्यं उक्तंच॥
यद्यदिच्छतिमद्भक्तस्तत्तत्कुर्यामतंद्रितः॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे अष्टादशाधिक शततमोऽध्यायः॥ ११८॥

अथ विट्ठलविपुलकी कथा॥

कवित्तघनाक्षरी—विट्ठल विपुल शिष्य स्वामि हरिदासजूके परमउपासक भयेहैं कृष्णरासके॥ एक दिन रास होत देह सुधि भूलि गई, गुरुहैं अछत यह मानिकै हुलासके॥ एक शिष्य भेज्यो लाउ गुरुको लेवाय विन, गुरुहै न मोद जे सुपासी सदा दासके॥ प्रेम भरो शिष्यहूको खबरि न रही धाय, आय देख्यो आसनमें पास हरिदासके॥ १॥

दोहा—लखि प्रत्यक्ष हरिदासको, निज गुरु विट्ठल पास॥
गो लेवाय हरिरासमें, लखिते लहे हुलास॥ १॥
लीला अंतर्द्धानकी, हरिकी भई तहांहिं॥

तब तनु तजि विट्ठल विपुल, गे विकुंठपुर काहिं॥२॥
सोरठा–ऐसे चरित अनेक, अहैं विदित विट्ठल विपुल ॥
मैं वर्णन किय नेक, विस्तर भय यह ग्रंथके ॥१॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
एकोनविंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ ११९ ॥

अथ जगन्नाथकी कथा ॥

कवित्तघनाक्षरी–महाप्रभु कृष्णचैतन्य जूके शिष्य सांचे थानेश्वर जगन्नाथ कथा कहौं चारु है ॥ बड़ेसाधुसेवी जगन्नाथपुरी जान चह्यो, फेरि गुन्यो कैसे ह्वैहै संत सतकारुहै ॥ विमुख गये जो संत तौ मैं कहा कियो जाय शिष्य चलि एक कियो वचन उचारुहै ॥ चलियो विशेषि तीनि दिन झांकी करि फेरि इत चलिऐहैं कियो यही निरधारु है ॥ १ ॥

दोहा–जब त्रय दिन जगन्नाथ दिय, झांकी घरही माहिं ॥
तब अस गुणि रहिगे महा,साधु प्यार हरि काहिं ॥१॥

कवित्त घनाक्षरी–एक दिन स्वप्नहीमें कह्यो भगवान हम कूप परे हमको पधारिये निकासिकै ॥ थानेश्वर जगन्नाथ तब उठि प्रात बोलि संतन निकासि तिन्हैं थाप्यो मोद राशिकै ॥ पुत्र एक अपढ़के शोकहीमें बैठेरहे एक श्लोक हरि कृपाको प्रकाशिकै ॥ दियोहै सुनाइ सो पढ़ाय दियो सुतकाहँ सुत कंठवाणी वसीमूढ़ता विनाशिकै ॥ २ ॥

दोहा–विद्याशक्ति भई प्रबल, तिनके बहु इतिहास ॥
विस्तर भयते मैं कियो, वर्णन कथा समास ॥ २ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
विंशत्युत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १२० ॥

अथ लोकनाथजीकी कथा ॥

कवित्त घनाक्षरी—कृष्णचैतन्य शिष्य लोकनाथजीकी कथा कहौं राधा कृष्ण लीला रँगो जिनको है मन॥जलमें ज्यों मीन योंही लीन रहै भागवत प्राण तुल्य मानै ताको जौन सुनै अनुछन ॥ एक समय रामतको गमने समाज संत साज युत ठाकुर चुराय लीन्हें चोरगन॥कछु दूरि जाय भये अंध चोर आय ढिग ठाकुर दै चरण पकरि अरप्यो है तन ॥ १ ॥

दोहा—लोकनाथ हरि रसिक की, रीति प्रतीति सिखाय ।
चोरन उर करि शुद्ध अति,जाहु सु दियो रजाय॥१॥

सोरठा—तिनके अमित चरित्र, पुहुमीमें संतन विदित ॥
कर्णन करन पवित्र, वर्णन किय संक्षेपते ॥ २॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकाविंशोत्तरशत तमोऽध्यायः ॥ १२१ ॥

अथ मधुगोसांईकी कथा ॥

छंदचौबोला—मधू गोसांई कथा कहौं गृह तजि सुखछाये
कबहिं लालको लखौं वेणु टेरत मन भाये ॥
यही लालसा किये सपदि वृंदावन आये ॥
तजे भूख अरु प्यास कुंज कुंजनमें धाये ॥ १ ॥
भक्त लालसा जानि कालिंदीके तट माहीं ॥
लख्यो बजावत वेणु चेनु सो नँदसुत काहीं ॥
लियो धाय धरि तबहिं प्रीति भरि मधू गोसांई॥
प्रतिमा है हरि गये लिहे मुरली तेहि ठांई॥२॥
मुरलि मनोहर मूर्त्ति अजहुँ वृंदावन सोहै ॥
क्षण क्षण सुछवि नवीन तकत वरवस मनमोहै ॥

ऐसे चरित अनेक दियो इत नेक सुनाई ॥
कृष्णदासकी कथा कहौं अब अति सुखदाई॥३॥
जाहि सनातन रहे पूजते संत सनातन ॥
मदनमोहनै नाम मूर्ति सो पाय प्रेमघन ॥
पूजन कीन्ह्यो भट्ट नारायण शिष्य भये जिन॥
को वरणै यश रह्यो कृष्ण अनुराग भूरि तिन॥४॥
अबलों वाही रीति राग अरु भोग सदाहीं ॥
होत मदनमोहनै केर वृंदावन माहीं ॥
कृष्णदास पुनि ताजि शरीरहरिधाम पधारे ॥
पंडित कृष्णहुदास काहँ वरणों सुखधारे ॥ ५॥
वृंदावन करि वास मूर्त्ति गोविंदचंद तहँ ॥
रहे रूप रस मग्न सदा तिनके प्रमोद महँ ॥
हरिदासनमें प्रीति करतभे तैसहि भारी ॥
छाय रह्यो यश गये अंत हरिधाम पधारी ॥६॥
श्रीभूगर्भ गोसांई कथा अब करों बखाना ॥
वृंदावन करि वास लियो कुंजन सुख नाना ॥
कृष्ण राधिका रूप माधुरीमें अति छाके ॥
संतनसेवा कियो सदा हरिसम दृग ताके ॥ ७॥
मानस पूजन राग भोग हरिको नित ठानी ॥
पर विभूतिगे अंत समय तनु तजि सुखदानी ॥
परमरसिक जे संत दरशको तिनके आये ॥
परिचै अहैं अनंत कह्यो मैं कछु सुख छाये॥८॥
काशीश्वर गोस्वामि कथा वरणौं सुख माहीं ॥
रहे वेष अवधूत गये नीलाचल काहीं ॥
संत कृष्ण चैतन्य महा प्रभु आज्ञा पाई ॥

आये वृंदावनहिं देखि अनुराग महाई ॥ ९ ॥
जुरिकै सबै महानुभाव गोविंदचंदकी ॥
सेवा दीन्ह्यो सौंपि अहै जो अति अनंदकी ॥
भावसिंधुमें मग्न सदा दै दरश जनन कहँ ॥
भवसागर जो महाअगम सो सुगम कियो तहँ ॥ १०॥
इ० रा० क० यु० उत्तरार्द्धेद्वाविंशोत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १२२ ॥

अथ रांकाबांकाकी कथा ॥

दोहा–रांका बांका तिय भये, पंढरपुरके वासि ॥
रांकाकी बांका तिया, कहौं कथा सुखराशि ॥१॥
नामदेव तेहि देशहि माहीं। होत भये प्रिय संतन काहीं ॥
ते दोउ भक्त भये बड़भागा। परधन किय न स्वप्नअनुरागा॥
लकरी बीनि जीविका करहीं। नाम निरंतर हरि मुख धरहीं ॥
सोइ जीविकाते नित अनुछन। करैं साधु सेवन प्रमुदित मन॥
यक दिन नामदेव हरिसों कह। ये दोऊ सहि सहि विपती मह॥
संतन सेवन करत सदाहीं। इनको द्रव्य देहु कस नाहीं ॥
तब स्वप्ने भगवान उचारा। ये न लेत नहिं करत पुकारा ॥
कहा करौं स्वभाव अस देखी। दया होति मोहिंकाहँ विशेखी ॥
चलहु परीक्षा तुमको देहीं। अस कहि श्रीपति दीनसनेहीं ॥
नामदेवको संग लेवाई। जाय वनहि हरि रहे छिपाई ॥
यक मोहरकी थैली भारी। देत भये तेहिं मगमें डारी ॥
रांका बांका दोउ प्रभाता। लकरी लेन भये जब जाता ॥
दोहा–आगे पति पाछे तिया, थैली रांका देखि ॥
निहुरि तोपि दिय धूरिते, तियको पीछे लेखि ॥२॥
लोभासक्ति नारि अति होई। लेय तौ जाय धर्म मम खोई ॥
पीछे तिय निहुरत पतिकाहीं। लखिकै आई धाय तहांहीं ॥

कछुक दूरि रांका तब जाई। खड़े भये तिय निकट सिधाई॥
कही निहुरिकै मगमें नाथा। कहिये कहा करत निज हाथा॥
सुनि रांका तब वचन बखाना। इन थैली धन बहुत लखाना॥
तुव भयते नहिं लेइ उठाई। तोपि दियो लै धूरि महाई॥
रांका तिय तब रही जो बांका। बोली विहँसि वदन सों बांका॥
अबै आपको धनको भाना। मेरे धनको भान नशाना॥
रांका तब निज नारि सराही। थैली त्यागि होतभे राही॥
नामदेवसों कह भगवाना। तुमको इन आचरण लखाना॥
नामदेव लखि तिन आचरना। हारि गये हरि पुनि कह वचना॥
औरहु इनको चरित विशेखी। मेरे संग लेहु अब देखी॥

दोहा—अस कहि हरि गवने वनहिं, नामदेव लै साथ।
धरिदीन्हे मग ठौर यक, बहु लकरी बिनि हाथ॥३॥

घनाक्षरी—वासुदेव नामदेव दोऊ छिपिरहे फेरि कूहा देखि लकरीको जानिकै बिरानीहै॥ वह राह त्यागि रांका बांका और ठौर बीनि, लकरीको बोझ सांझ लैकै सुख मानी है॥जात-भे बजार भगवान दै दरश तिन्हैं छातीमें लगाय लियो तेऊ विनयठानी है॥ लाय निज धाम नामदेवसन कह्यो ऐसे प्रभुको क्यों कियो दिक्क मेरी कहि वानी है॥ १॥

दोहा—नामदेव तब लै छुरी, गरकाटिबो देखाय॥
मूड़ कूटि प्रगटाय हरि, लिय सो म्वहिं न सोहाय॥४॥
नामदेवकी जो कथा, वर्णित यह तेहिं ठाम॥
कर पसारि रांका मुदित, लै सँग बांका वाम॥५॥
धारे चिरकुट वसन पुनि, गिरो चरणमें आसु॥
तकि हरि कहतनवसनतौ, पहिरहु भल सहुलासु॥६॥
चीरमात्र करि धारणै, हरि आज्ञाते दोउ॥

विचरि जगत दै दरश किय,शुचि जो अविरह कोउ॥
रांका बांकाकी कथा, यहि विधि कियों बखान ॥
जाहि सुनत उपजत अहै, हरिमें भक्ति महान ॥ ८ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रयो
विंशाधिकशततमोऽध्यायः ॥ १२३ ॥

अथ खोजाजीकी कथा ॥

दोहा–खोजाजीकी यह कथा, कहौं सुनहु चितचाय ॥
खोजा गुरु हरिभावना, में पटुरहे बनाय ॥ १ ॥
तेहि तनु तजन समय जब आयो।वचन शिष्यसों तबहिं सुनायो
घंटा एक बांधि इतदेहू। ताको हेतु कहौं सुनिलेहू ॥
तनु तजि जब हम हरिके धामा। जैहैं तब बजिहै अभिरामा ॥
छूटत भयो गुरू तनु जबहीं । घंटा बजतभयो नहिं तबहीं ॥
तब खोजा चिंता कीन्ह्यो मन । मम गुरु कहां रमे हैं यहि क्षन॥
गुरु जस तनु त्यागनके काला । पौढ़े रह तैसही उताला ॥
खोजा पौढ़ि सामुहे माहीं । निरखत भये आम तरु काहीं॥
पकीसाह यक रहै तहांई । गुरुकी दृष्टि परी तेहि ठाईं ॥
तहँ रहे रमि गुरु तनु त्यागी। गुणि फल तोड़ि लियो सुख पागी
ताको फारि जंतु तेहिं भीतर। लघु लखि काढ़ि दियो तेहिं बाहर
जब वह जंतु कियो तनु त्यागा। तब गुरु हरिढिग गे बड़भागा॥
घंटा बाजत भयो दराजा। तब सिगरे जुरि संत समाजा ॥
दोहा–शिष्य योग्यता प्रबल लखि, गुरुप्रभाव अनजानि ॥
करि विचार मन ठीकदै, कहत भये मृदुवानि ॥ १ ॥
सवैया–सुंदर पक्व फलै लखिकै गुरु अर्पणकै हरिकी परसादी
लेन हितै लघुजंतु भये हरिदै परसाद तिन्हैं अहलादी।

आपने धाम पठायो सदा परसाद हरीके रहेते सवादी ॥
पूरणसो भगवंत कियो यह खोजाकुथाकरै संत अवादी १

इति श्रीरामरसिकावल्यांक० उत्तरार्द्धचतुर्विंशत्यु
त्तरशततमोऽध्यायः ॥ १२४ ॥

अथ लड्डूभक्तकी कथा ॥

दोहा—लड्डू भक्त कथा कहौं, लीन्हें संत समाज ॥
चले तीर्थ मग मिलो यक, विमुखी देश दराज ॥ १ ॥

जहँ मनुष्य को देवी काहीं । दै वलि करैं प्रसन्न सदाहीं ॥
पाप पगे तहँके जन भूरी । लखि यक द्विजसुतको सुख पूरी ॥
देवीको वलि देवे हेतू । चले ताहि लै देवि निकेतू ॥
रोदन करत मातु तेहि धाई । लड्डूस्वामि पास चलि आई ॥
सब हवाल सो गई सुनाई । सुनत स्वामि तब अति दुखछाई ॥
चले आपहीं उठि अतुराई । दियो ब्राह्मणी तनय छोड़ाई ॥
वाके औजी आप सुखारी । लड्डू भक्त गये पगु धारी ॥
भक्त तेज तापित देवी तहँ । धरिकै महाकराल रूप कहँ ॥
प्रतिमा फारि निकसिकै आसू । सब विमुखनको कियो विनासू॥
आगे लड्डू भक्तहि केरे । करिकै नृत्य मोद लहि टेरे ॥
होत भई द्रुत अंतर्ध्याना । लखिस्तुति किय संत अमाना॥
संत रहे जे तिन सँगमाहीं । लिखेदेत तिन नामनकाहीं ॥

दोहा—पारिख सीवाराम अरु, ऊदा वो हथराम ॥
जगन्नाथ सीवा अउर, संतनरायण नाम ॥ २ ॥

घनाक्षरी—गोपालकुंवर अरु गोविंद भांडिल्य छीत, हरिना-
म दीना औ अनंतानंद जानिये ॥ नारद औ श्यामदास उद्धव
ध्रुव भगवान हरिनारायणहु त्यौं श्यामदास मानिये ॥ कृष्णजी-

वन विहारी गंगादास कृष्णदास कुंठा किंकरहु विसरामदास गा-
नियेे॥खेमसोंटा गोपानंद जयदेव रावौदास, परमानंद उद्धवगो-
मा कालख बखानिये ॥ १ ॥

दोहा–खेम पँडा भगवान अरु, चीधर और प्रयाग ॥
पूर्णविनोदी भटल अरु, बनवारी युतराग ॥ ३ ॥
संत नृसिंह दिवाकरहु, जगन्नाथ सुकिशोर ॥
लघु उद्धव अंगज बहुरि, नाम सलूधे और ॥ ४ ॥
वीठल परमानंद अरु, केशव खेमहुदास ॥
इते संत निवसत सदा, लड्डूभक्तहिं पास ॥ ५ ॥
ते संतन युत शुचि कियो, लड्डू विमुख सो देश ॥
ऐसे चरित अनेक हैं, मैं वरण्यों यह वेश ॥ ६ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचविं-
शत्युत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १२५ ॥

अथ संतभक्तकी कथा ॥

दोहा–संतभक्त इतिहास यह, सुनौ सबै बड़भाग ॥
संतन सेवामें रह्यो, जासु बड़ो अनुराग ॥ १ ॥

भिक्षा मांगि रोज लैआई । करै साधुसेवा सुखदाई ॥
यक दिन साधु गेह बहु आये । तिनसों पूंछत भये सुहाये ॥
संत कहांहैं देहु बताई । सुनि सो कही कोप अति छाई॥
चूल्हे संत लेहु चलि हेरी । सुने संत अस गिरा करेरी ॥
तेहि तियको अभक्त मन जानी । तबते लौटि चले सुखमानी ॥
तौलौं संत आयगे गेहू । सुनि हवाल धाये युत नेहू ॥
संतनको करि विनय महाई । लाये अपने अयनलेवाई ॥
संत कहे तेहि नारि हवाला । बोले संत सत्य कहु वाला ॥

मैं चूल्हेहीके हित लागी। गयो बरे जामें बड़ आगी ॥
होय पाक बहु संतन केरो। सुनत लहे ते मोद घनेरो ॥
पुनि जेउनार संत बनवाई। ते संतनको दियो जेवाई ॥
भोर माइकेते तिय भाई। आये रचि जेउनार बनाई ॥

दोहा–आयपरे बहु साधु तहँ,सो तिय तिनके हेत ॥
मोटी रोटी बनैके, बनयो साक निकेत ॥ २ ॥

फेरि लेनगे जल बहु दूरी। बोलि संत संतनको भूरी ॥
भोजन हित दीन्ह्यो बैठाई। बैठायो यक थल तिय भाई ॥
भाइन हित तिय पाक बनायो। सो संतन परुस्यो सुख छायो॥
रच्यो पाक जो संतन काहीं। सो तिय भाइन दियो तहांहीं॥
पानी लैकर सो तिय आई। अँगुली रेते नाक तेहिं ठांई ॥
पतिसों कही वचन दुख पाई। तुम मेरो लियो नाक कटाई॥
रेतत घीच आपनी संता। बोल्यो वचन तबै मतिवंता ॥
रे दुष्टिनि जब यमके दूता। कटिहैं मार घीच हतिजूता ॥
तब तू करिहै कान सहाई। सो मोको अब देहि बताई ॥
पतिके वचन सुनत सो नारी। संतनमें लखि पात रति भारी॥
आनन सों बहु भाँति सराही। वही रीति गहिलियो उछाहीं॥
ऐसो संतनमें अनुरागा। जानिलेहु ताको अति लागा ॥

दोहा–संत भक्तको है कथा,ऐसी विदित अनत ॥
मैं वरण्यों संक्षेपते, लहि सुकृपा सियकंत ॥ ३ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेषड्विंश
त्युत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १२६ ॥

अथ तिलोक सोनारकी कथा ॥

दोहा–भयो तिलोक सुनार यक, पूरव देशहि माँहि ॥
तासु कथा वर्णन करों, सेवै साधुन काहिं ॥ १ ॥

कौनिहु यत्न जो धनकहुँ पावै। तो संतनको बोलि खवावै॥
ऐसेहि बहु दिन बिते . उछाहा। रहै नगरमें यक नरनाहा॥
तासु सुताको रह्यो विवाहा। कामदार ताको करि चाहा॥
यक जोड़ी जेहर बनवायो। बनवन हित निज घर लैआयो॥
सो संतनको दियो खवाई। मनमें संका कछू न लाई॥
पंद्रह रोज अवादा आयो। जेहर लेन जनन पठवायो॥
जाय तिलोक उभय दिन माहीं। देने कहि आये तेहिं काही॥
आवत भो दूजो दिन जवहीं। भागि तिलोक गयो डरितबहीं
राजा पुनि बोलवावत भयऊ। तब हरिवपु तिलोकधरिलयऊ
जेहर लै निज पाणि अनूपा। करि सलाम चलिकैढिगभूपा॥
नज़र कियो नृप सभा समेता। देखतहीं ह्वैगयो अचेता॥
दै तिलोकको बहुत इनामा।विदा कियो सो धन धरिधामा॥

दोहा—हरि तिलोक वपु संत बहु,करि भंडारा फेर॥
संत वेषको धारिकै,चलि तिलोकके नेर॥ २॥

सोरठा—दै प्रसाद कह वैन,कालिह तिलोकसोनार ने॥
किय भंडारा ऐन,संतनको बहु बोलिकै॥ १॥
सुनतहि कह्यो तिलोक,दूसर कौन तिलोक है॥
करि शंकानिज ओक,आय महीप इनाम को॥२॥
सुनि हवाललिय जान,कियोकृपाश्रीकृष्णयह॥
संत सेव मुदमान,करत जो तापै हरि खुशी॥३॥
वर्णन कियो समास,कथा तिलोक सोनारकी॥
सुनैं संत सहुलास,अति आदर युत कान दै॥४॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे सप्तविंशत्युत्तर
शततमोऽध्यायः॥ १२७॥

अथ प्रतापरुद्रकी कथा ॥

घनाक्षरी–संत जो प्रताप रुद्र गजपति रह्यो यक,भक्ति अति ठानि जगन्नाथपुरी गयो है ॥ बहुत उपाय कियो दरश न पायो तब,करै संन्यास स्वप्न हरि कहि दयो है॥करिकै संन्यास तब प्रेम भरो कृष्ण आगे मत्तसो करन लाग्यो नृत्य मोद छयो है ॥ महाप्रभु कृष्णचैतन्य देखि भाव ताहि, मग्नह्वै अपार छातीमेंल-गाय लयोहै ॥ १ ॥

दोहा–सुनि हवाल वर्णन परचो,नीलाचलको भूप ॥
संत सभा में ख्यातभो, ताको भाव अनूप ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे अष्टाविंशत्यु त्तरशततमोऽध्यायः ॥ १२८ ॥

अथ गोविंदस्वामीकी कथा

छंद–कथा गोविंद स्वामिकी कहौं सख्यत्व भावकै ॥
गोविंद संग बाल समय खेलते उरावकै ॥
दियो जनाय बात सो हरी स्वरूप बालकै ॥
गोविंद स्वामि संग आंटि दंड खेल हालकै ॥ १ ॥
जबै गोविंद दाँव देनको परचो तबै भगे ॥
अबै न दाँव देहिंगे पुकारने यही लगे ॥
गोविंद गारी देत गो गोविंद पीछुमें तबै ॥
अबैहि दावँ लेउँगो कहां भगाइहौं जबै ॥ २ ॥

सवैया–भगि मंदिर भीतर कृष्णगये तबगोविंदभीतरजानलगो॥
जब पंडन मारि निकासि दियो तब बाहेरही अति कोप जगो ॥
महि ठोंकत डंड उचारत गारिदे तू कढ़िहै कबलौं न भगो ॥
इत बैठ रहौंगो मैं तेरे लिये नहिं दावँ दियो अहै पूर ठगो ॥१॥

चौबोला—कछुक बारमहँ गयो पुजारी भोगलगावन काहीं॥
भोग लगै नहिं भया पुजारी शंकित तब मन माहीं ॥
सोवत रह्यो महंत स्वप्न मे श्रीपति जाय उचारा ॥
गारी मोहिं गोविंद देतहै भूंखो बैठ दुवारा ॥ २ ॥
तात प्रथम खवावहु वाको जाते तेहिं रिस जाई ॥
मैं हूं तब पाऊंगो भाजन अस दिय स्वप्न सुनाई ॥
गोविंदको लेवाय तब लाये पग गहि सबै पुजारी ॥
भोजन सुभग करायो सादर कोमल वचन उचारी३॥
आवत थार एक दिन गोविंद रोकि कह्यो अस वानी।
मोहिं खवाय प्रथम लालाको फेरि देहु सुखसानी ॥
कह्यो पुजारी तब महंतसों छुये लेत यह भोगू ॥
भोग लग्यो नहिं कह महंत तब अबै न तेरे योगू॥४॥
गोविंद कह्यो प्रथम जो याको देते भोग लगाई ॥
तो यह चलोजात कुंजनमें दूरि देत भटकाई ॥
ताते देहु खवाय प्रथम मोहिं है मैं रहौं तयारै ॥
जब लाला खेलन चलिहै तब चलौं महूं विनवारै॥५॥
हेरन परत नाहिंतौ मोको सुनि अस गोविंद वैना ॥
नयन सजल सबके ह्वैआये पूरित उर अति चैना ॥
यक दिन शौच क्रिया लालनको करत सो गोविंद धाई॥
टोरि टोरि अकवनकी बौड़ी मारन लग्यो सचाई॥६॥
तब लालहु उठि गोविंदकाहीं मारि बैठि पुनि जाहीं ॥
ऐसो कियो सख्यत्व भावसो विदित रसिक जनकाहीं॥
चरित विचित्र ऐसही तिनके लेहु सबै तुम जानी ॥
मैं कछु कियों बखान हेतु निज करन पुनीतहिं वानी७॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकोनत्रिंशो-
त्तरशततमोध्यायः ॥ १२९ ॥

अथ गंगामालीकी कथा ॥

दोहा—वसनहार लाहौरको,गंगा माली एक ॥
रह्यो तासु वर्णन करौं,कथा सुखद सविवेक ॥ १ ॥

विधवा रही पुत्रकी नारी । तासों कह्यो वचन सुखधारी ॥
लेहि मानि पति श्रीपति काहीं। लेहु गेह धन सब मम नाहीं ॥
कह्यो नारिहूं सो पुनि बानी । जन्म सफल करु हरि रति ठानी
कही नारि मोहिं लालाकेरी । सेवा पूजा देहु घनेरी ॥
निरखि प्रेम अति निज तिय काहीं।हरिकी सेवा पूजा माहीं ॥
गुंजा माली दियो लगाई । फेरि सौंपि गृह धन समुदाई ॥
जाय आप ब्रज कियो निवासा। तहँको चरित कहौं अब खासा॥
देहिं जहां ठाकुर पधराई । खेलैं तहँ बालक बहु आई ॥
खपरा माटी ईंटहु केरे । खेलहिं खेल बनाय घनेरे ॥
इनके ठाकुर पर उड़ि धूरी । परै निरखि सो लड़कन दूरी ॥
दियो भगाय मारि करि रोषा । रज भरि दीन्हे दै करि दोखा ॥
जाय पुजारी जब ढिगमाहीं । लग्यो लगावन भोगहि काहीं ॥

दोहा—लगै भोग नहिं तब करी, विनती गुंजा नारि ॥
क्यों रूठेहौ नाथसो,मोसों कहो उचारि ॥ २ ॥

घनाक्षरी ॥

मंदिरके भीतरते वाणी यों प्रगट भई बालकन खेल मोहिं लगै अति प्यारो है । तिनको भगाय दियो भोजन न करों ताते,कह्यो गुंजा आजु भोग लगै धरो थारो है । कालिह लड़कन बोलि आपके उपर धूरि,माटी मैं डराय देहौं जाते मोद धारो है॥ भोग तब लग्यो यदुराजै रघुराज कहै ऐसे बैन गुंजा जब मुखसों उचारो है ॥ १ ॥

दोहा–ऐसे भाव अनेकहैं,जानि लेहु सब संत ॥
मैं वरण्यो कछु लहि कृपा, नाथ रुक्मिणी कंत॥ ३॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रिंशदुत्तरशतत
मोध्यायः ॥ १३० ॥

अथ गणेशदेईकी कथा ॥

घनाक्षरी । भूप ओड़छे में भयो मधुकरशाह ताकी, रानीभै गणेशदेई कथा कहौं तासु है।संतसेवी रहै आवैं रोजहीं अनंत संत, एकसंत रह्यो रमि पायकै सुपासु है ॥एक दिन देखिकै अकेलि बैठि रानी काहूँ, साधु वह जाय कह्यो बैन सहुलासु है॥देहु धन थैली भरि रानी कह्यो है न यहां,साधु तब छुरी मार्‍यो रानी जांघ आसु है ॥ १ ॥रुधिर निहारि भय भूपतिकी धारि संत, गयो भागि पट्टी बांधि लियो भूप नारि है ॥ कह्यो न उचारि मुख काहूसों सँभारि यह, कहै कछु वचन न कोऊ शोक कारि है ॥ नृपति पधारि जब गयो ढिगसों निवारि, दियो अबै आवै नहिं निकट सिधारिहै ॥ अहौं नारि धर्म युत पुनि चारि रोज बीते, नृप जाय पूंछ्यो विथा नवल विचारि है ॥ २ ॥ खोलि कहो कारण विथाको कह्यो फेरि नाहिं, दुइ चार बार ढार्‍यो भूप बार बार है ॥ पूंछ्यो जब तब कह्यो भर्म नहिं कीजै नाथ, दोष नहिं धारौ तामें करहु उचार है ॥ नृपति कबूल्यो तब कह्यो सो हवाल सब, जेहिं विधि मार्‍यो छुरी संत अविचार है ॥ क्षमा लखि रानीकी सराहि बहु धन्य करि, कियो है प्रदक्षिणा नरेश मोदवार है ॥ ३ ॥

दोहा–भूषण तू मम गेहकी, जेहि कुल कोउ हरिभक्त ॥
होवे सो कुल धनि विदित, यह प्रमाण बुध उक्त॥१॥

श्लोक–सत्पुत्रःकुलभूषणंकुलवधूर्गेहस्यसंभूषणं
सद्बुद्धिर्धनभूषणंसुजनताविद्यावतांभूषणम् ॥
विद्युद्भूषणमंबुदस्यसरसःपंकेरुहंभूषणं
वाणीनादविभूषणंभगवतोभक्तिःसतांभूषणम् ॥ १ ॥
दोहा–निज तिय में तिय भाव तजि, नृप लीन्ह्यो गुरु मानि॥
अस गणेशदे रानिको, लेहु सबै जन जानि ॥ २ ॥
तेहि समान तेहि संगमें, भक्त रहीं जे नारि ॥
तिनके नामनको कहूं, सुनहु सबै सुखधारि ॥ ३ ॥
सीता झाली सुमति अरु, शोभाबाई नाम ॥
प्रभुता भठियानी बहुरि, गंगा गौरी आम ॥ ४ ॥
जीवा गोपाली सुनौ, नाम उबीठा और ॥
अहै कोमला देवकी, हीरा त्यों शिरमौर ॥ ५ ॥
हरिचेरी बाई भई, परम भक्ति उर धारि ॥
संग गणेशदे रानिके, रहिं सो दियो उचारि ॥ ६ ॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेएकत्रिंशो
त्तरशततमोऽध्यायः ॥ १३१ ॥

अथ भक्तगोपालकी कथा ॥

दोहा–रह्यो भक्त गोपाल यक, तासु कहौं इतिहास।
मानि परमगुरु संतजन, सेवै सहित हुलास ॥ १ ॥
तासु वंशमें यक जन कोई। ह्वै विरक्त गो तीरथ गोई ॥
संतन सेवन सुयश विशाला। सुन्यो जो करत रह्यो गोपाला॥
भक्त आपने कुल तेहिं जानी। लेन परीक्षा हित सुख मानी ॥
आवत भे गोपाल गृह माहीं। लखतै उठि गोपाल तहांहीं ॥
पूजन करि षोडशहि प्रकारा। सादर मुखसों कियो उचारा ॥

गृह भीतर चलि भोजन करहू।कह्यो सो मोर वचन चित धरहू॥
नारि वदन मैं देखत नाहीं। सुनि गोपाल कह मैं तिय काहीं॥
देहौं करि किनार प्रभु चलिये। सुनिजे गृह भीतर कहि भलिये॥
तहँको इक निहारि दिय नारी। तब सो संत कोप उरधारी॥
मुख गोपालके थापर मार्‍यो। तब गोपाल कर मींजि उचार्‍यो॥
मेरो मुख अति अहै कठोरा। हाथ पिरात होयगो तोरा॥
तब सो संत गहि चरण गोपाला।अपनो यह कहि गयो हवाला॥
दोहा—कैसी सेवा संतकी, करत परीक्षा लेन।
आयों तेरे निकट मैं, तेरे सम कोउ हैन॥ २॥
सोरठा—ऐसे भाव अनेक, संतनके जानहु सबै।
मैं वर्णन किय नेक, विस्तर भय यहि ग्रंथके॥१॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेद्वात्रिंशो
त्तरशततमोऽध्यायः १३२॥

अथ लाखानामकी कथा॥

सोरठा—मारवाड जो देश, तहँको वासी भक्त यक।
लाखा नाम हमेश, करै संतसेवा सतत॥ १॥
भोजन संतन जबहिं करावै। मोद अनंत उरहिं तब पावै॥
पर्‍यो अकाल बड़ो यक काला। आवनलगे संत बहु हाला॥
तब संकेत अन्नको जानी। तजन चह्यो सो थल विज्ञानी॥
स्वप्न दियो तब हरि निशि आई।तुव हित किय यक यत्न सुहाई॥
गोहूं काल्हि एक गाड़ी भर। लगता भैंसी यक तुव घरपर॥
ऐहैं सो गोहूं कुठली भरि। औनातरी तासु लीजो करि॥
लेतजाहु गोहूं तहँ तेरे। कुठुला भरो रहै गो हेरे॥
दूध भैंसिको दिह्यो जमाई। ताहि भांइ बहु मठा बनाई॥

रोटी छांछ तीन संतन कहँ । रोज खवाय रहो निज घरमहँ॥
ऐसो स्वप्न देखि निशि जागी । तियसों कह हवाल सुखपागी॥
नारि कह्यो यह सत्यहिं होई । कहों सो जेहिं विधि आयो सोई॥

दोहा—रहे गावँ यक निकट तहँ, जमींदार बहु भाय ॥
रहे भयो धनहीन यक, तब सिगरे जुरि आय ॥ २ ॥

पत्ती दियो लगाय सुजाना । जामें वोहू होय समाना ॥
तहँ कोउ सज्जन बैठ तहांहीं । बोलत भयो वचन सुखमाहीं ॥
यह व्यवहार भयो अति नीको। कछु परमारथ करिबो ठीको ॥
लाखा भगत संत अनुरागी । चलो जात सो निज घर त्यागी॥
ताते यहि पत्तीमें थोरा । देहु वाहुको यह मत मोरा ॥
जामें सेवा साधुन केरी । चली जाय वाकी विन देरी ॥
अस विचारि भैंसी दुधारिवर । गोहूं मन पचास गाड़ी भर ॥
पठै दियो लाखा घरमाहीं । लाखा बोलि संतजन काहीं ॥
जैसो कह्यो स्वप्न भगवाना। तेहि विधि भोजन दिय सविधाना
तामें यक श्लोक प्रमाणा । लिखेदेत जो विदित पुराणा ॥

श्लोक—अष्टादश पुराणानां व्यासस्यवचनद्वयं ॥
परोपकारः पुण्याय पापायपरपीडनं ॥ १ ॥

एक समय दंडवत प्रणामा । करत दरशहित पुरी ललामा॥
मारवाड़ते लाखा आये । जब जगदीश पुरी नियराये ॥

दोहा—जगन्नाथ तब स्वप्न दिय, पंडनको निशि माहिं ॥
लावहु म्याना में इतै, लाखाभक्तहि काहिं ॥ ३ ॥

पंडा तबहि पालकी लाये । लाखा लखि अस वचन सुनाये॥
मम प्रण भंग करहु तुम नाहीं । जानदेहु योंहीं मोहिंकाहीं ॥
पंडन कह्यो पूर प्रणभयऊ । करहु निदेश नाथ जो दयऊ॥
यहू हुकुम जगदीश सुनायो । सुयश सुमिरनी मोर बनायो ॥

लाखा मोहिं देहि पहिराई । अति प्रसन्न मैं मम ढिग आई ॥
तब लाखा चढ़ि सिविका माहीं। जाय दरशि सुख लह हरि काहीं
रहै सुता यक तेहि हित व्याहा। जुरै जो धन सो सहित उछाहा॥
सब संतनको देय खवाई । कहि मम धन संतनको आई ॥
योंहीं बहु धन सेवक लाई । जोरै संतत देय बोलाई ॥
जगन्नाथ तब स्वप्नसुनायो । व्याह करौ लै द्रव्य सुहायो ॥
तबहुँ परयो लाखा मन नाहीं विदा न भये चले घरकाहीं ॥
जगन्नाथ तब कियो उपाई । ताके सुता व्याह हित भाई ॥

दोहा—मारग महँ यक भूप रह, स्वप्न दियो तेहिकाहँ ॥
आवत लाखा भक्ततेहि, जाय न निजघर माहँ ॥ ४ ॥
हुंडी मुद्रा सहसकी, आवति सो तेहिं देहु ॥
राजा सुनि सोइ करतभो, लाखासों कह लेहु ॥ ५ ॥
लाखा मुद्रा पायसो, सौमें करि सो व्याह ॥
नौशत संतनको दियो, अशन कराय उछाह ॥ ६ ॥
जानि लेहु सब संत तिन,ऐसे चरित अपार ॥
मैं वर्ण्यों संक्षेपते, करिकै विमल विचार ॥ ७ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेत्रयस्त्रिंशोत्तर शततमोऽध्यायः ॥ १३३ ॥

अथ सूरमदनमोहनकी कथा ॥

दोहा—सूर मदनमोहन कथा, कहौं परमपटु गान ॥
राधाकृष्ण उपासना, कीन्हीं सहित विधान ॥ १ ॥
नाममात्र तिनको रह्यो, सूरदास विख्यात ॥
सब लोगनके नयनमें, सूर सरिस दरशात ॥ २ ॥

कृष्ण चरित्र देखिबे काहीं । अम्बुजसे युग नयन सुहाहीं ॥

रहे पूर्वही साहु देवाना । लै मुद्रा त्रैलाख सुजाना ॥
सौदा चले खरीदन काहीं । सो तो लेत भयेहैं नाहीं ॥
साधुन सब धन दियो खवाई । शाह जबै दिय हुकुम पठाई ॥
तब छकरामें उपल भराई । दिय पठाय चिट्ठी लिखवाई ॥
आधीरात आपगे भागी । ऐसो लिख्यो भीतिमें पागी ॥

तीनि लाख तेरहहजार सब साधुन मिलि गटका ॥
सूरदास मदनमोहन आधीरातिमें सटका ॥ इति ॥

अकबर शाह बांचि सो पाती । ह्वै प्रसन्न मन अति मुदमाती॥
बोलि तुरंत मदन मोहन कहँ । खातिर करि पठवायो ब्रजमहँ॥
आय मदन मोहन ब्रज काहीं । मदन गोपाल मंदिरे माहीं ॥
बसे महंत कियो सत्कारा । यक दिन आधीरात मँझारा ॥
लेन परीक्षाहेतु महंता । कह्यो पुजारीसों मतिवंता ॥
होते पुवा समय यहि माहीं । भोग लागतो तो हरिकाहीं ॥

दोहा–सुनत मदन मोहन तहां,किय मुहूर्त्त लौं ध्यान ॥
प्रेम देखितेहि कृष्ण तब, पुवा लादि छकरान ॥३॥

पठै दियो काहूके हाथा । मंदिर द्वार आय सो साथा ॥
छकरनको ठराय कह बानी । पुवा हारिहि अरपौ सुखमानी॥
सुनि महंत तब मदन गोपालै । भोग लगाय प्रीति युत हालै ॥
दियो खवाय सैकरों संतन । लेहु प्रभाव जानि असनिजमन॥
फेरि मदनमोहन सुख छायो । यक पद ऐसो तुरत बनायो ॥
तामे लिख्यो संत पनही को । रक्षक मैं कहवाऊं नीको ॥
सो पद सुनि कोउ संत उदारा। लेन परीक्षा हेतु विचारा ॥
पहिरि उपानह मंदिर आई । दरशन लेन चल्यो अतुराई ॥
लखि कह सूर धारि इत जूता । दरशन करि आवो मजबूता ॥
संत कह्यो लै जैहै कोई । सूर कह्यो मैं ताकत सोई ॥

तब जूता उतारि सो गयऊ। सूर तासु जूता कर लयऊ ॥
खड़े रहे जब साधु सो आयो । तब ताके पगमें पहिरायो ॥

दोहा–तब वह साधु प्रसन्न अति,करि प्रदक्षिणा चारि ॥
करि दंडवत प्रणामको,बोल्यो वचन सँभारि ॥ ४ ॥
संत उपानहके अहैं, सांचे रक्षकआप ॥
फेरि एक पद रचिज दिन,गायो मुखनिहपाप ॥ ५ ॥
शत योजनलों ताहि दिन,रहजे संत महान ॥
तेउ गान किय वर भये, योगाभ्यास सुजान ॥ ६ ॥
भक्तराजमें ख्यात ब्रज,प्रगट लखे नँदलाल ॥
चरित अमित यह सूरके,मैं कछु कह्यों विशाल॥७॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेचतुस्त्रिं
शोत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १३४ ॥

अथ मुरारिदासकी कथा ॥

कवित्त–मुरधर देशमें विलौंदा नाम ग्राम यक तहांके निवासी संत दूसरे मुरारिदास ॥ गानविद्यामें प्रवीण प्रेमाभक्ति सदा छके बांधि पग नूपुरको नृत्य करैं हरि पास ॥ जातिको न मानै भेद चरणामृत देय जोई शीश धरि पान करै नेम करि सहुलास ॥ राजगुरु परम प्रतिष्ठित ते यक दिन मज्जनकैआवत रहे ते रह्यो जो अवास ॥ १ ॥

सोरठा–मगमें एक चमार, बैठो चरणामृत लिये ॥
सो किय ऊंच उचार,पात्र होय सो लेय चालि ॥१॥

सो ध्वनि सुनिमुरारिनिज काना।दौरि तुरित अस वचनबखाना॥
देहु हमैं चरणामृत काहीं । सो मुरारिको चीन्हि तहांहीं ॥
कह्यो तुच्छ मैं जातिहि केरो । सो सुनि कह मुरारि बिन देरो॥

तुच्छन ते हमहूं ते स्वच्छा। नमे किये चरणामृत दक्षा ॥
अस कहि लै चरणामृत आसू। पाणि लियो करिसहितहुलासू
फैली बात सकल यह गाऊं। त्योंहीं भूप सभाके ठाऊं ॥
निज पर जानि भूप कम प्रीती। तब मुरारि नृपसों तजि भीती॥
एक सूरको भजन सुनाई। नगर त्यागि निवस्यो ब्रज जाई ॥
लिखे देतहौं सो पद काहीं। सुनैं संत बांचैं मुदमाहीं ॥

भजन—जातिभेद जो करै भक्त सो सोईहै अतिपापी ॥
तातें भलो वधिक परनिंदक गुरुहिंसक मदिरापी ॥
वायसके विष्ठाते उपजैं पीपर नाम कहावैं ॥
ताहि परिक्रम करे दंडवत सब द्विज पूजन आवैं ॥
तुलसी जो घूरे महँ उपजै दोष न कोऊ जोई ॥
ते तुलसीके फूल पत्र सब हरिपूजनको होई ॥
योग जाप तीरथ व्रत संयम इनमें तो हरि नाहीं ॥
सूर स्वामि जहँ नित्य विराजैं सदाभक्त उरमाहीं॥ १॥

नगर मुरारिदास जब त्यागा। संत रहित पुर लखि दुख पागा॥
नृपति भयो संतापित भारी। वर्ष रोजमें नृप सुखधारी ॥
उत्सव संत समाजहिं केरो। करत रह्यो सर्वदा घनेरो ॥

दोहा—तेहि हित भूपति गुरूको, गयो लेवावन काहँ ॥
साष्टांग दंडवत किय, दूरहिं ते मुदमाहँ ॥ १ ॥

ताहि संत अपराधी हेरी। गुरु आनन लीन्ह्यो निज फेरी ॥
बैठ पीठिदै लिखौं सुहाई। तेहि प्रमाण तुलसी चौपाई ॥
जो अपराध भक्त कर करई। राम रोष पावकसो जरई ॥
भूपति हाथ जोरि गुरु आगे। रहिगो खड़ो कह्यो अनुरागे ॥
अब महराज कृपा तुव बाकी। सो पूरण करिये सुख छाकी ॥
शरणागतको तजिबो जोई। अहै अयोग्य कहत बुध लोई ॥

सुनि प्रसन्न गुरु भये कृपाला। लै आयो नृप पुरी निहाला॥
सो सुनि आये संत दराजा। भई नृपतिके बड़ी समाजा॥
तेहिं उत्सव बहु गुणी सिधाये। नृत्य गान कीन्हें सुख छाये॥
संत मुरारि तहां सुख कांधी। उभय पाँयमें नूपुर बांधी॥
तीनि ग्राम सातौ सुर काहीं। धरि छप्पन मूर्च्छना तहांहीं॥
पूरण प्रेम भक्ति उरधारी। समय राम वन गवन विचारी॥
दोहा—दशरथको सुरलोकको, जैबो करि पद गान॥
राम विरह हरिलोकको, कीन्ह्यो तुरत पयान॥ २॥
राजा सहित समाज तहँ, ऐसी दशानिहारि॥
अचरज गुणि सोचत भये, अस भे दास मुरारि॥३॥
इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धेपंचत्रिंश
दुत्तरशततमोऽध्यायः॥ १३५॥

अथ तुंबुरुद्विजकी कथा॥

दोहा—तुंबुरु द्विज इक भो बढ्यो, चीर द्रौपदी ज्योंहिं।
संत सेव हित साजु तेहिं, बढ़्यो जानियो त्योंहिं॥१॥
वर्ष रोजमें तासु सप्रेमा। मथुरा रह्यो जानको नेमा॥
तहां प्रथम सब संत जेवाई। विदा करै पटको पहिराई॥
पीछे द्विजन अशन करवावै। ताते द्विजमन कछु दुख पावै॥
कहैं संतको विविध प्रकारा। तुंबर करत प्रथम सत्कारा॥
पीछे हमको भोजन देई। तिनते हमैं छोट गुणि लेई॥
बहुत वर्ष बीते यहि भांती। कछु दिनमें घटिगे धन पांती॥
तब मथुरा आवत भो सोई। जामे नेम पूर मम होई॥
तहँ बहु विप्रन काहँ बोलाई। विनय कियो सबसों हरषाई॥
अब मेरे धन अल्प रह्यो घर। निज प्रण पूर कियो चाहोंवर॥

लघु धन मोसों बनिहै नाहीं। ताते तुम्हें देहुँ धन काही ॥
जामें मोर पूर प्रण होई। सो कीजै सब मिलि मुदमोई ॥
सुनि ब्राह्मण धन लै कह बानी। करब पूर प्रण सोच नठानी ॥

दोहा—अस कहि द्विज निज मन गुण्यो, याको करैं खुवार॥
भंगहोय यहि कीर्त्ति जो, छाय रही संसार ॥ २॥

ऐसो ठीक निजहि मन दीन्ह्यो। ये सब साज इकट्ठा कीन्ह्यो ॥
सीधा घृत अरु चिनी मिठाई। वर्त्तन वसन धर्‍यो घर लाई ॥
कमरा लोई और बनाता। रोक विदाई हित सुखदाता ॥
ये सब जुदे जुदे घरमाहीं। धरिकै पृथक सौंपि जनकाहीं ॥
यक यकको जन बीस बीसको।साज देन कहि दियो मोदको ॥
काहूकहँ पचास जनकेरी। साज दिवायो कियो न देरी ॥
जामें शीघ्र वस्तु चुकिजाई। याको प्रण देबो मिटिजाई ॥
देन अरम्भ कियो अस चाही। तब हरि दया दीठिसों चाही ॥
जितनी वस्तु जौन घर धारी। सौगुण हो सो परी निहारी ॥
बीस पचास जनेको एका। पाये तबहुँ घटै नहिं नेका ॥
ब्रजमंडल चौरासी कोसा। भो प्रसिद्ध जेहिं कृष्णभरोसा ॥
तामें तुलसिदास चौपाई। लिखहुँ प्रमाण सुनहु सब भाई ॥
रामदास सेवक रुचि राखी। वेद पुराण संत सब साखी ॥

दोहा—यह वरण्यो तुंबुर कथा, सादर सुनि सब संत ॥
दृढ़ विश्वास करि ताहि सम, सेवै संत अनंत ॥ ३ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडउत्तरार्द्धे
षट्त्रिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १३६ ॥

अथ जसवंतकी कथा ॥

दोहा—भयो भक्त जसवंत यक, भगवत भक्तन काहिं ॥
सेवै नित अति भावसों, अंतर राखै नाहिं ॥ १ ॥

वृंदावनमें वास करि, नवधाभक्ति विधान ॥
राधावल्लभकी सदा, सेवा करै सुजान ॥ २ ॥
प्रेम मगन जडवत रहै, अंत समय तनु त्यागि ॥
गमन कियो गोलोकको, कह्यो कथा अनुरागि ॥३॥
इति श्रीरामरसिकावल्याकलियुगखंडेउत्तरार्द्ध
सप्तत्रिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १३७ ॥

अथ वणिक हरिदासकी कथा ॥

छंद–शिष्य हित हरिवंशजूको वणिक यह हरिदास ॥
साधु सेवन करै नितहीं सहित परमहुलास ॥
वृद्ध रह यक दिवश कानन गयो तहँ यक शेर ॥
धरे सुरभीको रह्यो लखि दयाभारि विन देर ॥ १ ॥
धाइ भाव नृसिंह करि परि धाय भाष्यो वैन ॥
माइ यह जग जाइया को छांड़ि मोहिं युतचैन ॥
करिय भक्षण अब जियहि सो कह्यो वृद्धहि सास ॥
खायहों नहिं कह्यो तब ये कालिह मैं तुव पास ॥ २ ॥
लाय अपनो तनय देहौं मानि वचन विश्वास ॥
लेहु निशिभर राखि तब किय व्याघ्र वैन प्रकास ॥
भलो प्राण बचाय ताको लाय निज घर संत ॥
कह्यो सकल हवाल सो तिय पुत्रसों मुदवंत ॥ ३ ॥
गुणिके अहिंसा परमधर्महि कहे ते हरषाय ॥
कियो भल यह कार्य्य पितु तेहिं देहु मोहिं लेजाय ॥
कही नारी मोहिं दीजै नाथ विलम विहाय ॥
देत तासु प्रमाण दोहा एक सबहिं सुनाय ॥ ४ ॥
दोहा–गाइ विप्र हित तनु तजत, धनि रहीम वे लोग ॥
चारि लक्ष जग योनि जे,तहां न तिनको भोग ॥ १ ॥

कवित्त—नारि सुत सहित सबेरे जाय हरिदास, व्याघ्र चुरपर खड़े भये सुख पायकै ॥ सोवत रह्यो सो जागि देखिकै गराज कियो फेरि चुप ह्वैकै चतुर्भुज धारि धायकै ॥ कंठमें लगाय कह्यो प्यारे तुम मेरे भक्त,भजन करहु मेरो नीके घर जायकै॥ अंतसमय तीनो तुम बसोगे विकुंठधाम कथाहरिदासकी यों कही चितचायकै ॥ १ ॥

इति श्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे
अष्टत्रिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १३८ ॥

अथ कई एक भक्तनकी कथा ॥

दोहा—कथा भक्त समुदायकी, अब वरणों सुखदानि ॥
मानदास सब साधुको, सेयो हरिसम मानि ॥ १ ॥
लिये निरंतर रामको, नाम सत्यव्रत धारि ॥
अंत समय हरिपुर गये,परचो प्रकाश निहारि ॥ २ ॥

सीवा नाम भयो यक संता । कथा कहों सुखदानि अनंता ॥
म्लेच्छ अजीज नामको कोई । सैन्य सहित द्वारावति सोई ॥
आगि लगाय देतभो आई । कह्यो स्वप्नमे तब यदुराई ॥
करों भक्तजन मैं प्रतिपाला । करो मोरि रक्षा कोउ हाला ॥
म्लेच्छ दियो यह आगि लगाई । रक्षा करत न कस मम आई ॥
सुनि सीवा सो भक्त उदारा । लिये संग निज चमू अपारा ॥
आय द्वारका दुष्टन मारी । लियो कष्टते जनन उबारी ॥
ह्वै परसन्न द्वारकाधीसा । भे तनु प्रगट नयन सों दीसा ॥
बढ़ई गढादेशमें एकू । माधव नाम रह्यो सविवेकू ॥
भक्ति प्रेम लक्षणा प्रधाना । होत भयो सो भक्त महाना ॥
नूपुर उभय पाँयमें बांधी । नाचै हरि आगे सुख कांधी ॥
प्रेमविवश विह्वल जब होई । गिरन लगै धारै जन कोई ॥

दोहा—लेन परीक्षा हेतु नृप, बैठि उपरत्रय छात ॥
नृत्य करायो नृत्यमें,प्रेम भयो सरसात ॥ ३ ॥
गिरनलग्यो माधव तेहिं काला। थाँभ्यो कोउ न रहै जन जाला॥
नीचे गिरत उपरते भयऊ । पै हरि कृपा बाचि सो गयऊ॥
जैसे बचत भये प्रह्लादा । लह्यो न कछु हरि कृपा विषादा॥
भूपति तब गलानि मनमानी।गहि सोइ रीति भक्ति अति ठानी॥
बडे महान भाव सरनामा । भये गदाधर भट्ट ललामा ॥
रहे भागवतके ते रूपा । बाँचत श्रीभागवत अनूपा ॥
सब श्रोतनके नयनन तेरे । चलैं प्रेमते आंसु घनेरे ॥
कूप रहै यक घरके पासा । बैठि रहे तहँ भट्ट हुलासा ॥
जीवगोसांईकेर पठाये । तहँ ब्रजते युग वैष्णव आये ॥
पूंछे ते भट्टहिं सों तहँवां । भट्ट गदाधरजी हैं कहवां ॥
भट्ट गदाधर सुनि कह बानी । आप कहांते आवन ठानी ॥
साधु कहे वृंदावन तेरे । आये अहैं आपके नेरे ॥
सुनत गदाधर भट्ट तहांहीं । मूर्च्छित गिरत भये महि माहीं॥
तनक रह्यो नहिं तनुको भाना। तब कोउ ऐसो वचन बखाना ॥
भट्ट गदाधरजी हैं एई । बोलत भये साधु सुनि तेई ॥
पाती जीवगोसांई जी की । लाये अहैं आप ढिग नीकी ॥
दोहा—सुनि झट लै चैतन्य ह्वै, शिरधरि बांचि तुरंत ॥
ब्रज चलि जीवगोसांइसों, मिलत भये मुदवंत ॥ ४ ॥
यक दिन श्रीभागवत पुराना । बांचत रहे भट्ट मतिवाना ॥
तहँ कल्याणसिंह रजपूता । आवै कथा सुनन मजबूता ॥
कथा श्रवण हरिकी उपासना । छूटि गई तेहिं कामवासना ॥
बिकल होति भै ताकी नारी । यह निज मनमें लियो विचारी॥
मम पति भट्टगदाधर केरो । करिकै संग दियो तजि मेरो ॥

गर्भवती चेरी यक रहही। तासों वचन मुदित अस कहही ॥
आजु जाइ तुम भट्ट कथा महँ।कहै विशेषि वचन श्रोतन पहँ ॥
मेरे पूर्ण गर्भ अब भयऊ। सो न आजुलों कोहु श्रुति दयऊ॥
गर्भ गदाधरभट्टहि केरो। जानिलेहु सब जन यह मेरो ॥
कहांरहों करि देहिं उपाई। ऐसो चेरी काहँ सिखाई ॥
पठयो भट्टगदाधर पाहीं। कथा समापत भये तहांहीं ॥
चेरी सों सब कह्यो हवाला। सुनि सब दुखी भये तेहिं काला॥

दोहा–सुनिहवाल सो भट्टजी,चेरिहि तुरत बोलाय ॥
भोजनको तदवीर करि,यक थल दियो टिकाय॥८॥

श्रोतन भई गलानि महाई। होहिं विवर महि जायँ समाई॥
जानि शिष्य गण सहित विषादा। अधिकारी राधिका प्रसादा ॥
ते तेहिं नारी काहँ बोलाई। कह्यो सत्य तू देय सुनाई ॥
सत्य वचन कहिहै जो नाहीं। छीनिलेयँगे तो शिरकाहीं ॥
सत्य बताय दियो तब सोई। तिय कल्याणसिंहकी जोई ॥
सो मोको जस दियो सिखाई। तैसे कहत भई इत आई ॥
सुनि कल्याणसिंह तरवारी। लै काटन गमन्यो शिर नारी ॥
तब श्रीभट्टगदाधर स्वामी। कह न करो अस है बदनामी ॥
जाते अपनो निंद न होई। मानत नीक संतजन सोई ॥
है महत्वमें परम विकारा। क्षमा करब संतनकोसारा ॥
एक समय गे कौनेहुँ देशा। होती रहै कथा तहँ वेसा ॥
सब दृग बहै आंसुकी धारा। यक महंत तहँ रहै उदारा ॥

दोहा–आंसु बहैं नहिं तासु दृग, सो अस कियो उपाय ॥
मिरिच नैन दोउ घसिलियो, निकस्यो आंसु निकाय ६

पद गहि तासु भट्टसो जानी। कह असि राति मम होय महानी॥
जैसी प्रीति आप उरधारी। निकसायो नैननसों वारी ॥

अस कहि कीन्हें रुदन अपारा। नैनन बही आँसुकी धारा॥
ऐसो प्रेम भट्टको भारी। लेहु संत सब मनहिं विचारी॥
इक दिन चोर पैठ घरमाहीं। रहैं जागते आप तहांहीं॥
साज समेत मोटरी बांधी। उठै न लग्यो उठावन साधी॥
छोड़ि न सकै होत भिनसारा। देखि भट्ट अस वचन उचारा॥
तुम श्रम करहु न हम ढिग आई। देत अहैं मोटरी उठाई॥
याते दश गुण वस्तु हमारे। धरी लेहु सो मेटि खभारे॥
लगे उठावन संत भट्ट जब। चोर ठौर तेहिं पाँय पर्‍यो तब॥
शिष्य भयो पुनि तजिकै चोरी। कीन्ही हरिमें प्रीति अथोरी॥
ऐसी तिनकी कथा अनेका। वर्णन कीन्ह्यों मैं इत नेका॥

दोहा–परमभागवत होतभे, संत किशोरहुदास।
प्रेम लक्षणा भक्ति करि, हरिपुर कियो निवास॥७॥

कवित्त–कोल्हदास अल्हदास दोनों भाई राजकुल भये उत्पन्न संत प्रथित उदार अति॥ कोल्ह जेठ भाइ रह्यो परम विरक्त जग अल्ह तासु सेवा करै कपट विहीन मति॥ कोल्ह अल्ह दोऊ गये द्वारावति नाथ आगे कोल्हदास भजन बनाय गायो सानि रति॥ पीछे अल्ह गान कीन्ह्यो प्रेम सरसाय हरि हूंकी दीन्ह्यो माल देहु अल्ह काहिं मोदमति॥१॥

दोहा–लै पंडा डारनलग्यो, अल्ह गलेमें धाय॥
कह्यो अल्ह पहिरावहू, मम जेठो जो भाय॥८॥
पंडा कह हरि तुमहिं दिय, दीन्ह्यो तिनको नाहिं॥
अस कहि माला अल्ह गल, दीन्ह्यो डारि तहांहिं॥९॥

कोल्ह मानि तब अति अपमाना। कूदि पर्‍यो जलसिंधु महाना॥
डूबि जाय भीतर जल माहीं। पायगयो सो मारग काहीं॥
चलत चलत द्वारका दिव्य कहँ। पहुँचि गयो सो परम मोदमहँ॥

हरि आगू जे गये लेवाई। भोजन हित दीन्ह्यो बैठाई ॥
परस्यो दुइ पतरी युत प्रीती। तब किय विनय कोल्ह यहि रीती॥
दूसरि पतरी दिय यह धारी। ताको कहिये हेतु मुरारी ॥
प्रभु कह अहै जो लघु तुव भाई। तेहि हित यह पातरी धराई ॥
सुनत कोल्हअतिशय दुखमान्यो। पुनि निजमनमें यहअनुमान्यो
यक तो दैकै नाथहुँकारी। मालदिवायो अल्ह सुखारी ॥
जन्महि ते हम सबको त्यागी। भजन कियो इनको अनुरागी ॥
भक्तन सेवी संतन केरो। अल्ह भ्रात लघुहै जो मेरो ॥
सो अजहूं प्रभु विसरत नाहीं। भाव करत अधिकै तेहिंमाहीं॥

दोहा—इनके साधु असाधु सब, जानो परत समान॥
दुख मति मानहु जानि यह,किय बखान भगवान॥१०॥

घनाक्षरी—तेरो जो कनिष्ठ भाई राजपुत्र रह्यो पूर्व मेरो बड़ो भक्त भयो राजको विहायकै॥ साहिबी विलोकि एक भूप केरी कीन्ह्यो मन ऐसे होय मेरिहू विभूति सरसायकै॥ ताते भये राजकुल आयो जबते तू इहां तबते सो अन्न जल छोंड़्यो दुख छायकै॥ वेगि जाय वाको सुख देहु कोल्हदास तुम शंख चक्र भुजनपै दीन्ह्यो ऐसो गायकै ॥१॥

सोरठा—दै प्रसाद तेहिं हाथ,विदा कियो यदुनाथ पुनि॥
बाहिर कढ़ि सुख गाथ,दियोकोल्ह तजिअनुजको॥१
करि मन परम उराउ, निज घरमें आये दोऊ॥
ऐसे अमित प्रभाव, कोल्हअल्हके जानिये ॥२॥

कोल्ह वंश नारायणदासा। भये करहु तिन चरित प्रकाशा॥
रहैं और भाई तिन केरे। ते कमाय लाये धन ढेरे॥
ये लहुरे अति रहैं उदारा। वितरहि सबको द्रव्य अपारा॥
यक दिन भौजाई तेहिंकेरी। रूख अन्न भोजन दिय हेरी॥

दुख करि कह्यो हालको जोई। बनो होय दीजै मोहिं सोई॥
सुनि भाभी अस वचन बखाना। कहां तुमहुँको श्री भगवाना॥
दियो हुँकारी किय अपहासा। बोल्यो तब नारायणदासा॥
अबतो मैं भरवाय हुँकारी। हरिको ऐहौं अयन सुखारी॥
अस कहि गृहते निकसि तुरंता। परमभक्ति करिकै भगवंता॥
गान करन लाग्यो हरि आगे। तब भगवान परम अनुरागे॥
दै हुँकारि दिय माल प्रसादा। जस अल्हहिं दिय युत अहलादा॥
लै नारायणदास मुदित मन। भाभी कर दिय लही सो सुख घन॥

दोहा—पृथ्वीराज यक भक्त नृप, बीकानेर सुथान॥
भयो संस्कृत भाषहूं, में परवीन महान॥ ११॥

करै मानसी हरिको ध्याना। कीन्ह्यो सो परदेश पयाना॥
तहँ निज घरके मंदिरमाहीं। रहे जे निज ठाकुर तिनकाहीं॥
तीन दिवशलौं ध्यानहि धार्‌यो। सो मूरति मंदिर न निहार्‌यो
शंकित ह्वै सांडिया निकेता। पठयो खबरि लेनके हेता॥
लिख्यो पत्रमें यही हवाला। आयो सो नृपअयन उताला॥
तहँते जन यह खबरि लिखाई। नृप समीप में दियो पठाई॥
मंदिर भीतर चून छपाई। रही यहींते इत नृपराई॥
बाहर तीनि दिवश भगवाना। रहे बांचि सो नृपति सुजाना॥
ह्वै प्रसन्न अति मथुरा आई। तनु त्यागहुँ अस मन ठहराई॥
करी प्रतिज्ञा शाह सो जानी। दै पठयो निदेश सुखमानी॥
काबुलको नृप करहु पयाना। सुनि नृप तहां जाय मतिवाना
जीवन अवधि जानिकै थोरी। भक्ति प्रभाव भगवतहि सौंरी॥

दोहा—ह्वै सवार सांडिनी महँ, काबुलते चलि आसु॥
मथुरा आय शरीर तजि, वास कियो हरि पासु॥ १२॥

कायथ वासी ग्वालियर, खड्गसेन जेहिनाम ॥
सदा साधुसेवा करै, ध्याय कृष्ण वसुयाम ॥ १३ ॥
सादर सुनै कृष्णकी गाथा । चाकर रहै भानगढ़ नाथा ॥
करै स्वामिको काज सदाई।दुख सुख सम गुणि छलहि विहाई॥
संत प्रसादीको रह नेमा । यशकी चाह रहति युत प्रेमा ॥
संत सहस्रन अशन करावै । ऐसो अति उदार जग भावै ॥
चुगुलन जाय नृपतिके पासा । चुगली कीन्हीं सहित हुलासा ॥
खड्गसेन धन सकल तिहारो । देत जनन हम नयन निहारो ॥
सुनत भूप सो रोषहि धारयो । बंदीखानामें तेहि डारयो ॥
अन्न जलहु भोजन नहिं दीन्ह्यो। तब यमराज कोप अति कीन्ह्यो
यम निज दूतन दियो पठाई । ताड़न लगे भूप ते धाई ॥
तब जकि रह्यो भूप डर छाई । दिये वचन यमदूत सुनाई ॥
तू नृप अहै बड़ो अज्ञानी । देत भक्तको दुख रिससानी ॥
ताते धर्मराज हमकाहीं । पठयो मारन तुव ढिगमाहीं ॥
दोहा—असकहि दीन्ह्यो पलँगते, भूपहि दूत गिराय ॥
ह्वै विसंज्ञगो चुगुलहुन,दीन्ह्यो फेरि सजाय ॥ १४ ॥
भूपति जब चैतन्यहि भयऊ ।खड्गसेन पद तब गहि लयऊ ॥
फेरि बंदिते तुरत निकासी । खड्गसेनसों कह्यो हुलासी ॥
रहिये आप सदा निज गेहू । लेहौं दरशन आय सनेहू ॥
खड्गसेनको लिय गुरु मानी । भूपति सो गहि रीति अमानी॥
करत साधुसेवा अति प्रीते । खड्गसेनको त्रय पन बीते ॥
चौथे पन निज गृहको त्यागी । वृंदावन गमन्यो अनुरागी ॥
तहां रासकी करै समाजा । लीला लखि सुखलहै दराजा॥
यक दिन शरदपूर्णमा पाहीं । कृष्णरासके मंडलमाहीं ॥
वढनिभाव अनुरूपहि केरी । ताथेई करिबो मुख टेरी ॥

लखि चख सुनि प्रमोद उरधारी। पुनि हरि राधा सुछवि निहारी॥
करि भावना खेल तेहि केरो । खड्गसेन तनु तजि बिन देरो ॥
नित्य अप्रगट जो हरि रासा । तहँ सहुलास जाय किय वासा॥

दोहा—निरखि संतजन रासतेंहिं, जय जय कीन्ह्यो शोर ॥
गंगनाम यक ग्वालकी, कहौं कथा शिरमोर ॥ १५ ॥

परमभक्त वृंदावन माहीं । कियो निरंतर वास सदाहीं ॥
एक समय किय शाह पयाना । गंग काहँ करिकै दीवाना ॥
वृंदावनको वास छोड़ाई । राख्यो दिल्लीमें लैजाई ॥
जानि गंगको प्रण ब्रजवासा । हरिसों विनय कियो हरिदासा ॥
दिल्लीते तब श्रीभगवाना । गंगहि दिय छोड़ाय सब जाना ॥
तब वृंदावन गंगसिधाई । तनु तजि बस्यो निकट यदुराई ॥
कृष्णदास यक रहै सोनारा । कृष्णदासको भक्त अपारा ॥
नृत्य करत लखि कृष्णरास महँ । कृष्णदास तेहि रंग रँगे तहँ॥
नूपुर युगल पायँमें बांधी । नृत्य करन लागे सुख कांधी॥
तनक रहि गयो नहिं तनु भाना । यक पग नूपुर टुट्यो न जाना॥
तब करि कृष्ण कृपा उर भारी । गतिकी तहँ भंगता निहारी॥
अपने पगको नूपुर छोरी । कृष्णदास पग दीन्ह्यो जोरी ॥

दोहा—कृष्णदासके सुधि भई, निरख्यो नूपुर छूट ॥
कृष्ण कृष्णदासहुँ पगनि, नूपुर निरखि अटूट॥१६॥
जय जय कीन्हें शोर तहँ, जुरी जो सकल समाज ॥
वरणों मथुरादासको, अब इतिहास दराज ॥ १७ ॥

रहे तिजारा ग्राम निवासी । राजगुरू जग सुयश प्रकाशी ॥
संत सेव रत परम विरागी । संतत राम नाम अनुरागी ॥
एक दिवश आये पाखंडी । शालिग्राम लिहे सुख मंडी ॥
नूपुर पगन बांधि तिन आगे । करहिं नृत्य अति प्रेमहिं पागे ॥

रहैं लगाये कर यहि भांती। जामें नृत्य करत मुदमाती॥
शालिग्राम जौन सिंहासन। डोलन लगे लखैं सिगरे जन॥
निरखि नयन सिगरे पुरवासी। लागे करन प्रशंसा खासी॥
सज्जन बड़े ग्राम यहि आये। नृत्यत शिलहु प्रेम प्रगटाये॥
शिष्य ग्रामके भे जन यूहा। दिये भेंट लाग्यो धन कूहा॥
मथुरादास निकट जन जाई। यक दिन कर विनती बरियाई॥
तहँ लै आय ठाढ़ करिदयऊ। वंद ठगनको कर ह्वैगयऊ॥
ठग अनेक तहँ किये उपाई। प्रेम न शिला पऱ्यो दरशाई॥

दोहा—मथुरादास प्रभाव यह, ठग अपने मन जानि॥
माऱ्यो मूठ न किय असर,भक्त तेज वर मानि॥१८॥

उलटि गई वाही ढिग पाहीं। बिन शरीर सो भयो तहांहीं॥
तब वह ठगके ठग सँगवारे। बहु प्रार्थना किये शिरधारे॥
मथुरादास स्वामि सुख छाई। तब तिनको सब कपट छोड़ाई॥
वाहू ठगको दियो जिपाई। प्रभु उपदेश सबै ठग पाई॥
शालिग्राम शिलामहँ सांचो। कीन्हें भाव गयो मिटि काँचो॥
यक जैतारण विदुर सुसंता। और प्रबोधानंद महंता॥
ये दोउ बड़े राम अनुरागी। सेवैं सदा संत बड़भागी॥
जैतारण खेती करवाई। वर्षा बिन सो गई सुखाई॥
ताकि संदेह कियो मनमाहीं। किमि सेइहौं संतजन काहीं॥
तब जैतारणको भगवाना। दीन्ह्यो स्वप्न आय स्थाना॥
चलिकै खेत कटावहु जाई। ताको पुनि द्रुत लेहु गहाई॥
है हजार मन तामें अन्ना। ह्वैहैं सेवहु संत प्रसन्ना॥

दोहा—भोर भये चलि खेतमें, किय जैतारण सोय॥
होत भयो तेहिं भांतिसों, अन्न गये मुद मोय॥१९॥

क्षनाक्षरी–राम नृप एक कोऊ उदभट कर्म कियो करों सो बखान शरदपूर्णिमामें भयो रासु ॥ सखिन समेत तहां नृत्य गान करे कृष्ण,सुछवि निहारि भोर असक्त मानिकै हुलासु॥विप्र-नसों कह्यो प्यारे काहँ कहा भेंट देहुँ तिन कह्यो प्यारी वस्तु दीजै होय जो प्रकाशु ॥ भूप सुनि प्यारी गुनि कन्याकाहँ दियो देखि, सोचि सब कहे दियो द्रव्य लियो सुता आसु॥१॥नृपति जगतसिंह रहै हरिभक्त जहां जाय तहां आगे हरि पालकी चढ़ा-यकै ॥ चलै अरि युद्धसमय आप आगे रहै पीछे राखै हरिकाहँ सो नहारै कभी जायकै ॥ आपनेही कर पूजै भगवान एक समय शाह नवरंगजेब बोल्यो गये चायकै ॥ नौबत बजत देखि खून खाय शाह तौन नौबत फेंकायो कालिंदीमें रोष छायकै ॥ २ ॥

दोहा–जल भीतर नौबत शबद, सुनि अचरज गुणि शाह ॥
जगतसिंह भूपति चरण, गह्यो सहित उतसाह ॥२०॥

नृप जगदेव समान उदारा। होतभयो हरिदास भुवारा॥
जो जगदेव भूप जगमाहीं। किय उदारता कहों यहांहीं॥
पुनि कहिहौं हरिदासहु केरी। कथा दानि उर मोद घनेरी॥
अति उदारता ताकर जानी। लेन परीक्षाहित सुखसानी॥
नृत्य गानमें परम प्रवीनी। शक्ति नरी वपु धारि नवीनी॥
नृप जगदेव समीप सिधाई। नृत्य गान करि लियो रिझाई॥
नृपति रीझि तेहिं देन विचारयो। देन तौन नहिं वस्तु निहारयो॥
तब शिर काटि देन सो चाह्यो। काटन हित कर तेग उबाह्यो॥
लखि सो नटी हाथ गहिलीन्ह्यो। कहत भई मैं निज वदि कीन्ह्यो॥
मेरी थाती शिर प्रभु राखी। लेहौं जब ह्वैहौं अभिलाषी॥
कैकेयीके सम वरदाना। थाती धरि शिर राख्यो प्राना॥
फेरि नटी भूपतिसों बोली। आप शीश दिय प्रीति अतोली॥

दोहा–मैं निज दाहिन बाहुँको, देती अहों चढ़ाय ॥
कोहु नृपपैदाहिन भुजा, नहिं बोढ़ाइहौं जाय ॥२१॥
ऐसो दान कौन मोहिं देहै। जैसो आप दियो सुखम्वैहै ॥
अस कहि नटी सो गई सिधारी। इक उदार नृप गुणी विचारी॥
नटी काहँ निज निकट बोलाई। नृत्य गान सुनि रीझि महाई॥
राजा देन इनाम बोलायो। नटी लेन कर वाम उठायो ॥
वामहाथ लखि भूपति भाषा। कही सो जगदेवहि दै राखा॥
कह्यऊ सो जगदेव इनामा। दियो सो देहैं हमहुँ ललामा ॥
नटी कही सो नहिं दैजैहै। नृप कहि तेहि दशगुण इत पैहै ॥
नटी कही तौ दाहिन हाथा। लेहौं मैं इनाम नृपनाथा ॥
नटी जाय तब ढिग जगदेवा। शिर मांग्यो कहि सिगरो भेवा॥
शिर उतारि तेहिं दक्षिण पानी। धरि दीन्ह्यों भूपति सुखमानी॥
नटी नृपति तनु यतन धराई। वही नरेश पास द्रुत जाई ॥
नृप जगदेव शीश देखराई। कही जो यहि दशगुण नर राई॥
दोहा–देहु तौ दक्षिण हाथ मैं, तुमहिं बोढाऊं आशु ॥
लखि महीप मूर्छित गिरयो,किय पुनि वचन प्रकाशु२२
देश ग्राम धन जो कछु होई। सो मैं अबहिं देहुँ मुदमोई ॥
मोहिं यह दान देनगति नाहीं। सुनि सो शक्ति नटी सुखमाहीं॥
तुरत पास जगदेव सिधाई। शीश जोरि निज गान सुनाई ॥
अब हवाल वह भूपसुताको। कहौं सुनहु जाहिर वसुधाको ॥
नटी शीश सो जब लै आई। सो हवाल सुनि सुता सुहाई ॥
कही पिता सों लाज विहाई। मोहिं व्याहहु जगदेव बोलाई ॥
तब वह नृप जगदेव बोलायो। नृप जगदेव भूप ढिग आयो ॥
जगदेवहिं सो बहु समुझाई। कह्यो सुता लीजै हरषाई ॥
कह जगदेव कहहु सौ बारा। तबहुँ न ह्वैहै व्याह हमारा ॥

यक पत्नी व्रत रहै हमारो । पुनि राजा अस वचन उचारो॥
इनहिं हतो कह जन बोलवाई । सुनि अकेल तेहिं लैगे धाई ॥
तब कन्या बोली मति मारहु । देखिलेहुँ मेरे ढिग लावहु ॥

दोहा—कहे लोग नृप सुता कहँ, इनको चलहु लेवाय ॥
कह जगदेव न ताकिहौं, वाको मैं तहँ जाय ॥ २३ ॥

सुनि सो सुता कही रिसधारी । लावहु वाको शीश उतारी ॥
तब शिर काटि थार भरि लीन्ह्यो। कन्याके आगे धरिदीन्ह्यो ॥
जब कन्या दृग जोरन लागी । तब तेहिं शिर फिरिगो दुखपागी
दृग जोरयो जगदेव न माथा । वरण्यो मैं ताकी असि गाथा ॥
ताके सम हरिदास भुवाला । भयो कहौं तेहि कथा रसाला ॥
कियो शरीरार्पण पर काजा । संतन सेवन कियो दराजा ॥
संतनको परदा नहिं राखै । जाहिं जनाने कछू न भाखै ॥
एक समय इक संत सिधाई । रमि जनानखाने रहजाई ॥
तहां संत नृप दुहिताकेरो । बढ्यो अछेह सनेह घनेरो ॥
एक समय ग्रीषम ऋतुमाही । छत ऊपर तेहिं कन्याकाही ॥
लै तेहि गात उपरकरि गाता । सोवत रह्यो होत परभाता ॥
करन हेतु हरिदास सुखारी । चढ़त भयो तेहिं ऊंचि अटारी ॥

दोहा—साधु और निज सुता को, सोवत लखि सुखवंत ॥
पट वोढ़ायके आपनो, आयो उतरि तुरंत ॥ २४ ॥

जागि पिता पट चीन्हि कुमारी । होत भई लज्जित मन भारी ॥
डरयो संत शंकित तेहिं जानी । लै एकंत सिखयो मृदुवानी ॥
जौन कार्य्य करिबो मन होई । सावधान ह्वै करिये सोई ॥
जो जन दुष्ट छिद्रको पाई । कहै निंदि कटुवचन सुनाई ॥
तो सुनि संत कलंक महाना । जरिहै छाती मोर नशाना ॥
सुनत साधु लज्या अति धारी।चलन हेतु निज कियो तयारी ॥

तब नृप ताहि राखि घरमाहीं। दीन्ह्यो परमप्रमोद सदाहीं॥
ऐसो सेवी साधुन केरो। भूपति भो हरिदास निवेरो॥
हरीदासके छोटे भाई। गोविंददास संत सुखदाई॥
शिष्य स्वामि हरिवंशहि केरे। टेरै वेणु सदा हरि नेरे॥
राधावल्लभहीकी आशा। कियो जगत ते भये निराशा॥
राग रागिनी सब मुरली महँ। टेरिसुनावै प्रमुदित हरिकहँ॥

दोहा—आगे करि हरिपालकी, पीछे गमनहिं आप॥
शाह बोलि कह यक समय,मुरलीमें तुव थाप॥२५॥

सो हमहूँ कहँ देहु सुनाई। सुनि जवाब दिय भीति विहाई॥

दोहा—प्रभु आगे मुरली बजै, तव आगे तरवार॥
और कछू होनो नहीं, यही बात निरधार॥२६॥

अस कहि बादशाह सों बैना। गोविंद आयो सिविर सचैना॥
शाह चमू दै बहुसँग माहीं। पठयो इक सरदारहि काहीं॥
चढ़िपालकी रह्यो सो आवत। खड्ग चल्यो आपहिंते तहँ द्रुत॥
कट्यो बांस गिरिगो सरदारा। शाह मानि आचरज अपारा॥
आय पाँय दोऊ गहिलीन्ह्यो। बहुविधि तासु प्रशंसा कीन्ह्यो॥
रहेनरायणदास सुसंता। परम अनन्य भक्त सियकंता॥
हेहँडिया सरायके वासी। करहिं नृत्य हरि ढिग सुखरासी॥
एक समय पर्यटनै हेतू। गये नरायणदास सचेतू॥
म्लेच्छमीर यक कौनहु देशा। रहै बोलि सो दियो निदेशा॥
मेरे आगे नृत्यहिं ठानो। ताको कह्यो न ये कछु मानो॥
कह्यो करैं हम नृत्य सदाहीं। हरिके आगे अनतै नाहीं॥

दोहा—ऊंचे थल तुलसी निरखि, तहँ सिंहासन धारि॥
नृत्य गान करने लगे, हरि आगे मनुहारि॥२७॥

यक दिशि बैठी संत समाजा। यक दिशि बैठ्यो मीर दराजा॥

निरखन लाग्यो नयन लगाई । रीझि गयो सो अति सुख पाई ॥
नेवछावर सो करन विचारयो । वस्तु न कौनहु नयन निहारयो
तब सो मीर प्राण निज वारी । तनु तजि गो हरि निकट सिधारी
परशुराम यक रह्यो महंता । चाल राजसी सेवी संता ॥
संत समाज तुरंग मतंगा । चलै पचाश लिये निज संगा ॥
छरीदार दौरहिं तेहि आगे । चवँर चलावैं जन अनुरागे ॥
जड़ जंगलीदेशके लोगा । तिन्हैं कियो शुचि चलि बिन शोगा
गद्दी तकी काहूँ लगाई । यक दिन बैठिरहे तहँ आई ॥
एक साधु करि कोप अपारा । करत भयो अस वचन उचारा॥
अस ऐश्वर्य्य माहँ हरि केरो। भजन न होत सुनहु सति मेरो॥
हरि निमित्त तनु धूरि लगायो । आय राजगृह गुरू कहायो ॥

दोहा—वृथा गृहस्थी धारिकै,साजु राजसी ठानि ॥
बैठे हो सुनि कह्यो तिन,दोहा द्वै निर्मानि ॥ २८ ॥
माया सगी न मन सगा,सगा न यह संसार ॥
परशुराम यह जीवको, सगा सो सिरजनहार ॥२९॥
कहतेहैं करते नहीं, मुखके बड़े लवार ॥
काले मुँहड़े जाँइगे सांईके दरबार ॥ ३० ॥
कहै आप सति साधुपै, हम बहु कियो उपाय ॥
यह ऐश्वर्य्य कभी नहीं,मेरे सँगते जाय ॥ ३१ ॥

सुनत साधु भाष्योगहि हाथा । ये सब त्यागि चलौ मम साथा॥
सुनि महंत उठि चले तुरंता । गिरि कंदरा गयो लै संता ॥
निर्जन जहां जात नहि कोई । बैठ तहां जहँ खोज नहोई ॥
तब महंत युत परमउछाहा । तेहि साधूको बहुत सराहा ॥
ताही समय साहु यक दरशन । हेतु जात रह तेहिं कोउगिरिजन
दियो बताय यही गिरिकंदर । अहै महंतलख्यो हम सुखकर ॥

तब सो साहु तहां द्रुत जाई। गहिकै चरण परम सुख पाई॥
मुद्रा सहस पालकी दीन्ह्यो। यक तुरंग अर्पण पुनि कीन्ह्यो॥
डेरा तेहि पहाड़ तर डारी। सेवा हित बहु मनुज हँकारी॥
दियो लगाय चलन पंखा तहँ। लगे महंत कह्यो साधू पहँ॥
अब हम कहाकरैं लखि लीजै। राम रजाय यही सो कीजै॥
तब सो वैष्णव ह्वै प्रसन्न अति। पद गहि कह्यो चलिय आश्रम सति

दोहा—हैं विरक्त प्रभु आप यह, हरि इच्छा ऐश्वर्ज॥
दूरिभयो मम मोह अब,है न आपकेगर्ज॥ ३२॥
परशुराम सुनि सपदि तब,निज आश्रममें आय॥
संतनकी सेवा सतत,करनलग्यो मन लाय॥ ३३॥

संतदास यक संत सुपासी। रहै नेवाई ग्राम निवासी॥
निज मति सति जगदीश लगाई। नीलाचल गवने सुख पाई॥
वनमें पत्र फूल फल हेरी। छपन प्रकार भोग शुभ केरी॥
करि भावना मानसै माहीं। संतन दियो अरपि हरि काहीं॥
सो नीलाचलमें जगनाथा। रुचि सों पायो लहि सुख गाथा॥
कह्यो नकछु संतहि निशि भूपै। स्वप्न दियो हरि कृपा अनूपै॥
सादर जो कोउ संत जेंवावै। ताते मोरि तृप्ति ह्वै जावै॥
जागि नृपति सबसों सुखमानी। कह्यो परचोतब सबको जानी॥
भयो कल्याण दास यक संता। भजनानंद सदा सियकंता॥
प्राण पयान समै सब त्यागी। मन लगाय रघुपति अनुरागी॥
गयो रामके धाम बजाई। जय जय किये संत समुदाई॥
भो भगवानदास इक साधू। सेवै साधुन प्रीति अगाधू॥

दोहा—रह्यो उपासक प्रथित जग, माला तिलकहि केर॥
बादशाहको हुकुमभो, एक दिवश बिन देर॥ ३४॥

तिलक न देय कोउयहि ग्रामा। धारै उर कंठी नहिं दामा॥

तातें कंठी माल सैकरन। उतरगये त्यों छूटि तिलकतना॥
जब भगवानदासके पासा। आये जन करि कोप प्रकासा॥
तहँ भगवानदासको निरखत। तेउभे कंठी माल तिलक युत॥
ते मुखसों भाषन नहिं पायो। लखि भगवानदास अस गायो॥
तिलक भाल गलकंठी माला। तनु आपने लेहु लखि हाला॥
और बात चालहु हमसों पुनि। लज्जित गये शाह पै ते सुनि॥
कंठी माल तिलक युत भेषा। तिनको शाह नयन निज देखा॥
तिनसों सिगरो पूछ हवाला। मानि सत्य अति भयोनिहाला॥
है प्रसन्न भगवानहिं दासा। दीन्ह्यो पथुरापुर को वासा॥
तेपूजन करिकै हरि केरो। मथुरा बसे मानि मुद ढेरो॥
वंशवल्लभाचार्य्यहि माहीं। गोकुल नाथ भये तिन काहीं॥

दोहा—वर्णन मैं अब करतहौं,आयो तिनके पास॥
लाखनकी संपति लिये, यक जन सहित हुलास॥३८॥

मोहिं मंत्रदै शिष्य करीजै। कह्यो नाथ जाते अवछीजै॥
गोकुलनाथ वचन तब टेरा। काहूमें लागत मन तेरा॥
सुनि सो कह्यो न कहुँ मन भीजै।तब इन कह्यो अनत गुरु कीजै॥
शिष्य तुमहिं हम करिहैं नाहीं। ताको हेतु सुनहु हम पाहीं॥
जेहि मन जगतविषय हिंसामै। लागत सो जन खैंचि ललामै॥
हरिमें तेहि विधि सकत लगाई। जाको मन सर्वत्र उड़ाई॥
वह हरि ओर कबहुँ नहिं आवै। द्रव्य नहित हरि साधु लगावै॥
करै जो गुरू शिष्यजेहि काहीं। धन तजि होय लोभवश नाहीं॥
गुरूशिष्य संसार छोड़ाई। देइ यही सिद्धांत सदाई॥
गोकुलनाथ वचन सो मानी।भयो शिष्य तेहि भांति अमानी॥
येक हलालखोर तहँ रहई। कान्हा नाम तासु सब कहई॥
हरि में निशि दिन मनहि लगाई। रटै नाम मुखसों सुख छाई॥

दोहा–सौहे मंदिर नाथजी,नित मिसि झारू देन॥
रहै दरशकारि लालसा, भरो परम उर चैन॥ ३६॥
तहँ श्रीगोकुलनाथ महंता। रहै प्रथित पुहुमी यशवंता॥
कह्यो रोज इत होत सकारा। देखि परत यह झारूदारा॥
कहै जो कोउ झारू नहिं देई। अस विचारि अपने मनतेई॥
मंदिर सौंह आड़के हेतू। भीती लिय उठाय मति सेतू॥
कान्हा झारन हेतु सबेरे। आवै नाथ पैं नहिं हेरे॥
हरिको हरिदासहिको दरशन। दास काहँ हरिदरशन क्षनक्षन॥
हानि भई जब दोनहुँ केरी। नाथ स्वप्न में तब यह टेरी॥
गोकुलनाथ फोरु यह भीती। शालति मोहिं कियो अनरीती॥
अस द्वै बार स्वप्नमे नाथा। कह्यो न किय श्रुति गोकुलनाथा॥
तब तिसराय कही हरि वानी। कान्हा परमभक्त विज्ञानी॥
ताके दरश आड़ तुम कीन्ह्यो। भीती फोरि आसु अब दीन्ह्यो॥
मम दरशन हित भोजन त्यागी। देत भयोहै सो अनुरागी॥
दोहा–सुनि महंत सो भीतिको, दियो तुरंत गिराय॥
गहि पग झारूदारके,सतकाऱ्यो घर लाय॥ ३७॥
संतनमाहँ प्रधान गनाई। झारू दीयो दिबो छुड़ाई॥
ताते जानिलेहु यह भाई। हरिदरबार न जाति बड़ाई॥
भगवतकर्म भक्ति जन जोई। करत जगतमें उत्तम सोई॥
भक्ति रूप ब्राह्मणको जानो। भक्ति सहित तेहिं ब्राह्मण मानो॥
जासु काय हरि भक्ति विहीना। डोम सोइ यदि बहुत प्रवीना॥
यह सिद्धांत युधिष्ठिर पाहीं। भीष्मदेव कह भारत माहीं॥
संतसेव रत गिरिधर ग्वाला। रहै जक्त यक भक्त विशाला॥
नेम साधु चरणामृतकेरो। किये रहै लहि मोद घनेरो॥
साधु मृतकहू को अति सेई। सादर चरणोदक लैलेई॥

तासु प्रभाव त्यागि तनु काहीं। निवसत भो हरिधाम सदाहीं॥
रामदास यक भयो सुसंता। बालहिं ते करि रति भगवंता॥
रीति संत सेवनकी लीनी। प्रीति न जगतमाहँ कछु कीनी॥

दोहा—मिलै जो अच्छी वस्तु कहुँ,सो संतन कहँ देहि॥
होय न नीकी वस्तु जो, आपु सोइ हठि लेहि॥३८॥

एक समय बेटीको व्याहा। रह्यो पुत्र सब सहित उछाहा॥
मेवा अरु पकवान रचाई। एक कोठरी माहिं धराई॥
तारा दै ताके इनकाहीं। वितरि देहिं नहिं संतन पाहीं॥
रामदास वह साजु निहारी। संत योग्य गुणि होहिं दुखारी॥
एक दिवश कछु सूनो पाई। तारा खोलि लियो कर जाई॥
सकल साजु सो संतन बोली। मोटरी बांधि दियो नहिं खोली॥
वैसहि तारा पुनि दै दीन्ह्यो। पुत्र पौत्र सुनि लखि दुख कीन्ह्यो॥
तारा खोलि निहारत भयऊ। वस्तु दशगुणी तहँ लखि लयऊ॥
ऐसो तिनको भाव अनूपा। मैं वर्णन कीन्ह्यों सुखरूपा॥
सूजाको दिवान अभिरामा। रह भगवंतदास यक नामा॥
वृंदावन वासिनकी सेवा। करै सतत तन मन धन तेवा॥
एक समय श्रीगुरु महराजा। आये लीन्हें संत समाजा॥

दोहा—तब भगवंत प्रमोद उर, मानि तिन्हैं गृह लाय॥
कह्यो नारिसों भेटदै, करु पूजा हरषाय॥३९॥

सुनि तेहिं तीय कही सुख छाई।संपति सब गुरुदेहि चढ़ाई॥
एक एक धोती भर राखी। होय न और वस्तु अभिलाखी॥
तब पत्नीको बहुत सराही। रामदास कह परम उछाही॥
यही बात मेरे मनमाहीं। रही कहौं मैं साति तोहिं पाहीं॥
यह सलाह पति तियको जानी। अति प्रसन्नह्वै गुरु विज्ञानी॥
प्रेम आंसु दोउ नयन बहावत। विदा न भये भये ब्रज आवत॥

रामदास तब बहु पछिताना। वृंदावनको किया पयाना ॥
तहां दरशि गुरु संतसमाजा। सादर दीन्ह्यो मोद दराजा ॥
फेरि गुरूको आयसु पाई। आवत भये अयन हरषाई ॥
करि हरि भजन काल बहु टारी। अंत समय मनमाहँ विचारी ॥
चल्यो आगरेते ब्रज काहीं। आये आधी दूरि तहांहीं ॥
कह्यो समीपी जनसों बैना। ममतनुयोगतुलसिवन हैना ॥

दोहा—मोको अब घर लैचलौ, जो वृंदावन माहिं ॥
मरिहौं तौ सब लोग मम, तनु दाहिहैंतहांहिं ॥ ४० ॥
कढ़िहै तनु दुर्गंधिसो, लाल पियारी अंग ॥
लगिहै सुनते भवनमें, लाये सहित उतंग ॥ ४१ ॥
रामदास तनु त्यागिकै, दिव्य शरीरहि धारि ॥
वृंदावनमें जायकै, हरि ढिग बसे सुखारि ॥ ४२ ॥
भक्तमाल नाभा जुकृत, तामें कहे जे संत ॥
तिनकोहौं वर्णन कियो, कृपारुक्मिणीकंत ॥ ४३ ॥

इति श्रीसिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजबांधवेशविश्वनाथसिंहात्मजसिद्धि
श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहाराजाबहादुरश्रीकृष्णचंद्रकृ-
पापात्राधिकारीश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतौश्रीरा
मरसिकावल्यांभक्तमालायांकलियुग
खंडेउत्तरार्द्धेएकोनचत्वारिंशदधि
कशततमोऽध्यायः ॥ १३९ ॥

रामरसिकावली नाम भक्तमाला

संपूर्णा·

श्रीगणेशायनमः ।

अथ उत्तरचरित्र प्रारम्भः ॥

सोरठा—जय यदुवंशकुमार, जय रघुवंशकुमार जय ॥
जय जय अधम उधार, जय सर्वस रघुराजके ॥ १ ॥

दोहा—जय वाणी जय गजवदन, जय हरि गुरु पितु मात ॥
संतचरित रचिबे हितै, देहु बुद्धि अवदात ॥ १ ॥
ग्रंथ राम रसिकावली, चारिखंड निर्माण ॥
सतयुग त्रेता द्वापरहु, कलियुग खंड प्रमाण ॥२॥
कलियुग खंडहि भाग किय, पूरब उत्तर दोय ॥
सादर सो वर्णन कियो, उत्तर चरित अब होय ॥ ३ ॥

सोरठा—श्रोता सकल सुजान, श्रद्धायुत सुनिये सुचित ॥
अबके भक्त बखान, मतिअनुसार करौं कछुक ॥ २ ॥

दोहा—श्रीकबीर इतिहासमें, वंश बघेल बखान ॥
वर्णन कीन्ह्यों मैं कछुक, राजाराम प्रमान ॥ ४ ॥
राजारामहि सुत भये, वीरभद्र बलवान ॥
भये विक्रमादित्य पुनि, पुनि अमरेश महान ॥ ५ ॥
भूप अनूप सुतासु सुत, भावसिंह सुत तासु ॥
तासु सूनु अनिरुद्ध भो, तेहि अवधूत प्रकाशु॥ ६ ॥
प्रपितामह पुनि मोरभे, श्रीअजीत रिपु जीत ॥
तासु तनय जयसिंहभो, धर्म देव द्विज नीत ॥ ७ ॥
मम पितु ताके सुत विमल, विश्वनाथ अस नाम ॥
तिनके गुरु प्रियदास भे, भक्ति प्रेम रस धाम ॥ ८ ॥
सैली श्रेष्ठ कवीनकी, गुरुको गुरुहै जौन ॥
ताको चरित बखानिकै, कहै होय मति तौन ॥ ९ ॥
ताते प्रथमहिं मैं कहौं, श्रीप्रियदास चरित्र ॥
जाहि सुनत जगजीव सब, होते परमपवित्र ॥१०॥

जो चरित्र प्रियदासको, मम पितु कियो बखान ॥
तेहि अनुसर वर्णन करौं,सुनौ सबै दैकान ॥ ११ ॥
व्यास सुवन शुकदेव उदारा । जो कीन्ह्यो भागवत प्रचारा ॥
लियो सोकलियुगमहँ अवतारा। प्रियादास अस नाम उचारा ॥
तामेंप्रमाण—अवतीर्यशुकस्तत्र प्रियाचार्य्यो भविष्यति ॥
इति भविष्यपुराणे ॥
सूरत नगर समीप सुहावन । रामपुरा यक ग्राम सुपावन॥
तामें वामदेव अस नामा । रह्यो एक द्विजवर मतिधामा ॥
मतिअतिविमलअमलगतिताकी निशिदिनमतिहरिपदरतिछाकी
रही तासु तिय गंगाबाई । सो हरिकृपा भक्ति वर पाई ॥
तासु कुमार भये प्रियदासा । जासु सुयश जग कियो प्रकासा॥
बालहिंते हरि भक्ति उठाये । तृण सम जगत्विषय मन भाये॥
द्वादश वर्ष वयस जब वीती । वृंदावन दर्शन भइ प्रीती ॥
तुलसी विपिन गये प्रियदासा। किये सकल वन दर्श विलासा ॥
चंद्रलाल तहँ रहे गोसाईं । देखहिं मनमोहन सब ठाईं ॥
महा रसिक हरि भक्ति उदंडा । जेहिं प्रभाव पूरित नवखंडा ॥
दोहा—तिनके निकट सिधारिकै, लियो मंत्र उपदेश ॥
श्रीराधापति पद सुरति, कियो अनन्य हमेश ॥ १॥
लै उपदेश गये घर स्वामी । सेवहिं साधु सत्य निष्कामी ॥
नित प्रति मन वर्तहिं वैरागा । रहहिं उदास चहैं जग त्यागा॥
पिता मातु जबगे हरिधामा । भये विरक्त त्यागि धन धामा॥
मन गुणि हरि सबकी सुधि लेहीं।देखहुँ मोहिं किमि भोजन देहीं॥
निर्जन गिरिवर गुहा निहारी । रहे तहां हरिपद चित धारी ॥
भोर गोविंद वणिक तनु धारी । आय अहार दीन सुखकारी॥
तीजे दिन वृषभानुकुमारी । आय दीन दधि क्षीरहँकारी ॥

कह्यो विहँसि राधिका सुवयना।यह अचरज मोहिं दीसत नयना॥
करहिं सकल स्वामीकी सेऊ । तुम स्वामीते सेवा लेऊ ॥
सुनत वचन नयनन जल आये । राधा पदपंकज शिरनाये ॥
धै स्वामिनिकी सीखहि शीशा । वृंदावन गे ध्यावत ईशा ॥
तहँ विद्या पढ़िके सुखदाई । छके रास सुख कछु न सोहाई ॥

दोहा-मग्न भजन निशिदिन रहैं, कहहिं न कोहु सों भेव ॥
येक दिवश तव ध्यानसे, कह्यो आय यदुदेव ॥ २ ॥

करेहु जौन हित जन्म तिहारो । विचारि जगत् सब जीव उधारो॥
लै आज्ञा वदरीवन आये । व्यासदेवके दर्शन पाये ॥
तिनसों पढ़ि भागवत पुराना । रामेश्वरको कियो पयाना ॥
सब तीरथ करि दक्षिण केरा । कावेरी तट कियो वसेरा ॥
द्वारावती दरश पुनि कीन्ह्यो । यक पुर भूप धर्म प्रद चीन्ह्यो॥
तेहिपुरप्रभु यकनिशा वितायो । राजा सुनत दरशहित आयो॥
महा प्रभावजानि सत्कारयो । प्रियादास सो तुच्छ विचारयो॥
चले निशा उठि भूप न जाना । सूझत नहिं मग तम अधिकाना
तासु कोट ढिग निकसे आई । पहरी टेरे रहे चुपाई ॥
जानि चोर पकरे सबधाई । बाँधे कर पग रज्जु दृढ़ाई ॥
डारि दियो खनि खात महाई । भजैं सुचित तहँ कुवँर कन्हाई ॥
जागत भयो भोर भूपाला । नाथ गमन सुनि भयो विहाला॥

दोहा-ढूँढ़न निकस्यो सैन्य लै,चढ़े बड़े गजराज ।
चहुँ दिशि खोजनके लिये,दौरी मनुज समाज ॥३॥

ढूंढ़े भटकि नहीं प्रभु पाई । राजहि ज्वाब दिये फिरि आई॥
भूपहि खबरि दियो कोतवाला । रैन चोर यक खातहि डारा ॥
भूपति जाय चीन्हि दुख कीन्ह्यो। त्राहि त्राहि करि पदशिरदीन्ह्यो
भवन लाय आसन बैठायो । प्रभु तेहिं पूरण ज्ञान सिखायो॥

रक्षक सूरी देन पठाये। स्वामी रक्षक सकल बचाये ॥
तहँते चलि गमने यक ग्रामा। यकबटतरु तर कियविश्रामा॥
बरजे लोग सहित अनुरागे। यहि वट विटप निकटअहिलागै
प्रभु कह सब थल रक्षक रामा।जहँनाहिंप्रभुअस नहिंकहुँ ठामा
धायो भुजँग कुपितनिशि माहीं। मार्यो यक विलार तेहिंकाहीं
भोर प्रभाव मच्यो सब गाऊ। आये सबै मनुजतरु ठाऊ ॥
तौन ग्रामको ठाकुर आयो। प्रियादास पदमो शिरनायो ॥
नाथ कियो निर्विष मम ग्रामा। जिमि कालीकाढ्यो घनश्यामा ॥

दोहा–रहो कछुक दिन नाथ इत, हम सब होंयसनाथ ॥
राखि मान तेहि चलतभे,गये देश यक नाथ ॥ ४ ॥

रहैं महाजड़ तहां अहीरा। तहँको नृप नेसुक मतिधीरा ॥
सो चह नृप सुधरहि किमिदेशा।स्वप्ने हरि तेहिं दियोनिदेशा ॥
आवत संत एक मम रूपा। सोसब देश सुधारी भूपा ॥
तेहि मुखसुनि भागवत सप्रीता। होय भक्ति सब देश पुनीता ॥
एकादशि दिनगे प्रियदासा। भूपति आय मिल्यो सहुलासा॥
तेहिं सुनाय भागवत पुराना। कीन्ह्यो देश भक्त भगवाना॥
पुनि द्वारका सिधारि सुखारी। जगंनाथ दर्शन पगु धारी ॥
पुनि गंगासागर महँ न्हायो। तहँ यक वणिक आयशिरनायो॥
वणिक कह्यो भोजन भो नाहीं। तिनकह भोजन रहै सदाहीं ॥
तीनि दिवश यहि विधिगेवीती। तबहरि द्विज वपु धर्योसप्रीती
कह्यो वणिक सों चलिघर बाता। वृत्ति अयाचक इनकीताता॥
तुमसों बनी न कछु सेवकाई। जाय साधु कहँ देहु खवाई ॥

दोहा–लै भोजन द्रुत वणिक तब, हरि प्रसाद करवाय ॥
कहि प्रसाद दीन्ह्यो प्रभुहि, सादर निज शिरलाइ॥५॥
वनिजारनके संग में,मम प्रभु रींवा आय ॥

तीरथपति मज्जन हितै, गमने हर्ष वढ़ाय ॥ ६ ॥
तीरथराज नहाय कै,मथुरा मंडलजाय ॥
तीनि वर्ष तहँ वसतभे,मम गुरु संग सोहाय ॥ ७ ॥
वहुरि जरौली गाँव यक, अंतर्वेदहि माहिं ॥
यमुना तट शोभा सदन, दर्श करत अघ जाहिं ॥८॥

तहां कियो प्रियदास निवासा । ध्यावत राधा रमण सुरासा ॥
परमहंस तहँ राम प्रसादा । पूरण साधुन वाद विवादा ॥
तामुख सुनि रामायण नीको । सर्व जगत सुखहित सवहीको॥
तेहि भागवत सुनाय वहोरी । वढ़ी परस्पर प्रीति नथोरी ॥
तिन स्थल निज भेंटचढ़ाये । जफरावाद नाथ पुनि आये ॥
देश जरौली दुष्ट अनेका ।चोर विमुख हरिविगत विवेका ॥
ते जन प्रभुकर दर्शन पाई । हरिजन भये त्यागि कुटिलाई॥
प्रियादास कर चरित अनेका । कहहिं परस्पर जन यकएका॥
ते सव जुरि जुरि दर्शन करहीं । दर्श करत हरिपद रति भरहीं॥
करनहेतु वहु जीव उधारा । भक्तिदान तहँ दियो अपारा ॥
करहिं जे प्रियादास सत्संगा । तेरँगि जाहिं रामके रंगा ॥
नाम सराय चतुर्भुज गाऊं । एक समय आये तेहिं ठाऊं ॥

दोहा—तहां रहै यक साधु कोउ, नाम उजागर दास ॥
श्वेत कुष्ट प्रभु तनु निरखि,कीन्ह्यो विनय प्रकाश॥९॥

जड़ी एक जानी प्रभु मेरी । मलत हनत तनु रोगन ढेरी ॥
विहँसि कह्यो प्रभु होय न रोगा। हरि इच्छाते भोगहि भोगा ॥
वाके मन विश्वास न आयो । तव गंगाजल नाथ मँगायो ॥
लियो चुपरि अपने तनुमाहीं । श्वेतवर्ण रहिगो तव नाहीं ॥
पुनि जसको तस रोग वनायो । तव विश्वास ताके मन आयो ॥
तहँ कोउ जमींदार सुतकाहीं । लग्यो प्रेत छोंड़ै तेहि नाहीं ॥

मंत्र यंत्र बहु तंत्रन झारे । छुट्यो न प्रेत उपाय हजारे ॥
तब प्रभु पास लाय सुतकाहीं । परयो पिता रोवत पद माहीं॥
नाथ कह्यो मैं मंत्र न जानो । सुनो जो प्रेतहि वचन वखानो॥
अस कहि कह्यो प्रेत कह बानी ।तुमहिं न लागति योनि गलानी ॥
प्रेत कह्यो अबलों यहि हेता । रह्यो सतावत जीव निकेता ॥
मिलैं जो कबहूँ संत उदारा । तौ हठि मेरो करैं उधारा ॥

दोहा—कलि जीवन निस्तार हित, लीन्ह्यो प्रभु अवतार ॥
करहु कृपा अब दीन लखि, जेहिं मम होय उधार १०॥

विनय दीन सुनि मन हर्षायो । तासु उधारन हित चित लायो॥
कही प्रेत सों मंजुल बाता । अमिली तरु बसिये दिन साता ॥
प्रेत त्यागि तेहिं अमिली माहीं । बसतभयो गति पावन काहीं॥
बांचनलगे नाथ सताहा । भयो समापत जेहि दिन माहा ॥
तेहि दिन विटप बरयो करि ज्वाला।गयो प्रेत जहँ देवकिलाला॥
धाये जन गुणि पावक लागी । जाय तहां नहिं देखे आगी ॥
बूझि नाथसों सुधि सब पाई । जय जयकार कियो सुख छाई ॥
प्रियादास पर फूलन वर्षैं । प्रेत मुक्त गुणिअतिशयहर्षैं ॥
वढ्यो चहूँदिशि महा प्रभाऊ । यह करणी अति सरल स्वभाऊ॥
एक समय प्रभु विचरन हेतू । गये फतेपुर कृपानिकेतू ॥
तहँ देवी मंदिर किय डेरा । देवीरैन प्रत्यक्षहि टेरा ॥

दोहा—रह्यो अयोध्या नगर इत, अति पुनीत केहुँकाल ॥
करहु रामलीला इतै, लखि जन होयँ निहाल ॥११॥

देवी वचन सुनत अघहारी । तहां रामलीला विस्तारी ॥
राम गमन वनकी भइ लीला । पुर नर नारि कुमति शुभशीला॥
सत्य सत्य सब रोदन कीन्हे । भोजन पान त्यागि सब दीन्हे ॥
जो दशरथको रूपहि भयऊ ।सो सति त्यागि देह निज दयऊ॥

जब पुनि भयो राम अभिषेका । तब अँगरेजहु कियो विवेका ॥
साहेब सब निज ठाकुर जानै । रामनिसाफ करै सोइ मानै ॥
राम जौन जेहिं दियो रजाई । सो सबशिरधरि करै सदाई ॥
अचरज फैलि रह्यो पुरमाहीं । सकल प्रशंसैं जन प्रभुकाहीं ॥
एक समय वृंदावन आये । दै भंडारा संत बोलाये ॥
आपहु निजकर परसन लागे । अतिशय साधु सेव अनुरागे ॥
तब यक संत कह्यो अनखाई । कोढीकेर छुआ को खाई ॥
तब प्रभु गये भवनके भीतर । सकल संत तेहि कह्यो अनूतर ॥

दोहा—सकल महात्मा साधुको, बोलवायो करि प्रीति ॥
आये प्रभु सुंदर वरण, लखि सब किये प्रतीति॥१२॥

करि भोजन जब गे निज गेहू । तब जसकी तस कीन्ही देहू ॥
चित्रकूट यक अवसर आये । भरत कूप युत जनन नहाये ॥
जब अनसुइयातेइ जन आये । तहौं नाथको दर्शन पाये ॥
परचो बहुत कहांलगि गाऊं । चरित एक अब और सुनाऊं ॥
चले अमरकंटक प्रियदासा । रींवाह्वै निकसे मग आसा ॥
श्रीजयसिंहपितामह मोरा । छायो जासु सुयश चहुँ ओरा ॥
रींवांहै बघेल रजधानी । बसत रह्यो जयसिंह गुखखानी ॥
तिनके तीनि पुत्र सुखदाता । मम पितु औ पितृव्य दुइ भ्राता॥
जेठे विश्वनाथ पितु मेरे । फहरत जिन पताक यश केरे ॥
लक्ष्मणसिंह मांझिले नामा । पुनि बलभद्रसिंह मतिधामा ॥
सुन्यो कान प्रियदास सिधाये। तीनिहुँ सुत युत राजा आये ॥
श्रीजयसिंह नरेश सुजाना । करि प्रसन्न स्वामी सन्माना ॥

दोहा—राखन हित राजा गह्यो, पद बहु बिनय बखानि ॥
सकल रीति विपरीति लखि,प्रभुहि ननेक सोहानि१३॥

रीति रही पूरब यह राजू । लूटै प्रजन मनुज विन काजू ॥

बोलैं झूठ सकल अज्ञाता । ब्राह्मण करै निजातम घाता ॥
देखि दशा प्रभु कियो विचारा । यह बघेल कुल अति उजियारा
बहु राजा भे यहि कुल रूरे । समर शूर दाता गुणपूरे ॥
विपुलबार कोटिन करि दाना । यश लिय करि याचक सन्माना
बादशाह जब विपति सतायो । तब तब यहि कुल आय वितायो
सेनभक्त बांधवमहँ भयऊ । नृप रामहि हरि दर्शन दयऊ ॥
तेहि कुल सोह न यह अनरीती । काल कर्म गति भै विपरीती ॥
यह प्रभु कीन्ह्यो मन संकल्पा । राजासों नहिं कीन्ह्यो जल्पा ॥
गये अमर कंटक तेहि पंथा । दीन्ह्यो कछु न धर्मकर संथा ॥
प्रभुके लागिगई मनमाहीं । दिये भक्ति विन बनतो नाहीं ॥
लहैं बघेल भक्ति उपदेशा । भक्ति प्रचार होय सब देशा ॥

दोहा—जब जब इत ह्वै कहुँ प्रति, तीरथ हेतु नहान ॥
तब तब भूपहि सुतन युत, देहिं दरश सविधान॥१४॥

कई बार दै दरश सोहाये । सहज सहज हरि ओर लगाये ॥
श्रीजयसिंह भूप यक वारा । गयो प्रयाग सहित परिवारा ॥
तहां जाय प्रभु दर्शन पायो । तीनौं सुत युत मोद बढ़ायो ॥
विश्वनाथ जेठो सुत जोई । प्रभुसों कह्यो यकांतहि रोई ॥
मंत्र देहु मम करहु उधारा । नातो कब छूटी संसारा ॥
प्रभु कह शिष्य करैं नहिं काहू । पै तेरो होई निर्बाहू ॥
एक बार पुनि तीनिउँ भाई । दरश कियो मिरजापुर जाई ॥
तहां यकादशि वरत बतायो । भक्ति वीज शुभ खेत बोवायो ॥
पुनि प्रभु चले नर्मदा काहीं । रीवां बाम छोंड़ि पथमाहीं ॥
ग्राम सेमरिया महँ जब आये । विश्वनाथ दर्शन हित धाये ॥
विनय कियो रीवां पगुधारो । तब प्रभु कह्यो बहुरती बारो ॥
मुरके जबै नर्मदा न्हाये । स्वामि अमर पाटन जब आये ॥

दोहा—प्रियादासकी पाय सुधि, मोदित तीनों भ्रात ॥
दरश हेतु तहँ जायकै, पकरे पद जलजात ॥ १५ ॥
करि विनती रीवां पुनि लाये । सब पंडित मिलि वाद बढ़ाये ॥
समाधान साधारण कीन्हें । प्रभुको अति प्रभाव सब चीन्हें ॥
एक समय मम पितु कह वानी । विन उपदेशे लगति गलानी॥
नाथ कह्यो तबसुनु विशुनाथा।करिहैं शिव तोहिं अवशि सनाथा॥
तेहि निशि मम पितु जब घरमाहीं ।सोवनलागे दुचित तहांहीं॥
राम मंत्र लिखि दर्पण सुंदर । स्वप्न माहिं उपदेश्यो शंकर ॥
कहैं न काहू सों शिव भाषा । गुरुसों सविधि लेन अभिलाषा ॥
एक समय यकंत महँ स्वामी । मम पितुसों कह अंतर्य्यामी ॥
जौन मंत्र शिव स्वप्ने दीन्ह्यो । सो निज मुख उच्चारणकीन्ह्यो ॥
पुनि अस मंजुल वचन सुनायो । यही मंत्र शंकर सों पायो ॥
राम मंत्र जो दियो इशाना । सो प्रभु मुख सुनि अपने काना ॥
अचरज मानि गह्यो पदकंजन । दीजे सविधि मंत्र भवभंजन ॥

दोहा—प्रियादास बोले वचन, कीन्हे परमसनेह ॥
होनी रही सो ह्वै गई, जनि कीजै संदेह ॥ १६ ॥
अस कहि तीरथ करन कृपाला । जात भये ध्यावत नँदलाला॥
एक बार दक्षिण पगु धारे । रीवां तजि पश्चिम पथ धारे ॥
जयसिंह सुत मम पितु तिन भ्राता ।लक्ष्मण सिंह नाम अवदाता
माधवगढ़ तिनको पुर रहेऊ । तोहिं परगन ह्वै प्रभु पथ गहेऊ॥
हाटीग्राम जबै प्रभु आये । सकल देश वासी तब धाये ॥
दर्शन करि सब शोर मचाये । परगट कपिलदेव मुनि आये ॥
मम पितृव्य लक्ष्मणसिंह गयऊ ।प्रभुहिं चीन्हि अति मोदितभयऊ
विनय कियो प्रभु रीवहिं चलिये।चरण सलिल दै कलिमल दलिये
प्रभु कह दक्षिण यात्रा करिकै । ऐहौं रीवैं अति सुख भरिकै ॥

अस कहि दक्षिण यात्रा कीन्ह्यो। आय बहुरि रीवैं सुख दीन्ह्यो॥
हरिविमुखी पंडित पुर केरे। वादविवाद कियो बहुतेरे॥
सबको समाधान करि दीन्ह्यो। प्रभु प्रभाव सब हरिको चीन्ह्यो॥
दोहा—मम पितु अरु पितृव्य दोउ, तिनको निकट बोलाय॥
आमिष अरु मछरी भखन, दीन्ह्यों सकल छोंड़ाय १७॥
फेरि कह्यो मम पितु विशुनाथै। मंदिर रचि थापै रघुनाथै॥
जाय प्राग पुनि ग्रंथ बनायो। सिद्धांतोत्तम नाम धरायो॥
वाणी सरल गूढता तामें। पढहिं लोग समुझैं समुझामें॥
पुनि मम दोउ पितृव्य सुजाना। लक्ष्मण अरु बलभद्र प्रधाना॥
शिष्य होन हित विनय सुनायो। प्रभु एकांत बोलि समुझायो॥
मैं नहिं करौं शिष्य करनाऊं। पै अपने सम बोलि पठाऊं॥
तिनके शिष्य होहु दोउ भाई। भक्ति भेद सो सकल बताई॥
मेरो गुरुसुत बुद्धि विशाला। नाम जासुहै मोतीलाला॥
अस कहि ब्रजको पत्र पठायो। मोतीलाल तुरत बोलवायो॥
लक्ष्मण अरु बलभद्रहु काहीं। शिष्य करायो रीवांमाहीं॥
मम पितु विश्वनाथ कर जोरी। कह्यो नाथ अबका गति मोरी॥
प्रभु कह तोपर करि मैं दाया। स्वप्ने जो उपदेश बताया॥
दोहा—सोइसत्य माने रहो, किये रहो गुरुभाव॥
अवशि तोहिं मिलिहैं हरी, यामें नाहिं दुराव॥ १८॥
प्रगट मंत्र दीन्हें तोहिं दासा। होय उपद्रव इत अनयासा॥
मम पितु अति आनंदित भयऊ। प्रभुमहँ ईश्वर भावहि कियऊ॥
पुनि जे राजगुरू द्विजराई। अग्निहोत्री नाम कहाई॥
श्रीबलभद्र आदि द्विज केते। सम्मत कीन्ह्यो मिलि मिलि तेते॥
राजगुरू हमहीं कहवाये। वृत्ति मंत्र दीवे की पाये॥
प्रियादास सो मंत्रहि दैकै। हरत मंत्र हमरी क्षय कैकै॥

अस विचारि सिगरे द्विजराजा । लगे मरन निज जोरि समाजा॥
पर्‍यो राजगृह महँ .संकेता । सुमिरैं सिगरे कृपानिकेता ॥
प्रियादास सुनि यह संदेहू । गये अग्निहोत्रिनके गेहू ॥
कह्यो मंत्र मैं देहौं नाहीं । राजद्वार तुम मरौ वृथाहीं ॥
पै जो मंत्र देन मैं चैहौं । स्वप्ने माहँ काह करि लैहौं ॥
तिनमें श्रीबलभद्र सुज्ञानी । जन उपकारक वेद विधानी ॥

दोहा—सो प्रभुके पद परशिकै, कह्यो जोरि युग हाथ ॥
जो भावै सो कीजिये, तुम समरथहौ नाथ ॥ १९॥
मम पितु श्रीविशुनाथको, प्रियादास गुणि दास॥
तासु दिवान अयान अति, ताहि बोलायो पास॥२०॥
हरि विमुखी वेश्या निरत, सीवनराम दिवान ॥
कह्यो ताहि गणिका तजौ, छूटी काम निदान ॥२१॥

सो नाहिं वेश्या तज्यो अभागी । भयो न कछु हरिको अनुरागी॥
छूटि गयो कछु दिनमहँ कामा । भोदूलाल रह्यो मतिधामा ॥
राज्यकार्य्य मम पितु तेहि दीन्ह्यो।सो प्रभुको शासन शिर कीन्ह्यो
धर्मरीतिसों राज्य सुधारा । अबलों जासु सुयश संसारा ॥
नीति धर्ममें निपुण सोहाये । ताते स्वामीके मन भाये ॥
पंडित यक नैआयकवादा । नाम जासु कामताप्रसादा ॥
प्रभुकर किय कछु दिन सत्संगा।सो तजि न्याय रँग्यो हरि रंगा॥
नाथ गये कहुँ तीरथ काहीं । मंदिर बन्यो अमहिया माहीं ॥
आयगये प्रभु थोरेहि काला । पधरायो तहँ दशरथ लाला ॥
रही चरण चौकी संकेता । सिय बैठन उपाय किय केता ॥
सीता मूरति बैठी नाहीं । मम पितु कह्यो दुखित गुरुपाहीं ॥
प्रियादास तुरतहिं तहँ आये । देखि जानकिहिं अतिसुख पाये॥

अस विचारि सिगरे द्विजराजा । लगे मरन निज जोरि समाजा॥
पर्‍यो राजगृह महँ .संकेता । सुमिरैं सिगरे कृपानिकेता ॥
प्रियादास सुनि यह संदेहू । गये अग्निहोत्रिनके गेहू ॥
कह्यो मंत्र मैं देहौं नाहीं । राजद्वार तुम मरौ वृथाहीं ॥
पै जो मंत्र देन मैं चैहों । स्वप्ने माहँ काह करि लैहों ॥
तिनमें श्रीबलभद्र सुज्ञानी । जन उपकारक वेद विधानी ॥

दोहा—सो प्रभुके पद परशिकै, कह्यो जोरि युग हाथ ॥
जो भावै सो कीजिये, तुम समरथहौ नाथ ॥ १९॥
मम पितु श्रीविशुनाथको, प्रियादास गुणि दास॥
तासु दिवान अयान अति, ताहि बोलायो पास॥२०॥
हरि विमुखी वेश्या निरत, सीवनराम दिवान ॥
कह्यो ताहि गणिका तजौ, छूटी काम निदान ॥२१॥

सो नहिं वेश्या तज्यो अभागी । भयो न कछु हरिको अनुरागी॥
छूटि गयो कछु दिनमहँ कामा । भोदूलाल रह्यो मतिधामा ॥
राज्यकार्य्य मम पितु तेहिं दीन्ह्यो।सो प्रभुको शासन शिर कीन्ह्यो
धर्मरीतिसों राज्य सुधारा । अबलों जासु सुयश संसारा ॥
नीति धर्ममें निपुण सोहाये । ताते स्वामीके मन भाये ॥
पंडित यक नैआयकवादा । नाम जासु कामताप्रसादा ॥
प्रभुकर किय कछु दिन सत्संगा।सो तजि न्याय रँग्यो हरि रंगा॥
नाथ गये कहुँ तीरथ काहीं । मंदिर बन्यो अमहिया माहीं ॥
आयगये प्रभु थोरेहि काला । पधरायो तहँ दशरथ लाला ॥
रही चरण चौकी संकेता । सिय बैठन उपाय किय केता ॥
सीता मूरति बैठी नाहीं । मम पितु कह्यो दुखित गुरुपाहीं ॥
प्रियादास तुरतहिं तहँ आये । देखि जानकिहिं अतिसुख पाये॥

दोहा—मोदक देहैं तोहिं बहु, हे मिथिलेश कुमारि ॥
अस कहिकै निज हाथते,सीतहि दियो पधारि॥२२॥
बैठिगई मूरति तेहिं माहीं । अचरज आयो सब जन काहीं ॥
अवध अमहियाको दिय नामा । तहँकी सरिसरयू सुखधामा ॥
कृष्ण कूप यक कूप बनायो । सुधा समान तासु जल आयो ॥
लक्ष संतकी जुरी समाजा । आये नात जाति बहु राजा ॥
लघु सरिता लखि जन अकुलाई।भयो समल जल पशि न जाई॥
प्रभुसों सब जन कहे दुखारी । नाथ पियेंका बिगरो वारी ॥
बाढ़ै आजु सुधरि जल जावे । ज्येष्ठ मास विश्वास न आवे ॥
प्रभु कह कठिन रामकहँ नाहीं । हरि चाहे बनिहै क्षण माहीं ॥
जेठमास तेहि दिन बिन बरषा।कीन्ह्यो सरित सलिल उत्करषा॥
बहिगो मल भो निर्मल नीरा । जयजयकार कियो जन भीरा॥
मम पितु अन्न अडारजुहायो क्रमक्रम ते सब जनन बटायो ॥
यक द्विज क्षुधित घुस्यो तहँ पेली । दियो सिपाही ताकहँ रेली॥
दोहा—सो फिरि आयो नाथ पहँ, तब प्रभु चले रिसाय ॥
दौरि दूरिलों मम पिता, गिरचो चरणमें जाय॥२३॥
प्रभु कह जे तुव भृत्य अडारा । ते द्विजके बाधक अविचारा ॥
जो तू देहि अडार लुटाई । तौ मैं फिरहुँ प्रीति अति छाई ॥
मम पितु तुरतहि भटन बोलाई ।दीन्ह्यो सकल अडार लुटाई॥
लाखन भिक्षुक लूटन लागे । जयजयकार मच्यो चहुँ भागे ॥
पहर सवाउक लुट्यो अँडारा ।तब मम पितु कहँ निकट हँकारा॥
प्रभु कह लूटब वारण कीजै । मैं प्रसन्न क्रम क्रमते दीजै ॥
तब करि वारण लूटब काहीं । मम पितु समुझ्यो कागज माहीं॥
उठत रह्यो जितनो दिन एकू । तेतनाहिं उठचो कम्यो नाहिं नेकू॥
यक दिन मम पितु मातु सोहाये।हरि पूजन हित मंदिर आये॥

पूजन करि पोशाक पहिराये । तीनहुँ मूरति अतर लगाये ॥
सीता नयन अतर लगि गयऊ । तब तेहिं आंसू आवत भयऊ॥
विघ्न मानि पितु कह प्रभु पाहीं।प्रभु कह विघ्न अहै कछु नाहीं॥
दोहा—रामजानकी लषणमें, ज्यों ज्यों करिहौ भाव ॥
त्यों त्यों दरशैहैं कला, दिन दिन दून उराव ॥२४॥
एक वधिर आयो तेहिं ठाई । कह्यो नीक मोहिं करौ गोसाँई ॥
प्रभु कह हम कछु मंत्र नजानैं । वैद्य निकट कहुँ करौ पयानैं ॥
मम पितु कह तैं कृष्ण कूपमें । मज्जन कीजै प्रेम रूपमें ॥
वधिर जाय तेहि कूप नहायो । कान वधिरता तुरत गवांयो ॥
पुनि सरिता महँ कमल बोवायो।अबलों फूलत अति छवि छायो॥
द्वै ब्राह्मण पंढरपुर माहीं । प्रभु शिषि होन हेतु विलखाहीं ॥
द्विजन प्रेम वश गुणि उर जामी । गमने पंढरपुर कहँ स्वामी ॥
दोहुन द्विजन कियो उपदेशा । भोर होत आये यहि देशा ॥
प्रभु ढिग गे मम पितु त्रय भाई । मम पितु सों प्रभु कह करुणाई॥
मैं तुव प्रेम विवशहौं भारी । उपदेशिहौं सुस्वप्न मँझारी ॥
अस कहि वहु धीरज प्रभुदीन्ह्यो। फिरि पंढरपुर गमनहिं कीन्ह्यो
वहां जाय पुनि दोउ द्विजकाहीं। उपदेश्यो हरि मनु सुखमाहीं ॥
दोहा—नाथ पंढरी दरशिकै, देशहि दिय मुद गाथ ॥
विनय माल निर्माण किय, इतै ग्रंथ विशुनाथ॥२५॥
एक निशामें आयकै, स्वप्ने में प्रियदास ॥
विश्वनाथ उपदेश दिय, सकल रीति हरि रास॥२६॥
अतिशय मन आनँद रस पाग्यो भक्तिवृक्ष फूल्यो फल लाग्यो॥
दक्षिणते पंडित यक आयो । विपुल वाद करि गर्व बढ़ायो ॥
खर्रा सो प्रभु ढिग पठवायो । देखि अशुद्ध ताहि बहरायो ॥
सो पठयो पुनि कोपहि कीन्हें । हरि खर्रा अशुद्ध करि दीन्हें ॥

तबहूँ मिटी न तेहि मति भोरी। शास्त्रार्थ मति कियो बहोरी ॥
यक पंडित गोविंद सुनामा । अरु कामताप्रसाद ललामा ॥
दोउ पंडित किय तेहि सँग वादा।सूत्र अचित चित करि मर्यादा॥
दक्षिणको पंडित तब हाऱ्यो ।पुनि नहिं ताकर उतर उचाऱ्यो
जादिन भई अमहिया माहीं । रामप्रतिष्ठा सुख चहुँ घाहीं ॥
मम पितु विश्वनाथ कहँ बोली। सादर भाष्यो बात अतोली ॥
आजुजागरणकी विधि होई । जागहु तुम कुटुम्ब सबकोई ॥
मम पितु विश्वनाथ तब भाखो।प्रभु मम विनय हृदय यदि राखो॥

दोहा–कहहु कथा भागवतकी, होय कुटुंब पुनीत ॥
करौ जागरण कुटुमयुत,तुव मुख सुनिबे प्रीत॥२७॥

तब प्रभु यह आधो श्लोका ।व्याख्या सहित कह्यो हरि शोका॥
गच्छदेविव्रजंभद्रे गोपिगो भिरलंकृतं ॥
यह आधे श्लोकहि केरी । निशि भर व्याख्या भाष्यो ढेरी ॥
दंड चारि रजनी रहि बाकी ।तब मम पितु बोल्यो सुख छाकी॥
औरहु आगे कहौ गोसांई । समुझावहु मोहिं करि करुणाई ॥
प्रभु कह यहि व्याख्या षट मासा।मैं कहिहौं तोहिं देत हुलासा॥
तब पंडित सिगरे शिरनाये । व्यास रूप तिनके मन भाये ॥
पुनि मम जननीको ढिग आनी ।कह्यो वचन करुणारस सानी॥
पढ़ै भागवत संयुत प्रीती । ऐहै तोहिं सत्य परतीती ॥
हरि मंदिर सुंदर बनवावै । सीता राम तहां पधरावै ॥
देवनाथ पौराणिक रूरे । प्रभु पद पंकज प्रेमहिं पूरे ॥
ते भागवत विशेष पठैहैं । हेतु भाव ध्वनि अर्थ बुझैहैं ॥
प्रभु शासन शिर धरि मम माता।पढ़्यो भागवत अर्थ विख्याता॥

दोहा–प्रभु प्रतापते मातु मम, अर्थ भागवतकेर ॥
पढ़्यो पक्ष दशपंच करि, वाद सुबुद्धि निवेर ॥२८॥

पिता जननि मम होतभे, प्रियादासके दास ॥
नितप्रति आनँद लहतभे, ध्यावत यदुपति रास॥२९॥
कह्यो फेरि विशुनाथ सों, काल कठिन गति देखि ॥
पर वृंदावन जाइहौं, यह तनुत्यागि विशेखि॥ ३० ॥
राधा वल्लभके विरह, मोसों रहो नजाय ॥
सूत्रभाष्य मोहिं रह रचन, तुमहीं दियो बनाय॥३१॥
ऐसी मम पितु सों कहि गाथा। गये जरोलीको पुनि नाथा ॥
चतुर मास व्रत करि सविधाना।बांचि सार्थ भागवत पुराना ॥
यमुना तट निज आश्रम माहीं। संत समाज बैठि चहुँ घाहीं ॥
संवत बाण सात वसु एका। चैत्र वदी परिवा निशिनेका ॥
बहु ब्राह्मणन तुरंत बोलायो। सबते गोविंद मंत्र जपायो ॥
शिष्य भवानीदीनहि कीन्ह्यो। मम पितु तेहि आचार्यो दीन्ह्यो॥
मंत्र दियो पुनि वैष्णवदासै। संत सेव वरण्यो इतिहासै ॥
साधुसेव तेहि दिय अधिकारा किया सिद्धि सब हऱ्यो खँभारा ॥
पूरव मुख पद्मासन करिकै। राधाकृष्ण शोर मुख भरिकै ॥
भानु उदै स्वामी तनु त्यागा। देखि सबनको अचरज लागा ॥
जेहिं दिन त्याग्यो कुटी शरीरा। तेहि दिन वृंदावन महँ धीरा ॥
सेवाकुंजमाहँ प्रभु बैठे। लखे जु केशवदासहु पैठे ॥

दोहा—नाती चेला जानिकै, केशवदास बोलाय ॥
कह्यो जरौली जाहु तुम, ते गमने शिरनाय ॥ ३२ ॥
मम पितृव्य बलभद्रको, तेहिं दिन स्पप्न देखान ॥
आयगये रीवां प्रगट, श्रीप्रियदास सुजान ॥ ३३ ॥
मम पितु अरु पितृव्य दोउ, गे दर्शनके हेत ॥
कह्यो वचन प्रियदास तब, मैं अब जाहुँ निकेत ॥३४॥
जब तुम तीनिहुँ बंधु तनु, त्यागि ध्याय ब्रजनाथ ॥

तब मिलिहौं गोलोकमें, प्रगट पसारे हाथ॥३५॥
यह स्वप्नो बलभद्र लखि, कह्यो सबन सों भोर॥
जानि गये सब नाथगे, जहँ बस नंदकिशोर॥३६॥
अमित चरित प्रियदासके, कहँलों कहों बखानि॥
नेसुक जो जानो रह्यो, सो वरण्यों सुखसानि॥ ३७॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरचरित्रेप्रथमोऽध्यायः॥ १॥

दोहा—प्रियादासको शिष्य वर,विश्वनाथ पितु मोर॥
तासु चरित वर्णन करत, लगति लाज नहिं थोर॥१॥
पै लखि भक्तन संप्रदा, हुलसति अति मति मोरि॥
भक्त चरित वर्णन करौं, करौं कछू नहिं खोरि॥ २॥
जग जाहिर हरिजन जनक, चरित कहौं जो नाहिं॥
तौ सज्जन सब दूषिहैं, बांचि ग्रंथ मोहिं काहिं॥ ३॥
मम प्रिय मम पितु परमप्रिय,खास कलम युगलेश॥
सो वरण्यो मम पितु चरित, जौन भयो जेहिं देश४॥
मतिऽनुसार वर्णन करौं, तौन ग्रंथ अनुसार॥
सावधान श्रोता सुनहु, संत चरित सुखसार॥ ५॥

लिख्यो भविष्य पुराणहिं माहीं। प्रियाचार्य ह्वैहै कलिमाहीं॥
सो करिहै जीवन उद्धारा। तासु होइ यक शिष्य उदारा॥
नाम रोमहर्षण अति पूता। वरण्यो जेहि पुराण पितु सूता॥
सोइ रोम हर्षण विज्ञाता। पायो हलधर कर कुश घाता॥
सोइ रोमहर्षण कलिकाला। भोमो पितु विशुनाथ भुआला॥
अष्टादश षट चालिस साला। माधव सित चौदशि शुभकाला॥
लियो जन्ममो पितु विशुनाथा। रीवां नगर महामुद गाथा॥

आह्निक तासु रह्यो यहि भांती । चारि दंड बाकी उठि राती ॥
करै भावना ध्यानहि माहीं । सखी रूप सिय रामहि काहीं ॥
ध्यानहि महँ सब कृत्य करावैं । चारि दंड यहि भांति वितावैं॥
आह्निक श्री सीतापति केरो । करहिं भावना वेद निवेरो ॥
चारि ध्यान निशि दिनमें करहीं ।भव वासना सकल परिहरहीं॥

दोहा—एक समय विशुनाथको, स्वप्ने शंकर आय ॥
राम षडक्षर मंत्रको, दीन्ह्यो कर्ण सुनाय ॥ १ ॥
प्रियादास भगवान वपुश्यो, एक समयपुनि आय ॥
उपदेश्यो सोइ मंत्रको, तेहि एकांत लैजाय ॥ २ ॥

ग्रंथ विनय माला निर्माण्यो । प्रियादासको हरिवपु जान्यो ॥
पुनि मंदिर सुंदर बनवायो । सीता राम तहां पधरायो ॥
करै रामलीला मधु मासा । कहुँ कहुँ होय प्रत्यक्ष तमासा ॥
अवध नगर गवने यक काला । बोलि स्वप्न महँ रघुकुल वाला॥
दीन्ह्यो चक्र प्रचंड प्रकाशा । कह्यो तोहिं रक्षी सब आशा ॥
जागि प्रकाश लख्यो निज शीशा । मान्यो पूरकृपा निज ईशा॥
पुनि रामायण विमल बनायो । सादर सब साधुन बटवायो ॥
पुनि चलि चित्रकूट यक काला । पुरश्चरण तहँ कियो विशाला॥
लख्यो स्वप्नमहँ यक निशिमाहीं।सखी रूप चलि गोपुरकाहीं ॥
सीताराम रासजहँ होतो । महामोद छनछनहिं उदोतो ॥
सखीरूप तहँ आप सिधाई । रहनलग्यो महँ सुख छाई ॥
पुरश्चरणको यह फल पाई । दै दक्षिणा द्विजन समुदाई ॥

दोहा—आयो पुनि रींवा नगर, राम रंग महँ छाकि ॥
पार्षद वपु मानत निजै, रहनलग्यो प्रभु ताकि ॥ ३ ॥

ठाकुर गांव सेमरियाकेरो । यक जगमोहसिंह निवेरो ॥
मम पितु पर कृत्या करवायो । आधी निशि प्रकाशकरिधायो॥

कोउ कह स्वप्न माहँ ढिगआई। कृत्यानल आयो दुखदाई॥
स्वप्नहि उठि विशुनाथ भुवाला। लख्यो पूर्वदिशिभाशकराला॥
होत सहसकुलिशनकरपाता। दमकि रही दामिनी अघाता॥
यतने महँतेहिं मंदिर तेरे। कढ़े कुवँर द्वै दशरथ केरे॥
दियो पूर्व दिशि बाण चलाई। कृत्यानल सब गयो बिलाई॥
स्वप्न माहँ प्रभु शासन दीन्ह्यो। क्यों नहिं ग्रंथ संस्कृत कीन्ह्यो
तब सँगीत रघुनंदन ग्रंथा। रच्यो राम सिय राससुपंथा॥
बहुरि राम आह्निक निर्माण्यो। निशि दिन चरित रामजोठान्यो
शासन दीन्ह्यो राम बहोरी। भाषा रचहु कीर्त्ति सब मोरी॥
तब नाटक गीतावलि आदिक। रच्यो ग्रंथ साधुन अहलादिक॥

दोहा—एक समय हनुमंत मिलि, स्वप्ने मोदबढ़ाय॥
श्रीरघुनंदनको तहाँ,दीन्ह्यो तुरत मिलाय॥ ४॥

द्विजभिक्षुकाचार्य्य विज्ञानी। तिनसों श्रुतिको अर्थ बखानी॥
ग्रंथ सर्व सिद्धांत अनंता। रच्यो परंतु सकल सियकंता॥
कियो रामजप गंगा तीरा। अनाचार किय विप्र अधीरा॥
स्वप्न माहँ प्रभु ताहि बतायो। सो विशुनाथ हि सत्य देखायो॥
एक समय विशुनाथ नरेशा। गमनत भयो जिरौहा देशा॥
मारि शत्रु सो मुलुक छोड़ायो। तबते पुरश्चरण करवायो॥
तहँ देवी धरि रूप कराला। आई जहँ विशुनाथ भुवाला॥
कह्यो तोहिं को रक्षणहारा। मानउतारन मम अधिकारा॥
तहँ मूरति यक पवनपूतकी। रही सो निकट सनेह सूतकी॥
सो प्रत्यक्ष चालि कह विशुनाथै। मति भय कर मम कर तुवमाथै
पितु कह जो रक्षक तुम मेरे। ह्वैहै कहा कौन कोहु केरे॥
एक समय पुनि आइ कबीरा। कह्यो वचन पितुसों मतिधीरा॥

दोहा—दुष्ट शिष्य मम ग्रंथ को, दीन्ह्यो अर्थ बिगारि ॥
बीजक तिलक यनाव मम, दीजै अर्थ सुधारि ॥

बीजक तिलक बनावन लागे । तब द्वै सत्संगी दुख पागे ॥
पंडित धौंकलसिंह चँदेला । दूसर फत्तेसिंह बघेला ॥
कह्यो आप का भूप बनावो । क्यों कबीर पंथी कहवायो ॥
पितु कह है मोहिं राम रजाई । ताते मैं यह देहुँ बनाई ॥
दोउ कह तुम नृप करहु बहाना।पितु कह जो शासन भगवाना॥
तुमहीं परी निशा महँ जानी । सोवहु नेम सहित दोउ ज्ञानी॥
तेहिनिशिदोउकहँ कहरघुनाथै। सत्य मोर शासन विशुनाथै ॥
ते दोउ आय शशि पदनाये । बीजक तिलक नरेश बनाये ॥
यक दिन हरि ब्यारी करवाई । पूजक बीरी दियो नजाई ॥
राम स्वप्न महँ कह पितु पाहीं। बीरा आजु लहे हम नाहीं ॥
तुरतै जागि कियो तहँ कीका । बीरा भोग लग्यो नहिं ठीका॥
महाराज जयसिंह महाना । विश्वनाथको पिता सुजाना ॥

दोहा—मरण समय जेहि प्रागमें, द्वादश हस्त सिधारि ॥
अगवानी गंगा लई, विन वर्षा बाढि वारि ॥

राधाकृष्ण मूर्ति तिन पूजी । जिनके सम सुंदर नहिं दूजी ॥
तिनको प्रागहि चह पधराई । तबते कह्यो स्वप्न महँ आई ॥
हम चलिहैं अब संगहि तेरे । इतै रहन अभिलाष नमेरे ॥
तब लै राधा कृष्णहि जोड़ी । थाप्यो रींवाउर सुखवोड़ी ॥
एक समय आयो यक संता । लीन्हे शालिग्राम अनंता ॥
तिनमें एक मूर्त्ति पितु मांग्यो । सो नहिं दीन्ह्यो अमरषराग्यो॥
मूरति लै गमन्यो पुनि जबहीं । स्वप्ने महँ भाषे हरि तबहीं ॥
मोहिं महीप समीप न देहै । तौ तैं जरा मूर सों जैहै ॥
तो कहँ कह्यो भूप असवानी । द्वै शत मुद्रा देहौं ज्ञानी ॥

जो तैं लैहै एकौ पैसा । तौ होई तुव अवशिअनैसा ॥
भोर लौटि साधू सो आयो । मूरति दै अस वचन सुनायो ॥
मुद्रा द्वैशत हम नहिं लैहैं । विना मोल मूरति तोहिं दैहैं ॥

दोहा–पितु लै मूरति शिर धरचो, चक्र चिह्न दर्शाय ॥
रासविहारी नाम तेहि,राख्यो प्रीति बढ़ाय ॥ ७ ॥
एक समय पितुसों कह्यो,फत्तेसिंह बघेल ॥
राम कृष्णमें भेदहै,यामें करहु न खेल ॥ ८ ॥
तब पितु कह नहिं भेदहै, रामकृष्णके रूप ॥
देखिलेहु कहुँ जायकै, प्रभुकी मूर्ति अनूप ॥ ९ ॥
जाय अमहियाभवनमें, रामचंद्रको देखि ॥
पुनि लीन्ह्यो सोइ मूर्त्तिको, कृष्ण स्वरूप परेखि १०॥
फतेसिंह कह सत्य यह, करिये आप वखान ॥
प्रभु परंतु कलिकालमें, है आश्चर्य्य महान ॥ ११ ॥

एक समय बैठे महराजा । गिरी गाज करि घोर गराजा ॥
भयो भवन ऊपर षट टूका । परो नगर चहुँदिशि जनु लूका ॥
एक टूक भीतर कढ़ि आयो । सो कढ़िगयो तेज नहिं छायो ॥
लियो राखि रघुकुल महराजा । दीनदयालु गरीब नेवाजा ॥
एक समय ज्वर पीड़ित भयऊ । पूजापाठ बहुत विधि ठयऊ ॥
तब रघुनंदन शासन दीन्ह्यो ।तुम कत ठन ठन मन ठन कीन्ह्यो॥
मस्तक दिशि हनुमत पुनि आये । कह्यो सोऊ दुख देत मिटाये॥
पितु उठि भोर पुजनकी साजू । दिय फेंकवाय विचारि अकाजू॥
तेहिं निशि आय कह्यो हनुमाना । तोर अमंगल सकल पराना॥
सूत्रभाष्य पुनि मम पितु कीन्ह्यो।हरिभक्तन विप्रनकहँ दीन्ह्यो॥
एक समय पुरमहँ अति घोरा । मारि उपद्रव भयो न थोरा ॥
जौनि मूर्त्ति पूजै पितु मोरा । जनकनंदिनी अवध किशोरा ॥

दोहा—राख्यो तिनको नाम अस, कौशल राजधिराज ॥
तासु पुजारी मरिगयो, तुलसीराम विराज ॥ १२ ॥

पितुहिं भयो अतिशय संदेहा । प्रभु पूजक छूटी किमि देहा ॥
कह्यो राम स्वप्नेमहँ आई । यह पूजक विधि दियो नशाई ॥
मोकहँ सब देवनके पीछे । बैठायो प्रभु करि नहिं ईछे ॥
सोइ अपराध मर्‍यो यहि काला । मति कीजे संदेह भुवाला ॥
पितु उठि भोर नाम जेहिगणपति।सौंप्योपूजनगुणि तेहि शुभमति
सो अबलों प्रभुकेर पुजारी । बनो अहै नृप कृपाधिकारी ॥
जगन्नाथ यक समय सिधाई । पितुको दीन्ह्यो स्वप्न देखाई ॥
पंचाशत सहस्रको अटका । देहु चढ़ाय हमैं बिन खटका ॥
पितु तुरंत करि सब संभारा । दियो चढ़ाय पचासहजारा ॥
अबलों लगत पुरी महँ भोगू । यह प्रसंग जानत सब लोगू ॥
एक समय कालिका सिधारी । मांग्यो भूषण कनकहि टारी ॥
दिय देवी भूषण बनवाई । अबलों पहिरे परम सोहाई ॥

दोहा—नाम जरौली ग्राम यक, तहँ द्विज अम्बरदास ॥
सो कीन्ह्यो अपचार कछु, रघुकुल नाथनिवास॥ १३॥

राम दियो मम पितै रजाई । यहि वैष्णवै देहु निकराई ॥
विश्वनाथ लिखिपठयो पाती।नहिं निकस्यो सो कुपित अघाती॥
दीन्ह्यो स्वप्न ताहि रघुराई । नहिं कढिहै तौ जई नशाई ॥
तब वैष्णव सो पुरी सिधायो । मंदिरके सब दास टिकायो ॥
चित्रकूट यक समय सिधारे । राममंत्रजप करन विचारे ॥
तहँ प्रगटे श्रीगुरु प्रियदासा । पूजन कीन्ह्यो सहित हुलासा ॥
कोउ रिपु मम पितु पर यक काला।किय मारन अभिचार कराला
निशा स्वप्न देख्यो महराजा । सर्पहि खायो मटा समाजा ॥
भोर भिक्षुकाचार्य्य समीपा । कह्यो स्वप्न वृत्तांत महीपा ॥

सो कह इतै प्रत्यक्षहि भयऊ। सर्पहि झटा खाय बहु लयऊ॥
हमहुँ स्वप्न देखा यहि राती। सो तुमसों वर्णों सबभांती॥
राम नाम जे अमित जपाये। ते तुव काळरूप यहि खाये॥

दोहा—ब्रजके गोस्वामी रहे, नाम गोविंदहिलाल॥
एक समय सो भेद किय, नंदलाल रघुलाल॥ १४॥

तिनसों कह्यो मोर पितुभूपा। भेद न राम कृष्णके रूपा॥
हरिगोविंदहि स्वप्नहि भाखे। जौन भेद श्रुति तुम कहिराखे॥
तेहि नृप जो अस अर्थहि करिहैं। तुमहिं न उत्तर बहुरि उधरिहैं
राम कृष्णके रूप न भेदा। यह सिद्धांत पुराणहु वेदा॥
एक समय बरसे नाहिं मेघा। तब नृप गायो रागहि मेघा॥
भई वृष्टि भे प्रजा सुखारी। फूटि चली सब सेतु कियारी॥
नाम छत्रपति राव कसोटा। विना पुत्र दुख भो तेहिं मोटा॥
तिनसों पितु कह पुत्रहि होई। भयो पुत्र देख्यो सबकोई॥
एक समय महँ काशिनरेशा। करि देवी भागवतहि वेशा॥
विश्वनाथके निकट पठायो। यह भागवत सत्य अस गायो॥
दुर्जन मुखचपेटिका नामा। ग्रंथ पढ़ायो अतिहि ललामा॥
पितु किय चंडभास कर ग्रंथा। श्रीभागवत सत्य सतपंथा॥

दोहा—काशी सो पठवायदिय, सब पंडित तेहि बांचि॥
श्रीभागवतहि सत्य किय,नृप प्रमाण मन रांचि॥१५॥

एक समय भइ वृष्टि विशाला। बढ़्यो सोननद महा कराला॥
उतरि गये पाँयन विशुनाथा। भयो बहुरि गंभीरहि पाथा॥
गये अवधपुर कौनेहुँ काला। जपे राम मनु गहि द्विजमाला॥
सरयू मज्जन हेतु सिधारा। बहे भूप लहि दारुण धारा॥
कोश तीनि लग कियो पयाना। नहिं छूट्यो सीतापति ध्याना॥
आकस्मातमिल्यो तहँ दीपा। खड़े भयेहैं सुमिरि महीपा॥

दियो दक्षिणा द्विजन समाजा। पुनि आये पितु तीरथराजा ॥
रोंके सब अँगरेज़सिपाहीं। कर दीन्हे विन कोउ न नहाहीं ॥
पितु जेहि थल महँ जाय नहायो। वेणी क्षेत्र तहां चलिआयो ॥
यह सुनिकै अँगरेज़ विचारी। माफी दीन्ह्यो आठ हजारी ॥
तब पितु गंगाष्टकहि बनायो। ताहि सुनावत जल बढ़ि आयो॥
बांधौ गिरि बघेलगढ़ गूढ़ो। होतो जाहि तकत रिपु मूढ़ो ॥
रही गुप्त गंगा तेहिं माथा। तेहि प्रगटायो पितु विशुनाथा ॥
दोहा—दिल्ली नगर समीपमें, एक महीपकुमार ॥
जस जस कियो उपाय सो,तस तस भयो बेजार॥१६॥
तेहिं कह गोविंदलाल गोसांई। मानहु विश्वनाथ हरि नांई॥
सो किय सकल यही उपचारा। तुरत पुत्रभो रहित विकारा ॥
गंगापार एक द्विज हेरी। गर्भ गिरै असि गति तियकेरी ॥
विश्वनाथको सो कछु मान्यो। भयो पुत्र पुनि भयो सयान्यो ॥
ते दोउ चलि विशुनाथहि नेरे। मुंडन किय निज पुत्रन केरे ॥
औरहु चरित अनेकन तिनके। कहौं कहां लगि भणित कविनके
खास कलम युगलेश प्रवीना। कियो जो ग्रंथ उदोत नवीना ॥
नामचरित विशुनाथ विलासा। तिनमें सब युगलेश प्रकाशा ॥
रचे जितेक ग्रंथ पितु मोरा। राम परंतुहि शास्त्र निचोरा ॥
साधु सुबुद्धि सबै हरिदासा। ते मम पितु सों जौन प्रकाशा ॥
सब वैष्णव मतते अविरुद्धा। रच्यो ग्रंथ सिगरे पितु शुद्धा ॥
राम कृष्णके रूप अभेदा। यह प्रतिपादक संमत वेदा ॥
दोहा—ते ग्रंथनके नाम सब, रचि छप्पय कमनीय ॥
मैं वर्णौं यहि ग्रंथमें,सुनहु साधु रमणीय ॥ १७ ॥
छप्पय—विनयमाल रचि प्रथम फेरि आनँद रामायन ॥
गीतावलि नाटकौ अनँद रघुनंदन चायन ॥

शांतशतक व्यंग्यप्रकाश कृष्णावलि काहीं ॥
नीति ध्रुवाष्टक वृहद एक लघुनीति उछाहीं ॥
अरुश्रीकबीर वीजक तिलक,धर्मशास्त्र चौखंड किय॥
हनुमतपैंतीसिसिकारके,कवितरच्योअतिमुदित हिय
कुंडलिया चौंतीसि तत्त्व परकाश बखान्यो ॥
ग्रंथ विचार सुसार धनुषविद्याको ठान्यो ॥
वरग जलाशय विधिहु वीछि सर्पादि मंत्र पुनि ॥
वैद्यक पाकविलास और बहु अष्टक किय गुणि॥
ब्रज जिवनगोसांई नामको, रच्यो गीत रघुनंदनो ॥
परम प्रमोद विधुनाटकौ,कृष्णाह्निक भाषा बनो॥२॥
राधावल्लभ भाष्य सर्व सिद्धांत सुहायो ॥
रामाह्निक करि ग्रंथ संगित रघुनंदन भायो॥
गुरुग्रंथ सुमारग तिलक तिलक अध्यात्महु केरो ॥
वाल्मीकि संदर्भ भागवत तिलक घनेरो ॥
ये रच्यो ग्रंथ संस्कृत शुभग माधव गायक नामवर॥
वरण्यो भुशुंडि रामायणौ भाषामें सुखप्रद सुघर॥३॥

दोहा–धनि धनि अवध नगर प्रजा, पशु पक्षीजन व्रात ॥
भजनावलि यक ग्रंथ लघु,रच्यो नाथ अवदात॥१८॥
संवत वोनइस सै शुभग, आयो ग्यारह साल ॥
मास अषाढ़ चतुर्दशी,पितु ज्वर भयो कराल॥१९॥
तेहिं दिन देख्यो स्वप्न पितु, गायक काशीनाथ॥
आय कह्यो कछु आपको, हुकुम दियो रघुनाथ॥२०॥

यह तनु त्यागि दिव्य वपुपाई। वसहु रासमहँ अब तुम आई ॥
यह लखि स्वप्न पिता सुख मान्यो।भोरहिं मोहिं बोलाय बखान्यो॥

अव तुम करहु राज्य संभारा । करि भरोस दशरत्थ कुमारा ॥
अवैन करहु दरश जगदीशा । जाहु विते कछु दिन बिसवीसा॥
अब यात्रा साकेत हमारी । करहु न कछू सोच उर भारी ॥
जो वियोग को कछु दुख मानो । तौ उपाय तुमहूँ अस ठानो ॥
दियो जो गुरू मंत्र तुमकाहीं । जपहु नेम करि ताहि सदाहीं ॥
तौ हम तुमहिं मिलब साकेतै । तहँ जानहु हमार संकेतै ॥
साधुनमें कीन्हेहु भल प्रीती । रहेहु स्वतंत्र गुनेउ नहिं भीती ॥
लोक हेतु जो कह अँगरेजू । सो मानेहु गुणि रघुवर तेजू ॥
रामकृष्ण कर कियो भरोसा।दिहेहु दंड नहिं गुणि विन दोसा ॥
दान द्विजन साधुन सम्माना । यही मुक्तिको पंथ प्रमाना ॥

दोहा—यहि विधि मोहिं उपदेश करि,सिखै भजन की रीति ॥
झिरियाते रीवां गये, करि न कालकी भीति ॥ २१ ॥

यक दिन इक वैष्णव तहँ आयो। परमहंस निज नाम सुनायो ॥
तेहिं देखत पितु कह्यो कवीरा । भलो कियो आयो मतिधीरा॥
सो कह साहेब हुकुम चलनको ।तुम कस वैठे जगत् मिलनको॥
तुमहिं लेवावन हम इत आयो । जसआगम निदेशमहँ गायो ॥
पितु कह चलिहौं संशय नाहीं ।सो सुनि गयो साधु घरकाहीं ॥
फेरि मोहिं पितु निकट बोलायो। दै मुद्रिका सु वचन सुनायो ॥
रामरजाय शीश धरि लेहू । करहु राज्य अब विन संदेहू ॥
अस कहि भे पुनि मौन विज्ञानी। रहे वैठि हरिध्यानहि ठानी ॥
जपत सुरामकृष्ण कर माला । अर्धोन्मीलित नयन विशाला ॥
संवत वोनइस सै इग्यारा । कातिक मास रह्यो भृगुवारा ॥
कृष्णपक्ष सप्तमि जव आई । डेढ़ पहर आये दिनराई ॥
तब तनु तजि पूरुव यश गायो। पितालोक साकेत सिधायो ॥

दोहा–कहत मोहिं पितु चरित सब सज्जन लागति लाज ॥
ताते संक्षेपहि कह्यौं, गुणि संतनको काज ॥ २२ ॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे उत्तरचरित्रेद्वितीयोध्यायः ॥ २ ॥

दोहा–एक भक्तका पुनि कहौं, घन आनँद इतिहास ॥
घन आनँदहै नाम जिन, सुनत हरत भवत्रास ॥ १ ॥

मथुरापुरी मलेच्छन घेरे । लाखों यमन खड़े चहुँ फेरे ॥
कारण तासु सुनो अब सोई । दिल्लीमें शहिज़ादा कोई ॥
एक समय मधुपुरी सिधायो । सबै मथुरियन हास बढ़ायो ॥
पनहीको रचिकै यक माला । डार्‌यो शहिजादाके भाला ॥
सो प्रकोपि निज कटक बोलायो । चहुँकित मथुरापुरी घेरायो ॥
दीन्ह्यो हुकुम नगरमहँ जेते । अब बचि जायँ जियत नहिं तेते ॥
मारनलगे मलेच्छ प्रचारी । बचे न माथुर भटहु भिखारी ॥
घनआनँद वंशीवट पाहीं । बैठे रहे भावना माहीं ॥
राधामाधवके मधि रासा । सखी रूप छवि पीवन आशा ॥
हाथे लीन्हे रहे सुखारी । तेहि क्षणमें भावना पसारी ॥
सोइ सुखारी करमें लीन्हे । दिन रजनी विताय सब दीन्हे ॥
सोइ भावना महँ गिरिधारी । बीरी दीन्ह्यो पाणि पसारी ॥

दोहा–सोइ वीरी मुख मेलियो, लगे मुरावन सोय ॥
सोइ बीरीको रागमुख, प्रगट लख्यो सबकोय ॥ १ ॥

मुखमें भरि आयो जब बीरा । तबहिं ध्यान छोड़्यो मधिधीरा ॥
तेहि अवसर मलेच्छ तहँ आई । मारे खड्ग शीश महँ धाई ॥
उदकि गयो सो खड्ग न कार्‌यो । तब पुनि मारि ताहि अति डार्‌यो
तदपि कटी नहिं तिनकी देही । तब घनआनँद कृष्ण सनेही ॥

कही पुकारि कृष्ण सों वानी। यह तैं कौन रीति अब ठानी॥
मोको भूरिमारहै देहू। यत्न कियो छूटै नहिं केहू॥
कौन हेतु राखत संसारा। क्यों न बोलावै नंदकुमारा॥
यदपि तजन तनु यत्नहु लाग्यो। तदपि न तैं उधार अनुराग्यो॥
कह्यो यमनकहँ पुनि गोहराई। अबकी मारहु शिर कटि जाई॥
हन्यो यमन अस कटिगो शीशा। सब यमनन विमान नभ दीशा
घनआनँद तनुकढ्यो न लोहू। सो चरित्र लखि पऱ्यो न कोहू॥
ब्रजमें विदित कथा यह सारी। संक्षेपहि इत लिख्यो विचारी॥
घनआनँदके विपुल कवित्ता। अबलों हरत कविनके चित्ता॥
घनआनँदकी कथा अनेका। ब्रजमें विदित अहै सविवेका॥
जाहि सुननको होय हुलासा। करै सो जाय विमल ब्रजवासा॥

दोहा—यह घन आनँदकी कथा,वर्णन कियो समास॥
औरहुभक्तनकी कथा, नेसुक करौं प्रकाश॥ २॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यां कलियुगखंडेउत्तरचरित्रेतृतीयोऽध्यायः॥ ३॥

दोहा—विदित जासु जगमें सुयश, परमहंस अवतंश॥
जेहि मुख ज्ञान उदोत रवि, किय अज्ञान तम ध्वंश॥

चित्रकूटते रामप्रसादा। परमहंस जिनकी मर्यादा॥
रामप्रेम मद मत्त सदाहीं। रहै जगत जानै कछु नाहीं॥
पूरवके राजा कोउ आहीं। लहि सतसंग तज्यो जगकाहीं॥
चित्रकूट महँ कराहिं निवासा। पंडित बड़े शास्त्र सब श्वासा॥
तुलसी कृत रामायण देखी। कियो तासु अभ्यास विशेखी॥
और सकल पुस्तक दै डारे। तुलसी कृत महँ प्रीति पसारे॥
नीचहुँ जाति जो बांचै कोई। बैठैं जाय अवशि मुदमोई॥

यहि विधि कालक्षेपको करते। चित्रकूट निवसे सुख भरते॥
रहै शिष्य यक नरहरिदासा। चुटकी मांगै भोजन आसा॥
चुटकी मांगि मांगि नित लावै। रामप्रसाद सुसाधु खवावै॥
अन्न भवन महँ बचै न बासी। जो आवै तेहिं देहि हुलासी॥
सावन मास कबहुँ अधराता। वर्षै रहे घन घेरि अघाता॥
दोहा—कुटी निकट अवसर तहाँ, आये संत पचाश॥
जय जय सीताराम अस, बोले भोजन आश॥ १॥
परमहंस सुनि संतन बानी। नरहरिसों बोल्यो मतिखानी॥
ढूंढ़ि भवन महँ भोजन देहू। संत निराश फिरैं नहिं केहू॥
नरहरि कह्यो कछू घर नाहीं। भीतर का ढूंढ़न हम जाहीं॥
रामप्रसाद कह्यो तू जावै। जो पावै सु ढूंढ़ि लै आवै॥
नरहरि कह्यो कहहु तुम कैसो। होय नदेहु होय कहुँ ऐसो॥
रामप्रसाद कह्यो तू जावै। कछु नहिं पावै तो फिरि आवै॥
तब नरहरि उठि भीतर गयऊ।अन्न विविध विधि देखत भयऊ॥
बनी मिठाई विविध प्रकारा। पय दधि साकहु अन्न अपारा॥
सिता लवण घृत ईंधन ढेरी।लखि विस्मित मति भइ तेहिं केरी॥
लौटि परयो पद बोल्यो बैना। नाथ उतै कमती कछु हैना॥
रामप्रसाद साधु सब बोली। दियो केंवार कोठरी खोली॥
संतन कह्यो लेहु मन जोई। रामप्रताप कमी नहिं होई॥
दोहा—साधु सबै परि चरण युत, लिय जितनो मनकीन॥
भोजन करि मोदित भये, पथ हित औरहु लीन॥२॥
कमी कोठरी भै नहिं साजू। भोर संत गे सहित समाजू॥
कोऊ तासु भेद नहिं जाने। सुनि सुनि सब अचरज मन माने॥
एक दिवश श्रीरामप्रसादा। जानन हित कामद मर्य्यादा॥
उपर गवनहित गिरि चढ़ि चलेऊ। बीचहिं संतरूप हरि मिलेऊ॥

कह्यो कवन हित उपर सिधारो। क्यों गिरिकी मर्य्याद बिगारो॥
रामप्रसाद कह्यो नहिं मानो। चल्यो शैलके उपर तुरानो॥
गयो एक तरुवरके मूला। गिर्‌यो पषाणहि उखरी कूला॥
चलन समर्थ रही कछु नाहीं। तब संशय उपजी मनमाहीं॥
तब सोइ साधु फेरि प्रगटाना। कहत भयो कछु कहो नमाना॥
रामप्रसाद विलखि अस गायो। नहिं मान्यो ताको फल पायो॥
तब सो ओषधि दियो लगाई। जसकी तस समरथ ह्वै आई॥
फेरि साधु भो अंतर्धाना। रामप्रसाद गुन्यो भगवाना॥
दोहा—आय मिले हरि मोहिं इत, जान्यो नाहिं अयान॥
अस कहि रामप्रसाद तहँ, कीन्ह्यो रुदन महान॥३॥
तब पुनि साधुरूप हरि आये। रामप्रसाद कह्यो परि पाये॥
तुमहौ राम मिले करि दाया। हरहु मोर ममता मद माया॥
तब प्रभु लीन्ह्यो अंक लगाई। तैं हसि मोर परम प्रिय भाई॥
अब कछुक दिन जनन उधारो। अंतकाल ममधाम सिधारो॥
अस कहि हरि निज रूप छिपायो।रामप्रसाद धाम निज आयो॥
चित्रकूट महँ कियो निवासा। रामभक्तिको करत प्रकाशा॥
करहिं अर्थ रामायण केरे। जुरहिं सुनन हित संत घनेरे॥
रामभक्तिकर करि उपदेशा। करवावहिं दृढ़ भक्ति प्रवेशा॥
मज्जहिं मंदाकिनि नित जाई। निज कर करि कैंकर्य सदाई॥
करहिं रामरस रोजहि पाना। यहि विधि नियरायो निरजाना॥
जब कछु रोग शरीरहि आयो। तब चढ़ि ऊंच गेह गोहरायो॥
जय जय सीताराम सुशोरा। छायो चित्रकूट चहुँ ओरा॥
दोहा—फूटिगयो ब्रह्मांडतोहिं,गयो रामके धाम॥
वरण्यो रामप्रसादको,यह मैं चरित ललाम॥ ४॥
इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजरघुराजसिंह जूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरचरित्रेचतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

दोहा–दूजे रामप्रसादको, कहौं शुभग इतिहास ॥
रामायण नैष्ठिक रहे,रह्यो अवधमें वास ॥ १ ॥
रहे उपासक जनकलली के । ध्यान करैं नित तापद हीके ॥
बीतिगयो यहिविधि कछुकाला।बसत अवध में प्रेम विशाला॥
इक दिन सीता दर्शन आसा । सरयूके तट कियो उपासा ॥
भये निरंबु तहँ व्रत साता । प्रगटी जनकलली विख्याता ॥
निज कर बिंदु दियो तेहिं भाला।सो नहिं मिट्यो परे जलजाला॥
तासु संपदा महँ अबलोहूँ । भाल बिंदु जाहिर सब कोहूँ ॥
जेहिं क्षण सीता दर्शन पाये । तेहिं क्षण उठि आसन कहँ आये॥
भये तासु पद सत्य सनेही । तन मन आर्पि दियो वैदेही ॥
यक दिन सरयू बाढ़नलागी । उठे न सीयचरण अनुरागी ॥
तहँते कोशन जल बढिगयऊ । रामप्रसाद परश नहिं भयऊ ॥
देखि सबैं अति अचरज माने । सीय अनन्यभक्त पहिचाने ॥
दोहा–सुनहु और गाथा विमल, जेहि विधि रामप्रसाद ॥
हनुमत सों रामायणहि, पढ़्यो सहित अहलाद ॥२॥
बाई इक दक्षिणते आई । रामप्रसाद चरण शिरनाई ॥
कै शंका पूछ्यो यहि भांती । लिखी जो सुंदर कांडहि पाती ॥
श्याम सरोज दाम सम सुंदर। प्रभुभुज करिकर समदशकंधर॥
इहां वीरताको नहिं खोजू । कौन हेतु कह श्यामसरोजू ॥
भवन एक अति दीख सुहावा। हरिमंदिर तहँ भिन्न बनावा ॥
रामनाम अंकित गृह, सोभा वरणि नजाय ॥
नवतुलसीके वृंद तहँ, देखि हर्षि कपिराइ ॥ ३ ॥
रह्यो शपथ रावणको ऐसो । रहै जगतमें धर्म न कैसो ॥
लंका मध्य विभीषण मंदिर । राम नाम अंकित किमिसुंदर ॥
कियो युगल शंका जब बाई । रामप्रसाद सके न बताई ॥

राजापुरकहँ सो चलि आये । संकटमोचन पद शिरनाये ॥
कियो तीनि व्रत हनुमत नेरे । अंतर्ध्यान पवनसुत टेरे ॥
कहहु कवन हित करौ उपासा। रामप्रसाद कह्यो सहुलासा ॥
समाधान कै शंका केरो । अवहीं देव बताय निवेरो ॥

दोहा—तुलसी कृत रामायणौ, तुम सब देहु पढ़ाय ॥
तौ जनु दीन्ह्यों दान जिय, पवनपूत कपिराय ॥ ४ ॥

पवनपूत तव वचन वखाना । समाधान सुनिये मतिवाना ॥
मानसरोवर रावण आयो । दुर्वासा तहँ ध्यान लगायो ॥
रावण इंदीवर्ण उखारचो । दुर्वासा तव नयन उघारचो ॥
कह सकोप रावणसों वानी । वृथा बिगाऱ्यो उत्पल खानी ॥
मानसरोवर मुनिन विहारा । इंदीवरहै मीचु तुम्हारा ॥
विदित सीय कह यह सव हेतू । ताते भुज उपमा कहिदेतू ॥
दूसर समाधान अब सुनिये । यामें कछु संदेह न गुनिये ॥
रावण जीत्यो इंद्रहि जाई । लूटि भंडार लंक महँ भाई ॥
नाती सुतन वस्तु सव दीन्ह्यो । प्रभु वराह मूरति यक चीन्ह्यो ॥
दियो विभीषणकाहिं बोलाई । कह्यो विभीषण तव शिरनाई ॥
जो मोहिं देहु तौ अस कहिदीजै । अपने मनकी सव करि लीजै॥
रावण कह्यो करहु चितचाहा । तुम्हैं न होई कछु दुख दाहा ॥

दोहा—तवहिं विभीषण मुदित ह्वै, नवमंदिर बनवाय ॥
राम नाम अङ्कित भवन, दिय वराह पधराय ॥ ५ ॥

धर्म अनेक करन सो लाग्यो । रह्यो नरावणके भय पाग्यो ॥
समाधान ये युगल प्रधाना । विदित सो सरस्वति वायु पुराना॥
कांडनं प्रति वाइस चौपाई । तुलसी कठिन रमायण गाई ॥
सो सब तुमको देव पढ़ाई । राम कृपा औरहु लगिजाई ॥
रामप्रसाद सुनत चितचायन । पवनपूतसों पढ़ि रामायन ॥

आये अवध बहोरि सुखारी। बाईकी शंका निर्वारी ॥
विरच्यो रामायणको टीका। अवध माहँ अवलों है नीका ॥
अवध माहँ वसिकै बहुकाला। गावत राम नाम गुण माला ॥
काल पाय ध्यावत रघुवीरा। गो वैकुंठहि त्यागि शरीरा ॥
रघुपति रसिक धन्य जग प्रानी। गावत जासु सुयश सुखदानी
धन्य धन्य संतन गुणगाथा। जेहिं गावत जन होत सनाथा ॥
श्रोता तुमहु धन्य सब कोऊ। संत कथा जाकी रुचि होऊ ॥

दोहा—संत रामपरसादके, अहैं अमित इतिहास ॥
मैं समास वर्ण्यों इतै, सुनहु सबै सहुलास ॥ ६ ॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीराम
रसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरचारित्रेपंचमोऽध्यायः॥५॥

दोहा—अब श्रीहरिगुरु नाम जेहिं, नाथ मुकुंदाचार्य्य ॥
तासु चरित वर्णन करौं, साधक सिगरो कार्य्य ॥१॥

श्रीहरिगुरु मुकुंद मम स्वामी। कृपापात्र विनतासुत गामी ॥
जगजीवन लखि परम अनाथा। प्रगटे कनउज देशहि नाथा ॥
कछुक कालमें भयो विरागा। हरिपदमें उपज्यो अनुरागा ॥
कुल परिवार गेह तजि दीन्ह्यो। कछु दिन गंगा सेवन कीन्ह्यो॥
पुनि अस मन विचार किय नाथा।दरश करहुँ नीलाचल नाथा॥
करत पर्यटन देशनमाहीं। देत ज्ञान बहु लोगन काहीं ॥
नीलाचल कहँ गये कृपाला।दरशन लै जन भये निहाला ॥
लै दरशन जगदीशहिं केरो। बसे सहित आनंद घनेरो ॥

दोहा—तहँ श्रीराज गोपाल गुरु, निज ढिग प्रभुको आनि ॥
कियो समाश्रय मुदित मन,महत् पुरुष पहिचानि॥२॥

तहां नाथ कछु कालहि माहीं। पढ्यो निखिल वेदांतन काहीं॥

इतिहासन पुराण प्राचीने। औरहु भक्ति ग्रंथ पढ़िलीने ॥
सेवन करहिं सो महाप्रसादा। रहहिं यकांत सहित अह्लादा ॥
हरिविमुखन कहँ करि उपदेशा।दियो प्राप्ति करि श्रीपति देशा॥
सिखवत जनन भक्तिकी रीती। यहि विधि गयो काल कछु बीती
श्रीगुरुराज गोपाल विज्ञानी। यह अपने मनमें अनुमानी ॥
सब आचार्यन निकट बोलायो। सभा मध्य अस वचन सुनायो
मम स्थान अधिपके लायक। कियो मुकुंदहि श्रीरघुनायक ॥

दोहा—कृपापात्र जगदीशके, येहैं ज्ञान अगार ॥
इन्हैं सौंपि दीबो उचित, और न कछू विचार ॥ १ ॥

सो सुनि सब सम्मत यह कीन्हे। पदवी आचारजकी दीन्हे ॥
कह्यो बहुरि तिनको गुरुज्ञानी। यह ऐश्वर्य लेहु गुणखानी ॥
सो न लियो गुरु आयसु मांगी। ह्वांते चले कृष्ण अनुरागी ॥
आये तीर्थराज महँ नाथा। तहां कियो बहु जनन सनाथा॥
पुनि बदरीवन कहँ प्रभु जाई। रहे तहां कछु दिन चित लाई॥
हरिद्वार लोहितपुर ह्वैकै। नैमिष कुरुक्षेत्र थल ज्वैकै ॥
अवधपुरी औ जनकनगरमहँ। कियो वास एकांत सो थलमहँ॥
पुनि मथुरा कहँ गये कृपाला। तहां कियो सत्संग विशाला॥

दोहा—तहँ मम पितु गुरु नाम जेहिं, प्रियादास मुनिराज ॥
ब्रजमंडल विचरत मिले, लेसँग संत समाज ॥ ४ ॥

प्रियादास बोले वरज्ञानी। तुमहौ सकल ज्ञानके खानी॥
भनहु भागवत कर सप्ताहा। सब संतन मधि होय उछाहा ॥
सो सुनि मुदित कीन आरम्भा। रचि तहँ सप्तलोकको खम्भा॥
तामें शुक यक बैठ्यो आई। अरु यक अहि तहँ पर्‍यो दिखाई॥
तिन लखि प्रियादास कह बानी।कथा सुनन आये दोउज्ञानी ॥
तब अहि आयखम्भपै लपट्यो। यदपि भक्ष पै शुकहि नझपट्यो

होत अरंभ निते दोउ आवैं। कथा समाप्त भये दोउ जावैं॥
जब सप्ताह समापत भयऊ। तेहिं दिन दोऊ तनु तजि दयऊ॥
दोहा–यह अचरज लखि संत सब, मुक्त गुण्यो दोउ काहिं॥
हरिगुरुकी प्रियदासकी, स्तुति करी तहांहिं॥५॥
कछु दिनवसि तहँफेरिकृपाला। गंगातट कहँ चले उताला॥
यक थल ब्रह्मशिला जेहिं नामा। गंगातट सुंदर सुखधामा॥
ताके निकट बसे प्रभु आई। पुरवासी सब खबरिहि पाई॥
आये सकल किये परणामा। दरशपाय पूजे मन कामा॥
कह्यो न यह थल निवसन योगू। इहां न आवहिं दिवशहुलोगू॥
रहत ब्रह्मराक्षस यहि ठामा। महा भयानक तनु छुत छामा॥
जो कोउ वसत इहां दिन राती। मारत तेहि प्रत्यक्ष चढ़िछाती॥
चलहु वेगि वसिये यहि ग्रामा। करहु पवित्र सकल जन धामा॥
दोहा–विहँसि कह्यो प्रभु अब अवशि, करिहौं यहीं निवास॥
सब थलमें निवसत सदा, रघुपतिरमा निवास॥६॥
ब्रह्मशिला माधि अयन पुरानो। रहत रह्यो तहँ ब्रह्म महानो॥
तहँ बास कीन्ह्यो प्रभु जाई। अतिरमणीय देखि सुखपाई॥
तहां ब्रह्मराक्षस निशिआयो। प्रभुहिं निरखि हर्षित गोहरायो॥
कियो कृतारथ मोहिं कृपाला। वसहु नाथ यहि धाम विशाला॥
यहि थलमहँ बाँचहु सप्ताहा। मोहिं तारिदीजै मुनिनाहा॥
सुनत वचन दाया उर आई। दियो ताहि सप्ताह सुनाई॥
सुनत ब्रह्मराक्षस गति पाई। पुरवासिन उर विस्मय आई॥
शरणागत भे सब जन आई। लहे अंत ते पद यदुराई॥
दोहा–यहि विधि प्रभुके वसत तहँ, सूर्य प्रसादहि नाम॥
आयो प्रभुके निकट सो, जान चहत हरिधाम॥७॥
कह्यो नाथ सो मोहिं गति देहू। बांचि भागवत यह यश लेहू॥

प्रभु कह श्रम ह्वैहै अति मोको । कौन प्रकार सुनैहौं तोको ॥
द्विज कह तुम्हैं श्रमै भरि ह्वैहै । मेरो तो सब विधि बनिजैहै ॥
सोसुनि करुणा करि मम नाथा । किय अरंभ सताह सुगाथा ॥
रह्यो सात दिन निर्जल द्विजवर । ह्वै यकाग्र ध्यायो पद यदुवर॥
सतयें दिन शरीर तजि दीन्ह्यो । द्विजको मुक्ति जानि जन लीन्ह्यो
कबहुँ गंग मज्जन हित स्वामी । गमने ध्यावत अंतर्यामी ॥
तहां मृतक यक बालक लीन्हे । तासु जनक जननी दुख भीने॥

दोहा—देखि नाथको रुदन करि,गहे कमल पद जाय ॥
कह्यो राखिये वंशमम,दीजै याहि जिआय ॥ ८ ॥

प्रभुकह मृतक नहै यह बालक। ह्वैहै यह तुवकुलको पालक ॥
देख्यो वसन टारि मुखताको । रोवत लखि फल गुन्यो कृपाको॥
सुतको लै जननी गृह आई । बजन लगी आनंद वधाई ॥
ऐसे चरितन करत अपारा । ब्रह्मशिला महँ वसे उदारा ॥
तहँ लक्ष्मी प्रपन्न विज्ञानी । भयो समाश्रित प्रभु पहिचानी ॥
प्रभु पढ़ाय भागवत पुराना । दीन्ह्यो ताहिं विमल विज्ञाना ॥
सो विचरत विचरत महि माहीं। आयो रींवा नगरहि काहीं ॥
सो सुनि मो पितु आदर करिकै।राख्यो निज भवनहिंमुदभरिकै॥

दोहा—सो प्रभुके सब चरित वर,दीन्ह्यो पितहिं सुनाय ॥
सो सुनि तिनके दरशको, कीन्ह्यो मन हरषाय ॥९॥

मम पितु कह लक्ष्मी प्रपन्नसों।आवहिं केहि विधि ह्वै प्रसन्न सों ॥
जबलगि वैनहिं ममपुरआवहिं।तबलगिकेहिं विधिसुतहरिध्यावहिं
सो कह तबलगि मैं उपदेशू । करिहौं राउर मानि निदेशू ॥
इमि कहि मोहिं दैकै कछु ज्ञाना।गमन कियो पुनि पुर भगवाना॥
द्विज रघुवर प्रपन्न मतिधामा । यथा लाभ महँ पूरण कामा ॥
ताको मम पितु दीन निदेशू । स्वामी कहँ आनहु मम देशू ॥

सो कह मैं अवश्य लै ऐहों। तुव मन कामहि पूर करैहों॥
असकहि द्विज गमनेउ हर्षाई। प्रभुसों कह दीनता देखाई॥
दोहा—रीवां नगर नरेश प्रभु, नाम जासु विशुनाथ॥
सो चाहत दर्शन करन,चलि तहँ करिय सनाथ॥१०॥
सुनि रघुवर प्रपन्नके वयना। आयसु दियो नाथ मुद अयना॥
नृपति नगर गमनहुँ मैं नाहीं। पै नृपप्रेम सोच मन माहीं॥
रीवांनगर विशेष सिधैहौं। भक्त भूपको दर्शनदैहौं॥
अस कहि करि दाया मम नाथा। आय सवन दीन्ह्यो मुदगाथा॥
वर हरिमंदिर लक्ष्मण वागा। वसे तहां युत हरि अनुरागा॥
पितु मम जाय दरश तहँ लीन्हे।भमहित विनय वचन कहिदीन्हे
प्रभु प्रसन्नह्वै कह शुभ वानी। तुव सुत कह यहि थल मष ठानी
विधिपूर्वक चक्रांकित करिहौं। दै हरिमंत्र मोद उर भरिहौं॥
दोहा—संवत अष्टादश शतै, अठानवहिको साल॥
कातिक शित एकादशी, दियमोहिं मंत्र विशाल११॥
औरहु जे मम बंधु अपारा। करिकै कृपा तिनहिं उद्धारा॥
मंत्री सुभट आदि मम जेते। प्रभुके शरणागत भे तेते॥
सोनभद्र तट देश नवेला। तहां वसैं वहु अबुध ववेला॥
तिनके गृहमें यह कुलरीती। हरितजि करहिं प्रेतसों प्रीती॥
सुत व्रत वंधन करहिं निकेतू। मानहिं यही मरणकर हेतू॥
तुलसी पूजहिं विधवा नारी। सधवा डारहिं वेगि उखारी॥
तहां गाँव यक देउरा नामा। वहु गिरि मधि दुर्गम वह ठामा॥
तहां नाथ यक समय पधारे। तिन पर कृपा करन चित धारे॥
दोहा—तहँ प्रभुके दरशन लिये, आये सव यक साथ॥
पाय दरश सुख छायकै, ह्वैगे सवै सनाथ॥१२॥
गई कुमति भइ शुभमति भारी। प्रेमवीज उर वयो मुरारी॥

होन समाश्रय को चित दीन्हे । प्रभुसों विनय वार बहु कीन्हे ॥
तिनकी लखि दीनता महाई । भई दया दिय मंत्र सुनाई ॥
तबते तहँके लोग लोगाई । करनलगे हरिभक्ति सुहाई ॥
अनाचार सब तजि तिन दीन्हे । ज्ञानवान ह्वै हरिकहँ चीन्हे ॥
पुनि देवराधिप सुवन बोलाई । दै शासन व्रतबंध कराई ॥
मेटी मरण भीति तिनकेरी । तिनपै कीन्ही कृपा घनेरी ॥
पुनिरींवा नगरहि प्रभु आये । बसत तहां कछु काल बिताये ॥

दोहा—यक दिन मज्जन करन सरि, गयो पुजारी प्रात ॥
अति कराल तहँ व्याल बड़, डस्यो करन जिय घात १३

गिरचो आय सो प्रभुपद पाहीं । कह्यो नाथ रक्षहु मोहिं काहीं॥
प्रभु कह यहि हरिमंदिर माहीं । सोचहि मति लगिहै विष नाहीं॥
नेकहुँ विषनहिं तेहि सरसानो । हरिपूजन लाग्यो हरषानो ॥
लिय बचाय द्विजके इमि प्राना।यहि विधि चरित कियोप्रभुनाना॥
पुनि जगदीश पुरी कहँ जाई । हरिदर्शन किय आनँद छाई ॥
पुनि दक्षिण यात्रा प्रभु कीन्ह्यो । दिव्य मूर्तिके दर्शन लीन्ह्यो॥
रंगनाथ प्रभु प्रथम पधारचो । पुनि तोतादिक जाय निहारचो॥
करत करत तीरथ बहुतेरे । पहुँचे पद्मनाभके नेरे ॥

दोहा—तहां रह्यो यक देशमें, रामराज जेहिं नाम ॥
सो प्रभुपदहि प्रणाम करि,मांगी भक्ति ललाम॥१४॥

ताहि भक्ति शिक्षा दै स्वामी । तहँते चले सुमिरि खगगामी ॥
विचरत विचरत पुनि यहि देशू। आये करत ज्ञान उपदेशू ॥
ग्राम अमर पाटन जेहिं नामा । तहँ जब आये पूरण कामा ॥
तहँ मैं जाय विनय बहु करिकै।लायो निज पुर प्रभु पद परिकै॥
विनय करी करजोरि बहोरी । राज्य करनकी नहिं मति मोरी॥
तब प्रभु कह छोंड़हु दुचिताई ।श्रीपति कृपा सबै बनिजाई ॥

मोहुसम लहि प्रभु कृपा महाई । राज्य भार शिर लियो उठाई॥
मोपर करिकै कृपा कृपाला । लक्ष्मणबाग रहे कछु काला ॥
दोहा—तुलसीरामहि वैद्य सुत, राधेकृष्णहि नाम ॥
तेहि सुत रघुनंदन भये, बालहि ते मतिधाम ॥ १५ ॥
भयो समाश्रित प्रभुपद जाई । पढ्यो भक्ति मारग सुखदाई ॥
एक समय तेहिं रोग सतायो । सन्निपात भो बोलि न आयो ॥
तब स्वप्नहिं द्वै पुरुष बताये । बचिहैं नाहिं बिन गुरु ढिग जाये॥
तेहिं घरके तेहिको धरि याना । प्रभु समीपको किये पयाना ॥
ताको प्रभु समीप धरि दीन्हे । करि रोदन विनती बहु कीन्हे ॥
प्रभुके दरशन पावत सोई । उठि कह अब मोहिं कछू नहोई ॥
गई व्याधि मिटि रही नथोरी । लहि आयसु गृह जैहौं दोरी ॥
अस कहि रघुनंदन घर आयो । तेहिं परिवार लोग सुख पायो॥
दोहा—पुनि मम अंतहपुर महल, होत रहै यह हाल ॥
प्रसव भये दिन चारिमें, नारि होहिं वश काल ॥६॥
यहि विधि भईं मृतक त्रय नारी । तब प्रभु दासन आरतहारी॥
जानि समय निज निकट बोलाई । राख्यो लक्ष्मण बाग टिकाई॥
नाथ कृपा प्रसवहिके काला । ग्रस्यो न तियको काल कराला ॥
आनँद सहित नारि गृह आई । मेरे गृहमें बजी बधाई ॥
पुनि कछु काल वसे पुरमाहीं । करत कृतारथ मम कुल काहीं॥
रामायण भागवत सुनाई । दीन्ही भक्ति राह दरशाई ॥
रामकृष्णको कीर्त्तन शोरा । मच्यो बघेल खंड चहुँ ओरा ॥
पुनि हरिगुरु कछु काल बिताई । गमने ब्रह्मशिला सुख छाई ॥
दोहा—कछुक काल लगि नाथ मम, ब्रह्मशिला सुखधाम ॥
सुरसरि तट निवसत भये, सब विधि पूरण काम १७॥
मैं पुनि गयों विते कछु काला ।प्रभुदर्शन करि भयों निहाला॥

प्रभुसों विनय करी कर जोरी। पुरी पुनीत करहु चलि मोरी॥
सुनि मम विनय दियो मुसकाई। कह्यो यकांतहिं मोहिं बोलाई॥
करिहौं मैं उत अवशि पयाना। हरि दासन सबठौर समाना॥
अस कहि प्रभु रीवां पगु धारे। हमहुँ नाथके साथ सिधारे॥
बोनइससै गेरहि कर साला। मधुशित एकादशी विशाला॥
कृष्णप्रपन्न शिष्य कहँ बोली। कह्यो आपनी आशय खोली॥
रामानुज स्वामी निशि आई। मोहिं अस शासन दियो सुनाई॥

दोहा—लीला वैभवमें वसत, बीति गयो बहु काल॥
चलहु त्रिपाद विभूतिको, बोल्यो त्रिभुवनपाल॥१८॥

मैं करिहौं वैकुंठ पयाना। विते बहुत दिन विन भगवाना॥
कृष्ण प्रपन्न कह्यो करजोरी। यह प्रार्थना सुनहु प्रभु मोरी॥
चित्रकूटकी तीर्थ प्रयागा। अथवा ब्रह्मशिला बड़भागा॥
जहां आपुको आयसु होई। तहँ पहुँचैहैं हम सब कोई॥
तब बोले हरि गुरु मुसक्याई। केहिं थलहैं नहिं श्रीयदुराई॥
अपरिछिन्न जो हरि कहँ मानहुँ।मम पयान तो अनत न ठानहुँ॥
कृष्ण प्रपन्न फेरि करजोरी। कह्यो सुनहु विनती यह मोरी॥
केहि दिन आप विकुंठ सिधरिहैं।तहँके वासिनको सुख भरिहैं॥

दोहा—तब कह कृष्णप्रपन्न सों, श्रीहरि गुरु मुसकाय॥
अक्षय तृतियाको अवशि, हम देखव यदुराय॥१९॥

सोइ जब अक्षय तृतिया आई। तब हरि गुरु वैष्णवन बोलाई॥
झांझ आदि बाजन बजवाई। रामकृष्ण कीर्त्तन करवाई॥
एक मुहूरत लग कर जोरी। नयन मूंदि श्रीपतिहिं निहोरी॥
करि मुद्रा संहार तहांहीं। आतम अर्पण करि हरिकाहीं॥
पुनि दोऊ कर नाथ उठाई। कृष्णदूत निज निकट बोलाई॥
अर्चा विग्रह निज शिर थापी। ऊर्ध्व पुंड्र दै प्रभा अमापी॥

शुद्ध कुशासन महँ थिर ह्वैकै। कृपादीठि दासन पर ज्वैकै॥
द्वितिया तिथिको नाथ विताई। उत्तर दिशि पग करि सुखछाई॥
दोहा–रुद्रखंड शशि संवतै, माधव मास अकुंठ॥
अक्षय तृतियाको गये, श्रीहरिगुरु वैकुंठ॥ २०॥
तिनको लहि परताप प्रचंडा। रामानुज सिद्धांत अखंडा॥
यहू देशमें प्रचरो पूरो। नास्तिक वाद भयो सब दूरो॥
प्रभु दासनकी भवकी भीती। मिटी सकल भै हरिपद प्रीती॥
को कृपालु ऐसो जगमाहीं। भवसागर तार्‍यो गहि बाहीं॥
यहि विधि प्रभुके चरित अपारा। वरणि सकहि नहिं मुखहुँ हज़ारा
प्रभु पद पोत पाय मुदमाहीं। तरिहौं मैं भवसागर काहीं॥
श्रीप्रभु पद प्रताप बल पाई। आनँद अंबुनिधै सुखछाई॥
बिन श्रम मैं विरच्यों सुखसारा। हरियश सहित सुमति विस्तारा॥
सोरठा–जय प्रभुपद अरविंद, दरन कठिन त्रयतापके॥
निज जन मनहिंमिलिंद, नित अनंद मकरंद प्रद॥२१
श्रीहरिगुरुको चरित बनाई। दियो कछुक संक्षेप जनाई॥
लघु मति मम प्रभु चरित अपारा। किमि वरणों संयुत विस्तारा
जग मंडल जिन सुयश अखंडा। जासु शरण महँ नाहिं यमदंडा॥
भक्ति शास्त्र आचारज सोई। निज गुरु इव मान्यो सब कोई॥
जिनको सुयश गाय संक्षेपा। धोयो तनु कलिकल्मष लेपा॥
यह संप्रदा सदा चलि आवै। निज गुरु चरित अंत महँ गावै॥
रच्यों यथा मति मैं यह ग्रंथा। नाहिं दूषिहैं जे थिति सत्पंथा॥
मैं नहिं कछू काव्य गति जानौं। निज गति लखि मूरुख अति मानौं
पै सज्जन कीन्हे अति दाया। निज पद रज दै किय शुचि काया
दीन्ह्यो मोहिं निदेश यह नीको। संत सुयश तजि वर्णन फीको॥
ताते संत सुयश निर्माना। कीन्ह्यो कछुक रह्यो जस जाना॥

मैं जो निज अघ करौं बड़ाई । बिते जन्मबहु तउ न सिराई ॥
दोहा—भयो राजकुल जन्म मम, धन यौवन मद घोर ॥
अस पांवर पावन करत, यक वसुदेव किशोर २२॥
सो वसुदेव तनय पद कंजा । जिनको मन मलिंद मनरंजा ॥
तिनके पद भवसागर माहीं । तरणीसम मम तारन काहीं ॥
कौन संत सम दीनदयाला ।सहि दुखदाहि दीन दुख माला॥
तिनको यश वर्णत न अघाऊं । कलि दव जरत सुधा सर पाऊं॥
अबै और सज्जन वर जेते । देखे सुने मोरहू तेते ॥
तिनको सुयश कह्यों नहिं भाई। तासु हेतु मैं देहुँ सुनाई ॥
हरिगुरु चरित समापत करिकै। वर्णव और चरित श्रम भरिकै॥
कवि संप्रदा रीति यह नाहीं । ताते ग्रंथहु अंत यहांहीं ॥
बाकी चरित जे संतन केरे । अतिशय विमल दीखश्रुतमेरे ॥
कहिहौं तिनके चरित सुहावन । वर्त्तमान रसिकावलि पावन ॥
श्रोता तुमसब मोहिं पियारे । जे मम ग्रंथ सुनन पगु धारे ॥
तुम कीन्ह्यो उपकार हमारा । सुन्यो ग्रंथ गुणि शुद्ध अपारा ॥
दोहा—वार वार कर जोरि कै, तुमको करौं प्रणाम ॥
का दीबेके योग्य मैं, राम करै मन काम॥ २३ ॥
बांचि बांचि जो ग्रंथ सुनावै । ताहि प्रणाम मोरि मन भावै ॥
सो मम सुत बंधहु ते प्यारो । सोइ भ्राता गुरु सखा हमारो ॥
तेहिं सम कौन मोर उपकारी । कहै ग्रंथ मम दोष विसारी ॥
जग महँ कौन दोष अस होई । मम करणीते भिन्नहि जोई ॥
पै अस मानस करौं विचारा । सज्जन करत अधम उद्धारा ॥
और चरित संतनके जेते । प्रतिज्ञातहैं मोरहु तेते ॥
तिनको उत्तर संत चरितमें । विरचत हौं विस्तार भरितमें ॥
संत समागम जहँ जहँ होई । तहँ तहँ ग्रंथ कहै सबकोई ॥

मोरे मन अतिशय विश्वासा। कियो ग्रंथमहँ संत प्रकाशा ॥
ताते सादर सुनिहैं संता। जे अनन्यजनहैं भगवंता ॥
करिहैं सादर गान सुजाना। जिनकी प्रीति संत रस पाना ॥
ते संतन पद रज शिर धरिकै। विनय करौं शिर अंजलि करिकै॥
दोहा-दयासिंधु जगबंधु हरि,करुणाकर यदुराज ॥
करहु आपनो जानिकै, शरणागत रघुराज ॥ २४ ॥
इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृते
श्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेषष्टोध्यायः ॥ ६ ॥

दोहा-सादर श्रवनि उदंड अति, लषण उपासक जोय॥
दास उर्मिलाकी कथा, कहत अहौं मुदमोय ॥ १ ॥
प्रथम जन्म ब्राह्मण कुल भयऊ। ग्यारह वर्ष बीति जब गयऊ॥
तबते उपज्यो महाविरागा। कीन्ह्यो गृह कुल संपति त्यागा ॥
लषण उर्मिला पद अनुरागा। अतिहिं अनन्य निरंतर जागा ॥
रह्यो भवन पंजाबहि देशा। विचऱ्यो तहँ कछु काल विशेशा॥
तहँते चल्यो अवधपुर आयो। लषण उर्मिलाके रँग छायो ॥
द्वादश वर्ष कियो तहँ वासा। लषण उर्मिला दर्शन आसा ॥
जबते अवधनगर महँ आये। श्रीकंगालदास सँग पाये ॥
भो कंगालदास कर संगा। तेहिं प्रभाव भो भाव अभंगा ॥
यक दिन कियो विनय तिन पाहीं। देति उर्मिला दर्शन नाहीं॥
हे कंगालदास करु दाया। मिलै दरश अस करहु उपाया ॥
तब कंगालदास मुसक्याई। कह्यो उर्मिलादास बुझाई ॥
रचहु विनय पद त्यागहु लाजा। गावहु जहँ तहँ संत समाजा॥
दोहा-जनकलली करुणावती, दर्शन दैहै तोहिं ॥
मूसानगर विशेषि कै, पुनि तुम मिलिहौ मोहिं ॥१॥

अस कहिकै कंगाल प्रिय, चल्यो अवधपुर त्यागि ॥
आगे ताको चरित मैं, रचिहौं अति अनुरागि ॥ २ ॥
लहि शासन कंगालको, दास उर्मिला हर्षि ॥
यह पद रचिगावनलग्यो, अवध गलिन उत्कर्षि॥३॥
पद—उर्मिलादर्शन माई दे॥लषण सहित सियश्यामलि मूरति
गोर विशाल माधुरी मूरति जानकी पूजन दे ॥
लक्ष्मण नारि स्वभाव कृपालै निज पद सेवन दे ॥
परमउदार हृदयते स्वामिनि भक्ति सनातन दे ॥
दास उर्मिलाकी विनय सुनीजै शरण सुहावन दे ॥१॥
दोहा—यह पद गावै लाज तजि, बागै गलिन विहाल ॥
लगी आश उर मिलहिं कब, दंपति लक्षणलाल॥४॥
यक दिन रामघाट महँ आये। सोइ पद गावत सरयु नहाये ॥
कनक भवन कहँ चले नहाई। बीच मिली तिय सहित कसाई॥
राम राम कहि लखि मुख फेरा।भयो अशुभ मोहिं आजु सबेरा॥
लियो कसाई तेहिं पछिआई। पाछू पति आगू तिय आई ॥
दूरि दूरि रहु अस मुख भाषै। मोहिं मति छुवै ताहि अति माषै॥
तब तिय कह्यो कौन तैं अहई। का गावै का मनमहँ चहई ॥
जो तोहिं कह्यो दास कंगाला। ताको फल पायो यहिं काला ॥
तब प्रभुके उपज्यो उर ज्ञाना। लषण उर्मिला दोहुँन जाना ॥
परचो चरणमहँ रोय पुकारी। हाय नाथ सुधि कियो हमारी॥
पुनि सँभारि बोल्यो करजोरी। सुनहु नाथ विनती असि मोरी॥
रही भावना अस मम नाहीं। युगलरूप जस लख्यों इहांहीं ॥
पुरवहु नाथ मोरि अस आशा। राज माधुरी वेष प्रकाशा ॥
दोहा—लषण सहित सिय उर्मिला, भरत शत्रुहन वीर ॥
राजसिंहासन बैठिकै, दरश देहिं रघुवीर ॥ ५ ॥

तब मुसक्याय कह्यो यह नारी। यह दुर्लभ तैं बात उचारी ॥
पैतैं मोर अनन्य उपासी। ताते ह्वैहै पूरण आसी ॥
चित्रकूट कहँ चलहु सिधारी। तहँ पूजी अभिलाष तिहारी ॥
अस कहि भे दोउ अन्तर्ध्याना। दास उर्मिला अति सुख माना॥
चल्यो चित्रकूटहि द्रुत आयो। मंदाकिनि महँ हर्षि नहायो ॥
कामद कियो प्रदक्षिण जाई। फटिकशिला अधरातहि आई ॥
तहँ सुमिरयो हे राजकुमारा। करहु सत्य जो वचन उचारा ॥
तेहिं क्षण मंदाकिनिके तीरा। प्रगटे लषण सहित रघुवीरा ॥
सिय उर्मिला सखीन समाजा। राजमाधुरी वेष विराजा ॥
कोटि भानु सम भयो प्रकाशा। विजुरी सम चमक्यो दश आशा
दास उर्मिला पूरण कामा। भयो तेही क्षण लखि छविधामा ॥
क्षणमें भे प्रभु अंतर्ध्याना। दास उर्मिला भान भुलाना ॥

दोहा—चारि दंड भरि बेखबरि, परो रहो तेहिं ठाम ॥
तब अकाश वाणी भई, जिमि चातक घनश्याम॥६॥

ध्यानमाहँ नित दरशन होई। मृषा वचन मम होय नकोई ॥
सो सुनि उठ्यो पाय आधारा। कीन्ह्यो चित्रकूट संचारा ॥
तहँ यक मंदिर विमल बनायो। सीता राम रूप पधरायो ॥
कालक्षेप तहँ कछु दिन करिकै। मूसानगर गयो सुख भरिकै ॥
तहँ कंगालदास मिलिगयऊ। तब सो वचन विहँसि कहिदयऊ ॥
मरयो साहुको सुत यक राती। डारि दियो महि रोय सजाती॥
तासु काय मैं करहुँ प्रवेशा। तोर महत्व होय यहि देशा ॥
अस कहि किय प्रवेश तेहिं काया। भयो भोर प्रगटे दिनराया॥
तब सो बालक उठि सहुलासा। बैठ्यो दास उर्मिला पासा ॥
देखि लोग सब किये उचारा। दिय जियाय यक साधु कुमारा॥
साहु कुटुंब सहित तहँ आयो। बहु संपति चढ़ाय शिरनायो ॥

लै कुमार गमन्यो निज गेहा। प्रभु तहँ रहे किहे अति नेहा॥
दोहा—दास उर्मिला सों कह्यो, सो कुमार निशि आय॥
तीनि वर्षमें आइयो, अबै रहो कहुँ जाय॥ ७॥
तब गुरु वदरी विपिन सिधायो।पुनि जगदीश पुरी कहँ आयो॥
वृंदावन मथुरा सुख भरिकै। मूसानगर गयो सुधि करिकै॥
तबलों तासु पिता अरु माता। गे सुरधाम रहे तेहिं नाता॥
सो कुमार एकांतहिं टारी। दास उर्मिला गिरा उचारी॥
है कछु सुधि जो कियो चरित्रा।अब का सीख देहु मोहिं मित्रा॥
तब कुमार बोल्यो अस वाचा। मैं कंगालदासहौं सांचा॥
चलहु भजन कीजै कहुँ भाई। तहां कहब कछु तोहिं बुझाई॥
अस कहि दोउ गिरिनार सिधारे। तहां भजन किय वर्ष अठारे॥
तहँजानकी दरश फिरि पाये। तब कंगालदास अस गाये॥
मैंतौ सखी विदेहललीकी। सखा लषणको तैं मति नीकी॥
देवर कहौं आजुते तोको। तैंजस चाह कहै तस मोको॥
तब उर्मिलादास कह वाचा। मोर बड़ा भाई तैं सांचा॥
दोहा—तब बोल्यो कंगाल प्रिय,जीवन करौ उधार॥
विना भावना भेट नहिं,होय हमार तुम्हार॥ ८॥
चलहु बघेलखण्ड यक देशा। तहँहि बसब हम विरचि निवेशा॥
कहि कंगालदास असि वानी। आय बस्यो यहि देश विज्ञानी॥
पुनि उर्मिलादास सुख पाई। तारन लग्यो जीव समुदाई॥
करत षडक्षरको उपदेशा। आये एक समय यहि देशा॥
कछियाटोला रह यक ग्रामा। तहँ निपुनाथ सिंह अस नामा॥
ठाकुर रह्यो ताहि अतिघोरा। लग्यो खबीस महा बरजोरा॥
तीनिपुत्र डारचो द्रुत मारी। बचे पुत्र द्वै रहे दुखारी॥
सोनिपुनाथ सिंह प्रभु नेरे। गिरचो जाय ढिग चरणन केरे॥

जानि दशा गुरु गिराउचारी । करी खवीस दुर्दशा भारी ॥
अब नहिं ऐहै निकट खवीसा। रक्षक तोर कौशलाधीशा ॥
द्वै ते पांच पुत्र तुव ह्वैहैं । मान और दल जीत कहै हैं ॥
लहि शासन निपुनाथ बवेला । वस्यो भवन महँ वीर नवेला॥

दोहा—तेहिं खवीस आकर्षिके,प्रभु दिय मंत्र सुनाय ॥
भयो मुक्त सो वेगहीं,छुटी प्रेतकी काय ॥९॥

विचरन लागे पुनि बहु देशा । जीवन करत ज्ञान उपदेशा ॥
पुनि निपुनाथ पंचभे नाती । प्रभु शरणागत भे सब भाँती ॥
प्रभु कहुँ चित्रकूट पगु धारै । कबहुँक करै अवध संचारै ॥
चरित अनंत कहे किमि जाहीं । दीख सुने वरणौं तिनकाहीं ॥
सो निपुनाथ सिंह को नाती । धीर सिंह यक रह मम जाती ॥
सो मम हेतु कियो कछु विनती।प्रभु कह तासु दासमहँ गिनती॥
अबै जो मम शरणागत होई । करै उपद्रव तहँ सब कोई ॥
वैष्णव संस्कार कछु करिहौं । ताके हेतु यतन निरधरिहौं ॥
अष्टादशहिं वर्ष जब वीती । होई तासु साधु महँ प्रीती ॥
तब यक पुरुष प्रचंड प्रभाऊ । ऐहै रीवाँ मृदुल सुभाऊ ॥
ताको नाम मुकुंदाचारी । सो सिगरो वघेल कुल तारी ॥
पुनि प्रभु मम सुमिरत धनुधारी। कछिया टोला वसे सुखारी ॥

दोहा—आकस्मातहिं एक दिन, सिंह पहार बोलाय ॥
कह्यो आवती गाँव तुव, हुलकी जोर जनाय ॥ १०॥

कह्यो पहारसिंह तब बानी । नाथ करहु बाधाकी हानी ॥
प्रभु कह एक नारि मरिजैहै । पुनि नहिं मारी काहु सतैहै ॥
दिवश तीसरे मरिगै नारी । और सबै तहँ रहे सुखारी ॥
तासु निकट माधवगढ़ ग्रामा । मरनलगे तहँ जन दुखछामा ॥
आय गिरे पग तहँके वासी । त्राहि त्राहि रक्षहु दुखनासी ॥

प्रभु कह गयो जबै बंगाला । मंत्र सिख्यो चेटकी विशाला ॥
तौन मंत्र मैं देत बताई । मारी मिटिहै करहु उपाई ॥
रामानुज लघु रेख खचाई । सो नहिं नाँघ्यो असि मनुसाई ॥
गेरू दूध डारि घट माहीं । आगे करिकै सुरभी काहीं ॥
डरिहौ जहँ जहँ ताकरि धारा । हुलकी तहँ नहिं करी प्रचारा ॥
तैसहिं किये अर्द्ध पुर वासी । भये न कोउ हुलकीते त्रासी ॥
अर्द्ध गाँवके पुनि प्रभु पाहीं । गिरे आय व्याकुल पद माहीं ॥

दोहा—प्रभु कह मैं वैदीनहीं, जानहुँ नाशक शोक ॥
हुलकी रोगहि नाशि है,यह तरुराज अशोक ॥११॥

यहि अशोक के पत्र खवाई । मारीकी भय देहु मिटाई ॥
सुनि जन लै अशोक दल काहीं । डारनलगे रुजिन मुख माहीं॥
जे रोगी अशोक दल खाये । ते तुरतहि अरोग ह्वै आये ॥
तहँ यक ब्रह्म लग्यो द्विज काहीं । लै आयो प्रभुके शरणाहीं ॥
ताहि षडक्षर मंत्र सुनायो । तरचो ब्रह्मनभ शोरहि छायो ॥
तासु देखि हरिपर अनुरागा । दियो मंत्र कीन्ह्यो बड़भागा ॥
रामगुलेला नाम धरायो । कछु दिन प्रभु निज निकट टिकायो॥
तासु पिता तेहिं घरलै गयऊ।कियो विवाह सुखित अति भयऊ॥
प्रभु इत चित्रकूट पग धार्‍यो।गमन लेन द्विज सुतहिं विचार्‍यो॥
जा दिन तासु नारि घर आई । मारी वश सुत मरचो तहाई ॥

दोहा—जेहिं दिन सो द्विज सुत मरचो, रामगुलेला नाम ॥
दास उर्मिला ताहि दिन, आय गये तेहि ग्राम॥१२॥

तासु धाम यक साधु पठायो । निज आगमकी खबरि जनायो॥
साधु गयो देख्यो तहँ भोरा । मच्यो तासु घर आरत शोरा ॥
तेहिं कुलके मर्घट लै गमने । लौट्यो साधु गयो नहिं भवने ॥
सब वृत्तांत कह्यो प्रभु पाहीं।प्रभु कह सत्य लगत मोहिं नाहीं॥

चलहु तहां जहँ लावहिं ताको । जीवत दाहत शोक न काको॥
असकहि गे प्रभु मर्घट माहीं।धरचो चिता पर सब तेहिं काहीं॥
प्रभु कह जीवत कीजत दाहा । देहैं दंड तुम्हैं नरनाहा ॥
प्रभुको देखि महादुख छायो । राम गुलेलाको पितु धायो ॥
प्रभु पद परचो पुकारि पुकारी । प्रभु कह तोरि गई मति मारी॥
लेहु चिता ते सुतहि उतारी । चलहु भवन मूर्च्छा भै भारी ॥
तेहिं पितु गुणि गुरु वचन विश्वासा।लै आयो सुत मृतक अवासा
धरवायो इक कोठरी माहीं । जुरे बहुत जन लखन तहांहीं ॥

दोहा–तेहि सुतके पितुको दियो, प्रभु शासन यहि भांति ॥
व्यंजन विरचहु विविध विधि,जेवहिं संत जमाति॥१३
विप्र तुरत प्रभु वचन सुनि, व्यंजन रच्यो अनंत ॥
खबरि दियो प्रभुके निकट, चलि जेवहिं सब संत१४
रूसि कहे सब संत तब, परी लहाश दुवार ॥
नाथ कौन विधि जायकै,हम सब करब अहार॥१५॥
तब प्रभु कह सबसों विहँसि,चलहु अनत इत खाय ॥
यंत्र मंत्र जानौं नहीं, ताको कवन उपाय ॥ १६ ॥
यत्न एक आवत हमैं,कहहु जो यह सप्ताह ॥
लषणलाल करिहैं कृपा, का संशय यहि माह ॥१७॥
संत सबै बोले बिलखि, क्यों वीतें दिन सात ॥
घरी माहँ वरही जरे, कह भद्राकर घात ॥ १८ ॥
प्रभु कह सो सप्ताह नहिं, मम विरचित पद सात ॥
गावहु बाज मिलायकै,मुदित सात क्षण जात ॥१९॥
सबै संत गावन लगे, यही मधुर पद सात ॥
सो आगे लिखि देतहौं, अति विचित्र अवदात ॥२०॥

गायचुके जब सात पद, सात क्षणै सब संत ॥
गोहरायो प्रभु आपहीं,वार वार विहसंत ॥ २१ ॥
रामगुलेला क्यों नहिं आवै। कत भोजन विलंब दरशावै ॥
इतनी सुनत नाथकी वानी। कढ़ि आयो द्विजसुत सुखदानी॥
प्रभु पद परि बोल्यो असि वाता।नींद लागिगै मोहिं अघाता ॥
प्रभुतेहिं कर गहि भोजन हेतू। गये संत युत विप्र निकेतू ॥
जय जय कार मच्यो चहुँ ओरा। गिरे नाथ पद मनुज करोरा ॥
प्रभु भोजन करि संत जेंवाई। गमने और गावँ अतुराई॥
अवलों जीवत रामगुलेला। वसत पुत्र अरु पौत्र नभेला ॥
मैं अस सुनि प्रभाव प्रभुकेरो। चाह्यो नाथ कमलपद हेरो ॥
पढ़ै विनय पत्रिका बनाई। चह्यो भवन निज नाथ अवाई॥
तब पठयो उत्तर प्रभु मोको। नहिं संसार भीति कछु तोको ॥
और रूपते दरशन देहौं। अबै न अपने निकट बोलैहौं ॥
भूप गोरैयाको सुत जोई। तुव पितृव्यको पुत्रहु सोई ॥
दोहा—खंड तपस्या दोउ किये, रहिहैं ये दोउ नाहिं ॥
दोहूके सुत होहिं दोउ, तब सुधरी दोउ काहिं॥२२॥
प्रभुके वचन भये परमाना। दोउ किये दिवि लोक पयाना॥
यक यक सुत भे दोहुँन केरे। अबहैं बंधु प्रगट जग मेरे ॥
कहँलों कहौं नाथ प्रभुताई। रसना एक सकै नहिं गाई ॥
यहि विधि करत अनेक चरित्रा। करत अपावन अमित पवित्रा॥
वीति गयो विहरत बहुकाला।तब प्रभु कह सुनु दशरथ लाला॥
अब कलिकाल जगत् महँ छायो। नाथ तिहारो विरह सतायो ॥
अब नहिं रहिहौं यहि संसारा। लखौं निरंतर चरण तिहारा ॥
एवमस्तु लक्ष्मण मुख भाषे। तब प्रभु देह तजन अभिलाषे ॥
महाकालको रूप बनाई। पूजि सविधि नैवेद्य लगाई ॥

कह्यो डरहु नहि मोकहँ काला। अब निदेश दिय दशरथ लाला
अस कहि अर्द्ध राति पर्य्यंका। बैठे पद्मासनहिं निशंका॥
सब संतनको निकट बोलाई। यहि दोहाको दियो सुनाई॥

दोहा—जा मरिबेको सब डरै,हमरे परमअनंद॥
कब मरबी कब भेटबी, पूरण करुणाकंद॥ २३॥
अस कहिके पुनि मौन ह्वै, लीन्ह्यो श्वास चढ़ाय॥
ताजि शरीर पहुँचे जहां,रघुपति चारौभाय॥ २४॥
अमित चरित महराजके,कहँलोंकरौं बखान॥
विस्तर भय संक्षेपहीं,कीन्ह्यो सकल विधान॥ २५॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीराम-
रसिकावल्यांकलियुगखंडेउत्तरचरित्रे सप्तमोऽध्यायः॥ ७॥

दोहा—अब चरित्र वरणौं विमल, कियो दास कंगाल॥
सुनत जाहि श्रोता सकल,नित नित होत निहाल॥ १॥

जबते त्यागि दियो गिरिनाला। बसे बघेल खंड जेहिं काला॥
तबते एक ग्राम गड़वारा। तहैं रहे नहिं किय संचारा॥
कुटी तहां यक विमल बनाई। वसे परमहंसी दरशाई॥
दास उर्मिलै देवर कहहीं। कबहुँ न तासु दरश मन चहहीं॥
दास उर्मिला तेहि प्रति वर्षा। पठवहिं नारि वसन युत हर्षा॥
एक समय कछु भइतनु व्याधी। दास उर्मिलौ जानि समाधी॥
पठयो डोरिया तूरकी आपा। दास उर्मिला लै शिर थापा॥
कह्यो बड़ा भाई तव वीरा। जो रोंकै अब काल गँभीरा॥
सुनि कंगाल दास असि बानी। पठयो कछुक मिठाई आनी॥
तब उर्मिलादास कह बाता। रोंक्यो काल वर्ष अब साता॥
चारि दंड बाकी निशि माहीं। चलि वापी महँ नितहिं नहाहीं॥
पुनि कछु नित्यकृत्य करिलेहीं। दास कँगालकुटी चलि तेहीं॥

दोहा—कराहिं कोठरी बंदकरि, डेढ़ पहर लगे ध्यान ॥
हरिप्रसाद भोजन कराहिं,पुनि बहु वचन बखान ॥२॥
कोठी एक ग्राम जन कहहीं । तहँ वघेल दुनिया पति रहहीं ॥
तिनके ढिग चेटकी सिधारा । पत्थर गिरि अस नाम उचारा
जौन कहै सो सत्य देखावै । व्याघ्र वृषभ निज रूप बनावै ॥
दै कपाट कोठरी घुसि जावै । और ठौरते तुरतहि आवै ॥
महाचेटकी चरित अपारा । वरणि सकै को विविध प्रकारा ॥
सुन्यो चरित्र दास कंगाला । दीनादासहिं कह तत्काला ॥
पत्थर गिरिके निकट सिधाई । यह पषाण तुम दियो देखाई ॥
महाचेटकी यहू बखाना । यह लखि होई अवशि अयाना ॥
अस कहि पाथर दियो उठाई । दीनादास चल्यो शिरनाई ॥
गयो जबै पत्थरगिरि नेरे । जान न पाये मनुज घनेरे ॥
तब चढ़ि यक ऊंचे थल माहीं । दरशायो पाषाणहिं काहीं ॥
पुनि पत्थर गिरिकोगोहरायो । मोहिं कंगाल दास पठवायो ॥
दोहा—पत्थरगिरि पत्थर लखत,पत्थर भयो तुरंत॥
दीनादास यकांत लहि,भन्यो वचन भयवंत॥ ३ ॥
मैंकरि चेटक पेट चलाऊं । प्रभुको कछु न प्रभाव जनाऊं ॥
कियो मोर वदि प्रभुहिं प्रणामा। विनती कियो दासकी आमा॥
यह पषाण लखि चेटकताई । मोर गई अब सबै विलाई ॥
पुनि पत्थर गिरि दीनादासै । दिय मुद्रा शत सहित हुलासै ॥
दीनादास आय प्रभु पाहीं । कहन न पायो कछु मुख माहीं ॥
वर्णि गये प्रभु सबै हवाला । जस कीन्ह्यो चेटकी कराला ॥
गावँ सोहावल बसे वघेला । पृथ्वीपति अस नाम नवेला ॥
ताहि प्रत्यक्ष रही निज देवी । रह्यो अनन्य कालिका सेवी ॥
पीवत सुरा दूध ह्वै जाई । ब्रह्मचर्य महँ रहै सदाई ॥

बांधै आयुध गुरिद सदाई। महि पर पटकत अरि मारि जाई॥
सो कोठी पर कियो चढ़ाई। दशहजार सेना सँग धाई॥
तब कोठीको ठाकुर भाग्यो। दासकंगाल चरण अनुराग्यो॥
दोहा—कियो विनय परि चरणमें, अति दीनता दिखाय॥
पृथ्वीपति मारत हमैं,करिये कौन उपाय॥ ४॥
प्रभु कह कहिहौं ताहि बुझाई। जो नमानिहै तौ फल पाई॥
कहि कंगाल दास असि वानी। पृथ्वीपति ढिग गयो विज्ञानी॥
करत रहै देवी कर पूजा। तासु समीप रहै नहिं दूजा॥
कह्यो नाथ दुनियापति काहीं। पृथ्वीपति मारै अब नाहीं॥
सेवक तोरकरी सेवकाई। यहि वारहिं अब देहु बचाई॥
सुनत वचन पृथ्वीपति कोपा। प्रभुके सन्मुख अस प्रणरोपा॥
दुनियापति पग वेरी डारी। लेव छड़ाय राज्य हम सारी॥
सन्मुखते टरिजा वैरागी। नातो पीठि कशा अब लागी॥
सुनि पभु कह्यो कुपित असि वानी। देवीबल मति तोरि भुलानी॥
देवी राखिसकी तोहिं नाहीं। लगी खड्ग तेरे शिरमाहीं॥
फौज फूंक सी यह उड़िजैहै। राज्य अवशि दुनियापति पैहै॥
अस कहि नाथ लौटि पुनि आये। दुनियापति को वचन सुनाये॥
दोहा—पृथ्वीपतिं विन शीशको, आवतहै तुव पास॥
हठै सहित मारो शठै, पठै फौज अनयास॥ ५॥
तब गजराजसिंहके साथा। पठयो द्वैशत कोठीनाथा॥
पैदर द्वैशत लै गजराजा। सन्मुख भयो युद्धके काजा॥
नदी एक सेमरावलि जोई। रातिहि लागि गये सब कोई॥
भोर खबरि पृथ्वीपति पायो। दशहजार दल लै सँग धायो॥
हने बँदूख युगल शत वीरा। बड़े बड़े गिरिगे रणधीरा॥
भागी सेना दशौहजारा। पृथ्वीपति किय कोप अपारा॥

लैकर गुरिदा कोपित धायो। गजराजहिंके सन्मुख आयो ॥
हन्यो भूमि गुरिदा त्रयवारा। पावक ज्वाल कढ़ी विकराला ॥
सो गजराज समीप न आई। भभकि भभकि तहँ गई बुताई ॥
तब गजराज खड्ग चलि मारयो।पृथ्वीपति शिर कंध उतारयो॥
सो कंगालदास परतापा। कियो न कछुक यज्ञ तप जापा ॥
दुनियापति कोठीकी राजू। पायो भयो सकल कृत काजू ॥

दोहा–दिखितगोरैयाको रह्यो, भूप नाम पृथ्विपाल ॥
तापर श्रीकंगालप्रिय, अतिशयरहे दयाल ॥ ६ ॥

यक दिन सो रीवांते गमनो। जानचह्यो निशिमें निजभवनो॥
वर्षन लगो महा घनघोरा। दामिनि दमकि रही चहुँओरा ॥
सलिल प्रवाह सूझ नहिं पंथा। कौन कहै चलिवेकी संथा ॥
अश्व चढ़ो राजा पृथ्विपाला। गयो नाथढिग अतिहिं विहाला॥
कह कंगालदास तेहिकाहीं। आजु गोरैये जैयो नाहीं ॥
कह पृथ्विपाल करहु असिदाया।जाहु भवन रोगित मम जाया॥
प्रभु कह चाहसि लखन तमासा। सो देखै बैठे मम पासा ॥
अस कहि निकसि कुटी ते आये।फजिल फजिल अस शोरसुनाये
फजिल कहत फूटे घन कारे। निकसे विमलचंद्र अरु तारे ॥
मम मातामह नृप पृथ्विपाला।हय चढ़ि पहुँच्यो घर तत्काला॥
पहुँचिगयो जब घरमहँ जाई। होनलगी पुनि वृष्टि महाई ॥
पूछे पुरवासी चलि भोरा। किमि उतरयो बाढ़ी सरि घोरा॥

दोहा–तीनि दिवशते नाव नहिं, लागी टमस मझार ॥
तीनि दिवशते जल वह्यो, ऊपर रह्यो करार ॥ ७ ॥

तब पृथ्विपाल कह्यो अस वानी। आवत मोहिंपरयो नहिं जानी
अश्व जानुलो सरि जल भयऊ। विषम पंथ कछु है नहिं गयऊ

यह कंगालदास परभाऊ । काहेको शंका उर लाऊ ॥
यक दिन विप्र गयो उरसांचो । सुता विवाह हेतु धन यांचो ॥
प्रभु कह मेरे संपति नाहीं । देहैं बदरीतरुतोहिं काहीं ॥
बदरीतरुतर सो द्विज जाई । यांच्यो नाथ सुनाय रजाई ॥
सहसतीनि मुद्रा तरु तरमें । लागि गये अवनी सुर करमें ॥
लै संपति द्विज सुता विवाहा । और कियो सब घर निर्वाहा ॥
यकदिन कह पृथ्विपालहि बानी।मनुज वृथा अतिशय अभिमानी
जानत मीच नगीचहिं नाहीं । श्वान सरिस वागत चहुँवाहीं ॥
देखहु यह जो आवत श्वाना । तासु आयुषा दण्ड प्रमाना ॥
यह सुनि सबको अचरज लाग्यो। नृप पृथ्विपाल वचन अनुराग्यो

दोहा—देखन लाग्यो श्वानको, मरण कौन विधि होय ॥
दण्ड विते मरिगो तहां, यह देख्यो सब कोय ॥ ८॥

एक समय पृथ्विपालहि काहीं । कढ़ीं भवानी सब तनुमाहीं ॥
लग्यो मरण जीवन गै आशा । लैगे सब तुरंत प्रभु पासा ॥
देखि दयालु दंड लै दौरे । मारयो शिविका महँ अति जोरे॥
दंड लगत मिटिगई भवानी । उठि पृथ्विपाल गह्यो पदपानी॥
मातामह द्रुत भयो निरोगा । प्रभु दीन्ह्यो तेहिं बहुरि नियोगा॥
विद्यमानहै जो सुत तेरा । ताके उपर काल कर फेरा ॥
मेघवा बाबा शिष्य हमारा । तौन चलाई वंश तुम्हारा ॥
तौन काल अचरज सब माना । अब प्रभु वचन सत्य प्रगटाना॥
जेठ सुवन नृपको मरिगयऊ । मेघवा बाबा तनु तजिदयऊ ॥
द्वितिय पुत्र पायो पृथ्विपाला । विद्यमान सो है यहि काला ॥
अहैं अनंत चरित्र नाथके । किमि वरणौं सब मोद गाथके ॥
यक दिन लीन्ह्यो जननि बोलाई । सबसों कह्यो भजहु हरि भाई

दोहा–पद्मासन करि श्वासको, लीन्ह्यो सहज चढ़ाय॥
पंचभूत तनु त्यागिकै, गे जहँ रघुकुल राय॥ ९॥
इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्री
रामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेअष्टमोऽध्यायः॥ ८॥

दोहा–अब वरणों सुंदर चरित, कियो जो दास मलूक॥
अबलों पुरी प्रभावहै, खात जासु सब टूक॥ १॥
दास मलूक सो ज्ञाननिधाना। कबहूं सुन्यो आपने काना॥
बादशाह गहि साधुन काहीं। बेरी डारतहै पग माहीं॥
यह सुनि दिल्लीको चलि आये। बादशाह भट चलि गहि लाये॥
आयसबेरी पगमहँ डारयो। दास मलूक चरण झिटिकारयो॥
पग झिझकारत आयसबेरी। टुटिगई लागी नहिं देरी॥
परी रहीं साधुन पग जेती। टूटतभई तुरंतहि तेती॥
यह अचरज लखि परिकर धाये। बादशाहको खबरि जनाये॥
बादशाह आयो द्रुत धाई। दास मलूक चरण शिरनाई॥
युगल जोरि कर वचन उचारा। जानन हेतु प्रभाव अपारा॥
मैं साधुन बेरी पगडारा। लख्यो प्रत्यक्ष प्रभाव तुम्हारा॥
देहु नाथ अब मोहिं प्रसादा। दास मलूक कियो अस वादा॥
भोजन करि मांगतो प्रसादा। शाह कह्यो यह मृषा विवादा॥
दोहा–दास मलूक कह्यो तबै, वीहीके फल खाय॥
मृषा कहै मोसों वचन, शाह सुचेत गवाय॥ १॥
वीही फल जेते तुव बागा। तिन सब फलन मोर मुँहलागा॥
खायो मोर जूंठ तैं शाहा। सुनि अस शाह गुण्यो मनमाहा॥
मृषा कहत यह दास मलूका। लख्यो मांगि फलते सब टूका॥
दास मलूक सिधारा। आयो जहँ जगदीश अगारा॥

बैठजाय मंदिर पिछवाई। द्विज वपु धरिगे हरि तहँ धाई॥
कह्यो चलहु दरशन अब लेहू। दास मलूक कह्यो करि नेहू॥
जगन्नाथ वकसत जस टूका। तस नाहिं लेई दास मलूका॥
जो मलूक टूका सब खावै। तौ मलूक दर्शन हित जावै॥
प्रभु कह जैसो महाप्रसादा। तस मलूक टूका मर्यादा॥
अस कहि अपनो रूप देखायो। तब मलूक चरणन शिरनायो॥
पुनि मलूक दर्शन चलि लीन्ह्यो। निज टूका दीवो थिर कीन्ह्यो॥
तबते पुरी माहँ मर्यादा। अबलों बनी अहै अविवादा॥

दोहा–पुरी जाय जो जन कोऊ, पावै महाप्रसाद॥
टुकडा दास मलूकको, लेइ विहाय प्रसाद॥ २॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेनवमोऽध्यायः॥ ९॥

दोहा–चित्रकूटमें बसतथे, श्यामदास यक संत॥
तासु चरित वर्णन करों, महिमा जासु अनंत॥ १॥

योग निधान ज्ञानके सागर। प्रेमभक्ति महँ महाउजागर॥
सीतापतिके दर्शन पाये। मो पितुको उपदेश सुनाये॥
यक दिन मम पितु काहिं बोलाई। सीताराम मूर्ति मन भाई॥
देत भये कहिकै असि वाणी। पूजौ तुम ह्वैहौ निर्वाणी॥
जबलों तुव घर मूरति रहिहै। तबलों कछु अनर्थ नहिं ह्वैहै॥
अस कहि बैठ भुँइहरा माहीं। कियो समाधि तीनि दिन काहीं॥
तीजे दिन तनु सकल सुखाना। आप गये समीप भगवाना॥
सो मूरति पूज्यो पितु मोरा। पुनि दीन्ह्यो मोहिं सहित निहोरा॥
मम पितु पूजित मूरति सोई। दीन्ही श्यामदासकी जोई॥
न मूर्त्ति विलग दोउ होती। दिन दिन करतीं कलाउदोती

जो कछु अनरथ होय होवैया। सुमिरत सो मिटि जात सदैया॥
श्यामदास की कथा अनेका।इत लिखि दिय विस्तर भय एका॥
दोहा—चित्रकूटमें आजुलों, तिनको प्रगट प्रभाव॥
जानत सिगरे संतजन, कोहुको नहीं दुराव॥ २॥
इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेदशमोऽध्यायः॥ १०॥

दोहा—चरणदास यक नाम जिन, रहे संत पंजाव॥
तिनको हरिको दरश भो, श्रोता सुनहु स्वभाव॥१॥
छंद—यक चरणदास महातमा हरिमें करी परतीति॥
हरि दियो शासन प्रगटिकै कीजै सुरोदय रीति॥
राची सुरोदय रीतिसो जाने सकल विधि जौन॥
आगम निगम जानत सकल छिपि जाय जन अस कौन॥
दोहा—तौन सुरोदय रीति अब, जगमें अहै विख्यात॥
पढ़त सुनत समुझत गुणत,प्रगट होत सब बात॥२॥
इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेएकादशोऽध्यायः॥ ११॥

दोहा—भये एक पंजावमें, साधू मंगलदास॥
तिनको जो कछु मैं सुन्यों, सो वरणौं इतिहास॥१॥
महा प्रभाव सुमंगल दासा। रामतीर्थ महँ करै निवासा॥
रघुपति मंत्र पचाश हज़ारा। जपै षडक्षर राम अधारा॥
संत सहस नित संगहिं रहहीं। राम कृपावश भोजन लहहीं॥
नहिं बंधेज न कछु बंधाना। मिलहि वस्तु अनयासहि नाना॥
एक समय दिन सात व्यतीते। सबै संत भोजनते रीते॥
सतयें दिन जो रह्यो पुजारी। आई ताको महातमारी॥

गिरचो भूमि लै ठाकुर कार्हीं। आप कह्यो चेतैं कस नाहीं॥
कह्यो पुजारी तब अनखायो। सात दिवश भोजन नहिं पायो॥
कैसे साबित रहै शरीरै। तुम नाहिं कहौ कछू रघुवीरै॥
मंगलदास कह्यो तब बानी। लेत परीक्षा प्रभु मैं जानी॥
शालग्राम शिलाहैं जेते। फेंकहु जलमहँ राखु न तेते॥
सहस शिला लै गयो पुजारी। फेंकि दियो गम्भीरहि वारी॥

दोहा—सांझ समय कहुँते तुरत, दश वृष लदो पिसान॥
आय गयो साधू सबै, जय जय किये महान॥ २॥

संतनकी जब भई रसोंई। मंगलदासै कह तब कोई॥
ठाकुर सिगरे नीर डुबायो। चहौ कौन विधि भोग लगायो॥
मंगलदास कह्यो नाहिं जैहैं। दशरथलाल क्षुधावश ऐहैं॥
जाहु मूर्त्ति को लै सब आवहु। फेंकेहु पुनि जो एक न पावहु॥
गयो पुजारी सरिके तीरा। रह्यो सलिल अतिशय गम्भीरा॥
सिगरी मूर्त्ति लख्यो सरि तीरा। लै आयो मिटिगै सब पीरा॥
नौसे निन्यानबे गनायो। एक मूर्त्ति को खोज न पायो॥
मंगल दास कह्यो मन बिगरे। लै आवहु की फेंकहु सिगरे॥
गयो पुजारी पुनि सरि तीरा। निरख्यो तहाँ मूर्त्ति रघुवीरा॥
लै आयो तब भोग लगायो। सिगरे साधुन सुखद जेंवायो॥
करत रहे यक दिन जपस्वामी। बैठे संत मुक्तपद गामी॥
राम कहत ऐंच्यो सो श्वासा। उठचो धूम तनुते चहुँ पासा॥

दोहा—धूम मात्र देखो परचो, लख्यो न परो शरीर।
सकल संत विस्मित भये,कियो काह मतिधीर॥३॥
दंड द्वैकमें पुनि सबै,देख्यो मंगलदास॥
पूछनलागे संत सब, गये कौनके पास॥ ४॥
मंगलदास कह्यो विहँसि, गये जहाँ रघुवीर॥

कछु चाकरी बजाय कै, पुनि आये सरि तीर ॥ ५ ॥
औरहु कथा अनेक हैं, कहँलों करों उचार ॥
वरण्यो इत संक्षेपते, कियो न बहु विस्तार ॥ ६ ॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकाव
ल्यांउत्तरचरित्रेद्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

दोहा—रामदास यक साधुवर, रहे वदनपुर माहिं ॥
सेवन संतन धर्म लिय,सम देख्यो सबकाहिं ॥ १ ॥
जो कोउ संत दुवारे आवै । सोविन भोजन जान नपावै ॥
गंगा तटमें कुटी बनाई । बसै करै संतन सेवकाई ॥
औरौ चरित अनेकन तिनके । वर्णन शक्ति कहांहै किनके ॥
तीन कुटी देख्यो मैं जाई । विस्मित भयो देखि प्रभुताई ॥
एक ओर आचारिन डेरा । एक ओर सब द्विजन बसेरा ॥
अंधर बधिर पंगु यक ओरा । बसहिं संत औरहु यक ठोरा ॥
सहसन मनुज बसैं चहुँ पासा । भोजन देहिं सबन अनयसा ॥
नहिं बंधेज न कँहु बंधाना । पूरण करहिं सदा भगवाना ॥
यक दिन संत भीरभै भारी । वर्षन लागे बहु घन वारी ॥
जाय भँडारी प्रभुहि जनायो । आजु अन्न कहुँते नहिं आयो ॥
रामदास बोले तब वानी । पूरण करिहैं जानकि जानी ॥
अस कहि यक कुँडरा मँगवायो। निज तुंबा तेहि औंध करायो॥
वचन कह्यो जय जनककिशोरी। जो सति आश मोहिं यकतोरी
दोहा—तौ घृत चिनी पिसान बहु, ईंधन साज समेत ॥
तुंबाते निकसै सकल,बधै साधु कर नेत ॥ २ ॥
यतना भाषत तुम्बा तेरे । कढ़े सकल वस्तुन के ढेरे ॥
सहसन साधु सुभोजन कीन्हे । तुंबारीत न प्रभु करि लीन्हे ॥

सकल संत कीन्हे जयकारा। आप कह्यो जय राजकुमारा ॥
औरौ चरित अनेकन तिनके। वर्णत शक्ति कहो है किनके ॥
पुनि जब छोंडनलगे शरीरा। नाव चढे गंगाके तीरा ॥
छीतूदास आदि सब भक्ता। बैठे सबै राम अनुरक्ता ॥
तब प्रत्यक्ष यक सुंदरि नारी। आई नभते भास पसारी ॥
सबकोउ लखत चकित भे साधू। कहि न सके कछु गिरा अगाधू॥
रामदास सों सुंदरि बोली। वैठे कहँ चिंता कहँ तोली ॥
तोहिं बोलायो राजकुमारा। रहे बहुत इत चलहु अगारा ॥
रामदास बोले मुसकाई। क्यों नहिं खबरि करै तू माई ॥
लागिरहीथी यह मन आशा। सो तू दरश दियो अनयासा ॥
अस कहि पुनि कहि जय रघुवीरा। रामदास जी तज्यो शरीरा ॥

दोहा–सो तिय अंतर्ध्यानभै, जान्यो चरित नकोय ॥
चमकी चपला सी गगन, मेघ विना क्षण दोय ॥२६॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

दोहा–महामनोहरि अब कथा, कहौं संतकी एक ॥
जो मम देशहिंमें भयो, कीन्ह्यो चरित अनेक ॥ १ ॥

बरदाडीह ग्राम यक मेरा। सोई तासु जन्मकर खेरा ॥
नाम अनंतदास है ताको। अबलों मंडित करत क्षमाको ॥
रहे गृहस्थ महा धनहीना। निकरि भवनते पंथहिं लीना ॥
नीमच शहर गये यक बारा। तहँको सुनिये चरित अपारा ॥
राख्यो तेहिं नौकर अंगरेजा। वसे करत भोजन बंधेजा ॥
हाकिम घरते जो कछु पावैं। सो नहिं राखैं संत खवावैं ॥
यहि विधि बीति गयो कछु काला।यक दिनको अस भयो हवाला॥

पहरा जब अनंतको आयो । तेहिं क्षण साधू एक सिधायो ॥
उन अँगरेज़ केर भय भारी । साधु जेवावन करी तयारी ॥
जो नहिं जैहौं पहरा माहीं । देहें अवशिदंड मोहिं काहीं ॥
साधु प्रीति वश मैं नहिं गयऊ । पहराकाल व्यतीतत भयऊ ॥
जब पहरा अनंतको आयो । हरि अनंत वपुधारि सिधायो ॥

दोहा—टोपी कुरती पहिरिकै, हाथे धरि संगीन ॥
दीनदयालु गोविंद प्रभु, पहरा दियो नवीन ॥ १ ॥

टहलैंचहुँदिशि सोरठ गावैं । सूर पदनमें सुरन मिलावैं ॥
महा माधुरो यह पद गावैं । सो अब हम लिखिकै दरशावैं ॥

पद—हमारे प्रभु अवगुण चित न धरो ॥
समदरशी प्रभु नाम तिहारो वैसहि पार करो ॥
यक लोहा पूजामें रहतो यक घर वधिक परो ॥
सो दुविधा पारस नहिं जानत कंचन करत खरो ॥
यक नदिया यक नार कहावत मैलो नीर भरो ॥
सो जब जाय मिलत गंगामें सुरसरि नाम परो ॥
यक माया यक जीव कहावत सूरश्याम झगरो ॥
की याको निरवार करो प्रभु की प्रण जात टरो ॥

जब पहरा तिनको ह्वैगयऊ । द्वितिय संतरी आवत भयऊ ॥
तब प्रभु भे तहँ अंतर्ध्याना । दास अनंत कछू नहिं जाना ॥
मान्यो मनमहँ भीति महाई । कालिह पाइहौं अवशि सजाई ॥
अस विचारि जो कछु धन रहेऊ । सो सब संतनके कर दयऊ॥
गये प्रभात डेरात डेराता । जमादारके ढिग अकुलाता ॥
गयो भवन बैठ्यो वहु दूरी । जमादार चितयो सुखपूरी ॥
चलत अनंतहिं निकट बोलायो । बड़े हेतुसों वचन सुनायो ॥
गावहु जो कीन्ह्यो निशि गाना।कबहुँ न सुन्यो गान अस काना॥

तब अनंत बोल्यो भय पाई। मृषा दोष कत देहु लगाई ॥
आयो मैं नहिं पहरा हेतू। किय कसूर मैं महा अचेतू ॥
दोहा—जमादार बोल्यो विहँसि, काहे मृषा बताहु ॥
पहरा दीन्ह्यो दंड षट, गायो सहित उछाहु ॥ २ ॥
तब अनंत जान्यो मनमाहीं। हैं प्रभु और होय गो नाहीं ॥
मेरे हित पहरा प्रभु दीन्ह्यो। यह अपराध हाय मैं कीन्ह्यो ॥
अस कहि तुरतहि डेरहिं आयो। रंकनसंपतिसकललुटायो ॥
कस्योलगोटी लैकरि तुंवा। मानहु लियो भक्ति कर तुंवा ॥
चल्यो रँग्यो रघुनायक रंगा। आगे पाछे कोउ नहिं संगा ॥
सात दिवश व्रत भे पथ माहीं। अन्न सलिलकी रुचि कछु नाहीं॥
निशिमें प्रगट भये सिय रामा। कह्यो जाहु अपने अब धामा ॥
दास अनंत भवन चलि आयो। मैंहूँ ताको दर्शन पायो ॥
जबतब आवहिं भवन हमारे। कृपा करहिं निज दास विचारे ॥
मम शरीरमें भो कछु रोगू। सो लखि दीन्ह्यो मोहिं नियोगू ॥
कबहुँ न याकी ओषधि कीजै। याको गुरू मानि निज लीजै॥
यह विरागको वीज उदंडा। पैहौ नहिं कबहूं यमदंडा ॥
दोहा—जगते होय विराग अति, उपजै तब विज्ञान ॥
तब उपजै सिय पिय चरण, प्रेम भक्ति परधान ॥ ३॥
अस निदेश प्रभु मोहिं करि, विचरतहैं सब देश ॥
रँगे हमेश रमेश रँग, हरैं अशेश कलेश ॥ ४ ॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

दोहा—रामदासको कहत हौं,अब सुंदर इतिहास॥
चित्रकूटमें वास करि,रहे रामकी आस॥ १ ॥

ताको नेम रह्यो यहिं भाँती। बाँचै रामायण दिन राती ॥
पहर निशा बाकी उठि बैठे। मज्जन हित मंदाकिनि पैठे ॥
करिकै नित्यकृत्य मठ आवै। चारिदंड जब रहै तृयामै ॥
तबते लै रामायण काहीं। पाठ करै यहि रीति सदाहीं ॥
रहै दंड बाकी दिन चारी। तौ कछु पयके होहिं अहारी ॥
सांझ भये दै युगल कपाटा। ध्यान करैं रोके मन वाटा ॥
असी वर्ष यहि रीति चलायो। कबहुँ न तिनको विघ्न सतायो ॥
एक दिवश निशि ध्यानहि माहीं। भयो विरह प्रभुको तिन काहीं।
भलो होय जो छुटै शरीरा। मिलिहौं जाय कबै रघुवीरा ॥
तहँ प्रत्यक्ष भये रघुनाथा। दीन्ह्यो रामदास शिर हाथा ॥
मुक्त जीव तुमहो अस भाष्यो। तुमहिं सखा अपनो गुणि राख्यो।
अबै कछुक दिन जीवन तारी। पुनि ऐहौ मम धाम सिधारी ॥

दोहा—रामदास परि कमलपद, धार्‌यो शीश रजाय ॥
रहे जगत्‌में काल कछु, उधरत जीवनिकाय ॥ १ ॥
मम पितु औ मैं हूं गयो, तिनके दर्शन पाय ॥
पुरश्चरणके समयमें, चित्रकूटमेंजाय ॥ २ ॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेपंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

दोहा—अब श्रोता सुनिये सबै, सेवक रामचरित्र ॥
जाको वपु रघुपति धर्‌यो, मान्यो अपनो मित्र ॥ १ ॥

अहै एक मेरो गुढ ग्रामा। रह्यो ताहि महँ ताकर धामा ॥
करै सदा संतन सेवकाई। रहै दीन धनहीन महाई ॥
प्रति अगहन सियराम विवाहा। करै माँगिकै महाउछाहा ॥
एक समय अगहन जब आयो। मांग्यो बहु घर धन नहिं पायो।
तब तियकी नथुनी लैलीन्ह्यो। दश मुद्रालै वणिजहिं दीन्ह्यो॥

दश मुद्रा महँ राम विवाहा। होत न लख्यो भयो दुखदाहा॥
उतरि गयो पर्वत दुख पाई। वसौं भवन किमि वदन देखाई॥
देखि तासु संकट रघुराई। तासु रूप लिय तुरत बनाई॥
लै मुद्रा शत पंच सिधारे। आये सेवक रामदुवारे॥
तुरतै तासु तिये गोहरायो। माँगि पंचशत मुद्रा लायो॥
प्रभु विवाहको योग लगायो। धरहु भवनमहँ चित्त चोरायो॥
सोइ नथुनी दीन्ह्यो पुनि ल्याई। यहू वणिक सों लिय मुकताई॥

दोहा—मैं अब गमनहुँ अनत कहुँ, औरहु संपति हेत॥
पांच सात दिनमें अवशि, ऐहौं वहुरि निकेत॥ १॥

अस कहि चलिभे अंतर्ध्याना। तिय अपने पतिहीं को जाना॥
दुसरे दिन वीते युगयामा। आयो सेवकरामहुँ धामा॥
बैठगयो घर शीश नवाई। तियसोंकह संपति नहिं पाई॥
तिय कह कहहु कहा बौराई। तुमहिं पंचशत मुद्रा लाई॥
दीन्ह्यो म्वहिं नथुनी मुकताई। अब कत कहत न संपतिपाई॥
सेवक राम जके सुनि वानी। कब मैं दियो तोहिं नथ आनी॥
अस कहि पुनि किय मनहिंविचारा। विन हरिको असकृपाअगारा॥
कियो जन्म भरि मैं सेवकाई। नारि गई सिगरो फल पाई॥
अस कहि तियहिं प्रदक्षिण दीन्ह्यो। परि पुहुमी प्रणाम पुनि कीन्ह्यो॥
कीन्ह्यो राम विवाह उछाहा। मिट्यो सकल मनको दुख दाहा॥
तिनके पुत्र पौत्र हरिदासा। राखहिं एक रामकी आशा॥

दोहा—अबलों करैं विवाह सुख, संत समाज बोलाय॥
गहे अकिंचन वृत्ति सब, पूर करै रघुराय॥ २॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेषोडशोऽध्यायः॥ १६॥

दोहा—सीवादास चरित्र अब, कहौं कछुक विस्तार ॥
जिनको रीवांनगरमें,सब दिन रह्यो अगार ॥ १ ॥

वृत्ति परमहंसी तिनकेरी । राजा रंक रहैं सम हेरी ॥
जोकोउ भोजन हेतु बोलावै । तिनके घर प्रसादको पावै ॥
यहि विधि बीति गयो कछु काला। छके प्रेम महँ दशरथ लाला॥
हिरदैशाह बुँदेल प्रधाना । ते रीवांको कियो पयाना ॥
सीवादास कुटीमहँ आयो । बार बार तिनको शिरनायो ॥
यक दोनियामहँ दियो बतासा । कह्यो देहु यक यक सब पासा॥
राजा मन विस्मित अति भयऊ। किमि पूजिहै सबन जो दयऊ॥
दियो बताशा सबको बांटी । पाये सब जेहिं जस परिपाटी ॥
रहे द्रोन उतनई बतासा । जाने सब महिमा हरिदासा ॥
हिरदैशाह कही असि वानी । मोहिं अचल दीजै रजधानी ॥
सीवादास कह्यो मुसक्याई । राज्य तो अवधूतै यह पाई ॥
हिरदैशाह बहुरि अस भाखे । हम इत रहैं रावरे राखे ॥

दोहा—सीवादास कह्यो वचन, अबते छठयें मास ॥
राज्य करै अवधूतई, तुम्हरो विफल प्रयास ॥ १॥

तब दिवान राजै समुझाये । चलो भवन यतनै भरि पाये ॥
जो देहैं औरहु कछु शापा । तौपैहो अतिशय परितापा ॥
राजा बहुरि भवनकहँ आई । छठयें मासहिं गयो पराई ॥
तब अवधूत भूप पुनि आई । सीवादास चरण शिरनाई ॥
कीन्हें विनय राज्य प्रभु दीन्हा। सीवादास शीश कर कीन्हा ॥
कह्यो अटल कीजै अब राजू । भाइन भृत्यन सहित समाजू ॥
अंतर्दशा रही कछु काला । सो मेटी सब दशरथ लाला ॥
राज्य कबहुँ नहिं खंडित होई । तुम्हरो यश बरणी सब कोई ॥
तब अवधूत महल महँ आयो । राज्य कियो अति आनँद पायो॥

ऐसे सीवादास महाना। भये सकल भागवत प्रधाना॥
तिनके और चरित्र अपारा। मैंवरण्यों नहिं भय विस्तारा॥
औरहु जानिलेहु यहि भांती। सीवादास सिद्ध विख्याती॥

दोहा—सुत अवधूत अजीत भो,भोजयासह सुत तासु॥
विश्वनाथ सुत तासुभो,तासुत मैं तेहिं दासु॥ २॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेसप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

दोहा—श्रीपंडित वर भागवत, तुलाराम जेहिं नाम॥
तासु चरित वर्णन करौं, सुनहु सकल मतिधाम॥१॥

महाभागवत महाउदारा। तज्यो सकल सुत धन परिवारा॥
बांचहिं नगरहिनगर पुराना। पावहिंधन पट भूषण नाना॥
लाखन द्रव्य चढ़ै तहँ जोरे। देहिं साधु विप्रन कहँ सोरे॥
मकर राशि आवै रवि जबहीं। बसैं प्रयाग जायके तबहीं॥
मास प्रयंत करहिं तहँ वासा। पूरहिं सब विप्रनकी आसा॥
द्विज साधुन कहँ कौनेहुँ साला। देहिं सहस्रन बांटि दुशाला॥
लाखन साधुन विप्रन काहीं। भोजन देहिं यथेष्ठ सदाहीं॥
नहिं कहुँ राज्य न धन बहुताई। पूर करहिं तिनको यदुराई॥
कहैं भागवत जेहिं पुरमाहीं। जुरैं सहस्रन यूह तहाँहीं॥
कहि श्लोक करहिं उपदेशा। रहै न पुनि अज्ञानको लेशा॥
कहैं निशंक रंक नृप काहीं। हियते कोमल उपर रुखाहीं॥
तजन लगे जब तनुहिं प्रयागा। तब बोले भरिकै अनुरागा॥

दोहा—साधु पाँवरी लाय अब,धरहु हमारे शीश॥
इष्टदेव जो साधु मम,तौ प्रसन्न जगदीश॥ १॥

असकहि साधुन पद सुमिरि,वेणीतज्यो शरीर ॥
तिनकी कथा अपारहै,को कहि लागै तीर ॥ २ ॥
इति सिद्धिश्रीमहाराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यां
कलियुगखंडेउत्तरचरित्रे अष्टदशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

दोहा—एक साधु गोपीचरण, कियो सोन तट वास।
देवक्षेत्रहै नाम जेहिं, मज्जन पाप विनास ॥ १ ॥
रहहि यकांत सुमिरि हरिकाहीं।कोहुकर संग करहिं कहुँ नाहीं॥
पहिरि पादुका शैल उतंगा। उतरहि तुरत न डोलहि अंगा ॥
कोहुसों कबहुँ भेंट ह्वै जाई। ताहि देहिं द्रुत साधु बनाई ॥
भोजन करत कोउ नहिंजानै। रहैं गुप्त कोउ नहिं पहिंचानै॥
पहिरि पादुका जल महँ जाही। बूड़हिं तासु पादुका नाहीं ॥
देउरा को दलजीत बघेला।तासों परचो एक दिन भेला ॥
कह्यो देहु बाछी हमकाहीं। कबहूं तोरि विगरिहै नाहीं ॥
वर्ष दिवशकी सो दिय बाछी। रही साधु आश्रम सो आछी॥
दूध देइ सो विना वियाने। यह प्रसिद्ध सिगरे जन जाने ॥
एक दिना दलजीत बोलायो। सेवक एक बोलावन आयो ॥
आप कह्यो मैं तहँ ह्वै आयो। पूंछ्यो जाय मृषा जो भायो ॥
सो पूंछ्यो चलिकै तिन पाहीं। कह्यो आइयो नाथ यहांहीं ॥
दोहा—ऐसे चरित अनेकहैं, कहँलों करों बखान ॥
अबलों तेहिं गिरि पर रहत,करि वपु अंतर्ध्यान॥२॥
इति श्रीमन्महाराजाधिराज श्रीरघुराजसिंहजूदेवकृते श्रीरामरसिका
वल्यां उत्तरचरित्रेएकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥
दोहा—कृष्णदासको कहतहौं,अब रमणीय चरित्र ॥
शरभंगाश्रममें रहे, तिनकी कला विचित्र ॥ १ ॥

अतिशय कृष्णचरण अनुरागी।निशि दिननामजपतसुखपागी ॥
कृष्ण अनन्य उपासक सांचे । निशि दिन कृष्ण प्रेम रसराचे॥
वराग्राम यक रह्यो बघेला । नाम जासु शिरनेत नवेला ॥
भाग्यविवश सो तेहिं शिषिभयऊ।तबते तासु सुधरि सब गयऊ॥
गुरुनिकेत शिरनेत सिधारचो।यक दिन ऐसो वचन उचारचो॥
नाथ होत पारस केहिं देशा । तब बोले प्रभु है सब देशा ॥
लहै न पारस जन विन भागा । पारस सत्य कृष्ण अनुरागा ॥
असकहि लाये एक पषानो । ताहि कह्यो यहि पारसजानो ॥
लैशिरनेत केरि तरवारी । दियो छुवाय पषाण निहारी ॥
भै तुरंत तरवारि कनक की । कुंदनकी द्युति भई चमक की॥
कृष्णदास बोले तब वानी । यामें तेरी है कछु हानी ॥
तेरी भाग्य सोन यक सेरा । सो ले कह्यो मानि अब मेरा ॥

दोहा—अस कहि सोना सेर भरि, शिरनेताहिं को दीन ॥
और भूमिमें फेंकिकै,पुनि लोहा तेहिं कीन ॥ १ ॥

सोई सोन लख्यो मैं नयना । अबलों बनो अहै तेहि अयना ॥
पुनि प्रभु कह्यो सुनो शिरनेता । यक पारस पषाणके हेता ॥
अस कहि उठि लै एक पषाना । दियो छुवाय पषाण चटाना ॥
तुरत चटान सोनकी ह्वैगे । सहसन मनुष नयनते ज्वैगे ॥
ऐसे चरित अनेकन तिनके । नहिं रसना कहि जात कविनके ॥
मरणलगी मेरी पितृव्यानी । तब प्रभु ऐसी गिरा बखानी ॥
देखौ कृष्ण मंत्र परभाऊ । सो चढ़िकै विमान भरि वाऊ ॥
सुखी शुद्ध गोलोक सिधारी । करि प्रणाम मम ओर निहारी ॥
सुनत वचन जन कौतुक माने । प्रभुके वचन सत्य सब जाने ॥
यक दिन कह्यो जाहुँ गोलोका ।लखि कलिकाल होत उर शोका॥
अस कहि प्रविशे गुहा मँझारी। पुनि नहिं तबते कढ़े सुखारी॥

पितु कहि पद परि रोवन लागी। कह्यो पिता तुमहौ बड़भागी॥
मोहि न कछु संपति की हानी। लीजै सहस शक्र सम जानी॥
दम्पति देखि अनूप विभूती।मान्यो वृथा न निज करतूती॥
दोहा–पुनि सिय मंदिरको गये, दम्पति लहि सुख भौन॥
रहे अवध कछु काल पुनि, किय मिथिलाको गौन॥२॥
एक संतकी कहौं कहानी। देवादास नाम जेहिं जानी॥
चित्रकूट वासी हरि प्यारो।सकल शास्त्र को सत्य भँडारो॥
चित्रकूट महँ तासु चरित्रा। जानत सिगरे संत पवित्रा॥
युगलानन्य शरण यक संता। अवलों अवध माहिं विलसंता॥
तिनको चरित जगत् सब जानै। सिगरे सज्जन करत बखानै॥
रामप्रेम वारिधिमहँ मगना। सिय सहचरी भाव चित लगना॥
सरयू तीर अनन्य निवासी। दम्पति रास रुचिर रस रासी॥
आश्रम वास करहिं सब काला। रचहिं अनेकन ग्रंथ विशाला॥
सब विद्या महँ परम प्रवीना। लोभ मोह मद मत्सर हीना॥
मोपर कृपा करहिं अति भारी। जगत् मित्र विज्ञान विचारी॥
भाषा पारसि आदिक केरे। रचहिं रामपद सुभग घनेरे॥
चित्रकूटमें जब मैं आयो। प्रभुके चरण जाय शिरनायो॥
दोहा–मोको दिय उपदेश अस, भजु अनन्य रघुवीर॥
सीतापति करुणा उदधि, हरहिं सकल भवपीर॥ ३॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीराम रसिकावल्यांउत्तरचरित्रेद्वाविंशोऽध्यायः॥ २२॥

दोहा–अब हिम्मति हियमें किये, हिम्मतिदास चरित्र॥
नेसुक मैं वर्णन करौं, जानि विशेषि विचित्र॥१॥
पंनानगर नगीचहि ग्रामा। रह्यो वरारिच अस तेहिं नामा॥

हिम्मति दास रह्यो तेहि माहीं। बालहि ते विषयनि वश नाहीं ॥
लैकर झाँझ कृष्ण पद गावै । प्रेम मग्न तनु भानु भुलावै ॥
गयो एक कोउ शिष्य लेवाई । सुन्यो भागवत धनहुँ चढ़ाई ॥
कछु संपति लै विप्रन दीन्हे । कछु लै गवन भवन कहँ कीन्हे॥
मारगमें लूट्यो जब चोरा । हिम्मत ध्यायो नंदकिशोरा ॥
झांझ बजाय सुनावन लागे । चोर वित्तलै नेसुक भागे ॥
भये सबै आंधर तेहिं ठाहीं । गिरे आय तिनके पदमाहीं ॥
धनदै घरभरि तेहि पहुँचायो । तस्कर चैन पाय शिरनायो ॥
तेऊ लहि तिनको उपदेशा । भजनलगे सब त्यागि रमेशा॥
यक दिन मंदिर केरि उघारी । मिली न हिम्मति भये दुखारी॥
गावनलागे झांझ बजाई । तारा टूटि गिरचो महि आई ॥

दोहा–यक दिन हिम्मतिदास गृह,बैठ रहे युग याम ।
स्यंदन चाढ़ि आवत भये, रघुनंदन तेहिं धाम ॥ १ ॥

रहै नारि हिम्माति गृह नेरे । सो दोउ बंधुनको जब हेरे ॥
द्वै बालक सुंदर मनहारे । हिम्माति दासहिं भवन सिधारे ॥
अस कहि देखनहित सोआई । हिम्मतिदासहि गिरा सुनाई ॥
द्वै बालक तुम्हरे गृह आये । देहु देखाय कहां बैठाये ॥
हिम्मति कह्यो न मैं इत देखे।तू केहि ठौर कौन विधि पेखे॥
सो करि शपथ कह्यो असि बानी।मैं देखे बालक छविखानी ॥
तब हिम्माति परदक्षिण कीन्ह्यो । कह्यो जन्मफल तैं लैलीन्ह्यो ॥
एक समय महँ हिम्मतिदासा । युगलकिशोर दरशकी आसा॥
आये मंदिरमहँ अधराता । बंद कपाट सुनी असि बाता ॥
तब यह दोहा पढ्यो पुकारी । सो मैं इतही लिखौं विचारी ॥

दोहा–कपटिनके लागे रहैं, निशि दिन वज्र कपाट ॥
प्रेमिनके पद परतहीं, खुलत कपाट झपाट ॥ २ ॥

जब अस हिम्मतिदास उचारा । अनायास खुलिगये केंवारा ॥
हिम्मति युगलकिशोर विलोकी ।फिरि आये निज भवन अशोकी

दोहा–एक समय तुलसी विपिन, गमने हिम्मतिदास ॥
तहँ राधा माधव दरश, करन भई उर आश ॥ ३ ॥
तब बैठे शृंगार वट, तरु तर द्वै व्रत कीन ॥
स्वप्न माहँ राधा रमण, ऐसो शासन दीन ॥ ४ ॥
तुमको तौ दीन्ह्यो दरश, मैं चलिकै बहु बार ॥
जहां जहां दीन्हें दरश, सो सब किये उचार ॥ ५ ॥
तब हिम्मति विश्वास करि, प्रेम मगन मन कीन ॥
वृंदावनके कुंजमें, यह दोहा पढ़ि दीन ॥ ६ ॥
घर घर गोपी गोपहैं, घर घर गौवैं ग्वाल ॥
घर घर हिम्मतिदासको, मिलत लाडिली लाल ॥७॥
तब राधा माधव युगल, प्रेम मगन तेहिं जानि ॥
मोरमुकुट मुरली लिये, दियो दरश छविखानि ॥८॥
तब हिम्मति दोहा पढ़्यो, राखी जनकी लाज ॥
ऐसे प्रभुको ध्याइये, हिम्मति सहित समाज॥ ९ ॥

कवित्त–ताके भाग्य जागे जाके नयननमें लाल लागे,ललित त्रिभंगी देखि रंक निधि पाईसी।कहत न बनै बयन सुने मनमोहनके,भूली कुलकानि भई अकह कहाईसी ॥ लोक गुरुलोक अवलोकहूँ की सुधि नाहिं, युगल स्वरूप सिंधु लाय डुबकाईसी ॥ साहेब शरण पाय हिम्मति विलासी भये, तीनि लोक साहिबीहू लागै लघुराईसी ॥ १॥

दोहा–पुनिहिम्मति यात्रा कियो, वृंदावनकी सर्व ॥
आये अपने भवनमें, माने मोद अखर्व ॥ १० ॥
शरदपूर्णिमाकोरहै, उत्सव यक दिन माहिं ॥

श्रीमूरति अंगन विषे, दिय पधराय तहांहिं ॥ ११ ॥
हिम्मति तहँ गावनलगे, मध्य संतकी भीर ॥
प्रेम मगन तनु भान तब, ढारत आँखिन नीर ॥१२॥
जस जस हिम्मति डोलते, तस तस मूरतिडोल ॥
यह कौतुक सब साधु लखि, बोले ऐसो बोल ॥ १३ ॥
मति नाचहु हिम्मतिहुलसि, प्रभुको परत प्रयास ॥
हिम्मति लजि बैठे तबै, सब साधुनके पास ॥ १४ ॥
ऐसे हिम्मतिदासके, जानहु चरित अनेक ॥
कहँलों मैं वर्णन करों, कह्यो यथामति नेक ॥ १५ ॥
इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेचतुर्विंशोऽध्यायः॥ २४ ॥

दोहा–एक अपूरव साधुभे, नाम सु पर्वतदास ॥
तिनको अब श्रोता सुनहु, अतिसुंदर इतिहास ॥१ ॥
छप्पय–धमना नामक ग्राम रहै यक परम सुहावन ॥
पर्वतदास सुसंत तहां निवसे जगपावन ॥
तहँकोऊ यक संत आइ मांग्यो जलपानै ॥
लागे पर्वतदास देन तब कह्यो सुजानै ॥
निगुरा कर जल हम लेत नहिं,मंत्र लिहे जो होहु तुम
तौ देहु सलिल पीवैं तुरत,विन गुरुजग जालिम जुलुम १
बोले पर्वतदास मंत्र हम अब विनु लीन्हे ॥
कैसे तुमको जानदेहिं विन पानहिं कीन्हे ॥
यह सुनि साधू उठ्यो गह्यो मग अति अतुराई ॥
पर्वत मानि गलानि लियो ताको पछिआई ॥
तब साधु कह्यो तेहिं मुरुकि कै, मंत्र लेहु घर जायकै॥

पर्वत कह तुमहीं देहु अब, काहि कहौं गोहरायकै॥२॥
दै साधू उपदेश गयो कहुँ देशन काहीं॥
पर्वत लागे करन संत सेवन घरमाहीं॥
एक समय जगदीश चले पथि खर्च चुक्यो जब॥
कोउ साधू चलि आय तमाखू मांगतभो तब॥
तेहि कर प्रभु थैली देतभे, खाय तमाखू सो दियो॥
तहँ लै थैली पर्वत चले, खान तमाखू चित कियो॥३॥
खोले थैली लखे रुपैया द्वै तेहिं माहीं॥
तब विस्मित ह्वै लिय भजाइ भो खर्च तहांहीं॥
मिले रुपैया युगल जबै तेहि दिनते तामै॥
पर्वत गुणि हरिकृपा गये जगदीशहि धामै॥
करिकै दरशन जगदीशको, आये जब निज ऐनमें॥
तब यह दोहा लागे पढ़न, साधु समाजहिचैनमें॥ ४॥

दोहा—बहु पर्वत रघुनाथ पहँ, पहुँचायो हनुमान॥
जन पर्वत पहुँचाइहौ, तब वदिहौं बलवान॥ १॥
पर्वत मन कहँ रैनि दिन, हारि कर मन अटकाव॥
क्षणसरतार अनर्थ कृत, वैश्य भूतकर न्याव॥ २॥
कोउ साधू पूँछ्यो तहां, वैश्य भूत कस न्याव॥
तब पर्वत बोल्यो हुलसि, सुनहु संत भरि चाव॥ ३॥
यक वानी पूरव धनी, भयो निर्धनी फेरि॥
कह्यो साधुपहँ आसि कृपा, करहु होय धन ढेरि॥४॥
साधु कह्यो जो प्रेत यक, तुरत सिद्ध ह्वै जाय॥
तौ जो धन मँगिहौ अवशि, तुमको देहै आय॥ ५॥
वणिक प्रेतको सिद्ध किय, प्रेत कह्यो अनखाय॥
काम रीति करिहौ हमैं, तौ हम पटकब आय॥ ६॥

कहै वणिक सो लायकै, देतो प्रेत तुरंत ॥
सांस न पावै वणिक क्षण, भयो तबै भयवंत॥ ७॥
कह्यो साधुसों प्रेत मोहिं,मारन चहत तुरंत ॥
देहु उपाय बताय अब,तुम करुणाकरसंत ॥ ८॥
साधु कह्यो सौपोरको,देहु बाँस यक फोरि ॥
द्वार गाड़ि तासों कहहु, उतरहु चढ़हु बहोरि ॥ ९॥
सो उपाय बानी कियो,प्रेत रह्यो तेहिं वंस ॥
प्रेत वणिकको न्याव अस,भजै जो अस सोइ हंस१०॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृते
श्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५॥

दोहा—एक ब्रह्मचारी रहे,ममताताागुरु सोय ॥
तासु कथा वर्णन करौं, सुनहु सबै मुदमोय ॥ १ ॥

हरि आशी काशीके वासी। महा विरक्त विश्व भय नाशी॥
हनुमत कवच वज्र पंजर को। महान्यास कीन्हे तप वर को॥
हरि वितारिक्त जाहि शिरनावै। मूरति तुरत फूटि सो जावै ॥
रह्यो एक पूनाको राजा। चिमनाआपा नाम दराजा ॥
भाग्यविवशसोऊ शिषि भयऊ। तेहिं प्रभाव दानी ह्वै गयऊ ॥
रहे ब्रह्मचारी यक ठामा। मिली न भिक्षा मांगे ग्रामा ॥
नहिं आई पूजनकी साजू। उपज्यो मनमहँ शोक दराजू ॥
कह्यो शिष्यको ग्रामहिं जाई। देहु अन्न कौनहुँ तुम लाई ॥
शिष्य मांगि सामा कछु लायो। पात्र मृत्तिका ताहि चुरायो ॥
पुनिकांटा यक कूपहि डाऱ्यो। कनकपात्र बहुभांति निकाऱ्यो॥
पूजाहिं जो मूरति जगदीशा। तासों कह्यो नाय पद शीशा ॥
नाथ नेम मम अहै महाना। खाहुँ महापरसाद न आना ॥

दोहा–जो अनन्य मैं दास तुव, मोपर दायाहोय ॥
महाप्रसादतुरंतहीं, अब मँगाइये सोय ॥ १ ॥
अस कहि जब नैवेद्य लगायो । महाप्रसाद तुरंतहि आयो ॥
देखि सकल कौतुक जनमाने । प्रभुहिं प्रणाम कियोसुखसाने॥
एक समय गवने बंगाला । उत्सव तहां रह्यो तेहि काला॥
रही तहां लाखन जन भीरा । कोउ बंगाली यक मतिधीरा ॥
लियो ब्रह्मचारी बोलवाई । गये नाथ गुणि आदरताई ॥
तहँ मृत्तिका मूर्ति कालीकी । विरची जन शोभा शालीकी ॥
तेहि चढ़ाय लै चलै विमाना । जय जय माच्यो शोर महाना ॥
कीन्हे सब प्रणाम मतिधामा । प्रभुसों कह्यो करहु परणामा ॥
प्रभु कह मोहिं नप्रणामकरावहु। काहे अपयश शीश चढ़ावहु॥
तब रोषितभे सब बंगाली । बोले वचन अहै यह जाली ॥
नहिं नावै अंबाकहँ शीशा । माने कौन काहि निज ईशा ॥
कह्यो ब्रह्मचारी तब वाणी । मेरो प्रभुहै शारंगपाणी ॥
दोहा–जो मैं शीश नवाइहौं, तुम्हरी देवी काहिं ॥
सहस टूकह्वै मूर्त्ति यह, फूटि जई क्षणमाहिं ॥ २ ॥
तब बोले सब वचन प्रचंडा । करै ब्रह्मचारी पाखंडा ॥
पकरि शीश सब देहु नवाई । याकी सब कलई खुलि जाई ॥
दौरे सकल नवावन शीशा । तब सुमिरयो प्रभुश्रीजगदीशा ॥
हँसत हँसत जोरेयुग हाथा । कालीको नायो निज माथा ॥
माथ नवावत मूर्त्ति उदारा । भई तुरंतहि टूक हजारा ॥
बंगाली मारन हित धाये । तब तिनको प्रभु वचन सुनाये ॥
नहिं आयुध गड़िहै तनुमाहीं । हौं पकरे रहिहौं इतनाहीं ॥
अस कहि पहिरि पादुका पायन।उतरि गये गंगा अति चायन॥
भये चकित सिगरे बंगाली । सबकी मिटी गर्वकी लाली ॥

गये ब्रह्मचारी यक काला । जगन्नाथकी पुरी विशाला ॥
अरुण खम्भ यक तहँ रचवायो । अति लंबो द्वारे धरवायो ॥
सिंह पौरि महँ चहे गड़ावन । लगे बहुत जन समिटि उठावन॥

दोहा–उठो उठायो खम्भ नहिं, गये सकल जन हारि ॥
गये ब्रह्मचारी तहां, श्रीजगदीश सँभारि ॥ ३ ॥

अरुण खम्भ यक हाथ उठाई । कीन्ह्यो ठाढ़ प्रयास न पाई ॥
पेखि पुरी जन अचरज माने । महापुरुष प्रभुको पहिचाने ॥
यहि विधि कथा अनेकनि ताकी।कहँलों कहों रही बहुबाकी॥
मातामह जे रहे हमारे । तिनसों अस प्रभु वचन उचारे ॥
कबहूं तोरि राज्य नहिं छूटी । जो तुव वंश प्रजा नहिं लूटी ॥
कियो विनय मातामह मोरा । कछु प्रसाद चाहौं प्रभु तोरा ॥
तब प्रभु कह्यो जो तोरि कुमारी । ताहि शिष्य तू करै हमारी॥
तब मम मातहिं शिष्य करायो । सब कुटुंब धनि जन्म गनायो॥
कबहुँ कबहुँ मातामह गेहू । आये नाथ किये अति नेहू ॥
सकल जगतमहँ विदित प्रभाऊ । धन्य धरा जहँ धारयो पाऊ॥
अरुण खम्भ जगदीश दुवारे । अबलों देखहिं मनुज अपारे ॥
प्रभु जगदीश पुरी महँ जाई । सन्मुख पद्मासनहि लगाई ॥

दोहा–सबसों कह अब तनु तजहुँ, अनमिष दृग करिदीन॥
सबके देखत वपुष तजि, भे जगदीशहिं लीन ॥४॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजरघुराजसिंहजूदेवकृते श्रीरामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेषडविंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

दोहा–और भक्तकी एक अब, गाथा सुनहु सुजान॥
अबते द्वादश वर्षभे, तबको चरित महान ॥ १ ॥

मेरी राज्य माहँ यक ग्रामा । प्राग पंथ महँ है गढ़ नामा ॥

तहँ यक काछी रह्यो सुजाना। ताको नाम दास भगवाना॥
बानि परी बालहिंते ताकी। करै साधुसेवा सुख छाकी॥
सेवत साधु बित्यो बहुकाला। अति निर्धनी दरिद्र कराला॥
मम यक बाग रहै तेहिं ग्रामा। बसै तहां रचिकै निज धामा॥
यक दिन रह्यो महाघन घोरा। वर्षन लागे देन झकोरा॥
चपला चमकि रही चहुँ घाहीं। करहु पसारे सूझत नाहीं॥
नदी नार सब तजे करारा। धरणि महा धावत जलधारा॥
ताही दिवश मध्य अधराता। चारि साधु आये अवदाता॥
द्वारहिंते यहि विधि गोहराये। सुनु भगवानदास हम आये॥
भींजत खड़े कलेश अपारा। गये तीनि दिन बिना अहारा॥
तब भगवानदास उठि धायो। चारिहुँ साधु सदन पधरायो॥

दोहा—घरके बांस निकारिकै, दीन्ह्यो धूनी बारि॥
लग्यो अन्न खोजन भवन, कछु नहिं परचो निहारि १॥

मान्यो अति मनमाहँ गलानी। काह करौं अब सारँगपानी॥
तब द्वारे यक वणिक पुकाऱ्यो। सुनै आय इत कह्यो हमाऱ्यो॥
तब भगवानदास तहँ गयऊ। वणिक ताहि यहि विधि कहि दयऊ॥
आये साधु भवन तुव चारी। मैं सुनि लीन्ह्यों ग्राम मँझारी॥
वर्षावात जानि अति जोरा। मैंही लायों साजु अथोरा॥
असकहि सघृत अन्न बहु साजू। वणिक दियो तेहिं गुणि अति काजू॥
तब भगवानदास अस भाखा। याको मोल काह करि राखा॥
बोल्यो वणिक मोल बसु आना। दियो कालिह पहुँचाय मकाना॥
लै भगवानदास सब साजू। मान्यो अपनेको कृतकाजू॥
चारिहु साधुन निशा जेंवायो। तिनको जूंठ आपहूं पायो॥
निशा सिरानि भयो परभाता। गमने साधु रहे जहँ जाता॥
लै भगवानदास बसु आना। गयो वणिकके द्रुतहिं दुकाना॥

दोहा—गोहराये तोहिं नामलै, दियो निशा जो साजु ॥
लीजै ताको मोल यह, कियो मोहिं कृतकाजु ॥ २ ॥
वणिक नारि तब तहँ कढ़ि आई । बोली कोपि गयो बौराई ॥
दश दिनभे पति गयो प्रयागा । मैं जानौं नहिं को केहिं मांगा॥
जब पति ऐहैं तब तुम दीजै । बिन जाने कैसे हम लीजै ॥
नारि वचन सुनि विस्मित भयऊ ।तब भगवानदास घर गयऊ॥
दश दिन बीते वणिक सिधारा । नारि सकल वृत्तांत उचारा ॥
तब भगवान गये घर माहीं । आयो विस्मित वणिक तहांहीं ॥
कह भगवानदास सुनु भाई । दियो साजु जो निशि महँ आई ॥
तुमहिं मोल भाष्यो वसु आना ।सो लीजै किय काज महाना ॥
वणिक कह्यो हौं गयों प्रयागा ।कहत कहा तोको कोउ लागा ॥
विंशत दिन बीते घर आयों । तेरे पास साजु कब लायों ॥
सुनि भगवानदास भरि लाजू । जान्यो सत्य अहै यदुराजू ॥
दीनदयालु दीन सुधि लीन्ह्यो ।मम हित हाय महाश्रम कीन्ह्यो॥
दोहा—अस विचारि तुरतहिं तज्यो, गोत्र कलत्र कुटुम्ब ॥
भो विरक्त अति भवनते, विचऱ्यो लैकर तुम्ब ॥३ ॥
मैं जब यह सिगरी सुधि पायों । तुरत साधुको खोज करायों ॥
इश्वरजीत यक मम सरदारा । धीर वीर हरिदास उदारा ॥
तासों कह्यों तुरंत बोलाई । तुम भगवानदास लै आई ॥
राखहु अपने अयन मझारी । करहु तासु सेवा सुखकारी ॥
ईश्वरजीत तुरंतहि धायो । सादर साधु चरण शिरनायो ॥
पुर वैकुंठ नाम तेहि ग्रामा । लायो ताहि मानि सुखधामा॥
तबते अचल दास भगवाना । वसि वैकुंठ पुरै मतिवाना ॥
अबलों करै साधु सेवकाई । रमे रामके रंग महाई ॥
काम क्रोध मद लोभहुँ मोहू । कबहुँ न परशत गुणि हरिछोहू।

जब मम भवनमाहँ सुख चाहा। होत जानकी व्याह उछाहा॥
तब मोहिं करन सकल कृतकाजू। पगु धारत मधि संत समाजू॥
जितने साधु तासु गृह आवैं। जबलों रहैं सुभोजन पावैं॥

सोरठा–साधु दासभगवान, अबलों अछत विकुंठपुर॥
भाव सहित भगवान, भजै भीति भव भानि भल४॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्री
रामरसिकावल्यांउत्तरचारित्रेसप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥

दोहा–एक साधुको चरित अब, श्रोता सुनहु अनूप॥
रह्यो देश पंजाबमें, एक नगरको भूप॥ १॥

खेलन हेतु अखेट अपारा। गयो उत्तराखंड पहारा॥
तहँ यक साधु मिल्यो बनमाहीं। भयो तासु सत्संग तहांहीं॥
तबते नगर कोश परिवारा। तज्यो धाम धन वाम कुमारा॥
कृष्णदास निज नाम धराई। वागन लग्यो मही सुखछाई॥
करमें लीन्हें विमल सितारा। जय जय कृष्णहिं करत उचारा॥
नाचत गावत कांपत अंगा। क्षण क्षण रँगत कृष्णके रंगा॥
संवत उनइससै अरु बीसा। काशी गयो सुमिरि जगदीशा॥
समला शिर जामा तनुमाहीं। जय जय कृष्ण कहत चहुँ घाहीं॥
क्षुधा पियास नींद बिसराये। विचरन लग्यो प्रेम रस छाये॥
पग घूँघुरू होत झनकारी। गावहिं सूर सुपद मनहारी॥
सो विचरत विचरत यक साला। मणिकर्णिका गयो यक काला॥
तेहि क्षण लोथि जरावन हेतू। लाय चिताको किय कोउनेतू॥

दोहा–विरचि चिता तेहिं मृतकको, दीन्ह्यों आसु चढ़ाय॥
पावक दियो लगाय पुनि, बढ़ी ज्वाल समुदाय॥

कृष्णदास निर्तत चहुँ घाहीं। चिता समीप गये क्षण माहीं॥१॥
तेहिं घरके वारण तेहिं कीन्हे। बचिहौ नाहिं चिता छुइदीन्हें॥

कृष्णदास तब कह मुसक्याई । दीजै याको नाम बताई ॥
कृष्ण चरण याको है नामा । दियो बताय कौनहै कामा ॥
यह सुनि जयजयकृण उचारी। कूदिपरे तेहिं चिता मँझारी ॥
नाचनलगे लोथि पर जाई । सक्यो न पावक नेकु जराई ॥
नचे दंड दुइलगि तेहि माहीं । लै सितार गावत पदकाहीं ॥
कूदिचले पुनि औरी ओरा । देखतभे जन सबै करोरा ॥
सबै परे पाँयन प्रभुकेरे । निज अभिलाष कहे बहुतेरे ॥
जानि उपद्रव तहँ अति भारी । चले पराय तुरत तपधारी ॥
मिरजापुर आये तेहिं राता । विचरत पद गावत अवदाता ॥
जैपुरको राजा तेहिं काला । मेरो भाम विभूति विशाला ॥

दोहा—सो विंध्याचल अंबिका,आयो दरशनहेत ॥
तासु मिलन हित मैं गयों, विंध्याचल सुखसेत ॥२ ॥

मिरजापुर महँ परम सुजाना । महिसुर एक दासभगवाना ॥
नाम भक्त माली विख्याता । राम अनन्यदास अवदाता ॥
सदा सकल देशन महँ जावै । भक्तमाल सब भाँति सुनावै ॥
करि करि रामतत्त्व उपदेशा । हरहि महाभव भीति कलेशा ॥
रामरसिक परमारथ पूरे । चतुर उदार शील रस रूरे ॥
मेरे नगर रहै बहुधाई । मानहिं मोहिं बंधुकी नाई ॥
तिनहिं भक्तमालीके आलै । आये कृष्णदास यक कालै ॥
कियो भक्तमाली सत्कारा । आसु मोहिं चलि वचन उचारा ॥
महानुभाव भागवत पूरे । आये एक साधु अति रूरे ॥
भाग्य विवश तिन दर्शन कीजै। अपनो जन्म धन्य गनि लीजै॥
मैं कह केहि विधि दर्शन पाऊं ।सो कह विनती करि इत लाऊं॥
अस कहि करि विनती बहुतेरी। अभिलाषा पूरी किय मेरी ॥

दोहा—कृष्णदासको दरश करि,मैंहूं भयों सनाथ ॥
विनय कियो रीवां चलहु,धरहु हाथ मम माथ ॥३॥
सो कह तैं साँचो मम दासा। कबहुँक ऐहौं मैं तुव वासा ॥
अबै गंगसागर कहँ जाऊं। तहँते पलटि पुरी तब आऊं ॥
अस कहि हरिपद गावत धीरा। विचरनलागे गंगा तीरा ॥
यक दिन एक महाजन सूना। मरिगो किय अपनो घर सूना॥
घरमें रही तासु यक माता। तीनिलाखसम्पति अवदाता ॥
मऱ्यो निशा जब भयो प्रभाता। चले जरावन लै सब भ्राता ॥
कृष्णदास गंगाके तीरा। लखे सकल जन महा अधीरा॥
लागि दया बोले असि बानी। मति मानहु अब मनहिं गलानी॥
हम आधी जो सम्पति पैहैं। तौ याको जिआय इत दैहैं ॥
कह्यो मातु तेहिं परि पद माहीं। सिगरी सम्पति लेहु यहांहीं ॥
कृष्णदास तब लोथि धराई। नाचनलगे सितार बजाई ॥
मिरजापुरके मनुज हजारन। खड़े तमाशा लगे विहारन ॥
दोहा—कृष्णदास गावत भये, निरम्यो जो पद सूर ॥
सो मैं इत लिखिदेतहौं,मानि महामुद पूर ॥ ४ ॥
पद—हमारे प्रभु अवगुण चित न धरो ॥
समदरशीहै नाम तिहारो ऐसहिं पार करो ॥
यक लोहा पूजामें रहतो यक घर वधिक परो ॥
यह दुविधा पारस नहिं जानत कंचन करत खरो ॥
यक नदिया यक नार कहावत मैलो नीर भरो ॥
जब मिलिगो तब एक वरणभो सुरसरि नाम परो ॥
यक माया यक ब्रह्म कहावत सूरश्याम झगरो ॥
की याको निरवार करो प्रभु नहिं प्रण जात टरो ॥
दोहा—यह पद गायो प्रेम भरि, नयनन आंसु बहाय ॥
उठ्यो कुमार तुरंत जनु, सोवत दियो जगाय ॥ ५ ॥

मिरजापुर वासी जन जेते । अति अचरज माने मन तेते ॥
रही जो तासु सुवनकी माई । तीनि लाख धन दियो मँगाई ॥
कृष्णदास आधो लै लीन्ह्यो । तुरतहिं साधुन विप्रन दीन्ह्यो ॥
आधो ताको दियो उदारा । करन हेतु पूंजी रोजगारा ॥
गंगासागर आप सिधारे । गावत कृष्णचरित्र सितारे ॥
मिल्यो एक साहेब मग माहीं । सो कह मग छोंड़त कत नाहीं ॥
अस कहि कोड़ा हनन उवायो । हाथ उठावत भूमिहिं आयो ॥
भयो शोर कोउ यक वैरागी । गयो मारि साहेबको भागी ॥
जज्ज कलट्टर खोज करायो । कृष्णदासको कतहुँ न पायो ॥
साहेब रुधिर वमत अति सोई । मगमहँ मरयो लख्यो सब कोई ॥
तिनके और चरित्र अपारा । मैं नहिं लिख्यो मानि विस्तारा ॥
यह चरित्र वहु दिनको नाहीं । वीत्यो संवत एक यहाँहीं ॥

दोहा—यह मेरो देखो सुनो, मानहु मृषा न कोय ॥
भगवत अरु भागवतको, चरित मृषा नहिं होय ॥६॥

इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसि-
कावल्यांकलियुगखंडेउत्तरचरित्रेअष्टविंशोऽध्यायः॥ २८ ॥

दोहा—रामसखेको चरित अब, वर्णन करों अपार ॥
अहै विदित सब जगतमें, कोकहि पावै पार ॥ १ ॥

जैपुरदेश जन्म प्रभु लीना । बालहिंते रघुपति रस भीना ॥
तजे भवन धन कुल परिवारा । आये अवध अनंद अपारा ॥
कछु दिन कियो अवधपुर वासा । आये चित्रकूट सहुलासा ॥
रहे शिष्य यक तिनके संगा । लावै भोजन मांगि असंगा ॥
दश मूरतिकी बनै रसोंई । आयपरैं वैष्णव बहुतोई ॥
रघुपति कृपा करैं सब भोजू । रहै कारखानो यह रोजू ॥

राम उपासक द्वितिय न ऐसो। रामसखे प्रगटो जग जैसो॥
चित्रकूट करि कछु दिन वासा। मैहर आये सियवर आशा॥
अति रमणीय तौन थल भायो। रहन हेतु तहँ कुटी बनायो॥
करहिं ध्यानमहँ विपुल भावना। जैसी छविकी होय कामना॥
ध्यानहिमहँ यक दिन रस रांचे। राम भोग बनवत चित सांचे॥
जो व्यंजन मनमाहँ बनायो। सो तेहिं समय प्रगट ह्वै आयो॥

दोहा—यक साधू आयो हुतो, तहँ दरशनके हेत॥
सो सांचो व्यंजन निरखि, बोल्यो विस्मित चेत॥१॥

ध्यान करत व्यंजन कहँ पायो। रामसखे तब वचन सुनायो॥
तुम कहियो कोहुसों यह नाहीं। जानै कौन ईश गति काहीं॥
यक दिन यक आई तहँ बाई। भई शिष्य सुंदरि मति पाई॥
शीलमती तेहिं नाम धरायो। ताको अस वरदान सुनायो॥
वांचै भक्तमाल भरि प्रेमा। ह्वैहै तेरो सब विधि क्षेमा॥
साधु समाज उजागर ह्वैहै। जहँ जैहै सुंदर यश पैहै॥
तैसहि भई शीलमति बाई। रामसखी सी सत्य सुहाई॥
मैंहूं ताको दर्शन पायों। तेहि आचरण यथाश्रुति गायों॥
यक कायथ आयो इक काला। हाथ कटे अति रह्यो बिहाला॥
ताहि दुखी लखि दिय वरदाना। लिखु सिगरो तैं ग्रंथ प्रमाना॥
दोऊ ठूंठे हाथनमाहीं। लैलिखनी लिखु ग्रंथन काहीं॥
ठूंठे हाथन लै लिखनीको। लिखन लग्यो सो अक्षर नीको॥

दोहा—दियो चित्रनिधि नाम तेहिं, भयो चित्रनिधि सत्ति॥
विदित चित्रनिधिकी अहै, जगमें जाहिरवृत्ति॥२॥

गनीवेग सूबा यक रहेऊ। सो चलि रामसखे पद गहेऊ॥
षट सहस्र अरप्यो सो मुद्रा। ग्रहण कियो नहिं गनि अति छुद्रा॥
विनय कियो दीनता देखाई। पांचहिं रुपया लियो उठाई॥

एक साधुको द्रुत दैराख्यो। घरको जाहु ताहि अस भाख्यो॥
जानहिंराग रागिनी भेदा। गान करहिं जस विधि कह वेदा॥
ध्रुपद ख्याल टप्पा पद रूरे। रचहिं रामके प्रेमहिं पूरे॥
एक समय यक पदहिं बनायो। आयो गायक ताहि सिखायो॥
गायक सो लखनऊ सिधारा। गायो सो नवाब दरबारा॥
सुनत नवाब रीझिअति गयऊ। पूंछ्यो केहिं मुख निर्मितभयऊ॥
गायक कह्यो साधु यक अहहीं। रामसखे मैहरमहँ रहहीं॥
ते अस अस पद बहुत बनाये। अगणित गायक बोलि सिखाये॥
सो पद मैं इत देहुँ लिखाई। रसिकनको अतिशय सुखदाई॥

राग कान्हरा बड़ो ताल—प्यारे तेरी छवि पर वारियां॥छूटी वदन कुँवर दशरथके मारत जुल्फैं कारियां॥ तीखी सजल लाल अंजनयुत लागत आँखैं प्यारियां॥ रामसखे दृग ओढन हमको करो न क्षण भरि न्यारियां॥१॥येरी कोऊ मोहिं बताओ देखे कहूं राम सुजान॥ नृत्यत हँसत रासमंडलमें ह्वैगे अंतर्ध्यान॥ मणि विन नाग मीन ज्यों जल विन तलफत त्यों मम प्रान॥ रामसखे जो आनि मिलावै देहि सो अब जियदान॥२॥

दोहा—तब नवाब निज नाजिरै, पठयो प्रभुके पास॥
यहि विधि विनती करतहौं, मोको देहु हुलास॥ ३॥

रामसखे लखनऊ जो रहहीं। मुद्रा लाख वर्षप्रति लहहीं॥
नाजिर आय कह्यो परि पाँयन। जस नवाब विनती किय चायन॥
कह्यो सखेजू तब हँसि बानी। कोशलनाथभँडार न हानी॥
देखहु तुम सियनाथ भँडारा। कमती नाहिं कौनहू प्रकारा॥
नाजिर चलि भँडार तब पेख्यो। कोटिनकी सम्पति तहँ देख्यो॥
विस्मित भयो चरण शिरनायो। जाय नवाबहि सकल सुनायो॥
रामसखे अस विदित प्रभाऊ। गाय चरित को करै अघाऊ॥

मैं यक सूचन भरि लिखिदीन्हा। सबचरित्र वर्णन नहिं कीन्हा॥
शंकरमाध्व सुमत विस्तारा। रामानुज मत विदित अपारा॥
गौडेश्वर आदिक मत केते। तिनके शाख प्रशाखहुँजेते॥
श्रुति सम्मत तिनके मधिमाहीं। फैलायो निज मत चहुँघाहीं॥
भये शीलनिधि रामसखे शिषि। द्वितिय चित्रनिधि भयोमनो ऋषि
दोहा—तीजो शिष्य सुजान भो, नाम सुशीलादास॥
तिनके शिषि जानकिशरण, जेहिं यश जगत प्रकाश४
अवधशरण तिनके शिषिभयऊ। बुध विरक्त ज्ञानी जग ठयऊ॥
भयो शीलनिधि शिष्य सुजाना। रघुवरशरण नाम जग जाना॥
तिनके शिष्य प्रशिष्यनमाहीं। सहसनहैं सब देशन पाहीं॥
यकते एक अधिक परवीना। राम उपासक हरि रस भीना॥
कहँलों कहों चरित तिनकेरे। मैं लघुमति परभाव घनेरे॥
श्रोता तुमहु सुने सब ह्वैहौ। पूंछि सकल संतनसों लैहौ॥
दम्पति रघुपति सीयउपासी। रुचिर रीति रासहिं रसआसी॥
रामसख संप्रदा प्रभाऊ। को अस जगमहँ जाहि दुराऊ॥
महानुभाव रामके प्यारे। होहिं संत मतिमान उदारे॥
सखी सखाके सदा उपासी। रामरूप पाणिपके आसी॥
अबलों मैहर माहँ अखारा। तासु प्रभाव विदित संसारा॥
तासु सम्प्रदाके बहु संता। राम उपासक अवधवसंता॥
दोहा—है अबलों देखो सुनो, तिनके अमित प्रभाव॥
रसिक संत मतिवंत सब,जानहिं सकल स्वभाव॥५॥
इति सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामरसिका
वल्यांकलियुगखंडेउत्तरार्द्धे उत्तरचरित्रेएकोनत्रिंशोऽध्यायः॥२॥
दोहा—औरहुसंतनकी कथा, वर्णहुँ परम विचित्र॥
जाहि सुनत सब जनन हिय, होते परमपवित्र॥१॥

शहर लखनऊ परम ललामा ।तहँ रघुनाथदास सुखधामा ॥
करहिं चाकरी साहेबकेरी । राम नाम पर प्रीति घनेरी ॥
पहर एक बाकी निशि जानी । उठि सुमिरहिं नित सारँगपानी॥
यहि विधि विपुल काल चलिगयऊ।साहेब पहरा बदलत भयऊ॥
इनको कह्यो हुकुम सुनिलेहू । शेष राति पहरा तुम देहू ॥
तब रघुनाथहि संकट गयऊ । भजन समय पहरा अब भयऊ॥
तब यक मित्रहि कह्यो बुझाई । तुम हमरी बद पहरै जाई ॥
आठ दंड निशि रहे प्रवीना । ठाढ रहहु गहिकै संगीना ॥
जोयहि विधि उपाय तुमसाधा । तौ मम भजन होय नहिं बाधा॥
तब सो सीख मानि मुदमाहीं । पहरा देन गयो तेहि ठाहीं ॥
कछुक दिवश बीते यहि भांती । चुगुल बुझायो साहेब राती ॥
सो सुनि साहेब अति मनमाषा । पहरा देखन किय अभिलाषा॥
पहरावारेहु यह सुधि पायो । साहेब डर तेहि राति न आयो॥

दोहा–पति राखन निज दासकी,पथरकला गहि हाथ ॥
धारि रूप रघुनाथको,आयगये रघुनाथ ॥ १ ॥

रुचिर तिलंगहि वेष बनाये । पहरा हित संगीन चढ़ाये ॥
नेति नेति जेहि वेदन गायो । पहरा देन नाथ सो आयो ॥
मंद मंद टहलत तेहि ठाहीं । आय गयो साहिबहु तहांहीं ॥
रघुनाथहि लखि अति मुदबाढ़ो । चुप ह्वै साहेब रहिगोठाढ़ो ॥
तब प्रभु साहेबको गोहरायो । नहिं बोल्यो तब तुपक चलायो॥
साहेब लौटिगयो गृह माहीं । भोर बोलि रघुनाथहि काहीं॥
निशिको सब वृत्तांत सुनायो । तबरघुनाथदास अस गायो ॥
मैंतो पहरा हित नहिं आयो । नहिं जानो को तुपक चलायो॥
साहेब मन अति विस्मय पायो।को तुव रूप धारि निशि आयो॥
तब इन जान्यो ममहित लागे । धारि सँगीन राम अनुरागे ॥

त्यागि चाकरी सुत वित बामा। अवध वास कीन्ह्यो अभिरामा॥
रामघाटमहँ कुटी बनाई। सेवत संतन अति सुखछाई॥
सहसन संत कुटीमहँआवैं। मनवांछित भोजन सब पावैं॥
मेरेहु मन अभिलाष सदाहीं। कब देखौं प्रभु दर्शन काहीं॥

दोहा—मैं कहँलों वर्णन करहुँ, चरित दास रघुनाथ॥
जेहिके हित अवधेश सुत, लियो तुपक निज हाथ२॥

रामदास तपसी सुखरासी। अवध वास किय जगत निरासी॥
सरयुतीरके भये निवासी। भजन कियो सरयू हित खासी॥
भक्त जानि झाकी तिन्ह दीन्ही।विनती रामदरश इन्ह कीन्ही॥
राम दरश दुर्लभ कलि माहीं। मातु कही तोहिं दुर्लभ नाहीं॥
नौमी कहँ दरशन तुम पैहौ। परम अलभ्य लाभ जग लैहौ॥
जवहिं रामनौमी दिन आयो। दश दिशि धुंधुकार नभ छायो॥
सहसन हय गय सजे शृंगारा। तिन्हपर रघुवंशी सरदारा॥
चारहु भाय परम छवि छावत। आये सन्मुख वाजि नचावत॥
कोउ भूपतिकी सैन्य अपारा। नेकु चितै पुनि दियो कैंवारा॥
सरयु वचन गुणि करत विचारा।पुनि जब देख्यो खोलि किंवारा॥
एको जन नहिं तहां निहारचो।तब अति अचरज उरमहँ धारचो॥
पुनि सरयूके निकट सिधाये। सरयू कह्यो दरश तुम पाये॥

दोहा—अब संतन सेवहु मुदित, पैहो सब मनकाम॥
इनकह कैसे सेइहौं, धन नाहिं मेरे धाम॥ ३॥

देहैं धन सरयू अस कहेऊ। संतसेव मारग इन लहेऊ॥
सेवत संतन बढ्यो प्रभावा। सहसन जन नित द्रव्य चढ़ावा॥
यक दिन संत गये अधराता। साजु सबै घृत नाहिं लखाता॥
तब सरयूपहँ गिरा सुनाई। घृत दीजै संतन हित माई॥
अस कहि गगरा भरि जल लाये। डारि कराहीं घृत सब पाये॥

एक दिवश बैठे निज आसन। आये संत कछू धन पासन ॥
सहसन संत देखि सुख पाये। तुरत धाय सरयू पहँ आये ॥
भरि तुंवा सरयू रज आनी। उलदत मुहरैं सब कोउ जानी॥
यक दिन बैठे रज महँ जाई। सरयु बाढ़ि चहुँदिशिते आई॥
जहँ बैठे तहँ जल नहिं आयो। देखत सब जन विस्मय पायो॥
ऐसे चरित अमित तिनकेरे। दयादृष्टि जीवन पर हेरे ॥
अंत समय चढ़ि विमल विमाना। प्रमुदित गये लोक भगवाना॥

दोहा—संत सेव परभाव अस, जानहु जन सबकोइ ॥
शम दमादि साधन विना, राम धाम पथ होय ॥ ४ ॥

मनीराम तजि सुत वित धामा। अवध वास कीन्हो अभिरामा ॥
संतन सेव रीति गहि लीन्ह्यो। यह उपदेश शिष्यहुँन कीन्ह्यो॥
छत्तिस पाठ रमायण केरे। करहिं सालप्रति सरयू नेरे ॥
सेवत सेवत संतन काहीं। पंद्रासै ऋणभयो तहांहीं ॥
तब सरयूके निकट सिधाई। ऋणकी बात गये सब गाई ॥
तब सरयू अस युक्ति बताई। युग मटुका कुठरी महँ लाई ॥
तिन्ह मटुकन ते द्रव्य निकारहु। अपनो ऋणसिगरो दैडारहु॥
शासन सुनत तैसही कीन्ह्यो। लाखन संतन भोजन दीन्ह्यो ॥
तिन्हके शिष्य वैष्णवदासा। वही रीति अब करत प्रकासा ॥
शीलमणीभे संत प्रधाना। कनक भुवन तिनको स्थाना ॥
रामसखेके शिष्य सुजाना। दिनप्रति करहिं मानसी ध्याना॥
यक दिन ध्यान मानसी माहीं। कछुक हासरस भयो तहांहीं॥
भागि नाथ कढ़िगये दुवारा। अरझ्यो पाग निंबुकी डारा ॥

दोहा—लगे करन पोशाक तब, शिर पगड़ी नहिं पेखि ॥
मंदिरके बाहेर निकसि, निंबूके तरु देखि ॥ ५ ॥
ऐसहि मांडवि शरणभे, कनकभवन स्थान ॥

संत सेइ हरिदरश लहि, लीनभये भगवान ॥ ६ ॥
ऐसे तिन्हके भाव न गुनहूँ। कृपानिवास चरित अब सुनहूँ॥
दक्षिणके भूपतिके भाई। प्रीति परस्पर अति सुखदाई ॥
यक दिन गे भाभीके गेहू। तासों मानत रहे सनेहू ॥
सिखवतरहे भजनकी रीती। राजहु आय कह्यो असि नीती ॥
नारिनसों एकांतहि माहीं। कबहूं वचन बोलिये नाहीं ॥
कृपानिवास कही तब बाता। नारि नारि ढिग दोष न भ्राता ॥
भूप कोपि तब वचन सुनायो। नारिवेष इन प्रगट देखायो ॥
तब राजा बोल्यो शिरनाई। तुव महिमा अब जान्यों भाई ॥
कृपानिवास भजन जे गाये। रूपाशक्त रीति दरशाये ॥
फैलिरहे जिन्ह भजन अपारे। रसिक जनन सुनि लागत प्यारे॥
रूप सखीभे भक्त महाना। दिल्ली तासु रह्यो स्थाना ॥
दिल्लीके दिवानके बेटा। काहूसों न करैं कहुँ भेंटा ॥
दशषट्वर्ष वचन नहिं बोले। बादशाह कह वचन अमोले ॥
दोहा—वचन उचारहु भांति जेहिं, सो तुम कहहु सुजान ॥
जो न कहहु तौ देहु लिखि, सो हम करब निदान७॥
मम बोलन उपाय तुम पूंछे। लिखेदेत सुनि परेहु न छूंछे ॥
दशकरोरि मुद्रा तुम लावहु। नारायण उत्सव करवावहु ॥
बाँचि शाह दश कोटि मँगाई। रूपसखी ढिग दियो धराई ॥
तब प्रभु होरी समय विचारी। मौन रीति करि दीन्ही न्यारी ॥
नृत्य वाद्य अरु गानहु माहीं। जे जे गुणी सुने भुविमाहीं ॥
तिन सबको तुरंत बोलवायो। दशहज़ार बालकन सिखायो ॥
वर्षरोज़भर लीला भयऊ। पूरण भये त्यागि तनु दयऊ ॥
प्रेमसखीभे गंगापारे। तिनके चरित अमित सुख सारे ॥
एक समय श्रीरामप्रसादै। शाह कह्यो मन अति अहलादै ॥

जस तुम तस कोउ द्वितिय बतावहु। मेरे मन अति मोद बढ़ावहु
तब इन प्रेमसखीको भाष्यो। पारिख लेन शाह अभिलाष्यो॥
सवालाखकी खिलत पठाई। प्रेमसखी लखि तुरत फिराई॥
मेरे ठाकुर अवधविहारी। ठकुराइनि मिथिलेशकुमारी॥
दोहा–तिनको तू देखरावतो, तुच्छ विभव अधिकार॥
रवि सन्मुख कहँ सोहतो, उडुगण तेज प्रकार॥८॥
पुनि तिन यक कवित्त कहँ कीन्ह्यो।सोकवित्त मैं इत लिखिदीन्ह्यो
कवित्त–चंचलतासिगरी तजिकै थिरह्वै न रहो यह बातभलीहै
सेव सियापदपंकजधूरि सजीवनमूरि विहार थलीहै॥
बारहिंबार पुकार कहै अपने मनकी अब प्रेम अलीहै॥
ठाकुर रामलला हमरे ठकुराइनि श्रीमिथिलेश लली है॥१॥
फत्तेपुर यक ग्राम सुहायो। तहँ बलरामदास सुख छायो॥
यक दिन युगल साधु गृह आये। तिनको सादर अशन कराये॥
जात समय तिन किय उपदेशा। संतन सेव किहेहु तुम वेशा॥
सेवत सेवत संतन गाढ़ो। तिनके गृहमें धन बहु बाढ़ो॥
सदावर्त्त तिन तीनि चलाये। राम भरोस सदा उर लाये॥
चित्रकूट अति रुचिर ललामा। तहँ घनश्यामदास सुखधामा॥
संत जनन सेवन परिपाटी। करहिं सदा कछु परै न घाटी॥
दिन प्रति संत तहां चलि आवैं।करि भोजन अति आनँद पावैं॥
आठ दंड बाकी निशिमाहीं। जागि भजन करते सुखमाहीं॥
श्रीमन्नारायण उच्चारन। होत रहत मंदिरप्राति वारन॥
श्रीभागवत और रामायण। होत त्रिकाल तासु पारायण॥
दोहा–राखत नेह गरीब सों, तुरत उठत मिलि धाय॥
ताते श्रीघनश्यामको, रह्यो विमल यश छाय॥९॥
नागाबाबा हरि उर ध्याये। रहैं कडे महँ कुटी बनाये॥

योगाभ्यास रीति सब जानै । संतसेवमहँ परमसयानै ॥
कड़े शहरवासी नित आवैं । ते प्रभुके परचै बहु पावैं ॥
संध्या तक दर्शन सब लेहीं । राति रहन काहू नहिं देहीं ॥
यक दिन कोउ देखनके हेतू । आधीराति गयो मतिसेतू ॥
बाबाके कर पद अरु शीशा । कटे परे अवनी त्यहिं दीशा ॥
तब गोहारि मारत सो भयऊ । बाबाको कोउ वध करि गयऊ ॥
बाबा उठे अंग सब जोरी । कहियो कहुँ न बात यह मोरी ॥
रामसनेही अति अभिरामा । येऊ किये कड़े महँ धामा ॥
संतन सेव रीति गहि लीन्ही । याचन वृत्ति त्यागि सब दीन्ही ॥
तब सब लोग दरशहित जाहीं । पूजा भेट देहिं तेहि ठाहीं ॥
जो गुरुमुख पूजा तेहि लेहीं । गुरुते विमुख त्यागि तेहि देहीं ॥

दोहा—झूंठ वचन बोलैं नहीं, करैं सदा हरिध्यान ॥
आप अमानी औरको, देते मान महान ॥ १० ॥
पश्चिम देशहिमें भये, लाला भक्त सुजान ॥
मैलाग्राम निवास जिन्ह, जानत सकल जहान ॥ ११ ॥

एक समय शुभ कातिक मासा । निज गृह बैठेहुते हुलासा ॥
पिता वचन अस कह्यो तहांहीं । साधुन कियो दंडवत नाहीं ॥
कहि पितु गो यक ग्राम सिधाई। शत समाज खाखिनकी आई ॥
लाला भक्त दंडवत कीन्ह्यो । संतन संतसेवि लखि लीन्ह्यो ॥
इन कह तुमहिं न शीत सतावै । उन कह असको वसन उढ़ावै ॥
तब ये तुरत धाम महँ धाये । शत लोई शत संत उढ़ाये ॥
राग भोग हित अति सुखभीने । च्यालिस मुद्रा तिन्हको दीने ॥
कह्यो शहर बाहेर यक बागा । पाक करहु तहँ युत अनुरागा ॥
पिता मोर जो यह सुधि पावै । तौ मोकहँ बहु त्रास देखावै ॥
संत गये उत इत पितु आयो । सुनि हवाल मारनको धायो ॥

लाला भागि विपिन महँ आये। संतवेष हरि वचन सुनाये ॥
कहो पितासों अस तुम भाई। गनिलीजै लोई गृह जाई ॥
जेहि भुशुंडि निज मानस ध्यायो।भक्तकाज सिखवन वनआयो॥

दोहा—लाला सुनि साधू वचन, दृढ़ विश्वास हिय लेखि ॥
आय पितासों कहत भो, लोई लेहु सरेखि ॥ १२ ॥

कमै तौ दंड मोहिं पितु दीजै। पूर भये कत रोषहि कीजै ॥
पिता जाय गृह सरखत कीन्ह्यो।लोई एक अधिक गनिलीन्ह्यो ॥
लखि अचरज सबहिन शिरनायो। संत प्रभाव देश दरशायो ॥
संत अनंत तहां चलि आवैं। पूरी सब भोजनको पावैं ॥
एक समय तहँ संत जमाती। भूंखे हम अस टेर्‍यो राती ॥
दुइ दिनते हम अन्न न पायो। तब इनके संतन अस गायो ॥
आसन कीजै पाक बनावहिं। तब तुमको हम अशन करावहिं॥
तब तिन्ह बारबार गोहराई। प्राण हमार कढ़त अब भाई ॥
लालाभक्त सुनत उठिधाये। निज साधुनसों वचन सुनाये ॥
ब्यारी हित पेरा जे आये। देहु सबै संतन सुख छाये ॥
सात सेर पेरा कछु घाटी। कहहु देहुँ सब संतन बांटी ॥
आपुहि चलि दीजै सबकाहीं। हमसों बांटत बनिहै नाहीं ॥

दोहा—तब लाला उठिकै तुरत, सब संतन दिय बांटि॥१३॥
सेर सेर पेरा दिये, काहुहि पर्‍यो न घाटि ॥

गंगा गऊ मरी केहु काला। दिय जियाय सुमिरत नँदलाला ॥
वसह एक वाणीको मरेऊ। अति ममत्व ताके पर रहेऊ ॥
लालाभक्त पास सो जाई। अति विनीत ह्वै गिरा सुनाई ॥
बैल विहीन देह नित छीजै। वसह जिआय नाथ यश लीजै ॥
लाला कह मोसों धन लेहू। और बैल तामें लैलेहू ॥
सो हठि पर्‍यो न मानत बाता। दोउ कर गहे चरण जलजाता॥

तब करि दया राम उर ध्याई। बैलहि दीन्ह्यों तुरत जियाई॥
जय जय शब्द सभामहँ छायो। संत महंत सबन शिरनायो॥
एक समय रामतके काजा। चले आप सँग संत समाजा॥
एक ग्राम आये सुख छाई। तहँके जन आये सब धाई॥
करि सत्कार बागमहँ लाये। राग भोग संतन करवाये॥
एक चेटकी तेहि पुर गयऊ। प्रेत सिद्ध कीन्हे सो रहेऊ॥
नारायणको रूप बनावै। प्रेतहि प्रेरि रूप बोलवावै॥
लालाभक्तहि सभा मँझारी। कोउ जन तहँ अस गिरा उचारी॥

दोहा—एक साधु आये इतै, महिमा कही न जात॥
नारायणको रूप प्रभु, ह्वै प्रत्यक्ष बतरात॥ १४॥

तहां भीर होती अतिभारी। शिषि ह्वैगे इतके नर नारी॥
लाला भक्त सुनत दुख माने। जानि चेटकी अति पछिताने॥
यदुनंदन ध्यावहुँ दुखमोचन। दरश हेतु ललकत दोउ लोचन॥
वेद भेद जाको नहिं पावै। सो प्रत्यक्ष कैसे बतरावै॥
चेटकि चेटक करत कराला। देहुँ छुड़ाय सुमिरि नँदलाला॥
करत विचार नाथ मन माहीं। मरयो सेठको पुत्र तहांहीं॥
सरित तीर ताको लैआये। लालाभक्त तुरत उठि धाये॥
तिन सब ठगन तुरत बोलवायो। सहसन जन मधि वचनसुनायो॥
जो सतिनारायण बतवावहु। सेठ पुत्र तौ तुरत जियावहु॥
सेठ पुत्र जो देहु जियाई। हम सब शिष्य होब तुव आई॥
नहिं जीवै तौ प्रण सुनिलेहू। सहित समाज शिष्य तुम होहू॥
तब चेटकी कह्यो दुखमाहीं। पुत्र जियावन मम गति नाहीं॥

दोहा—आप जियावहु पुत्र जो, तौ हम सेवक होव।
सकल सभाके लखत तुव, जूता शिरधरि सेव॥१५॥

नाथ ध्याय उर दशरथ लाला। दियो जियाय सेठको बाला॥

सेठ आय धन विपुल चढ़ायो। पुरवासिन सब शिष्य करायो॥
पुनि चेटकिको दै उपदेशा। कियो भक्त यदुपतिकोवेशा॥
एक समय इक खाखी आयो। सोतौ ऐसो वचन सुनायो॥
सब संतन दै बड़ यश लेहू। कछुक वस्तु हमहूंको देहू॥
लालाभक्त कह्यो मुसक्याई। होहि सो देहुँ तुमहिं जो भाई॥
कठिन बात तब साधु सुनाई।आपनि भगिनि देहु मोहिं लाई॥
भक्तराज तब भगिनि बोलायो। ताको बहु प्रकार समुझायो॥
रुचिर पालकी तुरत सजाई। गहना बहुत दियो पहिराई॥
वसन अमोल भगिनि कहँदीन्हे। नेह रीति सब भेटहि कीन्हे॥
सब तिय मिलि पालकीचढ़ाई। विदा कियो दृग वारि बहाई॥
पुनि खाखीको पूजन करिकै। द्वैशत मुद्रा दिय सुख भरिकै॥

दोहा—बहुत प्रशंसत साधुसो, कन्यहि चल्यो लेवाय॥
बाहेर ग्रामहि जायकै, दिय पालकी धराय॥१६॥

कन्यासों बोले सुख बोरी। तूतौ भगिनि अहै अब मोरी॥
तुव भ्राता मम भक्त सुहायो। तासु परीक्षा हित मैं आयो॥
अबतैं भवन जाहि सुखमाहीं। मम प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं॥
बोली कन्या वचन सुहाये। तुम सँग मोहिं भ्रात पठवाये॥
तुमहिं छांड़ि जैहौं कहुँ नाहीं। तब बोले प्रभु अति सुख माहीं॥
युग शत मुद्रा तुम लैलेहू। दिनप्रति संतन भोजन देहू॥
कमिहै नहिं यह द्रव्य सुहाई। वचन मानि मम अब घरजाई॥
सो जकि रही न वचन वखाना। साधु भये तब अंतर्ध्याना॥
कन्या बहुरि भ्रात गृह आई। साधु कही सब बात सुनाई॥
लालाभक्त परम सुखपायो। संतन टहल माहिं लगवायो॥
अंत समय हरिलोक सिधायो। लालाभक्त जगत यश छायो॥
शैलाग्राम अबहुँ सुख छाई। भगिनी करत साधु सेवकाई॥

दोहा—तीनि वर्षभे तनु तजे, तिनकी कथा अनंत ॥
मैं कहँलों वर्णन करौं, कह्यो सुन्यो मुख संत ॥ १७॥
चित्रकूटमें सरयूदासा । मंदाकिनि तट हरिकी आशा ॥
परम रुचिर यक गुफा बनाये । बैठेरहत राम उर ध्याये ॥
इनकी कथा विचित्र अनेका । विस्तर भय कहिदिय मैंएका ॥
एक दिवश तहँ छीतूदासा । गये दरशहित परमहुलासा ॥
दरश परश करि दोउ अनुरागे । सरयूदास हँसन तब लागे ॥
ताकि ताकि आकासहि ओरे । मगन होत आनँद रस बोरे ॥
पूंछे कह्यो लखहुँ परकासा । लालाभक्त जात हरि पासा ॥
यह जो महाप्रकाश देखाई । हरि पार्षदन केर सुनु भाई ॥
अचरज मानि भक्तमन भारी । तहँते चले चरण रज धारी ॥
उनइससै बाइस कर साला । मारग कृष्ण पंचमी हाला ॥
यहिदिन कागजपर लिखिराख्यो। पूंछे संतन सोउ अस भाख्यो॥
ताकीभगिनि अहै यहि काला । चरणन परत आय नरपाला ॥
दोहा—सरयूदास प्रभाव इमि, जानहु जन सबकोय ॥
वन प्रमोद अबहूँ लसत, मंदाकिनितट सोय ॥ १८॥
कुंजा नाम साहु गुणरासी । शहर आगरेको है वासी ॥
तापर परी विपत्ति घनेरी । नाशभयो घरको धन ढेरी ॥
छीतूदास तहाँ पगु धारे । कुंजा पद गहि वचन उचारे ॥
चलिये प्रभु अब ममगृह माहीं। डेरा कीजै अति मुदमाहीं ॥
अस कहि जनकनंदिनी काहीं । कांधे धारि लायो गृह माहीं ॥
भक्तराज लखि प्रेम विशेषी । कृपापात्र रघुवरको लेखी ॥
ताकहँ प्रभु निजसेवक कीन्हा । उभयलोक सुखताकहँ दीन्हा॥
पुनि बोले प्रभु वचन सुहाये । संतन सेव करहु मन लाये ॥
धनी होहुगे थोरहि काला । लाखन लहिहौ विभव विशाला॥

जस जस विभव बढ़त तुवजाई। तस तस संत सेव अधिकाई ॥
संतसेव कमती मन धरिहै। तबहीं जनकलली धन हरिहै॥
जस जस सो भक्तन अनुराग्यो।तस तस तासु बढ़न धन लाग्यो॥
दोहा—लाखन धन जब घर भयो, तब झूँसीमहँ आय ॥
भक्तराजकें हुकुमते, दीन्ही कुटी बनाय ॥ १९ ॥
तेहि कोठी महँ और न काजा। धरीजात संतन हित साजा ॥
दिनप्रति अमित संत तहँ आवैं। भोजन सादर सबकोउ पावैं ॥
ऐसो कुंजा भक्त सुहायो। जाको सुयश जगतमें छायो ॥
तिलापुरहु यक ग्राम महाना। साधोसिंह तहाँ मतिमाना ॥
संत चरणरज शिरमहँ धारी। सेवन करि किय संत सुखारी॥
सेवाकीन्हे साधुन केरी। कीरति बढ़ी तासु जग ढेरी ॥
पयहारी लक्ष्मीपरसादा। चित्रकूट महँ अति अहलादा॥
भंडारा दीन्ह्यो अति भारी। बनी बहुत पूरी तरकारी॥
घीउ कम्यो तब सेवक धाये। पयहारीको आय सुनाये ॥
तब उठि गये कराही पासा।घिउ लखि बोले सहित हुलासा॥
करी कराह साज सब पूरा। काढ़हु पूरी परी न झूरा ॥
पूरी कढ़ीं चह्यो जितनोई। घीउ रह्यो जितनो तितनोई ॥
दोहा—संगहिमहँ तिनके रहे, छीतूदास सुजान ॥
तिन अपने नयनन लख्यो,यह सब चरित महान २०॥
एक साधु भंडारा पाहीं। भोजन करनलग्यो मुदमाहीं॥
तब सब साधुन वचन उचारे। एक संत सब साज जुठारे ॥
विन यदुपतिके अर्पण कीन्हे। धाय तुरत भोजन करिलीन्हे॥
छीतूदासहु यह मुखगायो। भो अनर्थ विन भोगहि खायो॥
पयहारीजी यह सुधि पाई। आये तुरत साधुपहँ धाई ॥
पूजन करि अतिशय सुख मानी। सबन सुनाय कही असि बानी॥

जिन प्रभुको नित भोग लगावहिं। ते प्रत्यक्ष कबहूँ नहिं आवहिं ॥
साधु रूप अवधेश कुमारा। आये इत करि कृपा अपारा ॥
प्रकट सबन कहँ रूप देखायो। साजु खैंचि निज करसों पायो।
पावहु लै प्रसाद सब भाई। रघुपति शंका दियो बिहाई ॥
असकहिकै बहु द्रव्य चढ़ायो। रुचिर दुशाला एक वोढ़ायो ॥

दोहा–साधू अंतर्ध्यानभे, भेद न जान्यो कोय ॥
द्रव्य दुशाला जो दियो, परे रहे तहँ सोय ॥ २१ ॥
पातर कनकन बीनिकै, लीन्हे सब कोउ खाय ॥
पयहारी चरणन गिरे, आनँद अंबु बहाय ॥ २२ ॥
तैसहिं तिनके शिष्यभे, सियाराम मतिधाम ॥
संत सेइ हरिभजन करि, सिद्ध किये मन काम॥२३॥

भये भक्तवर चेतनदासा। राठ ग्राम महँ रह्यो निवासा ॥
संतन सेव रीति गहिलीन्ह्यो। कृष्ण भजन निशिवासरकीन्ह्यो॥
यक दिन साधु अपूरब आये। कृष्णभजन बहुविधि तिन गाये॥
तब चेतन पूँछ्यो तिय पाहीं। पाक बनावहु संतन काहीं ॥
नारि कह्यो मेरी नथ लेहू। भोजन साज लाय मोहिं देहू॥
तियहि सराहि लाय सब साजू। दिय जेवाय सब साधु समाजू॥
पुनि बैठे साधुन ढिग जाई। तिन बहु यदुपति कथा सुनाई॥
इत नथ लै वसुदेवकुमारा। चेतनदास रूप कहँ धारा ॥
लीपत तिय लखि कह मृदुवानी। नथिया पहिरिलेहु सुखदानी ॥
तिय कह नथ कैसे मुकताये। इनकह यदुपति तार लगाये ॥
तिय कह गृह लीपहुँ इत आई। तुमहीं नाथ देहु पहिराई ॥
नारि वचन सुनि प्रभु सुख पाई। दियो नाक नथिया पहिराई ॥

दोहा–चेतन आये सुनि कथा, प्रमुदित अपने भौन ॥
विस्मित ह्वै तियसों कह्यो, नथिया लायो कौन॥२४॥

सोरठा—तुमहिं गये पहिराय, कैसे अब पूंछत अहौ ॥
इन जान्यो यदुराय, आय धाय दरशन दियो ॥२॥

दोहा—चरणदास ऐसहि भये, तिनकी कथा अपार ॥
दिल्लीजन आनँद दियो, जपतराम सुखसार ॥२५॥
रामदास भे रामप्रिय, तिन्ह शिषि योधादास ॥
विचरत अबहूँ अवनि महँ, किये अवधपति आस२६
विंध्याचलमें होतभे, झामदास सुखरूप ॥
रामरूप झांकी लही, हनुमत कृपा अनूप ॥ २७ ॥
लक्ष्मणदास गया भये, हंसदास इंदौर ॥
वेदान्तीहरिभक्तभे, सुखद नर्मदाठौर ॥ २८ ॥

कंद्रापाली ग्राम अनूपा। राधाश्याम कृष्णवर रूपा ॥
ग्राम जरौली जन सुखदाई। प्रियादास जहँ कुटी बनाई ॥
तिनको चरित श्रवण सुखदाई। सो मैं प्रथमहि दियो सुनाई ॥
केशवदास वास तहँ लीन्ह्यो। निशि दिन भजन कृष्णको कीन्ह्यो॥
भे हरि वंशदास तिनके शिषि। संत सेवकरिबो लीन्ही सिषि ॥
युगल याम भरि पूजन करहीं। अबै जरौली जन सुख भरहीं ॥
जितने संत कुटी महँ आवैं। ते सुखयुत सब भोजन पावैं ॥
प्रियादास यश विमल मयंका। तामें विचरिं रहे विन शंका ॥
राधाकृष्णचरण रति गाढ़ी। संतन कृपा हृदय तिन्ह बाढ़ी॥
गंगातीर वदनपुर ग्रामा। रामदासकी कुटी ललामा ॥
तिनके शिषि रामानुज नामा। जिनते संत लहत सुखधामा ॥
संत सेव गुरु रीति चलाई। सोइ करते नहिं नेकु घटाई ॥
मैं शिर धरि संतन रजकाहीं। कह्यों सुन्यों जो संतन पाहीं ॥

दोहा–संतन यश वर्णन करत,सुधरत सब निज काज ॥
यह भरोस दृढ़ जानिकै,चरण परत रघुराज ॥ २९ ॥

इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्री
रामरसिकावल्यांउत्तरचरित्रेअष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

दोहा–भक्तराजको अब चरित, वरणौं विमल विशाल ॥
जाको छीतूदास अस,नाम अहै यहि काल ॥ १ ॥

राजापुर यमुनातट ग्रामा। तहाँ जन्म लीन्ह्यो मतिधामा॥
बालकालते बुद्धि विशाला। त्यागिदियो जगको जंजाला॥
राम रंग लाग्यो मनमाहीं। विचरैं अति निशंक जगमाहीं॥
करैं सदा साधुन सत्कारा। विना वृत्ति रघुनाथ अधारा॥
एक समय बहु साधु जमाती। आय अचानक टेर्‍यो राती॥
तुरतहिं तिनके भोजन हेतू। आप गये चलि वणिक निकेतू॥
मुद्रा लिये पंचशत ताते। साधुन दिये जेंवाय मजाते॥
दिनप्राते साधु तहाँ घर आवै। भिक्षा करिकै जेंवावैं॥
पटे वणिकके रुपया नाहीं। लैगो धरि बनियाँ तिन्ह काहीं॥
तब यक साधु अचानक आयो। दै मुद्रा तुरतहीं छड़ायो॥
कह्यो भक्तजीते तब साहू। मुद्रापटे द्रुतहि घर जाहू॥
कह्यो भक्तजी को धनदीन्ह्यो। बनिया कह्यो साधु नहिं चीन्ह्यो॥

दोहा–साधू आयो एक इत, दियो पाँचसै मोहिं ॥
कह्यो छोड़िये भक्तको, नहिं ह्वैहै दुखतोहिं ॥ १ ॥

किय विचार तब छीतूदासा। को असहै विन रमानिवासा॥
तबते ह्वै अति दृढ़ विश्वासी। लागे भजन कोशलावासी॥
एक समय नागा बहु आए। भक्तराज तिनकाहँ टिकाये॥
सराजाम सब भाँति समेटे। मिली न लकरी एकहु जेटे॥
अँगोछी लकरी यक ठामा। रही यत्न सों धरी ललामा॥

नागा कह्यो कहहु लैआवैं। रामदूत हम नाहिं डेरावैं ॥
यदपि भक्त वरज्यो तिन काहीं। लैआये लकरी भय नाहीं ॥
वरज्यो साहेबके चपरासी। नागा दीन्ह्यो मारि निकासी ॥
चपरासी साहेब फिरियादे। दौरे पकरनहेतु पयादे ॥
भक्तहि पकरि गये लै बाँदा। बोल्यो साहेब अति मदमादा ॥
चपरासी मारचो केहि हेतू। खनिजैहै तुव सकल निकेतू ॥
भक्त कह्यो हम कछु नहिं जानैं। रघुपति शासन सब थल मानैं ॥

दोहा–तब कुरसीते तुरत उठि,साहेब क्रोध अचेत ॥
मारन धायो भक्तको,लै करमें यक बेत ॥ २ ॥

तेहि क्षण ताहि पटकि कोउ दीना। परचोविसंज्ञ भूमि दुख भीना
बीबी रोवनलगी पुकारी। हाय हाय भो सभा मँझारी ॥
परी भागवत पग तब बीबी। रह्यो न होस सम्हारन नीबी ॥
भक्त कह्यो साहेब नहिं मरिहै। जो प्रतिपाल साधुको करिहै ॥
साहेब उठ्यो दंड दुइमाहीं। दोउ कर गह्यो भक्त पद काहीं॥
पुनि कीन्ह्यो अतिशय सत्कारा। चंदाकरि धन दियो अपारा ॥
भक्त लौटि राजापुर आये। साधुनके उर आनँद छाये ॥
वसु दशशत चौरासी साला। धनुषयज्ञ तब कियो विशाला ॥
तामें अनुभव कियो महाना। मुकुट तेज तिनको दरशाना ॥
तबते राम रूप नित करहीं। करि झाँकी आनँद उर भरहीं॥
एक समय ध्यावत जगदीशा। गमन कियो नगरी जगदीशा ॥
दर्शन करि मन कियो विचारा। इतते अब न टरहुँ कहुँ टारा॥

दोहा–और संत सब संगके, चलेगये यह जान ॥
तब स्वप्नेमें भगतको, कह्यो जानकी जान ॥ ३ ॥

तुम करि पुहुमी महँ संचारा। कीजे अधमन केर उधारा ॥
भक्त कह्यो अब हम नहिं जैहैं। जबलग तनु तबलग इत रैहैं ॥

तब शासन दीन्ह्यो जगदीशा।मानि रजाय शपथ मम शीशा ॥
जो न मानिहै शासन मोरा। तौ पैहै शरीर दुख तोरा ॥
भक्त कह्यो चाहै दुख होई। नहिं जैहै औरे थल कोई ॥
तबते दस्त होन बहु लागे। सिगरे साधु संगके त्यागे ॥
भक्त सिंधुके तीर विहाला। परेरहे सुमिरत रघुलाला ॥
छीतूदासहि लियो उठाई। कह्यो वचन यहि भाँति बुझाई ॥
प्रभुको शासन जो नहिं मानी। ताको उभयलोककी हानी ॥
प्रभुको शासन शिर धरि जाहू। हरहु जगत् जीवन दुख दाहू ॥
भक्त कह्यो न शक्ति तनुमाहीं।केहि विधि पुरी छोंड़ि हम जाहीं ॥
साधु कह्यो जो यहि क्षण जाहू। तो अरोग्य तुरतहि ह्वै जाहू ॥
सुनत साधु मुखकी असि वानी। भक्तराज मति अति हुलसानी॥

दोहा–भक्त कह्यो जगदीशको, हौं शासन धरि शीश ॥
विचरन करिहौं जगतमे, को दयालु अस ईश ॥ ४ ॥

इतना कहत रोग भे दूरी। भई शरीर शक्ति भरिपूरी ॥
भक्त नाय जगदीशहि शीशा। सुमिरत चले अवध अवनीशा ॥
जब साखीगोपाल पहँ आये। सँगके साधु समिटि सुखछाये॥
तहँते चले पंथ वन घोरा। मिले न भोजन ह्वैगो भोरा ॥
चलि नहिं सकैं साधु मगमाहीं। क्षुधा विवश पग पग मुरझाहीं॥
तब यक साधु अपूरब आयो। बहुरी भोजन सबहिं करायो ॥
भक्तराज पुनि पथ गहिलीन्हे। मिले संत पूरब तजिदीन्हे ॥
तिनते सहित दूरि कछु आये। महाविपिन भोजन नहिं पाये ॥
करत भजन तहँ बसेनिशा में। आयो एक साहु डेरा में ॥
सो कह मोहिं लूटै पथ चोरा। साधुन हाथ वचब अब मोरा ॥
भक्त तासु धन यत्न करायो। साधुन आसन तर धरवायो ॥
पुनि साहुहि निज निकट लुकाई। डाँकू आय कह्यो गोहराई ॥

दोहा—डेरा काको साहु कहँ, दीजै वेगि बताय ॥
भक्त कह्यो इत साधुहै, साहु न परै जनाय ॥ ५ ॥
चलेगये सिगरे तब चोरा । साहु जानि जिय दान निहोरा॥
वहुत द्रव्य तब दियो चढ़ाई । मिटिगै सकल खर्च दुचिताई ॥
कछुक दूरि चलि तेइ ढिग धाई । मारचो और साहु यक जाई ॥
लूटिगई ताकी सब साजू । तस्कर गमने सहित समाजू ॥
भक्त कृपाते यह बचिगयऊ । संत संग पुनि मारग लयऊ ॥
सरित एक अति महा भयावनि ।निरखत महाभीति उपजावनि ॥
भक्तराज पहुँचे तहँ भारी । छायगई निशिकी अँधियारी ॥
सावन मास मेघ झुकिआये । सरित देखि सब भान भुलाये॥
तब यक फरसा गहे हाथमें । आयगयो मनु रह्यो साथमें ॥
तासों भक्त कही असि वाता । सरित उतारिदेहु तुम भ्राता ॥
मुद्रा युग करार हैगयऊ । सरित उतारि तुरत तेहि दयऊ ॥
आप गयो जब चलि कछु दूरी । भक्त लख्यो सरिता जलपूरी ॥
दोहा—घोर धार चलती प्रबल, लखि न परत कहुँ वाट ॥
साहहु मन विस्मित भयो, लायो यहकेहिं वाट ॥६॥
भक्त उठाय कह्यो यक वाहू । मुद्रा लये विना कस जाहू ॥
सो कह आगे द्वीप लखाई । तहँ यक चट्टी परमसुहाई ॥
अस कहि सो तहँ ते द्रुत धायो । भक्तराज तेहि खोज न पायो॥
तब सब मनमें कियो विचारा । रक्षणकिय रघुवंशकुमारा ॥
वसि निशि तहँपुनि चले प्रभाता।सहित साहु पुलकित अति गात्ता
आनँद सहित गया कहँ आये । तहाँ साहु सब साजु मँगाये ॥
खान पान सन्मान सुधारचो। संतनकेर कलेश निवारचो ॥
यहि विधि करत चरित्र अनेका।गयाश्राद्ध करि सहित विवेका ॥
आये राजापुर कहँ जबहीं।अतिशय मुदित भये सब तबहीं ॥

रामभक्त सुनि मम पितुकाहीं। आये प्रभु रीवांपुर माहीं॥
मम पितु कियो बहुत सत्कारा। उभयओर सुख भयो अपारा॥
तबते भक्तराज प्रतिसाला। आवत मारग भास उताला॥

दोहा—और चरित वर्णनकरौं, भक्तराजको तौन
गोविंदगढ़में मैं लख्यों, अति अचरजमय जौन॥ ७॥

मेरे शहर निकट सर भारी। जलविहार हित करी तयारी॥
सिय रघुनंदन रूप सुहावन। भक्तराज राजत अतिपावन॥
मधुर अली सँग संत सुहाये। मांगि तरणिमें सबनि चढ़ाये॥
मैंहूं चढ़ि अति आनँद पायो। जलविहार हित तरणि चलायो॥
सरवर मधि नौका जब आयो। तब तामें बहु जल भरि आयो॥
बूड़त सरमहँ नाव निहारी। संकट भयो सबनको भारी॥
तब मैं विनय कियो करजोरी। नाथ हाथ अबहै पति मोरी॥
भक्तराज कह जल भय नाहीं। कछु न सोच कीजै मनमाहीं॥
राम लषण सिय करहु उचारा। पार करहिंगे पवनकुमारा॥
जब सब राम नाम मुख गायो। नौका तुरत तीरमहँ आयो॥
भक्तराज सबको उतराये। पाछे आप उतरि जब आये॥
तब नौका बूड़्यो जल माहीं। सब जन चकृत भे तेहि ठाहीं॥

दोहा—यह सब निज नयनन लख्यों, भक्तराज परभाव॥
बार बार करि दंडवत, मान्यों परम उराव॥ ८॥
रामभक्त सज्जन सुखद, सूपकार मम प्यार॥
मोहनजी गोविंदगढ़, निवसत परमउदार॥ ९॥
दिय निदेश तेहि भक्तजी, संत महल बनवाव॥
बसैं संत जन आय तहँ, हमहूँ रहब सचाव॥ १०॥
संत महल बनवाय दिय, मोहन आयसु पाय॥
तहां संत निवसंतहैं, बसत भक्तजी आय॥ ११॥

मधुर अलीहू बसत तहँ, राम लषण सिय संग ॥
देत जनन दरशाय शुचि, परमानंद उमंग ॥ १२ ॥
जबहीं ते अति करि कृपा, बसे भक्त तेहि धाम ॥
तबहींते रघुराज किय, मोहन पूरण काम ॥ १३ ॥
एक समयकी कहतहौं, कथा भक्तवर केरि ॥
रामभक्त कायस्थ यक, दौलति नाम निवेरि ॥१४॥

गयो दरशहित सो यक काला।दौलतिको लखि बुद्धि विशाला॥
भक्तराज कह तुम कछु बांचो। सब संतनको चित हित रांचो॥
दौलति कह्यो भक्तकर माला। मैं बांचौं हेदीनदयाला ॥
भक्तराज संमत करिदीना। दौलति बांचन लग्यो प्रवीना ॥
बांचत वीति गयो कछुकाला। घरते आयो लिख्यो हवाला ॥
संन्यपात तुव सुतको भयऊ। अबतौ मरण योग्य ह्वै गयऊ ॥
भक्तराजके ढिग तब जाई। दौलतिगो वृत्तान्त सुनाई ॥
भक्तराज कह तुम हरिदासा। हरिदासन कहँ देहु हुलासा ॥
तुम्हरे भवन विघ्न नहिं होई। रामदास छुइ सकै न कोई ॥
मम विभूति दीजै सुतकाहीं। आवहु तुरतै बहुरि इहांहीं ॥
दौलतिलै विभूति घर आये। नेसुकहीं सुतके मुख नाये ॥
परत विभूति पूत उठि बैठ्यो। मानहुँ सुधा सिंधु महँ पैठ्यो ॥

दोहा—दौलति आयो बहुरिकै, भक्तराजके पास ॥
बार बार पदवंदिकै, पायो परमहुलास ॥ १५ ॥

जबते भक्तराज किय दाया। तबते दौलति शुभ मति पाया॥
यही रामरसिकावलिकेरी। किय सहाय खरी लिखि ढेरी ॥
मर्‌यो एकको सुत यक काला। घरके सब ह्वैगये विहाला ॥
तेहि लावन लै गये मशाना। उपज्यो तासु पिताके ज्ञाना ॥
भक्तराजकी सुधि जब आई। तब बालकको लियो उठाई ॥

भक्तराज सन्मुख धरि दीन्ह्यो। जुरि कुटुंब विनती बहु कीन्ह्यो॥
तब भक्तहि अति संकट गयऊ। संकटमोचन सुमिरण कयऊ॥
सुमिरि पवनसुत दियो विभूती। उव्यो बाल गै यम करतूती॥
एक समय संतनके संगा। रँगे राम रस रासहिं रंगा॥
बींडा ग्राम एक मम देसा। मोर बंधु कुल जानहु वेसा॥
तहँ बघेल यक रह अघधामा। रामसिंह ताको अस नामा॥
पूर्व पुण्य किय तासु प्रकासा। भक्तराज किय आगम वासा॥

दोहा—यथा कथं चित सो कियो, भक्तराज सत्कार॥
एक मास भर होतभो, संतन भजन विहार॥ १६॥

भक्तराज लखि ताकहँ दीना। तापर कछुक अनुग्रह कीना॥
हनुमत पूजन मंत्र बतायो। राम नाम उपदेश सुनायो॥
सकल संत सेवनकी रीती। दियो बताय कराय प्रतीती॥
तबते रामसिंह बघेला। भयो रामको भक्त नवेला॥
याम युगल लगिं भारि अनुरागा। बैठि भजन करने सो लागा॥
यद्यपि तापर विपति घनेरी। तदपि न भजन तजै सुख हेरी॥
कायथ एक रह्यो तेहि ग्रामा। आयो भक्तराजके धामा॥
भक्तराज नेउता लिय मानी। कायथ गयो सदन धनि जानी॥
भै विसूचिका निशि तेहि नारी। घरके रोवन लगे पुकारी॥
कायथ दौरि भक्त पहँ आयो। घर वृत्तान्त कहन नहिं पायो॥
रामरूप दीन्ह्यो तेहि बीरा। भक्तराज पूँछयो तब पीरा॥

दोहा—तब कायथ वृत्तांत सब, घरकोदियो सुनाय॥
भक्तराज बोले वचन, नेसुकही मुसकाय॥ १७॥

अब शंका कीजै कछु नाहीं। रघुपति कृपा विपाति मिटिजाहीं॥
कायथ लौटिगयो निज अयना। लख्यो नारि रुजबिन निज नयना॥
मान्यो भक्तराज परभाऊ। कियो निमंत्रण सहित उराऊ॥

यहि विधि भक्तराज प्रभुताई। कहँलों कहौं महामुददाई ॥
एक समय वृंदावन काहीं। गमने भक्तराज सुखमाहीं ॥
तहँ अस सुन्यो निशा जब होई। सेवा कुंज रहै नहिं कोई ॥
सांझहिं सेवा कुंज पधारे। सबके कहे टरे नहिं टारे ॥
बीति गई जब आधीराता। आयो एक संत अवदाता ॥
कह्यो चलहु इतते नहिं रहियो। हरिसों हठ कबहूं नहिं गहियो॥
भक्त कह्यो कैसहुनाहिं जैहौं। आजु राति इतहीं बसिरैहौं ॥
साधु भयो तब अंतर्ध्याना। रहे भक्त तेहि निशि स्थाना॥
भोर भयो जब नयन उघारे। निरखे परे कुंजके द्वारे ॥

दोहा—भक्तराज मनमें कियो,ऐसो ठीक विचार ॥
इतै रहनको हुकुम नाहिं,संध्या लगि भिनुसार॥१८॥

शहर आगरे कहँ सुखदाई। भक्त चले सुमिरत रघुराई॥
पर्‍यो अकालदेशतेहि माहीं।पति तिय तिय सुत बेंचि पराहीं॥
भक्तराज यह दशा निहारी। मनमें सोच कियो तहँ भारी ॥
धनुषयज्ञको नेमाहिं जोई। सो अब पूर कौन विधि होई ॥
यतनो मनमें करत विचारा। भे सहाय तब पवनकुमारा ॥
एक धनी शिर व्यथा घनेरी। सो कह हरहु पीर, जो मेरी ॥
द्वैशत मुद्रा तुरत चढ़ाऊं। देखि रामलीला सुख पाऊं ॥
भक्त विभूति दियो सुख छाकी। शिरकी व्यथा गई सब ताकी॥
द्वैशत मुद्रा साहु चढ़ायो। वारंवार चरण शिरनायो ॥
भक्तराज सब साजु हँकारी। धनुषयज्ञ की करी तयारी ॥
उत्सव देखि सकल अनुरागे। निज निज भाग्य सराहन लागे॥
तहां सेठ यक लक्ष्मीनाथा। धर्‍यो भक्त चरणनमहँ माथा ॥
तुरत पंचशत मुद्रा लाई। भक्तराज कहँ दियो चढ़ाई ॥

दोहा–पुनि रघुनंदन चरणमें,शिर धरि अति सुख पाय ॥
भेंटकियो मुद्रा सहस,संतन शीशनवाय ॥ १९ ॥
सो उत्सव लखि परम रसाला। जय ध्वनि छायरही तेहि काला॥
भक्तराज संतन बोलवाई। सो धन दीन्ह्यो तहैं लुटाई ॥
सहस एक ऋण भयो तहांहीं। चले मुदित शंका कछु नाहीं॥
अमरैया यक ग्राम महाना। तहँको भूप महा मतिमाना ॥
तासुत कहँ देवी कढ़ि आई। जियन आश सब दियो विहाई॥
भक्तराजकी सुधि तब आई। चरणवंदि निज विपति सुनाई ॥
दै विभूतिनृपसुतहि जियायो। भजन प्रभाव देश दरशायो ॥
द्वै सहस्र नृप द्रव्य चढ़ायो। करि पूजन चरणन शिरनायो ॥
शहर कालपी महँ पुनि आये। तहँके वासी अति सुख पाये ॥
तहाँ अजार परचो अति भारी।शोकितभे तहँके नर नारी ॥
एक साहुकी नारि तहांहीं। विह्वल भई रोगवश माहीं ॥
मरण काल ताको लखि साहू। पकरचो भक्त चरण दोउ वाहू॥

दोहा–भक्तराज करिकै कृपा, दियो पुनीत विभूति ॥
मुख डारत मिटिगै सबै, काल कर्म करतूति ॥ २० ॥

निरुज नारि लखि तेहि सुख पायो।धन दै बार बार शिरनायो॥
पुनि यक उच्च निसान गड़ायो।महावीरको कहि गोहरायो ॥
यहि तरते कढ़िहै जो आई। ताको मारी नाहिं सताई ॥
तहँ कालपी जनन कहँ भूरी। भयो निसान सजीवनमूरी ॥
मारी भय काहुहि नाहिं व्यापी। जेहि व्यापी ते भे न सतापी ॥
अबलों गड़ो निसान तहाँहीं। सूचन करत भक्त यश काहीं ॥
रहै साहु यक तेहि पुरमाहीं। प्रेत एक पीड़ै तेहि काहीं ॥
एको क्षण न साहु कल पावै। जिद कोपि तेहि अवनि गिरावै॥
पूरुव साहु वधन तेहि कीन्ह्यो। ताको द्रव्य सबै लै लीन्ह्यो ॥

भयो जिंद सो परम कराला। गुणिन पछारत अवनि उताला॥
भक्तराजकी सुनत अवाई। साहु विपति अपनी सब गाई॥
भक्तराज दाया उर धारी। भीति साहुकी दियो निवारी॥

दोहा—चरणामृत दिय प्रेत को,सो विकुंठ गो धाय॥
तेहि देशहि में अति विमल,रह्यो भक्त यश छाय२१॥
यक दिन साधू एक वर, जगत् रीति हिय मेटि॥
आये राजापुर हरषि, भई भक्तसों भेटि॥ २२ ॥
भयो समागम तिन कह्यो, लीजै द्रव्य महान॥
भक्त कह्यो नहिं लेउँगो, राम करहिं कल्यान॥२३॥
तब साधू बोले वचन, मँगिहौ द्वारहि द्वार॥
संतसेव परभावते, ह्वैहै सुयश अपार॥ २४॥
आजुहिते षटमास भरि, यहि कालिंदी माहिं॥
कढ़िहै जलते अमित धन,झूँठ मोर प्रण नाहिं॥२५॥
यमुनामें बहु धन कढ़्यो, जानत सकल जहान॥
भक्तराज भिक्षा गही, साधू वचन प्रमान॥ २६ ॥

भक्तराजके प्रिय अधिकारी। तीनि भक्त भे जग,भयहारी॥
लक्ष्मणदास अयोध्यादासा। आशाराम रामकी आसा॥
छीतूदास कृपाबल पाई। निज महिमा जग प्रगट देखाई॥
राजापुरको रह्यो भँडारी। नाम अयोध्या जन सुखकारी॥
सब संतन कहँ भोजन देहीं। मानुष जन्म लाभ नित लेहीं॥
यक दिन भक्तराज कह भाई। पूरी साजु देहु सुखदाई॥
जेहि साधुन कलेश नहिं होई। अग्नि तापते तपै न कोई॥
यह सुनि तुरत अयोध्यादासू। संकटमोचन सुमिरेउ आसू॥
सीधापूरी तिन नहिं कीन्हे। संतन अशन मिठाई दीन्हे॥
सहसन संत तहां चलि आवैं। भोजन सबै मिठाई पावैं॥

वर्ष अठारह भरि यहि भाँती। दियो मिठाई जनन जमाती॥
हनुमत कृपा कमी कछु साजन। भई कुटी द्रौपदि कर भाजन॥
दोहा–संतसेव परभाव अरु, भक्त अनुग्रह पाय॥
रामधामको जातभो, चढ़ि विमान सुखपाय॥ २७॥
लक्ष्मणदास परम विज्ञानी। कथा सुनहु तिनकी सुखदानी॥
सेवत सेवत संत सुजाना। बाढ़्यो प्रेम दरश भगवाना॥
स्वप्न माहँ हरिरूप देखायो। मंद मंद अस वचन सुनायो॥
मेरे निकट रहहु अब प्यारे। मेटहु जगके सकल सँभारे॥
इन कह भक्तराज लखि आऊं। बिना लखे प्रभु सुख नहिं पाऊं॥
छीतूदास पास महँ आयो। स्वप्न केर वृत्तांत सुनायो॥
पुनि पद वंदि रजायसु पाई। चित्रकूट पहुँच्यो सुख छाई॥
बैठि माधुरी कुंज विशाला। सोहत उर तुलसीकर माला॥
संत सभामधि आसन कीन्ह्यो। रामधामको पंथहि लीन्ह्यो॥
तासु लासको खोज न पायो। सहित शरीर राम अपनायो॥
रहे भक्त जे आशारामा। तिनको चरित कहौं सुखधामा॥
भक्तराजको शासन पाई। मिथिलापुरको चले तुराई॥
रामरूप झांकी तेउ करहीं। देखि देखि आनँद नित भरहीं॥
दोहा–मिथिलापुर पहुँचे जबहिं, तब अति आनँदपाय॥
संतसभा अनुपम भई, सो सुखवरणि न जाय॥२८॥
यक दिन रघुवर रूप प्रभु, चढ़ि घोड़ा अतुराय॥
चले तहां वनते तुरत, बाघ आयगो धाय॥ २९॥
उतरि अश्वते हनतभे, एक दंड शिर तासु॥
दंड घात शिर लगतहीं, प्राण छूटिगे आसु॥ ३०॥
जनकसुताके दरशभे, तहँ यक कुंड बनाय॥
सीताकुंडहि नाम तेहि, न्हात कुष्ट सब जाय॥ ३१॥

सुनहु एक सुंदर इतिहासा । जो यहि देशहि कियो प्रकाशा ॥
मैं यक शहर नवीन वसायों । तेहि गोविंदगढ़ नाम धरायों ॥
तहँ यक समय भक्त पगुधारा । मोपर करिकै कृपा अपारा ॥
मोहिं निदेशहि दियो बोलाई । धनुषयज्ञकीजै सुखदाई ॥
मैं कह धनुषयज्ञ कर काजा । होत बिना नहिं साधु समाजा ॥
तब प्रभु कह्यो संत सब ऐहैं । सब विधि पूरण रामकरैहैं ॥
तब मैं प्रभु शासन धरि शीशा । विरच्यों धनुषयज्ञ सब दीशा॥
देश देशकी संत समाजा । आई सकल मानि कृतकाजा ॥
जुरे सहस्रन द्विज अरु संता । अन्न रह्यो नहिं पूर करंता ॥
मैं विनती कीन्ह्यो तब जाई । संत बहुत लघु अन्न देखाई ॥
पूर अन्न करिदेहु कृपाला । कह्यो नाथ तब वचन विशाला ॥
करिहै पूर कोशलाधीशा । संतन देहु नायपद शीशा ॥

दोहा—लग्यों देन मैं अन्न तब, विप्रन साधु समाज ॥
भक्त अनुग्रह विभव वश, कमी न एको साज॥३२॥

अन्न बसन धन विविध देखाने । विप्रहु साधु समाज अघाने ॥
तबते धनुषयज्ञ उत्साहू । होत वर्ष प्रति रामविवाहू ॥
और कहौं कहँलों इतिहासा । भक्तराज यश जगत प्रकाशा ॥
मैं कहिकै पाऊं किमि पारा । भक्तराज यश पारावारा ॥
मोहिं जानि सेवक निज दीना ।मोशिर चरण कमल धरिदीना॥
मोरे और न कछू अधारा । वंदौं पद रज बारहिबारा ॥
जौन काल महँ तुलसीदासा । रामतत्त्व कीन्ह्यो परकासा ॥
तौने कालहि रहे गोसाँई । रह्यो न दूसर तिनकी नाँई ॥
तैसहि अबहुँ गुणहु यहि काला।भक्त सरिस नहिं भक्त विशाला॥
जो भ्रम मानहु लिखी हमारी । जाय भक्त ढिग लेहु निहारी ॥

चहो जो रघुपति चरण सनेहू । भक्तराज पद महँ मन देहू ॥
विन हरि भक्तन सेवन भाई । मिलत राम नहिं राम दोहाई ॥
दोहा—पारावार अपार यह, अति कराल संसार ॥
भजहु रामभक्तन चरण, चहहु जान जो पार ॥ ३३ ॥
मैं यह अतिशय कियो ढिठाई । रघुवर रसिकावली बनाई ॥
पुनि पुनि कहौं कविन जन पाहीं। दीजै दोष कछू मन नाहीं ॥
रच्यो रामरसिकावलि जो मैं । कियो संत सेवन यह सो मैं ॥
हरिभक्तनको चारित सुहावन। कहत सुनत कलि कलुष नशावन॥
जो कछु सुन्यो कह्यो अनुरागे । वांचेहु बूझेहु जन वड़भागे ॥
श्रोता सुनहु वात यक मोरी । भक्तावली जौनि मैं जोरी ॥
तामें किहेहु न मोरि ढिठाई । जानहु सकल संत प्रभुताई ॥
होहु प्रसन्न जो सुनि यह ग्रंथा । तौ करि कृपा बतावहु पंथा ॥
जौनिभांति श्रीयदुकुलराई । मोहिं लेहिं जेहि विधि अपनाई ॥
मोहिं यक संतन चरण भरोसू । सज्जन गनहिं न दुर्जन दोसू ॥
हरिविमुखिन हरिसन्मुखकरहीं। सुमति देहिं दुर्मति हठि हरहीं॥
जय जय संतन चरण सरोजू । जौन विश्वास दासकर रोजू ॥
दोहा—उनइससै यक विंशती, संवत आश्विन मास ॥
शुक्र सतमी वार गुरु, कीन्ह्यो विमल प्रकाश ॥३४॥
इति सिद्धिश्रीमन्महाराजाधिराजश्रीरघुराजसिंहजूदेवकृतेश्रीरामर-
सिकावल्यांउत्तरचरित्रेएकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

कवित्त घनाक्षरी—मंगल सदाही करैं राम ह्वै प्रसन्न सदा रा-
मरसिकावली या ग्रंथ बनवैया को ॥ मंगल सदाही करैं राम ह्वै
प्रसन्न सदा रामरसिकावली या ग्रंथ छपवैया को ॥ मंगल सदा-
हीं करैं राम ह्वै प्रसन्न सदा रामरसिकावलीं सुनैया सुनवैया को॥

मंगलसदाही करैं राम युगलेश कहैं रामरसिकावली शोधैया औ बोधैया को ॥ १ ॥

दोहा—नाम रामरसिकावली, भक्तमाल अभिराम ॥
रामरसिक जन सर्वदा, करैं कंठ वसुयाम ॥ ३५ ॥
महाराज रघुराजहैं, ग्रंथकार सरनाम ॥
तिनको मंगल सर्वदा, करहिंजानकीराम ॥ ३६ ॥
लिखनहार अब ग्रंथको, युगलदास विख्यात ॥
आगे लिखत कवीर जो, लिख्यो भविष अवदात ३७॥

इति उत्तर चरित्र समाप्तं शुभमस्तु ॥

श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीमतेरामानुजायनमः ॥
श्रीहरिगुरुचरण कमलेभ्योनमः ॥

अथ सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीमहाराजा बहादुर श्रीकृष्णचंद्र
कृपापात्राधिकारी श्रीरघुराजसिंहजूदेवकृते श्रीरामरसि
कावल्यांग्रंथान्तर्गत श्रीयुगलदासकृत व
घेलवंशवर्णनंनाम आगम निर्देश
ग्रंथप्रारम्भः ॥

दोहा—वंदौं वाणी वीण कर,विधिरानी विख्यात ॥
वरदानी ज्ञानी सुयश, हरि गानी दिन रात ॥ १ ॥
मदन कदन सुत मुद सदन,वारण वदन गणेश ॥
वंदतहौं अरविंद पद,प्रद उर बुद्धि विशेश ॥ २ ॥
सवैया—श्रीरघुनंदन श्रीयदुनंदन औध द्वारकाधीसाविलासी
रावणकंस विध्वंश किये जिन अंश भयेअवतारप्रकाशी
पारकयाभवसिंधु अपारको वोहितनामजासंतसुपासी।
वंदत हौं तिनके पद द्वंद्व सुमें अरविंद अनंदकेरासी॥
दोहा—शंकर शंकर पद कमल, वंदन करौं निशंक ॥
शिर मयंक शुचि वंक जेहिं,लसति शैलजा अंक॥३॥
प्रियादास पद पद्म युग,पुनि पुनि करहुँ प्रणाम ॥
विश्वनाथ नरनाथ गुरु, हरि स्वरूप सुखधाम ॥ ४ ॥
सांच मुकुंद स्वरूपजे,नाम मुकुंदाचार्य्य ॥
वंदौं नृप रघुराज गुरु, करन सिद्धि सब कार्य्य ॥५॥
रामभक्त शिरताज जे, महाराज विश्वनाथ ॥
करन अनाथ सनाथ पद, पुनि पुनि नाऊं माथ॥६॥

सवैया—भूपशिरोमणिश्रीविश्वनाथतनैरघुराजअनाथनिनाथै
श्रीयदुनाथकोभक्त अनूपमसेवी सदाद्विजसाधुनगाथै ॥
तेज तपै दिननाथसों जासु यशो निशि नाथ दिपै महिमाथै
तापद पाथजमें सुख साथ ह्वै जोरिकैहाथनवावतमाथै १॥

दोहा—पवनपूत जय दुखदवन, राम दूत सुखधाम ॥
शमन धूत सुकृपाभवन, बल अकूत सब ठाम ॥७॥
जय कबीर मतिधीर अति, रति जेहिं पद रघुवीर ॥
क्षीर नीर सत असत कर,विवरण हंस शरीर ॥ ८ ॥
जय हरि गुरु हरि दास पद,पंकज मोहिं भरोस ॥
जाकी कृपा कटाक्षते,मिटत सकल अफसोस ॥ ९ ॥
संतत संतन भूसुरण, चरण कमल शिरनाय ॥
बार बार विनती करौं,सब मिलि करो सहाय ॥१०॥
रच्यो रामरसिकावली, ग्रंथ भूप रघुराज ॥
तामें बहु भक्तन कथा,वरण्यो भरि सुखसाज ॥ ११॥
भक्तमाल नाभा जुकृत,ताहीके अनुसार ॥
श्रीकबीरहू की कथा,तामें रची उदार ॥ १२ ॥

छप्पय—जो कबीर बांधव नरेश वंशावली भाखी ॥
अरु आगमनिर्देश भविष्यहु जो रचि राखी ॥
सोउ समास सहुलास तासुमैं वर्णन कीनो ॥
सुनत गुणत जेहिं सुकवि संत संतत सुख भीनो ॥
तेहि तुम वरणौ विस्तार युत,शासन नृप रघुराज दिय।
कह युगलदास धरि शीश सो,वर्णन हों आरंभाकिय१॥

घनाक्षरी—प्रथम कबीरजी सिधारि पुरी मथुरामें संतन सहि-
त अति हरष बढ़ाय कै ॥ तहां धर्मदास आय प्रभु पदपंकजमें
बैठो बार बार शीश सादर नवायकै ॥ ज्ञान उपदेश ताको की-

छंद–द्वापर अंत आदि कलियुगमें कृष्ण प्रकाश अनूपा ॥
पूरुव दिशि सागरके तटमें धरिहै बोध स्वरूपा ॥
तहां जाय तुम प्रगट होउ यह रघुवर आयसु पाई ॥
प्रगटि बोंडैसा जगपतिकेरो दरशन लीन्ह्यों जाई ॥१॥
सागर तीर गाड़ि कुवरी पुनि बाँधि तासु मर्यादा ॥
पुनि परबोधि सिंधुको वहु विधि गमन्यों युत अह्लादा।
चलत चलत गुजरात आयकै नगर विलोक्यो जाई ॥
जहां सुलंक भूप वहु साधुन राखे रहो टिकाई ॥ २ ॥
भक्तिवान अति रही रानि अति नित सब साधुन केरो॥
दर्शन करिलै तिन चरणामृत निज घर करै बसेरो ॥
ते साधुनको दर्शन करिकै एक वृक्षतर जाई ॥
वसि आसन विछायकै वैठ्यो हरिको ध्यान लगाई३॥
यक दिन रानी सब साधुनको भोजन हित बोलवाई।
पंगति दिय वैठाय गयो मैं नहिं तहँवां हरषाई ॥
रानी तब मेरे आश्रममें आवतभै अतुराई ॥
महि तजि अंतरिक्ष आसन मम निरखि परम सुख पाई४
विनती किय प्रभु आपहु चलिकै मम घर भोजन कीजै॥
मैं तब कह नहिं भूख प्यास मोहिं हरि अधार गुणि लीजै।
रानी कह यकतो सुत विनमैं दुखित राज्य सब सूनी॥
दूजे जो न आप पगुधारे तपी ताप तो दूनी ॥ ५ ॥
मैं कह सोच करै नहिं राजा द्वै सुत ह्वैहैं तेरे ॥
संतनको चरणामृत अबहीं लैआवे ढिग मेरे ॥
साधुन चरण धोय चरणोदक लैआई जब रानी ॥
दियो पियाय रानिको तब मैं निज चरणोदक सानी६॥
लहि मेरो वर साधुनकेरो वहु विधि कारि सत्कारा ॥

न्ह्यो श्रीकबीर तहां कह्यो सो न इतै भीति विस्तर बुझायकै ॥
मानिकै यथारथ कृतारथ ह्वै धर्मदास चलि मथुरा ते पथ गौन्यो
चित चायकै ॥ १ ॥

दोहा–धर्मदास आवत भये, बांधौगढ़ सहुलास ॥
गुरु विश्वास दृढ़ वास किय,जासु हिये आवास॥१३॥

पुनि कछु दिन वीते सुख छाये। श्रीकबीर बांधव गढ़ आये ॥
तहँ चौहट बजार मधिमाहीं। निरखि एक सेमर तरु काहीं ॥
तहाँ आठ दिन आसन कीन्ह्यो। सेमर तरु उड़ाय पुनि दीन्ह्यो॥
निरखि लोग सब अचरज माने। भूपति सों सब जाय वखाने ॥
महाराज साधू यक आई। सेमरतरुको दियो उड़ाई ॥
सुणि अचरज भूपति अतुराई। प्रभु पद किय दंडवत सिधाई॥
सादर नृप कर जोरि सुहाये। पूंछ्यो नाथ कहांसे आये ॥
तब प्रभु वचन कह्योअभिरामा। हम कबीर निवसे यहि ठामा ॥

दोहा–तब राजा पूंछत भयो,कैसे जानैं नाथ ॥
देहु परीक्षा हमहिं जो,तौ लखि होयँ सनाथ ॥ १४ ॥

होत अज्ञान नाश जेहिं तेरे । कहिय नाथ सो ज्ञान निवेरे ॥
देवी आदि वेदकी जोई। आदि निरंकारहु जो होई ॥
सादर पूंछत भयो भुआला। दियो बताय कबीरकृपाला ॥
राजाराम कह्यो पुनि बैना। कहिय जो आदि बघेल सचैना॥
तब तुमको कबीर हम जानैं। अपनो जन्म सफल करि मानैं ॥
सुनि कबीर तब मृदु मुसक्याई। उत्पति जौन बघेल सोहाई ॥
लागे कँहन भूपसों सो सब। हम साकेत रहे निवसे जब ॥
तब मोसों कह श्रीरघुराई। तुम कबीर संसारहि जाई ॥

दोहा–जीवनको उपदेश करि,मेरो ज्ञान अशोक ॥
हमरे लोकपठावहू, जो प्रद आनँद थोक ॥ १५ ॥

परम प्रमोद पायउर रानी गमनत भई अगारा ॥
कह्यो हवाल भूपसों सो सब सुनि नृप अति सुखपाई ।
लै फल फूल द्रव्य वहु सादर मम समीप द्रुत आई७॥
करि दंडवत प्रणाम विनय किय नाथ दया उर धारी।
कछु दिन आप वास इत कीजै तौ मैं होहुँ सुखारी ॥
कुटी दियो बनवाय भूप तहँ करतभयो मैं वासा ॥
कछु वासरमें गर्भवतीभै रानी सहित हुलासा ॥ ८ ॥

दोहा—ज्यों ज्यों रानीके उदर, बढ़्यो गर्भ करि वास ॥
त्यों त्यों रानीके वपुष, वाढ़्यो परम प्रकाश ॥१६॥

कछु दिन विते सुदिन जब आयो। तब रानी दुइ सुत उपजायो ॥
भयो जो जेठ पुत्र तेहि आनन ।होत भयो सम मुख पंचानन ॥
लहरो तनय होत जो भयऊ। तेहि नर तनु अति सुंदर ठयऊ॥
लखि रानी अति अचरज मानी। दिय देखाय भूपतिकहँ आनी॥
मानि शंक भूपालउदासा । कह कवीर आयो मम पासा ॥
सादर करि दंडवत प्रणामा । कीन्हीं विनय भूप मतिधामा ॥
नाथ भये मेरे सुत दोई ।·है अति कृपा आपकी सोई ॥
पै जो भयो जेठ सुत स्वामी । व्याघ्र वदन सो यह बदनामी ॥

दोहा-सो सुनि मैं वाणी कही, करिकै बहुत प्रशंस ॥
यह सुत वंश बतंशभो, रामलोकको हंस ॥ १७ ॥

व्याघ्र वदन परतो दृग जोई । नाम बघेल ख्याति जग होई ॥
याते वंश बयालिस ताईं । अटल राज्य रहिहै महि ठाईं ॥
तेजवान यह होय महाना । पूरण भक्तिवान भगवाना ॥
वंश वयालिसलों अभिरामा । चलिहै तुव बघेल कुल नामा ॥
यह वर लहि सो मेरे मुखते । भूपति आय महल अति सुखते॥
द्विजन दान दै तोपन काहीं । दगवायो वहु बार तहांहीं ॥

पुनि मोकहँसो नृपति सुजाना।करि बहु विनय लाय निजथाना॥
ऊंचे आसन पर बैठाई । पूजन किय अति आनँद छाई ॥
दोहा—रानीलै दोउ पुत्रको, मेरे पग दिय डारि ॥
तब मैं पुनि देतो भयों, बहु अशीश चित धारि १८॥
बढिहै तोरि राज्य नरनाहा । ह्वैहै बांधवगढ़को शाहा ॥
लहि वरदान भूपयुत रानी । निवस्यो महल मोद अतिमानी ॥
मेरे कहे फेरि सो भुआरा । पूज्यो हरि षोडश उपचारा ॥
तब पुत्रनयुत नृप रानी कहँ।शिष्य कियो मैं अति आनँद महँ॥
करि आरती फेरि परसादा । दीन्ह्यो सबको युत अह्लादा ॥
बहु विधि करी प्रशंसा राजा।मैं कह भो सिधि तुव सब काजा॥
अब मैं कहुँ तीरथको जैहौं । तहां भजन करि राम रिझैहौं ॥
सुनि नृप यह मेरे मुखवानी । सादर विनय कियो युतरानी ॥
दोहा—इत कबीर साहेब करिय, कछु वासरलों वास ॥
वचन सुनन कछु आप मुख, हमको परमहुलास १९॥
व्याघ्रदेवको होत भो, कछु दिन माहँ विवाह ॥
तब सुलंक नरनाह मन, मान्यो परमउछाह ॥ २० ॥
हरिगीतिकाछंद-पुनिध्यान मेंमैंइकसमयकीन्हीविनयरघुवीरसों॥
निज अंशते युग हंस दीजै कृपा करि मन धीरसों ॥
प्रगटै बघेले वंश महँ जेहिते बयालिस वंशलों ॥
करि अचल राज्य बघेल राजा लहै गति तुव अंशलों १॥
तब ध्यानहीं में कह्यो रघुवर हंस जे द्वै द्वापरै॥
ममलोक तुम लाये अहो गिरिनारके अति आदरै ॥
ते भूप रानी दोउको जगती तलै प्रगटाइये ॥
मम ज्ञान करि उपदेश जिय हिय भक्ति मेरी छाइये२
सुनि ध्यान में यह राम मुख नृप व्याघ्रदेव सुरानिको॥

सब संत चरणोदकपिआयो होय सुत कहि वानिको ॥
पुनि वैश्य क्षत्री जाति कोउ तेहि तीयको सुख छाइकै॥
सब संत चरणोदक पिआयो गर्भ युत भइ जायकै३॥
जब समय आयो सुत जनमभो शुभ मुहूरत तेहिदिनै॥
तब व्याघ्रदेव भुवाल तिय जनम्यो अनूपम यकतनै॥
तेहि नाम मैं जयसिद्ध कीह्न्यो भयो मोद अपारहै ॥
दै दान बहु सन्मान किय द्विज व्याघ्रदेव उदारहै॥४॥
कछुदिवश बीते वैश्य तियके यक सुता प्रगटत भई ॥
अति सुभग अतिहि सुशील मानहु रमा जगमें निर्मई॥
जब भये दोउ सयान कछु तब होत भयो विवाह है ॥
नित नयो दिन प्रति भूप उर आत वढ़त भयो उछाहहै५

दोहा—कह मैं आदि वघेलकी, सुनिये राजाराम ॥
जिमि नभ रवि तिमि वंश तुव,जग प्रगटिहि अभिराम२१
सुनिकै मूल वघेलको, अति सुखपाय नरेश ॥
पुनि पूछ्यो प्रभु भांतिकेहिं, ते आये यहि देश॥२२ ॥

कवित्त—कह्यौ श्रीकवीर सुनो राजाराम वैन मेरो जयसिद्ध भयो जब कछुक सयानहै॥ साधु संगहीं में निज मनको लगाय करि सुनि सुनि मानै मेरो वचन प्रमानहै ॥ मोसों कह्यो नाथ मोहिं शिष्य कीजै दीजे मंत्र कह्यो तब मैंहू तूतो भूप वडो जानहै। नृपतिसुलंक ज्यों,समाज जोऱ्यो त्यों समाज जोरै करौं शिष्य जानैं सकल जहान है॥१॥आयसुको मानि संत पण्डित समाज जोऱ्यो सकल मँगाइ साज महा मोद छायकै।सवासेर मोतिनकी चौक पुरवायनीकी पितामहत्योहीं पितै सभामें वोलायकै ॥ आरती सँवारि कियो जयसिद्ध भूपकाहि कीह्न्यो तब शिष्य

कह्यो वचन सुनायकै॥भूप जयसिद्ध तुम पूर्व गिरिनारकेहौ हंस राम लोकहीके प्रगटे ह्यां आयकै ॥ २ ॥

दोहा–वंश बयालिस चलैगो, तुमते नृप जयसिद्ध ॥
बांधोगढ तुव वंशके, ह्वैहैं साह प्रसिद्ध॥२३॥

छत्र मुकुटधारी नृप ह्वै कै । सुयश प्रताप दुंदुमि अति छैकै ॥
द्वितिय जन्म बांधव गढ़तेरो । ह्वैहै पैहै दर्शन मेरो ॥
दै ताको यह आशिर्वादा । विदा कियो दै करिपरसादा ॥
पुनि सब साधुन विप्रन काहीं । दै प्रसाद किय बिदा तहाहीं ॥
नृप जयसिद्ध धाम निज जाई । यक दिन पौढ़े सेज सोहाई ॥
कियो शंक नहिं कोषनदेशू । नहिं चाकर यह बड़ो अँदेशू॥
चलिहै किमि जग नाम हमारो । नहिं कबीर वर मृषा विचारो॥
करत करत यहि भांति विचारा। होतभयो जबहीं भिनसारा ॥

दोहा–सपदि भूप जयसिद्ध तब, जाय जनकके पास ॥
विनय कियो करजोरिकै, मोहिं यह परमहुलास॥२४॥

करि महि अटन तीर्थ सब करहूँ। परमप्रमोद हिये महँ भरहूँ ॥
करै न धर्म धरै धन जोरी । क्षत्रीह्वै करतो धन चोरी ॥
तेहि नृप तेजअंश घटिजाई । ताते धर्म करै मनलाई ॥
करै नीति रण पीठि न देई । सो नृप अनुपम यश महि लेई॥
यह सुनि सब बघेल सुख पायो। पितु प्रसन्नह्वै वचन सुनायो ॥
जाहुहमारे पितुके पासा । कहो करै जस हुकुम प्रकासा॥
यह सुनिकै जयसिद्ध भुवाला । जाय पितामह निकट उताला॥
शीश नवाय उभय कर जोरी । विनय कियो यह इच्छा मोरी ॥

दोहा–जात अहौं तीरथ करन, दीजै नाथ रजाय ॥
तब सुलंक नृप पौत्रसों, कह्यो गोद बैठाय ॥ २५ ॥

कौन कलेश परयो तुमकाहीं । जो निज राज्य रहतहौ नाहीं ॥

यह तुव सिगरी राज्य ललामा। का परदेश जानको कामा॥
सुनि जयसिद्ध कही तब बाता। देहु राज्य दोउ पुत्रन ताता॥
काम न मम तुव राज्यहि तेरे। करिये विदा यही मन मेरे॥
तिहरो यश जगमें अति होई। नहिं निंदा करिहै जन कोई॥
तब कबीर वरदान प्रभाऊ। गुणि सुलंक नृप भरि अति चाऊ॥
युगल उतंग मतंग निवेरे। तीस तुरंग तबेले केरे॥
तिनको नीकी भांति सजाई। द्रव्य ऊंट द्वै तुरत भराई॥

दोहा—वीर महारणधीर जे, काल सरिस सरदार॥
तिनको तिन सँग करत भे, औरहु चमू अपार॥२६॥

सुदिन शोधि जयसिद्ध नरेशा। पितु मातहिं किय खातिर वेशा॥
पुनि रानी अतिशय बिलखानी। महूँ संग चलिहौं कह वानी॥
जहां धर्म रहती तहँ माया। जहाँ रूप रहती तहँ छाया॥
लै तिय सँग मोहिं शीशनवाई। मोसों बहुत आशिषा पाई॥
दशराकेदिन किय प्रस्थाना। पुरलोगनको करि सन्माना॥
कह कबीर पुनि मो ढिग आई। कीन्ही विनय प्रमोद बढ़ाई॥
प्रभु मोहिं जिमि दीन्ह्यो वरदाना। तिमि मम सँग कीजिये पयाना॥
तब मैं सुनि यह ताकरि बानी। हँसिकै वचन कह्यो सुखमानी॥

दोहा—तुम सेवा अति मम करी, दोउ जन्मके मोर॥
भक्त अहौ ताते चलहुँ, संग तजौं नहिं तोर॥२७॥
विजय मुहूरत अबहिं नृप, गुणि मम वचन प्रमान॥
मुदित निसान बजायकै, वेगिहिं करहु पयान॥२८॥

छंद—वर मानि मोर निदेश, जयसिद्ध नाम नरेश॥
पितु पितामह ढिग जाय, बहु भाँति शीशनवाय॥१॥
स्वरदाहिनो नृप साधि, चढ़ि चल्यो हय सुख कांधि॥
तेहिं समय पुरजन यूह, जुरि दिय अशीश समूह॥२॥

जस देश यह गुजरात, तसदेश लहो विख्यात ॥
तुव उपर देवी मात, रक्षक रहै दिन रात ॥ ३ ॥
तिमि रानि भरि अति चाउ, परि सासु ससुरहिं पाउ ॥
कह छोंड़ियो नहिं छोह, नहिं कियो कबहूँ कोह ॥४॥
पुनि रानि युत जयसिद्ध, यश जासु जगत प्रसिद्ध ॥
मोहिं सहित साधु समाज, संग लै चमू छवि छाज॥५॥
किय गवन मग रणधीर, तनु धरे मनु रसवीर ॥
बिच बीच पथ करि वास, पुरगढ़ा कोसहुलास॥ ६ ॥
पहुँच्यो महीश सुजान, लिय भूप तहँ अगवान॥
निज महल गयो लेवाय, दिय नज़र बहु सुख छाय॥७॥
जयसिद्ध पुनि नरराय, सरि नर्मदामें जाय ॥
तिय सहित करि स्नान, धन अमित दीन्ह्यो दान॥८॥

दोहा—चकरनको दै चाकरी, कछु दिन सहित हुलास ॥
तीर नर्मदा सर्मदा, करत भयो नृपवास ॥ २९ ॥
तहँ जयसिद्ध भुवालके, कर्णदेव भो सून ॥
सबके उर आनँद उदधि, अधिकानो तब दून ॥३०॥
सेवक द्विज गण साधु को, भयो सो अति मतिवान॥
नीतिवान सब प्रजनको, पाल्यो प्राण समान ॥ ३१ ॥

कछु दिनमें जयसिद्ध भुवाला। कूच कियो लै सैन्य विशाला॥
तीरथ चित्रकूटमें आई। पयस्वनीमें सविधि नहाई ॥
विविध प्रकार दान तहँ दीनो । सुत कलत्र युत अति मुद भीनो॥
तहँऊते चलि नृप सुख छायो।कहुँ थल भल लखि नगर बसायो॥
कछुक दिवश तहँ कियो निवासा। साधुन विप्रन देत हुलासा ॥
वैस बैसवारेके देखे। बसे डोंरियाखेराहिं बेसे ॥
पुरी गेरि तिनके घर माहा। कर्णदेवको कियो विवाहा ॥

परमानंद मानि तहँ राजा। विप्रनको दिय दान दराजा॥
दोहा–जय जय जय ध्वनि ह्वै रही, पुहुमीमें सब द्वीप॥
कर्णदेवके होतभो, हलकेहरी महीप॥ ३२॥
कछुक दिवश तहँ कियो निवासा।दिन दिन बढ़ो प्रताप प्रकासा॥
कर्णदेवको देकर राजू। नृपजयसिद्ध छोंड़ि जग काजू॥
तीरथ वसि ब्रह्मांडहिं फोरी। देह छोंडि दै दान करोरी॥
हरिके लोक जाय किय बासा। तनु तजि गई रानि तेहिं पासा॥
मृतकक्रिया करि विविध प्रकारा।कर्णदेव दिय दान अपारा॥
हलकेहरी तनय पुनि जायो। नाम केहरी तासु धरायो॥
तिनको कियो विवाह सप्रीती। जीति देश बहु मेटि अनीती॥
निज पितु कर्णदेव नृपकाही। राखि चित्रकूटहि सुखमाही॥
दोहा–राज्यगहोराको कियो,हलकेहरी सुजान॥
तनय केहरीसिंह तेहि, तहँते कियो पयान॥ ३३॥
गयो कलिंजरदेश मँझारा। तहँको कियो मिलाप भुवारा॥
पुनि केहरीसिंह बलवाना। उत्तर दिशिकहँ कियो पयाना॥
विदित पठान राजजहँ रहई। रहे पठान प्रबल तहँ महँई॥
तेलरिबेको कियो विचारा। कुपित जनन सों वचनउचारा॥
कहो कहांके को ये आहीं। आवत सदल पुरी मम काहीं॥
ते सब कहे जोरि युग हाथा। जो हम सुनत सुनावत नाथा॥
ये बघेल गुजरातहि केरे। भूप प्रतापी अहैं बड़ेरे॥
सुनि पठानअतिकोपहिछायो। फौज जोरि बहु हुकुम जनायो॥
दोहा–लूटि लेहु रिपु सैन्य पुर, आवन पावै नाहिं॥
नाकन दिय लगवाय बहु, तुरतहि तोपन काहिं॥३४॥
सोरठा–यह हवाल सुनि कान,कह्यो केहरीसिंह हँसि॥
नाहक किय रणठान,जान न पावैं जानले॥ १॥

दोहा-वीरनको दीन्ह्यो हुकुम, ते अति क्रोधहिं छाय॥
धाय जाय चहुँ ओरते, हने पठानन काय॥३५॥
परें बाघ जिमि गाय समूहा। भागें तिमि भागे रिपु यूहा॥
तोपनको द्रुत लियो छँड़ाई। हनिगे बहु पठान समुदाई॥
हाहाकार करत बहु भारी। बार बार यह कहत पुकारी॥
होहु पनाह खुदा अल्लाहा। खात बघेल सरिस बननाहा॥
आरत वचन सुनत तिनकेरो। लहि नवाब उर शोक घनेरो॥
द्रुतकेहरीसिंह ढिग आयो। बहु सलाम करि शीश नवायो॥
विनती कियो हाथ पुनि जोरी। आधी राज्य लेहु प्रभु मोरी॥
कह केहरीसिंह तिन पाहीं। हम तुव राज्य लेतहैंनाहीं॥
दोहा-लिख्यो विधाता होयगो, राज्य हमारे भाल॥
साहिब हमको देइगो, तौ करि कृपा विशाल॥३६॥
सुनि नवाब तिनकी यह बानी। दिय बैठाय राज्य सुख मानी॥
कह्यो देश सबकोष तुम्हारा। हम चाकर ह्वै रहन विचारा॥
तुमहीं राजा अहौ हमारे। निशि दिन सेवन करब तिहारे॥
भये खुशी केहरीसिंह सुनि। करि नवाबको अति खातिर पुनि॥
भवन जानकी दई बिदाई। गयो सो बार बार शिरनाई॥
नृप केहरीसिंह सहुलासा। कछु वासर तहँ कियो निवासा॥
सरदारनको करि सन्माना। सब चकरनको सहित विधाना॥
दिय चिट्ठा चाकरी चुकाई। बसे सबै सेवा मनलाई॥
दोहा-तहां केहरी सिंहके, मालकेसरी पूत॥
होत भयो जाके वदन, बसी सरस्वता पूत॥३७॥
उभय मल्लको जोर तनु, सुंदर तेज विधान॥
कछु दिनमें तेहि व्याहकरि, दीन्ह्यो दान महान॥३८॥
फेरि व्यतीत भये कछुकाला। तनु तजि करि केहरी भुवाला॥

वास कियो वासवपुर माही । मालकेसरी सपदि तहांही ॥
विधि युत मृतकक्रिया पितुकेरो। करि दीन्ह्यो तहँ दान घनेरो ॥
मालकेसरी कछु दिन माहीं । उपजायो सुंदर सुत काहीं ॥
सारंग देव नाम तेहि भयऊ । सुयश प्रताप नाम तेहि ठयऊ॥
भीमलदेव भयो सुत तासू । फैलि रह्यो जगमें यश जासू ॥
हरिगुरुको भो भक्त महाना । पाल्यो परजन प्राण समाना ॥
ब्रह्मदेव ताके सुत जायो । सो निज पितुसों वचन सुनायो ॥

दोहा—आपकीजिये भजन हरि, सुचित भौन करि बास ॥
मोहिं दीजिये फौज सब, करि उर कृपा प्रकाश॥३९॥

कछु दिन सैर करौं महि माहीं । प्रगटहुँ नाम रावरे काहीं ॥
सुनि नृप भीमलदेव उदारा । ब्रह्मसूनु सों वचन उचारा ॥
मनमें यह विचार किय नीको । करै सुपूती सोइ सुत ठीको ॥
जगमें नाहिं कुपूत कहवायो । अस करतूति करन मन लायो ॥
ब्रह्मदेव सुनि ये पितु वैना । करी तयारी भारि अतिचैना ॥
चतुरंगिनी चमू सँग लैकै । कियो पयान वीररस म्वैकै ॥
राज्य गहरवारनके आये । कछु वासर तहँ वसि सुख छाये ॥
पुनि सिधाय शिरनेतन देशू । तहँ विवाह किय ब्रह्म नरेशू ॥

दोहा—कछुक दिवश शिरनेतनृप, सेवा करि युत प्रीति ॥
ब्रह्मदेव सों समय गुणि, कह्यो विनयकी रीति॥४०॥

यक मम भाई देश हमारे । गनत न हमहिं भये बलवारे ॥
तिनको दंड दीजिये नाथा । तौ हम वसैं राज्य सुख साथा ॥
ब्रह्मदेव यह सुनि तेहिं वानी । कह नर पठैलेहिं हम जानी ॥
पुनि नृप ब्रह्मदेव रिस छायो । पाती यक ऐसी लिखवायो ॥
ग्यारहसै नेजा सँग लीन्हे । आवत तुव दरशन मन दीन्हे ॥
हैं बघेल हम विदित जहाना । तुम शिरनेत अनुज बलवाना ॥

यह हवाल लिखि पत्री काहीं। दै पठयो यक मनुज तहाँहीं॥
सो पाती दिय तिन कर जाई। बांचत गयो कोपमें छाई॥
दोहा–तुरत जवाब लिखायकै, दीन्ह्यो तेहिं कर धारि॥
आप दरश पावें जो हम,धनि धनि भाग्य हमारि॥४१॥
सुन्यो न हम बघेलको नामा। निरखि होहिं अब पूरण कामा॥
पाती असि लिखाय शिरनेता। बांध्यो युद्ध करनको नेता॥
फौज जोरि आगे कछु जाई। ठाढ़े भये रोष अति छाई॥
इतते ब्रह्मदेवकी सैना। काल समान गई कछु भैना॥
भगी फौज शिरनेतन केरी। नृप शिरनेत बंधु तहँ घेरी॥
पकरि भूप शिरनेतहिं काहीं। सौंप्यो सो अतिहीं सुख माहीं॥
ब्रह्मदेवको निज सब देशू। सौंपिदियो शिरनेत नरेशू॥
तहँ नृप ब्रह्मदेव सहुलासा। करत भये कछु वासर वासा॥
दोहा–ब्रह्मदेवके होतभो, तनय सिंह जेहिं नाम॥
सिंहदेवके पुनि भये, वेणीसिंह ललाम॥ ४२॥
भूपति वेणीसिंहके, नरहरिसिंह सुजान॥
नरहरि हरिके होतभे, भैददेव मतिवान॥ ४३॥
शिरनेतनके सहित उछाहा। भैददेवको कियो विवाहा॥
भैददेवको परम प्रतापा। वाढ्यो रिपु न देत अति तापा॥
भैददेव पुनि पितु ढिग जाई। सादर विनती कियो सुहाई॥
कछु दिन आप करैं इत वासा। सैल करों मैं सहित हुलासा॥
अस कहि वंदि चरण युत चैना। गोरखपुर आयो युत सैना॥
तहँको भूपति मिलि सुख माहीं।कछु दिन राखत भयो तहाँहीं॥
भैददेवके तहँ सुत भयऊ। नाम शालिवाहन तेहिं ठयऊ॥
सुवन शालिवाहन पुनि जायो। विरसिंह देव नाम सो पायो॥

दोहा–भै अति विरसिंहदेवकी, द्विज साधुनमें प्रीति ॥
नीति रीति प्रगट्यो पुहुमि, त्यागि अनैकी रीति४४॥

भैददेव नृप सहित उछाहा। तनयकेर कीन्ह्यो सुविवाहा ॥
दीन्ह्यो अमित द्विजनको दाना। पूर्‍यो सुयश महान जहाना॥
विरसिंहदेव सुयश जग छायो। होत भयो हरिभक्त सोहायो ॥
बड़े भक्त जे जक्त कहाये। नामदेव आदिकन टिकाये ॥
हमहुँ जाय तहँ अति सुख भरिकै। नामदेवसों चरचा करिकै॥
राममंत्र भूपति कहँ दीन्ह्यो। बरबस वश नरेश करिलीन्ह्यो॥

दोहा–भूपति विरसिंहके भयो, वीरभानु सुतजान ॥
भानु समान उदोत भो, तेज अमान जहान ॥ ४५ ॥

कछु दिन बीते विरसिंह देवा। पितुसों विनय कियो करि सेवा॥
सुचित आप इत भजन करीजै। सादर म्वहिं निदेश प्रभु दीजै॥
मकर प्रयाग करहुँ स्नाना। प्रगटहुँ तुव यश अमित जहाना॥
सुनत शालिवाहन सुत बैना। आयसु दियो जाहु युत चैना ॥
सुनि विरसिंहदेव भूपाला। लै सँग सुत बहु सैन्य उताला॥
आय प्राग करिकै स्नाना। दान द्विजन दिय विविध विधाना ॥
विविध भांति पकवान सुहायो। विप्रनको भोजन करवायो ॥
पुनि करिकै छावनी सभागा। वस्यो कछुक दिन मध्य प्रयागा॥

दोहा–बोलि ज़मींदारन सकल, पत्री तुरत पठाय ॥
आपनकै तिनको दियो, निज निज थलन टिकाय४६
जेनहिं आये तिनहुँ सों, पठै सैन्य लै दंड ॥
निज वदि करि राख्यो तिनहिं, प्रगटत तेज अखंड४७

कोउ कोउ अपडरगये भगाई। ते सभीति दिल्लीमें जाई ॥
बादशाह सों कियो पुकारा। पृथ्वीनाथ यक शत्रु अपारा ॥
आय प्राग लिय अमालि उदंडा। बरियाई लिय सबसों दंडा ॥

सुनि कह शाह कौन सो क्षत्री । कहँते आवतभो वरअत्री ॥
शासन सुनत शाहको तेजन । हाथजोरि विनतीकीतेहिक्षन ॥
सो सूवा है जाति बघेला । कानन सुन्यो महीप नवेला ॥
शाह कह्यो बघेल क्षत्री कहँ । सुन्यो आजुलों नाहिं कानन महँ॥
अस कहि बड़ी सैन्य लै शाहा । गमनत भयो भरे उत्साहा ॥

दोहा—बीच बीच मग वास करि, चित्रकूटमें आय ॥
शाह कियो डेरा सुन्यो,सो विरसिंह नृपराय ॥ ४८ ॥

छंद—सुत वीरभानु बोलाय,कह सकल सैन्य सजाय ॥
चलि लेइ आगू ताहि,चख लखै को धौं आहि ॥ १ ॥
सुनि वीरभानु सुवैन,कह तात तुम युत चैन ॥
वसि करहु सेवन प्राग,हरिभजहु युत अनुराग ॥ २ ॥
तब कह्यो विरसिंह देव,चलि हमहुँ लेबै भेव ॥
अस भाषि सोये दोउ,निज शिविरगे सबकोउ ॥ ३ ॥
पुनि प्रात सूर उदोत,करि मज्जनै सुख सोत ॥
हरिपूजि दै बहु दान,सुत सहित कियो पयान ॥ ४ ॥
सँग सवा लाख सवार,गज त्योंहिं अमित तयार॥
बहु सुतर प्यादे यूह,कवि को कहै करि ऊह ॥ ५ ॥
हय सुरंगह्वै असवार, विरसिंह भूप कुमार ॥
शिर कूंड कवचे धारि,कर कुंतलै तरवारि ॥ ६ ॥
इमि वीरभानु तयार,ह्वै चल्यो सैन्य मँझार ॥
वजि रहे वृंद निशान,रहे फहरि विपुल निशान ॥ ७ ॥
विरसिंह भूप अनूप,मनु वीररसको रूप ॥
चढ़िकै उतंग मतंग,द्रुत चल्यो त्यों सउमंग ॥ ८ ॥
सँग चलीसैन्य विशाल, सेनप लसे सम काल ॥
सुत सहित सैन समेत,विरसिंह नृप सुख सेत ॥ ९ ॥

नियरान चित्रहिकूट,तव सुन्यो शाह अटूट ॥
निज फौज दियो निदेश,तहँ भै तयारी वेस ॥ १० ॥
पयस्वनी सरिके पार, विरसिंह भूप उदार ॥
जब गयो हलकारान, किय विनय जोरे पान ॥ ११ ॥
सुनु खोदावंद हवाल, बड़ी सैन्य आवति हाल ॥
सुनि बादशाह उमाह,भरिबैठ तख्तहिं माह ॥ १२ ॥
विरसिंहदेव भुवाल, गजते उतरि तेहिं काल ॥
ढिग शाह चलि अभिराम,बहुभांति कियो सलाम १३॥
समभानु पुनि विरभान, हयको उपाटि महान ॥
गजमस्त के परजाय,बैठत भयो सुख छाय ॥ १४ ॥
लखि साह तब हरषाय,तेहि तुरत निकट बोलाय ॥
लिय तख्त में बैठाय,बहु विधि सराहि सुभाय ॥१५॥
पुनि कह्यो बाँकेवीर, तुम सम ननिडर सुधीर ॥
तुम कहँके अहौ नरेश,काहे चल्यो परदेश ॥ १६॥

सोरठा—केहि कारण मम देश,लूट्यो सो नहिं नीक किय ॥
शाह वचन सुनि वेस,वीरभानु बोलत भयो ॥४९॥

हम क्षत्री बघेल हैं रूरे । वासी थल गुजरातहि केरे ॥
आप हमारे हैं सति स्वामी । हम चाकर राउर अनुगामी ॥
निज करतब देखायबे काहीं । आये हम यहि देशहिं माहीं ॥
जो रिपुता करि हमको मारचो। ताको हमहूं सपदि सँहारचो ॥
तुव देश हिको द्रव्य न खायो । निज कोषहिको वित्त उठायो ॥
जो नृप हमको तेज देखायो । ताहि दंडदै फेरि बसायो ॥
सो आपहिकी बदिकरि दीन्ह्यो। वृथाकोप हमपर प्रभु कीन्ह्यो॥
यह सुनि बादशाह कहवानी । यहि बालक की बुद्धि महानी ॥

दोहा—पुनि कह विरसिंह देवसों, तुव सुत बड़ो निशंक ॥
रणरिपुगण जीतन प्रबल, वीर धीर अतिवंक ॥९०॥
छंदहरिगीतिका—तुव पूत बड़ो सुपूत ह्वैहै वंशतिहरे माहिं॥
नृप द्वादशैको भूप होई अचल भूमिसदाहिं ॥
यह भाषि शाह उछाह भरि बारहोंनृपकी राजि ॥
दियवखशिसादर नानकारहि कह्यो भाई आजि ॥
गिरि विंधि बाँधव दुर्गके तुम ईश होहु प्रसिद्ध ॥
नृप सकल महिके करहिं सेवा होयसिद्धि समृद्ध ॥
लिखिदियो विरसिंहदेवको पुनि भूप शाहसमेत ॥
चलि प्राग करि स्नान दिय वहुदान द्विजनसचेत ॥
तहँ भूप वहु सन्मानकरि कीन्ह्योनिमंत्रण शाह ॥
पुनि साह द्विल्लीको गयो प्रागहिं वस्यो नरनाह ॥
विरसिंहदेव विवाह किय सुत वीर भानुहिंकेर ॥
सब ज़मींदारनको निमंत्रण दियो आये ढेर ॥ ३ ॥
दिय दान द्विजन महानयुत सन्मान मोद अमान ॥
सरसान सकल जहान बिच किय गायकन वहुगान ॥
गज बाजि धन मणिमाल बसन विशाल दै सब काह ॥
करि मान किय सबकी विदा विरसिंह सहित उछाह ॥
दोहा—ज़मींदार निज निज सदन, जातभये हर्षाय ॥
त्योंहीं याचक गुणीजन, गये अमित धन पाय॥९१॥
करिकै सविधि क्रिया पितु केरी। विरसिंहदेव द्विजन वहु हेरी ॥
विविध विधान दान वहु दीन्ह्यो।युत सन्मान विदा बहु कीन्ह्यो॥
कछु वासर करि वास प्रयागा । विरसिंहदेव भूप बड़ भागा ॥
वोलि ज्योतिषिन सुदिन शोधाई। चकरनको चाकरी देवाई ॥
करि खातिरी कह्यो तिनपाहीं।कालिह सुदिन हमरो सुख माहीं।

चलो सबै बांधव गढ़ देखी। सुनत वीर ह्वै सयुग विशेखी ॥
कहे नाथ भल कीन सलाहा। हमरे उर महान उत्साहा ॥
पुनि विरसिंहदेव मुद भरिकै।वीरभानु युत मज्जन करिकै ॥

दोहा–वेणीमे बहु दान दै, युत सन्मान द्विजान ॥
लै सँग सैन्य पयान किय, विपुल बजाय निसान ९२॥

कवित्त–सोहत सवाव लाख संगमें सवार लोने युग लाख पै-
दरहु गौने जासु साथमें ॥ वेशुमारगज त्योंहीं सुतर अपार राजे
योहीं कूँच करि भरे आनँदके गाथमें ॥ विच विच पंथ वास
करि बांधवदुर्ग पास आय नीचे डेरा कियो धारे अस्त्रहाथमें ॥
विरसिंहदेव जाय लषणकी पूजा तहां करि सविधान धाऱ्यो पद
जल माथमें ॥ १ ॥

सवैया–सादर साधुन विप्रनको नृप छिप्र भली विधि बोलिजेवा
यो॥फेरिसबै ज़मींदारन औ भुमियानको आपने पास बोलायो॥
ते सब आय सलाम किये दिये भेट कह्यो नृप वैन सोहायो ॥
डेरा करो सब जाय सुखी दियो दण्ड तेहीं जो बोलाये न आयो२

दोहा–साँझ समय दरबारको, सादर सबहिं बोलाय ॥
कहरैयत तुम शाहके, सुनहु सबै चित लाय ॥९३ ॥

कवित्त–शाह यह राज्य हमैं दियोहै उछाह भरि प्रथम सप्रीति
वैन सबसों बखानैहैं ॥ रीति या बघेलवंशकी है क्रोध ठानै ना-
हिं येतेहुँपै कोई जो न हुकुमको मानैहैं ॥ युद्ध करिवेको जो
तयार होत ताको हम वावहीहै क्रुद्ध ह्वैकै आसनको ठानैहैं ॥
ऐसे अवनीशवैन सुनि सुनि शीशनाय कहे हम रावरेके रैयत
प्रमानैहैं ॥ १॥

सोरठा–ईश्वर आप हमार, हम सेवक हैं रावरे ॥
सुनि गढ़भूप उदार, आयो विरसिंहदेव ढिग॥९४॥

कवित्त–तेग धरि आगे विनय कियो अहैं बाल हम आपहैं हमारे पिता पालैं प्रीति ठानिकै ॥ सुनि विरसिंहदेव बाहँ गहि पुत्र कहि लीन्ह्यो बैठाय उर महामोद मानिकै ॥ कह्यो पुनि तूतो वीरभानुके समान मेरे कह्यो पुनि सोऊ पाणि जोरि सुख सानिकै ॥ महाराज किला चलि बैठैं राज्य आसनमें करों सोई दीजिये निदेश दास जानिकै ॥ १ ॥

दोहा–सुनत वयन विरसिंह नृप, बोलि ज्योतिषिन काह ॥
सुदिन शोधि गुरु साधु द्विज, आगे करि सउछाह९५
चल्यो निसान बजायकरि, जायदुर्ग भरि चाय ॥
द्वारपालको देतभो, बहु इनाम बोलवाय ॥ ९६ ॥
पूजा करि सब सुरनकी, अति आदर युत भूप ॥
विप्रन साधुनको कियो, निवता महाअनूप ॥ ९७॥

बाजन बाजे विविध प्रकारा। तोपैं छूटतभई अपारा ॥
सुदिन शोधिसिंहासन पाहीं। विरसिंह भूप बैठ सुखमाहीं॥
ज़मीदार भूमियन बोलाई। विदा कियो दै तिन्हैं विदाई ॥
रैयत साहु महाजन जेते। आयभेंट दिय नति करि तेते॥
शिरोपाउदै तिन सब काहीं। खातिर करि किय विदा तहांहीं॥
राज्य करत बहु वर्ष विताये। वीरभानु सुतयुत अति चाये ॥
नृप विरसिंहदेव यक वासर। कीन्ह्यो मन विचार यह सुखकर॥
सुतहिं समर्पि राज्य यह सिगरी।भजन करों चलि नहिं अब विगरी

दोहा–बोलि साधु गुरुको सपदि, सुदिन शोधि नरराय ॥
वीरभानुको शुभ दिवश, दिय गद्दी बैठाय ॥ ९८ ॥

आप भजन करिवेके हेतू। मणिदै रानी सहित सचेतू ॥
विरसिंहदेव प्रागमे आई। वास कियो तिरवेणि नहाई ॥
दिनप्रति ब्राह्मण साधुन काहीं। भोजन करवावै सुखमाहीं ॥

आनंद मग्न रहै वसुयामा । सुमिरण करत जानकी रामा ॥
वीरभानु वांधवगढ़में इत । पैठि राज्य आसन मन प्रमुदित॥
राज्य कियो वहु दिवश समाजा। तासु सुवन तुमराज विराजा॥
करहु निशंक राज्य सव काला। यह सुनि राजाराम निहाला ॥
वहु विधि स्तुति करिकै मेरी । मोसों विनती करि वहुतेरी ॥

दोहा—कह कवीर साहेव गुरू, तुम हमरे कुलकेर ॥
शिष्य कीजिये मोहिं प्रभु, अव न कीजिये देर॥५९॥

यह सुनि तव मैं अति हर्षाई । राजारामहिं कह्यो वुझाई ॥
ह्वैहै तुम्हरे दशयें वंसा । परमप्रकाशमान यक हंसा ॥
कथिहै सो सुख अनुभव वानी । मोर शब्द गहिहै सुखमानी ॥
सोई तुव कुलको अवतंसा । विजक ग्रंथको करी प्रशंसा ॥
ताको अर्थ अनूपम करिहै । मम आश्रमहिं आय सुख भरिहै
यह सुनि रामभूप शिरनाई । करि प्रशंसा जनन सुनाई ॥
नंदपुराणिक तहँ सुख भीनी । करि दंडवत वंदना कीनी ॥
राजाराम महलमें जाई । रानीसों सव गयो जनाई ॥

दोहा—रानी सुवचन कुवँरिसों, किय यह विनय ललाम ॥
श्रीगुरुको लै आइये,महाराज निज धाम ॥ ६० ॥
श्रीकवीर गुरुको मुदित, सादर रामभुवाल ॥
लैआये निज भवनमें, करि वहु विनय रसाल ॥६१॥

कवित्त—रहै जहाँ आसन तहाँई श्रीकवीरजीको गुफा वनवायो प्रीतियुत राजारामहै । साज मँगवाय सव चौका कै कवीर शिष्य राजा अरु रानिहूंको कीन्ह्यो तेहिं ठामहै।औरो सव भूपके समीपी भये शिष्य सुखी पूजा जौन चढ्यो तहां अगणित दामहैं । दियो भंडारा श्रीकवीर वोलि साधुनको जय जयरह्यो पूरि वांधवगढ़ धाम धामहै ॥ १ ॥

दोहा–युगल गाँउ अरुगाँउ प्रति,रुपयाएक चढ़ाइ ॥
दिय कागज लिखवायकै,रामभूप हर्षाय ॥ ६२ ॥
होय जो हमरे वंशमें,भूपति कोउ उदार ॥
लेय न कबहूँ शपथ तेहि, अर्पन कियो हमार ॥६३॥
श्रीकबीरजी ह्वै प्रसन्न अति । त्रिकालज्ञ पुनि कह्यो महामति॥
औरहु कछु भविष्य मैं भाखों ।सो तुम साति निज मन गुणिराखो
दशयें वंश हंसको रूपा । तुमहीं प्रगट होहुगे भूपा ॥
सुवचन कुवँरि रानि तुव जोई । सो परिहार भूप घरहोई ॥
तोसों तासु होयगो व्याहा । हरि पद रति अति करो उछाहा॥
ताके वीरभद्र सुत तेरो । जन्मिदेयगो मोद घनेरो ॥
सो तेहिते इग्यरहौं वंशा । होइहै नृपनमाहँ अवतंशा ॥
विच विच और भूप जेह्वैहैं । ते हरिभक्ति हीन ह्वैजैहैं ॥
दोहा–ब्रह्मतेजते तपित अति, ह्वहै कोउ नरेश ॥
तजि यह बांधव दुर्ग को, बसिहै औरे देश ॥ ६४ ॥
ते सब भूपन को जस नामा । शिष्य मोर लिखिहैं अभिरामा ॥
दशै वंश तुव अंतहिकाला । संत वेषदै दरश विशाला ॥
तोको रामधाम लैजैहौं । आवागमन रहित करिदैहौं ॥
अस कहि श्रीकबीर भगवाना । परमधामको कियो पयाना ॥
श्रीकबीरके शिष्य सुजाना । धर्मदास भे विदित जहाना ॥
तिनके शिष्य प्रशिष्य घनेरे । लिखे जे औरहुँ भूप बड़ेरे ॥
तिनको नाम सुयश परतापा । कहिहौं मैं सुखमानि अमापा ॥
कह्यो पूर्व जो संत कबीरा । वीरभानु नृप भो मतिधीरा ॥
दोहा–राम भूप सुत तासु भो, इन दूनौं करतूति ॥
प्रथम कछुक वर्णन करौं, जग प्रसिद्धमजबूति ॥६५॥
दिल्ली रह्यो हुमायूं शाहा । मान्यो हुकुम सकल नरनाहा ॥

शेरशाह दिल्लीमें आई । दियो हुमायूं शाह भगाई ॥
दिल्लीमें करि अमल सुहायो । सदल आपनो अदल चलायो॥
शाह हुमायूं बेगमकाहीं । गर्भवती सुनिकै श्रुतिमाहीं ॥
नरहरि महापात्र लिय मांगी । सब भूपन ढिगगे सुख पागी ॥
राख्यो नहिं कोउ भूपति ताहीं। आयो वीरभानु ढिग माहीं ॥
वीरभानु तेहिं भगिनी भाखी । पाटन शहर देतभो राखी ॥
वेगम सो दिल्लीपति जायो । अकबर शाह नामसो पायो ॥

दोहा–आई बाधा नगरमें, शेरसाह की सैन ॥
वीरभानु नृपसों कहे, लखि आये जे नैन ॥ ६६ ॥
तहँते नृपति पयान करि, बांधवगढ़गो धाय ॥
शेरशाह लिय छेंकि तेहिं, अमित सैन्य लै आय६७॥

छेंके रह्यो वर्ष सो वारा । खायो बोयो आम अपारा ॥
दुर्ग अटूट मानि सो हारा । लै सब सैना सपदि सिधारा ॥
वीरभानु वरवीर नरेशा । छीनिलियो दल लै निज देशा ॥
लै विलायती दल निज संगा । चलो हुमायूं सहित उमंगा ॥
इत अकबर यक दिवश उचारा। सुनिये बांधवनाह उदारा ॥
भाई रामसिंह सँग माहीं । बैठतहौ नित भोजन काहीं ॥
हमको क्यों बैठावत नाहीं । नृप कह आप खामिदै आहीं ॥
पूंछिलेहु मातासों जाई । पूंछ्यो सो सब दियो बताई ॥

दोहा–खड्गचर्म लै हाथमें, सुनि अकबर सो हाल ॥
चल्यो कियो तिन संगमें, वीरभानु निज बाल६८॥
अकबरसों तहँ राम कह, कोस कोस करि वास ॥
चलिये दिल्लीनगरको, जुरै फौज अनयास ॥ ६९ ॥
जुरी चमू चतुरंग संग, अमित तुरंग मतंग ॥
रँगो रामसिंह जंगके, रंग अभंग उमंग ॥ ७० ॥

नातनको लिखवायो पाती। चारो नृप आये मुदमाती॥
तिन सँग रामसिंह यशवाला। जातभयो भो जंग विशाला॥
हन्योशेरको तहाँ हुमाऊ। दिल्ली तख्त बैठ युत चाऊ॥
इतै सुलेमैं राम सँहारी। दिल्लीको द्रुत गयो सिधारी॥
ताकन तनय हेतु सुखधारी। चढ्यो हुमायूं ऊंचि अटारी॥
मोद मगनसों गिरिगो नीचै। होत भयो तुरंत वश मीचै॥
तनय हुमायूं अकवर काहीं। बैठायो तव तख्तहिं माहीं॥
वीरभानु जव तज्यो शरीरा। रामसिंह नृप भो मतिधीरा॥

दोहा—दिल्लीको पुनि राम नृप, गये अकव्वर शाह॥
कीन्ह्यो अति सन्मानसो, अकस मानि नरनाह॥७१॥
औचक मारनको गये, ते नृप रामहिं काहँ॥
फिरे मानि विस्मय सबै, निरखि चारु चौवाहँ॥७२॥
नापितसेन स्वरूप धरि, हरि जिनके तनु माहिं॥
तेल लगायो राम सो, कहियेकेहिं नृप काहिं॥७३॥
वीरभद्र तेहि सुत भयो, वीरभद्र कर संत॥
आगे वर्णौं औरहू, भये जे नृप मतिवंत॥ ७४॥
वीरभद्र सुत विक्रमा—दित्य भयो अवदात॥
नामहिंके अनुगुन भयो,जेहिं गुण जग विख्यात७५॥
लीन्ह्यो जायरिझाय जो,निज करतूतिहिमाहिं॥
ब्रह्मके मारे मरिलह्यो,सोन देव पुर काहिं॥ ७६॥
अमरसिंह ताको सुवन,सरिस अमरपति भोज॥
रीवां रजधानी करी,सींवा यश अरु वोज॥७७॥
दिल्लीको गमनत भयो,चुक्यो खर्च मग माहिं॥
लूटि दौलतावादको,गयो शाह ढिग पाहिं॥ ७८॥
उमरावन चुगुली करी,शाह निकट द्रुत जाय॥

बादशाह मान्यो नहीं,नृप पै खुशी बनाय ॥ ७९ ॥
अमरसिंह भूपालके,भो अनूपसिंह भूप ॥
भूपर जासु प्रताप यश,छायो परमअनूप ॥ ८० ॥
भावसिंह ताको तनय,भयो भानु सम भास ॥
दाता ज्ञाता वीरवर,ज्ञाता बुद्धि विलास ॥ ८१ ॥
जगन्नाथजी जायकै,मूर्त्ति लाय जगनाथ ॥
थापिव्यासके ग्रंथको,संच्यो भरि सुख गाथ ॥ ८२ ॥
राना घरमें व्याहभो,तहँते मूरति दोय॥
लाये सरस्वति गरुड़की,थापित किय मुदमोय ८३॥
विप्रन दान महानदै, कीन्हे बहु सन्मान ॥
तिनके भे अनिरुद्ध सिंह,भूपति परम सुजान ॥८४॥
ताके भो अवधूतसिंह,जाहिर दान जहान ॥
ताके सुवन अजीतसिंह, दुवन अजीत महान ॥ ८५॥
जाके गौहरशाह बासि, जायो अकबर शाह ॥
सैन्य साजि जोहिं तख्तमें,बैठावत नरनाह ॥ ८६ ॥
जाजमऊलों जायकै, दिल्ली दियो पठाय ॥
अँगरेजहुँ अठवर्नको, दीन्ह्यो जंगभगाय ॥ ८७ ॥
तासु तनय जयसिंहभो, जयमें सिंह समान ॥
जाहिर दान कृपानमें, भक्तिवान भगवान ॥ ८८ ॥
दशहजार असवार लै, पूनाको हारोल ॥
आवतभो यशवंत तेहिं, हत्यो प्रताप अतोल ॥८९॥
गहरवार करि गर्व बहु, लीन्हे देश दबाय ॥
तिनको मारि भगाय दिय, बचे ते गिरिन लुकाय९०
देश आपने अमल करि, दै विप्रन बहु दान ॥
अंत समय तनु प्राग तजि, हरिपुर कियो पयान ९१॥

विश्वनाथ नरनाथभो, तासु तनय यशगाथ ॥
रति अनन्य सियनाथपै, भई जासु महिमाथ ॥ ९२ ॥
सरि सर घर घर पुर पथन, छयो राम गुणगाथ ॥
कितो परिक्षित कैं कियो,कलि कृतयुग विश्वनाथ९३
तासुतनय रघुराज भो, महाराज शिरताज ॥
राजत राज समाज मधि, जाको सुयश दराज ॥९४॥
श्रीकबीरजी कथित यह,है विचित्र नृप वंश ॥
नहिं असत्य मानै कोऊ,जानि संत अवतंश ॥ ९५ ॥
सतयुगमें सत नाम रह, अरु मुनीन्द्र त्रेताहिं ॥
करुणामय द्वापर रह्यो,अब कबीर कलि माहिं॥९६॥

कवित्त—नृपति उदार केते भये अनुसार मति तिनके अपार गुण यश कियो गानहै ॥ जनम करम भूप रघुराजकोअनूप धरमको जूप दिव्य जाहिर जहानहै ॥ देख्यो निज नैन ताते भरो अति चैन उर करतहौं निज बैन सविधि बखानहै ॥ कहै युगलेश अहै झूठको नलेस कहूं मानिहै विशेश सांच सोई बड़ो जान है ॥ १ ॥

छंद—कह्यो कबीर भविष्य राम नृप सुनि सुखराशी ॥
हंसिनि सुवचन कुवँरि रानि तू हंस प्रकाशी ॥
वीरभद्र तुव सुतहु हंस नित हरि ढिग वासी ॥
गुणगंभीर अति वीर धीर यश सुयश विलासी ॥
जब दशै वंश अवतंश नृप, प्रगट होयहै तू अवशि ॥
तब सति परिहार नरेशकुल,जनमीयहतुवतियहुलसि१।

दोहा—तासों तेरो होयगो, सुखप्रद प्रथम विवाह ॥
वीरभद्र यह तोहि उदर, वंश इग्यरहे माह ॥ ९७ ॥
जनमि देयगो तुमहि अति, परमप्रमोद विख्यात ॥

तेजवंत क्षिति छाय है, यश अनंत अवदात ॥ ९८ ॥
समय विजय करसिंहतो, भो जयसिंह भुआल ॥
गंगलियो भगवान जेहि, तनु त्यागनके काल ॥ ९९॥
प्रगट भयो ताके तनय, हंस जो कह्यो कबीर ॥
विश्वनाथ तेहि नामभो, परमयशी रणधीर ॥१००॥
रघुपति भक्त अनन्य अति, अरु ब्रह्मण्य शरन्य ॥
अग्रगण्य क्षिति नृपनमें, तेग त्याग जेहिं धन्य ॥ १ ॥
तेहि आह्निक गुण तेज यश, औरहु अमित चरित्र ॥
मैं विचित्र वर्णन कियो, ग्रंथ सोपरमपवित्र ॥ २ ॥
देखहिं श्रद्धावान जे, होवैं मनुज सुजान ॥
औरहु करहुँ वखान कछु, निजमतिके अनुमान ॥३॥
रानी सुवचन कुँवरिभै, पुरी उचहरा माहिं ॥
सुता भई शिवराज नृप, व्याहिगई तेहि काहिं ॥ ४ ॥
पढ्यो भागवत ताहिमे, दृढ़ भो तेहिं विश्वास ॥
गुण यश अनुपम तासुभे, किय जो कबीर प्रकाश॥५॥
विश्वनाथ नरनाथकी, तिय सों अति अभिराम ॥
कुँवरि सुभद्र सुनाम जेहिं, सरिस सुभद्रा आम ॥६॥

छप्पय–वीरभद्र सुत रामभूपको हंस सुहायो ॥
श्रीकबीर आगम निदेश निजग्रथहिं गायो ॥
विश्वनाथ तेहिं तीय गर्भ जबते सो आयो।
तबते बाँधवदेश धर्म परमानंद छायो ॥
कहुँ रह्यो न अधरम लेश क्षिति विन कलेश पुरजन भयो
कलि वेश छयो कृतयुतधरम सतयुगलेशसो कहि दयो१

दोहा–रींवा घर घर सब प्रजा, सुखभरि करत उचार ॥
विश्वनाथके होय सुत, तौ धनि जन्म हमार ॥७ ॥

परमहंस जो ऋषभदेवसम। चतुरदास जेहि नाम शमन भ्रम ॥
फिरतरहे रींवापुरमाहीं । रामभजनमें मग्न सदाहीं ॥
डोलत मग औरहि मुखबोलैं । निज हियकोअंतर नहिंखोलैं ॥
वर्षाऋतु धारैं शिरवर्षा । जाडे जलमें वसैं सहर्षा ॥
ग्रीषम तपत उपलमें सोवैं । प्रेमते हँसैं कहूं क्षण रोवैं ॥
नृप रघुराज सुतासु चरित्रा । भक्तमालमे रच्यो पवित्रा ॥
परमहंस सो सहज सुभाये । सुविश्वनाथ जन्मदिन आये ॥
लगे बजावन मुदित नगारा । कहि मुख हंस लेतु अवतारा ॥

दोहा—यह हवाल जयसिंह नृप, सुनि सुनि त्यों पितु मात॥
क्षण क्षण अति हरषातभे, हियमें सो न समात॥ ८ ॥
अष्टादशसै असीको, साल सुकातिक मास ॥
कृष्णपक्ष तिथि चौथ शुभ, वासरदानि हुलास॥ ९ ॥

वीरभद्र नृप हंसस्वरूपा । भयो भूप रघुराज अनूपा ॥
कृष्णचंद्रको प्रिय अधिकारी । शर्मद धरा धर्म धुरधारी ॥
नाम भागवतदास दुलारा । करहिं मातु पितु सदा उचारा ॥
बालहिते भो ज्ञाननिधाना । भक्तिवान पूजक भगवाना ॥
कछुदिनमें जननी मतिवारी । तनु तजि पुरवैकुंठ सिधारी ॥
पिता पितामह निकट सकारे । लैनित जाहिं खेलावन वारे ॥
तिनसों कहि कहि सुंदर वानी। कथै ज्ञान मानहु बड़ ज्ञानी ॥
जगत शरीर अनित्यहि जानो। मरत सो जीव नित्य ध्रुव मानो॥
अजर अमर तेहि गावत वेदा। वृथा करत तेहि हित नरखेदा ॥

दोहा—सुनि सुनि कहे प्रसन्न मन, ते अति हिय हर्षात ॥
हैं ये पुरुष पुरानकोउ, पाल रूप दर्शात ॥ ११० ॥

कछु दिनमें पुनि जाय प्रयागा । नृप जयसिंह तुरत तनु त्यागा
श्रीविश्वनाथ राज पद पायो । रघुराजहु युवराज कहायो ॥

रहे उर्मिलादास सुसंता । भक्त अनन्य उर्मिलाकंता ॥
चलि चलि तिनके आश्रम माहीं । दर्शन तिनको करै सदाहीं ॥
मंत्र लेनको बड़े उमाहा । विनय कियो तिनसों सउछाहा ॥
प्रभु मोहिं मंत्र कृपाकरि दीजै । मेरो जन्म सफल जगकीजै ॥
नाथ कह्यो तब अति हरषाई । मेरे रूप संत यक आई ॥
देहैं तोहिं मंत्र सहुलासा । ह्वैहै सिगरे जगत् प्रकासा ॥

दोहा—तोहिं देनको मंत्र मोहिं, है नहिं लखन नियोग ॥
मेटिहै तुव भव सोग सोइ, ध्रुवलखिहै सब लोग ॥ ११ ॥

छंद—स्वामि मुकुंदाचार्य्य शिष्य यक संत रह्यो अभिरामा ॥
नाम जासु लक्ष्मी प्रपन्न ढिग विश्वनाथ निहकामा ॥
मंत्र लेनकी इच्छा गुणि मन श्रीरघुराजहि केरो ॥
भाषि गयो भूपतिसों निज गुरु भक्ति प्रभाव घनेरो १
आश्रम परम मनोहर तिनको ब्रह्मशिला तट गंगा ॥
प्रियादास जे गुरू आपके तिनको रह सतसंगा ॥
भक्ति ग्रंथ पठे तिनके बहु वाल्मीकि रामायन ॥
श्रीभागवत भागवत पूरे पढ़त निरंतर चायन ॥ २ ॥
लायक गुरू विशेष होनते नरनायक सुत केरे ॥
आयसु होय बोलिलै आऊं ऐहैं विनती मेरे ॥
विश्वनाथ कह आप सरिस शिष जिनके जगत सोहाहीं
जो कहिसकै महामहिमा तिन कोहै अस महि माहीं॥
श्रीराना जमानसिंह जासों लियो मंत्र उपदेशू ॥
ऐसे शिष्य आप जिनकेहैं तेतो संत विशेशू ॥
जौलौं स्वामिहिं इतै न लावो तौलौं मम सुतकाहीं ॥
भक्तिभेद तुमहीं दरशावो करि सुकृपा उरमाहीं ॥ ४॥
पुनि सुत श्रीरघुराज नामको एक बाग लगवायो ॥

लक्ष्मण बाग सुनाम तासुको युत अनुराग धरायो ॥
अति उतंग आयत विचित्र हरि मंदिर यक अभिरामा ॥
निरखत प्रद मुद दाम जननको बनवायो तेहिं ठामा ५॥
श्रीरघुराज सुदिवश माहँ पुनि उर उछाह अति धारी ॥
थापित किय सिय राम लषणकी मूरति तहँ मनहारी ॥
औरहु अमित देवको प्रमुदित सादर तहँ बैठायो ॥
दान महान द्विजन दै संतन करि सत्कार सोहायो॥६॥
विश्वनाथ पितु पद शिरधरि पुनि विनयकियोकर जोरी।
पूरणभो प्रसाद यह तिहरे अब यह इच्छा मोरी ॥
पठइय प्रभु लक्ष्मी प्रपन्नको ब्रह्मशिलामें जाई ॥ ७ ॥
बोलिलै आवैं सपदि स्वामिको लेहु मंत्र हरषाई ॥
बैन सुनत सुतके सचैन ह्वै विश्वनाथ नरनाथा ॥
कह लक्ष्मी प्रपन्नसों सादर जोरे दोऊ हाथा ॥
ब्रह्मशिला सुरसरि समीप जहँ स्वामि मुकुंदाचारी ॥
वास करत तुम जाय आसु तहँ लावहु तिन्हैं सुखारी८॥

दोहा—महाराज विश्वनाथके, सुनत वयन सुख पाय ॥
द्रुत लक्ष्मीपरपन्न तब, ब्रह्मशिलागो धाय ॥ १२ ॥

प्रभु ढिग चलि करि दंड प्रणामा ।कुशल पूँछि पायो सुखधामा॥
विनय कियो पुनि दोउ कर जोरी। पुरवहु नाथ कामना मोरी ॥
बांधवेश विश्वनाथ नरेशा। रीवां रजधानी जेहिं वेशा ॥
राम अनन्य भक्त जगवीनो। राम परत्तु ग्रंथ बहु कीनो ॥
प्रियादास भे संत महाना । तासु शिष्य सो विदित जहाना ॥
भक्ति ग्रंथ ते बहुत बनाये। ते सब आप वदन निज गाये ॥
सो विशुनाथ तनय मतिवाना। है रघुराजसिंह जग जाना ॥
आप सों मंत्र लेनके हेतू। कीन्हे प्रण मन कृपानिकेतू ॥

दोहा—ताहि समाश्रय कीजिये, चलि रीवांमें नाथ ॥
प्रभु कह मैं नहिं जाहुँ कहुँ, तजि तट सुरसरि पाथ १३
यह थल जो विहाय उत जैहौं। तौ अब परममोद नहिं पैहौं ॥
किय पुनि विनय सेव बहु ठानी।नाथ कह्यो पुनि सोई बानी
सुनि लक्ष्मीप्रपन्न पुनि बोल्यो। निज अंतरको अंतर खोल्यो॥
जो प्रभु रींवानगर न जैहैं। तौ सति मोहिं जिवत नहिं पैहैं ॥
सुनिहँसिकै कह दीनदयाला। जो अस तेरो अहै हवाला ॥
तौ अब आसु सुदिवश विचारी। तहां जानकी करैं तयारी ॥
सुनि लक्ष्मी प्रपन्न हरषाई। गणक बोलि द्रुत सुदिन शोधाई ॥
सादर प्रभुसों वचन वखाना। सुदिन आजु भल करियपयाना
दोहा—सुनत बयन प्रिय शिष्य बहु,ले संग संत अपार ॥
रीवांको गमनत भये, प्रभु हरि प्रेम अगार ॥ १४ ॥
म्यानामें प्रभु मध्य सोहाहीं। संत अनंत लसैं चहुँ घाहीं ॥
रामकृष्ण हरिसुख उच्चारत। चहूं ओरसों सोरपसारत ॥
जात जहां जहँ प्रभु पुर ग्रामा। होत तहां तहँ शुचिजन ग्रामा ॥
यहि विधि आय स्वामि सुख छाकी।रीवां रह्यो कोस त्रय बांकी॥
सुनि सुत युत नृप आगू लीन्ह्यो।हरिसम बहु सत्कारहि कीन्ह्यो॥
पुनि रींवहिं लायो युत रागा। वास देवायो लछिमन बागा ॥
मंदिर निरखि मुकुंदाचारी। कह्यो रच्यो भल मंदिर भारी ॥
कछु वासर करिकै सुख वासा। पुनि मष ठान्यो कृपानिवासा ॥
दोहा—रंभ खम्भ गड़वाय करि, हरिमनु द्विजनजपाय ॥
सुदिन सोधाय सचाय प्रभु, अति उतसव सरसाय १५
विश्वनाथ नरनाथ समेतू। बोलि कुवँर रघुराज सचेतू ॥
नारायण मनु किय उपदेशा।हरयो सकल कलिकलुष कलेशा॥
भई समाश्रय तासु तिया सब। पूरि रह्यो पुर पर प्रमोद तब ॥

तीरथ चित्रकूट जे नाना। तहां पठै करि द्रव्य महाना॥
सविधि कियो साधुन सतकारा। ते सब जय जय किये अपारा॥
लियो मंत्र जबते युत प्रीती। तबते चलन लग्यो यह रीती॥
दोहा-पाठ गजेंद्रहि मोक्ष अरु, मूल रमायण ख्यात॥
करि नारायण कवचको, पाठ उठैं परभात॥ १६॥
पंडित जे नव कृष्ण निवेरे। बसनहार कलकत्ता केरे॥
तिनहिं लाटसों कहि बोलवायो। विश्वनाथ नरनाथ सोहायो॥
सौंपिदियो निज सुत रघुराजै। विद्या सुखद पढ़ावन काजै॥
तिनसों श्रीरघुराज सुजाना। अंगरेज़ी पढ़ि बहु सुख माना॥
मुग्धबोध व्याकरण विशाला। पुनि पढ़ि लियो थोरहीं काला॥
फेरि अयोध्यावासि महंता। जग जाहिर रामानुज संता॥
सौंप्योतिन्हैं पढ़ावन हेतू। नृप विश्वनाथ धर्मको सेतू॥
तिनसों वाल्मीकि रामायन। श्रीरघुराज पढ़्यो अति चायन॥
दोहा-सवालाख श्लोक जेहिं, महाभार्त विख्यात॥
विन श्रम ताको पढ़ि लियो, कहि सबसों हरषात१७
करि मज्जन विधियुत श्रीकंता। पूजन ठानि रोज सुखवंता॥
वाल्मीकि रामायण सादर। श्रीभागवत सुनावत सुखकर॥
वाल्मीकि भागवत विशोका। प्रति अध्याय जिते श्लोका॥
जेहिं आगे श्लोक जो होई। पूंछे बुधहि बतावत सोई॥
महाभारतमें जे इतिहासा। ते पुस्तक विन करत प्रकासा॥
अस सब भांति अलौकिक करणी।श्रीरघुराज केरि कवि बरणी
गति जो कविता रचन नवीनी। बालहिंते विरंचि तेहिं दीनी॥
संस्कृत और भाषहू केरी। कविता बहु विधि रची घनेरी॥
दोहा-विनयमालको प्रथम रचि, रुक्मिणि परिनय फेरि॥
पितुहिं सुनायो ते भये, अति प्रसन्न मुख टेरि॥ १८॥

चित्रकूट गमनत भये, एक समय रघुराज ॥
रच्यो तहां सुंदर शतक, हनुमतचरित दराज ॥ १९ ॥
जो कोउ बांचत पत्रिका, देखि पिठौता तासु ॥
बांचि आसु सबसों कहत, सुनि सब लहत हुलासु १२०
लिखन शक्ति लखिनाथकी, विदित लिखारी जोउ ॥
दीखन नृप अस चखन कहि, सिखन चहतहै सोउ २१॥
कहूं चढ़ैती तुरंगकी, दरशावत सबकाहिं ॥
कहूं मतंग सवारह्वै, सुरपति सरिस सोहाहिं ॥ २२ ॥
कहूं दुनाली धनुष लै, गोली तीर चलाय ॥
हनै निसाना रोपिकै, तुरतहि देहिं गिराय ॥ २३ ॥
कहूं तेगको घालिकै, करहिं टूक चौरंग ॥
सुनि लखि पितु विशुनाथ नृप, होत मनहिं मन दंग२४
कहुँ वन जाय अहेरको, मारिशेर बनजीव ॥
देखरावहिं निज तातको, होहिं ते खुशी अतीव॥२५॥
बहु वनराजनको हन्यो, वनहिं सिंह रघुराज ॥
ते दराज विस्तर भयहि, वरण्यो नहीं समाज ॥ २६॥

कवित्त—एक समय राना श्रीजमानसिंह हिंद भान गया करिवेको कीन्ह्यो देश या पयानहै ॥ जायविश्वनाथ चित्रकूट मुलाकात करि रींवहि लेवायलाये करि सन्मानहै ॥ भाई लछि-मनसिंह कन्या तिन्हैं व्याहि दीन्ह्यो चीन्ह्यो विश्वनाथै भलो भक्त भगवानहै ॥ तासु सुत रघुराज तिलक चढायआसु जात-भे हुलास भारि उदैपुर थानहै ॥ १ ॥

दोहा—कछु दिन माहि जमानसिंह, गे वैकुंठ सिधारि ॥
रानाभो सरदारसिंह, तेउगे स्वर्ग पधारि ॥ २७ ॥
भूपति भयो स्वरूपसिंह, तेग त्याग समरथ्य ॥

राज काजमे निपुण अति, चल्यो सुनीति सुपथ्य२८
निज भगिनिनिके व्याह हित, करि सँदेह मनमाह ॥
श्रीरघुराज सलाह करि, चलि ढिग पितु नरनाह२९॥
महापात्र अजवेशको, खतलिखाय यहि भांति ॥
पठयो वेगि उदयपुरै, नृप सुत अति मुदमाति १३०॥
आपसयान सुजान सुठि, को करिसकै वखान ॥
जहँकीजै अनुमान तहँ, हमहिं प्रमाण न आन ॥३१॥
विश्वनाथ नरनाथ अरु, युवराजहु रघुराज ॥
वरनिदेशअजवेश लहि,सुकविनको शिरताज ॥ ३२॥

सवैया–चैन भरो चल्यो ऐनते वेगि गयो अजवेश उदैपुर माहीं॥ राना स्वरूप अनूप जो भूप सुन्यो श्रुति आयो इते तेहिं काहीं ॥ सादर बोलि सुप्रेमते क्षेमको पूँछि कह्यो ढिग वैठो इहां-हीं॥ बैठि स्वनाथको पत्रसो हाथ दियो लिय माथते धारि तहांहीं॥ १ ॥

दोहा–श्रीस्वरूप राना सुवर, सुनि हवाल खत केर ॥
कह्यो सुकवि अजवेश सों, लहि प्रमोद उर ढेर॥३३॥

लिख्यो जो सुता व्याहके हेतू । सो हम अवशि बांधिहैं नेतू ॥
पै राना जमानसिंह रूरे । गया करनगे जब सुख पूरे ॥
तब रींवा गवने सउछाहा । तिनको तहां होत भो व्याहा॥
राजकुवँर रघुराज सुहायो । ताको तहँ ते तिलक चढ़ायो ॥
वीतिगये बहु दिवश सुजाना । इतको ते नहिं कियो पयाना॥
सो अब ऐसी करहु उपाई । जाते इहौ वहौ सधिजाई ॥
महापात्र आपहु लिखि पाती । पठवहु द्रुत आवहिं जेहिं भाती।
हमहु लिखावतहैं खत आसू । आवहिं राजकुवँर सहुलासू ॥

दोहा—काज होय रघुराज इत, हमरहु कारज होय ॥
जहँ को संमत देहिंगे, तहँको करबै सोय ॥ ३४ ॥

महापात्र सुनि भल कहि दीन्ह्यो। नाथ विचार भलो यह कीन्ह्यो
अस कहि वेगि सुकवि अजवेशा। पत्र लिखतभो इतको वेशा ॥
रानहु इतको खत लिखवायो। बोलि पठायोसो इत आयो ॥
खत सुनि विश्वनाथ नरनाथा। सुतसों कह्यो मानि सुख गाथा॥
रानाको यह खत सुनिलेहू। लियो सो करहु वेगि युत नेहू॥
तब रघुराजहु खत सुनि सोई। कहत भयो पितुसों मुद मोई॥
यह हवाल मैं सब सुनि लीन्ह्यो।मोहिं बोलावनको लिखि दीन्ह्यो॥
सो जस प्रभु मोहिं देहिं रजाई। सोइ करों सोइ नीक जनाई ॥

दोहा—विश्वनाथ नरनाथ तब, कह्यो भरे उत्साह ॥
जाहु उदयपुर व्याह हित, मेरो इहै सलाह ॥ ३५ ॥
वोलि ज्योतिषिन तुरत पुनि, गमनन सुदिन बनाय ॥
कह्यो सुवनसों यह भली, साइत दियो बताय ॥३६॥

सुनि रघुराज कह्यो हर्षाई। दीजै सब तदवीर कराई ॥
कौन देवान जान सँग योगू। ताकहँ दीजै नाथ नियोगू ॥
कौन कौन सरदार सुजाना। मेरे सँगमें कराहिं पयाना ॥
नाथ कृपा करि सादर सोई। देहिंबताय सिद्धि सब होई ॥
भाष्यो महाराज सुख पाई। सभा सदनको सपदिसुनाई ॥
वीर धीर अरु होय उदारा। राज काजमें चतुर अपारा ॥
धर्मवान पूजक भगवाना। द्विज साधुनमें प्रीति महाना ॥
स्वामिहि मानै प्राण समाना। ये लक्षणहैं विदित देवाना ॥

दोहा—ते लक्षणयुत सांच अब, दीनबंधु तुव पास ॥
लेहुसाथ तिनको अवशि,तिनते सकल सुपास॥३७॥

हैं सरदार सुजान सब सावधान तुव सेव ॥
तिनको सबको लेहु सँग, जे जानत रणभेव ॥ ३८ ॥
सुनि रघुराज जनकके बैना। दीनबंधु कहँ बोलि सचैना ॥
पुनि सरदारन निकट बोलाई। चतुरंगिणी चमू सजवाई ॥
सैनप दीनबंधुको करिकै। ब्याह पोशाक किये सुखभरिकै ॥
बाजिरहे चहुँ ओर नगारा। बंदीजन वर विरद उचारा ॥
लहि रघुराज प्रमोद अपारा। भयो उतंग मतंग सवारा ॥
औरहु सखा बृद्ध सरदारा। चढ़ि चढ़ि हय गय रथनमँझारा ॥
हरि गुरु गणपति हनुमतकाहीं। सुमिरिसुमिरि सब निज मनमाहीं
गहि गहि अस्त्र शस्त्र निजहाथा। गमनत भये सबै यक साथा ॥
दोहा–जे मगमें भूपति परे, तिनसों लहि सत्कार ॥
निकट उदैपुर जब गये, राना सुन्यो उदार ॥ ३९ ॥
कवित्त–करिकै पेसवाई महाराना श्री स्वरूपसिंह उदैपुर आनि मुदै उरकै दराजको ॥सकल सुपास जहां दीन्ह्यो जनवास तहां कीन्ह्यो सन्मान दै हुलास त्यों समाजको ॥लखि लखि नारी नयन नृपति किशोर सारी मैन वस भई छोंडी ऐन काज लाज को॥कहैं ठाम ठाम कैधौं काम सुखधाम धाम काम त्यागि जोहैं जन ग्राम रघुराजको ॥ १ ॥ लगन विचारि कह्यो जादिन गणक गण तादिन पधारयो रघुराज द्वारमाह है ॥ देखिकै बरात शोभा पुरजनवातलोभा रानहुको भा अथाह भारी उतसाह है॥ब्याह भयो छोनीमें उछाह छायो महा तहाँ याचक उमाह भरो यांचिभो अचाहहै ॥ राह राह कहत न ऐसो नर नाहकहूं सुन्यो सांच शाहनको करन पनाहहै ॥
दोहा–रहस वहस युत होत भोपुनि उदार जेवनार ॥
सरदारन युत फेरि भो, दरबारहु दरबार ॥ १४० ॥

कवित्त–जेते ऐंडदार राजा राजत पछाह माहँ शाहन सों अकस जे कीनीहै बजायकै ॥ कलम विनाही लिखे हिम्मति न रही काहू महाराना सुता जो विवाहै सुख छायकै ॥ महाराज विश्वनाथ सुत रघुराज सिंह अचरज कीनी करतू-ति तेज छायकै ॥ सुनि सुनि ते वैन नरराय पछितायमहा हाथ मीजिरहे शरमाय शीशनाइकै ॥

दोहा–शिव यकलिंग प्रसिद्ध तहँ, तिनके दर्शन हेत ॥
जातभयो रघुराज पुनि, मंत्री सैन्य समेत ॥ ४१ ॥
हय गय अरु मुद्रा सहस,सादर तिनहिं चढ़ाय ॥
दर्शन लीन्ह्यो सरस उर, सरस हरस सरसाय ॥ ४२॥
महाराज विश्वनाथ सुत,श्रीरघुराज उदार ॥
फेरि नाथजी दरशहित, गये साथ सरदार ॥ ४३ ॥
साजि वाजि गज वसन वर,मोहर शत सुख साथ ॥
माथनाय अर्पण कियो,पद पाथज श्रीनाथ ॥ ४४ ॥

घनाक्षरी–सन्मुख वैठि छवि निरखन लागे चख अंग अंग केरी उर हरष वढ़ायकै ॥ ताही समै नाथजीको हाथ लै पुजारी ऐना लग्यो दरशावै मोद गाथ हिये पाइकै ॥ श्रीवानाय हरि तब बदन लखन लागे लखि रघुराजसिंह अचरज छायकै ॥ रण दवनसिंह सों कह्यो या तू देखी कला भाष्यो तिन होहूं लख्यो नैन टक लायके ॥ १ ॥

दोहा–कृपानाथजी आपके, ऊपर करी महान ॥
सुनत पुजारीहूं कह्यो, यहां प्रगट भगवान ॥ ४५ ॥
राम सागराह्निक अहै,विश्वनाथ कृत जौन ॥
वखतावर गायक लगे,गावन तिन ढिग तौन ॥ ४६॥

गावत सन्मुख निरखिकै,तहां पुजारी कोय ॥
आयकह्यो अस बैठिबो, रानहुँको नहिं होय ॥ ४७ ॥

कवित्त–दीन्ह्यो सो उठाय वखतावर विचारि यह हरिसर्व त्रअहैं और ठौर जाइकै ॥ प्रेम पूर पागे लागे गावै राग सागर को प्रभु को रिझाय लियो सुरनको छायकै ॥ उघरे कपाट सबै आपही सों तांही समै टेरिकै पुजारी कह्यो बाहेरहि आइ-कै॥नाथको निदेश अहै लेहु वह गायकको इतही बोलाय बैठि गावै हरषाइकै ॥

दोहा–कह पुजारि तुम्हरे उपर,रीझेहैं ब्रजराज॥
सुनि वखतावर कह्यो सति,यह प्रभाव रघुराज॥४८॥

सहितचमू चतुरंगिनि भाई । पुनि रघुराज शिविर निजआई ।
कछु वासर किय सुख युतवासा। राना मान्यो परम हुलासा ॥
सीखदेन अवसर जब आयो । तब राना निज निकट बोलायो
श्रीरघुराज समाज समेतू । गमनत भयो तहांमति सेतू ॥
लै आगू राना चालि धामै । बैठायो गद्दी अभिरामै ॥
कीन्ह्यो सकल भांति सत्कारा ।दीन्ह्यो हय गय वसन अपारा ॥
भूषण बहु पुनि दिये अमोले । ज्योतिवान मणि मोतिननोले॥
विश्वनाथ नरनाथ कुमारा । राना सों पुनि वचन उचारा ॥

दोहा–आप सुजान सयान हैं,मेरे पिता समान ॥
दीजै संमत तासु प्रभु,जो मैं करौं बखान ॥ ४९ ॥

स०–द्वैभगिनी मम व्याहन योग्य जहां तिनव्याहन योग्यउचारी
होय विवाह तहां तिनको ध्रुव जानत आप सबै बड़वारी॥
राना स्वरूप सराहि कह्यो सुनिहै हमहूंको सँभार या भारी ॥
सो सनम्बंध कियो हम ठीक हियो महँ जयपुर नाह विचारी१॥

घनाक्षरी–नाम जाहि रामसिंह रूप अभिराम जाको तिलक

चढ़ायो जोधपुर नाह सुता व्याह ॥ पठवै वकील हमौ ढील नहिं ह्वैहै काज आपहूको रीवां जात जयपुर परैगो राह॥महाराज विश्वनानाथसिंहको कुमार रघुराजसिंह बोल्यो सुनि भलोया कियो सलाह ॥ सहित उछाह कृपा करिकै अथाह अब दीजै सीख काह यहीहै उमाह मनमाह॥ १ ॥

दोहा—सुनि राना सुख पायकै, सुंदर दिवश शोधाय ॥
सीख दियो रघुराज को, दै बहु धन समुदाय॥ ९०
भूप स्वरूप अनूप सुनि, निज भगिनी हर्षाय॥
विदा कियो धन अमित दै,शिबिका रुचिर चढ़ाय९१
संग रहे सरदार जे, औ जे बंधु अपार ॥
यथा उचित सब फौजको, कीन्ह्यो अति सत्कार९२॥

महाराज विश्वनाथ किशोरा। अति प्रसन्न युत चमू अथोरा॥
विजय मुहूरतमें सुख छाई। हरि गुरु गणपति पद शिरनाई॥
सैन्य सहित द्रुत कियो पयाना। बाजे बहु गहगहे निसाना॥
चलत चलत जैपुर नियरान्यो। महाराज जयपुरको जान्यो॥
कोस भरेते लै अगुवाई। डेरा दिय देवाय पुर लाई॥
सैन्य समेत शिविर पुनि आये। रामसिंह भूपति सुखछाये॥
श्रीरघुराज उदार अपारा।विविध भांति कीन्ह्यो सत्कारा॥
सो लहि जयपुरको नरनाहा। लह्यो ससैन्य मरम उत्साहा॥

दोहा—फौज साजि पुनि मौज भरि,युत समाज रघुराज॥
जयपुरके महराजपै,गमन्यो प्रभा दराज॥ ९३ ॥

निरखि निरखि जयपुर नर नारी। पावतभे उर आनँद भारी॥
कछु दूरीते जयपुर राजा। आगू लै आवत रघुराजा॥
महल जाय गद्दी बैठायो। आपहुँ बैठि परमसुख पायो॥
विविध भांति सत्कारहि कीन्यो।पाय सो येऊ अति सुख भीन्यो॥

सैन्य सहित पुनि शिबिर सिधाई। बात होन संबंध चलाई ॥
ठहरिगयो सो बिनहिं प्रयासा । गुन्यो कृपा यह रमा निवासा॥
रसम व्याह पूरब जो होई । सो दै करि सादर मुदमोई ॥
वृंदावन तीरथ करिवेको । बढ़ी लालसा वसु दीबेको ॥

दोहा—सादर सब सरदारसों,अरु देवानहु पाहिं ॥
कहहिं सफल होतो जनम, लखि वृंदावन काहिं ८४

सुदिन शोधाय ज्योतिषिन तेरे । श्रीरघुराज मोद लहि ढेरे ॥
श्रीहरि गुरु पदपंकज सौंरी । सैन्य सहित वृंदावन ओरी ॥
कीन्ह्यो होत प्रभात पयाना । बजे फौजमें अमित निसाना ॥
वीच वीच वीथिन करि वासा । पहुँचत भये जबै ब्रज पासा ॥
सादर करिकै दंड प्रणामा । जातभये तुलसीवन ठामा ॥
वृंदावन मधुपुर दर्शाना । नंदगाँव जो विदित जहाना ॥
मुख्य चारि तीरथ ये करिकै । दर्शन करि साधुन मुद भरिकै॥
पुनि चौरासी कोसहु केरी । किय प्रदक्षिणा लहि मुद ढेरी ॥

दोहा—हरिमंदिर जेते रहे, दर्शन किय पद जाय ॥
हय गय वसन अमोल अरु,मोहर अमित चढ़ाय८५
राधा राधारमणकी, मूरति पुनि पधराय ॥
रागभोग हित गाँव यक, दीन्ह्यो तहां चढ़ाय ॥८६॥

पुनि विश्रांतघाटमें जाई । सुवरण तुला चढ्यो सुख छाई ॥
सो सुवरण ब्रजमंडल वासी । जेते रहे विप्र सुखरासी ॥
तिनको दै कीन्ह्यो अति तोषू । ते माने सब भाँति समोषू ॥
तिमि यांचक जे रहे घनेरे । तिन्हैं हेम बहु दिये निवेरे ॥
नारी रोंकि रोंकि मगमाहीं । कहि कहि लला लेहिं गहि बाहीं ॥
तिनको मनवांछित धन दीन्हे । शीशनाय बहु मानाह कीन्हे ॥
देश देशके याचक आये । भये प्रसन्न हेम बहु पाये ॥

ब्रजमंडलमें नर औ नारी। सब थल ऐसो परचो निहारी ॥
दोहा–लहि लहि अमित हिरण्यको,भाषहिं ते कहि धन्य ॥
यह नवीन परजन्य नृप,वरस्यो ब्रजहि हिरन्य ॥८७॥
कवित्त–दीन्हेहैं द्विजान पंडितान हेम महादान रघुराजसिंह वृंदा कानन मँझारीहै। सुयश महान शीत भानुसों प्रकाशमान सुकवि प्रधानमें वखान जासु भारीहै।मानिन अमानद अमानिनको मानदान ज्ञानिन प्रदान ज्ञान दीन त्राणकारीहै। दान सनमानमें जहानमें न आन ऐसो भानुवंशमें निशान ज्ञान ध्यान धारीहै॥ १ ॥
दोहा–सुदिवश ब्रजते कूच करि,चालि मगमें दरकूच ॥
रीवांनगर पहूंचिगो, संयुत सैन्य समूच ॥ ८८ ॥
सोरठा– उदधि वंध यक चित्र, जामें यही चरित्र सब ॥
सो रचि चात विचित्र, लिखे देत चरचैं सुकवि १ ॥

पारसीके बैतका अर्थ—तन्‌सरा कहे तन उसके तईं पैरहन जो कपरा सो भी डरियां कहे नंगा नहीं खताहै ताते जो कपरे उसके अंगको नहीं देखताहै तो और कोई उसके अंगको नहीं देखताहै यह कहा कहिवेको यह काव्यार्थापत्ति अलंकार व्यंजित भयो कपरो उसके अंगको कैसे नहीं देखताहै बुजां दरतन्‌ कहे जैसे जान जो है जीव सो बीचनके है व तन दरकहे तनके बीच रहिहू कै जान जो है जीव सो नहीं देखाता है यह उपमा लंकारते सुकीया नायका व्यंजित भई ॥

अंगरेजीके दोहा का अर्थ—दी कहे प्रसिद्ध अमनि प्रीजंट कहे सर्वव्यापी जो है गाड़ कहे ईश्वर ताकी अन कहे पृथ्वी अर्थ कहे ताके ऊपर आई कहे हम मैं कहे प्रार्थना करें हैं न्यारो कहे सूक्ष्म माई कहे हमार जो है हरट कहे चित्त ताके अन कहे ऊपर डीवाइन कहे दिव्य मर्थ कहे आनंद वूंकहे ल्यावने को अर्थात्‌ जामें दिव्य आनंद जो है ब्रह्मानंद सो मेरे चित्तमें होय याके लिये मैं प्रार्थना करौहौं इहां सर्वव्यापी ईश्वरको कह्यो ताते मैं ईश्वरहीके भरोसे सर्वदा रहौहौं यह मेरे मनकी जानतई होयँगे यह व्यंजित कियो ॥

कछु दिनमें आवत भयो, जयपुरको नरनाह ॥
शाहन करन पनाहभे, भूपति जेहिं कुलमाह ॥५८॥
भगिनि उभय रह जानकी, कृष्ण कुवँरि जिन नाम ॥
व्याहि विदा कीन्ह्यो तिन्है, दै बहु धन अभिराम ॥५९॥
पुनि बीते कछु काल श्री—विश्वनाथ नरपाल ॥
ह्वै वश काल निवास किय, पास अवधपति लाल १६०

श्रीरघुराज तनय तेहिं केरो। हरिइच्छा गुणि बिन अवसेरो ॥
मानि राज्य सब यदुपति केरी। कामदार सों कह्यो निवेरी ॥

राजाराम राज्यके एकू। तिनकी कृपा न भय मोहिं नेकू॥
स्वामि धर्मरत जन हितकारी। करिहैं कबहुँ न काम विगारी॥
सुदिन अवै न राज अभिषेकू। कह्यो ज्योतिषी सहित विवेकू॥
ताते भो मन भावत येहू। करो यज्ञ संवत करिदेहू॥
सुनि दिवान कह बहुत सराही। प्रभु भल कह्यो ऐसहीं चाही॥
तब रघुराज परम सुख पाई। आसु बनारस मनुज पठाई॥

दोहा—विप्र वेद वित छिप्र बहु, रींवां नगर बोलाय॥ ६१॥
सुदिन शोधाय सचाय गो, लछिमनबाग सिधाय॥

तहँ किय कठिन कायको नेमा। पगो परम यदुपति पद प्रेमा॥
मज्जन करि गायत्री जापा। प्रथम करै नितहरै जो पापा॥
पुनि षोडश प्रकार भरि चायन। पूजन करै रमा नारायन॥
पुनि नारायण अष्टाक्षर मनु। वीसहजार जपैं निहचल मनु॥
यही भांति विप्रनहुँ जपावै। रहै यकांत अनत नहिं जावै॥
पुरश्चरण सौ दिन करि यहि विधि। कृष्ण कृपा पात्रता लहीसिधि
कह्यो स्वप्नमें आय मुरारी। राज्य करै है मम अधिकारी॥
लहत मनहिं मन परमहुलासा। कोहुसों कबहुँ न कियो प्रकाशा॥

दोहा—जप अष्टाक्षर मंत्रको, वीस हजारहिं केर॥
जौलौं रहै शरीर जग, किय संकल्प करेर॥ ६२॥
रमा द्वारकाधीशकी, त्यों बलकी करि सूर्ति॥
हेम रजत रचवायकै, परम मनोहर मूर्ति॥ ६३॥
वेद विहित करवायकै, आसु प्रतिष्ठा वेश॥
बांधवेश विश्वनाथ सुत, पूजन करत हमेश॥ ६४॥
करन लगै जप जेहिं समय, तब भरि मोद अनंत॥
भजन सुनै भजनीनसों, निर्मित निज बहु संत॥ ६५॥
सुदिन राज्य अभिषेक को, आयो जब मुदवान॥

सब तदवीर महान भै, वेद विधान प्रमान ॥ ६६ ॥
श्रीरघुराज जाय मषशाला। वसु मंत्रिनते सहित उताला ॥
रघुपति यदुपति मूरति काहीं। थिति कै हेमसिंहासन माहीं ॥
महाराज अभिषेक कराई। अभिषेकित भो आप सोहाई ॥
श्रीकृष्णहिके कृपापात्र कर। अधिकारी भो विदित अवनिपर॥
कर परताप छयो परतापा। सज्जन सुखप्रद सुयश अमापा ॥
पितु सम पालत प्रजन सप्रीती।नीति रीति करि मेटि अनीती॥
सुनि सुनि शाहहु जाहि सराह्यो। आय अजंट लाट भल चाह्यो
राज्य करत वीत्यो कछु काला। दर्शन हित जगदीश कृपाला॥

दोहा—करि लालसा विशाल लै, संग चमू चतुरंग ॥
रानिन युत जगपति पुरी,गमन्यो सहित उमंग ६७॥

वीच वीच वीथिन करि वासा। श्रीरघुराज राज सहुलासा॥
शतक संस्कृत यक जगदीशा।विरच्यो मैं निज आँखिन दीसा॥
भाषा शतक कवितमे दूजो। विरचन लग्यो सोउ मग पूजो ॥
परचो अमर कंटक मग माहीं। गमनत भयो नाथ तहँकाहीं ॥
मेकल गिरिते कढि तहँ प्रगटी।शिव प्रिय रेवा सरि अघ निघटी॥
तहँ मज्जन करि दै वहु दाना। रेवा अष्टक रच्यो सुजाना ॥
शिवअष्टक पुनि रच्यो तहांहीं। सिंहवलोकन छंदहिं माहीं ॥
रहे जे संत विप्र तहँ वासी। तिनको देत भयो धन राशी ॥

दोहा—सहित सैन्य चतुरंगिणी, तहँते करि सु पयान ॥
सेवरी नारायण निकट, जातभयो मतिवान ॥ ६८ ॥

सेवरीनारायण करि दर्शन। किय सहस्र मुद्रा कहँ अर्पन॥
तहँते प्रभु पयान करि आसू। पहुँच्यो साखिगोपालहि पासू॥
मुद्रा सहस गयंद सुहायो। दर्शन लैकै तिन्हैं चढ़ायो॥
दै सबको तिमि द्रव्य महाना। सादर चढ़वायो भगवाना ॥

पंडा गाड़िन लादि प्रसादा । लाय दिये लै युत अहलादा ॥
महाराज सबको विरताई । खायो स्वाद अपूर्व सुनाई ॥
श्रीरघुराज परमसुख भीनो । तहँते पुनि पयान द्रुत कीनो॥
जगन्नाथ मंदिरके ऊपर । नीलचक्रदरश्यो जब अघहर ॥

सोरठा—करि दंडवत प्रणाम, कीन्ह्यो पुरी प्रवेश प्रभु ॥
डेरा किय गुरुधाम, रानिन सहित हुलास भरि ॥

दोहा—तहँते गमनतभो तुरत, दर्शन हित जगदीश ॥
अरुण खम्भ ढिग द्वारमें, जात भयो अवनीश ॥६९॥
रकबा चारचो दिशि बन्यो, मंदिर मध्य उतंग ॥
लसत दुर्ग सो उदधि तट, तकत करत अघ भंग१७०
प्रथम अकेले आपहीं, युत भाइन सरदार ॥
सादर भीतर द्वारके, जाय नरेश उदार ॥ ७१ ॥

घनाक्षरी—जगपति मंदिरके चारों ओर देवनके मंदिर सुखद तिन दरशकै सुखकारि॥ सहित समाज परदक्षिणकै चारि फेरि मंदिर सिधारि शिरनाय खम्भ पन्नगारि॥जाय कछु निकट सुभद्रा बलभद्र युत सुछवि मुरारि वार वार नैन सों निहारि॥ वारि मन प्रथम सँभारि तनु सुधि फेरि पलक नेवारि हेरि रहे धन वारि वारि ॥ १ ॥

स०—आजुभयो सफलो मम जन्म गुन्यो यह जन्ममें पुण्य बढ़ायो
जानि लियो कियो पूरब जन्महुँ पुण्य महान विशेषि सुहायो ॥
सत्य कहै रघुराज हौं आज अनेकन जन्मके पाप नशायो ॥
जो बलभद्र सुभद्रा सुदर्शन औ जगनाथको दर्शन पायो ॥२॥
लोचन सामुहे होत जबै तब देखनकी नहिं चाह सिराती ॥
आनँद बाढ़ै जितो उरमें मिति तासु न मोसों कछू कहि जाती ॥
को रघुराज बखानि सकै जगदीशकी शोभा त्रिलोक बिजाती ॥

ज्यों ज्यों समीप ह्वै हेरै त्यों त्यों क्षणहीं क्षणम सरसै दर-
शाती ॥ ३ ॥

घनाक्षरी–कंचनको छत्र उभय चौर विजनादिनोल भूषण वसन
त्यों अमोल मोतीमालको ॥ मोहर अमित मुद्रा द्वै गयंद त्यों
तुरंग प्रभुहिं समर्पि पायो परम निहालको ॥ भूप रघुराज त्यों-
हीं दैकै सबहीको वसु नजर देवायो तहां देवकीके लालको ॥
पंडा औ पुरीके भये परमसुखारी पाय पाय धन भारी गाये
सुयश विशालको ॥ ४ ॥

सोरठा–कहत मनहिं मन नाथ, सो मैं करौं प्रकाशअब ॥
को समान जगनाथ, है कृपालु यहि जगतमें ॥ १ ॥
विविर जाय सुख पाय, पायो महाप्रसादपुनि ॥
तहँके तीर्थ निकाय, जाय जाय सादर कियो ॥२॥
रानिहु सब सुखपाय, त्योंहीं नजर निकाइकै ॥
जगपति दरश सोहाय, करि मान्यो सफलै जनम३

दोहा–बेखटका अटका अमित, चटकै दियो चढ़ाय ॥
मटका मटका लै गये, कोऊ सटका खाय ॥७२ ॥

महाराज रघुराज उदारा। अरुणखम्भ ढिग पुनि पगु धारा॥
देश देशके जन बहु आई। जुरे पुरीके जन समुदाई॥
पेखि अनूप भूपकी शोभा। सबहीको बरबस मन लोभा ॥
तहँ नृप नायक परम सुजाना। हेम तुला चढ़ि वेद विधाना॥
सुवरण वृष्टि करी मन भाई। मानौ मघा मेघ झरिलाई ॥
रह्यो न पुरी कोउ द्विज बाकी। जोन सुवर्ण लहै सुख छाकी ॥
रानिहुँ त्यों सिगरी तहँ आई।रजत तुला चढ़ि चढ़ि सुख छाई॥

दोहा– भये अयाचक पुरी के,रहे जे याचक वृंद ॥
पाय पाय सुवरण रजत,गाय सुयश मुदकंद ॥७३॥

घनाक्षरी–शतक बनायो जाय आपहि सुनायो सुनि जगदीश बलहु सुभद्रा मोद भीने हैं ॥ शिरते सुमनमाल तुरत खसाय रीझि अभिराम सादर इनाम करिदीन्हें हैं ॥ कहै युगलेश वेश दौरि बांधवेश तब संभृत कलेशहारी धन्य मानि लीनेहैं ॥ महाराज रघुराज भक्तिको प्रभावपुरी प्रगट देखानो जानो भक्तराज बीनेहैं ॥

दोहा–लखि प्रभाव तेहि ठाँव यह,कहैं लोग भरिचाय ॥
भक्ति भाव रघुरावसति, कस न द्रवैं यदुराय ॥ ७४॥

श्रीरघुराज मोद भो जेतो। यक मुख सों कहिसकत न तेतो॥
माने सब जन अरु सरदारा। पूर्व पुण्य कछु कियो अपारा ॥
जाते वश अस नृप ढिग माहीं। हरि प्रभाव निरखे चख माहीं॥
परदेशी अरु पुरी निवासी । अरु जे रहे भूप सँग वासी ॥
चढ्यो रोज नृप अटकाजोई । ताते सबको भोजन होई ॥
एक गावँ जगदीश चढ़ायो। पंडा पाय परमसुख पायो ॥
पुरी सवाउमास किय वासा। सबको सब विधि देतहुलासा ॥
युत समाज हरिमंदिर जाई। लिय त्रिकाल दर्शन नृपराई ॥

दोहा–अर्द्धरात्रि नित जाय नृप, त्योंहीं दर्शन लेय ॥
पाय सुमहाप्रसादको, सबको सादर देय ॥७५ ॥
फागुनकी पूर्णिमाको, फूलडोल गोपाल ॥
झूलत निरखि निहाल ह्वै, कोन तज्यो जगजाल॥७६

छंद–शुभदिवस तहँते गौन करिकै गया तीरथको गयो ॥
करि श्राद्ध वेद विधान सो बहु दान विप्रनको दयो ॥
द्विज पाय धन समुदाय वांछित करत भये बखानहैं॥
जस गया कीन्ह्यो बांधवेश न नरेश कीन्ह्यो आनहैं ॥
तहँ सुन्यो नौकरहूंनके गे बिगारि कारन पायके ॥

अँगरेजके सब देश लूटे हनेगो रण धायके ॥
ढिग वेगि बहु बागीन काहँ नरेश आसु मँगायकै ॥
यकमें चढ़ायो द्वारकेसहि वेश प्रीति बढ़ायके ॥
पुनि नाथ सहित समाज ह्वै असवार बहुबागीनमें ॥
चलिदियो परम निशंक परम प्रवीन परम प्रवीनमें ॥
मिरजापुरै ढिग भूप आयो आय बागी वै तबै ॥
बहु विनय कीनी आप कराहिं सहाय तौ सुधरै सबै ॥
तब नाथ ऐसो कह्यो तिनसों हाथ यह यदुनाथहै ॥
सब भांति मोहिं भरोस जाको जो अनाथन नाथहै ॥
सुनि गये ते सब महाराजहुँ आय रींवापुर वेसे ॥
यक रच्यो नगर गोविंदगढ तहँ जायकै कबहूं लसे ॥
अँगरेजके बागी तिलंगा बागि सिगरे देशको ॥
वश कियो कोहु नरेश को रहे डरत कोहुँ नरेशको ॥
मैहर विजय राघवहुके गे बिगरि तिनके दावते ॥
मग रोंकि गोरनको हने बहु जोर जुलुम जनावते ॥
तब आय बहु अँगरेज रींवा नगर कियो निवासहै ॥
महाराज श्रीरघुराज तिनको कियो परम सुपासहै ॥
डर मानि रींवा नगर को नाहिं आय बागी कोउसके॥
मतिवंत अति श्रीवंत गुणि सब संत नृपको सुखछके
अंगरेज लखि वर तेज भाष्यो बांधवेश नरेशसों ॥
लैखर्च हमसों राखि लीजै और सैना वेशसों ॥
मैहर विजय राघवहुके बागी उपद्रव करत हैं ॥
चलि मारि तिन्हैं निकारि दीजै दुरग लीजै हम कहैं ॥
सुनि भूप तैसहि कियो सैनप दीनबंधु दिवानकै ॥
लिय घेरि मैहर प्रथम तोप लगाय आसु पयानकै ॥

भगि गये तहँके यह योगी वेगि करि तहँ थानहैं ॥
पुनि विजयराघव घेरि लीन्हो संग सैन्य महानहैं
तेउ भगे वांवां करत भै करी थान तहँऊ करि लियो
महराज श्रीरघुराज सुख भरि सौंपि अंगरेजहि दियो॥
यह कृपा गुणि यदुराजकी रघुराज परम उदारहै ॥
निज राजधानी आय कछु दिन वस्योसुखितअपारहै॥

दोहा–रींवा ते जे काढ़ि गये, वहु सरदार सुखारि ॥
वागी भे रण रारि कर, तिन मिसि नृपहुँ विचारि ७७
कोपित ह्वै जरनैल वहु, लै सँग सैन्य अपार ॥
चढ़ि आयो रींवानगर, गोरा कइक हजार ॥ ७८ ॥
हुकुम दियो महराजको,करि दुष्टता विचार॥
देखन हेतु कवाइदै,आवै आजु हमार ॥ ७९ ॥

सुनत कह्यो रघुराज उदारा । देखन चलिहैं कछु न खँभारा ॥
हमरे सति सहाय यदुराई । का करिहैं अरि सैन्य महाई ॥
तव रींवांके लोग सुजाना । रह्यो जो और देवान पुराना ॥
वरज्यो विनती करि वहु भांती।उचित न जाव प्रवल आराती॥
तहँ यक दीनबंधु जेहिं नामा । रह्यो दिवान वीर मतिधामा ॥
कहत भयो सो प्रण करि भारी । चलिये आप न कछू विचारी॥
क्षत्री ह्वै जो समर सकानो । कुलकलंक तेहिं पावर जानो ॥
यह रिपु करिहै कहा हमारो । करिहै रोष जायगो मारो ॥

दोहा–दीनबंधु दीवानके, वचन सुनत नरनाथ ॥
जात भयो रणसाज सजि, लिये सैन्य वहु साथ १८०॥

भूप संग वहु सैन्य करेरी । सो जरनैल नयन निज हेरी ॥
भय अति मानि देखाय कवाइत।गमन्यो हारि मानिकै निजचित॥
महाराज रघुराज सचैनै । कृपा कृष्ण गुणि आयो ऐनै ॥

सुधि करि दीनबंधुकी बानी । ह्वै प्रसन्न बहु विधि सनमानी ॥
दीन्ह्यो गाँव अनेक इनामा । गुणि मतिवान दिवान ललामा ॥
सुखयुत बीतिगये कछु काला । लाट हूनपति जौन विशाला ॥
लै बहु सैन्य कानपुर आयो । सब राजनको खत लिखवायो ॥
आवहिं इतै भेटके हेतू । सुनि सुनि सब नृप गये सचेतू ॥

दोहा—महाराज रघुराजको, लिखत भयो खत सोइ ॥
मुलाकात मम करनको, आवै इत मुद मोइ ॥ ८१॥

तहाँ चलन नृप कियो तयारी । बरजे तबहुँ इतै नर नारी ॥
दीनबंधु तबहूं मतिवाना । कह्यो पैज करि वचन प्रमाना ॥
चलिये भूप संदेह न कीजै । विना चलेहीं भय गुणि लीजै ॥
सत्य विचारि वचन तिनकेरे । काहूके दिशि तनक न हेरे ॥
लै कछु सैन्य चैन भरि भूरी । चल्यो कानपुर यद्यपि दूरी ॥
मगमें बहु जन किये निवारण । लाटबोलाये है कछु कारण ॥
गुणि हरि उर भरोस नृप भारी । काहू वोर न नेकु निहारी ॥
दीनबंधुके मग ज्वर भयऊ।सो न मानि कछु नृप सँग गयऊ ॥

दोहा—जाय सैन्य युत कानपुर, डेरा सुरसरि तीर॥
करत भयो सुनि हूँनपति, भयो मुदित मतिधीर८२

दगी मुकामी फेरि सलामी । बँधी पंचदश जौन मुदामी ॥
पैदर अरु असवारन काहीं । दिय नृप अरुण पोशाक तहांहीं॥
फूलसिरी अरुणै गज भासी । सूही साज वाजिगण गासी ॥
सरिस वसंत सैन्य सुठि सोही।लखि लखि भूपहु गे मन मोही॥
लाट लखनऊ ह्वै जब आयो । मुलाकात हित नृपहि बोलायो॥
मुख्य अमात्य जौन अभिरामा । दीनबंधु है जाको नामा ॥
श्रीरघुराज ताहि लै संगै । गये सैन्य युत भेट उमंगै ॥
यक साहेब लैकै अगवाई । सादर भूपहि गयो लेवाई ॥

दोहा—शिविर हूँनपतिके निकट, पहुँचे जब रघुराज ॥
पाय लाट साहेब खबरि, आगू लै महराज ॥ ८३ ॥
करि सलाम दोउ परस्पर, पूंछतभे कुशलात ॥
कहे कुशल सब भांति दोउ, बार बार हरषात॥८४॥

बाम हाथ गहि दहिने हाथै। गयो लेवाय लाट सुख साथै ॥
तख्त उपर द्वै कंचन कुरसी। धरवायो जु हूँनपति हुलसी ॥
तामें अपने दहिने ओरै। नृप बैठाय बैठ सुख बोरै ॥
नीचे तख्त सैकरन कुरसी। धरवावतभो साहेब बिलसी ॥
तिनमें काशी चरकहरीके। रहे जे और भूप अवनीके ॥
औरहु ज़मींदार सरदारन। बोलि पठायो आये तेहिं छन ॥
तिनको तुरत तहां बोलवाई। दै ताजीम सबै सुखदाई ॥
क्रम क्रमते दीन्ह्यो बैठाई। बैठे ते सब शीश नवाई ॥

दोहा—मंत्री मुख सरदार जेहिं, दियो अजंट लिखाय ॥
नृप सँग चलि तेहिं क्रमहिते, कुरसी बैठे जाय ॥८५
निकट हूँनपतिके जबै, भई सभा यहि भांति ॥
अति प्रसन्न रघुराज पै, भयो लाट मुदमाति ॥ ८६॥

तेहि पितु किस्ती जे लगि आई।तिनते अधिक तीनि लगवाई॥
भूषण वसन विचित्र अमोले। तिनमें धरि धरि दियो अतोले ॥
पूर्व सलामी पंद्रह जोई। लाट हुकुम दिय दशवसु होई ॥
साजु नवीन भांति बहु साजी। दीन्ह्यो यक गंयद वियवाजी ॥
परगन दिय सोहागपुर नामा। होत लाख मुद्रा जेहिं ठामा ॥
जानि भूपको मुख्य सचिव चित।कियो पराक्रम शुनि हमरे हित॥
दीनबंधु पै ह्वै प्रसन्न अति। खिलत तोपयुत दियो हूँनपति ॥
पद दीवान बहादुर केरो। दियो लाट करि मान घनेरो ॥

दोहा—पुनि नृप सँग सरदार जे, गये तासु दरबार॥
यथा उचित तिन सबनको,दीन्ह्यो खिलित अपार८७
क्रमते पुनि सब नृपनको, दीन्ह्यो खिलत सराहि॥
ते शिर धरि धरि लेत भे, ह्वै मन परम उछाहि८८॥
पुनि रघुराज भूप मतिवाना। मुदित लाटसों वचन बखाना॥
हम अस जहँ तहँ सुन्यो हवाला। लेन हेतु सबको करवाला॥
आवत लाटसो हम पहिलेहीं। सौहीं देहिं आप लैलेहीं॥
सुनि सौहीं लै लाट उवाही। देखि भली विधि कह्यो सराही॥
यह सौहीं केहिं देशहि केरी। कह नृप अहै फिरंग केरी॥
सुनत हूँनपति मन मुसक्याई। सौहीं दै वाणी यह गाई॥
तुव हथियारहि केवल तेरे। सदा रहैं हम बिन अवसेरे॥
पुनि भूपति रघुराज उदारा। करि सलाम डेरै पगु धारा॥
दोहा—सब भूपहुँ पुनि नाय शिर, गमने शिविर मझार॥
इतै हूँनपति सैन्य युत, ह्वै करि सपदि तयार॥ ८९॥
महाराज रघुराजके, आये शिविर सिधारि॥
होत भयो जेहिं विधि सदा, तेहिते अधिक विचारि१९०
करत भये सत्कार नृप, भो खुशलाट अपार॥
वरण्यो इत संक्षेपते, भीति ग्रंथ विस्तार॥ ९१॥
महाराज रघुराज पुनि, कूच तहाँ ते कीन॥
सैन्य सहित रीवां नगर, आय सबै सुख दीन॥ ९२॥
बाढ़ अठारहको दियो, लाट विशेष निदेश॥
दगै सलामि हमेश सो, आवत जात नरेश॥ ९३॥
कछु दिनमें अरजंट पुनि, चलि सोहागपुर काहिं॥
भूपहि अमल कराय दिय,सुयश छाय जगमाहिं॥९४॥
सवैया—एक समय पगमें व्रणभो न अधीर भयो भई पीर

महाई ॥ जाप करै मनु वीस हजार करै तिमि राजको काज सदाई ॥ हारि गये सब देश विदेशके वैद्य हकीम मिटी न मिटाई॥दूरि व्यथा भै जबै रघुराज दियो शतकै रचि शम्भु सुनाई १

दोहा—औषध किय प्रहलाद द्विज, तासु अयोध्या सून ॥
पायो मुद्रा शतसहस,गावँ उभय नहिं ऊन ॥ ९५॥
ज्वर विकारते यक समय, नृप किय विपुल उपास ॥
तज्यो न तबहूँ जप करब, पूजन रमानिवास ॥९६ ॥

वालहिते कविता मन लायो। चित्रकूट अष्टकहि बनायो ॥
ग्रंथ रच्यो रघुनंद विलासा। हनुमत शतक कियो सहुलासा॥
लीन्ह्यो मंत्र केर उपदेशू। तब जे ग्रंथ रच्योहै वेशू ॥
तिनको अब मैं देत सुनाई। विनयमाल दिय प्रथम बनाई ॥
रुक्मिणि परि नय विरच्यो ग्रंथा।जामें विदित काव्यकी पंथा॥
व्यासदेव जो रच्यो पुराना। श्रीभागवत प्रसिद्ध जहाना॥
भाषा विरच्यो भूप उदारा। अहै बयालिस जौन हज़ारा॥
पुनि जगदीश शतक किय भाषा।जामें कवित बिचित्र सुराषा

दोहा—रच्यो संस्कृत ग्रंथ विय, एक शतक जगदीश ॥
कियो सुधर्म विलास यक, श्रीरघुराज महीश ॥९७॥
तिलक बनायो तासु बुध, रंगाचारी वेश ॥
भजन कवित औरहु अमित, सादर रच्यो नरेश९८॥

सोरठा—कानन जात शिकार, खेलत मारत शेरको ॥
और जे जीव अपार, तिनहिं बचावत करि दया ॥ १ ॥

कवित्तघनाक्षरी—फेरत न आनन जो ऐसे उच्च वारनपै ह्वैक रि सवार जाय नेर वेर वेरहै॥ढेर सरदार पै न सकत उठायको- ऊ ऐसो लै रफल्ल घालि करै बाघ जेरहै॥ कहैं युगलेश गेर गेर कहूँ टेर टेर ह्वांई ठहराय जहां हौंकत करेरहै ॥ हेर हेर मारै

लगे देर नहिं दौरिमेर भूप रघुराजसिंह शेरन पै शेरहै ॥ १ ॥

सोरठा–चलि पहाड़ महराज, बागि बागि जेहिं बारिमें ॥
इने जिते मृगराज, ते गोकुल बुध पहँ लिखे ॥ १ ॥

दोहा–महाराज रघुराजको, औरहु चारु चरित्र ॥
युगलदास वर्णन करत, जेहि यश छयो विचित्र ॥९९॥
शाह विलायतको दियो, सुक्का यक पठवाय ॥
लाट वजीर हमारसो, तकमा देहै आय ॥ २०० ॥
माधौगढ़गे यक समय, तहँते आगू जाय ॥
सुनि हवाल भे अति खुशी, सभा मध्य बँचवाय ॥ १ ॥
खत लिखि पटयो लाट पुनि, जहां आप मन होय ॥
चलि लीजै तकमा तहां, बड़ी बड़ाई जोय ॥ २ ॥
नृप लिखि पठयो काशिको, सोउ लिख्यो है वेश ॥
बांधवेश वर सैन्य युत, गो महेशपुर देश ॥ ३ ॥
मुलाकात दरबार जस, भयो कानपुर माहिं ॥
तस भो काशी लाट दिय, कहों सो तकमा काहिं ॥४॥

छंद–भूषण सितारैहिंदको दीन्ह्यो किताबी एकहै ॥
सुबहादुरी भूषण दियो यक जटित रतन अनेकहै ॥
अति ह्वै प्रसन्न सुशाहजादी दियो रत्ननहारहै ॥
सो दियो नृप रघुराजको वरहूंनपति करि प्यारहै ॥५॥
किय कूच फेरि परेटते रघुराज भूप उदारहै ॥
जन यूह भये प्रसन्न अति लखि सैन्य तासु अपारहै ॥
चलि असी सुरसरि संगमें तट वास करि सुखछायकै ॥
मणिकर्णिका अरु गंगमें सउमंग जाय नहायकै ॥२ ॥
यक गाउँ औ गो सहस भूषण वसन नोल अमोलहै ॥
उपरोहितै दिय दान करि सन्मान प्रीति अतोलहै ॥

पुनि दरश किय विश्वेशको दिय गावँएक चढ़ाइहै ॥
अरु सहस मुद्रा वसन भूषण अर्पणै किय चाइहै ॥ ३ ॥
अन्नपूरणा अरु बिंदुमाधव जाय निकट गोपालहै ॥
पद पंचशत शत आर्पि मुद्रा लियो दरश विशालहै ॥
पुनि कालभैरव ढुंढिपाणिहिं और सिगरे देवको ॥
शत शत सु मुद्रा अर्पिकै दरशन लियो करि सेवको ॥
पुनि पंचगंगा आदि जेते घाट रहे महानहै ॥
करिमज्जनै तिनमें कियो जो दान करो बखानहै ॥
गज तुरंग गोशत वसन भूषण अन्नकी वहु राशिहै ॥
लहि विप्र काशि निवासि सब दिय आशिषैसहुलासिहै ।

दोहा—महाराज रघुराज पुनि,दारु तुला मँगवाय ॥
यक पलरामें देतभे,सुवरण मनन धराय ॥ ८ ॥

ढाल कृपाण पाणि निज लैकै । निज भूषण वसनहुँ ढिग धैकै ॥
यक पलरामें सहित उछाहा । बैठ्यो बांधवेश नरनाहा ॥
सुवरण पलरा नीच लख्यो जब।दिय नरेश सुनि देश आसु तब॥
अपनो गरू रफलल मँगाई । निज समीपही लियो धराई ॥
तबहुँ सो पलरा नीच लखाना । तबहुँ नृपति अस वचन बखाना
द्वै थैली ये मोहरन केरी । उलदि देहु न करहु अब देरी ॥
कामदार ते सुनि सहुलासा । उलदि दियो मोहर अनयासा ॥
सुवरण पलरा महि लगि गयऊ। पलरा ऊँच भूपको भयऊ ॥
तुला चढ़े अस लखि नृपकाहीं। किये प्रशंसा लोग तहांहीं ॥
उतरि तुलाते नृप हरषाई । दशहजार मुद्रा मँगवाई ॥
दीनबंधु दीवानहु भूपा । यक पलरा बैठाय अनूपा ॥
यक पलराते रुपयन रूरे । दियो धराय मोद सों पूरे ॥

दोहा–भयो न ऐसो नृपति कोउ,कामदारको जोइ ॥
तुला चढ़ावै रजतमें,चढ़ै हेममें सोइ ॥ ६ ॥
बढ़्यो शोर सुनि जननको, तहँ भूप शिरमोर ॥
कह्यो करै नहिं शोर कोउ, कहो वचन यह मोर॥७॥
पाँडे नंदकिशोर कह,सो सुनि भरि मुद थोक ॥
बंद न हल्ला होत यह, छयो तीनिहूंलोक ॥ ८ ॥

राज राज पुनि श्रीरघुराजा । मानि मोद उरमाहिं दराजा ॥
निज नामहिं श्लोक बनाई । सो द्वै सहस आसु छपवाई ॥
प्रथम पंडितनको विरताई । भोर कमक्षा सपादि सिधाई ॥
काशिराजको तहां मकाना । अति आयत रह विदित जहाना॥
तहँ मज्जन करि पूजन नीके । बोलि सहस द्वै विप्रन जीके ॥
द्वै द्वै मोहर दिय सबकाहीं । विविध भांति सन्मानि तहांहीं॥
ते सब सुयश भूपको गावत ।निज निज गृह गवने सुख छावत॥
फेरि आपने शिविर सिधारी । महाराज रघुराज सुखारी ॥
रहे जे बाकी औरहु पंडित । सकल शास्त्रमें अतिहीं मंडित॥
सादर तिनको निकट बोलाई । करि सन्मान सभा बैठाई ॥
दुइ दुइ मोहर और दुशाले । देतभयो युत प्रीति विशाले ॥
त्यउ सब गावत सुयश भुआला। दै अशीश गृह गये उताला ॥

दोहा–कहत परस्पर बात यह,जात पंथ हरषात ॥
सभा न किय अवदात असि,कोउ नृप व्रात विख्यात९
रहे घाटिया विप्रजे, काशी कइक हजार ॥
सुबरण तनु तिनके किये,सुबरण वितरि अपार२१०
हाट हाट हाटक विपुल,भयो बनारस सस्त ॥
रस्तन रस्तन वागते, पंडित मोहर मस्त ॥ ११ ॥
रहे जे संत महंत तहँ,संन्यासी विख्यात ॥

सादर तिनको दरश लिय, देधन बहु सहुलास॥१२॥
देहरी वीस हजारहैं,काशी विप्रन केरि॥
नृप तिनके सत्कार हित,नीके मनहिं निवेरि॥१३॥
पांडे नंदकिशोर सिंह, ईश्वरजीत बघेल॥
तिमि शाहिजादहुँ सिंहसों,कह्यो धर्मको वेल॥१४॥
हम अब रींवहिं जातहैं, रुपया वीसहजार॥
लै देहरी सब द्विजन दै,अइयो निजहिं अगार॥१५॥
अस कहि भूपति भोरही,तहँते तुरत पधारि॥
निज पुरको आवतभयो,करि दरकूँच सुखारि॥१६॥
उत तीनों जन काशि बसि,विप्रन सहित विवेक
दीन्ह्यो गनि देहरीनको,फरक पर्‌यो नहिं नेक॥१७॥

कवित्त–राना राठि उरहाडा वडे कछवाह राजा आय आय कीन्ही सभा दैकै धन राशीहै॥ दक्षिणके सूबा जे करोरिनके राज्यवारे आय तेऊ सभाकै सुकीरति प्रकाशीहै॥सुवरण वृष्टि पै न कीनी कोऊ आजु तक जैसे करे वारि वृष्टि भादौं मेघ खासीहै॥ भूप विश्वनाथको अनूप तनय रघुराज जैसी जातरूप वृष्टि कीनी पुरी काशीहै॥ १॥ घर घर वाट वाट गंगाजूके घाट घाट हाट हाट भाटहीं सों भाषैं जन राशीहै। पंडित अखंडित की कीनीसभा मंडित ना ऐसी कोऊ भूपति उदंडित विकाशीहै॥कहैं युगलेश रहि गयो ना कलेशलेश याचक अशेशको विदेश देश वासीहै॥हम तुला भासी महाराज रघुराज यशी खासी कीर्ति अतुला प्रकाशी पुरी काशी है॥२॥ भूपर घनेरे एक एकते बडेरे भूप भयेहैं अनूप पै न ऐसी कोउ कीनीहै॥जैसी करी महाराज विश्वनाथ तनय यह महाराज रघुराज मोद उर भीनीहै॥काशीपुरी असी गंग संगम निकट

तट चढ़िके हिरण्य तुला पुण्यके अक्षीनीहै ॥ कहै युगलेश देश
देशके नरेशनकी जाइबो महेशपुरी राह रोंकि दीनीहै॥३॥केते
भूमिपाल भये भारी राज्यवारे भूमि केतको दिवान बड़े दानी
सत्यसंधुहैं॥आय आय काशीपुरी लाय लाय द्रव्य भूरि देके विप्र
वृंदनको पोष्यो पंगु अंधुहै॥पै न ऐसो भयो जौन हेम रौप्य तुला
चढ़ि दान अतुलाके छावै सुयश सुगंधुहै॥राजा रघुराज राजै की
तो या जमाने मध्य की देवान ताको श्रीदिवान दीनबंधुहै ॥४॥

कुंडलिया—सुवरण वृष्टि करी उतै, काशी नृप रघुराज ॥
तेहि प्रभाव तिहिं देशवन बरसे वारिदराज ॥
बरसे वारिदराज सकलमें भयो सुभिक्षै ॥
रह्यो नलेस कलेशवेशमिटिगो दुर्भिक्षै ।
भिक्षै माँगत रहे रंक जे घर घर कुवरन॥
तेऊ पाय अनाज भूरि ह्वैगे तनु सुवरन॥ १ ॥

दोहा—महाराज रघुराजको, दृढ़ विश्वास यदुराज ॥
तेहि प्रभाव सुखसाज सज,सुकर दराजहु काज॥१८॥

कवित्त—जोधपुर महाराज राज्यहै दराज जाहि राज काज ऐशही
में बीतै दिनरैन है॥साहिबी सुरेशसी धनेश ऐसी मौज समै तेजमें
दिनेश वेश विलसाति शैनहै ॥ मैनकीसी मूरति मनोहर तख
तसिंह बखत बुलंद निरखत करै चैनहै ॥ जाके उर ऐन युगले-
शकहूं लेस भैन देखे बनै नैन बैन कहत बनैनहै ॥ १ ॥

दोहा—राना नृप कछवाह अरु,हाडा भूप विहाय ॥
जेती लसत पछाहमें, भूपन की समुदाय ॥ १९ ॥
तिनके भेजि कटारजो, करत आपनो व्याह ॥
ऐसो प्रथित पछाहँमें, जोधपुरी नरनाह ॥ २२० ॥
पुरुषनते संबंध गुणि,तख्तसिंह नरनाह ॥

रींवा करन विवाह को, कीन्ह्यो परम उछाह॥ २२१॥
रानिन सुतन समेत भुवाला। निजपुरते किय गमन उताला॥
जेठो कुवँर तासु रह जोई। चतुरंगिनी फौज लै सोई॥
आवत भयो आगरे जबहीं। मिल्यो नृपति जयपुरको तबहीं॥
ताकी तासु मित्रता भारी। तासों ऐसी गिरा उचारी॥
जेहिं कन्याको तिलक चढ़ो तुव। सोह्वैगई कालके वश ध्रुव॥
जो रघुराजसुता अब अहई। सो तुव भयऊ नृप घर रहई॥
तासों तुव नहिं उचित विवाहा। रींवां जान न करहु उछाहा॥
हमरे सँग जयपुर पगु धारो। सुनि सो कह यह भलो उचारो॥
दोहा—ह्वै सवार बग्घी तुरत, जयपुरको नरनाह॥
ताको संग चढ़ाय कै, लैगो जयपुरकाह॥ २२॥
महाराज रघुराजकी, जेठि सुता वश काल॥
होत भई तबइताहिते, सुमति दिवान उताल॥ २३॥
लिख्यो जोधपुरको यह पाती। जहँअजवेशरहै विख्याती॥
जासु तिलक जेठेको चढेऊ। सो नृपकी दुहिता जिय कढ़ेऊ॥
ताते यह नृपसुता जो अहई। तासु व्याह जेठेको चहई॥
तामें पक्काइत करिलीन्ह्यो। तब तुम इतै पयानहि कीन्ह्यो॥
यह पाती लहि कवि अजवेशा। सो पक्काइन करि लियवेशा॥
नृप दिवान कहँ पत्र पठायो। हम यह पक्का इत करि भायो॥
सो आगरे सुरति विसरायो। जेठ कुँवरको नाहिं लै आयो॥
तख्तसिंह नृप रेल चढ़ाई। सबको तीरथपति नहवाई॥
दोहा—सबको करिदीन्ह्यो विदा,ते ह्वै रेल सवार॥
रानी सुत सब सैन्यगे, निजपुरको विनवार॥ २४॥
छरे संग सरदारलै, युग रानी सुत दोय॥
तख्तसिंह आवतभये,रींवाको मुदमोय॥ २४॥

नृप रघुराज मोद उर छाई । शिविर करायो ले अगुवाई ॥
सुदिवशमें त्रय भयो विवाहा । छायो वर वर परमउछाहा ॥
जो पितृव्यकी सुता सयानी । तख्तसिंहव्याह्यो सुखमानी ॥
तख्तसिंह ल्याये सुत दोई । तिनमें जेठ कुँवर रह जोई ॥
ताको सुता आपनी व्याही । महाराज रघुराज उछाही ॥
तेहिते लहुरे कुँवरहिं काही ।सुता विमातृ भगिनि कहँ व्याही॥
दायज देन जु रह्यो करारा । पंचलक्ष दिय द्रव्य उदारा ॥
हय गय भूषण वसन अमोले । दियो तिन्हैं रघुराज अतोले ॥

दोहा- मेवा सकल मँगायकै,अरु मिठाइ बहु भांति ॥
कैयो दिन सादर दियो, ऊंच नीच सबजाति ॥२६॥
चारि रोज़को नेम जग,रखि मास लों बरात॥
पूरी साज सबै जनन,पूरी सुख सरसात ॥ २७ ॥
रत्न जटित सुवरण कटक,अरु बहु मोती माल ॥
निज सरदारनको दियो,छायो सुयश विशाल॥२८॥

कवित्त—एक समै बांधवेश महाराज रघुराज छेरे सरदारन औ संगलै देवानहै ॥ रेलमें सवार कलकत्ताको पयान कीनो हरिहर क्षेत्र आदि तीरथ महान है ॥ परेमग तहाँकै नहान दै द्विजान दान तीजे रोज जब कलकत्ता नगिचानहै ॥ हूनपति आज्ञा पाय हून मुख्य आगू आय लै गयो लेवाय डेरा देतभो मकान है ॥ १ ॥

दोहा—डेरा आयो लाट पुनि, देखि भूपको रूप ॥
रूप न अस कोहु भूपको, भूपर गन्यो अनूप ॥२९॥

मुद्रा सहस रसोंई कांहीं । शिविर जाय पठयो सुखमाहीं ॥
दूजे दिन पुनि नृपति उदारा । सादर लाट शिविर पगुधारा ॥
सो आगूलै उच्च जो कुरसी । बैठायो तामें अति हुलसी ॥

विविधभांति कीन्ह्यो सत्कारा । सो कहँलों कवि करै उचारा॥
बड़कीमतिकी उभय दुनाली । देत भयो शत्रुनको शाली ॥
फेरिलाट असि गिरा उचारी । ईजा लही आप मग भारी ॥
यहि पुर होत कलैते कामा । याते कलकत्ताहै नामा ॥
द्वै चारिक चलि ठौर विशेषी । लेहिं आपहू आंखिन देखी ॥
दोहा—पांचलाख मुद्रा नितहिं, बनत कलैते ख्यात ॥
तूल सूत बिनिबो वसन, होत कलैते व्रात ॥ २३०॥
शहर फनूस बरै बुतै, निशि कलते यक साथ ॥
इत्यादिक बहु औरऊ, निरखि नंद विश्वनाथ॥३१॥
कह्यो लाट साहेब सों जाई । यहि पुर कला अपूर्व लखाई ॥
तकन तोपखानै पुनि भूपा । गये लखे युग तोप अनूपा ॥
रहैं अठारै पंनी केरी । तिनहि सराहतभो नृप ढेरी ॥
सो यक मनुज लाटसों कहेऊ । लाट खुशी ह्वै हुकुमहि दयऊ ॥
महाराज ऐसी युगतोपा । तुमहिं देतहैं हम भरि चोपा ॥
अहैं प्राग सो लेव मँगाई । दिये देत हम अहैं रजाई ॥
द्वैशत फेरि तिलंगन काहीं । पथरकला दीन्ह्यो सुखमाहीं ॥
पुनि कह तुव दिवान सरदारा । वीर बड़े अरु सुघर अपारा ॥
दोहा—बहुत रोज आये भये, अहै रुजी यह देश ॥
याते अब निज पुरीको, कीजै गमन नरेश ॥ ३२ ॥
लाट वचन तब भूप सुनि, ह्वै द्रुत रेल सवार ॥
मग नृप बहु सन्मान लहि, आयो पुरी मँझार॥३३॥
दंडहु भरको हुकुम नहिं, तहँ असि लै सब ठाम ॥
इनके जन बागैं वचैं, और कसूरी नाम ॥ ३४ ॥
अरज कियो जो लाट सों, सो सब पूरण कीन ॥
कह्यो आपनी राज्यमें, करो जो चहो प्रवीन ॥३५ ॥

चारि अश्व वग्घीनमें, चढत लाट नहिं कोय ॥
चढ़ै जो कोऊ धोखेहूं, देइ दंड ध्रुव सोइ ॥ ३६ ॥
सो पठयो महराज पै, गुणि सो निजहिं समान ॥
चढ़ि भूपति रघुराज तव,गुन्यो कृपा भगवान ॥३७॥
मान्यो यह रघुराज नृप, सव यदुराज प्रभाव ॥
और येक आगे चरित, वरणों भरि चित चाव ३८॥
विजयनगर है नामजेहिं, ईजानगर विख्यात ॥
तहँको गजपतिसिंहहै, भूपति मति अवदात ॥ ३९॥
सादर सहित कुटुंव सो, वस्यो वनारस आय ॥
ताके भै यक कन्यका, रति सम सुंदर काय॥२४०॥

तेहि व्याहन हित सो उत्साहन। भेज्यो जन पछाह नरनाहन ॥
ते सव दूरिदेश वहु मानी। अपनो जाव अगम मन जानी ॥
ताते ते न कवूलहि कीने। मुद्रा लाखनहूंके दीने ॥
तव सो ईजानगर भुवाला। मनमें कीन्ह्यो शोच विशाला ॥
पुनिकीन्ह्यो अस मनहिं विचारा। रीवां को है वड़ो भुवाला ॥
तेहिते जो ममसुता विवाहू। होय तो होवै महाउछाहू ॥
एक समय रघुराज उदारा। भेंट करन जयपुरहिं भुवारा ॥
मिरजापुरको कियो पयाना। तहँ नृप ईजानगर सुजाना ॥

दोहा—मुलाकात करि नजरदै,वहु विधि कीन्ह्यो सेव ॥
पुनि जव तकमा लेनको,गयो काशि नरदेव ॥ ४१॥
तवहूं वहुविधि सेव करि, सुता व्याहके हेत ॥
विनयकियो वहुभाँति सों, सो नृप वडो सचेत ४२॥

नाथ कह्यो वकील करिदीजै। ज्वाव स्वाल तेहि मुख नृप कीजे
सुनि प्रसन्न गजपति नृप भयऊ। सादरनिजवकील करि दयऊ॥
भयो जवाव स्वाल युगवरषा। परिनयको टीको कछुनरषा ॥

पूंछ्यो प्रभु तेहि नृपकी आदी। भाषतभे वकील अहलादी॥
राना विदित उदयपुर केरे। तिन भाई करि लेहिं निवेरे॥
सुनत उदयपुर खत लिखवायो। रानाजी लिखि तुरत पठायो॥
ईजानगर भूपजो रहई। सो हमरो भाई सति अहई॥
सुनि खत बांधवेश महराजा। कह वकील सों वयन दराजा॥

दोहा—लै आवहु द्रुत तिलक इत, लै आये ते जाय॥
टिके रहे बहु मासलों, तिलक न चढ़त जनाय ४३॥
रामराजसिंहको तिलक, चढ़नको कहै वकील॥
भूप कहैं नहिं बनत उन, कहैं ज्योतिषी ढील॥४४॥
कतहुँ न तुव संबंध तेहिं, तुव संबंधी माहिं॥
याते इत सब जन कहैं, व्याह योग उत नाहिं ४५॥

अति मतिवंत भूप रघुराजू। गुन्यो वृथा सब करत अकाजू॥
पांचलाख मुद्रा यह देई। तिलक माहिं अति आनँद भेई॥
उभय लाख द्वारे महँ देहैं। उभय लाख सँग सुता पठैहैं॥
हय गय भूषण वसन अमोला। और उपरते देइ अतोला॥
दोषहु यामें कछु न जनाई। रानाको प्रसिद्धहै भाई॥
यह करि ठीक मनाहिं मतिवाना। कलकत्ता जब कियो पयाना॥
तहँ किय लाट अग्रते टीको। रामराजसिंह परिनय नीको॥
दाइज लेन रही जो चाहा। ताहूको करि दियो निवाहा॥

दोहा—रीवांमें द्रुत आय प्रभु, कह पितृव्य सुत पाहिं॥
साहेब ढिग सिद्धांत भो, तिहरो व्याह तहाँहिं॥४६॥

कहत रहे जे होवे नाहीं। तेउ चुपभये न कछु बतराहीं॥
नृप वकील ते कहि घर शाहू। पांच लाख धरवाय उछाहू॥
रामराजसिंहको लै संगै। साजि वरात चल्यो सउमंगै॥
काशीको जब गये निराई। डेरा दिय सो लै अगुवाई॥

तहँइसों पुनि तिलक चढ़ायो। हय गय भूषण वसन मँगायो॥
मुद्रा सहस पचाश मँगाई। गजपति सिंह दियो सुख छाई॥
होत भयो पुनि सविधि विवाहा। पूरि रह्यो काशी उत्साहा॥
तहँ गजपति नरेशकी रानी। रूप भूप रघुराज लोभानी॥

दोहा—कहत भई निजनाहसों, सो उरभरी उछाह॥
महाराज रघुराजको, कस नहिं कियो विवाह॥४७॥
सो कह जब तुमसों कह्यो, तब तुम मान्यो नाहिं॥
अब न सोच संबंध जेहिं, पूरब होत तहाँहिं॥ ४८॥

चारि रोज तहँ रही बराता। कीन्ह्यो सो सत्कार अघाता॥
पुनि सादर जब कियो विदाई। मुद्रा दिय द्वै लाख मँगाई॥
हय गय भूषण वसन जमाती। बड़े मोलके दिय बहु भांती॥
पुनि सरदारन और वकीलन। मुद्रा दिय पठाय धरि पीलन॥
नृप रघुराज फेरि सुख छाई। रुपया मोहर अमित मँगाई॥
सादर रामराजसिंह काहीं। तुला चढ़ाय गंग तट माहीं॥
सब विप्रनको दियो देवाई। जय जय ध्वनि काशी महँ छाई॥
राम निरंजन संत महाना। बसे बनारस विदित जहाना॥

दोहा—सकल शास्त्रमें निपुण अरु, कामादिकते हीन॥
राम निरंजन सो न अब, कतहूँ संत प्रवीन॥ ४९॥

महाराज रघुराज उदारा। तिनके दरश हेतु पगु धारा॥
भूपहि आवत जानि दुवारा। चलि सेवक अस वचन उचारा॥
नाथ दरशहित बहु नृप आवैं। दरशि दूरिते सपदि सिधावैं॥
सो आपहु दर्शन करि आवैं। बैठन कहैं बैठि तो जावैं॥
सुनि बोल्यो रघुराज नरेशा। बैठब तबहिं जो होइ निदेशा॥
अस कहि प्रभु ढिग चलि सुखधामा। बार बार किय दंड प्रणामा॥
दै अशीश बहु बैठन कहेऊ। बैठि यामलों नृप सुख लहेऊ॥

कह प्रभु नृप विशुनाथ समाना ।रामभक्त नहिं भयो जहाना ॥
दोहा—सब विद्यनिमें निपुण तिमि, दानी विदित महान ॥
तासु तनयतैसहि तुमहुँ, सम अबहूँ ना आन २५०॥
शम्भुशतक जगदीशहु शतकै।विरच्योतुमसुनि जेहिं बुधसुछकै।
जस तुम भक्त अहौ नारायण। तस ईश्वरीप्रसाद नरायण ॥
जस पूरण सुख तुमते भयऊ। तैसहि उनहूँ ते सुख ठयऊ ॥
नृप पछाहियनमें कछु रूरो। बूँदी नृपति ज्ञानते पूरो ॥
तेहिंके आये भो सुख आधो। तुम सम कोउ न कृष्ण अवराधो॥
अति प्रसन्न करि दण्ड प्रणामा। गमन्यो पुनि भूपति सुखधामा॥
सकल देव संतन गृह जाई। यथा योग बहु द्रव्य चढ़ाई ॥
रामनगर गो सुरसरि पारा। गो लेवाय सो नृपति उदारा ॥
दोहा—रामराजसिंहकोसतिय, घर दिय पठै ससैन ॥
आपरेल चढ़ि आयकै, मिरजापुरहिसचैन ॥ ५१ ॥
पुनि बग्घी असवार ह्वै, सैन्य सहित सुख पाय॥
रीवांको आवत भयो, लै संपति समुदाय॥ ५२ ॥
बंधु कसौटाको विदित, वंशपती महराव ॥
महाराज सों यक समय, विनय वचन मुखगाव ५३॥
नाहक हमें अशुद्ध जग, कहत अहैं सब लोग ॥
विमुख आपते जो भये, यहां बड़ो उर सोग ॥ ५४॥
सवैया—आपहिके हमहैं करुणानिधि आप जो लीजिये मो गहि पानी ॥ तौ अहिती हमरे जे अहैं जे असत्य बतात तिन्हैं परे जानी ॥ दीजिये भात कृपाकरिकै सुधरै मम लीजिये सत्य या मानी ॥ श्रीरघुराज कह्यो हँसिकै यदुराज सुधारिहैं है सति वानी ॥ १ ॥

दोहा—भात देत सुनि नृपहिको, वरजे बहु जन वृंद ॥
महाराज कह मानिहैं, कहिहैं जस गोविंद ॥ ९५ ॥
अस कहि यक कागज लिख्यो, यह अशुद्ध है नाहिं ॥
अशुद्ध अहै यह यक लिख्यो,धरि दीन्ह्यो हरि पाहिं ९६
नयन मूँदि जगदीश ढिग, पंडा तुरतहिं जाय ॥
लै आयो कागज सोई, यह अशुद्ध नहिं आय ॥ ९७ ॥
नृप जगदीश निदेश लहि, शुद्ध मानि विख्यात ॥
वंशपतीको करिलियो, भातहिमें अवदात ॥ ९८ ॥
पंडा तुलसीरामको, अग्निहोत्र करवाय ॥
कियो अग्निहोत्री विदित, रह्यो सुयश जग छाय ॥९९॥
दशहजार मुद्रा अउर, दो हजारको ग्राम ॥
दै गोविंदगढ़ वास दिय दै, शुभ धाम अराम ॥२६०॥
छप्पय—श्रीरघुराज सुवाजपेयि किय रह यश छाई ॥
याचक सोइ सोइ वस्तु लही जोई मुख गाई ॥
विप्र जे याज्ञक रहे लहे ते द्रव्य हजारन ॥
भूषण वसन अमोल हेत असवारी वारन ॥
कवि वेश कहै युगलेश चलि, देशन देश नरेश मधि ॥
ह्वै विन कलेश मुख गाय यश,भये धनेश सुरेश सधि॥१॥
कुंडलिया—सबनरनाहनतेअधिक,बादशाह कियमान ॥
महाराज रघुराजसों, कौन सुजान जहान ॥
कौन सुजान जहान सुकवि करि सकै वखानै ॥
जो वखश्यो वसु वसन जननकहँ बे परमानै ॥
मानै निज लखि तजे भूप कलकत्ते महँ तब ॥
युगलदास यह कृपा जानि लीजै सतिके सब ॥ १ ॥
कवित्तघनाक्षरी—वाजिन सवार राज राजिन कराय तहां

निज असवारी साथ शाह सोधवायो है ॥ लाट कोठी कुरसीमें बांधवेशको बैठाय निज असवारीको जलूस दरशायो है ॥ देखि सब भूप लेखि निजते अधिक मान शरमाय शीशते विशेषिहीं नवायोहै ॥ सांच यदुराज कृपा जानै रघुराज पर जौन सब राजनते अधिक बनायोहै ॥ १ ॥

दोहा—लाख लाय मुद्रा नज़र, देनचहे नरनाह ॥
तिनको लियो न मानि तृण, शाह सहित उत्साह ६१॥
मुद्रा सहस पचासकी, दियो अँगूठी नाथ ॥
लै सराहि रघुराजको, पहिरिलियो निज हाथ ॥६२॥

कवित्त—महादेवजीके सम देव नर दानवमें भयो ना त्रिलोकी माहिं राम भक्ति धारीहै ॥ सीय वेष कीन्ही सती ताहि त्यागि दीन्ह्यो जौन दक्षकी सुता जो रही प्राणनते प्यारीहै ॥ अब कलिकालतो कराल या कलुषमयो तामें वैसोहोय नहिं परत निहारीहै ॥ महाराज विश्वनाथ तनै रघुराज वैसो भयो युगलेश कछु कहत उचारीहै ॥ १ ॥ छीतूदास भगत पधारे एक समै रीवां कातिकते फागुनलौं रहे सुख छायकै ॥ फगुवाके रोज रैन निकसे बजार मग राम सिय लषणको गजमें चढ़ायकै ॥ दीनबंधु धाम ढिग एक बनियाको घर रह्यो तासु सुत लै खेलौनादी चलायकै ॥ चौंकि उठ्यो गज झूल जरी डोलि उठे द्रुत कोऊ जन जाय कह्यो नृपको सुनायकै ॥ २ ॥

दोहा—भोर होत तेहिं वणिकको, भूपति लियो लुटाय ॥
द्वै हजारको वसनतेहिं, लीन्ह्यो तुरत मँगाय ॥६३ ॥
आधे आधे सो दियो, मोहन दशरथ काहिं ॥
दीनबंधु सो सुनि कियो,वणिक सहाय तहाँहिं॥६४॥
वणिक पुत्र भगिजातभो, छीतूदासहि पास ॥

आय भक्त महराज ढिग,शासन दिय सहुलास॥६५॥
क्षमि आगस यहि वणिकको, दीजै लूटि देवाय ॥
कुटी सिधारब कालिह हम, सुनि बोल्यो नरराय६६
वह भगवत भागवतको, कियो महा अपराध॥
याको देन न कहिय प्रभु, और न होई बाध ॥६७॥
यहि अपराधी वणिकको, कीन्ह्यो जौन सहाय ॥
उचित दंड सोउ पायहै, यह प्रभु देहिं सुनाय॥६८॥
पुनि निज कुटी भक्त पगु धारे । महाराज उर अति मुद धारे॥
परममित्र मंत्री यशवारा । रह्यो जौन प्राणनको प्यारा ॥
मुख्य देवान कह्यो जेहिं काहीं । लाट खिलत दीन्ह्यो मुदमाहीं॥
ताहूको गुणि वणिक सहाई । कामकाजते दियो छोड़ाई ॥
रहे जे कामकाजि तेहि संगा । तिनहुँ छोंड़ाय दियो सउमंगा ॥
दक्षिण देउरा नगर ललामा । तहँ जेहिं थान अहै सरनामा ॥
लालशिवबकशसिंह तेहिं नामा । धीर वीर अतिहीं मतिधामा॥
तासु अनुज भगवतसिंह तैसे । वचन जासु अंगद पग कैसे ॥
तेहिं शिवबकश सिंह सुत रूरो। लालरणदवनसिंह गुण पूरो ॥
कैयक अनुज तासुके जानो । तिनमें दिरगजसिंह सुजानो ॥
लालरणदवनसिंह पर प्रीती । करि रघुराज मीत गुणि नीती ॥
सकल वघेलखंड जो राजी । किय मुखतार परम ह्वै राजी ॥

दोहा—माधवगढ़ ढिग पार सरि,कछिया टोला गावँ ॥
नावँ जासु दिलराजसिंह,मालिकहै तेहिं ठावँ ॥६९ ॥
अमरसिंह कल्याणसिंह तासु सुवन गुणग्राम ॥
महाराज परसन्न ह्वै, तिनहूंको दिय काम ॥ २७० ॥
बांकेधौवा सिंहको,कोष काम करिदीन ॥
देशी परदेशी वहुत,काम दियो सुखभीन ॥ ७१ ॥

तिन सबको सुखतारके,भूपति किय आधीन ॥
ते सब अवलों करतहैं,काम लोभते हीन ॥ ७२ ॥
छंद–यक काल अकाल कराल पर्‌यो ॥
विन अन्न दुखी वहु जीव मर्‌यो ॥
महिमें कँगला सहसान जुरे ॥
सरि औसर राहन रोज फिरे ॥ १ ॥
वहु पर्गन वांधवदेश ठये ॥
विन अन्न दुखी सब जीव भये ॥
रघुराज गरीवनेवाज महा ॥
दिय अन्न तिन्हैं मुदमें उमहा ॥ २ ॥
अंगरेजहु जौन निदेश कियो ॥
रुपयां तेहिं पंचसहस्र दियो ॥
जोहिं औरेहु देशनके कँगला ॥
विन अन्न न शोक लहैं अचला ॥ ३ ॥
दोहा–झूर अन्न केतेन दियो, केतेन दै पक्कान ॥
केतेनको पैसा दियो, केतेन मुद्रादान ॥ ७३ ॥
सोरठा–जौलौं रह्यो अकाल,लाखन रुपया खर्च करि ॥
किय दीनन प्रतिपाल, को कृपालु रघुराज सम।१।
कौन गरीवनेवाज,महाराज रघुराज सम ॥
छायो सुयश दराज,समुद्रांतलौं अवनि तल ॥ २ ॥
सवैया–तीक्षण जासु प्रताप दिनेशको आतप तेज महीप सरै॥
तापित है रिपु तासु हमेश कलेशित वासु अरण्यकरै॥
भाषतहै युगलेश सही यह मानै उरैमें विशेश नरै ॥
श्रीरघुराज नरेशके देशन शीतको पेस करै पसरै१
महाराज रघुराज सपूती। है अपूर्व जिनकी करतूती ॥

पितुते अधिकै राज्यबढ़ायो । पितुते अधिकै द्रव्य कमायो ॥
पितुते अधिक कोष किय भारी। भूपति श्रीरघुराज सुखारी ॥
एक अनूपम शहर बसायो । गोविंदगढ़ तेहिं नाम धरायो ॥
रींवांमें जस रहे मकाना । तिनते अधिक तहां निरमाना ॥
ताल विशाल एक बनवायो । विश्वनाथ नृप नाम सुहायो ॥
जाके तीर तीर सरमाहीं । विरचायो बहु मंदिर काहीं ॥
तिनमें रघुपति यदुपति मूरति । पधरायो परिकर युत अति रति

दोहा—प्रति उत्सव जो करतहैं,साधुन सेवा वेश ॥
सीयव्याह उत्सव तहां,करत नरेश हमेश ॥ ७४ ॥
छीतूदास सुसंत यक,सादर तिनहिं बोलाय ॥
करत व्याह उत्सव सुखद,अगहन मास सोहाय ।७५।

संत महंतहुँ विप्र अपारा । जुरें नारि नर कइक हजारा ॥
तिनको विविध भांति सन्मानी । वांछित अशन देत रति ठानी॥
मांडव रुचिर रचाय उछाहा । सीय रामको करत विवाहा॥
सबको मंडप तर बोलवाई । सादर विदा करत हरषाई ॥
मुद्रा अमित दुशालन जोरी । कोहुको देत हाथ युग जोरी ॥
कोहूको पट और बनाता । मुद्रन सहित देत हरषाता ॥
कोहुको लोइया और रजाई । देत रुपैयन युत सुखदाई ॥
रुपिया और उपरना रासी । कोहुको भूपति देत हुलासी ॥

दोहा—देत रुपैया सबनको,बचै न कोउ नर नारि ॥
सुख छावत गावत सुयश,जात अयन पगु धारि७६॥
भरत लषण रिपुदवन युत,सीय रामको फेरि ॥
भूषण वसन अमोल दै,विदा करत छवि हेरि ॥
छीतूदास सुसंतको,साधुन सेवा हेत ॥
द्वादशसै मुद्रा वसन,अमित मोद युत देत ॥७७॥

जनकपुरी मम सोपुरी, समय सो जनक प्रमोद ॥
जनक सरिस नृप जनकहैं,चलि चलि मग चहुँ कोद७८॥

स०—औधपुरी मुद औध किधौं,किधौं वृंदावनै दिपै मंदिर भारी
जानकीरामकीझांकीकहूँकहूँराधिका माधवकीमनहारी ॥
झालरी शंख बजें चहुँ ओर बसैं जहँ संत अनंत सुखारी ॥
भूप रच्यो है गोविंदगढ़ै सो अनूपम मैं निज नैन निहारी१॥

दोहा—छन छन छन घन ध्यान मन, तनक न तन धन भान।
धन धन धन जन ज्ञान पन, कन कन वनकनसान ॥

छ	छ	छ	घ	ध्या	म	त	क	त	ध	भा
न	न	न	न	न	न	न	न	न	न	न
ध	ध	ध	ज	ग्या	प	क	क	व	क	सा

सोरठा—जेहिं गोविंद गढ़माहिं,दुखहीको दुखदेखिये ॥
डर परलोक सदाहिं, जहँ सब लोगन को अहै ॥ २८०॥
दंडनीय जहँ एक निसाना। रागरागिणीभेद विधाना ॥
क्रोध जहां क्रोधहिं पर होई। लोभ करै यशको सब कोई ॥
जहांअधर्महिं को है त्यागा। निज तियसों ठानब अनुरागा॥
जहँ गृह चित्र करैं चित चोरी। बंधन जहां पशुनको जोरी ॥
वचन असत्य कहत रोजगारी। सुताव्याह गावहिं तिय गारी॥
चलत कुपंथ जहां गज माते। कुटिल धनुष जहँदृग दरशाते
सुभटनके अंग जहां कठोरा। कर्कस जहँ झिल्ली गण शोरा ॥
जहां निर्द्धनी यती निहारी। वारि नीचि गति जहां निहारी
दोहा—कंपध्वजामें देखिये, बँधे धौरहर धौल ॥
शोभा सब संसारते, वसी भूप पुर नौल ॥ ८१ ॥

सोरठा—कहुँ गोविंदगढ़ माहिं, कबहूँ रीवाँ नगरमें ॥
श्रीरघुराज सोहाहिं, सब राजनके मुकुट मणि॥१ ॥
कवित्त घनाक्षरी—बदी जे न ताकत मुसद्दी कामकाजी सबै बैठे दुहूंओर दर्दी दीननको दिलराज ॥ कद्दी दीहवारे औ अमद्दी सरदार आगे बैठे अरिकरन गरद्दी रणकै गराज॥ देवनद्दी कैसी किति दिपति विसद्दी जासु युगलेश साहिबी बिहद्दी मनो देवराज ॥ रद्दी कर दुर्जन अनंदी कर सज्जनको राजै राजगद्दी पर महाराज रघुराज ॥ १ ॥ देन समै जोई जोई याचि राख्यो याचकहै सोई सोई देत सांच लगत न वारहै ॥ भूषणअमोल गाँव बसन अमोल म्याना वाजि गज नोल मुद्रा कैयक हजारहै॥ कहै युगलेश ऐसी रीतिहै हमेश केरी देखत न देश कोष नेकुकै विचारहै॥ राजनके राज महाराज रघुराज ऐसो आजु तौन दूजो राजा राजत उदारहै ॥२॥ पटु सब विद्यन में हटत न काहूसोंहै निपट निशंक बुद्धि नेकु न हलतिहै ॥चटपट जानिलेत अटपट बात सब बात कपटीनकी न कैसहू चलतिहै ॥ महाराज रघुराज निकट पखंडी कोटि कुटिलऊ सटपटै थिति उसलतिहै॥कवि नटखटनकी कूर बहुकटढनकी चुगुल चवाइनकी दाल नाग लतिहै ॥३ ॥ सुमति गणेश लसै साहिबीमें त्यों सुरेश धनमें धनेश शत्रु नाशनमहेशहैं ॥ तेजमें दिनेश मुदजनन प्रजेश प्रजापालनमे बेश सम राजत रमेशहैं ॥ गावत नरेश दीह निजहिं निवेश सभा सुयश विशेष जासु छाजै देश देशहै॥ भनै युगलेश रघुराजसे सुमतधारी सुत बांधवेश औ परेस सेवा पेसहै ॥ ४ ॥ करयुग जोरि कमलापतिसों कमलाजी कहै युगलेश बार बार कहैं बैन कल । रावरो भगत विश्वनाथ तनै रघुराज जन्यो जग तन्यो जासु यश चारु स्वच्छभल ॥असित

पदारथ ते सित ह्वैगयेहैं सबै परत पिछानि नाहिं जाय जहांजो ने थल ॥ वसिये निरंतर की ताहि ऐके अंतरकी उदधिको अंतर न छोंडि जैये छोनी तल ॥ ५ ॥ भागवत पढ्यो भागवत को विश्वास मान्यो जननि सुभद्रा श्रीसुभद्रा रूप जानिये ॥ रामभक्त परमअनन्य महा भागवत विश्वनाथसिंह जासु जनक वखानिये ॥ भागवतदास नाम तिनहीं सों पायो भयो भागवत रूप कंठ भागवत गानिये ॥ भागवत सेवी रघुराजसिंह भागवत जाके उर भौंन भगवंत भौंन मानिये ॥ ६ ॥

सवैया—याचक वृंद मलिंदनको गण पाय सुपास अनंदित हीमें ॥ आय मनोरथ पूरणकै यश गान करैं चहुँ ओर महीमें ॥ भाषतहैं कवि देशनि जाय नरेशनके दरबारनहीमें॥ दान करी-के कपोलनमें कीहरी रघुराजके हाथनहीमें ॥ ७ ॥

दोहा—महाराज रानी सबै, गौरी सम महिमाथ ॥
लसैं पतिव्रत धर्मरत, तजैं न कवहूं साथ ॥ ९२ ॥
महाराज रघुराजके, अमित चरित्र अनूप ॥
युगलदास वरण्यो कछुक,निजमतिके अनुरूप ९३॥
जामें सूचित चरित सब, ऐसो अष्टक वेश ॥
विरचतहैं युगलेश यह, सुखप्रद सुकवि विशेश ९४॥
अष्टक नृप रघुराज कृत, युगलदास मुदकंद ॥
सार्थ गतागत चंद्र ऋषि, सिंहवलोकन छंद ॥ ९५ ॥

अथगतागत सवैया—तो यश शीश मही सरसाय यसारस हीम शशी सजतो ॥ तोमह तेज भसो भिरमाहि हिमा रवि सो भजते हमतो ॥ तो जग नैरव सोहत चारु रुचा तहँ सो वरणै गजतो ॥ तो रघुराज भजै नहिं लोग गलोहिनजै भज राघुरतो ॥ १ ॥

अर्थ-हेरघुराजसिंह तिहारो श्रीवृंदावन अरु श्रीजगन्नाथपुरीमें सुवर्णतुलादि महादान रूप जो यह यशहै शीश मही कहे महीके शीशमें अथवा सब राजनके यश ते शीश कहे शिरा मही कहे पृथ्वीमें सरसाय कहे अधिकायकै, सारस हीम शशी सजतो. कहे सारस जो है कमल अरु हिम जोहै पाला अरु शशी जो है चंद्रमा ताको सजतो कहे आपनी शोभाते साजेहै कहे शोभित करैहै यह प्रतीपालंकारते सारस अरु हिम अरु शशिकी शोभा सब ऋतुमें सब कालमे एकरस नहीं रहै है कमल झरिजाय है हिमगलिजाइहै शशी क्षीण ह्वैजाइहै अरु सकलंकहै अरु तिहारो यश सब कालमें एक रस रहैहै अरु निः-कलंकहै याते उन सबनते अधिकहै यह वितरेकालंकार व्यंजित भयो, अरु तोमह तेज भसो विरमाहि. कहे तिहारो जो महातेजहै सो वीर जे हैं बड़ेरराजा तिनमें भसो कहे भासितहै ताते तिहार तेजते तेऊ शंकित रहैहैं कि हमारी राज्य न लैलें यह सूचितभयो अथवा विरमाहि कहे सब जगमें तिहारो तेज विशेषके रमैहै ताते तुम्हारे तेज करिके सब राजा निस्तेज ह्वैगये यह ध्वनित भयो याहीते, हिमा रविसो भजते हमतो. कहे आपने हियमें हम तो तुम्हारे तेज को रवि सों कहे सूर्यसे भजैहैं कहे भजन करैहैं अर्थात् वर्णन करैहैं यह उपमालंकारते सूर्य कमलनको आनंद देइहैं अरु तम नाश करैहैं अरु सबको सुधर्ममें प्रवृत्त करैहैं॥अरु आपको तेज सज्जनके हृदय कमलको आनंद देइहैं औ सब राजनके वीरताके मदको,अज्ञानको नाश करैहैं अरु सबके अ-धर्म नाश करि सबको धर्ममें प्रवृत्त करैहैं यह अनुभया भेद रूपकालंकार ध्वनित भयो अरु, तोजग नै रव सोहत चारु. कहे जगमें तिहारो जो है नै, कहे नीति ताको जो रव कहे शोरकि

रघुराजसिंह बड़े नीतिवानहैं सो चारु कहे सुंदर सोहतहै अरु रुचा तहँ सो वरनै गजतो, तहाँ कहे तौने जगमें सो नीतिको रव सबको रुचाहै कहे सबको नीक लगैहै अर्थात् नीतिको बखान जो कोई करत सुनैहै सो तहैं खड़ो रहिजाइहै अरु वरनै गजतो कहे सोऊ जन गजत कहे गर्जनाको करत अर्थात् बड़ो शोर करत सर्वत्र वर्णन करै हैं कि रजुराजसिंह बड़े नीतिवानहैं॥ ताते आपके नीतिके सुनिवेते सबको उत्कंठा अतिशयरूप वस्तु व्यंजित भयो इससे जैसी आपकी नीतिहै तैसी आपहीकी नीतिहै यह अनन्वयालंकार ध्वनित भयो ताते आपकी राज्यमें अनीति नहींहै यह वस्तु सूचित भयो अरु गर्जत वर्णन करैहैं ताते इन के बरोबर ऐसो नीतिवारो पृथ्वीमें कोई नहीं है याते निःशंक हैं यह हेतु व्यंजित भयो ताते,रघुराज भजै नहिं लोग गलोहि. कहे याभांतिके जे तुम रघुराज सिंह हो तिनको जो कोई लोग गलोहि कहे गलते अरु हियते नहीं भजैहैं कहे नहीं भजन करैहैं अर्थात् तुम्हारे नामको मुखते उच्चारण करत जाको गल नहीं चलैहै अरु जो तुम्हारे नामको हियमें नहीं धारण करैहैं ॥ नजैभजरा कहे ताको जरा कहे नेक कबहूं जै नहीं भयो, अर्थात वह सबसों हारिही गयोहै अरु घुरतोकहे घुरिजातहै अर्थात् वह नाश ह्वै-जाइहै यहां प्रस्तुत कारि प्रस्तुत प्रगट प्रस्तुत अंकुर नाम यह प्रमाण करिकै प्रथम प्रस्तुत कहे वर्णनीय जेहैं आप तिनते दूजे प्रस्तुत जेहैं श्रीरघुनाथजी तिनको वर्णन कवित्तके चारिहूं तुकमें विदितई है यह प्रस्तुतांकुर अलंकारते आपकी श्रीरघुनाथजीकी उपमाव्यंजित भई ॥ १ ॥

दोहा—जन्मअष्टमी आदिदै, उत्सव जे भगवान ॥
तिनमें वितरत जननको, मुद्रा पट सहसान ॥ ९६ ॥

अथ सिंहावलोकनके उदाहरण ॥

सवैया—वीरनमें जे गने अवनी अवनीके गुनेते चुने रणधीरन ॥
धीरन में जसहै कुलसीलसीसो तसहै जसमे जनभीरन ॥
भीरनतेयुगलेश सुनै सुनै प्रीतिजगीनहिंदानअजीरन ॥
जीरनसोंनाहिंभौते भजैभजैजोहियरोनितश्रीरघुवीरन १॥
जाकरजागैप्रतापदिवाकरवाकरतोप्रतिपाल प्रजाकर ॥
जाकर तेज सऊगोसुधाकर धाकरमाये मनैवसुधाकर ॥
धाकरहूंवसुपाइकैताकरताकरआननताकेसुखाकर ॥
खाकरहैदुखको कहै काकर काकर तार करै घर जाकर ॥२॥
कामनमेंअहै आलसनामन नामनमें चहतोपरवामन ॥
वामन बोलत बैननसामन सामनरैसो तजै केहुँजामन ॥
जामनमेंवसतोअभिरामनरामनसो तेहिंमानैसदामन ॥
दामनदै रघुराजके ठामन ठामन सेवत संत अकामन ॥ ३ ॥
कीरतिरंभाकिधौंहैशची शचीजामेंअछेहकविंदनकीरति ॥
कीरतितौ तिन्होंकी इती दुति कौनि अहै मति मेरि ऊंचीरति ॥
चीरति यासिल धारे खरी खरी गर्व भरी चहूँ छाचि खहीरति ॥
हीरति पूरतिहै महि माहिमें जानि परे रघुराजकी कीरति॥४॥
शाह सराहतभोजहि भूपर भूप रहो कितहूं अब ना अस ॥
ना अस ते मुख भाषत वैनहैं वैनहैं त्रासन तामस राजस ॥
राजसमाज विराजत वासव वासव सो निर्गुणी गुणी पारस॥
पार सबै करतो जु भवै भवै सो रघुराज भजो कर साहस॥५॥
सोहत भावसों क्रीट शिरै दियेदीपत जासु शिषत्तु विमोहत ॥
मोह तमे को विनाश करै करै कांति भूवाय दृगानिसों जोहत ॥
जोहत भाग है जात सभाग सभागतसों सब सोच विछोहत ॥
छोहत तापै सबै जगहै गहजो रघुराजपगे अजसोहत ॥६ ॥

घनाक्षरी—शारद शशीसों कोई शारद पयोदहीसों हीसो गुनि कहे कोई लस्यो सम पारद॥पारदरशाति नहि काहि काहि काहु माति माति कहे कोई घनसारहुकी पारद ॥ भार दरशात पेन्हे भूप मोती हीरा हार हार गई द्युति भाषै कविवृंद मारद नारदकोहुते है बेहद रघुराज जस जस मही तस स्वर्ग गावती है शारद ॥ १ ॥

दोहा—अष्टक कष्ट करै न जग, जगत् पार धन नष्ट ॥
नष्ट नहीं चित पुष्ट कवि, कवित तुष्टकर अष्ट ९७॥

सवैया—भूप अजीत अजीत भयो लियो जीत रिपून नहीं कोउ बाचो ॥ तासु तनय नृप जयसिंह जयसिंह होत भयो रणरंगमें राचो ॥ तासुत श्रीविश्वनाथ भयो विश्वनाथहू दान कृपानमें साचो ॥ तासुत जो रघुराज समै रघुराज भो तौन अचंभव सांचो ॥१ ॥

कवित्त—जाहि जपि पतितहू पावन परम होत होहिंगे भये हैं गये केते हरिधामको ॥ जाको यश गावत न पावत सुकवि पार सबको अधार जो देवैया मन कामको ॥ जाके बल शंकर विरंचि सनकादि ऋषि जागत रहत जग यामिनि त्रियामको ॥ चिरंजीव होवे महाराज रघुराज सदा याचे युगलेश वेश सोई राम नामको ॥ १ अंगनि सुछबिकोटि वारिने अनंग जासु कालको विहाल करै शोर धनु घोरको ॥ मार्तंड पावको प्रताप जासु ताप करै शशिहूको शीतल करैत यश ठोरको ॥ चरित अशेष जासु शेषहु न अशेष लहै नाम कहै पामर पुनीत होत जोरको ॥ चिरंजीव होवै महाराज रघुराज सदा याचै युगलेश सोई कोशल किशोरको॥२॥जोलों राम निज नाम धाम गुण ग्राम राखौ कीबो काल कर्महु प्रपंच पंच भाषिये॥ जौलों

विधि आदि सिधि देवनको अधिकार नित प्रीतिको विचार कीबे अबलाखिये ॥ जोलौं दीनबंधु दृग देखो दाया दीह दास तोलौं युगलेश विनय मोरि यश साखिये ॥ राज्यश्रीअखंड सुखयुत संयुत सुधर्मसाज भूप रघुराज महाराज आप राखिये ॥ ३ ॥

सोरठा—ग्रंथ भयो जब पूर, उचित मंगलाचरणपर ॥
श्रीहरि गुरु सुख पूर, चरण कमल वंदन करूं ॥८४॥

कवित्त—निरत जासु नाम हरिदास हरिरूप सीय राम सेव हीमें जिन्हें जात रैन दिन ॥ कोहू सों न कहै देखि संत निज आश्रमै सादर करत सत्कार आये छिन छिन ॥ कहैं युगलेश मान रजोगुणि वाहननि चढ़ें नहिं कबों या स्वभाव रह्यो सब दिन ॥ कहों हरिरूप पर हरिते सरसरूप लिये ह्वै अनूप श्रीहै येतो रहै तेहि विन ॥ १ ॥

दोहा—धरयो सर्प यक को बिछी, यक को दुःखित कीन्ह ॥
हरिचरणामृत पाय तहँ, द्रुत निर्विष करिदीन ९८॥
ऐसे चरित अनेक हैं, को कह आनन एक ॥
नेक कृपा लहि नाथ मैं, वरण्यों है सविवेक ॥ ९९ ॥
जो करताहै ग्रंथको, सोउ वरणै निज वंश ॥
युगलदास याते करत, कछु निज मुख परशंस २००

कवित्त—देश गुजरात ते नरेश संग आये यहां पुस्तिबहु तिन्हें कहां लौं गिनाइये॥चैनसिंह भे दिवान अति मतिमान खास कलम सुवंश राय तिनको सुनाइये ॥ लल्लू खास कलम कहाये नाम मंशाराम भूपति अजीत बहु मान्यो सो जनाइये॥ कायत प्रसिद्ध साधु सुमति अगाध तासु वंश गिरिधारी लाल नाम जासु गाइये ॥ १ ॥

दोहा–महाराज विश्वनाथ तहि, मान्यो करि अति प्यार ॥
सोय खास कलमहि कियो, लखि तिहि बुद्धि अपार १
भोदूलाल दिवान सुजाना । रहेते अस मन किये अमाना ॥
यह संकोच पुरुषते भारी । करौ न हमरौ हुकुम सुखारी ॥
अस विचारि नरनाथहिं पाहीं । कह्यो सुवर इनही सुख माहीं ॥
इन्हे खास कलमी रघुनाथी । दे राखिये निकट कर साथी ॥
सुनि विश्वनाथ हियेकी जानी । राख्यो अपने ढिग सुखमानी ॥
ग्रंथ अनूपम अमित बनायो । सादर तासों मुदित लिखायो ॥
तेहि सुत युगलदास मम नामा॥विश्वनाथ नृप ढिग अभिरामा॥
रह्यो बालते जे किय ग्रंथा । लिख्यो अहै जिनमें हरिपंथा ॥
दोहा–महाराज रघुराजके, अब निवसों नित पास ॥
तासु हुकुम लहि ग्रंथ यह, विरच्यों सहित हुलास२॥
नृपचरित्र यह ग्रंथको, कियो नाम अभिराम ॥
बाँचि सुकवि सज्जन सुमति, लहैं सदा सुखधाम ॥३ ॥
ग्रंथ रामरसिकावली, रच्यो जो नृप रघुराज ॥
तहँ कबीर इतिहास में, यहै ग्रंथहै आज ॥ ३०४ ॥

अथ सिद्धिश्रीमहाराजाधिराजश्रीमहाराजा बहादुर श्रीकृष्णचंद्र
कृपापात्राधिकारी श्रीरघुराजसिंहजूदेवकृते श्रीरामरसि
काबल्यांग्रंथान्तर्गत श्रीयुगलदासकृत व
घेलवंशवर्णनंनाम आगम निर्देश
ग्रंथसमाप्तः ॥

पुस्तकमिलनेका ठिकाना–
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना,
खेतवाड़ी ब्याकरोड खंबाटागली–मुंबई.